कृष्णगोपाल ग्रन्थमालाका षष्ठ पुष्प

रसतन्त्रसार व सिद्धप्रयोगसंग्रह

(द्वितीय खण्ड)



प्रकाशकः—

कृष्णगोपाल आयुर्वेदिक धर्मार्थ औषधालय

पो० कालेड़ा-कृष्णगोपाल (अजमेर)

...ीय संस्करण
...००० प्रति

सन् १९५२ ई०

मूल्य अजिल्द ६)
मूल्य सजिल्द ७॥)

नार्थार्थं नापि कामार्थमथभूतदयां प्रति ।
वर्त्तते यश्चिकित्सायां स सर्वमतिवर्त्तते ॥

महर्षि चरकाचार्य

द्रव्यं देशं बलं कालमनलं प्रकृतिं वयः ।
सत्त्वं सात्म्यं तथाऽऽहारमवस्थाश्च पृथग्विधाः ॥

\+ \+ \+

सूक्ष्म सूक्ष्माः समीक्ष्यैषां दोषौषधनिरूपणे ।
यो वर्त्तते चिकित्सायां न स स्खलति जातुचित् ॥

\+ \+ \+

अतोऽभियुक्तः सततं सर्वमालोच्य सर्वथा ।
तथायुञ्जीत भैषज्यमारोग्याय यथा ध्रुवम् ॥

अ० हृ० सू० अ० १२ ॥

निवेदन

सुधाकलशविभ्रन्तं दयालुं दीनवत्सलम् ।
वन्दे धन्वन्तरिं देवमायुर्वेदप्रवर्तकम् ॥

श्रीकल्याण महाप्रभुकी असीम कृपासे रसतन्त्रसार व सिद्धप्रयोगसंग्रह द्वितीय खण्डका द्वितीय संस्करण आपकी सेवामें सादर समर्पित करते हुए हम परम प्रसन्नताका अनुभव कर रहे हैं क्योंकि इस पुस्तकको आपकी सेवामें लानेका हमें आज सुअवसर मिला है।

इस खण्डमें प्रथम खण्डकी अपेक्षा पठन, मनन तथा अनुभव करनेकी सामग्री अत्यधिक है। इसका एक एक पत्र उपादेय है। इसमें उन प्रयोग रत्नोंको स्थान दिया गया है, जिन्होंने अपने अलौकिक व चमत्कारिक गुणोंके कारण आतुरों व उनके परिचारकोंके दांतोंके नीचे अंगुलियां दबवा दी हैं। इसी खण्डके कतिपय प्रयोगोंने पाश्चात्य वैद्यविद्याविशारदोंके चहकते हुए मुखोंको बन्द कर असाध्य और भूमिस्थ मरणप्रायः रोगियोंको शय्यारूढ ही नहीं, प्रत्युत स्वस्थ और सबल बना दिया है, अतः हम आशा करते हैं कि, यशकी इच्छा रखने वाले वैद्य तथा उदार सज्जन वृन्द इस खण्डको भी पूर्वकी भांति अपना कर हमारे प्रयत्नोंको सफल बनावेंगे।

इन प्रयोग रत्नोंका संग्रह करनेमें श्री० पू० स्वामीजी महाराजको जो त्याग और परिश्रम करना पड़ा है, उसका वर्णन यह क्षुद्र लेखनी कर नहीं सकती। विद्वान् तथा कदरदान पाठकोंको हमारे कथनकी सत्यता अपने आप मालूम पड़ जावेगी। इस खण्डमें प्राचीन महर्षियों, सिद्धों, अर्वाचीन त्याग मूर्ति सन्तोंकी प्रसादियोंके साथ साथ अनुभवी वैद्योंके चिर परीक्षित तथा सद्यः फलदाता प्रयोगोंका भी संग्रह किया गया है। घरेलू नुसखों व चलते चुटकलोंको भी यथास्थान अपनाया गया है।

जिन सज्जनोंने रसतन्त्रसार व सिद्धप्रयोगसंग्रह प्रथमखण्ड, चिकित्सातत्वप्रदीप, औषधगुणधर्मविवेचन, रुग्ण परिचर्याको पढ़ा है, अथवा कृष्णगोपाल आयुर्वेदिक धर्मार्थ औषधालयकी दवाईयोंका सेवन कर लिया है, उनको श्री० स्वामीजी महाराजके व्यक्तित्व व अध्यवसायका परिचय देना बेकार है। हमारा इतना ही कहना पर्याप्त होगा कि, यह श्री० स्वामीजीका ही आत्मबल है कि लोगों ने 'शिरं दद्यात् सुतं दद्यात् न दद्यात् मंत्रमौषधम्" कथनको ठुकरा कर मंत्रमुग्ध सर्पवत् अपने अपने प्रयोग रत्नों और धातु-उपधातुओंको भस्म करनेकी क्रियाओंको दे दिया।

संस्थाके लोकप्रिय प्रकाशन

१ रसतन्त्रसार व सिद्धप्रयोगसंग्रह-प्रथमखण्ड-७ वीं आवृत्ति, आकार १८×२३, अठपेजी पृष्ठ ९००, मूल्य सजिल्द ११) अजिल्द ६॥)

२ चिकित्सातत्वप्रदीप—प्रथमखण्ड २री आवृत्ति, आयुर्वेदिक और एलोपैथिक पद्धतिसे निदान, चिकित्साके प्रारम्भकी उपयोगी सूचनाओं सहित विस्तृत ज्ञानप्रदाता ग्रन्थ साइज १८×२३, अठपेजी पृष्ठ ८००, मूल्य सजिल्द ६॥)

३ चिकित्सातत्वप्रदीप द्वितीयखण्ड-द्वितीय आवृत्ति, पृष्ठ ८०० (जुलाईके अन्ततक तैयार हो जानेकी संभावना है)

४ औषधगुणधर्म विवेचन-द्वितीय आवृत्ति-आयुर्वेदमें वर्णित औषधियोंके विविध गुणोंका वैज्ञानिक पद्धतिसे विवेचन। वैद्य और विद्यार्थियोंको अत्यन्त उपयोगी। आकार १८×२३, अठपेजी पृष्ठ ३०० मूल्य सजिल्द ४॥) अजिल्द ३)

५ गावोंमें औषधरत्न-प्रथम भाग-ग्रामोंमें सरलतासे प्राप्त होने वाली वनौषधियोंके गुणधर्म और उपयोग वैज्ञानिक पद्धतिसे सरलतापूर्वक समझानेवाला। वैद्य, ग्रामके साधारण व्यक्ति, सामान्य गृहस्थी आदिके लिए अत्यन्त उपयोगी। आकार १८×२३, अठपेजी, पृष्ठ ३२० मूल्य अजिल्द २) सजिल्द ३॥)

६ रुग्णपरिचर्या-भिन्न भिन्न प्रकारके रोगोंमें बीमारकी देख रेख करनेकी पद्धतिदर्शक उपयोगी ग्रन्थ। साइज २०×३० १६ पेजी, पृष्ठ ४०० मूल्य ३॥)

७ संक्षिप्त औषधपरिचय—रसतन्त्रसार व सिद्धप्रयोगसंग्रहमें लिखित भस्म, कूपीपक्व, पर्पटी, खरलीय रसायन वगैरहके गुणोंका संक्षेपमें वर्णन। पुस्तक आकार २०×३० सोलह पेजी पृष्ठ १२०, मूल्य ॥≈) मात्र।

८ नेत्ररोगविज्ञान—ले० स्व० डा० जादवजी हंसराज D O M S. (London) नेत्ररोग सम्बन्धी हरेक प्रकारकी शरीर विज्ञान, इन्द्रिय विज्ञान, निदान, औषधि चिकित्सा शस्त्र चिकित्सा-प्रत्येक प्रकारकी सम्पूर्ण सूचनादर्शक अमूल्य ग्रन्थ आकार १८×२३, अठपेजी पृष्ठ ६५०, चित्र २४२ मूल्य सजिल्द १५)

९ सिद्धपरीक्षा पद्धति-प्रथमखण्ड, नाड़ीपरीक्षा, मल, मूत्र, कफ, रक्त आदिकी नयी पद्धतिसे परीक्षा करनेकी पद्धति समझानेवाला अपूर्व ग्रन्थ। आकार १८×२२ अठपेजी, पृष्ठ ६२० मूल्य ८)

१० ज्वर विज्ञान—ज्वरके भिन्न भिन्न प्रकार, निदान और चिकित्सा सम्बन्धी विवेचनात्मक उपयोगी ग्रन्थ। आकार २०×३०, १६ पेजी, पृष्ठ ४५० मूल्य अजिल्द ३) सजिल्द ४॥)

११ गृहविज्ञान—सामान्य गृहस्थी सम्बन्धी उपयोगी चुटकले लिखे गये हैं।

प्राप्तिस्थान —

कृष्णगोपाल आयुर्वेदिक धर्मार्थ औषधालय

कालेड़ा-कृष्णगोपाल (अजमेर)

प्रकरण सूची

शास्त्रोक्त आयुर्वेदिक औषधियां, पुस्तकें और

मुफ्त वैद्यकीय सलाह

—:०—

पूज्य स्वामी श्री कृष्णानन्दजी महाराजकी आयुर्वेद सेवासे वैद्य समाज अच्छी तरह परिचित है। पूज्य स्वामीजी एक आदर्श सन्यासी हैं। आपने सन् १९२० से १९२६ तक सस्तुसाहित्य वर्धक कार्यालय अहमदाबादके सुप्रसिद्ध भिक्षु अखण्डानन्दजी के साथ हिन्दु धर्म, संस्कृति और समाजकी उन्नतिके लिये उच्च कोटिके साहित्य लिखकर सेवा की। अब सन् १९३० से अजमेर स्टेट में कालेड़ा कृष्णगोपाल ग्राममें आयुर्वेदकी सेवा कर रहे हैं। आपकी सेवा परायणता, नि स्वार्थ भाव और आयुर्वेद प्रेमके फलस्वरूप आज यह संस्था अपनी सत्यता, साहित्य सेवा और विशुद्ध आयुर्वेदिक औषधियाके लिए प्रसिद्ध है। इस संस्थासे प्रकाशित ग्रन्थोंमें अर्वाचीन और प्राचीन साहित्यके मतका तुलनात्मक दृष्टिसे विस्तारपूर्वक विवेचन किया गया है। जिनमें प्रत्येक अनुभूत प्रयोग बनानेकी विधि, गुण, अनुपान, आदि सरल भाषामें लिखे हैं। सैंकड़ों वर्षके अनुभूत प्रयोगको न छिपाकर आयुर्वेदकी उन्नतिके लक्ष्यसे प्रकाशित कर वैद्य समाजके सन्मुख रखदिये हैं। इसी एक मात्र कारणसे इतने अल्प समयमें ही रसतन्त्रसार व सिद्धप्रयोगसंग्रहके ६ संस्करण बिक गये और ७ वा संस्करण भी प्राय शीघ्र ही समाप्त होने वाला है।

इस संस्थामें किसीका व्यक्तिगत स्वार्थ नहीं है एव इसका संचालन सुचारु रूप से होते रहनेके लिए प्रान्तके ११ प्रतिष्ठित सज्जनोंका ट्रस्टमण्डल बना दिया गया है। औषध और पुस्तक विक्रीसे जो लाभ मिलता है उसका उपयोग गरीबोंकी सेवा करनेमें किया जाता है।

रसायन शालामें औषधि निर्माण समय शुद्धता और पवित्रताका विशेष ध्यान रखा जाता है और प्रत्येक प्रयोग संस्थासे प्रकाशित ग्रन्थोंमें लिखे विधानके अनुसार ही तैयार किया जाता है।

व्यवस्थापक—

कृष्णगोपाल आयुर्वेदिक धर्मार्थ औषधालय

कालेड़ा—कृष्णगोपाल (अजमेर)

प्रयोग सूची



श्री धन्वन्तरये नमः

रसतन्त्रसार व सिद्धप्रयोगसंग्रह

द्वितीय खण्ड

(१) कूपीपक्व रसायन और भस्म।

१. सुवर्ण वङ्ग।

प्रथम विधि—शुद्ध पारद, शुद्ध गन्धक, शुद्ध कलई और नौसादर चारों १२॥-१२॥ तोले तथा कल्मीशोरा ६ माशे लें। कलईको कड़ाहीमें डाल रस करके पारद मिलावें। फिर गन्धक, नौसादर और शोरा मिलाकर कज्जली करें, कपड़मिट्टी की हुई बड़े पेट और बड़ी नोंकवाली आतसी शीशीमें भरें। उस बोतलको नीचे छेदकी हुई हांडीमें रक्खें। नीचेका छेद १॥-१॥ इंच गोलाईका करें। बोतल हांडीमें रखकर बोतलकी नाभि तक वालुका भरें। फिर नीचे तेज अग्नि देवें। नौसादर मुँहपर लगता जाता है, जिससे मुँह बन्द होता रहता है। अतः सम्हालपूर्वक बीच बीच में बार-बार तप्त लोह सलाकाको चला-चलाकर परीक्षा करते रहें। ४-५ घण्टे पर लोहसलाकाकी नोकपर तेजस्वी द्रव्य चिपकने लगता है। तब समझ लें, कि स्वर्ण वङ्ग तैयार होने आई है। सलाका चलाने पर स्वर्ण वङ्ग दृढ़ चिपके, सरलतासे ऊपर न उठे, तब अग्नि देना बन्द करदें। लगभग ६ घण्टेमें स्वर्ण वङ्गका पाक हो जाता है। अग्नि मंद हो, तो ८ घण्टे लगते हैं। स्वांग शीतल होने पर बोतलको विधिपूर्वक तोड़कर ऊपरसे नौसादरके पुष्प और उसके नीचेसे वङ्ग सिंदूरको अलग निकालें। पैंदेमें सुन्दर गिनीगोल्डके समान तेजस्वी स्वर्ण वङ्ग मिलती है उसे अलग रखें। श्री० वैद्य नाथूरामजी देहलीवाले

मात्रा और गुणधर्म—रसतन्त्रसार प्रथम खण्डमें लिखे अनुसार।

२. मल्लसिंदूर।

विधि—शुद्ध पारद २० तोले, शुद्ध गन्धक १५ तोले और सोमल ५ तोले लें। तीनोंको मिलाकर कज्जली करें। उसे कपड़मिट्टी की हुई शराबकी २६ औंसकी लाल बोतलमें भरकर वालुकायन्त्र में रक्खें। आरम्भमें ३ घण्टे अग्नि तेज दें, फिर कम करें, ३-४ घण्टे बाद तपायी हुई लोहसलाका डालकर औषधिको चलावें। उस समय बोतलमें द्रव्य कीचड़ जैसा हो जानेका भास होता है। जब धुआँ नलीसे निकलना बन्द हो, तब

लोहसलाकाको करीब ५-५ मिनिट पर चलाना चाहिये, बोतलकी नलीको नहीं रगड़ना चाहिये। ४-५ घण्टेमें गन्धक नलीमें ज्यादा लग जाय, तब अग्नि केवल एक लकड़ीकी रक्खें और थोड़ा-थोड़ा कलमीशोरा डालते जाँय। ३-४ समयमें करीब ४-६ माशे शोरा डालना पड़ेगा। लगभग १० घण्टेमें सब गन्धकका जारण हो जाता है। गन्धक जब बहुत कम रहता है, तब वह बहुत जल्दी जल्दी उठ-उठकर डाट बनने लग जाता है। डाट आ जाने पर करीब १० घण्टे के पश्चात् (गन्धक जारण हो जाय तब) शलाका चलाना बन्द करें। १ घण्टा ठहर कर अग्नि कुछ तेज करें। फिर २ घण्टे होने पर अग्नि देना बिल्कुल बन्द करें। इस तरह यह रसायन १२ घण्टेमें तैयार होता है। अग्नि मद दी हो, तो १५-१६ घण्टे लगते हैं। स्वांग शीतल होनेपर बोतलकी नलीमें गन्धकके नीचे लगा हुआ मल्लसिंदूर निकाल लेवें। श्री० वैद्य नाथूरामजी देहलीवाले

वक्तव्य—ऊपर कही विधि अनुसार मल्लचन्द्रोदय, तालचन्द्रोदय, तालसिंदूर, व्याधिहरण रस, शिलासिंदूर, समीरपन्नग, सुवर्णभूपति, पचसूत आदि रस भी तैयार कराये हैं। शिलासिंदूर और समीरपन्नगमें मैनसिल होनेसे कलमीशोरा डालनेकी विशेष आवश्यकता नहीं मानी। २० तोले रससिंदूर समगुण गन्धक जारित में भी कलमीशोरा १॥-१॥ माशे २ बार डाला गया। रस सिंदूरका डाट १३ घण्टे बाद आने लगा। फिर ३ घण्टे बाद अग्नि देना बन्द किया। प्रयोगार्थ सिंगरफमें से भी रससिंदूर बनाया गया। २५ तोले सिंगरफमें ५ तोले गन्धक मिलाया। शीशी ५ बजे सुबह चढायी। दोपहरको ३ बजेसे डाट आना प्रारम्भ हुआ। शामको ७ बजे शीशी उतार ली।

समीरपन्नग (न० २) में मैनसिल न होनेसे वह सरलतासे बनता है। तलमें कुछ भी शेष नहीं रहता। पहले प्रकारमें मैनसिल होनेसे मैनसिलयुक्त पतली तह कुछ पीले रंगकी अलग भी हो जाती है। जो ग्राहकों को भ्रम में डाल देती है।

स्वर्णसिंदूर बनानेके लिये पारद को सैंधानमक और नींबूके रसमें खरल कराया। फिर धोकर २० तोले पारद, २० तोले शुद्ध गन्धक और १ तोला सुवर्ण वर्क मिलाकर कज्जली करायी। इसकी शीशी सुबह ६ बजे चढ़ाई। अग्नि मद दी गई। कलमीशोरा नहीं डाला। जिसको दूसरे दिन शामको ७ बजे तक (अर्थात् ३७ घण्टे तक) अग्नि दी। इस तरह वैद्य नाथूरामजी ने दो मासमें १५०० तोले रसायन और भस्म तैयार किये हैं। रसतन्त्रसार प्रथम खण्डके लेखकी अपेक्षा जो नया अनुभव मिला, वह पाठकोंके समक्ष रखदिया है।

कुछ रसायन कोयले की भट्टीपर भी बनाकर अनुभव किया। कोयलेकी भट्टीपर सत्वर बनते हैं। जिन रसायनोंको ३-३ दिन अग्नि देनी पड़ती है, उसके लिये लकड़ीकी भट्टी विशेष सुविधावाली रहती है।

समगुण और द्विगुण गन्धक जारित रससिंदूर सिंगरफमें से बनाकर निर्णय किया। रंग रूपमें किसीभी प्रकारका अन्तर नहीं पड़ता। इस प्रकारसे सरलतासे बन

जाता है। पारद की हानि कम होती है, समय बच जाता है! खर्च भी कम आता है। जिन फार्मेसीवालोंको रसायन कम मूल्यमें बेचकर ग्राहकोंको प्रसन्न रखना हो, उनके लिये ये सब विधियां अति उपयोगी हैं।

रसायन विधि, जो रसतन्त्रसार प्रथम खण्डके भीतर लिखी है, उस तरह बनानेमें समय अधिक लगता है। लकड़ी भी अधिक जलानी पड़ती है, किन्तु वह अधिक गुणदायी माना जायगा। रसायनका पाक जितना जल्दी कराया जाता है, वह उतना ही न्यून प्रभावशाली रहेगा। जिस तरह हाथसे चलनेवाली चक्की और यन्त्रसे चलनेवाली चक्कीसे पीसे हुए आटेमें अन्तर है, उस तरह इन रसायनों में अन्तर पड़ता है। दोनोंके गुण-धर्म में कितना अन्तर रहा है, यह पाश्चात्य प्रयोगविधि अनुसार कदापि अवगत नहीं हो सकेगा। सच्चे निर्णयका साधन मात्र एक ही है, कि समान रोगवाले अनेक रोगियोंपर प्रयोग करके अनुभव किया जाय।

मात्रा और उपयोग—रसतन्त्रसार प्रथमखण्ड में लिखे अनुसार।

३. सुवर्ण भस्म।

प्रथम विधि—शुद्ध सुवर्ण वर्क और सफेद सोमल ४-४ तोले को मिला, ुलसी, वन-तुलसी अथवा कुकरौंधेके रसमें ७ दिन खरलकर टिकिया बनावें। फिर सूर्यके ापमें सुखा सराव सम्पुट कर १ सेर गोबरीकी अग्नि देवें। स्वाङ्ग शीतल होनेपर निकाल १ तोला सोमल मिला पुनः १२ घण्टे उसी स्वरसमें खरलकर टिकिया बना सराव सम्पुट कर कुक्कुट पुट देवें। इस तरह ७ या अधिक समय १-१ तोला सोमल मिला-मिलाकर अग्नि देवें। सुवर्णकी चमक बिल्कुल नष्ट होजानेपर बिना सोमल मिलाये १२ घण्टे उसी स्वरसमें खरल करके कुक्कुट पुट देवें। पश्चात् गुलाब जल, कमलके फूलोंके रस तथा मोलसरी (बकुल) के फूलोंके स्वरसका एक-एक पुट देनेसे मुलायम लाल-गुलाबी रंगकी भस्म बन जाती है। वजन लगभग ६ तोले होता है। इस विधि का मूल आधार हमें गुजराती रसायनसार संग्रहसे मिला है। अतः हम उनके आभारी हैं।

मात्रा—१/८ से १/४ रत्ती दिनमें दो बार रोगानुसार अनुपानके साथ देवें।

उपयोग—सुवर्ण भस्मका उपयोग रसतन्त्रसार प्रथम खण्डके भस्म प्रकरणमें विस्तारपूर्वक दर्शाया है। वनौषधिसे मारित सुवर्णभस्मकी अपेक्षा यह भस्म उग्र मानी जायगी। क्योंकि, इसमें मल्ल भस्मका रासायनिक योग हुआ है। वातक्षेपजनित विकारों पर कहे हुए प्रयोगों—योगेन्द्र रस, बृहद् वातचिन्तामणि, रसराज रस आदिमें वनौषधि-मारित भस्मकी अपेक्षा मल्लमारित भस्म मिलानेसे योग आशुफलप्रद बनता है।

इस तरह कतिपय आचार्योंके मत अनुसार राजयक्ष्माकी द्वितीयावस्था और तृतीयावस्थामें उपयोगमें लेनेके लिये मृगाङ्करस, राजमृगाङ्क, महामृगाङ्क, रत्नगर्भपोटली रस, हेमगर्भपोटली आदिमें इस भस्मको मिलाना विशेष हितकारक माना जायगा।

मल्ल मिलाये बिना केवल सुवर्णके वर्कको वनतुलसीके रसके १०-१२ पुट देकर भी हमने अनेक बार सुवर्ण भस्म बनायी है। अच्छी मुलायम बन जाती है। हम विशेषत वनस्पतिमारित भस्मका प्रयोग करते रहते हैं।

सूचना—शुष्क कास, पित्तप्रकोप और राजयक्ष्माकी प्रथमावस्थामें जिस स्थानपर शीतल और शामक औषधि देनी हो, वहांपर इस मल्लमारित भस्मका उपयोग नहीं करना चाहिये।

इस मल्लमारित भस्मको यथाविधि अमृतीकरण करके व्यवहारमें लाना विशेष हितावह माना जायगा।

दूसरी विधि—शुद्ध सुवर्ण वर्क अथवा बारीक बुरादा १ तोला, कुक्कुटाण्डत्वक् (मुर्गीके अंडोके वे छिल्के जिनमेंसे स्वाभाविक बच्चे पैदा हुए हों) २ तोले लें। दोनोंको खरलमें डाल हुलहुलके स्वरससे १ दिन निरन्तर घोटकर टिकिया बना सुखाकर कुक्कुट पुट दें। स्वांग शीतल होने पर पूर्ववत् हुलहुलके रसमें घोट घोट कर ५ बार कुक्कुट पुट देनेसे गुलाबी रंगकी मुलायम भस्म हो जाती है।

श्री० पं० राधाकृष्णजी द्विवेदी, आयुर्वेदभूषण

मात्रा और गुणधर्म—रसतन्त्रसार प्रथम खण्डमें लिखे-अनुसार। यह भस्म श्रेष्ठ रसायन, हृद्य और मस्तिष्कपोषक है। राजयक्ष्मामें तथा वातवाहिनियोंकी और मांसपेशियोंकी निर्बलताको नष्टकर पुष्टि प्रदान करनेमें उत्तम है।

यह भस्म शुक्रक्षय, अस्थिक्षय, प्रबल ज्वर आदि रोगोंकी निवृत्ति होनेपर रही हुई निर्बलता, पक्षाघात और कम्प आदि वातरोगसे पीड़ित प्रसूता, सगर्भा और वृद्ध, इन सबको शक्तिप्रदान करनेके लिये इस विधिसे बनी हुई स्वर्ण भस्म विशेष लाभ पहुंचाती है।

४. सुवर्ण रज।

विधि—शुद्ध सुवर्ण के पतरे को पक्के काच के ग्लास या तश्तरी में रखते हुए एक्वा रेजिया (३ भाग हाइड्रोक्लोरिक एसिड और १ भाग नाइट्रिक एसिड को मिलाने पर एक्वा रेजिया बनता है। दोनों प्रकार के तेजाब जल रहित शुद्ध लेना चाहिये) में डालकर कुछ समय तक रहने देवें। तब सोना गल जायगा और एसिड की गन्ध निकलती हुई कम हो जायगी। एक्वा रेजिया (Aqua regia) उतना लें जितने में सुवर्ण गल जाय। अधिक एसिड मिलाया जायगा, तो फिर तपा कर एसिडको उड़ानेमें अधिक समय लगेगा। यदि एसिड कम मिलाया जायगा, तो सुवर्ण पूरा नहीं घुलेगा। सुवर्ण जो न घुला हो उसे निकाल कर दूसरे पात्रमें एक्वा रेजियामें मिला लेवें। फिर स्पिरिट लेम्प या केरोसिन के चूल्हे या कोयले की अंगीठी पर कड़ाही में रेत बिछावें। उस रेत में काँच के बीकर के भीतर उक्त स्वर्ण मिश्रण रखकर अग्नि देवें। उसमें एसिड का सब अंश उड़ जाने पर चमक रहित पीली रज जैसा सोना देखने में आयगा। उसे स्वांग शीतल होने देवें।

उसमें ऑक्जेलिक एसिडका १०% का (Solution) घोल बहुत धीरे धीरे डालते रहें। यह जल उतना मिलावें कि वह वर्णहीन (Colourless) हो जाय। (ताम्रमिश्रित होगा तो हरा रंग हो जायगा) रंग वर्णहीन होने पर फिल्टर पेपर से छान लें। फिर २-३ वार बाष्प जल से छानकर ऑक्जलिक एसिड को बिलकुल निकाल डालें।

सूचना—(१) ऑक्जलिक एसिड डालने के पश्चात् यदि सोल्युशन का रंग पीला हो जाय, तो उसमें एक्वा रेजिया रह गया है, ऐसा मानकर पुनः उसे गरम कर उड़ादें।

(२) ऑक्जलिक एसिड मिलाने से लोह आदि अंश जो मिश्रित हो, सब नष्ट हो जाता है। किन्तु ऑक्जलिक विष होने से स्वर्ण पाउडर को २-३ बार बाष्प जल से अच्छी तरह धोकर निकाल डालना चाहिये।

उपयोग—यह पाउडर एक प्रकार की विशुद्ध स्वर्ण भस्म है। इसमें तेजाब का कुछ भी अंश नहीं रहता। इसका प्रयोग वर्क के स्थान पर हम करते रहते हैं। बाजार से लाया हुआ वर्क या बनाया हुआ वर्क भी कुछ इतर धातु के मिश्रण वाला होता है।

यदि वर्क वनानेवालेने गड़बड़ी की हो, तो औषधि अति न्यून गुण वाली बन जाती है। वर्क वजन में कुछ कम आजाता है, तब आर्थिक हानि पहुंचती है। इनके अतिरिक्त यह पाउडर वर्क की अपेक्षा रक्त में सत्वर शोषित हो जाता है और पूरा पूरा लाभ पहुंचाता है। भस्म बनाने में भी हम इस पाउडर को ही उपयोग में लेते हैं।

जो रोगी वर्क का सेवन करते हैं उनको इस पाउडर का सेवन कराना विशेष लाभप्रद है। क्षय रोग की प्रथमावस्था में १ माशा स्वर्ण, २ माशे मुक्ता पिष्टि, ४ माशे प्रवाल पिष्टि, ५ माशे कपूर भीमसेनी, १ तो० गोदन्ती भस्म और ८ तो० सितोपलादि चूर्ण मिलाकर खरल कर लेवें। इसकी १-१ माशेकी मात्रा देनेसे १/९६ रत्ती सुवर्ण और ५/९६ रत्ती कपूर प्रतिमात्रा होता है।

इसकी १ दिन में तीन मात्रा शहद के साथ देते रहने और ऊपर ३-३ माशे सुदर्शन चूर्ण का फाण्ट पिलाते रहने से थोडे ही दिनों में शुष्क कास और ज्वर सह राजयक्ष्मा दूर हो जाता है। विशेष उपयोग स्वर्णभस्म (रसतंत्रसार प्रथम खण्ड) के उपयोग में देखें।

५. रौप्य भस्म।

प्रथम विधि—शुद्ध चाँदी के पतरे २० तोले और हरताल ४० तोले लें। हरताल को सत्यानाशी के रस में खरल कर चाँदी के पतरों पर दोनों ओर लेप कर दें। लेप सूखने पर सम्पुट कर एक सेर गोबरी को अग्नि देवें। फिर निकाल १० तोला हरताल का लेप करलें। उसे सुखा संपुट कर १॥ सेर गोबरी की अग्नि देवें। तीसरी बार ५ तोला हरताल और २ सेर गोबरी लेवें। फिर ४ से १० वें पुट तक सत्यानाशी के रस में खरल कर टिकिया बनाकर संपुट कर अग्नि देवें। ४ पुट से अग्नि थोड़ी-थोड़ी

बढ़ावें। भस्म अच्छी बन जाने पर गुलाब के फूलों के स्वरस में पीस टिकिया बना सुखा, बचे हुये गुलाब के शुष्क कल्क के भीतर रख, सराव सम्पुट कर ५ सेर गोबरी की अग्नि दें। ऐसे ३ पुट देने से मुलायम भस्म बन जाती है।

श्री पं० यादवजी त्रिकमजी आचार्य

द्वितीय विधि—शुद्ध चाँदी के ५० तोले मोटे कागज जैसे पतरे के २-२ इन्च के टुकड़े करें। फिर एक परात में कोयले की अग्नि पर उन टुकड़ों को फैला दें। सब टुकड़े न रह सकें तो थोड़े थोड़े रखें। अच्छी तरह गरम होने पर चिमटे से एक एक पतरे को उठा उठा कर छोटी करेली के रस में बुझाते जाय। इस तरह सब पतरेको २१ समय गरम करके बुझावें। फिर एक बड़ी हाँडीके ऊपरका तीसरा हिस्सा तोड़कर उसे कंडे (लगभग ७॥ सेर) से भर देवें। कण्डेपर करेलीका चूर्ण, जो रस निचोड़नेके समय बना है, उसकी १ इन्च की तह करें। इसपर चाँदीके पतरे फैलावें। ऊपरमें और करेली चूर्ण डालें। उसपर और चाँदीके टुकड़े रक्खें। इस तरह सब टुकड़े ७४ तहमें रख सबके ऊपर १ इंच या अधिक मोटी तह करेली चूर्णकी रक्खें। फिर ऊपरमें लगभग २॥ सेर कण्डे जमा कर अग्नि लगा देवें। स्वांग शीतल होनेपर चाँदीके पतरेको निकाल लेवें। इस तरह छोटी करेलीके चूर्णके भीतर रखकर ५ बार अग्नि देनेसे पतरे सरलतासे टूट जाते हैं। पश्चात् पतरेको कूट कर चूर्ण करलें। उसे करेलीके रसमें गोला तक खरल कर एक सरावमें भर लेवें। उसका साधारण सपुट कर रात्रिको २॥ सेर उपलोंकी अग्निमें रख देवें। दूसरे दिन पुनः करेलीके रसमें घोटें। १० पुट होजानेपर उपले थोड़े-थोड़े बढ़ाते जाँय। २० पुट होनेके पश्चात् उपले ५-१० और १५ सेर तक बढ़ावें। इस तरह २८ पुट देवें। अन्तिम पुटके समय छोटी-छोटी टिकिया बना, सूर्यके तापमें सुखा, सम्पुट कर अग्नि देवें। यह भस्म हल्के मैले लाल रंगकी मुलायम बनती है। ५० तोले चाँदीकी ५६ तोले भस्म बनती है।

श्री वैद्य नाथूरामजी देहलीवाले

सूचना—सुवर्ण और रौप्य जब तक कच्चे हों, तब तक ज्यादा अग्नि नहीं देनी चाहिये, अन्यथा पुनः जीवित हो जाते हैं या कठोर बन जाते हैं।

६. लोह भस्म।

विधि—शुद्ध लोह चूर्ण आध सेरको एक चीनी मिट्टीके पात्रमें भर ऊपर १ सेर तक तरबूजका रस डालकर किसी एकान्त स्थानमें रख दें। पात्रको ऐसे स्थानपर रखना चाहिये जिससे दिन या रात्रिको उठानेकी जरूरत न रहे। धूप लगती रहे। लगभग १ मास होनेपर पीली मिट्टीके सदृश भस्म बन जायगी। फिर इसको ३ दिन तक घीकुवारके रसमें खरलकर २-२ तोलेकी टिकिया बना सूर्यके तापमें सुखावें, फिर छोटी हाँडीमें बन्द कर मुखमुद्रा कर गजपुट में फूंक देवें। इस तरह ३ गजपुट देनेसे लाल रंग की मुलायम भस्म बन जाती है।

वक्तव्य—यदि घीकुंवारके रसमें ५-५ तोले सिंगरफ मिलाते रहें, तो भस्म विशेष लाभदायक बनती है; किन्तु रंग काला होजाता है। इसे जामुन की छालके क्वाथके ७ पुट देने पर वर्ण नीलाभ हो जाता है। यह भस्म मधुमेही को विशेष लाभ पहुंचाती है।

मात्रा—१ से २ रत्ती दिनमें दो बार देवें।

उपयोग—यह भस्म रक्तवर्धक और पाण्डुनाशक है। कब्ज नहीं करती और क्षुधाको बढ़ाती है। विशेष गुण रसतन्त्रसार व सिद्धप्रयोग-संग्रह प्रथमखण्डके भस्म-प्रकरण में लिखे हैं।

लोहभस्म अमृतीकरण—लोह भस्मके समान गोघृत मिला लोहेकी कड़ाहीमें डाल चूल्हे पर चढावें। नीचे मंद अग्नि देवें। फिर कुछ तेज करें। घी जीर्ण हो जाने पर अग्नि देना बन्द करें। स्वाङ्ग शीतल होने पर कड़ाहीको उतार लेवें। इस भस्मकी सर्व योगोंमें योजना करनी चाहिये। इस अमृतीकरण-क्रियाके करनेसे गुणमें वृद्धि हो जाती है और वारितर भी होने लगती है। (र० चं०)

७. अभ्रक भस्म।

विधि—धान्याभ्रक ४० तोलेको पीले फूलवाले भांगरेके रसमें रोज १-१ घण्टे घोट कर ७ दिन तक सूर्यके तापमें रक्खें। फिर गोला बनाकर सुखा छोटी हांडी में रक्खें। चारों ओर भांगरेका कल्क डालें। फिर मुँह पर ढक्कन लगा कपड़मिट्टी कर गजपुट देवें। इस तरह ३ पुट देनेसे निश्चन्द्र उत्तम मुलायम लाल रंगकी भस्म बन जाती है। (यद्यपि भस्म निश्चन्द्र होजाती है, परन्तु जबतक १०० पुट न दिये जांय तब तक विशेष गुणयुक्त नहीं होती)।

अभ्रक सेवन में अपथ्य—अभ्रक भस्म या अभ्रक सत्वका रसायन रूपसे (बल बढ़ानेके लिये) सेवन करने वालों को चाहिए कि सज्जीखार आदि क्षार, अधिक नमक, अम्ल, द्विदल धान्य (चना, मसूर, उड़द, अरहर, मटर, सेम, लाख आदि) बेर, ककड़ी, करेला, बैंगन, करीर (करील) और तैल का त्याग करें। इनके अतिरिक्त अधिक मिर्च, धूम्रपान, शुष्क अन्न, अधिक कब्ज करनेवाले पदार्थ, अति परिश्रम, मानसिक चिन्ता और उपवास भी नहीं करने चाहिये। ब्रह्मचर्यका जितना अधिक पालन हो उतना लाभ अधिक पहुंचता है।

८. अभ्रकसत्व भस्म।

अभ्रक-सत्व-पातन विधि प्रथम प्रकार—धान्याभ्रक ४० तोले, सोहागा, गूगल, घी, शहद, चिरमी, ये सब १०-१० तोले लें। सबको कूटकर मिला लेवें। फिर मट्ठा, कांजी या इमलीका जल १० तोले डालकर छोटी-छोटी टिकिया बनाकर सुखावें। पश्चात् हांडी या वज्रमूषामें डाल कोष्ठिक यन्त्रमें रख कोयलेकी तेज अग्नि देकर द्रवीभूत करें। उसे तत्काल समीप की साफ भूमि पर छिटकाकर छिन्नभिन्न फैला दें। उसमें जो

सत्व होता है, वह ठंडा होनेके बाद छोटे-छोटे गोल कणवाला, राईसे लेकर ज्वारदानेके समान धातु जैसी कान्तिवाला बन जाता है। शेष काले रंगका काच जैसा द्रव्य अधिक मात्रामें मिलता है, उसे काच समझकर छोड़ दें।

सत्वसंग्रह करनेकी विधि—एक पक्के लोहेका कड़ा दो मुँहवाला जो बिजलीद्वारा चुम्बकत्व प्राप्त किया हुआ हो, उस चुम्बकसे काँचके भीतर छोटे-छोटे कण, जो पृथक् दीखते हैं अथवा काँचको तोड़नेपर भीतरसे निकलते हैं उनको संग्रह करलेना चाहिये। आवश्यकता हो तो उन संगृहीत छोटे कणों को पुनः मूषामें रख तीव्राग्निमें धमाने से और द्रव होनेसे भूमिपर पूर्ववत् डालनेसे छोटे कणोंके विशेष कान्तिवाले बड़े कण बन जाते हैं, यही असली सत्व है। इसमें लोह द्रव्य विशेष प्रकारका होता है, उसे जंग नहीं लगता और हथौड़ेकी चोटसे टूटकर चूर्ण हो जाता है, यही उत्तम सत्व समझा जाता है। इसीका शोधन मारण करके भस्म बनायी जाती है।

कोष्ठिक यन्त्र—जमीनके ऊपर चबूतरा बना उस पर या बिल्कुल अलग १४ अंगुल ऊंचा, एक हाथ लम्बा और एक हाथ चौड़ा कोठा बनवालें। उसकी एक दीवार के भीतर नीचे की ओर धमाने के लिये एक छिद्र रक्खें। इस यन्त्र के भीतर सत्वपातन-योग्य धातुपूर्ण मूषाको रख चारों ओर पत्थर के कोयले भरकर अग्नि लगा देवें। फिर छिद्रमें धौंकनीसे (मोटर वाले बिजली के पंखेसे) खूब धमाने से धातु का सत्व कांचके साथ द्रव होजाता है। यद्यपि अनेक ग्रन्थों में नीचे गड्ढा बनाकर सत्व-पातनकी विधि लिखी है, परन्तु उपरोक्त विधि सुगम और अनुभवसिद्ध है। इसलिये सत्वपातन के लिये यन्त्र के नीचे छिद्र और जमीन में सत्व-संग्रह के लिये पात्र रखने की योजना नहीं करनी चाहिये।

वज्रमूषा—कुम्हार के घड़े बनाने की चिकनी मिट्टी या बाम्बीकी मिट्टी ३ भाग, सन, गोबरीकी राख, घोड़ेकी लीद, भूसे की राख और सेलखड़ी (या सफेद पत्थर) १-१ भाग तथा लोहे का कीट आधा भाग लें। सबको मिला खूब कूट पीसकर मूषा (हांडी) तैयार कर लेवें। यह मूषा धातु आदिके सत्व पातनके लिये उपयोगी है।

४० तोले अभ्रकमेंसे सत्व निकालनेमें २॥ ३ घण्टे लग जाते हैं। और यह सत्व १-२ तोलेतक निकलता है।

भस्म बनानेकी विधि—उपर्युक्त सत्वको कूटकर कपड़छान चूर्ण करें। फिर १० वां हिस्सा हिंगुल मिला घीकुवारके रसमें १२ घण्टे खरलकर टिकिया बना, धूपमें सुखा, दृढ़ सराव संपुटकर ५ सेर गोबरीकी आँच देवें। इस तरह २० पुट देवें। सिंगरफ बार-बार मिलाना चाहिये। अन्तमें एक या दो पुट अजारुकके दिये जाय, तो क्षयनाशक गुणकी विशेष वृद्धि होती है।

उपयोग—अभ्रकसत्व शीतल, त्रिदोषघ्न और रसायन है। इसमें विशेषतः पुरुषत्व लानेकी शक्ति है। इसके सेवनसे तरुणावस्थाकी प्राप्ति होती है, और वीर्य स्तम्भक

होता है। पुरुषत्व प्राप्तिके लिये इसके समान अन्य औषध नहीं है। इसके सेवनसे आयुकी भी वृद्धि हो जाती है। इस भस्ममें से १-१ रत्ती शहद-पीपल के साथ सेवन करनेसे राजयक्ष्मा, शोष, कास, प्रमेह, पाण्डु और जीर्ण रोग, सब नष्ट हो जाते हैं।

९. सत्व-प्रधान अभ्रक-भस्म।

विधि—एक सेर धान्याभ्रक और आध सेर चौकिया सोहागा मिलाकर वज्रमूषा या ३ कपड़मिट्टी की हुई हाँडीमें भरदें। हाँडीके तल भागमें एक छिद्र सत्व गिरनेके लिये करें। हाँडीपर सराव ढक मुखमुद्रा करें। फिर कपायकरी भट्टीमें पत्थरके कोयले भर नीचेसे लकड़ीकी आँच दें। कोयले जलने लगें, तब लोह सलाकासे कुछ कोयलोंको हटा बीचमें हाँडी रखने योग्य स्थान बनाकर हांडीको रक्खें। एवं हांडीको ऊपरसे भी कोयलोंसे ढक दें। भट्टीके नीचेसे सब अग्निको निकाल, भट्टीके भीतर हांडीके ठीक नीचे एक लोहेका तसला रख देवें। एक घण्टेके बाद हांडीमें से अभ्रकका सत्व बह-बहकर तसलेमें गिर जायगा। इस सत्वके भीतर अभ्रकका अंश भी मिला रहता है; किन्तु वह भी चन्द्रिकारहित होता है। इसका वर्ण कांचके समान काला होता है। इस सत्वको कूट कपड़छान चूर्ण कर आकके दूधमें ३ दिन तक खरलकर छोटी-छोटी टिकिया बना धूपमें सुखा संपुट कर गजपुटमें फूँक देनेसे एकही पुटमें उत्तम भस्म बन जाती है। अनेक चिकित्सक १०० पुटी अभ्रक भस्मके स्थानपर इसे देते रहते हैं। (र० सा०)

वक्तव्य—इस भस्मको पुनः एक-एक दिन आकके दूधमें खरलकर ३ गजपुट दिये जाये, तो यह अधिक गुणदायक बन जाती है।

१०. अभ्रक-भस्मका अमृतीकरण।

विधि—त्रिफला क्वाथ १६ भाग, गोघृत ६ भाग और अभ्रक भस्म १० भाग, तीनोंको लोहेकी कड़ाहीमें डाल मंदाग्निसे पचन करें। इसी तरह केवल गौघृत समान परिमाण में मिला, मंदाग्नि पर शुष्क कर लेने से भी अमृतीकरण होता है। (आ० प्र०)

वक्तव्य—अमृतीकरण करने पर भस्म को सुंदरता नष्ट हो जाती है, किन्तु गुण में वृद्धि हो जाती है। और वह जरा, मृत्यु और रोगों के समूहों को शीघ्र दूर करती है।

११. सत्वाभ्र रसायन।

प्रथम विधि—अभ्रक-सत्वको कूट बारीक चूर्ण कर समान घी मिलाकर लोहेकी कड़ाही में भूनें। कड़ाहें अति लाल हो जाने पर लोहे की खरलमें डालकर घोटें। पुनः घी मिलाकर भूनें। लाल हो जानेपर लोह खरल में घोटें। इस तरह सात बार करें। फिर ८ वां हिस्सा गन्धक मिला बड़की जटाके क्वाथ में खरलकर टिकिया बना, सुखा, सराव सम्पुटकर गजपुट दें। इस तरह बड़की जटाके क्काथके ५० गजपुट दें (वट दुग्धके पुट देवें तो विशेष बलवान होता है) फिर त्रिफला क्काथके ५० गजपुट दें। सब गजपुट बार-बार गन्धक मिलाकर देते रहें। इस तरह १०० पुट देनेपर उत्तर सत्वाभ्र रसायन तैयार होता है।

(र० र० स०)

द्वितीय विधि—अभ्रक-सत्वको मूषामें रख कर कोयलों की तीव्राग्निपर तपावें और लाल होजाने पर कांजीमें बुझावें। फिर इमाम दस्ते से खूब कूट, लोहेकी खरलमें घोटें। जो कण बड़े रह गये हों, उनको मूषामें डाल कर तपावें। फिर काँजी में बुझा कर कूटें। पश्चात् लोह खरलमें घोट कर बारीक चूर्ण करें। इस चूर्णके साथ समभाग घी मिलाकर लोहेकी कड़ाहीमें भूनें। कड़ाही खूब लाल हो जाने पर नीचे उतार लोह खरलमें डाल कर घोटें। शीतल हो जाने पर पुन समभाग घी मिलाकर कड़ाहीमें भूनें। पुन लोह खरलमें घोटें। इस तरह तीन बार करनेसे मुलायम चूर्ण हो जायगा। पश्चात् आँवलों का रस और आवलोंके पत्तोंका स्वरस मिला मिलाकर ३-३ बार तपावें। बार-बार लाल हो जाने पर लोह खरलमें घोटें। फिर पुनर्नवा का रस, वासापत्रका स्वरस और कांजी, इन तीनोंके मिलाये हुए द्रवके साथ खरल कर टिकिया बना सम्पुट कर १० वराह पुट दें। फिर समभाग गन्धक मिला, घीकुवारके रसमें खरल कर, १० वराह पुट देनेसे दिव्याभ्र रसायन बन जाता है। (र० र० स०)

मात्रा—१/४ से १/२ रत्ती तक दिन में २ बार त्रिकटु, वायविडंग और घी अथवा शहद पीपल या अन्य रोगानुसार अनुपानकेसाथ देवें।

उपयोग—यह रसायन अति गुणदायक, वात शामक, मस्तिष्क पोषक, पाचक और अग्निप्रदीपक है। इसके सेवन से क्षय, पाण्डु, संग्रहणी, शूल, आमवात, कुष्ठ, ऊर्ध्वश्वास, प्रमेह, अरुचि, दारुण कास, अग्निमान्द्य, उदररोग और अन्य सब बढ़े हुए रोगोंको भिन्न भिन्न अनुपानके साथ सेवन करनेसे शीघ्र नष्ट करता है। क्षय, प्रमेह, प्रदर आदि पर सत्वर अपना प्रभाव दर्शाता है।

रसायन गुणकी प्राप्तिके लिये सहस्रपुटी अभ्रक भस्मकी अपेक्षा यह सत्वाभ्ररसायन अत्यधिक लाभ पहुंचाता है। यदि लक्ष्मी विलास रसमें अभ्रक भस्मके स्थान पर इस रसायनको मिलाया जाय तो, वह शुक्रवृद्धि, शुक्रस्तम्भन और रोगनाशक आदि गुण विशेष दर्शाता है। इसी तरह अभ्रक भस्म प्रधान इतर औषधियाँ भी इस रसायनके मिलानेसे अत्यधिक गुणदायक बन जाती हैं।

१२. वङ्ग भस्म।

प्रथम विधि—कलई पाटकी अशुद्ध २॥ सेरको लोहेकी कड़ाहीमें डाल, चूल्हे पर चढ़ाकर तीव्र अग्नि देवें। कलईकी द्रुति होने पर बड़की जटा १ इंच मोटीका डंडा लेकर उससे कलई घोटते रहें, तथा कड़वे सुहिंजनेके पत्ते डालते जाय। १ सेर पत्ते डालने पर भस्म बन जाती है। फिर एक सेर आँवलोंको १६ सेर जलमें मिला चतुर्थांश क्वाथ कर उस क्वाथका इस भस्ममें पचन करें। फिर ८ सेर गोमूत्र तथा १ सेर तिल-तैल का पचन करावे। जिससे कलईके प्रत्येक परमाणुमें रहा हुआ दोष जल जायगा और भस्म निर्दोष बनेगी। फिर भस्मके वजनसे दूने वजनके मेंहदीके ताजे पत्ते

कूटें, उसके साथ भस्म मिला, टाटके टुकड़े पर दो अंगुल मोटी तह फैलावें । पश्चात् दृढ़तापूर्वक लपेट कर गोल गट्ठा बनावें और ऊपर नारियलकी डोरी कसकर बाँध दें। फिर गट्ठेको निर्वात् स्थानमें मिट्टीके बरतनके भीतर ३ गोबरीके ऊपर रक्खें । पश्चात् ऊपर ५-७ गोबरी रखकर अग्नि दे देनेसे सफेद पुष्पवत् वङ्ग भस्मकी खील बन० जाती है। इस भस्मको पुनः दूसरी बार मेंहदीके पत्तोंके साथ मिलाकर अग्नि देनेसे अति गुणवान् वङ्ग भस्म बनती है ।

वक्तव्य—यद्यपि तैलादिके प्रयोगसे अशुद्ध भी निर्दोष हो जाती है। परन्तु तेल, तक्र, गोमूत्र आदि में ३-३ बार बुझाली जाय तो विशेष गुण वृद्धि होती है। (आ. नि. मा.)

मात्रा और गुणधर्म—रसतन्त्रसार प्रथम खण्डमें लिखे अनुसार ।

द्वितीय विधि—१ सेर शुद्ध कलईको दलदार, मजबूत मिट्टी (या लोहे) की कड़ाहीमें डालकर द्रव करें । उसमें थोड़ा-थोड़ा पोस्तडोडेका चूर्ण डालते जाँय और बबूलके ताजे डंडेसे चलाते रहें । ४ सेर पोस्तडोडेका चूर्ण समाप्त होने पर लगभग १२ घण्टेमें भस्म बन जाती है । फिर भस्मको कड़ाहीमें इकट्ठी कर ऊपर तवा ढक दें और ६ घण्टे तक अग्नि देवें । स्वांग शीतल होने पर भस्मको कपड़ेसे छान, घीकुंवारके रसमें २ दिन खरल कर १-१ तोलेकी टिकिया बना कर धूपमें सुखावें । फिर निर्वात स्थानमें एक परातके भीतर २॥ सेर गोबरीके टुकड़े रख ऊपरमें बिनौले की आधइञ्च मोटी तह जमा उसपर अलग-अलग टिकिया रखें । पुनः बिनौलेकी आध इञ्च मोटी तह कर टिकिया रखें । आवश्यकता अनुसार ३ तह कर सकते हैं । फिर ऊपर में १ इञ्च बिनौले की तह कर ऊपरमें चारों ओर उपले ५ सेर रखकर अग्नि लगा देवें । तीसरे दिन स्वांग शीतल होने पर सावधानीसे राखको हटा टिकियाओंको निकाल लेवें । पुनः घीकुंवारके रसमें १२ घण्टे खरलकर टिकिया बना एक हांड़ीमें बन्दकर गजपुट अग्नि देवें । इस प्रकारसे ७ पुट देने पर सफेद, मुलायम और निरुत्थ भस्म हो जाती है ।

स्व० वैद्यराज पं० हरिप्रपन्नजी

मात्रा-गुणधर्म और उपयोग—रसतन्त्रसार प्रथम खण्ड में लिखे अनुसार ।

१३. यसद भस्म ।

विधि—आध सेर शुद्ध जसदको एक दलदार मजबूत मिट्टी या लोहकी कड़ाही में डाल चूल्हे पर चढावें । नीचे तीव्र अग्नि देवें । द्रव होनेपर पलासके मूलके ताजे डंडे या केतकीके मूलसे घोटते रहनेसे भस्म बन जाती है । फिर कड़ाहीको नीचे उतार, गरम गरम भस्मके बीचमें गड्ढा कर १० तोले पारद डाल, उसपर जसद भस्म डालकर गड्ढेको ढक दें । फिर चूल्हे पर चढाकर अतिमंद अग्नि ३ घण्टे तक देवें । जिससे पारद उड़ जायगा; और जसद-भस्म हरी-पीली-सी बन जायगी । फिर भस्मको खरलमें डाल घीकुंवारके रसमें खरल कर २-२ तोलेकी टिकिया बना सरावसंपुट कर गजपुटमें फूक देवें । यह

भस्म फूलती है। इसलिये नीचेके आधे सपुटमें ही टिकियाए रखनी चाहियें। गजपुट शीतल हो जाने पर सम्पुटको निकाल पुन भस्मको घीकुआरका पुट देवें। इस तरह २० गजपुट देनेसे भस्म अति मुलायम, हल्के वजन वाली, और कुछ रक्तवर्णयुक्त पीले रंगकी बन जाती है। (आ० नि० मा०)

सूचना—यदि भस्ममें १०-१० तोले पारद गन्धक की कज्जली मिला कुमारी रस में १२ घण्टे खरल कर २-२ तोले की टिकिया बना, सुखा कर सपुट करें फिर गजपुटमें भस्म करें तो, अति उत्तम भस्म बनेगी। (सशोधक)

मात्रा—१ से २ रत्ती दिन में दो बार शहद, मक्खन मिश्री, सितोपलादि चूर्ण या रोगानुसार अनुपानके साथ देते रहें।

उपयोग—यह भस्म जीर्ण ज्वर, क्षय, कास, अन्त्रप्रदाह, नेत्ररोग, प्रदाह आदि में अति हितकारक है। उर क्षत और श्वासनलिकाप्रदाहज कास रोगमें जब अत्यन्त दुर्गन्ध युक्त कफ निकलता हो, तब जसद भस्म और सुवर्णमाक्षिक भस्म १-१ रत्ती मिलाकर दिनमें ३ समय ४ तोले गरम जलमें मिला कर पिलाते रहने से ३-४ मासमें रोग दमन हो जाता है। नेत्रकी लाली, अश्रुस्राव, दाह, दृष्टिकी निर्बलता आदि रोगों पर धोये घृतमें २ प्रतिशतका मलहम बनाकर अजन करने तथा मक्खन मिश्रीके साथ उदर सेवन कराने पर लाभ हो जाता है।

उर क्षत में कफ रक्तमिश्रित आता हो, तो यह भस्म दिनमें ३ बार अमृतासत्व, मिश्री और घृतके साथ देने से दो चार दिनमें ही रुधिर निकलना बन्द होजाता है।

वक्तव्य—विशेष गुण विवेचन रसतन्त्रसार प्रथम खण्डमें किया गया है। यदि स्वर्णमालिनी वसतमें खर्परके अभाव में अन्य द्रव्य की अपेक्षा यशद भस्म डाली जाय तो उक्त रस प्रभावशाली बनता है। (सशोधक)

द्वितीय विधि—शुद्ध यसद १ सेरको लोहेकी कड़ाहीमें डाल कर द्रव करें। फिर पोस्तडोडे का चूर्ण और भाग (मिश्रण) थोड़ा थोड़ा डालते जायं और नीम के डण्डे से चलाते रहें। ४ सेर चूर्ण डालने पर जसद भस्म हो जायगी। उसे तवेसे ढक कर ६ घण्टे तक तेज अग्नि देवें। फिर स्वाग शीतल होने पर कपड़े से छान घी कुंवारके रस में १२-१२ घण्टे खरल कर टिकिया बना बना कर १० गजपुट देने से रक्ताभपीत वर्ण की मुलायम भस्म बन जाती है।

गुणधर्म—यह भस्म शीतल, रोपण और कसैली है। इसका विशेष उपयोग पित्तप्रमेह, राजयक्ष्मा और अन्त्रविकार पर होते हैं।

तृतीय विधि—शुद्ध यसद १ सेरको लोहेकी कड़ाहीमें डालकर द्रव करें तथा कलमीसोरा और पीपल वृक्षकी छालका जौकुट चूर्ण १-१ सेर लें। द्रव होने पर दोनोंको एक एक मुट्ठी डालते जायं और बड़के डण्डे से चलाते रहें। जसद बिल्कुल धूल जैसा हो जाय, तब चलाना बन्द करें। फिर भस्मको तवेसे ढक कर ६ घन्टे तक तेज

अग्नि दें। स्वांग शीतल होने पर भस्मको जलमें मिलाकर रख दें। जब जल साफ नितर जाय, फिर ऊपर ऊपरसे निकाल दें। फिर नया जल मिलावें और नितरे हुए जल को निकाल डालें। इस तरह ४-६ समय जल मिलाकर निकाल देवें। पश्चात् नयी हांडीमें भर कर धूपमें रख देवें। भस्म सूखने पर घीकुँवारके रसमें १२ घण्टे खरल कर टिकिया बनाकर गजपुट "। इस तरह १० पुट देनेसे पीले रंगकी मुलायम भस्म बन जाती है।

सूचना—बड़का डण्डा ३ हाथ लम्बा रखें। कारण, कलमीसोरा डालने पर आगकी लपट उठती है। उस समय बराबर चलाते रहने पर भस्म पीली बनती है; नहीं तो काली बन कर फिर सफेद हो जाती हैं।

गुणधर्म—यह भस्म विशेष शीतल है। मूत्रसंस्थाके रोगों पर विशेष हितावह है। शेष गुण धर्म रसतन्त्रसार प्रथमखण्डमें लिखी हुई यशद भस्म के अनुसार।

श्री. वैद्य नाथूरामजी देहलीवाले

१४, नाग भस्म

प्रथम विधि—२ सेर शुद्ध शीशे को कड़ाही में डाल तीक्ष्ण अग्नि पर रख, बड़ या पलास के डण्डे से घोट कर भस्म करें। फिर छान घीकुँवारके रसमें खरल कर २-२ तोले की टिकिया बना कर २-२॥ सेर गोबरी की अग्नि में फूंक देवें। यह शीशा ४० पुट तक सजीव हो जाता है। इसे स्वांग शीतल होने पर खोल कर निकाल लेवें और बारम्बार पुट देते रहें। ४० पुट हो जाने के पश्चात् गोबरीकी मात्रा बढावें। अन्त में १० गजपुट देवें। इस तरह १०० पुट देने पर मुलायम, उत्तम भस्म बन जाती है।

(श्री० पं० सुखरामदासजी टी० ओझा)

मात्रा—आध से १ रत्ती दिनमें २ बार मक्खन के साथ १० दिन तक देवें। फिर १० दिन बन्द करें। पुनः १० दिन देवें।

उपयोग—यह भस्म उत्तम रसायनरूप है। शास्त्रीय फल श्रुति 'नागस्तु नागशत तुल्यबलं ददाति' इस वचन की सार्थकता इस भस्म में प्रतीत होती है। मधुमेह के रोगीके लिए यह आशीर्वाद के समान है। इनके अतिरिक्त वृद्धावस्था, दीर्घकालपर्यन्त रोग रह जाने से प्राप्त शारीरिक निर्बलता, क्षय, उरःक्षत, शुक्रकी निर्बलता, स्मृतिह्रास, अकाल में वलीपलित की प्राप्ति, नपुंसकता आदि को भी यह भस्म दूर करती है। विशेष गुणविवेचन रसतन्त्रसार व सिद्धप्रयोग संग्रह प्रथम खण्ड में है।

द्वितीय विधि—२ सेर शुद्ध शीशेको मिट्टी के पात्र में डाल चूल्हे पर चढ़ा तीव्राग्नि देवें और आक के मूल के डण्डे से चलाते रहें। लाल सिन्दूर सदृश भस्म होती है। उसे छान घीकुंवारके रस में खरल कर १-१ सेर के पेड़े बना सुखा मिट्टी के सरावमें रख, मुँह पर कपड़ मिट्टी करें। फिर बाटी की तरह सेकें। इस तरह २० पुट देने पर मुलायम लाल भस्म बन जाती है। (श्री० पं० सुखरामदासजी)

तृतीय विधि—१ सेर शुद्ध शीशेको लोहे की कड़ाही में डालकर द्रव करें। उसमें इमली और पीपल वृक्षकी छालका जौकूट चूर्ण थोड़ा थोड़ा डालते जाँय और लोहे की कुड़छीसे चलाते रहें। लगभग ४ सेर चूर्ण डालने पर शीशेकी भस्म लाल रंगकी हो जाती है। पश्चात् भस्म को तवेसे ढक दें और तीन घण्टे तक अग्नि देते रहें। स्वांग शीतल होने पर कपड़ेसे छान लेवें फिर १२ वाँ हिस्सा मैनसिल मिला अडूसे के पानोंके स्वरस में ६ घण्टे तक खरल कर, छोटी छोटी टिकिया बना, सम्पुट में बन्द कर २ सेर गोबरीकी अग्नि देवें। इस तरह २० पुट देवें। इस पुट तक मैनसिल मिलावें। १० पुटके पश्चात् अग्नि थोड़ी थोड़ी बढ़ाते जाँय। यह भस्म हल्के लाल रंगकी मुलायम बनती है।

गुणधर्म—यह भस्म, मधुमेह, शुक्रस्राव, श्वेत प्रदर और उरक्षतमें विशेष व्यवहृत होती है।

चतुर्थ विधि—अगस्त्य के २ सेर पानका कल्ककर आध सेर शीशेके पतरे पर लेप करके सुखावें। फिर कड़ाहीमें डालकर तीव्राग्नि दें। द्रव होने पर वासा क्षार और अपामार्ग क्षार ५-५ तोले अलग बर्तनमें मिला, उसमें थोड़ा थोड़ा डालते जाँय और अडूसेके डण्डेसे चलाते रहें। ३-४ घण्टे तक घोटने पर शीशे की भस्म हो जाती है। फिर उस पर तवा ढक कर ३ घण्टे और अग्नि दें। स्वांग शीतल होने पर भस्म को निकाल, कपड़छान करें। फिर अडूसा के स्वरसमें ३ दिन खरल कर टिकिया बना सूर्यके तापमें सुखा सरावसम्पुट कर, २ सेर गोबरीका लघु पुट दें। फिर अडूसाके स्वरसमें १-१ दिन खरल कर टिकिया बना ७ पुट (यथार्थ में २१ पुट) देनेसे सिन्दूरके समान लाल रंगकी भस्म बन जाती है। अंतिम समयमें पूरा गजपुट देना चाहिये। (र० स० सं०)

गुणधर्म—शुक्रमेह, मधुमेह, श्वेत प्रदर, कास, श्वास, उर क्षत शूल और गुल्म आदि रोगों में हितावह है।

वक्तव्य—नाग भस्मका गुणधर्म विवेचन रसतन्त्रसार व सिद्धप्रयोगसंग्रह प्रथम खण्डमें आयुर्वेदिक दृष्टिसे विस्तार पूर्वक दिया है। इनके अतिरिक्त शीशाधातुके गुण धर्म आधुनिक वैज्ञानिक दृष्टि से यहापर दिया है। जिसे जान लेने पर उसका कभी दुरुपयोग न हो सकेगा।

शीशा अति मारक धातु है। इसकी भस्म अर्ध पक्व होने या योग्य न बनने पर विविध प्रकारके विपलक्षण उत्पन्न करती है। परिपक्व भस्मका भी अति योग होने या दुरुपयोग होने पर कुछ अंशमें अहितकर सिद्ध हुई है। अत शीशा मुर्दासंग (Lead oxide), नाग शर्करा (Lead Acitate) आदि के सम्बन्धमें डाक्टरी मतानुसार गुणधर्म का विवेचन किया जाता है। यह गुणधर्म कच्चे शीशे का है। उत्तम बनने पर सौम्य बन जाता है। फिर भी कम पुटवाली भस्ममेंसे दोष पूर्णांश दूर नहीं हो सकेगा।

शीशा धातु उदरमें जाने पर प्रारम्भमें कुछ भी क्रिया नहीं दर्शाता, तथापि आमाशय और अन्त्रके विविध रसोंके साथ रासायनिक संमिश्रण होने पर द्रवणीय होकर शोषण होजाता है। फिर ग्राही गुण दर्शाता है।

शीशा धातुकी क्रिया द्विविध हैं। पहली स्थानिक संकोचन और अधिक मात्रा में प्रयोग करने पर उग्रता उत्पादन। दूसरी क्रिया शोषण होने पर व्यापक क्रिया। दोनों क्रिया परस्पर विरुद्ध है। कारण स्थानिक उग्रता इतनी उपस्थित होती है, कि उस स्थान की शोषण शक्तिका ह्रास होता है। इसलिये व्यापक क्रिया प्रकाशनार्थ नागभस्म या नागघटित औषध का प्रयोग करना हो, तो मात्रा बहुत कम देनी चाहिये। जिससे स्थानिक उग्रता उत्पन्न न हो।

शीशाघटित औषधकी व्यापक क्रिया संकोचक और अवसादक है। यह अवसादन क्रिया रक्त संचालक यन्त्रमें और विशेषतः वात संस्थामें प्रकाशित होती है। एक ही समय में अत्यधिक मात्रा में कच्चा शीशा सेवन करनेपर वमन और उग्र विष क्रिया के लक्षण उपस्थित होते हैं। आमाशय और अन्त्रमें इसकी रासायनिक क्रिया प्रकाशित होती है; अर्थात् इसके द्वारा आमाशय और अन्त्ररसके निःसरणका ह्रास होता है। शेष सब रक्तप्रणालियां आकुंचित होती है। अंत्र की पुरःसरण क्रिया प्रतिरुद्ध होती है फिर शीशा और अन्त्र रसका संमिश्रण होने पर इसका परिवर्तन एल्ब्युमिन मिश्रण (Albuminate) के रूपमें हो जाता है। उसका रक्तमें शोषण होकर देहके विविध विधानमें प्रधानतः वात संस्थाके केन्द्र विभागमें जाकर संग्रहीत होता है। फिर वह देह से शनैः शनैः बाहर निकलता है। यदि कच्चा शीशा अल्प मात्रामें दीर्घकाल तक सेवन कराया जाय, तो भी भीतर संग्रह होनेपर विषक्रिया दर्शाता है।

शीशा सेवन होने पर वृक्कों द्वारा रक्तमें से क्षार (यूरेट्स) का प्रभेद नहीं होता। इस हेतुसे शीशाके सेवन से पेशाबमें यूरिक एसिडकी मात्रा कम होती है और रक्तमें बढ़ जाती है। परिणाममें उग्र वातरक्तके लक्षण प्रकाशित होते हैं। अतः शीशे का सेवन दीर्घकाल पर्यन्त नहीं करना चाहिये। एवं वृक्करोग पीड़ितोंको भी नहीं कराना चाहिये। डाक्टरी मत अनुसार वृद्धोंको भी शीशा सेवन कमसे कम करना चाहिये।

स्वस्थावस्थामें डाक्टरी शीशाघटित औषधि का सेवन अल्प मात्रामें कुछ दिन तक करने पर स्रावण क्रियाका ह्रास, धमनीकी पुष्टि और गति में लघुता तथा शारीरिक उष्णताका ह्रास होता है। परिणाममें सब धमनी और स्रावणी प्रणाल समूहकी परिधि आकुंचित होती है। चिकित्सार्थ उतने तक ही विधेय। अतियोग होनेपर विषक्रिया उपस्थित होती है। जब अवयव शिथिल हुए हों, धमनीकी दीवार प्रसारित हो गई हों, विविध अवयवों का प्रकोप होकर स्राव बढ़ गया हो, तब शीशा प्रयुक्त होता है।

शीशा धातुका देहमें प्रवेश होने के अनेक मार्ग हैं। टाइप फाउण्डरी के कार्यकर्ता, कम्पोजीटर, लाल रंगका काम करने वाले तथा चित्रकार आदि जिनके व्यवहार में सीसा

धातु आती हैं, ये सब अन्नमें प्राय इस धातुके द्वारा विषाक्त होते हैं सीसा को गलाने पर जो धुआँ उत्पन्न होता है, वह फुफ्फुसोंमें जाने पर विषोत्पत्ति करता है। शीशा धातु सूक्ष्म रजरूपसे वायु के साथ मिलकर फुफ्फुसोंके भीतर पहुच कर विषप्रभाव दर्शाता है। इस तरह सीसाके पात्रमें भोजन या पान करनेपर भी वह देहमें प्रवेश हो जाता है। सीसाके प्यालेमें सुरापान करने वाले और सीसाके नलों से प्राप्त पानी का निरन्तर सेवन करने वाले अधिक विषाक्त हुये हैं। अत शीशे के पात्रमें भोजन और पान निषेध है, एवं फूटे हुए कासी आदिके पात्रों को भी शीशे द्वारा नहीं जोड़ना चाहिए।

उपर्युक्त रास्तोंसे शीशा देहमें प्रवेश करता है, किन्तु त्वचा द्वारा इसका शोषण न होनेसे उस मार्ग से प्रवेश नहीं करता। तथापि फैले हुये गम्भीर क्षतपर सीसा (मुर्दासंग) घटित औषध प्रयोग करने पर विषाक्त होनेकी संभावना है। सीसा धातु मूत्र, पित्त, दूध, प्रस्वेद और प्रधानत मल द्वारा अत्यन्त धीरे धीरे देहसे निर्गत होता है।

एक साथ अधिक मात्रा लेनेके हेतुसे और कच्चे सीसा द्वारा विषाक्त होने पर आमाशय और अन्त्रमें प्रदाह होकर अति तृषा, कण्ठमें शुष्कता, आमाशयमें दाह, वेदना, वमन, उदरशूल, कोष्ठकाठिन्य, यकृत् रोग, मलका रग काला हो जाना, देह शीतल और स्वेद पूर्ण बन जाना, पैरोंमें झनझनाहट और शून्यता, आक्षेप और सन्निपात आदि लक्षण उपस्थित होते हैं। यदि मात्रा कम किन्तु दीर्घ कालतक सेवन करने पर विष सगृहीत हुआ हो, तो पहले मुँह, तालु और नासारन्ध्रमें शुष्कता, पेशाब का ह्रास, मलावरोध, पित्त और अन्त्रके रसनिःसरणमें न्यूनता, मलमें वर्ण वैलक्षण्य, आमाशय और अन्त्रमें वेदना, क्षुधामान्द्य, उबाक और वमन आदि लक्षण प्रतीत होते हैं। मसूड़े के अग्रभाग, ओष्ठ और मुहमें गालके भीतर नीलापन, जिह्वापर सर्वदा मधुर कषाय स्वाद, निःश्वासमें दुर्गन्ध, मुखमण्डलपर उदासीनता, चक्षुका मलिन वर्ण, धमनियोंमें रक्त- भिसरणकी मन्द गति और संकोच तथा मानसिक व्यथा आदि भासते हैं। फिर रोगवृद्धि होने पर प्राय नाभिके समीप उदरमें तीक्ष्ण शूल, पक्षाघात और विविध उत्कट मस्तिष्क व्याधि आदि उपद्रव उत्पन्न होते हैं। स्त्री कुमारी हो, तो गर्भाशय प्रभावित हो जानेसे रक्तप्रदर हो जाता है तथा सगर्भा हो, तो गर्भपात हो जाता है।

१५. कुक्कुटाण्डत्वक् भस्म।

विधि—रसतन्त्रसार प्रथम खण्ड में लिखि विधिसे झिल्ली रहित शुद्ध किये हुए अण्डोंके छिलके १ सेरको १ घड़ेमें भर गजपुट अग्नि देवें। इस तरह दो बार अग्नि देवें। फिर छिलकेकी भस्मसे आठवा आठवा हिस्सा सिंगरफ मिला नीबूके रसमें १२ घण्टे खरल कर २-२ तोलेकी टिकिया बनावें। फिर ४ संपुट बना ५-५ सेर गोबरी की अग्नि देवें। इस तरह ३ पुट देनेसे मुलायम हलके वजनकी सफेद भस्म तैयार होती है।

श्री वैद्य नाथूरामजी देहलीवाले

गुणधर्म और उपयोग—रसतन्त्रसार प्रथम खण्डमें लिखे अनुसार।

१६. तुत्थ खर्पर।

विधि—जसदका फूला अथवा भस्म १८ तोले और नीलाथोथा २ तोलेको मिला आंवलेके स्वरसमें खरलकर गोला बनावें। फिर सरावसम्पुट कर अग्नि में फूँक दें। स्वाङ्ग शीतल होने पर पुनः २ तोले नीलाथोथा मिलाकर उपरोक्त विधिसे खरल कर दो सेर गोबरीमें फूँक देवें। इस तरह ६ पुट देवें। दसवीं वार विना तूतिया मिलाये आंवलेके स्वरसमें ३ दिन तक घोट २-२ तोले की टिकिया बनाकर पूरा गजपुट देवें। स्वाङ्ग शीतल होने पर निकाल कर पीस लें।

वक्तव्य—इस भस्म को १ वर्ष से पूर्व व्यवहार करनेसे भ्रांति, वांति, भ्रम आदि उपद्रव होते हैं। अंतः भस्मको चीनी या मृतिका पात्रमें डाल पृथ्वीमें १ हाथ गहरे गड्ढेमें ऐसे स्थानपर गाड़ें, जो सूर्य, चन्द्रकी रश्मियोंसे प्रभावित रहता हो। ४० दिन पीछे निकाल शीशीमें भरके रखलें। फिर १ वर्ष पूरा हो जाने पर प्रयोग में लावें। प्राचीन शास्त्रोक्त खर्परके अभावमें नेत्रांजनमें इसका प्रयोग अत्यन्त गुणकारी है; तथा इस प्रयोगको यशद भस्मसे बनवाकर स्वर्णमालिनी वसंतके प्रयोगमें मिलाने पर वह चमत्कारी प्रभाव करती है। इनके अतिरिक्त यह भस्म कठिन और दुःसाध्य व्रण रोगों में खाने और लगाने के लिये भी यह अति हितावह सिद्ध हुई है। (संशोधक)

वक्तव्य—खनिज द्रव्य विशेष, कारवेल्लक और केलेमेना प्रेप्रेटा को भी सच्चे खर्परके अभाव में सुवर्णमालिनी वसन्त आदि रसोंमें प्रयुक्त कर सकते हैं। वे भी जीर्ण ज्वर, जीर्ण अतिसार और संग्रहणीका नाशक होनेसे युक्ति युक्त संशोधक हैं।

१७ शुक्ति पिष्टी।

विधि—मोतीकी सीपोंके भीतर से सरलता से निकल सके उतने तेजस्वी भागको निकाल मट्ठे या ८ गुने जल मिले हुये नींबूके रसमें डाल मंदाग्नि पर १ घण्टा उबालें। फिर जलसे धोकर सुखा लेवें। उसे इमाम दस्तेमें कूटकर कपड़छान चूर्ण करें। पश्चात् चीनी मिट्टीके खरलमें चन्दनादि अर्क मिला मिलाकर ७ दिन खरल करने पर जलतर पिष्टी बन जाती है। (श्री पं० यादवजी त्रिकमजी आचार्य)

मात्रा—२ से ४ रत्ती मक्खन-मिश्री, शहद या दूधके साथ देवें।

गुणधर्म—शुक्ति पिष्टी मुक्ताकी प्रतिनिधि है। इसमें भी शीतल, शामक, अम्लतानाशक और उदरवातहर गुण हैं। इसका उपयोग मुक्ता पिष्टीके समान होता है। ऐसा आचार्यजी का मत है। विशेष गुणधर्म रसतन्त्रसार प्रथम खण्डमें दिया है।

चन्दनादि अर्क—चन्दन चूर्ण, मौसमी-गुलाबके फूल, केवड़ेके फूल और कमल-पुष्पको ८ गुने जलमें मिलाकर आधा अर्क खींच लें।

१८ प्रवाल भस्म।

प्रथम विधि—प्रवाल शाखा २० तोलेको १ सेर गोमूत्रमें डालकर मन्दाग्निपर उबालें। गोमूत्र चतुर्थांश शेष रहने पर हांडीको नीचे उतार लेवें। शीतल होनेपर

प्रवालको जलसे धो नींबूके रसमें ३ दिन तक डुबो देवें। चौथे दिन प्रवालको जलसे धो लेनेपर उपरमें सफेद हो जाती है। पश्चात् उसे सराव सम्पुटमें बन्द कर लघु पुट देवें। स्वाङ्ग शीतल होने पर निकाल घीकुंवारके रसमें १२ घण्टे खरल कर २-२ तोलेकी टिकिया बनाकर सूर्यके तेज तापमें सुखावें। फिर सराव सम्पुट कर गजपुटमें फूंक देनेसे मुलायम श्वेत भस्म बन जाती है। इस भस्मको जिह्वा पर डालने से खारापन नहीं जाना जाता, एवं जिह्वा नहीं भी फटती। (श्री प० हरिनारायणजी शर्मा आयुर्वेदाचार्य)

मात्रा—१ से ४ रत्ती दिनमें २ से ३ बार रोगानुसार अनुपान के साथ देवें।

उपयोग—यह भस्म सब प्रकारके ज्वरमें दोषपचनके लिये अति हितावह है। कब्ज हो, तो उसे भी दूर करती है।

विशेष गुण रसतन्त्रसार व सिद्धप्रयोगसंग्रह प्रथम खण्डमें प्रवाल भस्म पहली और तीसरी विधिके साथ दिया है।

द्वितीय विधि—४० तोले प्रवाल शाखाको कूटकर चूर्ण करें, फिर बोतल में डाल, ऊपर नींबूका रस भरें। नींबूका रस प्रवालके ऊपर ३-४ अंगुल रहना चाहिये। बोतलको धूपमें रक्खे और दिनमें ३-४ बार चलाते रहें। नींबूका रस कम होनेपर और मिलाते रहें। इसतरह करनेसे लगभग २१ दिनमें मुलायम सूर्यपुटी प्रवालभस्म बन जाती है।

गुणधर्म—ऊपर की विधिके अनुसार।

१९ शंख भस्म।

विधि—शुद्ध शंखके १ सेर टुकड़ोंको अग्नि में तपा तपा-कर नींबूके रस में २१ समय बुझावें। जिससे टुकड़े स्थान स्थान पर फटे-से हो जाते हैं। इन टुकड़ोंको १ हाँडी में भर मुखमुद्रा कर गजपुट देनेसे मुलायम सफेद भस्म बन जाती है।

मात्रा-गुण और उपयोग—रसतन्त्रसार व सिद्धप्रयोग-संग्रहके प्रथम खण्डके अनुसार हैं। यह भस्म उदरशूल और अपचनजनित दस्त पर तत्काल गुण दर्शाती है।

२०. स्फटिकाशतमल्ल भस्म।

विधि—लाल फिटकरी १६ तोले और सफेद सोमल १॥ तोला लें। फिर समान माप वाले किनारी घिसे हुए दो बड़े सराव लें। एक सरावमें फिटकरीका आधा चूर्ण डालें। उसमें खड्डा कर सोमलका चूर्ण रख, ऊपर शेष फिटकरी डालें और अंगुली-से इस तरह दबा देवें, कि ऊपरसे फिटकरी नीचे गिर कर सोमल न दीखने लग जाय। फिर मुखमुद्रा कर १॥ सेर गोबरीकी अग्नि देकर फूला (भस्म) बना लेवें। स्वाग शीतल होनेपर सम्पुटको खोल फूलेको पीस लेवें। इस भस्ममेंसे संखियेका अल्प अंश उड़ जाता है। (सि० मे० म०)

मात्रा—१ से २ रत्ती दिनमें दो बार शहद, मिश्री या नागरबेलके पान के साथ।

उपयोग—इस भस्मका उपयोग नूतन कफज्वर, शीतप्रधान ज्वर, एकाहिक, तृतीयक और चातुर्थिक आदि विषमज्वर तथा पयज्वरमें होता है। मलेरियामें ज्वर

बढ़नेके ४ घण्टे पहले १ बार दें। फिर २ घण्टे पहले दूसरी बार देनेसे ज्वर रुक जाता है। जीर्ण विषमज्वरमें दिनमें दो बार ४-६ दिन तक देते रहनेसे ज्वर निवृत होजाता है।

सूचना—कभी कभी पित्तप्रधान प्रकृतिवालोंको कंठमें शुष्कता, चक्कर आना और व्याकुलता आदि लक्षण उत्पन्न होते हैं। ऐसा होने पर दूध अथवा नींबूकी सिकंजी पिलाना चाहिए।

२१. मल्लशङ्ख भस्म।

विधि—शुद्ध किये हुए बड़े शंख को तपा तपाकर ३ बार आकके पानोंके रसमें बुझावें। फिर उस शंख के भीतर सोमलका चूर्ण ४ तोले भरकर ऊपर आकका दूध भर देवें। पश्चात् छोटी हांडीमें चारों ओर आकके पत्तोंके कल्कके भीतर उस शंखको रखकर दृढ़ मुखमुद्रा करें। सूखने पर गजपुट अग्नि दें। स्वाङ्ग शीतल होने पर शङ्खको निकालकर पीस लेवें। पुनः आकके दूधमें ६ घण्टे खरल कर २-२ तोलेकी टिकिया बना सराव सम्पुट कर गजपुट देने से मुलायम भस्म बन जाती है।

मात्रा—१ से ४ रत्ती दिनमें २ बार गोघृतके साथ देवें।

उपयोग—यह भस्म श्वास, कास, मलेरिया, उदरशूल, निमोनिया, पक्षाघात, अर्दित और बार बार आक्षेप आना आदि वातप्रकोप को दूर करती है। इस भस्ममेंसे सोमल अधिकांशमें उड़ जाता है। फिर भी शङ्ख भस्म कुछ उग्र बनजाती है। श्वास रोगमें कफको सरलतासे निकालने और कफकी उत्पत्तिको बन्द करनेके लिये यह निर्भयतापूर्वक प्रयुक्त होती है। रुचि और पाचन शक्तिको भी यह बढ़ा देती है।

मलेरिया अथवा शीतपूर्वक ज्वर अनेक दिनोंका पुराना हो जाने पर बार बार आक्रमण करता रहता है। ऐसे रोगियोंको यदि मुखपाक, छातीमें दाह आदि हो तो क्विनाइन कभी सहन नहीं होता, उनको कुछ दिन इस भस्मका सेवन करानेसे ज्वर, शूल और पचन विकार दूर हो जाते हैं। गुड़, शीतल जलसे स्नान, नया अन्न, भारी भोजन और सूर्यके तापमें भ्रमण बन्द कराना चाहिये।

२२. ताल भस्म।

विधि—उत्तम वर्की हरताल २० तोले लेकर घीकुंवारके रस में ४ दिन खरल करें। फिर अंगुली पर रगड़ कर सूर्यके तापमें देखें। अगर चमक बिल्कुल दूर न हुई हो, तो २ दिन और खरल करें। फिर बेर वृक्षकी राखको कपड़ छान कर समभाग मिला ३ दिन घीकुंवारके रसमें खरल कर एक एक तोलेकी टिकिया बनालें। पश्चात् एक हांडीमें कण्डोंकी और अपामार्ग (या पीपल वृक्ष) की राख समभाग मिला आधी हांडी तक दवा-दबा कर भरें। उस पर हरतालकी टिकिया एक एक करके जमा दें। टिकियाएं परस्पर $\frac{1}{4}$ इन्चकी दूरी पर रक्खें। इन टिकियाओं पर १ इन्च राखकी मोटी तह करें। राखको दबा दबा कर भरें। पुनः और टिकियाएं उसी प्रकारसे रक्खें और राख से दबा दें। फिर टिकियाओंकी तीसरी तह रखकर हांडीमें मुंह तक राखसे दबादें।

पश्चात् हाँडीके मुह पर ढक्कन लगाकर चूल्हे पर चढ़ावें। पैरके अंगुष्ठके समान मोटी ३ लकड़ीकी अग्नि १२ घण्टे तक देवें। स्वाङ्ग शीतल होने पर टिकियाओंको निकाललें। सफेद कुछ मैले रंगकी मुलायम भस्म बनजाती है। टिकियाओंको तोड़ कर परीक्षा करें। पीलापन देखनेमें आवे, तो फिरसे अग्नि देवें। कभी थोड़ी टिकिया पक जाती है, और थोड़ी कच्ची रह जाती है। जो कच्ची हो, उनको घीकुंवारके रसमें खरल करा टिकिया बनवाकर ऊपर लिखे अनुसार पका लेवें।

वक्तव्य—इस विधि अनुसार भस्म बनाने में बेरीकी राख मिलायी जाती है, तथा हरतालका वजन भी कम हो जाता है, तथापि सरलतासे भस्म बन जाती है और अच्छा लाभ पहुंचाती है। श्री० वैद्य नाथूरामजी देहलीवाले

मात्रा—१-१ रत्ती दिनमें दो बार शहदके साथ दें। ऊपर रक्तशोधक या रोगानुसार ज्वरघ्न कषाय देवें।

उपयोग—यह भस्म कुष्ट, त्वचारोग, रक्तविकार, सन्निपात आदि पर प्रयुक्त होती है। विशेष गुणधर्म रसतन्त्रसार प्रथम खण्डमें लिखे अनुसार।

२३ मनः शिला भस्म।

विधि—२ तोले शुद्ध मेनसिल को थूहर के पत्तोंके रसमें १२ घण्टे तक खरल कर टिकिया बनाकर सुखावें। फिर दो सरावोंमें कलई चूनाके भीतर रख, सम्पुटकर २ कपड़मिट्टी करके ५ सेर गोबरी के भीतर फूक देवें। स्वाङ्ग शीतल होने पर सम्पुट निकाल कर खोलें, चूनेका रंग पीला होजाता है और मैनसिल भस्म सफेद हो जाती है। (आ० नि० मा०)

मात्रा—१ से २ चावल तक मिश्री के साथ देवें।

उपयोग—यह भस्म विषमज्वर और कफप्रधान ज्वर को दूर करती है। मैनसिलके भीतर सोमल होनेसे इस भस्मको सोमलका सौम्य कल्प कहा जायगा। जिन २ रोगियों को सोमल देनेमें भीति रहती हो और सोमल देनेकी आवश्यकता हो, उन रोगियों को यह भस्म अमृतके समान हितकारक होती है। वातविकार, उपदंश, शूल, कास, श्वास, क्षयज्वर तथा कीटाणुजनित विविध व्याधियोंमें यह निर्भयतापूर्वक दी जाती है।

२४ पन्ना भस्म।

विधि—पन्नाके शुद्ध छोटे छोटे कण १० तोले को लोह खरलमें बारीक पीसकर जंगली तुलसी (नगद बावची) के रसमें ३ दिन खरल करावें, फिर उसे २ सेर उपलोंकी अग्नि दें। दूसरे दिन पुनः उसी रसमें १२ घण्टे खरल करा अग्नि देवें। इस तरह ४ पुट देनेसे भस्म तैयार हो जाती है। श्री० वैद्य नाथूरामजी देहलीवाले

वक्तव्य—इसी विधिसे वैक्रान्त, पुखराज, माणिक्य और नीलम की भस्म भी बनवायी है। वैक्रान्त और नीलम को अग्नि ५ सेर गोबरीकी दी और पुट भी ७ दिये गये थे।

मात्रा—½ से १ रत्ती तक रोगानुसार अनुपान के साथ।

उपयोग—पन्ना भस्म विषनाशक, शीतल, हृद्य, मधुर, रेचक, अम्लपित्तहर्त्ता, रोचक, पुष्टिकर्त्ता, भूतबाधानाशक है। ज्वर, वमन, श्वास, संताप, मंदाग्नि, अर्श, पाण्डु, मधुमेह और शोथका नाश करती है।

सूचना—अधिक मात्रामें पुंस्त्वको हानि पहुंचाती है।

२५. दरद सुधा भस्म।

विधि—हिंगुल और कलई का चूना विना बुझा ४-४ तोले लें। इनमेंसे पहले हिंगुलको सेहुंडके दूधमें ३ दिन तक खरल करें। फिर चूना मिला पुनः सेहुंडके दूधमें ३ दिन तक मर्दन कर चक्रिका (पेडे) के समान एक टिकिया बनावें। इसे सूर्य के तापमें सुखा समान नाप वाले, घिसी हुई किनारीवाले दो सरावके भीतर रख मुख-मुद्रा करें। फिर दृढ़ कपड़मिट्टी कर एक गढ्ढेमें २॥ सेर गोवरी की अग्नि देवें। स्वाङ्ग-शीतल होनेपर सम्पुट खोल टिकिया निकाल कर पीस लेवें। यह भस्म मुलायम मैले सफेद रंगकी होती है। (सि० भे० म०)

सूचना—योग्य सम्पुट या कपड़मिट्टी न करने और अग्नि तेज लगने पर हिंगुल उड़ जाता है। फिर भस्मका गुण कम हो जाता है। एवं कम अग्नि लगने पर हिंगुलकी लाली बनी रहती है, जिससे भस्ममें उबाक, वमन और विरेचन करानेका दोष रह जाता है। अतः सावधानतापूर्वक भस्म बनानी चाहिये।

मात्रा—१ से २ रत्तीतक मसाला लगे हुए नागरबेलके पानमें दिनमें २ या ३ बार देवें।

उपयोग—यह भस्म सुकुमार स्त्री, पुरुष और बालकोंके ज्वरको दूर करती है। इस भस्मके सेवनसे किसी व्यक्तिको जुलाब (दो तीन दस्त) लग जाता है। उदर-शुद्धि न हुई हो, तो मात्रा २ रत्ती देवें और आवश्यकतापर ३-३ घण्टे बाद दिनमें ३ बार देवें। अपचनजनित ज्वर और शीतप्रधान ज्वरको दूर करनेमें यह हितावह है। शीत-ज्वरमें इस भस्मको शीत लगनेके पहले दे दी जाय, तो शीत लगना और ज्वर आना, दोनों रुक जाते हैं। अमीरोंके जीर्ण विषमज्वरको दूर करनेके लिये यह भस्म कुछ दिनों तक देते रहना चाहिये। यदि क्षयज्वरमें मलावरोध हो, तो १-१ रत्ती दिनमें २ बार देते रहनेसे ज्वर शमन होजाता है। इसका विशेष गुण केलोमल (Calomel) के सदृश पित्त को उत्तेजित कर यकृत की शक्ति को बढ़ाना है।

सूचना—नूतन ज्वरमें रोगीको दूध पर रक्खें। जल गरम करके शीतल किया हुआ देवें। औषध सेवन करने पर २ घण्टे तक जल न देवें।

२६. त्रिवङ्ग भस्म।

विधि—कलई, शीशा और जसद, तीनों शुद्ध किये हुए ४०-४० तोले मिला-कर कढ़ाहीमें द्रव करें। भस्म बनानेके लिये भांग ६ सेर लेवें या पीपल वृक्षकी छाल, बड़की

जटा कची, इमलीके वृक्षकी छाल और हल्दी, चारोंको १॥-१॥ सेर लेकर मिलावें उसमेंसे १-१ मुट्ठी त्रिवङ्गकी ऊपर डालते जायं और वड़के ताजे डण्डेसे चलाते रहें। जब त्रिवङ्ग मूल (चूर्ण) सदृश बन जाय, तब कड़ाहीको उतार लेवें। शीतल होनेपर घीकुवारके रसमें १२ घण्टे घुटवा, टिकिया बनवा हाडीमें रखकर ७-८ सेर उपलोंकी आग देवें। इस तरह १० पुट देवें। यह भस्म सफेद और मुलायम बनती है।

श्री वैद्य नाथूरामजी देहली वाले

गुणधर्म—रसतन्त्रसार प्रथम खण्डमें लिखे अनुसार।

२७ वङ्ग ट्रय भस्म।

विधि—शुद्ध पारद, शुद्ध गन्धक, लोहभस्म, रौप्यभस्म, शुद्ध खपरिया (या जसदभस्म), अभ्रक भस्म, ताम्रभस्म, ये ७ औषधियाँ ४-४ तोले और वङ्ग भस्म २८ तोले लें। पहले पारद गन्धककी कज्जली करें। फिर सब औषधियोंको मिला त्रिफला और गिलोयके क्वाथ में ३ दिन खरलकर २-२ तोलेकी टिकिया बना ४ सरावोंमें रख, संपुट कर पृथक् पृथक् लघु गजपुट अग्नि देवें। (भै० र०)

आचार्योंने इस भस्मको १ पुट देने का विधान लिखा है किन्तु हम ३ पुट देते हैं। ३ पुट देने से भस्म मुलायम और विशेष गुणकारी बनती है।

मात्रा—२-२ रत्ती दिन में २ बार शहद के साथ दें। ऊपर हल्दी का चूर्ण १ माशा और शहद ६ माशे मिलाया हुआ आवलों का रस (या फाण्ट) पिलावें।

उपयोग—यह भस्म वात कफप्रधान प्रकृति के लिये विशेष उपकारक है। २० प्रकारके प्रमेह, आमदोष, विसूचिका, विषम ज्वर, गुल्म, अर्श, मूत्रातिसार और पित्तवृद्धि को दूर करती है वीर्यकी वृद्धि करती है, प्रदर तथा सोम रोगको नष्ट करती है। स्त्रियों रोगों के लिये यह उत्तम औषधि है।

वङ्ग भस्म के साथ इतर भस्में मिल जानेसे प्रजननयन्त्र और मूत्रयन्त्रके अतिरिक्त पचनेन्द्रिय संस्थान, रससंस्थान, रक्त, मांस, वात संस्थान, फुफ्फुस आदि पर भी लाभ पहुच जाता है। इनमेंसे मूत्रयन्त्र और पचनेन्द्रिय संस्थान पर अधिक असर होनेसे (इस प्रयोग में ताम्रभस्म होने से) मात्रा अधिक नहीं लेनी चाहिये और उस समय दूध नहीं लेना चाहिये। अन्यथा उबाक और वान्ति आदि उपद्रव उपस्थित होंगे।

२८. पञ्चामृत भस्म (बाजीभाई मात्रा)

विधि—पीला सोमल, हरताल, मन सिल, कलई चूना, गन्धक और फिटकरी इन सबको ५-५ तोले मिला घीकुवारके रसमें ३ दिन खरल करके ४ गोले बनावें। सूखने पर ४ सम्पुट कर ३ कपड़ मिट्टी करके सबको पृथक् पृथक् २॥-२॥ सेर गोबरीकी अग्नि देवें। (आ० निं० मा०)

मात्रा—$\frac{1}{8}$ से $\frac{1}{4}$ रत्ती सोंठके घासेसे सन्निपातज बेहोशीमें दिनमें ३ बार या

२-२ घण्टे पर। श्वासावरोधमें अदरख और पोदीनेके १-१ तोला स्वरसको गुनगुना कर ३ माशे शहद मिला कर उसके साथ देवें।

उपयोग—इस भस्मका उपयोग सन्निपातमें बेहोशी, कफप्रकोप, शरीरकी शीतलता, हृदय और नाड़ीकी मंद गति, अनियमित नाड़ी आदि लक्षण होने पर किया जाता है। इसके सेवनसे हृदय उत्तेजित होता है। शीतलता दूर होती है। कण्ठमें कफ बोलता हो, वह निकल जाता है; और रोगी होशमें आजाता है।

पार्श्वशूल, श्वासावरोध और श्वासका दौरा होने पर यह तत्काल लाभ पहुंचाती है। एक घण्टेमें घबराहट दूर हो जाती है। कफकी अधिकता हो, ऐसे रोगीको यह भस्म दी जाती है।

२६. अष्टामृत भस्म।

विधि—शुद्ध काशीश, शुद्ध मनःसिल, शुद्ध गोदंती, शुद्ध प्रवाल मूल, शुद्ध मोतीकी सीप, शुद्ध स्वर्णमाक्षिक, शुद्ध रौप्यमाक्षिक और धान्याभ्रक इन ८ ओषधियोंको ५-५ तोले मिलाकर अर्कदुग्धमें ३ दिन खरल करें। फिर २-२ तोलेकी टिकिया बना सूर्यके तापमें सुखा, सराव सम्पुट कर गजपुट अग्नि देवें। स्वाङ्ग शीतल होने पर निकाल पुनः ३ दिन अर्क दुग्धमें मर्दन कर गजपुट देवें। इस तरह ३ पुट देवें। फिर घीकुंवारके स्वरसमें १-१ दिन घोट कर ७ पुट देनेसे श्वेत धूसर वर्ण की मुलायम भस्म बन जाती है।

राजवैद्य अमरदत्तजी मिश्र

मात्रा—½ से ४ रत्ती दिनमें २ बार शहद, घृत, मिश्री, शर्बत बनफसा या रोगानुसार निम्न अनुपानके साथ देवें।

(१) यकृत्प्लीहावृद्धिमें हरड़मिश्रित कुमार्यासव।
(२) जीर्ण प्रतिश्यायपर तथा श्लेष्माके निस्सरणार्थ मिश्री।
(३) शुष्क कासपर शर्बत बनफशा, शहद-घृत अथवा शहद और चन्द्रामृत रस १-१ रत्तीके साथ।
(४) शिरदर्दपर त्रिफला अथवा हरड़के चूर्णके साथ देकर ऊपर थोड़ा दूध पिलावें।
(५) आघातज शूलपर मिश्रीके साथ देवें और ऊपर गुनगुना जल पिलावें।
(६) मैंथरज्वरमें कासप्रकोप हो, तो शहदके साथ।
(७) बच्चेकी काली खांसीमें आध आध रत्ती शहद या माताके दूधके साथ।

उपयोग—अष्टामृत भस्म शामक, प्रदाहहर और कफघ्न है। नूतन प्रतिश्याय, प्रतिश्यायजकास, प्रतिश्यायसह गलौघ, श्वासनलिका प्रदाह, उरस्तोय (प्ल्युरिसी) अपचन और प्रतिश्यायसे होने वाली जलन, फुफ्फुसोंमें प्रदाह जनित पतला श्लेष्मा भर जाना, फुफ्फुसोंका जकड़ जाना, तेजवायु, शीत या सूर्यके तापके आघातसे सांधो

सन्धों और शरीरका जकड़ जाना, शुष्ककास, शिरदर्द तथा यकृत्प्लीहावृद्धि होकर शुष्क कास चलना आदि विकारों को निवृत्त करती है।

३० मल्ल पुष्प।

विधि—पुरानी ईंटके बीचमें खड्डा करें। फिर उस खड्डेके चारों ओर एक ताम्बेकी कटोरीको बैठानेके लिये गोल काप करें। जिससे कटोरीका किनारा ठीक उस कापमें बैठ जाय। पश्चात् ५ या १० तोले सोमलका टुकड़ा खड्डेमें रख, कटोरीको ईंटके कापसे बैठाकर संधिपर दृढ़ मुद्रा लेप करें। लेप सूखने पर ईंटको चूल्हेपर चढ़ाकर बेरकी लकड़ीकी मंदाग्नि देवें। कटोरीके ऊपर गीला कपड़ा रक्खें। कपड़े बार बार बदलते रहें। जिससे कटोरीके भीतर पुष्प लगते रहेंगें। १२ घन्टे अग्नि देवें। स्वांग शीतल होने पर पुष्प निकाल लेवें। (आ० नि० मा०)

मात्रा—⅛ रत्ती सौंठके घासेके साथ। आवश्यकता पर दो घण्टे बाद पुन देवें या दिनमें दो बार देवें।

उपयोग—सन्निपातमें कफाधिक्य, नाड़ीकी शिथिलता, कम्प, बेहोशी आदि लक्षण होने पर इस पुष्प का उपयोग होता है। जब यह कफाधिक्य श्वास रोगीको मलाई मिश्रीके साथ दिया जाता है। कुछ दिनोंतक श्वास रोगीको सेवन करानेपर सगृहीत कफ निकलजाता है, नयी उत्पत्ति रुक जाती है और श्वास प्रणालिया सुदृढ बन जाती हैं। जिससे श्वास रोग निवृत्त हो जाता है। इसके अतिरिक्त अनुपान विशेषसे जीर्ण मदाग्नि, संग्रहणी, जीर्ण ज्वर, जीर्ण त्वचाके रोग कण्डु आदि, जो वृद्धावस्थामें होने वाले हैं उन सब का यह नाश करती है।

(२) वमन आदि शोधन।

१. वमनेश्वर रस।

विधि—अकोलकी गिरी १० तोले, नीलाथोथा, शुद्ध पारद, शुद्ध गन्धक और ताम्र भस्म ५ ५ तोले लें। पारद गन्धककी कज्जली करके नीलाथोथा और ताम्र भस्म मिलावें। फिर अकोलकी गिरीका चूर्ण मिला, नमक का जल, देवदाली स्वरस, मैनफलका क्वाथ, वासा स्वरस, बचका क्वाथ, नीमके पानोंका स्वरस, परवलके पानोंका स्वरस और मुलहठीका क्वाथ, इन ८ द्रव्योंकी १-१भावना देकर १-१ रत्तीकी गोलिया बना लेवें। (र० यो० सा०)

मात्रा—१ से ३ गोली २० से ४० तोले गुनगुने जलके साथ प्रात काल दें।

उपयोग—अम्लपित्त, अपचन, कफ, पित्तप्रकोप, वान्ति, कुष्ठ आदि रोगोंमें जहा वमन करानी हो, वहा पर यह रस दिया जाता है। अति योग होने पर आवलोंका चूर्ण शक्कर मिलाकर खिलावें।

इस रस में अकोल मिलाया है। यह स्वेदजनक, शोधक सारक, और विषहर

है। यह कफको शिथिल करके बाहर निकालता है। पूरी मात्रा देनेपर वमन, विरेचन होते हैं तथा प्रस्वेद भी आता है। चूहेके विषपर अंकोल विशेष हितावह है। अंकोल देकर वमन करानेपर हृदय और धमनीमें शिथिलता आजाती है। इस हेतुसे वमन हो जानेपर लक्ष्मीविलास, रससिंदूर, प्रवाल या सुवर्णवसंतका सेवन कराया जाय तो अच्छा है।

द्वितीय विधिः—देवदालीके बीज १६ भाग, शुद्ध पारद और शुद्ध गन्धक १-१ भाग लेवें। पहले कज्जली करके देवदालीका चूर्ण मिलावें। फिर देवदालीके रसकी ७ भावना देकर सुखा लें। पश्चात् उसके समान वज़नमें शुद्ध नीलाथोथा मिलाकर खरल कर लेवें। (र० यो० सा०)

मात्राः—२ से ६ रत्ती गुनगुना जलके साथ।

उपयोगः—ऊर्ध्वजत्रुगत रोगोंमें जब मल, कफ या पित्तप्रकोप होगया हो, तब इस रसका उपयोग करनेसे यथेष्ट वमन होकर शुद्धि होजाती है।

यकृत्-प्लीहावृद्धि और उससे उत्पन्न जलोदर, सर्पविष, कामला, कफप्रकोप, शोथ, गण्डमाला, चूहेका विष आदि रोगोंपर वमन कराकर दोषको निकालनेमें इस रसका उपयोग किया जाता है। यदि अतियोग हो जाय, तो चावलकी लाहीको जलमें पीस नींबूका रस मिलाकर पिलावें; या खसका जल पिलावें। अथवा नींबूके बीजकी मज्जा ४-४ रत्तीकी मात्रा शीतल जलके साथ पिलावें।

२. पारद उपलवण।

(Hydrargyri Subchloride or Calomal.)

विधिः—खनिज हिंगुल (Persulphate of Mercury) १० औंस, पारद ७ औंस और समुद्रनमक (Chloride of Sodium) ५ औंस लें। पहले हिंगुलको थोड़े जलमें पीसें फिर पारद मिलाकर खरल करें। पारद निश्चन्द्र होनेपर नमक मिला मर्दन करें। अच्छी तरह मिल जानेपर डमरु यन्त्रमें डाल संधिको वज्र मुद्रासे बन्द करें। फिर चूल्हेपर चढ़ाकर केलोमलको उड़ा लेवें। उड़नेके समय कुछ अंश नीचे गिर जाता है। उसे तब तक साफ जलसे बार-बार धोवें, कि जब तक धोया हुआ जल हाइड्रोसलफ्यूरिड एसिड ऑफ एमोनिया मिलने पर कृष्णवर्ण हो जाय। फिर लगभग २११ डिग्री ताप द्वारा सुखाकर बोतलमें भरलेवें।

यह गन्ध और स्वाद रहित वज़नदार श्वेतवर्णका मुलायम चूर्ण भासता है। जल, शराब और ईथरमें मिलानेपर नहीं मिलता। अग्निपर डालनेसे उड़ जाता है। चूनेके जल और पोटासके द्रवमें डालनेसे काले रंगकी पारद भस्म (Oxide Of Mercury) होकर तलेमें बैठ जाती है।

मात्राः—आधसे २ ग्रेन। लालानिःसारण, रक्तशोधन और स्रावणक्रियावर्द्धनार्थ मात्रा कम देनी चाहिये। मात्रा अधिक देनेपर विरेचन, पित्तनिःसारण और कृमिघ्न गुण दर्शाता है।

गुणधर्म —यह पारद उपलवण उत्तम संशोधन, विरेचन, पित्तस्रावी, लालानिःसारक, प्रदाहहर, शामक, विकृतिरोधक, प्रदाहहर, पूतिहर (Antiseptic), संक्रामक कीटाणुनाशक (Disinfectant), कण्डूघ्न और फिरंगविषहर है। इसका प्रयोग उदर-सेवन, अन्त:क्षेपण, मर्दन, धावन, व्रणोंपर भुरभुराने और धूम्ररूपसे होता है। अन्तःक्षेपणके लिये अघुलनशील पारदलवणोंके भीतर केलोमलको विशेष पसन्द किया है। क्योंकि, यह विशेष प्रभावशाली है और निम्न ४ कारणों से पारदप्रधान औषधियोंमें इसे श्रेष्ठ माना है।

(१) यह वेदनाहर है।

(२) यह शनैः शनैः शोषित होता है और शनैः शनैः बाहर निकलता है।

(३) यह आमाशयप्रदाह और अथवा आमाशय अन्त्रप्रदाह प्रायः कम-से-कम करता है।

(४) रोगोपशामक प्रभाव अपेक्षाकृत अधिक स्थायी है।

बाह्य उपयोग धावन या मर्दनरूपसे करनेपर पूतिहर, कीटाणुनाशक और रोगनिरोधक कार्य करता है। एवं मलहमरूपसे कण्डूघ्न, प्रदाहहर और व्रणशोधन गुणके लिये व्यवहृत होता है।

केलोमल मुखसे सेवन करने या धूम्रपान करनेपर लालास्रावमें वृद्धि करता है। यह स्राव रक्तमें शोषण होनेके पश्चात् होने लगता है। उस समय इसका मैल दाँतोंको लगता रहता है, जो दन्तरोगवालोंको हानि पहुँचाता है।

इसके कृष्ण धावन (Black Wash) का प्रयोग व्रणचिकित्साके प्रयोगोंके साथ दिया जायगा। मलहम विधि निम्नानुसार है।

रोगनिरोधक मलहम

(Prophylactic Ointment or Calomal Cream) —

केलोमल	१ औंस
हाइड्रार्जिरी ऑक्सिसाइनाइड	१॥ ग्रेन
ऊनकी चर्बी (लेनोलीन)	१ औंस
पीला वेसलीन	१ औंस
तरल वेसलीन	२६२॥ ग्रेन

वेसलीनको गरम करें। फिर लेनोलीन, तरल वेसलीन डाल शेष दोनों औषधियोंको मिलाकर एक जीव करें। फिर बोतलमें भर लेवें।

वक्तव्य —सामान्यतः व्रणादिपर लगाने केलिये केलोमलको ३ गुने वेसलीनमें मिलाकर मलहम बना लिया जाता है। यह रस पारदकी अन्य कृतियोंके समान दाह नहीं करता। यह आमाशय और अन्त्रोंमेंसे रक्तके भीतर एल्ब्युमिनेट रूपसे प्रवेश करता है। साथमें रहा हुआ नमक रक्तमें रहे हुए पोषक तत्त्व (Proteins) में मिल जाता

है; और शरीरमेंसे बाहर निकलनेके समय क्रिया करता है। सामान्यतः लाला ग्रन्थियोंके ऊपर अधिक क्रिया करता है। इस तरह अन्य यन्त्रोंमेंसे भी पारद बाहर निकल जाता है। फिर परीक्षा करनेपर वह मूत्र, मल, स्तनदुग्ध, प्रस्वेद और पित्तमें प्रतीत होता है।

मुखद्वारा केलोमलका सेवन करानेपर मुँह, मसूढ़े, लालास्रावी ग्रन्थियाँ, आमाशय और अन्त्रपर क्रिया करता है। अन्त्रस्थ सब ग्रन्थियाँ उत्तेजित होती हैं। इसके प्रभाव का यकृत् पर प्रत्यक्ष विशेष नहीं होता। फिर भी परंपरागत क्रिया होकर पित्तनिःसरण का अनुभव होता है। इसी हेतुसे पित्तप्रकोपज व्याधियोंमें इसके सेवनसे लाभ पहुँचता है। मलका रंग श्वेत हो, तो वह किञ्चित् रक्ताभ बन जाता है।

उपयोगः—विशेषतः केलोमलका विरेचन पित्तनिःसरण, अन्त्रस्थ पूतिनाश, फिरंगविषशमन और कृमिघ्न गुणको प्राप्ति केलिये दिया जाता है। इसे सेलाइन विरेचन, रेवाचीनी (रुबर्ब), काला दाना और जुलाब (जेलप) आदि विरेचक औषधियों के साथ मिलाकर दिया जाता है।

मधुरा और प्रलापक ज्वरको प्रथमावस्थामें यदि कोष्ठशुद्धि करने केलिये आवश्यक समझा जाय, तो केलोमल रेवाचीनी या जुलाबाके साथ व्यवहृत होता है। इसी तरह और ज्वरोंमें भी विरेचन और पित्त निःसरण केलिये आवश्यकतानुसार प्रयोजित होता है। पारद प्रयोगसे कदाचित अपकार होनेका भय हो, तो पहले रेवाचीनी दी जाती है। इस हेतुसे अनेक रोगोंमें रेवाचीनी मिलाकर कम मात्रामें केलोमल देना विशेष उपकारक माना है।

सूचनाः—दांतोंमें से पूय निकलता हो, ऐसे रोगियोंको केलोमल नहीं देना चाहिये। अन्यथा दांत गिर जायगा।

जिह्वापर मलकी सफेद मोटी तह जमी हो, ऐसे कितनेक आशुकारी रोगोंमें केलोमल विरेचन रूपसे व्यवहृत होता है। यकृत्‌का पित्तप्रकोप या पित्ताशयकी अव्यवस्था होनेपर रात्रिको केलोमल दिया जाता है। फिर सुबह सनायका विरेचन देनेपर परिणाम अति सन्तोषप्रद आता है।

हृद्विकारज शोथ या जलोदरमें अनेक बार केलोमल प्रयोजित होता है। एवं यकृद्दाल्युदरसे उत्पन्न जलोदरमें भी यह सफलतापूर्वक प्रयुक्त होता है।

यदि ज्वरके साथ यकृत्‌में रक्तसंग्रह आदि लक्षण हों, या किसी यन्त्रका प्रदाह हो, तो केलोमल स्वल्पमात्रामें अफीम या सुरमा (एण्टीमनी) के साथ मिलाकर दिया जाता है। उदरकृमिके नाश केलिये केलोमल केसाथ रेवाचीनी मिला देनी चाहिये। संन्यास रोगमें अति विरेचन करानेके उद्देश्यसे केलोमल दिया जाता है।

फिरंग रोगमें केलोमलका उदरसेवन कराया जाता है। मात्रा अधिक होनेपर विरेचन होजाता है। जिससे इसका शोषण अनिश्चित रहता है, इस हेतुसे लाभ कितना मिलेगा, यह निश्चयपूर्वक नहीं कह सकते।

तोले तथा पीपल और निसोत १०-१० तोले ले। सबको मिलाकर १-१ तोले के मोदक बना लेवे। (वै० से०)

मात्रा —१-१ मोदक १०-१० वे दिन प्रातःकाल निवाये जलके साथ लेवे।

उपयोग —इस मोदकके उपयोगसे कोष्ठस्थ दोषका संशोधन होता है। जिससे ग्रहणी, पाण्डु, अर्श और कुष्ठ रोग नष्ट होते हैं। जिस दिन मोदकका सेवन करें, उस दिन उष्ण भोजन करें। केवल इतना परहेज़ रक्खें।

यह अति सौम्य संशोधन है। सामान्यतः इससे १-२ दस्त साफ आजाते हैं, कोष्ठमें रहे हुए सेन्द्रिय विष, आम, कृमि आदि नष्ट होते हैं। जिससे ग्रहणी, अर्श, कुष्ठ, त्वचारोग, पाण्डु आदि रोगों के पोषक आम आदिकी उत्पत्तिही नहीं होती।

५. सुखविरेचन वटी

विधि —जमालगोटेके बीजोंको धो, फिर तोड़ उसके मग्ज़ोंकी दो दो दाल करलें। ऐसी दाल १ तोलेकी रात्रिको एक कलईदार पात्रके भीतर उबलते हुए २० तोले जलमें डालकर ढक दे। सुबह दालको हाथसे मसलकर गरम जलसे धोकर खरलमें घोटे। अच्छी तरह पिस जाने पर सोंठका कपड़छान चूर्ण १० तोले मिला जलके साथ ३ घण्टे खरल करके २ रत्तीकी गोलियाँ बना लेवे।

(श्री० प० श्री गोवर्धनजी शर्मा छांगाणी)

उपयोग —१-१ गोली रात्रिको सोते समय शीतल जलसे निगलनेपर सुबह ३ दस्त साफ आ जाता है।

सूचना —सगर्भा एवं सुकुमार स्त्रियोंको नहीं देना चाहिये।

६ बृहन्मञ्जिष्ठादि चूर्ण

विधि —मजीठ, छोटी इलायचीके दाने, सौंफ, पाषाणभेद, सोरा, गोखरू छोटा और रेवन्दचीनी १-१ तोला, सोनागेरु, धाणें (एरण्ड तैलमें) भुनी हुई, हरड़, बड़ी हरड़, बहेड़ा आँवला और गुलाबके फूल २-२ तोले तथा सनाय ४ तोले ले। सबको मिला कूटकर कपड़छान चूर्ण करे। [श्री० प० यादवजी त्रिकमजी आचार्य]

मात्रा —२ से ६ माशे सुबह अथवा रात्रिको शीतल या निवाये जलके साथ लेनेसे १-२ दस्त बिना कष्टसे साफ आजाते हैं।

उपयोग —यह चूर्ण दस्त और पेशाबको साफ लाने वाला और रक्तशोधक है। यह कब्ज़, मूत्रकी रुकावट, अर्श और रक्तविकारमें विशेष लाभप्रद है। पित्त प्रकृति वालोंको तथा पित्तप्रकोप और रक्तविकार में इसका प्रयोग होता है।

७. पारद वटी (नीली वटी)

(Mercury Pill, Blue Pill)

विधि —शुद्ध पारद २ औंस, गुलकन्द ३ औंस और मुलहठी का चूर्ण १ औंस

लेवें। पहले पारदको गुलकंदमें मिलावें। फिर मुलहठी मिलाकर २-२ रत्तीकी गोलियाँ बना लेवें।

उपयोगः—यह वटी विरेचनार्थ दी जाती है। इसका उपयोग मुँहमें लाला निःसरण वृद्धि कराने और रक्तशोधन केलिये सर्वदा होता है। यकृतके पित्तप्रकोप (Biliousness) होनेपर, यकृत वृद्धि, दबानेपर वेदना, यकृत्मेंसे पित्तनिःसरणाधिक्य, वेदना, शिरदर्द, आलस्य, मानसिक अवसाद, बेचैनी और आहार पचनमें विकृति, खांसने पर पीड़ा होना, किञ्चित शीत लगकर ज्वर आजाना और कोष्ठबद्धता आदि लक्षण होते हैं। ऐसे रोगोंमें इस औषधिका उपयोग रात्रिको सोनेके समय करनेसे आश्चर्यकर फल प्राप्त होता है। यह वटी अन्त्रके भीतरसे समस्त वेदना उत्पादक पदार्थोंको बाहर फेंक देती है; यकृत्का संशोधन करती है; तथा पित्तप्रणालीके प्रदाहको दूर करती है।

सामान्य मस्तिष्कावरण प्रदाह (Meningitis) में १ गोली खिलाने और पारद मलहमकी मालिश करनेसे अच्छा लाभ पहुँच जाता है। फिरंग रोग (Hard-Chancre) पर दिनमें दो बार १-१ गोलीकी मात्रामें इस औषध का उपयोग करनेसे तथा कृष्ण धावन (ब्लैक वॉश) की पट्टी बाहर लगाते रहनेसे रोग शमन हो जाता है। किन्तु सामान्य उपदंश (Soft Chancre) पर पारदका आभ्यन्तरिक उपयोग नहीं होता। इस बातको सर्वदा लक्ष्यमें रखना चाहिये।

फिरंग रोगमें एक क्षत होता है, सामान्य उपदंशमें अधिक (४-५) घाव होते हैं। फिरंगमें चारों ओरकी धारा कठिन और बीचमें गड्ढा होता है। जलसदृश रसस्राव (उग्ररूप धारण करने परथोड़ापूय) होता है, तथा ज्वर आ जाता है; किन्तु सामान्य उपदंशमें चारों ओरकी धारा नरम रहती है और बहुत पूय निकलता है ज्वर नहीं आता। इन लक्षणोंके भेदसे फिरंग रोग पृथक् हो जाता है। उपदंश शिश्नेन्द्रिय परसे मिट जानेपर विष समाप्त हो जाता है। परन्तु फिरंगके व्रण मिट जाने पर भी रुधिरके द्वारा समस्त धातुओंमें लीन होकर गुप्त भावसे विकार सदाके लिये छोड़ देता है। जो उत्तम प्रतिकार होनेपर ही दूर होता है।

८. संशोधन वटी।

विधिः—देवदालीके पक्के सूखे ३ फल लेवें। भीतरसे जाली और बीजोंको निकाल डालें। केवल कांटेदार टपर लेवें। उसका चूर्ण करें। फिर लगभग १ तोला मुनक्काको धोकर भीतरसे बीज निकाल डालें। उसे चटनीकी तरह पीसें। फिर देवदालीका चूर्ण मिलाकर १४ गोलियाँ बना लेवें। मुनक्का उतनी मिलावें, कि गोलियाँ ४-४ रत्तीकी बन जायँ। (वैद्यराज किशनलालजी अग्रवाल)

मात्राः—१-१ गोली कच्चे गोदुग्धके साथ प्रातःकाल और रात्रिको निगल लेवें। बस्ति केलिये गोदुग्धमें ४ गोली मिला लेवें।

उपयोगः—जीर्णज्वर, मन्द ज्वर, शिरदर्द और कामला रोगको दूर करनेमें यह

वटी अतिलाभदायक है। क्षयकी प्रथमावस्थामें भी इसका उपयोग सफलतापूर्वक होता है। इस वटीका प्रयोग श्री० किशनलालजी अग्रवाल (अमरावती) अनेक वर्षोंसे करते रहते हैं। प्रयोग अतिसामान्य होते हुए भी चमत्कारिक लाभ पहुँचाता है। जब सेन्द्रिय विष, कीटाणुप्रकोप या मलसंग्रह होकर ज्वर बना रहता हो, तब इसका प्रयोग होता है। कभी कभी आमाशयमें दोषप्रकोप अधिक होनेपर किसी-किसीको वान्ति और अन्त्रमें मलसंग्रह अधिक होनेपर विरेचन होता है। किन्तु उससे भय नहीं मानना चाहिये। केवल ऐसा वमन, विरेचन पहले ही दिन होता है फिर नहीं होता तथा यह स्वल्प रूपसे होता है।

जब ज्वरकालमें अपथ्य आहार विहारका सेवन होता है या योग्य उपचार नहीं होता, तब ज्वर जीर्णरूप धारणकर लेता है। अनेकोंको मलावरोध, अरुचि, क्षुधामान्द्य, शिरमें भारीपन, मूत्रमें पीलापन, उत्साहका अभाव, आलस्य, फुफ्फुसोंमें कफ भरा रहना, हाथपैर टूटना, व्याकुलता और शारीरिक उत्ताप ९९½ तक बढ़ना आदि लक्षण उपस्थित होते हैं। उस परयह वटी उत्तम लाभ पहुँचाती है। थोड़े दिन सेवन करनेपर जीर्णज्वर दूर होकर देह सबल होजाता है।

किसी किसी रोगीको जीर्णज्वर होनेपर पित्तप्रकोप होकर मुखपाक, निद्रानाश क्षुधामान्द्य, अरुचि, तृषावृद्धि, दाह, व्याकुलता, मलावरोध और कभी-कभी खट्टी वान्ति होजाना आदि लक्षण उपस्थित होते हैं। उसपर भी यह औषधि अत्युत्तम मानी गई है।

देहमें कीटाणुओंका बाहरसे प्रवेश या सेन्द्रिय विष संग्रहीत होजानेपर मंद मंद ज्वर आता रहता है। विशेषतः रात्रिको ९९° तक होता है। सुबह ९७° डिग्री उत्ताप रहता है। हाथपैर टूटना, क्षुधामान्द्य, उत्साहका अभाव, मूत्रमें पीलापन, शीत या उष्णता सहन न होना, आमाशयमें घण्टों तक भारीपन बना रहना, भोजनकी बार-बार डकार आना, मलावरोध, तथा शौचके साथ आम निकलते रहना आदि लक्षण उपस्थित होते हैं। थोड़ासा परिश्रम करनेपर उत्ताप बढ़ जाता है। इस ज्वरके मूल कारणरूप कीटाणु विषको दूर करनेपर ज्वर स्वयमेव शमन हो जाता है। यह कार्य इस वटीसे उत्तम प्रकारसे होता है।

यदि मंद-मंद ज्वर अधिक समय तक रह जाता है, योग्य उपचार नहीं होता और अपथ्यका सेवन होता रहता है, तो किसी-किसीपर राजयक्ष्माके कीटाणुओंका आक्रमणहोजाता है। फिर शुष्ककास जीर्णज्वर बात-बात में क्रोध उत्पन्न होना, अग्निमांद्य और शारीरिक निर्बलता आदि लक्षण उपस्थित होते हैं। देह अतिकृश और निस्तेज हो जाती है। ऐसी अवस्थामें भी इस वटीका सेवन कराकर योग्य उदरशुद्धि कराई जाय, तो ज्वर दूर होता है और शरीर स्वस्थ होजाता है।

यकृत् या पित्ताशयकी पित्तनलिकाके मार्गका अवरोध होनेपर कामला उत्पन्न होता है। देहमें से प्रस्वेद पीला निकलता है। आँखोंसे जिस पदार्थको देखें उसमें पीलापनका भास होता है।

पेशाब पीला होता है, किन्तु यकृत् पित्तका स्राव अन्त्रमें कम होनेसे मलका रंग सफेद भासता है। उस रोगपर इस वटीका सेवन कराने और दूध भातपर रोगीको रखनेसे थोड़ेही दिनोंमें लाभ पहुंच जाता है।

बृहदन्त्रमें आम, उदरकृमि और मलसंग्रह होजानेसे शिरमें भारीपन निरन्तर बनाही रहता है, आलस्य आता है और स्मरण शक्तिका ह्रास होजाता है। कितनेक रोगी बार-बार जुलाब लेते रहते हैं। जिससे अन्त्र अतिशिथिल होजाता है और शरीर भाररूप भासता है। उसपर इस वटीमिश्रित गोदुग्धकी बस्ति देनेसे उदर शुद्धि होती है। फिर पाचन-क्रिया सबल बन जाती है।

संक्षेपमें जब मल, आम, कृमि, कफ या पित्त आदिका संग्रह होता है या पचनेन्द्रिय संस्थानमें कीटाणु प्रवेश होकर उसकी आबादी बढ़ जाती है, तब यह गुटिका आशीर्वादके समान उपयोगी है।

९. हरीतकी वटी

विधिः—हरड़के छोटे-छोटे टुकड़े कर थुहरके दूधमें १ रात्रि भिगो देवें। दूसरे दिन खरलकर २-२ रत्तीकी गोलियाँ बना लेवें। (आ० नि० मा०)

मात्राः—१-१ गोली सुबह निवाये जल या चायके साथ देनेसे ४-५ जुलाब लग जाते हैं। छातीमें कफ हो तो वमन भी कराती है।

उपयोगः—हरीतकी वटी छातीमें कफ संगृहीत होना. सांधोंमें दर्द, अन्त्रमें आमसंग्रह, रक्तविकार, विस्फोटक, उदरकृमि, श्वास, कास और अर्श पीड़ितको दी जाती है। आवश्यकतापर २-२ दिनपर या ४-६ दिनपर देसकते हैं।

वक्तव्यः—अधिक जुलाब लगे, तो शर्बत पिलावें अथवा खिचड़ीमें घी डालकर खिलादेवें।

१०. माजून एहमदी

विधिः—गुलाबके फूल और गुलबनफसा ३-३ माशे, दालचीनी १ माशा, पीपल ८ माशे, सनायपत्ती और शुद्ध जयपाल ४-४ तोले, रूमीमस्तगी १ तोला, हरड़का छिलका १॥ तोला, मिश्री और शहद २५-२५ तोले लेवें। मिश्रीकी चाशनी करें। फिर औषधियोंका कपड़-छान चूर्ण मिलावें। पश्चात् चाशनी शीतल होनेपर शहद मिलावें। (श्री० राजवैद्य पं० रामचन्द्रजी शर्मा)

मात्राः—२ माशे सुबह अथवा आवश्यकतानुसार देवें।

अनुपानः—सिकंजबीन सिर्की २ तोले, अर्क पोदीना और अर्क सौंफ ५-५ तोले और पीपरमेण्टका तैल २ से ४ बूँद मिलाकर ४ हिस्सा करें। पहले हिस्सेके साथ माजून देवें। फिर ३ घण्टे बाद आवश्यकता अनुसार उबाक शमनार्थ और उदर-शोधनमें सहायतार्थ १-१ घण्टेपर शेषभाग देवें।

उपयोगः—यह योग उदरशोधनमें उत्तम औषधि है। बृहदन्त्र मलसे भर जाने

पर अपान वायु न निकल सकती हो और वस्तिका जल भी न चढ़ सकता हो, पूर्ण बद्धोदर होगया हो, ऐसी अवस्थामें भी इस प्रयोगने लाभ पहुचा दिया है। अन्त्रकी शस्त्र चिकित्सा केलिये तख्तपर लिटाए हुए रोगीको भी इस माजूनसे लाभ होगया है।

बद्धोदरके अतिरिक्त उदरकृमि, आमप्रकोप, शीतपित्त, रक्तविकार, कफवृद्धि आदि रोगोंमें तथा विषसेवनके समय भी माजून एहमदीका उपयोग होसकता है।

११. सिद्ध कल्प

विधि'—ब्राह्मी २० तोले, बच ५ तोले, मुंडीकी गुठियाँ ५ तोले, पीपल और सुवर्ण भस्म १-१ तोला, कालीमिर्च १ माशा और बदामकी गिरी = तोले लेवें। बादामका मोटा चूर्ण मशीनसे करें, शेष औषधियोंका कपड़-छान चूर्ण करें। सबको मिला शहदके साथ ३ घण्टे खरलकर २-२ रत्तीकी गोलियाँ बना लेवें।

(श्री० ठाकुर ईश्वरसिंहजी)

मात्रा.—१-१ गोली दिनमें २ बार प्रात काल और रात्रिको मिवाये दूधके साथ।

उपयोग.—इस कल्पका प्रयोग पथ्यपालनसह १ वर्ष पर्यन्त करना चाहिये। यह मस्तिष्कशोधक, रसायन, धारणाशक्तिवर्धक और दीपन-पाचन है। इसका प्रयोग मस्तिष्कमें कफ, आम या विषका सग्रह, जीर्ण अपस्मार, स्मृतिनाश, जीर्ण शिरदर्द, जीर्ण प्रतिश्याय, पीनस, नेत्रविकार, दृष्टिमांद्य और वातप्रकोप आदि रोगोंपर होता है। इस औषधिके सेवनकालमें गोघृतका नस्य भी कराते रहना चाहिये। जिससे नासामार्गसे श्लेष्मस्राव होकर मल निकलता रहे।

१२. आमविध्वंसनी वटी

विधि —मुलहठी, कुठ, हरड़, सैंधानमक, शुद्ध हिंगूल, सोहागेका फूला और शुद्ध जमालगोटा इन ७ द्रव्योंको समभाग मिला १ घण्टे काजीमें खरलकर १-१ रत्तीकी गोलियाँ बना लेवें। (श्री० वैद्यराज सुखरामदासजी ओझा)

मात्रा.—१-१ गोली गुड़के जलके साथ सुबहको। गुड़को जलमें भिगोकर फिर आध घण्टे बाद छान लेवें।

उपयोग.—इस वटीके उपयोगसे २ दस्त साफ आ जाते हैं तथा कफ, कृमि, विष और नया-पुराना आम निकलकर पचनक्रिया प्रदीप्त होजाती है। आमज्वर और इतर आमप्रधान रोगोंमें उदरशोधनार्थ यह वटी अच्छा कार्य देती है।

२. अमृतार्णव रस (ज्वर)

विधि.—शुद्ध बच्छनाग, शुद्ध पारद, शुद्ध गन्धक, लोह भस्म और अभ्रक भस्म इन ५ औषधियोंको समभाग मिलाकर चित्रकमूलके क्वाथकी ३ भावना देकर १-१ रत्तीकी गोलियाँ बना लेवें। (भै०र०)

मात्रा —१ से ३ गोली दिनमें दो बार निवाये जल, कण्टकार्यादि क्वाथ (नागरादि पाचन) या सुदर्शन चूर्णके अर्कके साथ देवें।

उपयोगः—यह रस आमाशयिक विकारसह विषम ज्वरको दूर करता है। आमाशयमें दोषप्रकोप होकर उस स्थानकी पचन क्रिया बिगड़ती है। फिर वहाँपर आमसंचय होकर ज्वरकी उत्पत्ति होती है। इसी हेतुसे आयुर्वेदने ज्वर चिकित्सामें दोषोंको पचन कराने वाली औषधियोंका उपयोग प्रधानतासे किया है। इस रसमें चित्रकमूलके क्वाथकी ७ भावना देनेका रहस्य भी यही है। आमाशयमें दोषसंचय होनेका निमित्त कारण जिस तरह उत्पन्न हुआ है, उसका विचार औषध योजना करनेपर अवश्य करना पड़ता है। एवं आमाशयके दोषसे केवल ज्वर उत्पन्न होता है, ऐसा नहीं। दोष-दूष्य आदिके संयोगसे इतर व्याधि भी निर्माण होसकती हैं। इस दृष्टिसे औषधिके गुणधर्मका विचार करना चाहिये।

केवल सामदोषसे अग्नि-मान्द्य उत्पन्न होकर ज्वरोत्पत्ति होनेपर त्रिभुवनकीर्त्ति आनन्दभैरव आदि औषधोंका उपयोग होता है; किन्तु सामदोषज अग्नि-मान्द्यका निमित्त-कारण (हेतु) मनोव्याघात, अतिशय मानसिक श्रम, काम, शोक, भय आदिका अतियोग हो; अथवा मानसिक श्रम और उसीके हेतुसे शरीरके भीतर विशेषतः रक्तमें पाण्डुता आकर फिर ज्वर आनेपर इस रसायनका उपयोग करना चाहिये। इस कारणसे उत्पन्न धातुवैषम्य प्रवृत्तिके मूलमें ही अन्तर होता है। इसी हेतुसे इन दोनोंसे उत्पन्न रोगोंमें भी भेद स्पष्टरूपसे प्रतीत होगा ही। धातुवैषम्यको दूर करनेके समय इस अन्तरकी ओर अवश्य लक्ष्य देना पड़ता है।

मिथ्या आहारसे उत्पन्न हुई धातुवैषम्य प्रवृत्ति स्थूल रूपकी होती है; और मनोव्याघातज धातुवैषम्य प्रवृत्ति सूक्ष्म स्वरूपकी होती है। इस हेतुसे इसका परिणाम पहले मनपर होकर फिर शरीरपर प्रकाशित होता है; तथा मिथ्या आहारजन्य वैषम्यमें स्थूल शरीरके अवयवोंमें दोष संगृहीत होता है। इस तरह संप्राप्ति शास्त्रकी दृष्टिसे इन दोनोंमें यह अन्तर अवस्थित है। चिकित्सा करनेमें इस उत्पत्तिकी ओर दुर्लक्ष्य नहीं करना चाहिये।

इस अमृतार्णव रसमें अभ्रक और लोह इन दोनोंका कार्य मनोव्याघातजन्य दोषदुष्टिको नष्टकर धातुसाम्य प्रवृत्ति प्रस्थापित करना है। इस हेतुसे कामज्वर, भय या शोकसे उत्पन्न ज्वरोंपर यह रस ब्राह्मी अर्क, पित्तपापड़ा, सारिवा या सारस्वतारिष्ट आदि अनुपानके साथ दिया जाता है। ज्वरवेग तीव्र होनेपर इस रसके सेवन-कालमें कुछ अन्तरपर (१-२ घण्टे पहले या पश्चात्) प्रवाल पिष्टी, मौक्तिक पिष्टी और गिलोयसत्वको मिलाकर देना चाहिये।

(३) ज्वर

१. विश्वतापहरण (नूतन ज्वर)

विधिः—हरड़, पीपल, ताम्रभस्म, शुद्ध कुचिला, शुद्ध जमालगोटा, कुटकी निसोत, शुद्ध पारद और शुद्ध गंधक इन ९ औषधियोंको समभाग लेवें। प्रथम पारद

गन्धककी कज्जली करें। फिर ताम्र भस्म मिलावें। पश्चात् सब औषधियोंका कपड़छान चूर्ण मिलाकर धतूरेके रसमें १ दिन-रात खरलकर १-१ रत्तीकी गोलियाँ बना लेवें।

(र० यो० सा०)

सूचना.—इस रसको धतूरेके रसकी भावना देनेके पश्चात् इस ३ भावना भांगरेके रसकी भी देते हैं। इन भावनाओंके हेतुसे अन्त्रदाह नहीं होता।

मात्रा.—२ से ४ रत्ती दिनमें २ बार अदरकके रस और शहद अथवा मिश्री मिले जलके साथ।

उपयोग.—यह रस समस्त प्रकारके नूतन ज्वरोंको दूर करता है। ज्वरमें जब विरेचनकी आवश्यकता हो, तब यह दिया जाता है। यह यकृद्विकार, मलावरोध और पित्तवातप्रकोप आदिको दूरकर ज्वरको नष्ट करता है। विषमज्वरमें भी सत्वर लाभ पहुंचाता है।

इस औषधके पाठमें मूलग्रन्थके भीतर अभिनवज्वरघ्न, इतना ही गुण दर्शाया है, किन्तु योग्य रूपसे योजना करनेपर यह रस अनेक रोगोंकी भिन्न-भिन्न अवस्थामें उपयोगी होता है।

विशेष विचार किया जाय, तो आमज्वर और अभिनवज्वर, इन दोनोंमें भी कुछ अन्तर है। अरुचि, अपचन, उदरमें जड़ता, उदरमें अफारा, शूल, मुँहमें जल छूटना, उबाक, कोष्ठबद्धता आदि लक्षणोंकी वृद्धि होकर ज्वर आजानेपर आमज्वर कहलाता है। उसपर वत्सनागप्रधान औषधि दी जाती है। इस रसमें वत्सनाग न होनेसे आमपचनका यथोचित कार्य इससे नहीं होता। आमप्रकोप रहित जो ज्वर हो, ऐसे नूतन ज्वरोंपर इस रसका उपयोग होता है। इस रसमें कफको दूर करनेका गुण तो जमालगोटा, कुटकी और निसोतके हेतुसे है, किन्तु आमको पचन करनेका गुण प्रबल नहीं है।

यह औषध यकृद्वल्य और विरेचन है। इसका उपयोग यकृत्के विकारसे उत्पन्न ज्वरोंमें भांगरेके रसके साथ करना चाहिये। कामलायुक्त ज्वरमें इस औषधका अच्छा उपयोग होता है। तीव्रज्वरके साथमें कोष्ठबद्धता, शौचका वेग किंचित् भी न होना, ऐसा लक्षण होनेपर विश्वतापहरणरस देकर कुछ समयके पश्चात् मात्राबस्ति या निरूहण-बस्ति द्वारा कोष्ठकी शुद्धिकर लेनी चाहिये।

एरंड तैल या ग्लिसरीनकी पिचकारी देने या १०-१२ तोले एरंड तैल और ३०-४० तोले गरम जल मिलाकर रबरकी एनिमा द्वारा गुदासे चढ़ा देनेसे सत्वर उदर शुद्धि होजाती है। रोगी बालक हो, तो ग्लिसरीनकी सपोज़िटरी (बत्ती) चढ़ानेसे भी मल शुद्धि होजाती है।

यकृद्वृद्धिके विकारमें यह औषधि उत्तम कोटिकी मानी गयी है। छोटे बालकोंसे रस अनेक बार सहन नहीं होता। इस तरह जिन देशोंमें बड़ा अधिक होती है;

वातावरणमें आर्द्रता रहती है; ऐसे अनूप देशोंमें यह अधिक अनुकूल रहता है। यद्यपि इस प्रकारपर आरोग्यवर्धिनीका भी उपयोग होता है; तथापि वह केवल यकृद् विकार पर ही उपयुक्त है।

यकृत् वृद्धिके पश्चात् उत्पन्न सर्वाङ्ग शोथ और जलोदर, इन दोनों रोगोंमें कोटागंधाल (मराठी नेवाली, सं० नेमाली, लेटिन Ixora parviflora) के पानके रसमें (या पुनर्नवाके रसमें) इस रसायनका प्रयोग करनेसे अच्छा लाभ होता है।

कभी-कभी मात्रा बढ़ जानेपर और पित्तप्रधान प्रकृतिवालेको देनेपर उष्णता-वृद्धि, रक्तस्राव, अधिक दस्त लगना, बलक्षय आदि हानिकर लक्षण प्रकाशित होते हैं। इस हेतुसे औषध प्रयोग सम्हालपूर्वक करना चाहिये। सगर्भा, अतिसुकुमार और पित्त-प्रकृतिवालोंको नहीं देना चाहिये। (औ० गु० ध० शा० के आधार से)

विषमज्वरमें दोषोंका प्रसार भिन्न-भिन्न दूष्योंमें होता है; और दोष-दूष्योंका यह संयोग भिन्न-भिन्न प्रकारके निमित्त कारणोंसे होता है। जितना दोषदूष्य संयोग तीव्र हो, उतना ही रोग तीव्र होता है। इस प्रकारके तीव्रप्रकोप कालमें महाज्वरांकुश, नारायण ज्वरांकुश, मृत्युञ्जय रस आदि औषधि विशेष उपयोगी होती हैं। इन सब रसोंमें स्थूल प्रकोपको नष्ट करनेका गुण रहा है; किन्तु धातुओंमें लीन दोषोंको प्रशमन करनेकी सामर्थ्य नहीं है; यह महत्वका कार्य अमृतार्णव रस कर सकता है। विषमज्वर जितना जीर्ण हो, उसके साथ प्लीहावृद्धि, सर्वाङ्गमें पाण्डुता, बलहानि आदि उपद्रव अधिक रूपमें हों, उतना ही अमृतार्णवका उपयोग अधिक होता है।

आमाशयके दोषसे उत्पन्न होने वाले छोटे बच्चोंके और बड़े मनुष्योंके रोगोंमें अमृतार्णव अच्छा कार्य करता है। छोटे बच्चोंके क्षीरालसक और पारिगर्भिक विकारोंमें कारणभेद और अवस्था भेदसे आमाशयदोष ही कारण होता है। क्षीरालसकमें आमाशयस्थ कफ बढकर पक्वाशय और बृहदन्त्रमें पचन व्यापारकी विकृति होकर रसरक्तवाही स्रोतें रुद्ध होते हैं। फिर उसी हेतुसे शिशु क्षीण होजाता है। उस विकारमें शिशुका उदर बढ़जाता है; हाथ-पैर कृश होते हैं, मस्तिष्क बड़ा होजाता है; बार-बार मुँहसे पानी निकलता है; कभी कोष्ठबद्धता तथा कभी अपक्व और श्लेष्म मिश्रित पतला दस्त होता है। इस व्याधिमें अमृतार्णवका उपयोग होता है।

पारिगर्भिक विकारमें सगर्भा माताके दूधमें अधिक स्निग्धता, गुरुता और विकृति होनेसे उसका योग्य पचन नहीं होता। इस हेतुसे आमाशयस्थ कफ दोषकी वृद्धि होती है। फिर पचन क्रिया बिगड़कर स्रोतसोंका अवरोध होकर बालक सूखता जाता है। यह विकृति माताकी सगर्भावस्थाके हेतुसे होती है। इसमें भी विशेषतः क्षीरालसकके समान लक्षण होते हैं। इनके अतिरिक्त आमाशय विकृतिके हेतुसे बालक सारा दिन रोता ही रहता है; किसीभी स्थितिमें उसे चैन नहीं पड़ता; मस्तिष्क और गाल शुष्कसे भासते हैं; क्षुधा-मंद, अति थकावट, बार-बार हरे दस्त और उदास

और निस्तेज मुखमण्डल आदि लक्षण प्रतीत होते हैं। ऐसी परिस्थितिमें पहले वमन (वच प्रधान औषधि) देकर आमाशयका संशोधन करना चाहिये, फिर अमृतार्णव रस देना चाहिये।

आमाशयस्थ विकारसे बालकोंको बालग्रह रोग (Infantile eclampsia) उपस्थित होता है। इस विकारमें कुछ अंशमें विकृत दूधभी हेतु होता है। माताका दूध विकृत होजाने पर या माताके अतिरिक्त गोदुग्ध आदि सेवन होता हो, तो उसका सम्हाल न रहनेसे उसमें विकृति होजाती है। फिर उसके सेवनसे आमाशयमें कफदुष्टि होती है, पश्चात् सम्पूर्ण कोष्ठ बिगड़कर उस स्थानकी दोषविकृति होकर बालकको बालग्रह (धनुर्वात) के आक्षेप आने लगते हैं। पक्वाशय यह वातस्थान होनेसे उस स्थानमें वातविकृति होती है। उदरमें वेदना, अफारा, ज्वर, मलावरोध या बार-बार दुर्गन्धयुक्त, कालासा, योग्य रचना रहित, थोड़ा-थोड़ा दस्त होता रहना, बार बार आक्षेप (दौरा) आना, आक्षेप तीव्र वेगपूर्वक आना। प्रत्येक दौरेके साथ बालककी शक्तिका ह्रास होना आदि लक्षण होते हैं। इस विकारपर या उस स्थितिमें लक्ष्मीनारायणके समान अमृतार्णवका भी उपयोग होता है।

शिशुके कीटाणुजन्य अतिसारमें दुग्धविकृति ही कारण होता है। ग्रीष्मऋतुमें दूध जल्दी खराब होजाता है। ऐसा खराब दूध बच्चेको पिला देनेसे अतिसार हो जाता है। इस विकारकी तीव्रावस्थामें एरण्डतैल, दुर्जल जेता रस या सर्वाङ्गसुन्दर रस प्रयोजित होता है, किन्तु तीव्रावस्थाका वेग मन्द होनेपर (या तीव्रावस्थामें वातप्रधान लक्षण अधिक प्रबल होनेपर) अर्थात् बच्चेको धनुर्वातके आक्षेप, कम्प, अपतानक आदि विकार उपस्थित होनेपर और साथ-साथ ज्वर, ग्लानि और शक्तिपात होनेपर अमृतार्णव रसका उपयोग किया जाता है।

बड़े मनुष्यको अपचन और फिर बद्धकोष्ठ, ये विकार आमाशयकी कफदुष्टिसे उत्पन्न होते हैं। इस विकारमें अग्निमान्द्य, मुँहमें बार-बार मीठा जल आते रहना, उदरमें जड़ता, भोजनकी इच्छा कम रहना, अरुचि और विशेषत स्निग्ध और जड़ अन्नकी चाह न होना आदि लक्षण होनेपर और उसके साथ बलका ह्रास होनेपर अमृतार्णव रसका अच्छा उपयोग हुआ है।

इस प्रकारकी आमाशय विकृतिके हेतुसे आमाशयमें कफकी वृद्धि होकर बार-बार तमक श्वासका दौरा होता रहता है। इस विकारमें कफप्रधान विकृतिके हेतुसे महाप्राचीरा पेशी (Diaphragm) पर दबाव पड़नेसे तमकश्वास उत्पन्न होता है। इस स्थितिमें आरोग्यवर्धिनी और अमृतार्णव, दोनों औषधि उपयोगी हैं। पक्वाशय और बृहदन्त्रमें मलसंचय अधिक होने और वात दोषका प्राधान्य होनेपर आरोग्यवर्धिनी देनी चाहिये। विकार केवल आमाशयमें ही हो और कफकी प्रधानता हो, तो अमृतार्णवका करना चाहिये। यह औषधि दौरा शमन होजानेपर जीर्ण विकारमें उपयोगी

होती है। तीव्र वेगके समय दोषदूष्यादिके अनुरोधसे श्वासकुठार, समीरपन्नग, रसकपुर या सोमका फाण्ट आदि वातघ्न और श्वासहर औषधियोंको प्रयोजित करनी चाहिये।

इस औषधमें कज्जली जन्तुघ्न, योगवाही, रसायन, विकाशी, और व्यवायी है। इसके गुण धर्मके हेतुसे श्लेष्मदुष्टि नष्ट होकर धातुसाम्य प्रस्थापित होता है। अभ्रक और लोह भस्मका कार्य रसायन आदि गुणके हेतुसे अत्यन्त सूक्ष्म परमाणुपर्यन्त पहुंच जाता है। अभ्रक भस्ममें वातवाहिनियाँ और वातवह केन्द्र केलिये शक्तिदायक और शामक गुण हैं। एवं लोह भस्ममें रक्तको सबल बनाकर सारे शरीरके बलको बढ़ानेका गुण रहा है। बच्छनाग ज्वरहर, वेदनाशामक और वातके आवेग को दमन करनेवाला है। बच्छनागको गोमूत्रमें शुद्ध करके मिलानेसे हृदयकी शक्ति क्षीण नहीं करता। चित्रकमूलमें अग्निप्रदीपक, पाचक और आमाशयस्थ कफदोषकी विषमताको नष्ट करना तथा लघु अन्त्र और बृहदन्त्रमेंसे वात दुष्टिको दूर करना, ये गुण अवस्थित हैं। (औ० गु० ध० शा० के आधारसे)

३. सुवर्ण चिन्तामणि

विधिः—शुद्ध पारद, शुद्ध गंधक, सुवर्ण भस्म, रौप्य भस्म, शुद्ध खर्पर (जसद भस्म) ताम्र भस्म, अभ्रक भस्म, कान्तलोह भस्म, लोह भस्म, नाग भस्म, बंग भस्म, सुवर्णमाक्षिक भस्म, रौप्यमाक्षिक भस्म, वैक्रान्त भस्म, हीरा भस्म, नीलम पिष्टी, मोती पिष्टी, प्रवाल पिष्टी, पन्ना पिष्टी, माणिक्य पिष्टी, गोमेदमणि पिष्टी, राजावर्त्त पिष्टी, पुखराज पिष्टी, वैडूर्य (लसनिया) पिष्टी, शंख भस्म, वराटिका भस्म, शुद्ध नीलाथोथा, शुद्ध हरताल (माणिक्य रस) शुद्ध मैनसिल, शुद्ध शिलाजीत, शुद्ध बच्छनाग, उसारे रेवन, शुद्ध जमालगोटा, काली निशोथ, सोंठ, कालीमिर्च, पिप्पली, दंतीमूल, धतूरेके शुद्ध बीज, गोकर्णीके बीज और कड़वी तुम्बीके बीज, ये ४१ औषधियों को समभाग लें। पारद, गंधककी कज्जली करें। उसमें पहले बच्छनाग, हरताल और जमालगोटाको क्रमशः मिला-मिलाकर एक जीव करें। फिर भस्म और पिष्टी मिला लेवें। पश्चात् शेष काष्ठ औषधियोंका कपड़-छान चूर्ण मिला लेवें। शिलाजीतको भांगरेके रसमें घोलकर मिला लेवें। फिर भांगरेके अच्छी तरह छाने हुये स्वच्छ रस और नागर-बेलके पानके रसकी ७-७ भावना देकर आध-आध रत्तीकी गोलियाँ बना लेवें।

(र० यो० सा०)

मात्राः—१ से २ गोली कालीमिर्चके २२ दाने और ३-४ माशे भांगरेके रसके साथ दिनमें २ बार प्रातः-सायं देवें।

उपयोगः—चिन्तामणि रस, सन्निपातिक ज्वर, अष्ट प्रकारके ज्वर, आम ज्वर, निराम ज्वर, द्वंद्वज ज्वर, विषम ज्वर, जीर्ण ज्वर, त्रिदोषज ज्वर, राजयक्ष्माजनित ज्वर, सहज ज्वर, शापाभिभूत ज्वर, अभिचारज ज्वर, भूतप्रेत, पिशाच, राक्षस और देवावेषज ज्वर, इन सबको दूर करता है। स्थावर विष, जंगम विष, मूषकविष और व्रणजनित

ज्वर आदि सबको यह चिंतामणि रस शमन करता है। यह वृद्ध मनुष्यको कामोत्तेजना और युवाके समान बल प्रदान करता है यह रस तत्काल फल देने वाला होनेसे इसे चिंतामणि संज्ञा दी है। यह रस राजाओंके सेवन करने योग्य है।

यह रस वातज, पित्तज और कफज सब प्रकारकी व्याधियोंपर अधिक फलदायी है। इसका प्रयोग योग्य अनुपानके साथ सावधानतासे करनेपर इच्छित लाभ पहुंचाता है। बिगड़े हुए ज्वर और राजयक्ष्माके हताश रोगियों केलिये यह अमृत सदृश उपकारक है।

सन्निपातोंमें सबसे पहले पचन संस्थान (उदर) का शोधन करना पड़ता है। उदरमें मल, आम, कृमि या विष होनेपर वह रक्तमें आकर्षित होता रहता है। इसे जब तक दूर नहीं किया जायगा, तब तक ज्वर दूर नहीं हो सकेगा। अतः इसे दूर करने केलिये मूल प्रयोग कारने उसारे रेवन, जमालगोटा, निशोथ, दन्तीमूल, गोकर्णी और कटुतुम्बी इस प्रयोगमें मिलाया है।

रक्तगत विषको जलाने, पूय और कीटाणुओंका नाश करने और विकृत घटकोंको मूलरूपमें लाने केलिये पारद, गन्धक, सुवर्ण आदि भस्मों और रत्नोंको मिलाया है। इनके अतिरिक्त इन भस्म-रत्नादिके हेतुसे मस्तिष्क और हृदयको बलभी मिल जाता है। इस हेतुसे सन्निपातकी सब अवस्थाओंमें यह चिन्तामणि रस चमत्कारिक लाभ दर्शाता है।

व्रणजनित ज्वर (Pyaemia) में जब पूयका प्रवेश रक्तमें होता है, तब दिनमें २-३ बार शीत कम्पसह ज्वर आता है और स्वेद आकर दूर होता है। इस ज्वरमें बास उपचारके साथ इस चिन्तामणि रसका सेवन करानेपर कुछ दिनोंमें लाभ पहुंच जाता है। यदि वृक्कके क्षतमें से पूयका रक्तमें प्रवेश होता हो, तो स्थानिक शुद्धि केलिये वृक्कामयरीपर कार्यकारी मूत्रल औषधिका भी साथ-साथ उपयोग करना चाहिये। परन्तु वृक्कगत प्रकारमें इस रसका प्रयोग अधिक दिनों तक नहीं हो सकेगा।

मूषक विष रक्तमें फैल जानेपर (चूहेके काटनेके १०-१५ दिनके भीतर) स्थान-स्थानपर नीलाभरक्त धब्बे होते हैं, वातनाड़ी और मांसपेशियोंमें भयङ्कर वेदना होती है। इस वेदनाके हेतुसे ज्वर, निद्रानाश और घबराहट आदि लक्षण उपस्थित होते हैं। इस मूषकविषज ज्वर (Rat-bite fever) पर यह चिन्तामणि रस पुनर्नवाष्टक या रक्तशोधक अर्कके साथ देते रहनेसे ३-४ दिनमें तीव्रवेदनाका दमन होजाता है।

राजयक्ष्मामें किसी किसी रोगीको कीटाणु विष और पूयका प्रकोप अधिक होता है। जिससे ज्वर अधिक रहता है और शक्ति बहुत कम होजाती है। इन रोगियों को यह चिन्तामणि रस कम मात्रामें थोड़े दिन देनेपर विषका दमन होजाता है और शक्ति बढ़ जाती है। फिर इयहर अन्य उपचार करनेका मार्ग सरल होजाता है।

सूचनाः—जिन रोगियोंको पीले पतले दस्त आते हों या प्रवाहिका जनित अन्त्रक्षत हो, उनको यह रस नहीं देना चाहिये।

४. चिन्तामणि रस (ज्वर)

विधिः—शुद्ध पारद, शुद्ध गन्धक, शुद्ध बच्छनाग, ताम्र भस्म, अभ्रक भस्म, हरड़, बहेड़ा, आँवला, सोंठ, कालीमिर्च, पीपल और जमालगोटा इन १२ औषधियोंको समभाग मिलाकर द्रोणपुष्पीके रसमें १ दिन खरलकर १-१ रत्तीकी गोलियाँ बना लेवें। (भै० र०)

मात्राः—१ से २ गोली दिनमें २ बार अदरकके रस या रोगानुसार अनुपानके साथ देवें।

उपयोगः—यह रस अजीर्ण और उससे उत्पन्न ज्वरपर रामबाण है। इसके अतिरिक्त आठों प्रकारके ज्वर और सब प्रकारके शूलोंका नाश करता है।

जिसतरह ज्वरकेसरी वटीमें हरताल बढ़ाकर अश्वकंचुकी रस निर्माण किया है। उसी तरह ज्वरकेसरीमें ताम्र भस्म और अभ्रकभस्म बढ़ाकर इस चिन्तामणि रसको तैयार किया है। ज्वरकेसरीमें विशेषतः भांगराकी भावना दीजाती है। भांगराकी भावनासे जमालगोटेकी उग्रताका शमन होता है; किन्तु निघण्टु रत्नाकरकारने ज्वरकेसरीको भी द्रोणपुष्पीकी भावना देनेको लिखा है। एवं इस रसको भी द्रोणपुष्पीके रसकी भावना दीगई है। द्रोणपुष्पीमें कीटाणुओंको नष्टकर विषमज्वरको दूर करनेका अद्भुत गुण रहा है। इस दृष्टिसे द्रोणपुष्पीकी भावना विशेष हितावह मानी जायगी।

इस चिन्तामणि रसका मुख्य उपयोग अजीर्ण ज्वरपर होता है। ऐसा मूल ग्रन्थकारका लेख है। ज्वरकी आमावस्था कम होनेपर, आमज्वरके लक्षण मंद होजाने पर इस रसका उपयोग करना चाहिये। ज्वरके साथ शूल होनेपर उसे भी यह रस दूर कर देता है। कफपित्तज ज्वर और एक दोषज ज्वरपर इस रसका उत्तम उपयोग होता है।

ज्वर आनेके साथ पहले एक-दो दिन तक तो उपवास करना चाहिये, या फलोंके रसपर रोगीको रखना चाहिये। सन्निपातज्वर और केवल वातज्वर तथा इतर सेन्द्रिय विषसे उत्पन्न ज्वरमें आमानुबन्ध न होनेपर रोगीको आरम्भमें उपवास करानेकी उतनी आवश्यकता नहीं है। मुँहमें जल छूटना, उबाक बनी रहना, उदरमें वायु भरा रहना, क्षुधा नष्ट होजाना किसी भी अन्नपर रुचि न होना, नेत्रपर भारीपन, किसी भी कार्य करनेकी इच्छा न होना। मुँहका बेस्वादुपन, भोजन किया हुआ अन्न उदरमें जैसाका वैसा रहा है ऐसा भासना, कभी-कभी उदरपीड़ा होना, जड़ता और कोष्ठबद्धता इत्यादि साम लक्षणों युक्त होनेपर ज्वर आनेके १-२ दिनके पश्चात् चिन्तामणि रसकी योजना करनी चाहिये।

ज्वरवेग अत्यधिक न हो, नाड़ीका वेग सामान्य हो और ज्वरमें दाह आदि सब

लक्षण मर्यादित हों, देहमें गीलापन, सन्धिस्थानोंमें फूटनेके समान वेदना, अंगमें भारीपन, मस्तिष्क जकड़नेके समान भासना, बार बार प्रतिश्याय, कास, प्रस्वेद न आना, मुँहमें कडुवापन और अरुचि आदि लक्षण हों, ऐसे कफपित्तप्रधान ज्वरमें मलावरोध होनेपर चिन्तामणि रसका उपयोग करना चाहिये।

वातज्वरमें ज्वरका वेग स्थिर नहीं रहता, सहसा ज्वर बढ़ता है, और सहसा उतरता है। कम्प, कण्ठ, ओष्ठ और मुखमें अति शोष, निद्रानाश, बार-बार छींके आना, अंग जकड़ जाना, मस्तिष्क, छाती और सर्वांगमें एक प्रकारकी रूक्षता आ जाना और दर्द होना, कभी कभी इन स्थानोंमें शूल चलना, मुँहमें बेस्वादुपन, शौच शुद्धि न होना, मल शुष्क, काला-सा होजाना, हाथ पैर शून्य होजाना, पैरोंमें ऐंठन आना, कर्णगुंजन होना, दांत भींचने, शूल, उदरमें वायु भरजाना, बार-बार उबासी आना आदि लक्षणों के साथ मलावरोध होनेपर और मलका रंग काला-सा होनेपर यह चिन्तामणि रस चिन्तामणि के तुल्य ही है।

विषम ज्वरके समान ज्वर अधिक दिन आते रहने और फिर बद्धकोष्ठकी आदत होनेसे शौच शुद्धि न होना, मल चिपचिपा, छोटी-छोटी गाठों वाला और झाग युक्त होना, दस्त होनेकी इच्छा बनी रहना, अग्निमान्द्य, जड़ता, और सामान्य होनेपर भी त्रासदायक कोष्ठशूल आदि लक्षण होनेपर चिन्तामणि रस अच्छा कार्य करता है। ऐसी कोष्ठबद्धतासे उत्पन्न तीव्रशूल भी इस रस के सेवनसे नष्ट होजाता है।

आमाशयमें पाचक रस योग्य प्रकारका उत्पन्न न होने या आमाशय आदि पचनेन्द्रियमें शिथिलता आ जानेपर बार-बार अजीर्ण उत्पन्न होता है। इस अपचनकी आदत वालों केलिये चिन्तामणि रसका उपयोग अच्छा होता है।

चिन्तामणि रसमें पाचन, विरेचन तथा पचनेन्द्रियको किञ्चित शक्तिदेनेका गुण है। एवं मध्यमकोष्ठकी श्लैष्मिक कलापर संचित हुए श्लैष्मिक रसका स्राव कराना और पाचक धर्मके हेतुसे मलको दूरकर शूलको शमन करना आदि गुण भी रहे हैं।

इसमें कज्जली जन्तुघ्न, रसायन और उत्तेजक है। ताम्रभस्म तीव्र पाचक और यकृत्का पित्तस्राव कराने वाली होनेसे कोष्ठके पिच्छिल और दुर्गन्धयुक्त स्रावको नष्ट करती है। अभ्रकभस्म बल्य, रसायन और वातवाहिनियोंपर शामक असर पहुचाती है। त्रिफला किञ्चित् सारक, रसायन और शूलघ्न हैं। त्रिकटु तीव्र पाचक, उष्णवीर्य, उष्णरसात्मक और दीपन है। जमालगोटा तीव्र सारक और विस्फोटकारक तथा द्रोणपुष्पी ज्वरनाशक, शूलहर और पाचक है।

सूचना —इस चिन्तामणि रसका उपयोग सगर्भा बालक, वृद्ध और अतिशय कृश रोगियों केलिये नहीं करना चाहिये। यदि करना पड़े तो अति सम्हालपूर्वक सौम्य अनुपानके साथ करना चाहिये। (औ० गु० ध० शा० के आधार से)

५, ज्वरारिअभ्र

विधिः—शुद्ध पारद, शुद्ध गन्धक, ताम्र भस्म, अभ्रक भस्म, शुद्ध बच्छनाग, पाँचों औषधियाँ १-१ तोला, धतूराके शुद्ध बीज २ तोले तथा सोंठ, कालीमिर्च और पीपल, तीनों मिलाकर ९ तोले लें। पहले कज्जली करें, फिर भस्म और विष मिलावें। पश्चात् शेष औषधियोंका कपड़-छान चूर्ण मिलाकर अदरकके रसमें १२ घण्टे खरलकर १-१ रत्तीकी गोलियाँ बना लेवें। (भै० र०)

मात्राः—१-१ गोली दिनमें तीनबार निवाये जल या रोगानुसार अनुपानके साथ देवें।

उपयोगः—यह ज्वरारिअभ्र सर्वज्वरोंका नाश करता है। वातिक ज्वर, पैत्तिक ज्वर, श्लैष्मिक ज्वर, सन्निपातिक ज्वर, विषमज्वर, द्वन्द्वज ज्वर और धातुगत विषमज्वर आदिको नष्ट करता है। एवं प्लीहावृद्धि, यकृद्विकार, गुल्म, अग्निमान्द्य, शोथ, कास, श्वास, हिक्का, तृषा, कम्प, दाह, शीतलगना, वमन, चक्कर आना और अरुचि आदि लक्षण और उपद्रवोंका भी विनाश करता है।

यह ज्वरारि रस अतिव्यापक कार्यकारी है। दोषदूष्योंका संयोग होकर वह लीन होनेपर जो वस्तुस्थिति निर्माण होती है, उसमें इस औषधका कार्य होता है। त्रिभुवन-कीर्त्ति महाज्वराङ्कुश, मृत्युञ्जय रस आदिका कार्य उत्क्लिष्ट दोषपर उत्तम होता है। इन सबका कार्य लीन दोषपर नहीं होता, अर्थात् इनका कार्य उत्तान स्वरूपका है। ज्वर मुरारि (गद मुरारि) और इस ज्वराररिसका कार्य उत्तान दोषकी अपेक्षा लीन और तिर्यग्गत दोषोंपर भली प्रकारसे होता है अर्थात् ज्वर बिल्कुल नूतन हो और दोषदूष्य स्वच्छ और स्पष्ट लक्षित होनेपर त्रिभुवनकीर्ति आदि औषध और वही ज्वर जीर्ण होकर दोषदूष्यादिके संयोगके लक्षण विविध प्रकारके भिन्न-भिन्न लक्षित होनेपर ज्वरमुरा-रि रस और ज्वरारि रसका उपयोग होता है। इस तरह नागकल्प (बच्छनागप्रधान औषध) का कार्य भिन्न-भिन्न प्रकारका होता है।

स्त्रीविषयक शृंगार चेष्टाका निदिध्यास और उसकी परिपूर्ति न होने या उस सम्बन्धमें अत्यन्त निराशा उत्पन्न होनेपर मनोव्याघात होकर ज्वरोत्पत्ति होजाती है। इस ज्वरमें किन्हींको दाह, ज्वरका तीव्र वेग और तृषा आदि लक्षण होते हैं। कइयोंको प्रलाप, कम्प, कण्ठमें शुष्कता, निद्रानाश, सब अंगोंमें पीड़ा और शरीर अकड़ जाना आदि लक्षण प्रकाशित होते हैं। इस प्रकारके मानसिक व्याघातजन्य ज्वरमें वातदोषका प्रकोप होता है। इसपर त्रिभुवन कीर्तिके समान उत्तान विकारनाशक औषधोंका उपयोग नहीं होता। उक्त वातजन्य. लीन विषके पचनार्थ ज्वरारि रस प्रयोजित होता है। दाह आदि लक्षण प्रबल होनेपर चन्द्रकला रस हितकारक माना जाता है, तथा कम्प, प्रलाप आदिपर ज्वरारिअभ्र ही उपयोगी होता है।

शोकजन्य ज्वरमें गत वस्तुका निदिध्यास बना रहता है; इस हेतुसे वात

प्रकुपित होती है। इसके अतिरिक्त खानपान आदिमें अनियमितता, देहकी योग्य सम्हाल न होना, रूक्ष और अल्प अन्नसेवन आदि हेतु उसमें समाविष्ट होते हैं। शोकका सबल आघात पहले मनपर होता है। जिससे सब शरीर विशेषतः वातवाहिनियाँ और वातवह केन्द्र शिथिल होते हैं। फिर दोषप्रकोप होकर ज्वर उपस्थित होजाता है। इस प्रकारमें रोगी-गत वस्तुका नाम लेकर प्रलाप करता रहता है। मनमें अतिव्यथित हो जाता है, सब पदार्थोंसे उदासीनता आ जाती है, सब वार्ताका त्याग, यह नहीं, और वह नहीं, इस तरह रोगी बिना विचार किये बोलता रहता है। इनके अतिरिक्त तृषा लगनेपर जल न मांगना, क्षुधा लगने पर भोजन न मांगना अथवा क्षुधा तृषाका भान कम होजाना, रोगी सञ्ज्ञारहित, दीन, दुर्बल व्याकुल, अति हताश और शेष आयु किसी तरह पूरी करना, ऐसी इच्छासे पड़े रहना आदि लक्षण प्रतीत होते हैं। इस तरहके जीवनसे हताश रोगी ज्वरारि अभ्रके सेवनसे धीरे-धीरे सुधरने लग जाते हैं।

बालक और नाजुक प्रकृतिकी स्त्रियोंको सन्ध्याकाल या असमयमें अपरिचित अथवा भयप्रद स्थानमें जानेका प्रसंग आनेपर पूर्वग्रहदुष्ट मनके भीतर अनेक प्रकारकी भीति उत्पन्न होकर विलक्षण मानसिक आघात पहुंच जाता है। इसका परिणाम मन, वातवाहिनियाँ और वातवहकेन्द्रपर होता है। फिर वातप्रकुपित होकर ज्वरोत्पत्ति होजाती है। इस ज्वर में रोगीको कम्प बना रहता है, बार-बार मनमें भय उपस्थित हो जाता है, मन ही-मनमें बड़बड़ाहट करता रहता है; बीच-बीचमें जोरसे चिल्ला उठता है, व्याकुलता, तन्द्रा, विचारमें अस्थिरता, अच्छी निन्द्रा न आना और किञ्चित् नेत्र लगनेपर थोड़ेही समयमें जागकर बूम मारना आदि लक्षण होनेपर ज्वरारि रस देना चाहिये।

ऐसे ज्वरमें पहले वातदोषकी विकृतिका प्रारम्भ होता है, तो भी रोगियोंकी मूल प्रकृतिके अनुसार पित्तदोष या कफदोषके लक्षण होते हैं। दाहवृद्धि, तृषा, प्रलाप, मोह, चक्कर आना, वमन, उदरमें जलन, मूत्रमें दाह तथा पीला, पतला और जलनसह दस्त होना आदि लक्षण होते हैं। इस स्थितिमें ज्वरारिअभ्र, रस, पित्तपापड़ा, रक्तचंदन, धनिया, कमल और मुलहठीके क्वाथके साथ देना चाहिये।

देहमें जड़ता, ज्वरका वेग मयंदित, आलस्य, मुँहमें मीठापन, कास, श्वास, शीत बनी रहना, कम्प, बार-बार हिक्का आना, अन्नपर तिरस्कार, कुछ खानेकी इच्छा न होना, मुँहमें बेस्वादुपन, अरुचि, भोजन सामने आनेपर मुँहमें जल छूटना और उबाक आने लगना आदि लक्षण हों, तथा ज्वर अनेक दिनोंसे बना रहा हो, तो ज्वरारि अभ्रका उपयोग अदरकके रस और शहदके साथ करना चाहिये।

सान्निपातिक ज्वरमें मुख्यकारण मनोव्याघात हो और मिश्रित लक्षण हों, तो इस रसका प्रयोग किया जाता है। इस प्रकारसे सान्निपातिक ज्वरमें और इतर सान्निपातिक ज्वरमें कितनेक अंशमें साधर्म्य और कितनेक अंशमें

वैधर्म्य होता है। सन्निपातके सब लक्षण इन दोनों में समान हों, उनको तो साधर्म्य कहेंगे, किन्तु इतर सन्निपातमें एक-एक अवयव समूहमें पहले दोष सन्निपातका परिणाम होकर फिर उनका परिणाम वातवाहिनियाँ वातवहकेन्द्र, और मनपर क्रमशः होता है; तथा इस प्रकारके सन्निपातमें प्रथम परिणाम मनपर होता है। फिर मस्तिष्क, वातवह केन्द्र और वातवाहिनियाँ विकृत होकर अवयव समूह दुष्ट होते हैं। यथहि-आन्त्रिक ज्वरमें अन्त्रविकृति होकर उसमें दोषप्रकोप होता है, और वहाँसे उसका प्रसार होकर आगे-आगे उसका परिणाम समस्त शरीरपर होता है, तथा उन-उन अवयवसमूहोंके विकृति-सूचक लक्षण दृष्टगोचर होते हैं। श्लैष्मिक सन्निपातमें श्लेष्मका स्थान, जो उर है, वह पहले दुष्ट होता है फिर उस स्थानका दोषसंचय सब अवयवोंको दुष्ट करता है। इस हेतुसे आन्त्रिक और श्लैष्मिक सन्निपातकी चिकित्सा तथा मनोव्याघातजन्य सन्निपात की चिकित्सा में सहज अभेद होजाता है। मनोव्याघातज प्रकारमें इस ज्वरारि अभ्रका उपयोग होता है।

विषमज्वर और धातुगत ज्वरमें ज्वरमुरारि (गदमुरारि) उपयोगी होता है। उस रसका गुणधर्म रसतन्त्रसार व सिद्ध प्रयोगसंग्रह प्रथम-खण्ड में दिया है। वह जीर्ण, अनियमित, विषमज्वर और जीर्णसान्निपातिक ज्वरमें उपयोगी होता है। यदि मनोव्याघात कारण हो और वातप्रकोपकी प्रधानता हो, वहाँपर इस ज्वरारि अभ्रका उपयोग किया जाता है।

श्वास रोगमें श्वासके आवेगको शमन करनेकेलिये इस औषधका उपयोग किया जाता है। तीव्र दौरा न हो, कण्ठ और उरःस्थान जकड़े हुए भासते हों; मनमें अतिशय व्याकुलता, जीभका अति भीतर खिंचना; किसी तरह रोगीको चैन न होना सोतेहुए वार-वार करवट बदलना; हाथ पैर पटकना आदि लक्षण प्रतीत होते हों; तो श्वासकुठारकी अपेक्षा यह ज्वरारिअभ्र विशेष लाभ पहुंचाता है। इस रस का उपयोग विशेषतः मनोव्याघातज वातदुष्टिप्रधान ज्वरमें होता है। इस प्रकारके दोषदूष्यसंयोगसे उत्पन्न विषमज्वर, धातुगतज्वर और सान्निपातिक ज्वर तथा अन्य अर्थात् पित्त और कफप्रधान लक्षणवाले ज्वरोंमें भी यह ज्वरारि अभ्र उपयोगी है।

इस रसमें धतूरा, वच्छनाग और अभ्रक भस्म, इन द्रव्योंका संयोगजन्य गुण वेदनाशामक और मनः पीड़ाहारक है। इसमें कज्जली जन्तुघ्न रसायन और योगवाही है। अभ्रक भस्म, मनःपीड़ाहर, धातुपरिपोषक क्रमको व्यवस्थित करने वाली, रसायन और शामक है। ताम्रभस्म पाचक, यकृत्पित्तस्रावक, कोष्ठगत दोषनाशक, यकृत्प्लीहावृद्धिनाशक और सारणकारक है। वच्छनाग, वेदनाशामक, शोथहर, स्वेदल, मूत्रल, ज्वरनाशक और नाड़ीके वेगको मन्द करनेवाला है। धतूरा, मनःपीड़ाहारक, वेदनाशामक, उत्तेजक तथा पीड़ा सहन करनेकी पात्रता उत्पन्न करनेवाला है। त्रिकटु, पाचक, दीपक और योगवाही है। अदरकका रस-पाचक और ज्वरघ्न है। (औ० गु० ध० शा० के आधार से)

६. चन्द्रशेखर रस (श्लेष्मपित्तज ज्वर)

विधि —शुद्ध पारद १ तोला, शुद्ध गन्धक २ तोले, कालीमिर्च १ तोला, सोहागाका फूला १ तोला तथा मिश्री ५ तोले लें। पहले कज्जली करें। फिर शेष औषधियोंका कपड़-छान चूर्ण मिला अच्छीतरह मर्दन कर ३ दिन तक मत्स्यपित्तके साथ खरल करें। फिर आध आध रत्तीकी गोलियाँ बनाकर सुखा लेवें। (भै० र०)

वक्तव्य —इस रसको मत्स्यपित्तकी भावनाके पश्चात् नींबू और अदरकके रसकी ३-३ भावना देवें, तो रस विशेष गुणदायक बनता है।

मात्रा —१ से २ गोली तक अदरखके रसके साथ दिनमें २ बार देवें, फिर ऊपर शीतल जल पिलावें।

उपयोग —यह रस श्लेष्मपित्त प्रधान अति उग्रज्वरको मात्र ३ दिनमें ही दूर कर देता है। इस रसके सेवन करने वालोंको ज्वर उतर जानेपर मट्ठाके साथ भात और बैंगनका शाक खानेको देवें।

चन्द्रशेखर श्लेष्मपित्तज ज्वरमें लाभदायक है। इस प्रकारके ज्वरमें मुँहके भीतर चिपचिपापन और कड़वापन, तन्द्रा, विचारोंमें अस्थिरता, कास अरुचि तथा कभी दाह और कभी शीत लगना आदि लक्षण होते हैं। इसमें कफकी जड़ता, चिपचिपापन और शीतलता धर्म तथा पित्तका द्रवत्व धर्म, इन सबकी वृद्धि होती है। इसी हेतुसे आमाशय और उसके समीपमें रही हुई स्रोतसमें रुद्ध होजाती है। परिणाममें ज्वर उपस्थित होता है। ऐसे समय पर स्रोतसमें का रोध कम करने वाली, पाचक और उत्तेजक औषधि देनी चाहिये। चन्द्रशेखर ये सब कार्य करता है। चन्द्रशेखर मत्स्यपित्त, कालीमिर्च, सोहागा और अदरकके योगसे श्लैष्मिक विकृतिको दूर करता है। फिर आमाशयस्थ पाचकपित्त अच्छीतरह अपना कार्य करने लगता है।

इस औषधके सेवनसे प्रस्वेद अधिक आकर स्रोत और रक्तमें रहा हुआ विष निकल जाता है, जिससे शरीर हलका बन जाता है, नाड़ीका वेग मर्यादित होता है तथा पेशाबकी शुद्धि होती है इसतरह श्लेष्म और पित्तदु[redacted]ा नाश होकर साम्य स्थापित होता है। यह चन्द्रशे[redacted]रस मस्तिष्कावरण प्रदाह (Meningitis) को दूर करनेमें भी विशेष प्रभावशाली प्रतीत हुआ है।

इस रसमें कज्जली जन्तुघ्न, रसायन और विकासी है। कालीमिर्च तीव्र, पाचक और उत्तेजक है। सोहागा आक्षेपहर, कीटाणुनाशक, दुर्गन्धहर, पाचक तथा कफको पतला करनेवाला है। मिश्री हृद्य, प्रसादन और मत्स्यपित्तके स्वादको दबाने वाली है। मत्स्यपित्त पित्तोंमें तीक्ष्णत्व, उष्णत्व, और अम्लत्व धर्म बढ़ानेवाला, विकासी, व्यवायी और स्वेदल है। अदरक, श्लेष्मघ्न, ज्वरहर, पाचक, अग्निदीपक और स्वेदल है। नींबू पाचक, दीपक, सूक्ष्म स्रोतोगामी, रसोंकी सम्यक् उत्पत्ति करनेवाला और रुचिकर है।

(औ० गु० ध० शा०)

७. बृहत्कस्तूरीभैरव।

विधिः—कस्तूरी, कर्पूर, ताम्रभस्म, धायके फूल, कौंचके बीज, रौप्यभस्म, सुवर्ण भस्म, मोतीपिष्टी, प्रवालपिष्टी, लोहभस्म पाठा, बायविडंग, नागरमोथा, सोंठ, खस, शुद्ध हरताल (माणिक्य रस), अभ्रकभस्म और आँवले, इन १८ औषधियोंको समभाग लें। पहले कस्तूरी और कर्पूरको आकके पक्के पानोंके स्वरसमें ३ घण्टे खरल करलें। फिर शेष औषधियोंका कपड़-छान चूर्ण मिला ३ दिन आकके पानोंके स्वरसमें ही खरल करके १-१ रत्तीकी गोलियाँ बना लेवें। (भै० र०)।

सूचनाः—रोज़ रात्रिको खरलपर ढक्कन दृढ़ रखदें। जिससे कस्तूरी और कर्पूर अधिक उड़ न जाँय।

मात्राः—१-२गोली अदरकके रस, नागरवेलके पानके रस, अर्कादि क्वाथ, ग्रन्थ्यादि क्वाथ, तगरादि कषाय या देवदार्वादि क्वाथके साथ देवें।

उपयोगः—बृहत्कस्तूरी भैरवके गुणवर्णनमें मूलग्रन्थकारने इसे सर्वज्वर विनाशन कहा है। विषमज्वर, द्वन्द्वज ज्वर, भौतिक ज्वर, कामज्वर, अभिघातज, शत्रुकृतज्वर, डाकिनियोंकृत ज्वर, और ग्रहपीड़ा आदिसे उत्पन्न ज्वरपर अदरकके रसके साथ देनेका विधान किया है।

आमातिसार, ग्रहणी और ज्वरातिसारपर बेलगिरी, ज़ीरा और शहद्के साथ दिया जाता है।

यह रस अग्निप्रदीपक और मस्तिष्क शामक है। कास, प्रमेह, हलीमक, संतत आदि सर्वप्रकारके नूतन और जीर्ण विषम ज्वर, पुनरावर्तक ज्वर, ज्वरावस्थाके आक्षेप (धनुर्वात) और भूत प्रकोपज आक्षेप, इन सब रोगोंमें अनुपान रूपसे अदरकके रसका विधान किया है।

इस रसमें प्रधान द्रव्य कस्तूरी है। उसके मुख्य गुणकी जब आवश्यकता होती है अर्थात् विषका तत्काल दमन कराना और अपक्व आम मलका पचन कराना इष्ट हो, तब इस बृहत्कस्तूरी भैरवकी योजनाकी जाती है।

सन्निपातः—सन्निपातमें बार-बार आक्षेप आता हो या वातप्रकोप लक्षण-प्रलाप, निद्रानाश, मनकी अस्वस्थता, बेचैनी आदि प्रधानरूपसे उपस्थित हों, ज्वर १०२° से अधिक हो, तब इस रसके प्रयोगसे तुरन्त चमत्कारिक लाभ पहुंचता है। यदि उदरमें अति मलसंग्रह या दूषित मल हो तो एरण्ड तैल या ग्लिसरीनकी पिचकारी द्वारा पहले उदरशुद्धि करा लेनी चाहिये।

सन्निपात ज्वरमें पचन संस्थान और रक्त आदि धातुओंमें अपक्व दूषित रस प्रायः रहता है। जो रक्तमें शोषित होनेपर विविध उपद्रव उपस्थित कराता है। अधिक स्वेद आना, शीतांग, मंद-मंद प्रलाप, तन्द्रा, अतिक्षीण नाड़ी, कम्प और शक्तिपात आदि लक्षण उपस्थित हुए हों, तो अर्कादि क्वाथ या तगरादि कषायके साथ यह रस देना चाहिये।

सूतिका ज्वर—विशेषत गर्भाशयमें से रक्तमें विष प्रवेश करनेपर सूतिका ज्वरकी प्राप्ति होती है। लक्षण विशेषत वातप्रकोपक आक्षेपक आदि होते हैं। उसपर देवदार्वादि क्वाथके साथ इस रसकी योजना करनेपर तत्काल लाभ पहुचता है।

प्रलापक सन्निपातमें अनुपान तगरादि कषाय विशेष अनुकूल रहता है। इसका पाठ रसतन्त्रसार प्रथम खण्डमें है।

हृदय क्षीणता—स्वल्प कस्तूरी भैरवमें वच्छनाग मिला है। अत वह हृदयकी क्षीणता होनेपर पुन-पुन नहीं दिया जाता। ऐसे स्थानपर यह बृहत्कस्तूरी भैरव निर्भयतापूर्वक दिया जाता है। यह रस वातप्रधान सन्निपातमें श्रेष्ठ माना गया है। उतना ही नहीं, पित्तज, वातपित्तज और वातकफजपर भी अच्छा लाभ पहुचाता है। इस रससे हृदय और मस्तिष्कको बल मिलता है। *तथा आम पचन होकर ज्वरभी निवृत्त हो जाता है।*

यह बृहत्कस्तूरी भैरवरस बालक, युवा, वृद्ध, सूतिका आदिको निर्भय रूपसे सब प्रकारके ज्वरोंमें दिया जाता है। यदि सगर्भाका ज्वर अति बढ़ गया हो और हृदय शिथिल हो गया हो तो निरुपायवश जीवनके सरक्षणार्थ इसका उपयोग करना चाहिये। मात्रा होसके उतनी कम देनी चाहिये।

मधुरा आदिमुद्दती ज्वर—जब बुखार दिनोंतक रह जाता है, तब रोगविष धातुओंमें लीन होजाता है। इन ज्वरोंमें हृदय विकृति, निद्रानाश, प्रलाप और शारीरिनिर्बलता अधिक होनेपर अन्य औषधियों की अपेक्षा बृहत्कस्तुरी भैरवसे सत्वर लाभ पहुचता है।

विकृत ज्वर—कभी-कभी अपथ्य सेवन या औषध योजनामें भूल होने पर ज्वर दिनों तक नहीं छोड़ता, निर्बलता बढ़ती जाती है। रोगीका स्वभाव क्रोधी हो जाता है। बार-बार असमयपर ज्वर बढ़ता रहता है, शेष समय मद मद बना रहता है। यकृत-प्लीहा कीभी वृद्धि होजाती है। ऐसे बिगड़े हुए ज्वरोंमें हृदय और मस्तिष्कके रक्षणकी आवश्यकता होनेपर बृहत्कस्तुरी भैरवको प्रधानता दी जाती है।

मानस विकार—कोमल प्रकृतिके पुरुष, स्त्री और बालकोंको जाग्रत या स्वप्नावस्थामें भय लग जानेपर मल-मूत्र त्याग होजाता है। फिर पचन क्रिया और हृदय क्रिया दूषित होजाती है। भयका सस्कार कभी-कभी ऐसा दृढ होजाता है कि थोड़े थोड़े समयपर बार-बार स्मरण होजाता है और फिर मल मूत्र का त्याग हो जाता है। इसे अभिचारज विकार माना है। किसीको ज्वर रहता है। किसीको नहीं किसीको रक्तवमन और रक्तातिसार की सप्राप्ति होजाती है। इन सब विकारों का मूल मानस आघात है। अत इसपर बृहत्कस्तुरी भैरवका सेवन करना आशीर्वाद के समान है। साथ-साथ भय निवारणार्थ मानस सस्कारभी प्रेरित कराना चाहिये।

उदर कृमि—उदरमें कृमि हो जानेपर पाण्डु और हलीमककी सप्राप्ति होती है। इन रोगोंमें पहले कृमिघ्न औषधियों द्वारा उदरशुद्धि कर लेनी चाहिये। फिर

पाण्डु, हलीमक और लक्षण रूपसे उपस्थित वातज आक्षेप, कण्डु, त्वचाकी शुष्कता, निस्तेजता, अग्निमान्द्य आदि विकारोंको दूर करने केलिये बृहत् कस्तूरी भैरवका सेवन कराया जाता है।

उन्माद—कभी-कभी भय आदि आघातसे ज्वर या अतिसार नहीं होता। वातसंस्थानपर आघात पहुंच जानेसे उन्माद उपस्थित होजाता है। उसे भूत प्रकोपज आक्षेप कहा है। यह कुछ समय शान्त रहता है, फिर मनपर परिणाम होकर क्रोध पूर्वक साहस कार्य करना, दौड़ना, भागना, कूदना, मारना आदि होता है। इसपर बृहत् कस्तूरी भैरव या अन्य कस्तूरीप्रधान वात कुलान्तक आदि औषधि दीजाती है।

पूय ज्वर—अन्तर्विद्रधि, क्षत, वृक्काश्मरी आदि होनेपर पूयोत्पत्ति होती है। फिर यह पूय रक्तमें जाता रहता है। रक्तमें अधिक परिमाण होनेपर शीतज्वर आजाता है। यह ज्वर प्रायः दिनमें २-२ बार आजाता है। फिर स्वेद आकर चला जाता है। स्वेद आनेपर प्रसन्नता या स्फूर्ति नहीं आती, विपरीत निर्बलता बढ़ती है। मूत्रमें पूय निकलता है। ज्वर १०२° लगभग होजाता है। उस ज्वरके दमन और हृदयको बल देने केलिये बृहत् कस्तूरी भैरव दिया जाता है। साथ-साथ मुख्य विकारको दूर करने वाली चिकित्साभी करनी चाहिये।

इस रसमें प्रधान औषधि कस्तूरी है। वह आक्षेपनिवारक, उत्तेजक, मस्तिष्क शामक, वातहर निद्राप्रद, स्वेदजनन, मूत्रल और आमपाचन गुण दर्शाती है। इन गुणों के हेतुसे सन्निपातमें शक्तिपात होनेपर यह रस तत्काल अपना प्रभाव दर्शाता है।

दूसरी औषधि कर्पूर है। कर्पूर तत्काल पचनसंस्थानपर प्रभाव पहुंचाता है, आमपाचन, कीटाणुनाश और आमाशय संचलन क्रिया को बढ़ाना, ये ३ गुण दर्शाता है। एवं रक्तवाहिनियोंका प्रसारण, रक्ताभिसरण क्रिया, हृदय और श्वसन यन्त्रको उत्तेजना देना, मस्तिष्कको किंचित् उत्तेजित करके शान्त बनाना, शारीरिक उत्तापका ह्रास कराना और त्वचाको बलप्रदान करना आदि कार्यभी करता है।

ताम्रभस्म—यकृदुत्तेजक होनेसे अन्त्रमें अधिक पित्तस्राव कराकर अन्त्रस्थ विष, आम और कीटाणुओंको जलाती है तथा मलको बाहर फेंकनेमें और रक्तका प्रसादन करनेमें सहायक बनती है।

हरताल—ज्वरघ्न, कीटाणु विषनाशक, आमपाचन, कफघ्न और बल्य है। अभ्रक-भस्म मस्तिष्क, वातसंस्थान, हृदय और मांससंस्थान केलिये पोषक, उत्तेजक, कफघ्न, लीन विषनाशक और रसायन अर्थात् धातु परिपोषण क्रिया (Constructive Metabolism) सुधारक है।

सुवर्ण—मस्तिष्क, वात नाड़ीसंस्थान और हृदय केलिये बल्य, कीटाणुनाशक, आमविषघ्न और रसायन है। रौप्यभस्म—वातशामक, आमविषनाशक, मूत्रसंस्थान केलिये बल्य है। मुक्ता और प्रवाल—मस्तिष्क और हृदयके संरक्षक, उत्तापहर, निद्राप्रद,

रसशुद्धिकर, पित्तशामक और त्वचापोषक हैं। लोह भस्म—रक्ताभिसरण, क्रियावर्द्धक, रक्तप्रसादक, मूत्रशोधक, लीन विषनाशक और रसायन हैं। शेष द्रव्य सौम्य हैं और भिन्न-भिन्न लक्षणोंको दूर करनेमें सहायक हैं। उक्त सब द्रव्योंके संयोगसे यह रस सर्वज्वर विनाशक और त्रिदोषशामक बना है।

८. कल्पतरु रस।

विधि—शुद्ध पारद, शुद्ध गन्धक, शुद्ध बच्छनाग, शुद्ध मैनसिल, सुवर्ण माक्षिक भस्म और सोहागेका फूला ये ६ औषधियाँ १-१ तोला, सोंठ और पीपल २-२ तोले और कालीमिर्च १० तोले लेवे। पहले पारद-गन्धककी कज्जली करके बच्छनाग, मैनसिल, माक्षिक और सोहागा क्रमशः मिलावें फिर सोंठ, मिर्च, पीपलका कपड़छान चूर्ण मिला खरलकर बोतलमें भर लेवें। (र० यो० सा०)

मात्रा—१ से २ रत्ती अदरकका रस और शहदके साथ दिनमें २ बार देवें।

उपयोग—यह कल्पतरु रस वातश्लेष्मप्रधान ज्वर, श्वास, कास, मुखप्रसेक, शीत लगना, अग्निमान्द्य और अरुचि आदिको दूर करता है। कफवातज शिरदर्द होने पर इस रसका नस्य करानेपर तुरन्त लाभ होजाता है। घोर मोह, मद-मद प्रलाप और छींक आनेमें अवरोध हो,तो कल्पतरु रसका नस्य कराना चाहिये।

जब ज्वर पीड़ित रोगीकी छातीमें कफ भरा हो, श्वासप्रकोपभी हो और घबराहट होती हो, तब इस रसका सेवन करानेपर चमत्कारिक लाभ मिलता है। यदि रोगी बेहोश हो और दान्तभी दृढ़ बन्द होगये हों, तो यह रस नासापुटमें फूँक देनेपर तत्काल बेहोशी दूर होजाती है।

९. पर्पटीरस

विधि—शुद्ध पारद और शुद्धगन्धक १०-१० तोला लें। दोनोंकी कज्जलीकर अतीसके क्वाथमें खरल कर गोली बनावें। फिर सूर्यके तापमें सुखा मिट्टीकी नयी हाडीमें रख ऊपर ताम्रेकी कटोरी ढक सन्धियोंको उत्तम प्रकारसे बन्द करें। सन्धिस्थान सूखनेपर हाडीको चूल्हेपर चढ़ाकर अग्नि देवे। ताम्रपात्रपर शालिधान रक्खें। लगभग १ घण्टेमें धान फूटने लगनेपर अग्नि देना बन्द करें। फिर यन्त्र स्वाङ्ग शीतल होनेपर रसको निकालकर पीस लेवें। इस रसको पर्पटीरस और नवज्वरारि रस भी कहते हैं। कितनेक ग्रन्थकारोंने त्रैलोक्यसुन्दर और ज्वराङ्कुश सञ्ज्ञा भी दी है।

(र० र० स०)

मात्रा—पहले अदरकके रसमें जीरा और सेंधानमक मिलाकर जिह्वाको पोत लेवे। फिर अदरकके रसमें २ से ३ रत्ती पर्पटीरस मिलाकर सेवन करावें, और गरम कपड़ा अच्छीतरह उढ़ा देवें। जिससे प्रस्वेद आकर ज्वर उतर जाता है।

उपयोग—यह रस नूतन ज्वरोंपर, इनमें भी वातज्वरमें विशेष हितकारक है। ३ दिन तक इस रसका सेवन कराते रहनेसे फिरसे ज्वर आनेकी शङ्काभी नहीं रहती।

वर्षाके जलमें भीगने, शीत लगजाने, अपथ्य भोजनके सेवन या असमयपर भोजन करनेसे ज्वर आगया हो और सामान्य कब्ज़ हो, अधिक कब्ज़ न हो, तब इस रसके सेवनसे तत्काल लाभ पहुँच जाता है। अपचनके हेतुसे बार-बार थोड़ा-थोड़ा दस्त होता हो, वहभी दूर होजाता है।

यदि इस रसके सेवनके साथ अतीसका चूर्ण ६ रत्तीको ५ तोले गरम जलमें डाल ढक दें। फिर जल निवाया रहनेपर छानकर पिला देवें (कपड़ेपर अतीसका जो चूर्ण रहा हो, उसे दबाकर न निचोड़ें), तो प्रस्वेद बहुत जल्दी आकर ज्वर उतर जाता है। केवल अतीससे भी प्रस्वेद बहुत जल्दी आकर ज्वर उतर जाता है। किन्तु सेन्द्रिय विष और कीटाणुओंका नाश करना, हृदयबलकी वृद्धि करना, आमाशय और अन्त्रको सबल बनाना, ये सब कार्य पर्पटीरस और अतीसके संयोगसे अधिक होता है। अतीससह पर्पटीरसका सेवन करानेपर विषमज्वरभी दूर होजाता है।

सूचना:—ज्वर उतरजानेपर अन्नकी इच्छा न हो, तो नहीं देना चाहिये। क्षुधा लगी हो, तो मट्ठेके साथ भात देवें।

अधिक कब्ज़ हो, तो पहले आरग्वधादि क्वाथका सेवन कराना चाहिये या उस क्वाथके साथ पर्पटीरस देना चाहिये।

१०. ज्वरसंहार

विधि:—रससिंदूर अथवा हिंगूल १३ तोले, सोंठ, काली मिर्च, पीपल, कुटकी, नीमकी अन्तरछाल, कड़वाकूठ, नागरमोथा, सफेद सरसों, सेका हुआ इन्द्रजौ, सोहागेका फूला, रक्त चंदन, अतीस और ममीरी (या गुलजलील-त्रायमाणा) इन १४ औषधियोंका कपड़-छान चूर्ण २-२ तोले लें। सबको मिला अदरक, तुलसी, निर्गुण्डीके पान, इन तीनोंके स्वरसके साथ ३-३ दिन खरलकर २-२ रत्तीकी गोलियाँ बनावें।

(श्री पं० यादवजी त्रिकमजी आचार्य)

मात्रा:—२-२ रत्ती दिनमें २ बार जल या ज्वरघ्न कषायके साथ दें।

अनुपान:—श्लेष्मप्रधान ज्वर और प्रतिश्यायसह ज्वरमें गोजिह्वादि कषायके साथ। (यह कषाय आगे लिखा जायगा) न्युमोनिया या पार्श्वशूलसह ज्वर हो, तो यह रस, अभ्रक भस्म १ रत्ती और श्रृंगभस्म ४ रत्ती मिलाकर शहदके साथ देवें। फिर ऊपर गोजिह्वादि कषाय, नौसादर और यवक्षार १-१ रत्ती मिलाकर पिला दें। सामान्य नूतन ज्वरमें जलके साथ देवें।

उपयोग:—यह रस सब प्रकारके ज्वरोंमें—विशेषतः कफ और वातप्रधान ज्वरमें प्रयुक्त होता है। यह तरुण और जीर्ण, दोनों प्रकारके ज्वरोंमें लाभ पहुँचाता है। कफ, आम और विषको पकाता है, प्रस्वेद लाकर दोषको निकालता है, उदरको शुद्ध करता है; हृदयको बल देता है और शक्तिका संरक्षण करता है। शुष्ककास, नेत्रमें लाली या पित्तप्रकोप हो, तो इस रसका प्रयोग नहीं करना चाहिये।

११. संतापशामक मिश्रण

विधि—गोदंती भस्म ८ तोले, प्रवालपिष्टी ४ तोले, जहरमोहराखताई पिष्टी २ तोले, शुद्ध पारद और गन्धककी कज्जली २ तोले, जटामासी, छोटी इलायचीके दाने और खस, इनका कपड़-छान चूर्ण १-१ तोला तथा भीमसेनी कपूर ६ माशे ले। सबको मिलाकर अच्छीतरह खरलकर लेवें।

मात्रा—१-१ माशा शहदके साथ ३-३ घण्टेपर ३-४ बार देवें। ऊपर अमृताष्टक क्वाथ (गिलोय, नीमकी अन्तरछाल, कुटकी, नागरमोथा, इन्द्रजौ, सोंठ, पटोलपत्र और रक्तचन्दनका क्वाथ) पिलावे।

उपयोग—संतापशामक मिश्रण ज्वरवेग अधिक हो, तब व्यवहृत होता है। ज्वरमें दाह, तृषा, वमन, शिरदर्द, व्याकुलता आदि लक्षण उपस्थित होनेपर उन सबको यह शान्त करता है, और ज्वरवेगको भी कम करता है। पित्तप्रधान ज्वर, मोतीझरा और विषमज्वरमें जब शारीरिक उत्ताप १०२° डिग्रीसे अधिक होता है, तब इस मिश्रणका सेवन करानेसे मस्तिष्कका रक्षण होता है, संताप दूर होता है और ज्वरविष जलकर ज्वर कम होजाता है। अश्मरी क्षतसे उत्पन्न ज्वरके अतिरिक्त सब प्रकारके ज्वरोंपर व्यवहृत होता है।

१२. निर्वेदन चूर्ण

विधि—नौसादरके फूल, फिटकरीका फूला, सोहागेका फूला, गोदन्ती भस्म, शुद्ध स्वर्ण गैरिक, मीठे शोभाजनकी छाल और खुरासानी अजवायन १-१ तोला और जौ या गेहूँकी राख २ तोले लेवें। सबको मिला एक जीव करके तुरन्त बोतलमें भर लेवे। (श्री राजवैद्य पं० रामचन्द्रजी)

मात्रा—१-१ माशा निवाये जलके साथ देवें।

उपयोग—ज्वरारम्भमें या ज्वर न होनेपर भी उत्पन्न शिरदर्द और अन्य अंगों का दर्द इस निर्वेदन चूर्णसे तुरन्त कम होता है और स्वेद आकर ज्वर कम हो जाता है। फिर शान्त निद्रा आजाती है। यह औषधि आयुर्वेदिक सौम्य एस्पिरीन है। जिसतरह डॉक्टरी एस्पिरीन हृदयको निर्बल बनाती है, उस तरहकी हानि इससे नहीं पहुँचती। अत यह मिश्रण निर्भयतापूर्वक सबको आवश्यकता होनेपर दिया जाता है।

१३. ज्वरान्तक रसायन

विधि—सोमल १ तोला, कलीका चूना, सोहागेका फूला, सोरा और कच्ची लाल फिटकरी ४-४ तोले लें। सबको मिला नीबूके रसमें ३ घण्टे खरलकर पेड़ा बना कर सुखा लेवें। फिर सरावसंपुटकर ८ सेर गोबरीकी आँच देवें। स्वांगशीतल होने पर निकालकर भस्मके समान अतीसका चूर्ण, चौथाई नौसादर और चौथाई प्रवाल-पिष्टी मिला लेवें।

मात्राः—२ से ४ रत्ती दिनमें ३ बार शक्कर और निवाये जल, चाय या शहदके साथ।

उपयोगः—यह रसायन बढ़े हुए ज्वरमें देनेसे घबराहट दूर करता है तथा प्रस्वेद लाकर ज्वरको उतारता है। एवं अपचन, उदरपीड़ा, कफवृद्धि आदि को दूर करता है। ज्वर न हो, तब देनेसे ज्वरविष, आम आदिको जलाकर ज्वरको रोक देता है। शीतसह आने वाले ज्वरमें यह उपयोगी है।

१४, शीतारि रस

प्रथम विधिः—शुद्ध पारद, शुद्ध गन्धक, शुद्ध बच्छनाग, वराटिका भस्म काली मिर्च और स्वर्णगैरिक १।-१। तोला तथा क्विनाइन २॥ तोले लेवें। पहले पारद गन्धककी कज्जली करें। फिर शेष औषधियाँ मिला १२ घन्टे नींबूके रसमें खरलकर १-१ रत्तीकी गोलियाँ बनालेवें।

मात्राः—१ से २ गोली दिनमें २ या ३ बार दूध या जलके साथ।

उपयोगः—शीतारि रस सब प्रकारके विषम ज्वरोंको दूर करता है। इसका उपयोग बुखार न हो, उस समय करना चाहिये। पालीके बुखार आनेके पहले ३ और २ घण्टे पहले १-१ मात्रा दे देनेसे ज्वर रुक जाता है। ज्वर न हो, उन दिनोंमें दिनमें ३ बार सुबह, दोपहर और रात्रिको देना चाहिये।

वक्तव्यः—पालीके दिनोंमें ज्वरका समय न चला जाय तब तक भोजन नहीं देना चाहिये। आवश्यकता हो, तो दूध, चाय देवें।

नूतन ज्वरके समान जीर्ण ज्वर, प्लीहावृद्धि और अग्निमांद्यपर १-१ गोली दिनमें ३ बार देते रहनेसे लाभ होजाता है।

द्वितीय विधिः—शुद्ध पारद, शुद्ध गन्धक, सोहागेका फूला, तीनों १-१ तोला शुद्ध जमालगोटा २ तोले, सैंधानमक, कालीमिर्च, इमलीकी छालकी राख (क्षार) और शक्कर १-१ तोला लें। पारद गन्धककी कज्जलीकर, शेष औषधियोंका चूर्ण मिला, ३ दिन तक नींबूके रसमें खरलकर १-१ रत्तीकी गोलियाँ बना लेवें।

(र० यो० सा०)

मात्राः—१-१ रत्ती दिनमें २ बार निवाये जलके साथ देवें।

उपयोगः—यह शीतारि रस—शीतज्वर–वात, श्लेश्मप्रधान ज्वर, अपचन जनित ज्वर और आम ज्वरको दूर करता है।

१५. सिद्ध अश्वकञ्चुकी रस

विधिः—शुद्ध पारद, सोहागेका फूला, शुद्ध गन्धक, शुद्ध बच्छनाग, सोंठ, कालीमिर्च पीपल, हरड़, बहेड़ा, आँवला, चित्रकमूल, भुनीहींग, शुद्ध हिंगुल, रेवत चीनी, नागरमोथा, शुद्ध हरताल, बच, शुद्ध सोमल, शुद्ध जमालगोटा और गोखरू, इन २० औषधियाँ

को सममाग मिलाकर भांगरेके रसमें ७ दिन खरल करके आध आध रत्तीकी गोलियाँ बना लें। (श्री० डा० रामरूपालजी)

मात्रा —१ से २ गोली दिनमें २ समय दे।

उपयोग —इस रसमें उत्तेजक, कीटाणुनाशक, अन्त्रशोधक, दीपन, पाचक, ज्वरहर और कफघ्न गुण अवस्थित हैं। इसमें सोमल और हरताल, दो उग्र द्रव्य मिलाये हैं। इस हेतुसे इसका उपयोग अति सम्हालपूर्वक करना चाहिये। यह वातप्रधान और कफप्रधान रोगोंपर तत्काल प्रभाव दर्शाता है। वातज, कफज, आमज द्वन्द्वज और त्रिदोषज रोगोंमें रोगानुसार अनुपानके साथ यह प्रयोजित होता है। किन्तु पित्तप्रधान रोगोंपर उपयोगी नहीं होसकेगा। पित्तप्रधान प्रकृतिवालोंको या पित्तप्रधान काल (शरद् ऋतु) में इसका प्रयोग नहीं करना चाहिये या अति सम्हालपूर्वक कम मात्रामें करना चाहिये। प्लेगकी गिल्टी, सर्पविष, विच्छूका विष, चूहेका विष आदि पर बाहर लगानेमें भी यह उपयोगी है। ऐसे रोगियोंको आवश्यकतापर खिलायाभी जाता है।

अनुपान भेदसे यह रस विविध व्याधियोंमें प्रयोजित होता है। यह प्रयोग २५ वर्ष पहले आबुस्थानपर किसी महात्मा द्वारा डॉक्टर साहबको मिला था। महात्माजी और डॉक्टर साहब इस रसको बार-बार प्रयोजित करते रहते हैं। महात्माजीने प्रयोग देनेके समय निम्न अनुपानोंमें उपयोग करनेको लिखवाया था।

(१) शीतज्वर—अदरकका रस।
(२) वातज्वर—भांगरेका रस।
(३) जीर्णज्वर—सम्हालूकी राख या शहदपीपल।
(४) अजीर्णज्वर—त्रिफला क्वाथ या घृत।
(५) वातपित्तज्वर—जीरा, शक्कर या आँवलेका चूर्ण और शक्कर।
(६) विषमज्वर—तुलसी या द्रोणपुष्पीका स्वरस अथवा नीमके पत्ते।
(७) आमाजीर्ण—नागरवेलका पान या मस्तु (दहीके जलके साथ)।
(८) आम संग्रहणी—मट्ठा, चित्रकमूलका क्वाथ, भुनी हींग या अनारदानेका रस।
(९) आमातिसार—मट्ठा या हरड़का फाण्ट।
(१०) तीक्ष्ण आमवात—एरण्ड तैल।
(११) अजीर्णजन्य अतिसार—अजवायन।
(१२) उदरवात—घी।
(१३) आम प्रकोपजनित कटिपीड़ा—अजवायन और बचका चूर्ण।
(१४) सर्पदंश—जिस जगह साँप काटा हो, उस स्थानपर प्याज़के रसमें घिसकर लगादें और सुहिंजनेकी छालके रस अथवा सिरसके रसके साथ सेवन करावें
(१५) कफयुक्त कासश्वास—अदरकका रस।

(१६) बिच्छूका दंश—प्याज़के रसके साथ विसकर लगावें ।

(१७) जलोदर—ब्रह्मदण्डीका रस ।

(१८) अग्निमान्द्य—कलौंजी, कालाज़ीरा अथवा चित्रकमूल या सोहागेका फूला ।

(१६) कटिवात—सिरसके फूलोंके रस या सिरसकी छालके क्वाथके साथ ।

(२०) वातजशूल—शहद-पीपल या खसखसका क्वाथ ।

(२१) अस्थिवात—बच, देवदारू और कूठका चूर्ण ।

(२२) नाडीव्रण (नासूर) पर—बिल्लीकी हड्डीके साथ गोली पीसकर लगावें । या पुराने गुड़ और मकड़ीके साफ जालेमें मिला बत्ती बनाकर नासूरमें डालें ।

(२३) देहदुर्गन्ध—सफेद चन्दनके साथ घिसकर लगावें, और नेत्रवालाके क्वाथके साथ खिलावें ।

(२४) उदरमें रक्त जम जाना—सुहिंजनेके गोंद ६ माशेके साथ ।

(२५) कर्णमलजनित पीड़ा—शहद या खजूरके रसके साथ मिलाकर कानमें डालें ।

(२६) दंतदर्द—नीलगिरीके तैलके साथ लगावें ।

(२७) कफज उन्माद—धतूरेके १ पत्ते के रसके साथ ।

(२८) पीनस—काली मिर्चके साथ ।

(२६) आध्मान—सोंठ और शहद ।

(३०) प्लीहोदर—गोमूत्र या निगुंण्डीका रस ।

(३१) व्रणशोथ और गांठ—सम्हालू (निगुंण्डी) की जड़ या पत्ते के रसके साथ विसकर लेप करें ।

(३२) शिरदर्द—सन्तरेका रस ।

(३३) उदरशूल—१ माशा लौंगके फाण्ट या सुहिंजनेके रस या घीके साथ अथवा तुलसी और अनारदानोंके रस या गुड़के साथ ।

(३४) अरुचि—नींबूके रसके साथ या इलायची, मिर्च और लौंगके साथ ।

(३५) मुखदुर्गन्ध—द्राक्षाके साथ या चौथाई रत्ती कपूर और इलायचीके साथ ।

(३६) वातज शिरदर्द—असगंधके चूर्णके साथ खिलावें और लेप करें ।

(३७) शिरपरकी खुजली—गोमूत्रमें मिलाकर लेप करें ।

(३८) कण्ठमाला—पुनर्नवाके मूलके क्वाथके साथ ।

(३६) वमन बंद करने केलिये—शर्बत नींबू या शर्बत सन्तराके साथ ।

(४०) अर्श—बथुएके रस या जायफलके वासेके साथ । अथवा हींग और पीपलके चूर्णके साथ ।

(४१) ग्रहबाधा (भूत बाधा)—त्रिफला चूर्ण और घृतके साथ ।

(४२) वातप्रकोप—भंगरेका रस ।

(४३) त्वचारोग, खुजली, दाह—गंधक ।

(४४) प्रसूताका सन्निपात—जीयापोता या तुलसीका रस और शहद।

(४५) वातज गुल्म—निर्गुण्डीके पत्तोंका रस।

(४६) कफजगुल्म—शहद या काला नमक।

(४७) पाण्डु—त्रिफला और पीपलका चूर्ण या पुनर्नवाका रस।

(४८) कफ वृद्धि—नागरवेलके पान या अदरकका रस अथवा शहद पीपल।

(४९) श्वेतकुष्ठ, चित्री—निम्बकी लकड़ीके साथ घिसकर लेप करें, और खदिरछालके क्वाथके साथ खिलावें।

(५०) अपस्मार—४ रत्ती वचके चूर्ण और शहदके साथ दें और काली मिर्चके चूर्णके साथ सुघावें।

(५१) प्लेगकी गाँठ—सत्यानाशीके रसके साथ सेवन करें, और उसी रसमें घिसकर लेप करें।

(५२) कर्णपाक—पुरुषके मूत्रके साथ, वा हींगके साथ, या धतूराके पत्तेके रसके साथ मिलाकर कानमें डालेंऔर जायफलके चूर्णके साथ खिलावें।

(५३) दाह और मुखपाक—६ माशे त्रिफलाके साथ खिलावें।

(५४) अश्मरी—गोखरू और पाषाणभेदका या अकरकरे का चूर्ण।

(५५) मूत्रावरोध—छोटी कूठी १ माशा या दूधकी लस्सी या पेठेके रसके साथ।

(५६) आमाशयदाह—घी या मक्खन अथवा दहीका घोल।

(५७) वातरक्त, कुष्ठ, रक्तविकार, पामा, व्युची—पुंवाड़ बीज या खदिर छालके क्वाथके साथ खिलावें और गोमूत्रमें घिसकर लेप करें।

(५८) सन्निपातमें शीत और प्रस्वेद बन्द करने केलिये—बच्छनाग या भुनी कुलथीके आटेके साथ मालिश करें।

(५९) आम, और मेद वृद्धि—अकरकरा और शहद।

(६०) धनुर्वात—२ रत्ती सोहागेका फूला या गोकर्णाके क्वाथके साथ।

(६१) उदरमें तीव्र शूल—सैंधानमक।

(६२) भगदर—नींबूके रसके साथ लगावें।

(६३) सम्पूर्ण वातरोग—निर्गुण्डीके पत्तेका रस।

(६४) रतौंधी—केलेके रसके साथ खिलावें और स्त्रीके दूध या तुलसीके रसमें घिसकर अञ्जन करें।

(६५) रक्तपित्त—१ माशे सोनागेरूके साथ खिलावें।

(६६) कटिरोग—इमलीके पत्ते या तेजपातके साथ।

(६७) पामा—आँवला या त्रिफलाका चूर्ण।

(६८) खुजली—भांगरेके रसके साथ सेवन करें, और सरसोंके तेलके साथ मालिश करें।

(६९) आँखमें फूला—पुनर्नवाकी जड़के साथ घिसकर अञ्जन करें अथवा सफेद चिरमीके मूलके साथ जलमें घिसकर आँजे।

(७०) कर्णशूल—सोंठके साथ स्त्रीदुग्धमें घिसकर कानोंमें डालें।
(७१) ऊर्ध्ववायु—जीरा।
(७२) अर्धांगवात और गृध्रसी—घृत।
(७३) गलितकुष्ठ—४१ दिन तक मूसलीके रसके साथ।
(७४) आमवृद्धि—काला नमक या अमलतासकी फलीके गूदाके साथ विरेचन रूपसे देवें।
(७५) श्वानविष—चूनेके पानी या पाठाके क्वाथके साथ देवें और जलमें घिसकर लेप करें।

(७६) मंदाग्नि, जीर्ण-कफ-कास—त्रिकटु शहद।
(७७) मूर्च्छा—घी कुंवारके गंदलके साथ दें और गूगल, अगर और बंबूलकी कोंपलके साथ कपालपर लेप करें।
(७८) बद्धकोष्ठमें विरेचन—एरंड तैल या कालीद्राक्षाके क्वाथ या अदरकके रसके साथ।
(७९) कृमि—पलास बीज या बायबिडङ्गके साथ।
(८०) शिरदर्द, पीनस और आधाशीशी—जायफलका चूर्ण।
(८१) स्मृतिवृद्धि केलिये—शंखाहुलीका स्वरस।
(८२) अंतर्विद्रधि—सुहिंजनेकी छालका क्वाथ।
(८३) सर्वरोगनाशार्थ—४० दिन तक मिश्रीके साथ।
(८४) इन्द्रलुप्त—सफेद चिरमीके साथ मिलाकर मट्ठेसें खरलकर शिरपर लेप करें।
(८५) मकड़ीका विष—भांगरेके रसके साथ खिलावें और लेप करें।
(८६) पागल कुत्तेका विष—कुचिलेके चूर्णके साथ सेवन करावें।

इनके अतिरिक्त दोष-दूष्यका विवेक करके इतर रोगोंपर नूतन अनुपानोंकी योजनाकर लेनी चाहिये। हमें इस रसको प्रयोगमें लानेका अवकाश नहीं मिला। यह रस अधिक प्रवास करनेवालों केलिये उपयोगी है। तथा जहाँ अधिक साधन नहीं मिलता, वहाँपर एक औषधिसे विविध कार्य होसकते हैं। प्रवास करनेवालों केलिये विशेष उपयोगी समझकर इस ग्रन्थमें इसे स्थान दिया है।

१६. विषमज्वरान्तक लोह

विधिः—समान पारद, गन्धककी रसपर्पटी, लोह भस्म, ताम्रभस्म और अभ्रक भस्म ८-८ तोले, सोहागेका फूला, सोनागेरू, वंगभस्म और प्रवालभस्म २-२ तोले, सुवर्ण भस्म, मोती पिष्टी, शंखभस्म और शुक्तिभस्म १-१ तोला लें। सबको मिला निर्गुंण्डीके पान, धतूरेके पान और कालमेघके स्वरसमें १-१ दिन खरलकर दो मोतीकी सीपोंके भीतर लेप करके सुखा देवें। फिर उन सीपोंका संपुट बनाकर कपड़मिट्टी लगावें। मिट्टीका लेप १ इञ्च मोटा करें। उसपर राख लगा देवें जिससे लेपके जलका कुछ शोषण होजाय। फिर निर्धूम कंडोंकी आँचमें रखकर बाटी न पकावें। मिट्टी लाल

होने या गन्धकके जलनेकी वास आनेपर सपुटको निकाल स्वांगशीतल होने दें। फिर सपुट खोल सीपमेंसे औषधिको निकालकर खरलकर लेवें।

श्री० प० यादवजी त्रिकमजी आचार्य.

मात्रा —१ से २ रत्ती भुने ज़ीरेका चूर्ण ३ माशा और ४ माशे शहदके साथ या २ तोले ताज़ी गिलोयके क्वाथके साथ दिनमें २ या ३ बार। आमाजीर्णसह ज्वरमें हींग, पीपल और सैंधानमकके साथ।

उपयोग —यह लोह-वात, पित्त और कफ, तीनों दोषोंकी विकृतिसे उत्पन्न आठों प्रकारके ज्वरोंको दूर करती है। एवं यह प्लीहावृद्धि, यकृद्वृद्धि, गुल्म, साध्य और असाध्य सतत, सतत आदि सब विषमज्वर, कामला, पाण्डुरोग, शोथ, प्रमेह, अरुचि, ग्रहणी, आमवृद्धि, कास, श्वास, मूत्रकृच्छ्र और अतिसारका भी नाश करती है, अग्नि प्रदीप्त करती है। तथा बल और वर्णकी वृद्धि करती है।

यह लोह यकृत्-बलवर्द्धक, कीटाणुनाशक, आमपाचक, ज्वरघ्न तथा मस्तिष्क, हृदय और रक्त के लिये पौष्टिक है। इस विषमज्वरान्तक लोहका मूल-पाठ 'भैषज्यर-त्नावलीका' है। इसमें आचार्यजीने ज्वरघ्न गुणकी वृद्धयर्थ निर्गुण्डी, धतूरा और काल-मेघके रसकी भावना देनेका विधान किया है। इस लोहका उपयोग बारबार बढ़नेवाले जीर्णज्वर और बार-बार उलट उलटकर आनेवाले विषमज्वर और राजयक्ष्माके ज्वरपर बहुत अच्छा होता है।

राजयक्ष्माका प्रारम्भ बहुधा गुप्तरूपसे होता है। रोगी भ्रमवश मान लेता है, कि मामूली बुखार है। यह ज्वर दिनों तक मन्द-मन्द बना रहता है। थोड़ी-थोड़ी खासीमी चलती है। थोड़े दिनोंमें यह कास शुष्क और त्रासदायक बन जाती है। फिर परीक्षा करानेपर विदित होता है कि राजयक्ष्माका आरम्भ होगया है। इस प्राथमिक स्थितिमें यह लोह गिलोयके क्वाथ और शहदके साथ दिया जाता है। यदि कफोत्पत्ति हो गई हो, तो गिलोय, कटेलीकी जड़, एरण्डमूल और अदरकके क्वाथके साथ (शहद मिलाकर) दिया जाता है।

जीर्ण ज्वर, जिसमें यकृत्प्लीहा वृद्धि होगई हो, जो ज्वर महीनोंसे नहीं छोड़ता, मन्द-मन्द बना रहता है, और बार-बार थोड़े दिनपर बढ़ जाता है। जिसमें प्लीहा नाभि तक पहुँच गई हो, यकृत्पर भी शोथ आगया हो, शरीर अतिकृश और निस्तेज होगया हो, अग्नि अति-मन्द हो, कब्ज़ बना रहता हो, कार्य करनेका उत्साह न रहा हो, ऐसी स्थितिमें पथ्य-पालनसह भुना ज़ीरा शहदके साथ इस रसका सेवन करानेसे धीरे-धीरे प्लीहावृद्धिका ह्रास होता जाता है बल वृद्धि होती है और ज्वर दूर होजाता है। आम अधिक गिरता हो और अपचनजनित पतले दस्त बार-बार लगते हों, तो वे भी दूर होकर शरीर नीरोगी बन जाता है। अन्नरसद्वारा अन्त्रके भीतर राजयक्ष्माके कीटाणुओंका प्रवेश हो जानेपर अन्त्रक्षयकी सम्प्राप्ति होती है। फिर व्याकुलता, प्रारम्भमें

कोष्ठवद्धता (फिर अतिसार), अग्निमान्द्य, अरुचि, शिरमें भारीपन, अतिसार हो जानेपर उदरमें मरोड़ा आना, उदरपर दबानेपर पीड़ा होना, अफारा, मंद-मंद ज्वर बना रहा और पाण्डुता आदि लक्षण उपस्थित होते है। इसपर विषमज्वरान्तक लोह लवंग चतुःसम और शहदके साथ देते रहनेपर ज्वर, अतिसार आदि सब लक्षणोंसह अन्त्रक्षय निवृत्त होजाता है। रोगीको बकरीके दूध और फलोंपर रख देना चाहिये।

अग्न्याशय (Pancreas) की अपक्रान्ति होनेपर रसक्षय (फक्क रोग) की प्राप्ति होती है। इस विकारमें यकृद्वृद्धि, अग्निमान्द्य, उदरस्फीति, निस्तेजता, पाण्डुता, मलमें साबुन सदृश वसाका स्राव होना आदि लक्षण उपस्थित होते हैं। इस विकारपर कम मात्रामें २-४ मासतक बालकको गोमूत्रके साथ और बड़े मनुष्यको भुना ज़ीरा, सोंठ और सैंधानमकके साथ विषमज्वरान्तक लोह मिलाकर मट्ठेके साथ दिया जाता है।

मुद्दतीज्वर और प्रबल विषमज्वरकी निवृत्ति होनेपर या जीर्णज्वर दीर्घकाल रहनेपर पाण्डुरोगकी प्राप्ति होती है। निस्तेज मुखमण्डल, अग्निमान्द्य, अरुचि, उदरमें भारीपन और अफारा, मलके साथ आम जाना, निद्रावृद्धि, उत्साहका अभाव, कफकास, थोड़ा चलने आदिसे श्वास भर जाना, थोड़ा परिश्रम होनेपर रात्रिको मामूली ज्वर आजाना आदि लक्षण प्रतीत होते हों, तो विषमज्वरान्तक लोह आशीर्वादके समान उपकारक होता है।

कामला रोगकी सम्प्राप्ति रक्तमें यकृत्पित्त मिल जानेपर होती है। इस पित्तका रक्तमें जानेके अनेक कारण हैं। पित्तवाहिनीका प्रदाह, पित्तवाहिनीमें पित्ताश्मरी आ जाना, एवं पित्ताशयनलिकापर अन्य यन्त्रका दबाव और कृमि आदि अनेक कारण हैं। इनमें अधिकतर हेतुप्रदाह होता है। उस प्रदाहज कामला बहुधा मंद वेगवाला होता है। इस विकारमें मूत्रमें पीलापन और मलमें सफेद रंग आजाता है। नेत्र और ओष्ठकी झिल्लीमें पीलापन, दाह, उदरमें गुड़गुड़ाहट, अपचन, अरुचि, हाथपैर टूटना, कण्डू, तथा नाड़ी और श्वसनक्रियामें शिथिलता आदि लक्षण उपस्थित होते हैं। इस विकारमें यदि ज्वर न हो, तो विषमज्वरान्तक लोह नींबू, संतरा या मोसम्मीके रसके साथ देवें। रसमें ४ से ८ रत्ती अपामार्ग क्षार मिलावें भोजनमें मट्ठा और भात देवें। यदि ज्वर हो, तो विषमज्वरान्तक लोह शहद मिले हुए गिलोयके स्वरस या क्वाथके साथ देवें।

अपचनके हेतुसे जब आमाशय या अन्त्र में प्रदाह होता है, तब बार-बार वायु उत्पन्न होती है। इस रोगको वात-गुल्म संज्ञा दी है। यह गुल्म कभी बड़ा और कभी छोटा होजाता है। कभी प्रतीत भी नहीं होता, क्वचित् वेदना अधिक होती है, कभी कम होती है। मुखशोष, विषमाग्नि, शिरदर्द, हृदयमें पीड़ा आदि लक्षण उपस्थित होते हैं। इस विकारपर हिंगु, पिप्पली और सैंधानमकके साथ विषमज्वरान्तक लोह देना चाहिये।

उग्र औषध सेवन, दाहक विष, अधिक घृतसेवन अथवा अपचनके हेतुसे उत्पन्न मूत्रदाह, मूत्रावरोध अथवा पित्तप्रमेहपर विषमज्वरान्तक लोह गिलोयके क्वाथके साथ दी जाती है।

कफ पित्तप्रकोप सह कफ, कास और हृदय विकृति-जन्य श्वास रोगपर यह रस लाभ पहुँचाता है। अनुपान—शहद-पीपल। यदि कफ सरलतासे न निकलता हो, तो वासास्वरस और शहदसे देवें। इसे दिनमें दो बार देते रहनेसे सरलतामें कफशुद्धि होकर और कफोत्पत्ति बन्द होकर कास और श्वास दूर होजाते हैं।

पुराना मोतीझरा तथा सततज्वर, एकाहिकज्वर या चातुर्थिक आदि विषमज्वर, जो दिनोंसे आता रहता हो, क्विनाइन लेनेपर भी न गया हो, विपरीत संताप होता हो, वैसे ज्वरोंपर ज़ीरा-शहदके साथ इस रसका प्रयोग करनेपर ज्वर शमन होजाता है। एवं रुधिरमें रक्ताणु कम होजानेसे जो ज्वर न छूटता हो, वहभी इसके द्वारा समूलनष्ट होते देखा गया है।

१७. हिङ्गुकर्पूर वटी

विधि —उत्तम कची शुद्ध हींग और उत्तम कपूर ८-८ तोले तथा कस्तूरी १ तोला लें। पहले हींग और कपूरको मिलावें (हींगकपूर मयोगसे गोली बाधने योग्य गीलापन आजाता है) फिर कस्तूरी मिलाकर १-१ रत्तीकी गोलियाँ बना लेवें। कदाचित् गोलियाँ न बन सकें तो १०-२० बूंद शहद मिलाकर गोलियाँ बना लें। और उनको ६४ प्रहरी पीपलके चूर्णपर डालते जायँ। फिर तुरन्त शीशीमें भर लेवें। सूखने तक यदि प्लेटपर खुली रखी जायगी, तो वज़न बहुत कम होजायगा।

(स्व० डा० वामन गणेश देसाई)

मात्रा —१-१ गोली जल या २-४ तोले दूध अथवा, अदरकके रस और शहदके साथदें। रोगी न निगल सके, तो गोलीको अदरकके रस और शहदमें घिस जिह्वापर लगादेवें।

उपयोग —ज्वरमें सन्निपातके लक्षण बुद्धि भ्रम, मन्द-मन्द प्रलाप, वस्त्र फेंकना, हाथ पैरोंमें कम्प होना, शय्यापरसे बारम्बार उठना, योषापस्मार (हिस्टीरिया) आदि उपस्थित होनेपर यह वटी दीजाती है। आवश्यकतापर ३-३ घण्टेपर देते रहें।

श्वसनक ज्वर (न्युमोनिया) में इसके प्रयोगसे कीटाणु नष्ट होते हैं, कफकी दुर्गन्ध दूर होती है, तथा कफ पतला और शिथिल होकर सरलतासे बाहर निकलने लगता है। विसूचिकामें जबकि रोगी बहुत निर्बल होगया हो, नाड़ी मंद गति हो, हाथ पैर ऐंठते हों, उस दशामें भी यह चमत्कारी गुण दर्शाती है।

यह वटी प्रस्वेद लाती है और शारीरिक उत्तापका ह्रास करती है। श्वासकेन्द्र पर उत्तेजना पहुँचाकर श्वास क्रियाको सबल, गम्भीर और नियमित बनाती है। इस श्वासरोगमें भी लाभ पहुँचाती है।

हृदय रोगमें हृदयकम्प, हृदयमें वेदना, घबराहट, चक्कर आना आदि लक्षण प्रतीत हों, तो इस वटीका सेवन करानेसे लाभ पहुँचता है।

शीत ज्वरमें इस वटीका सेवन करानेसे शीत, कम्प आदि सरलतासे दूर होजाते हैं।

सूचनाः—उदर रोगोंमें हींग मिलानी हो, वहाँपर घीमें भुनी हुई और उत्तेजनार्थ या फुफ्फुसविकारपर हींग देनी हो वहाँपर कच्ची हींग विशेष लाभ पहुँचाती है। अतः इस वटीमें कच्ची हींग मिलाना विशेष हितकर माना जायगा।

१८. कालाग्नि भैरवरस

विधिः—शुद्ध पारद १ तोला, शुद्ध गन्धक २ तोले, ताम्र भस्म ३ तोले, शुद्ध बच्छनाग ४॥ माशे, शुद्ध हिंगुल १ तोला, धतूरेके शुद्ध बीज २ तोले, गोदन्ती भस्म और मैनसिल ५-५ तोले, सोहागेका फूल २ तोले, जसद भस्म ६ तोले, शुद्ध जमालगोटा १ तोला, काले सांपका ज़हर ३ तोले, सुवर्णमाक्षिक भस्म ३ तोले, लोह भस्म १ तोला और वंग भस्म १ तोला लें। पहले पारद-गन्धककी कज्जली करें १२ घण्टे गोखरूके क्काथमें खरलकर फिर सुखाकर बारीक चूर्ण बनावें। इसके साथ सर्प विष और बच्छनाग क्रमशः मिलाकर एकजीव करें। पश्चात् भस्म, हिंगुल, मैनसिल, जमालगोटा, सोहागा, धतूरा क्रमशः मिला खरलकर एक जीव करें। इसे आकके दूध, दशमूल क्काथ और लघु पञ्चमूलके क्काथमें १२-१२ घण्टे खरलकर चौथाई-चौथाई रत्तीकी गोलियाँ बना लेवें। (र० यो० सा०)

मात्राः—१ से २ गोली दिनमें ३ बार २-३ घण्टेपर अर्कादि क्काथ या देवदार्वादि क्काथके साथ देवें।

उपयोगः—यह कालाग्निभैरव दारुण सन्निपातको दूर करनेमें कालरूप है। पथ्य-शालीचावलका भात और दही।

कालाग्निभैरवमें प्रधान औषधि समविष है, वह तत्काल अपना प्रभाव दर्शाता है। जब कफप्रकोपके लक्षण—ज्वर १००° से १०२° तक रहना, मन्द और भारी नाड़ी, शीतलवायु या जलसे दुःख होना, मस्तिष्कमें भारीपन, श्वास लेनेमें कष्ट, छाती में कफाधिकता और शरीर बलका ह्रास प्रतीत हो, तब यह रस चमत्कारिक लाभ पहुँचाता है। यदि उदरमें दूषित मल हो, तो एरण्ड तैल या ग्लिसरीनकी बस्ति देकर निकाल लेना चाहिये।

वातप्रधान सन्निपात होनेपर ज्वरवेग न्यूनाधिक होना, निद्रानाश, कम्प, हाथ-पैरोंमें शून्यता आजाना, उदरमें शूल चलना, ज्वर १०२° से अधिक होनेपर प्रलाप होना और वेगका दमन होनेपर प्रलाप बन्द होजाना, आदि लक्षण उपस्थित होते हैं। इस प्रकारमें बहुधा आन्त्रोंमें शुष्क मल संगृहीत होजाता है। उसे दूरकर फिर कालाग्नि भैरवकी योजना करनेपर यश मिलजाता है। अनुपान अर्कादि क्काथ।

वातकफ प्रधान या कफवात प्रधान सन्निपात होनेपर बहुधा इन्फ्लुएन्ज़ामें कहे हुए लक्षण-ज़ुकाम, मांस पेशियोंमें वेदना, ज्वर १०३° से अधिक होजाना, पचन संस्थानकी अव्यवस्था, शिरदर्द, निद्रानाश, वातसंस्थानपर अधिकार न रहना, कम्प, आक्षेप और प्रलाप आदिमें से न्यूनाधिक उपस्थित होते हैं। इस रोगपर कालाग्नि भैरव रस गुडूच्यादि क्वाथके साथ व्यवहृत होता है। गिलोय, तुलसीपत्र, बिल्वपत्र, लौंग, कालीमिर्च, पीपल और सोंठ, इन ७ औषधियोंमें से आवश्यकतानुसार न्यूनाधिक मात्रा मिलाकर क्वाथ करना चाहिये।

सन्निपातका योग्य उपचार न होने या पथ्य व्यवस्थाका योग्यपालन न होनेपर दिनों तक दूर नहीं होता। रोगविष धातुओंमें लीन होजाता है। शरीर अतिकृश, निर्बल और पाण्डु वर्णका होजाता है। अन्त्र अपना कार्य यथोचित नहीं कर सकता। तन्द्रा बनी रहती है। ज्वर १००° तक या १०१° तक रहता है। इस अवस्थामें इस रसकी योग्य योजनाकी जाय, तो यह रोगीको जीवन दान देता है।

मूषक विषसे उत्पन्न ज्वर (Rat-bite fever) में स्थान-स्थानपर नीलामरक्त धब्बे होते हैं। मांस पेशियोंमें असह्य पीड़ा होती है। एवं वातशूलभी उपस्थित होता है। इस ज्वरकी तीव्रावस्था और तीव्र वेदनाको दबाने केलिये रक्तशोधक क्वाथके साथ दिनमें ३ बार यह रस दिया जाता है।

ग्रन्थिक ज्वर (Plague) अति मारक रोग है। तुरन्त योग्य उपचार नहीं होसके, तो रोगीका जीवन भयमें आजाता है। इस रोगमें ज्वर १०३° से १०७° तक बढ़ जाता है। इस रोगकी प्रथमावस्थामें ही यदि कालाग्नि भैरवका उपयोग किया जाय, तो लाभ होजाता है।

फुफ्फुसप्रदाहज सन्निपात (न्युमोनिया) होनेपर एक फुफ्फुसके कुछ खण्ड या दोनों फुफ्फुस पीड़ित होते हैं। दोनों फुफ्फुस पीड़ित होनेपर डबल न्युमोनिया कहलाता है। यह रोग बढ़नेपर फुफ्फुस दूषित कफपूर्ण होजाता है। उसे जलमें डाले तो डूब जाता है। वायुकोष और प्रणालियाँ रुक जानेसे श्वसन क्रियामें अति कष्ट होता है। ज्वर १०२° से १०४° तक बढ़ता घटता रहता है। जब तक कफ श्वासकृच्छ्रता मर्यादामें हो और कफ पूयमय न बना हो, तब तक यह रोग सरलतासे काबूमें आसकता है। पूयोत्पत्ति होजानेपर प्रबल माना जाता है। इस प्रबलावस्थामें भी बाह्य उपचारकी उचित व्यवस्थासह कालाग्नि भैरवका प्रयोग करनेपर प्राय सफलता मिल जाती है।

सूचना —(१) रोगबल, रोगीबल, ऋतु, उपद्रव आदिका विचार करके इसकी कम मात्रामें योजना करनी चाहिये। मात्रा अधिक रोगी या पित्तप्रकोपमें दिया जायगा, तो हानि पहुँचनेकी भीति रहती है।

(२) इस रसमें जमालगोटा मिलाया है, उसकी मात्रा बहुत कम है। वह मलशुद्धिमें कुछ सहायता करा सकेगा; किन्तु प्रारम्भमें बस्ति देकर उदरशुद्धि करा लेनी चाहिये।

(३) जिनको पहले पेचिशका रोग होगया हो, उनको उदरमें थोड़ा-सा कष्ट प्रतीत हो, तो तुरन्त भुना ज़ीरा, बेलगिरी आदिका चूर्ण औषधिके साथ मिला देना चाहिये।

१६. न्युमोनिया प्रकाश

विधिः—शुद्ध बच्छनाग १ तोला, शुद्ध गन्धक २ तोले, शुद्धमल्ल ६ माशे, ताम्रभस्म ६ माशे, अभ्रक भस्म ६ माशे, अकरकरा, जावित्री, जायफल और लौंग १–१ तोला, मकरध्वज ६ माशे, शुद्ध कुचिला ३ तोले और पीपल ३ तोले लें। सबको यथाविधि बंगला पानके रसकी ७ भावना देकर १–१ रत्तीकी गोलियाँ बना लेवें। (श्री वैद्य देवकरणजी बाजपेयी)

मात्राः—१–१ गोली अदरकके रस और शहदसे दिनमें २ या ३ बार।

उपयोगः—यह रस श्वसनक ज्वर (न्युमोनिया) की सब स्थितिमें प्रयुक्त होता है। हताश रोगियोंको भी इसके प्रयोगसे जीवनदान मिला है। यह कभी असफल नहीं हुआ। अनेक चिकित्सकों द्वारा परीक्षाकी गई है।

२०. केशरादिवटी (ज्वर)

विधिः—केशर, जायफल, जावित्री, लौंग और पिपला मूल १–१ तोला, कस्तूरी, रसमाणिक्य और अभ्रक भस्म ३–३ माशे लें। सबको मिला नागरबेलके पान और अदरकके रसमें १–१ दिन खरल करके आध-आध रत्तीकी गोलियाँ बनावें।

(अनुभूत योगमाला)

मात्राः—१ से २ गोली २–२ घण्टेपर २ या ३ बार।

उपयोगः—यह केशरादिवटी प्रलापक सन्निपातमें सत्वर फलप्रद है। रोगी उठ उठकर भागता हो, कपड़े फाड़ता हो, ज़ोर–ज़ोरसे चिल्लाता हो, तब यह जादूका असर करती है। जिसतरह यह हिंगुकर्पूर वटी प्रलापपर लाभ पहुँचाती है, उसी तरह यह भी तुरन्त फल दर्शाती है।

२१. अर्क लोकेश्वररस

विधिः—पारदसे मारित ताम्र-भस्म और सोमलको समभाग मिला घीकुंवारके रसमें खरल करें। फिर लघु पुटमें फूँके। पुनः सोमल मिलाकर फूँके। इस तरह ३ पुट देवें। इस प्रकार तैयारकी हुई ताम्रभस्म २ तोले, रससिन्दूर २ तोले, अभ्रक भस्म १ तोला, सुवर्ण भस्म १ तोला, लोहभस्म ६ माशे, कस्तूरी और अम्बर १-१ तोला और केसर २ तोले लेवें। सबको मिला नागरबेलके पान और अदरकके रसमें १-१ दिन खरल करके १-१ रत्तीकी गोलियाँ बना लेवें। (धन्वन्तरि सिद्धचिकित्सांक)

पीवें। अति क्षुधा लगे तब दूध या चाय देवें। शक्कर और गुड़का सेवन कम-से कम कराना चाहिये।

वर्षा ऋतुमें या शीतकालमें शीतल वायु लग जाने और ग्रीष्म ऋतुमें सूर्यके तापमें घूमनेसे प्रतिश्याय होजाता है, तथा मद ज्वर आ जाता है। उसपर यह रस नागरवेलके पानके रसमें देनेसे लाभ पहुँचाता है।

यदि इस रसको देकर फिर ऊपरसे कालीमिर्च मिलाकर उबाला हुआ निवाया दूध पिला दिया जाय और रोगीको कपड़ा ओढाकर बैठा दिया या सुला दिया जाय, तो प्रस्वेद आकर मब विष निकल जाता है, और प्रतिश्यायकी निवृत्ति होजाती है।

अपचनजनित विसूचिकामें यह रस प्याज़ और नीबूके रसमें देनेसे तुरन्त अपना गुण दर्शाता है। जब तक रोग शमन होकर अच्छी क्षुधा न लगे, तब तक कुछ भी भोजन नहीं देना चाहिये।

२३. अर्धनारीनटेश्वर रस

विधि —काला सुरमा, पीतल, कासी, सीसा, ताम्र, जसद, खपरिया, शीतल मिर्च समुद्रफाग, मोतीपिष्टी, सुवर्ण, रौप्य और लोह, इन १३ औषधियोंको १-१ तोला तथा पीपल, सफेद मिर्च और छोटी इलायचीके बीज ६-६ माशे लें। सुवर्ण, रौप्य, सीसा और जसदका वर्क बनवा लेवें। ताम्र, पीतल और कासीको बारीक रेतीसे घिसवाकर कपड़-छान चूर्ण करा लेवें। मोतीकी पिष्टी लें। शेष औषधियोंको कूटकर कपड़-छान चूर्ण करें। आठ प्रकारकी धातुओंके चूर्ण या भस्मोंको मिला सफेद पुनर्नवा (वसु पंजाबमें इटसिट) के रसके साथ लोह खरलमें १४ दिन तक खरल करें। चमक-रहित सूक्ष्म चूर्ण बन जानेपर मोती पिष्टी, सुरमा, खपरिया, समुद्रफाग और काष्ठादि औषधियाँ मिलाकर २१ दिन तक सफेद पुनर्नवाके रसमें पत्थरकी खरलमें मर्दनकर सूखा अञ्जन बनाकर बोतलमें भर लेवें। (र० यो० सा०)

उपयोग —इस रसका उपयोग अञ्जन करने केलिये होता है। मुद्दती (मियादी) ज्वरको छोड़ शेष ज्वरोंमें उदरशुद्धि करा एक नेत्रमें करेलेके रस, बकरीके दूध, सफेद पुनर्नवाके रस या जलके साथ अथवा सूखा अञ्जन कर दें, और गरम कपड़े ओढ़ा देवें, जिससे थोड़ेही समयमें प्रस्वेद आकर ज्वर दूर होजाता है। कदाचित् आम दोषसे पुनः ज्वर आ जाय, तो फिर दूसरे नेत्रमें अञ्जनकर देनेसे ज्वरकी निःशेष निवृत्ति होजाती है। यह रस रसयोग सागरकारका बहुतही बारका अनुभूत है। इसका प्रयोग शङ्कारहित होकर करें।

सूचना —इसके अञ्जन करनेपर भी ज्वर न उतरे, तो समझना चाहिये कि यह मुद्दती है, अथवा अभिचार आदि बलवत् कारणसे उपस्थित हुआ है।

२४ बृहत् सुवर्णमालिनी वसन्त

विधिः—सुवर्णभस्म ३ तोले; प्रवालपिष्टी ३ तोले शुद्धहिंगुल, (रससिंदूर) ५ तोले, सफेद मिर्चका कपड़-छान चूर्ण ८ तोले, कस्तूरी और गोरोचन १-१ तोला, नाग भस्म २ तोले, वंग भस्म और अभ्रक भस्म ३-३ तोले, केशर १ तोला, मोती पिष्टी ४ तोले, पीपलका कपड़-छान चूर्ण १ तोला और खर्पर ११ तोले लेवें। इनमेंसे केशर कस्तूरीको पृथक्कर शेष ४४ तोले चूर्णको मिला खरल करके एकजीव बना लेवें। फिर गोदुग्धमें से निकाला हुआ मक्खन ३ तोले मिलाकर २ दिन खरल करें। फिर ७ दिन नींबूके रसमें खरल करनेसे चिकनाई दूर होती है। फिर केशर कस्तूरी मिला नींबूके रसमें ३ घण्टे खरलकर १-१ रत्तीकी गोलियाँ बना लेवें। (र० यो० सा०)

वक्तव्यः—(१) यदि सुवर्ण भस्मके स्थानपर सुवर्णका वर्क लेवें, तो हिंगुल (रससिन्दूर) के साथ १ दिन अच्छी तरह खरल करके एकजीव कर लेवें। फिर अन्य औषधियाँ मिलावें। (२) कितनेक चिकित्सक खर्परके स्थानपर (जसद) भस्म और कोई केलेमेना पेप्रेटाका उपयोग करते हैं। दोनोंसे ही इस वसन्तका लाभ मिला है। इन दोनोंमें से अधिक लाभ किससे होता है, यह निर्णय विद्वानोंके परीक्षणपर अवलम्बित है। (३) कितनेक चिकित्सक ४२ दिनतक खरल करनेका कहते हैं; किन्तु ऐसा करनेपर नींबू क्षारकी अनावश्यक वृद्धि होती है और गुणमें कमी होती है।

मात्राः—आधसे एक रत्ती दिनमें २ बार जीर्णज्वरमें पिप्पली शहदके साथ तथा शुक्रक्षयपर दूध, मलाई, मक्खन-मिश्री या असगन्धके चूर्ण के साथ। जीर्ण रोगमें अधिक दिनों तक सेवन कराना हो, तो मात्रा बहुत कम दी जाती है।

उपयोगः—यह बृहत्मालिनीवसन्त जीर्णज्वर, रक्तप्रमेह, मूत्रेन्द्रियके भीतर वेदना, पाण्डु, कामला, सब प्रकारके शूल, श्वास, कास, मूत्रकृच्छ्र, अश्मरी, क्षय, अतिसार, ग्रहणी, अर्श शुक्रक्षय, घोर व्याधायुक्त पित्तप्रकोप, बालग्रह, सगर्भाके रोग, योनिशूल, प्रदर, अतिसार, सूतिकारोग और सोम रोग आदि को नष्ट करता है।

गुणधर्मः—यह वसंत उत्तम रसायन, कुछ उष्ण, उत्तेजक, बल्य, बाजीकर, हृद्य, मस्तिष्कपोषक, कीटाणुनाशक, रक्तप्रसादन और क्षयहर है। सुवर्णमालिनी वसंतकी अपेक्षा इस वसन्तमें हृद्य और मस्तिष्कपोषक गुण अधिकतर रहा है।

विशेष क्रियास्थानः—इस वसन्तकी क्रिया पचनसंस्थान, प्लीहा, रक्त, वातनाड़ी, हृदय, फुफ्फुस, मस्तिष्क और मूत्रयन्त्र, इन सबमें प्रकाशित होती है। इनमें पचनसंस्थानको विशेष लाभ पहुँचानेके हेतुसे रस, रक्त आदि सब धातुओंकी उत्पत्ति शुद्ध और सबल होती है। परिणाममें जीवनीय शक्ति (Vitality) और रोगनिरोधक शक्ति (Immunity) सबल बन जाती है। और नूतन रोगोत्पत्तिका ही प्रतिबन्ध होजाता है। ४० वर्षकी आयुके पश्चात् जब देहकी जीवनीय शक्तिके ह्रास होनेका आरम्भ हो, तब दीर्घायुकी इच्छा वालोंको चाहिये, कि रसायन औषधिका-

सेवन करके जीवनीय शक्तिको बलवत्तर बना लेवें। ऐसी रसायन औषधियोंके भीतर इस बृहत् सुवर्णमालिनी वसन्तको श्रेष्ठ माना गया है।

वक्तव्य —यदि आमाशयका रस उग्र बन गया हो, भोजनकर लेनेपर भारीपन आ जाता हो, छातीमें दाह होजाता हो और मुखपाक बारम्बार होजाता हो। ऐसी पचनविकृति और पित्तप्रकोपके रोगोंको यह वसन्त कम अनुकूल रहता है। ऐसा अनुभव करनेपर विदित हुआ है।

अधिकारी —इस औषधिका उपयोग करनेपर विदित हुआ है, कि बालक, वृद्ध, सगर्भा और प्रसूता, सबको यह उचित लाभ पहुचाती है। इसका प्रयोग सब ऋतुओंमें निर्भयतापूर्वक होसकता है। किसीभी प्रकृतिवालोंको हानि नहीं पहुचाती। फिरभी वात और कफ प्रकृतिवालोंको अधिक अनुकूल और पित्त प्रकृतिवालोंको कम अनुकूल रहती हैं। पित्त प्रकृतिवालोंको देनी हो, तब प्रवालपिष्टी, सुवर्णमाक्षिक भस्म और अमृता सत्व मिलाकर देनेसे परिणाम अच्छा आता है।

जीर्णज्वर —रसायन सग्रहकारने इस वसन्तको ज्वराधिकारमें लिया है और गुणवर्णनके आरम्भमें "जीर्णज्वरे देयमिद प्रशस्तम्" लिखते हैं, अर्थात् इस वसन्तका सुफल जीर्णज्वरमें विशेषतर प्रतीत होता है। जब जीर्णज्वर दीर्घकालतक रह जाता है, तब प्लीहावृद्धि, शुष्ककास, अग्निमान्द्य, अरुचि, नेत्रदाह, मलावरोध और शारीरिक निर्बलता आदि लक्षण अथवा राजयक्ष्माकी प्रथमावस्थाके लक्षण प्राय प्रतीत होते हैं। प्राय सायकालको शारीरिक उत्ताप कुछ बढ़ जाता है और हाथ पैरोंकी नसोंमें खिचाव होता है, उस अवस्थामे इस वसन्तका उपयोग करनेपर भविष्यमें क्षय होनेकी भीति निवृत्त होती है और थोड़ेही दिनोंमें शरीर स्वस्थ और सबल बन जाता है। इस अवस्थामें मुलहठी, प्रवालपिष्टी, अमृतासत्व, सितोपलादि और घी-शहद मिलाकर देना विशेष लाभदायक होता है। यदि शुष्क कास न हो, तो शहद पीपलके साथ मिलाकर दिया जाता है। इस जीर्ण ज्वरपर सुवर्णमालिनीभी व्यवहृत होती है, किन्तु यह अधिक लाभ पहुचाती है।

मुद्दती और विषमज्वर —मुद्दतीज्वर या विषमज्वर दिनोंतक रह जाता है, तब मस्तिष्क, हृदय और शारीरिक निर्बलता तथा पाण्डुता आजाती है। ऐसी अवस्थामें ज्वर यदि ९९° से अधिक रहता हो, तो यह वसन्त मुख्य औषधि रूपसे व्यवहृत नहीं होता, किन्तु आवश्यकतापर मस्तिष्क और हृदयके सरक्षणार्थ सहायक औषधि रूपसे प्रयुक्त होता है।

रक्तमेह —रक्तमेहकी उत्पत्ति अति मिर्चे, राई, गुड़ या अन्य उग्र दाहक पदार्थका सेवन, सोमलका अधिक सेवन, शराब या तमाखूका अति व्यसन, सूर्यके ताप या अग्निका अति सेवन, कृमि प्रकोप या सर्पदंश आदि कारणोंसे पित्तप्रकोप होनेसे होती है। पित्तप्रकोपसे उत्पन्न मेहको शास्त्रकारोंने याप्य अर्थात् अति परिश्रमसे दूर होने वाली

कहा है। इस प्रकारके रक्तमेहमें मूत्र आमगन्धयुक्त, उष्ण, नमकीन और रक्तवर्ण होता है। मूत्रत्यागके समय प्रायः दाह भी होता है। इस मेहपर इस वसन्तका सेवन पथ्य पालनसह कराया जाय, तो थोड़ेही दिनोंमें लाभ होजाता है। अनुपानरूपसे उसीरासव या खस, लोध, अर्जुनछाल और रक्तचन्दनका क्वाथ विशेष सहायक होता है।

यदि सर्पदंश, सोमल, तमाखू या अन्य दाहक विषके सेवनसे रक्तमेह होनेसे स्त्री या पुरुषके मूत्रमार्गमें क्षत होगया हो, तथा दाह होता हो, या मूत्रमार्गमें वातप्रकोप होकर शूल चलता हो, तो वह बृहद् मालिनी वसंत दुर्वाद्य घृत अथवा सारिवासव और उसीरासवके साथ देने और दुर्वाद्य घृतकी पिचकारी लगाते रहनेसे लाभ होजाता है।

पाण्डु, विषमज्वर या अन्य मुद्दतीज्वरका आक्रमण होजाने, जीर्ण अपचन, रक्तप्रदर, श्वेतप्रदर, सोम या प्रतिकूल जलवायुमें रहनेके कारण पाण्डुता आजाती है। शरीर काला पीला होजाता है। मुख निस्तेज मेंढक सदृश वर्णका भासता है। हृदयका स्पन्दन बढ़ जाता है। नाड़ी निर्बल और तेज़ होजाती है। शारीरिक निर्बलता अग्निमांद्य और उत्साह क्षय आदि लक्षण उपस्थित होते हैं। ऐसी अवस्थामें विषका निवारण और रसको शुद्ध बनाकर रक्तकी वृद्धि कराना ये दोनों कार्य लोहप्रधान औषधिकी अपेक्षा इस वसंतके सेवनसे उत्तम प्रकारसे होता है। यदि रक्तस्राव और रक्ताणुओंकी कमीसे पाण्डुता आई हो, अन्य प्रकारका विष न हो, तो लोहप्रधान औषधिही विशेष हितावह होती है।

श्वास-कास—शारीरिक शक्ति निर्बल बननेपर ठण्डीका आघात सरलतासे लग जाता है। फिर छातीमें कफ संगृहीत होकर श्वास-कासकी प्राप्ति कराता है। इस रोगके मूल कारण पाचक अग्नि और पूर्व धातुओंसे परधातु निर्माण करनेवाली अग्नि, दोनोंकी निर्बलता है। इस रोगमें बृहद् वसंतका कम मात्रामें शहद पीपलके साथ २-३ मासतक सेवन करनेपर आम-कफ जल जाता है, रक्तका प्रसादन होता है। फिर दोनों प्रकारकी अग्नि प्रबल बनकर शरीर सबल होजाता है और श्वास-कास दूर होजाते हैं।

अतिसार-अर्श—अतिसार, ग्रहणी और अर्श रोगमें बृहद् वसंत मुख्यरूपसे प्रयुक्त नहीं होती, तथापि रोगनाशक मुख्य औषधिके साथ इसका सेवन कराते रहनेपर शारीरिक निर्बलता नहीं आती या निर्बलता आई हो, तो दूर होजाती है और रोगपर काबू करनेमें सहायता मिल जाती है।

शुक्रक्षयः—अति स्त्री समागम, हस्तमैथुन आदि अनुचित मार्गसे शुक्रका अधिक व्यय करनेपर शुक्रक्षयकी संप्राप्ति होती है। फिर निस्तेजता, बल, मांस-विहीनता, नेत्रदाह, उत्साहका अभाव, धड़कन, स्मरणशक्ति और विचार शक्तिका ह्रास, चक्कर आना, मानसिक भ्रम आदि लक्षण उपस्थित होते हैं। इस विकारपर मह वसंत थोड़ेही दिनोंमें चमत्कारिक लाभ पहुंचाता है। अनुपान असगंधका चूर्ण और शक्कर या अश्वगन्धारिष्ट।

धातुक्षय—बहुधा रस रक्त आदि धातु निर्बल बननेपर राजयक्ष्मा आदि विविध रोगोंकी सृष्टि होती है। यदि ये धातु बलवान बन जाय, तो नयी रोगोत्पत्ति रुक जाती है। एवं रोग प्रथमावस्थामें हो, तो केवल इस बसतके सेवनसे ही दूर होजाता है। यह बसत रससे शुक्र पर्यन्त सब धातुओंके भीतर रहे हुए विषको नष्ट करती है और सबको पुष्ट बनाती है। इस हेतुसे इस वसन्तका उपयोग अनेक रोगोंके आरम्भमें मुख्यरूपसे एवं रोग बढ़ गया हो, तो अन्य रोग शामक मुख्य औषधिके साथ सहायक रूपसे होता है।

बालकोंकी कृशता—सगर्भावस्थामें माता निर्बल होने, शैशवावस्थामें योग्य पोषण न मिलने और ज्वरादि रोगोंका आक्रमण होजाने आदि कारणोंसे बच्चे कृश और निर्बल होजाते हैं। उनको इस वसन्तका सेवन सरसों प्रमाणमें कराते रहनेसे थोड़ेही दिनोंमें बच्चेका विकास होने लगता है। फिर वह मोटा और सबल बन जाता है।

सगर्भाकी निर्बलता—सगर्भावस्थामें माताके रक्तमेंसे रक्त और अस्थिमेंसे मज्जाका शोषण गर्भके भीतर होता है। इसी हेतुसे माताके देहमें निर्बलता और पाण्डुता आजाती है। बलवान निरोगी स्त्रियोंको आघात कम होता है। किन्तु रुग्णा और नाजुक प्रकृतिकी स्त्रियोंको अधिक हानि पहुँचती है। ऐसी अवस्थामें माता और गर्भ, दोनोंके सरक्षण और सवर्धनार्थ बृहत सुवर्णमालिनी वसन्तको प्रवालपिष्टी और सितोपलादि चूर्णके साथ सुबह शाम २-४ मास या अधिक समय पर्यन्त देते रहनेसे माता और सन्तान, दोनोंको लाभ पहुचता है। माताको हृदयबल, मस्तिष्क बल और उत्साहकी प्राप्ति होती है। एवं सन्तानभी तेजस्वी होती है।

गलगण्ड (GOITRE)—यह रोग रससस्थानमें विकृति और बालग्रैवेयक ग्रन्थि (Thyroid Gland) की वृद्धि होनेपर होता है। इस रोगकी प्रथमावस्थामें इस वसन्तका सेवन कराया जाय, तो रससस्थान और बालग्रैवेयक ग्रन्थि सबल होजाती है। और इस रोगका दमन होजाता है। गण्डमाल (Scrofula) रोग जीर्ण बननेपर विष रक्तमें शोषित होता रहता है। फिर मन्द मन्द ज्वर बना रहता है और देह निर्बल और शुष्क होजाती है। यदि ज्वर अधिक न हो, तो इस वसन्तका सेवन कम मात्रामें शहद, पीपलके साथ कराते रहने और ऊपर रक्तशोधक अर्क पिलाते रहनेपर रोग काबूमें रहता है, और शारीरिक निर्बलता नहीं आती।

वृक्काश्मरी, मूत्रकृच्छ्र, बहुमूत्र—यकृत् पित्तकी रचना वि-त बन जानेपर यकृत् पित्तमेंसे अश्मरीकण बनने लगता है। फिर मूत्रमार्गमें प्रवेश करता है। जिससे बहुमूत्र (थोड़ा-थोड़ा मूत्र बारबार त्याग होगा), मूत्रकृच्छ्र या मूत्रमें घी तैलकी चिकनाइका लेश आना आदि विकारोंकी प्राप्ति होती है। इसपर घृत-तैल आदिका कम करा, तमाखूका व्यसन हो, तो छुड़ा तथा अन्य अपथ्य सेवन होता हो, तो

त्याग कराकर इस वसन्तका सेवन, मूत्रल, अनुपान या शीतलपर्पटीके साथ करानेपर लाभ होजाता है। यदि मूत्रकृच्छ्, सुजाक या जीर्ण कठोर अश्मरीके कारण हो, तो इस वसन्तका सेवन नहीं कराना चाहिये। एवं जीर्ण अश्मरी रोगमें निर्बलता बढ़ी हो, तो उसे दूर करनेकेलिये बहत् सुवर्ण मालिनीका सेवन गोखरूके क्वाथके साथ कराया जाता है।

कामलाः—मूल प्रयोगकारने बृहद् वसंत 'कामल सर्व शूलम्' वचनसे कामला और पित्ताशयके शूलरोगमें भी हितावह माना है। कामला रोगकी उत्पत्ति सामान्यतः पित्तनलिकामें प्रतिबन्ध होनेपर होती है। और वह क्षार द्रव्य या पित्तविरेचन और औषध प्रयोगसे दूर होजाता है। किन्तु जब यकृद्रचना और रक्तमें विकृति होजाती है, तब मंदवेगी कामला दृढ़ होजाता है; उसपर क्षार अथवा पित्त विरेचन द्रव्योंका उपयोग करनेपर इच्छित लाभ नहीं पहुँच सकता। उसपर यकृद्बलवर्द्धक और रक्तप्रसादन गुणयुक्त औषधिका दीर्घकाल पर्यन्त सेवन कराना पड़ता है ऐसे दृढ़ प्रकारपर मण्डूर और शिलाजीतके साथ इस वसन्तका सेवनकराना विशेष उपकारक माना गया है।

श्री० वैद्यराज नगीनदास जे० मेहताका अनुभव—वे इस औषधिका उपयोग सफलतापूर्वक अनेक वर्षोंसे कर रहे हैं। उन्हींकी प्रेरणासे इस संस्थानमें इस प्रयोगका परीक्षण हुआ है। वे निम्नानुसार अपना विशेष अनुभव लिखते हैं।

सगर्भाकी निर्बलता—सगर्भा स्त्रीको यदि कफप्रकोप या वातवृद्धिजन्य निर्बलता हो, तो बृहद्वसंत कम मात्रामें प्रवालपिष्टी, सुवर्णमाक्षिकभस्म और अमृताचूर्ण मिलाकर देनेपर लाभ पहुचता है। यदि गर्भस्राव या गर्भपातका भय रहता हो, पहले अनेक बार ऐसा हो गया हो, तो शर्बत बनफसाभी देते रहनेसे विपरीत परिणामकी भीति दूर होजाती है।

सूचनाः—(१)—गर्भस्राव और गर्भपात बार-बार होता हो, फिरंगविष या सुजाकविष रक्त आदि धातुमें लीन हो, पित्तप्रकोप या ग्रीष्म ऋतु हो, तो इस वसन्तका उपयोग नहीं करना चाहिये।

(२)—बृहत्त सुवर्णवसन्त जिनको अनुकूल नहीं रहती, उनको ४-६ दिनके भीतर नेत्रदाह और मूत्रदाह होजाता है। जिनको पेशाबमें जलन पहलेसे हो, उनको २-४ दिनमेंही जलन बढ़ जाती है।

जीर्णमलावरोध—जीर्ण मलावरोधके रोगी बहुधा निर्बल और निस्तेज होते हैं। उनको अग्निमान्द्य भी होता है और शुक्रधातु भी पतली और उष्ण रहती है। उनको बृहत्सुवर्णवसन्त अकेली देनेपर मलावरोध बढ़ाती है; किन्तु इसबगोलकी भूसी या द्राक्षा अथवा सारक औषधिके साथ देनेपर प्रायः अनुकूल आजाती है। इस वसंतमें आमाशयके बलकी वृद्धिकरा अग्निको प्रदीप्त करनेका विशेष गुण रहा है। इस हेतुसे इन रोगियोंकी क्षुधा बढ़ती है, आहारमें से सच्ची रसोत्पत्ति होकर बलवृद्धि

होती है और मलावरोधभी नहीं होता। यदि रोगी रोज़ सुबह (या रात्रिको) दूधमें घृत मिलाकर पीता रहे और उसका पचन सरलतासे होजाय, तो अन्त्र सबल बन जाती है और सदाके लिए यह रोग दूर होजाता है।

राजयक्ष्मा —बृहद्वसन्तका उपयोग राजयक्ष्माकी द्वितीय श्रेणी तक होता है और परिणामभी अति सतोषप्रद मिलता है। मैंने अनेक रोगियोंपर उपयोग किया है। द्वितीयावस्थाके प्रारम्भमें जबतक कफ सफेद हो और फुफ्फुसमें बड़े विवर न हुए हों और शारीरिक निर्बलता कुछ आई हो, तो शृंगभस्म और च्यवनप्राशके साथ मिलाकर देना चाहिये। यदि उरक्षत होकर रक्त आता हो, तो यह वसन्त स्फटिकमणि-भस्म, शृंगभस्म और वासावलेहके साथ दी जाती है।

वन्ध्यत्व—सन्तानोत्पत्ति न होनेमें स्त्रियोंके रज और पुरुषोंके वीर्य शुद्ध और सबल होने चाहिये। एव गर्भाशयभी नीरोगी, शुद्ध और बीजग्रहणक्षम होना चाहिये। इनमेंसे यदि वीर्य दुर्गन्धमय, उष्ण या पतला हो या वीर्यस्थ शुक्राणुओंकी निर्बलता हो, तो पुरुषको बृहद् वसन्तका सेवन २ ३ मास तक करानेपर सन्तानोत्पत्ति होनेके कितनेक उदाहरण मिले हैं। इसपरसे विदित हुआ है कि यह वसन्त शुक्रल है।

रससस्थान (Lymphate System) की विकृति होनेपर अनेक शारीरिक व्याधियाँ उपस्थित होती हैं। गलगण्ड और गण्टमालाभी रसविकृतिजन्य व्याधियाँ हैं। इनमें गलगण्ड (Goitre) और गण्डमाला (Scrofulla) पर यह वसत हितावह मानी जायगी। किन्तु इन दोनोंपर विशेष परीक्षणकी सुविधा नहीं मिली। इसलिये इन रोगोंकी किस अवस्थातक यह सफल होती है, यह नहीं कह सकता।

सक्षेपमें जिन जिन रोगोंमें अग्निमान्द्य, अशक्ति और स्फूर्तिका ह्रास प्रतीत हुआ है। उन-उनपर इस वसतका उपयोग मुख्य या सहायक औषधि रूपसे मैंने किया है। इस वसन्तके साथ च्यवनप्राशका अति सुन्दर योग होता है। ऐसा मैंने सैंकड़ों रोगियों पर प्रयोग करके निश्चित किया है। जिन रोगियोंके शारीरिक वज़नमें ह्रास हो गया हो, उनके वज़न और शक्ति यह बढ़ा देती है।

मेरे अनुभव अनुसार इस वसतके साथ दूध विशेष अनुकूल रहता है, किन्तु दही और मट्ठा उतना लाभदायक नहीं हुआ है। वसन्त सेवनकालमें सात्विक पथ्य भोजन और ब्रह्मचर्यका पालन आग्रहपूर्वक हो, तो निःसन्देह इच्छित लाभ मिल जाता है। वात और कफ प्रकृतिवाले रोगी थोड़ी मिर्चका सेवनकर सकता है। मैंने इस वसन्तका सेवन सब ऋतुओंमें किया है। बम्बईकी वायुमें ग्रीष्मकालमें भी उष्णता १००° से नहीं बढ़ती। इस ग्रीष्मऋतुमें भी वात और कफ प्रकृतिवालोंको भी बृहत् सुवर्णवसन्त दी है और वह अच्छा लाभ पहुँचाती है पित्तप्रकोपवालोंको यह अनुकूल नहीं रही।

२५. अपूर्व मालिनी वसन्त

विधि:—वैक्रान्त भस्म, अभ्रक भस्म, ताम्रभस्म, सुवर्णमाक्षिक भस्म, रौप्य भस्म, वङ्ग भस्म, प्रवाल भस्म, पारद भस्म (रससिंदूर) लोहभस्म, सोहागेका फूला और शंख भस्म, इन ११ औषधियोंको समभाग मिलाकर खरल करें। पश्चात् सतावर और हल्दीके रस या क्वाथकी ७-७ भावना और कस्तूरी तथा कपूरके जल की (६४ गुने जलमें मिलाकर तैयार किये हुये जलकी) १-१ भावना देकर १-१ रत्ती की गोलियाँ बना लेवें। इस रसको रसचण्डांशुकारने बृहन्मालिनी वसन्त नाम दिया है। (नि० र०)

मात्रा:—१ से २ गोली दिनमें २ बार देवें।

अनुपान:—जीर्णज्वरमें शहद-पीपल, [सब प्रकार के प्रमेहपर गिलोयसत्व और मिश्री, मूत्रकृच्छ्र और अश्मरी (पथरी) पर बिजौरेकी जड़का कल्क या रस या अदरकका रस। ऐसेही और रोगोंपर समयानुकूल अनुपानकी योजना करें।

उपयोग:—यह अपूर्वमालिनी वसन्त रक्त, मांस आदि धातुओं केलिये पौष्टिक है। जीर्ण ज्वर, धातुगतज्वर, धातुक्षीणता, वातवाहिनियोंकी निर्बलता, सब-प्रकारके प्रमेह, प्रदर, वातप्रकोप, उष्णता, पित्तवृद्धि, यकृत् और प्लीहाके दोष, मूत्रकृच्छ्र और अश्मरी आदि रोगोंको दूर करनेमें अति लाभदायक है। वात और कफ प्रकृतिके लिये हितकर हैं।

सुवर्णमालिनी और बृहन्मालिनी वसन्तसे इस अपूर्व वसन्तकी कृति और कार्यमें बृहदन्तर है। बृहन्मालिनी और सुवर्णमालिनी वसन्तमें सुवर्ण, मौक्तिक और खर्पर प्रधान द्रव्य हैं तथा नींबूके रसकी भावना दी है। इस वसन्तमें ये तीनों औषधियाँ नहीं हैं। एवं भावनाभी सतावर, हल्दी, कस्तूरी और कपूरकी दी है। द्रव्य व्यवस्था दृष्टिसे सुवर्ण मिश्रित दोनों वसन्तोंका कार्यक्षेत्र रस आदि सप्त धातुएँ होनेसे व्यापक हैं। किन्तु इसका कार्यक्षेत्र मर्यादित है।

उक्त दोनों वसन्तोंका प्रभाव रससंस्थान पर रक्त और पचन संस्थानपर प्रबल होता है। इस वसन्तका कार्य वातवाहिनियाँ और मांससंस्थानपर प्रधानरूपसे होता है। इस वसन्तमें उत्तेजक द्रव्योंकी प्रधानता है। हो सके तब तक बालक, वृद्ध और सगर्भाको यह वसन्त नहीं देना चाहिये। वृक्क कार्य योग्य न होता हो, तब यह लाभ नहीं पहुँचा सकेगी।

त्रिदोषजज्वर तीव्रतररूपसे आकर थोड़ेही समयमें विकृत होजाता है। फिर अनेक स्थानों में वातवाहिनियों को अति आघात पहुँच जाता है, वातप्रकोप होकर शुष्कता, कम्प, हाथ-पैर भड़कना, हड़फूटन, स्थान-स्थानपर मंद-मंद शूल चलना, नाड़ियाँ खिंचना, स्मरणशक्तिकी निर्बलता, मलावरोध और उदरवात आदि लक्षण उपस्थित होते हैं। रक्तमें रक्ताणुओंका अति ह्रास होनेसे मुखमण्डलपर [illegible]

प्रतीत होती है। मांसकी शिथिलता होजानेसे किञ्चित् श्रम होनेपर थकावट आजाना, श्वास भरजाना, गाल और होंठ आदिमें शुष्कता, मांसभक्षी जीवोंके मांस खानेकी इच्छा होना आदि लक्षण प्रकाशित होते हैं। इन रोगियोंका यकृत् बहुधा कार्य नहीं कर सकता। इनको सुवर्णप्रधान वसन्तकी अपेक्षा यह अपूर्व मालिनी वसन्त विशेष लाभ पहुँचाते हैं।

यदि निर्बल यकृत् वालेको भूलवश अधिक घृत आदि पौष्टिक पदार्थ दिया जायगा, तो बहुमूत्र की प्राप्ति होजाती है। फिर बार-बार थोड़ा-थोड़ा पेशाब होता रहता है। पेशाब पीला और कुछ गरम होता है। इन रोगियोंको यह वसंत गिलोयके स्वरस और शहदके साथ देनेपर लाभ पहुँच जाता है।

मांसकी शिथिलता होनेपर पचनसंस्थानके अवयव, आमाशय, अन्त्र, यकृत्, अग्न्याशय आदि (मांसमय होनेसे) अपना कार्य योग्य नहीं कर सकते हैं। यकृत् पित्तका और आग्नेय रसका स्राव कम परिमाणम होता है। यकृतमें आहार संशोधन कार्य भी योग्य नहीं होता। परिणाममें प्रमेहकी उत्पत्ति होजाती है। फिर मूत्रविकृति होकर विविध प्रकारके वर्णवाले पित्तज प्रमेह होजाते हैं। इन सबपर यह वसन्त लाभदायक है।

यकृत्का आहार संशोधन कार्य सुचारुरूप से न होनेसे अश्मरीकणोंकी उत्पत्ति होजाती है तथा मूत्रकृच्छ्र होजाता है। उसके मूल हेतुको यह वसन्त दूर करती है। एवं उत्पन्न कणोंको भी निर्जीरके मूलके संयोगसे दूर कर देती है।

औषध द्रव्यों के गुण धर्म

वैक्रान्त —क्षयहर, बल्य, जन्तुघ्न और रक्तप्रसादन।

अभ्रक भस्म —रसायन मांससंस्थान और वात संस्थान केलिये बल्य।

ताम्रभस्म —यकृद्बलवर्धक, अन्त्रशोधक, आमपाचक और अग्निदीपक।

सुवर्णमाक्षिक —रक्ताणुवर्धक, पित्तशामक और रक्तप्रसादक।

रौप्य भस्म —वातप्रकोपशामक, बृंहण और वृक्क दोषनाशक।

वङ्ग भस्म —शुक्रस्थानको पोषक, सेन्द्रियविषनाशक और प्रमेहघ्न।

प्रवाल भस्म —सेन्द्रियविषनाशक, ज्वरघ्न और पित्तशामक।

रससिन्दूर —रसायन, कीटाणुनाशक, विषघ्न और रक्तपौष्टिक।

लोह भस्म —रसायन, रक्ताणुवर्धक और प्रमेहहर।

सोहागा —दुर्गन्धनाशक, विषघ्न और वातटोपहर।

शंख भस्म —आमाशयपित्तशोधक, यकृद्बलवर्धक और वातहर।

शतावर —वातहर, वातपित्तजमेहहर और पित्तशामक।

हल्दी —रक्तशोधक, विषघ्न, प्रमेहहर, कृमिघ्न और वातशामक।

कस्तूरी —उत्तेजक, मस्तिष्कबलवर्धक और वातघ्न।

कपूरः—कीटाणुनाशक, पीड़ाशामक और प्रस्वेदकारक।

२६. सर्वज्वरहरीगुटिका

विधिः—शुद्ध हिंगुल, अभ्रकभस्म, सोहागेका फूला और प्रवाल भस्म १-१ तोला गिलोय सत्व, वंशलोचन, गुलबनफशा, गुलाबके फूल, बीज निकाली हुई मुनक्का, बीज निकाले हुए उन्नाब, छोटी इलायचीके दाने, गावजबांके फूल और शीरोखिस्त (Manna) ये ६ औषधियाँ ४-४ तोले लें। इन सबको मिला गुलाब जलके साथ १२ घण्टे खरलकर २-२ रत्तीकी गोलियाँ बना ले।

मात्राः—१ से ३ गोली तक दिनमें दो बार शर्बत बनफशा या जलके साथ देवें।

उपयोगः—इस वटीके सेवनसे सब प्रकारके नये और पुराने बुखार दूर होते हैं। इस वटीके सेवनमें चढ़े या उतरे हुये ज्वरका भी विचार करनेकी ज़रूरत नहीं है। यह बालक, युवा, वृद्ध, सगर्भा, प्रसूता, सबको निर्भयतापूर्वक दीजाती है। इस वटीको चढे हुये बुखारमें देनेसे उदरका शोधनकर बुखारको धीरे-धीरे कम कराती है, और बुखार आनेके पहले देनेसे बुखारको रोक देती है, आने नहीं देती। यह वटी कोष्ठबद्धता, पित्तवृद्धि, दाह, ज़ुकाम और खांसी आदिको भी दूर करती है।

वक्तव्यः—शीरोखिस्त, यह सुखाया हुआ मधुर रस है। यह यूरोपके वृक्ष-फ्रेक्सिनस ओर्नस (Fraxinus Ornus) का रस है। पंजाब, सरहद, नेपाल, अफगानिस्थान आदि में इस गतिके वृक्ष हैं। पंजाबमें उसे आंगु, हुम, सुम आदि नाम दिये हैं। यह सौम्य सारक द्रव्य है। विशेषतः बालक और कोमल स्वभावशाली स्त्रियोंको निवाये दूधके साथ उदरशुद्धि केलिये दिया जाता है।

२७. ज्वरघ्नी गुटिका

विधिः—शुद्ध जयपाल १ तोला, कुटकी २ तोले, सोनागेरु ३ तोले और सोंठ ६ माशे लें। सबको मिला शहदके साथ खरलकर १ रत्तीकी गोलियां बनाकर सोनागेरुमें डालते जायें। यह सोनागेरु दूसरी बार लेवें।

मात्राः—१ से २ गोली दिनमें १ बार जलके साथ देवें। उदरशुद्धि सम्यक प्रकारसे न हुई हो, तो दूसरी मात्रा देवें।

उपयोगः—ज्वरघ्नी गुटिका सबप्रकारके नूतन ज्वरोंको दूर करती है। अनेक रोगियोंको एकबार ही देनेसे आम, मल और विष आदि दूर होकर ज्वर शमन होजाता है। वातज, पित्तज, कफज, द्वन्द्वज और विषमज्वर आदि सबप्रकारके ज्वरोंपर यह निर्भय औषधि है। अपचन, सामान्य मलावरोध, उदरकृमि और आमवृद्धिको दूरकर उदर साफ करने केलिये भी यह वटी दीजाती है।

सूचनाः—जिनको पेचिश या संग्रहणी रोग होगया हो, उन रोगियोंको यह वटी नहीं देनी चाहिये।

२८. ज्वरहर योग

(१) प्रवाल भस्म १ भाग और सोहागेका फूला २ भाग मिला, सुदर्शन पत्तोंके रसकी ७ भावना देकर सुखा चूर्ण बना लेवें। इसमेंसे आधसे १ माशा चूर्ण सुदर्शनके पानके १ तोला रसके साथ देनेसे एण्टीफेबिन और एस्पिरिनके समान सत्वर प्रस्वेद आकर शारीरिक उत्ताप कम होजाता है।

सूचना — मात्रा अधिक होनेपर पसीना अधिक निकलता है और शीताङ्ग होजाता है। अतः रोगीकी शक्तिको देखकर आवश्यकतापर योग्य मात्रामें इस औषधिका प्रयोग करना चाहिये।

शारीरिक उत्ताप स्वभाविक होजानेपर १ रत्ती रससिंदूर शहदके साथ दे देनेसे शक्तिका संरक्षण होता है और शीताङ्गका भय निवृत्त होजाता है।

(२) सोरा, फिटकरीका फूला और अतीस ५-५ तोले तथा आकके मूलकी छाल २॥ तोला लें। सबको मिलाकर, खरल करें। इस मिश्रण मेंसे १–१॥ माशा मिश्री जल, चाय या शहदके साथ दो दो घण्टेपर ३-४ बार देनेसे बढ़ा हुआ ज्वर कम होजाता है। विविध प्रकारके विषमज्वर, तीव्र आमवातिक ज्वर, आमज्वर, कफ प्रधान ज्वर आदिमें विषको जलाकर प्रस्वेद और पेशाब द्वारा बाहर निकालने और ज्वरको शान्त करने केलिये यह प्रयोग अति उपयोगी है। छोटे बालकोंको भी यह चूर्ण दिया जाता है।

(३) सफेद फिटकरीको मिट्टीके बर्तनके भीतर १६ गुने जलमें भिगोकर १ दिन रहने दें। दूसरे दिन जलको छान लोहेकी कढ़ाहीमें डाल, पका, जलको सुखाकर बोतलमें भर लेवें। इसमेंसे ३ से ६ रत्ती गुड़के साथ मिलाकर देनेसे शीत लगकर आनेवाला विषमज्वर तत्काल रुक जाता है। बुखार आनेके ४-६ घण्टे पहले पहली मात्रा और दूसरी मात्रा २ घण्टे बाद देवें। एवं बुखार न आया हो, तो पुनः तीसरी बार दो, घण्टे बाद एक मात्रा दे देनेसे बुखार रुक जाता है। जिन दिनोंमें बुखार न हो, उन दिनोंमें दिनमें २ बार प्रातः सायं औषधि देनी चाहिये।

(४) सत्यानासीके बीज १॥ माशेको जलके साथ पीसकर ४ तोले जल मिलावें। फिर आधे नींबूका रस निचोड़कर ज्वर आनेके तीन–चार घण्टे पहले पिला देनेसे सतत, एकाहिक, तृतीयक और चातुर्थिक ज्वर रुक जाते हैं। कितनेक चिकित्सक नींबूके रसके बदले ३ रत्ती फिटकरीका फूला मिला लेते हैं। इससे भी ज्वरका शमन होजाता है।

सूचना — कभी-कभी इस प्रयोगसे किसी-किसीको एक वमन या एक दस्त हो जाता है, परन्तु इससे कोई हानि नहीं होती, भीतरका रहा हुआ दोष निकल जाता है।

(५) अतीस, सोरा, फिटकरीका फूला और कालीमिर्च, ये चारों १-१ तोला और हिंगुल ३ माशे मिला खरल करलें। चढ़े हुए बुखारमें इस चूर्णमेंसे २ से ४ रत्ती

निवाये जल या अदरक, पोदीना और दालचीनी मिली हुई चायके साथ देनेसे प्रस्वेद आकर थोड़ेही समयमें बुखार उतर जाता है।

जब ज्वर न हो, तब ज्वरको रोकने केलिये २-२ रत्ती औषधि ३-३ माशे शक्करके भीतर रखकर दिनमें २ बार जलके साथ १-२ दिन तक देते रहना चाहिये।

(६) अंकोलके मूलकी अंतरछालका चूर्ण २-४ रत्ती तक निवाये जल या चायके साथ देनेसे पसीना आकर ज्वर निवृत्त होजाता है। किसी-किसीको इससे वमन होकर विष निकल जाता है। रोगीको औषध देकर सुला देवें, और रजाई या कम्बल ओढ़ा देनेसे अत्यन्त प्रस्वेद आजाता है।

(७) हुलहुलका पान १ तोला और कालीमिर्च १॥ माशेको मिला, जलके साथ पीस, जलमिला, कपड़ छानकर पिलाने, सुँघाने और नेत्रमें अंजन करनेसे सब प्रकारके विषमज्वर, शीत लगाकर आनेवाले एकाहिक, तृतीयक और चातुर्थिक ज्वर दूर होजाते हैं।

२९. सप्तपर्णघनादि वटी

विधिः—सतौनेकी ताज़ी छालको कूट ८ गुने जलमें उबाल अर्धावशेष क्काथ करें। फिर नीचे उतार मसल छानकर कलईदार बर्तनमें पकाकर घन बनावें। कड़छीको लगने लगे तब उतारकर सूर्यके तापमें सुखालें। रबड़ी जैसा बननेपर ४० तोले लेवें। एवं कुटकी, चिरायता, कांटेदार करंजके भुने हुए बीजोंका चूर्ण १५-१५ तोले, कालमेघ १० तोले, शुद्धकुचिला और दालचीनीका चूर्ण २॥-२॥ तोले मिलाकर २-२ रत्तीकी गोलियाँ बना लेवें।

यदि सतौनेकी छाल सूखी हो, तो कूट चूर्णकर ४ गुने जलमें उबाल अर्धावशेष क्काथ करें। फिर मसलकर छानलें। पुनः ४ गुना जल मिला अर्धावशेष क्काथकर मसलकर छानलें। फिर दोनों जलको मिला उपर्युक्त विधिसे घन बनाकर उपयोगमें लेवें।

मात्रा—२ से ४ गोली दिनमें ३ बार जलके साथ देवें।

उपयोगः—यह गोलियाँ सतत, एकाहिक, चातुर्थिक आदि नये विषम ज्वर, अपचनजनित ज्वर तथा जीर्णज्वर इत्यादिको नष्ट करती है। मलावरोध, अग्निमान्द्य, उदरकृमि, अरुचि और निर्बलताको दूर करके शक्तिप्रदान करती है। ज्वर होनेपर या न होनेपर सब समयमें दीजाती है। बढ़े हुए ज्वरको उतारती है तथा नये आने वाले ज्वरको रोकती है। ज्वरजन्य यकृत् तथा प्लीहावृद्धिको भी यह मिटाती है। यह सामान्य औषधि होते हुए अच्छी लाभदायक सिद्ध हुई है।

३०. ज्वरभैरव चूर्ण

विधिः—गुलबनफशा, गावजबां, खूबकलां, सौंफ और अमृतासत्व, ये सब समभाग मिलाकर चूर्ण करें। फिर सबके समान मिश्रीका चूर्ण मिला लेवें।

(श्री० पं० रघुवरदयालजी)

मात्रा —२ से ३ माशे शहद या निवाये जलसे दिनमें ३ बार।

उपयोग —यह चूर्ण सौम्य, प्रदाहहर, स्वेदल और ज्वरघ्न है। ग्रीष्मकालमें सूर्यके तापमें फिरने आदिसे उत्पन्न प्रतिश्यायसह ज्वर और शुष्क काससह ज्वर, जो मन्द-मन्द रहता है, उसे दूर करने तथा बढ़े हुये ज्वरको कम करने केलिये यह चूर्ण व्यवहृत होता है। यह कण्ठप्रदाहको भी दूर करता है, जिससे नूतन प्रतिश्याय और शुष्क कासभी निवृत्त होजाती है।

३१. प्रतिश्यायहर कषाय

विधि —बनफशा, गुलबनफशा, अडूसा, मुलहठी, सपिस्तान (लिहसोड़े) और मुनक्का, १-१ तोला, कालीमिर्च ६ माशे लें। सबका जौकूट चूर्ण करें। इसकी ६ मात्रा बनावें। (श्री राज वैद्य प० रामचन्द्रजी)

उपयोग —१ मात्रासे एक तोला शक्कर मिलाकर २० तोले जलमें कलईदार बर्तन अथवा मिट्टीके बर्तनमें औटावें। चतुर्थांश शेष रहनेपर उतार छानकर पी लेवें। इसी प्रकार शाम और सुबह १ १ मात्रा लेवें। रोगकी अवस्था अनुसार कम-से कम ३ दिन अधिकसे अधिक ७ दिन सेवन करनेसे नवीन ज़ुखाम एव तज्जन्य ज्वर, खांसी, श्वास, इन्फ्लुएन्जा आदि रोग नष्ट होते हैं। रोगीको कब्ज़ हो और गलेमें दर्द हो, तो ३ माशे हरड़ और ३ माशे मकोय भी मिला देना चाहिये। बिगड़े हुए प्रतिश्यायजन्य दीर्घकालीन कास और श्वास हो, तो इसके साथ २ २ माशे रेशा खतमी, खब्बाज़ीको या आबरेशम साफ (कतरे) किये हुए परिवर्धित करें। जल ३० तोले लें और शक्कर दुगुनी मिलाकर चतुर्थांश क्वाथ करें। इसका प्रयोग करनेसे आश्चर्यजनक लाभ होता है। यह योग हमारे यहाँका परम्परागत अनुभूत और रामबाण है। कभी निष्फल नहीं जाता। यह प्रयोग राजस्थानके सुविख्यात प्राणाचार्य राजवैद्य प० रामदयालुजी शर्माका अनुभूत है।

३२. ग्रन्थिज्वरहर गुटिका

विधि —फिटकरीका फूला १० तोले, नौसादर पकाया हुआ, कालीमिर्च और सोनागेरु तीनों ५-५ तोले तथा गुड़ १० तोले ले। पहले गुड़को खरलमें घोटें। नरम होनेपर औषधियाका चूर्ण थोड़ा-थोड़ा मिलाकर मर्दन करते जाँय। सब चूर्ण मिला लेनेके पश्चात् गोलियाँ बाँधने योग्य बननेपर १ १ रत्तीकी गोलियाँ बना बनाकर सोनागेरुके चूर्णमें डालते जायँ। गोलियाँ डालने केलिये १०—२० तोले सोनागेरु अलग लेना चाहिये। सब गोलिया बन जानेपर गोलियोंको सोनागेरुके थालमें अच्छी तरह हिलावें। फिर बोतलमें भर लेवें। (आ० नि० मा०)

मात्रा —१ से २ गोली दो-दो या तीन तीन घण्टेके अन्तरपर जलके साथ देते रह। इस गोलीके उपयोगके साथ फिलिपाइनसे आनेवाले एक प्रकारके जहरी

कुचिले (Strychnos Ignatii) का चूर्ण २-२ रत्ती दिनमें ३ बार देना अधिक लाभदायक है। इस कुचिलेको गुजरातमें पपीता कहते हैं।

उपयोगः—इस वटीका सेवन करानेसे ग्रन्थिज्वर (प्लेग) सत्वर काबूमें आ जाता है। ४-६ मात्रा देनेपर ज्वर उतर जाता है । फिर दिनमें ४ बार ओषधि देते रहें। रोगीको खानेकेलिये कुछभी न दें । केवल जलपर रक्खें। अच्छी क्षुधा न लगे, तब तक दूध भी नहीं देना चाहिये। क्षुधाके मारे रोगी छटपटाने लगे, तब आधा दूध मिलाकर २०-३० तोले चाय पिलावें। ज्वर उतरनेके पश्चात् भी अन्न एक सप्ताह तक नहीं देना चाहिये। श्री० त्रिलोकचन्द ताराचन्द वैद्यने लिखा है, कि इस ओषधिके सेवनसे प्लेगके सैंकड़ों रोगी अच्छे हुए हैं, किन्तु जिन रोगियोंने दुराग्रहवश जल्दी अन्न खा लिया, उनके शरीरमें रहे हुए विषने प्रकुपित होकर उनका प्राण हरणकर लिया है।

सूचनाः—किसी रोगीको उदरमें मल संग्रह होनेसे इस वटीके सेवन कालमें पतले दस्त होने लगें, तो भय न माने। विकार होगा, वह निकलकर स्वयमेव दस्त बंद हो जायगा। रोगीको जल गरम करके शीतल किया हुआ पिलाते रहें।

३३. हिमरत्नाकर चूर्ण

विधिः—सफेद चन्दनका बुरादा, गुलाबकी कली सूखी, सेवती गुलाब, काहु, कुलफा, ताज़ा खस, धनियाँ, कासनी, नीलोफर नया, सौंफ, छोटी इलायचीके दाने, खीराके बीज, ककड़ीके बीज, कालीमिर्च, इन १४ द्रव्योंको १-१ तोला मिलाकर मोटा मोटा कूट लें। वक्तव्य—चूर्ण समाप्त होनेपर फिर नया बना लेवें। तैलीय द्रव्य कूटे हुए अधिक काल तक पड़े रहनेपर दूषित होजाते हैं। श्री० पं० मुरारीलालजी वैद्यशास्त्री

मात्राः—६ माशेसे २ तोले तक सुबह १ समय। रात्रिको नये मिट्टीके बर्तनमें २० तोले जल मिलाकर भिगोवें। सुबह जलको अलग निकाल औषधको शिलापर चटनीकी तरह पीसें। फिर उस जलमें घोल, कपड़ेसे छान, २ तोले मिश्री मिलाकर पिला देवें। यदि शिलापर न पीस सकें, तो अच्छी तरह मलकर छान लें और मिश्री मिलाकर पिला देवें।

उपयोगः—हिमरत्नाकर चूर्ण ग्रीष्मऋतुमें अति उपकारक है सूर्यके तापमें फिरनेसे लू लगना, चक्कर आना, व्याकुलता होना, नकसीर चलना, कण्ठावरोध होना, मंद-मंद ज़ुकाम होना, फिर उस हेतुसे निद्रा न आना आदि लक्षण उपस्थित होते हैं। ऐसे समयपर हिमरत्नाकरका हिम बना कर प्रातःकाल पीते रहनेसे लू लगने और अन्य विकार होनेकी भीति दूर होती है यह चूर्ण ग्रीष्मकाल केलिये हितकारक है अन्य ऋतुमें इसका उपयोग विचारपूर्वक करना चाहिये।

ग्रीष्म ऋतुमें दिनमें उष्णता और रात्रिको भी बेचैनी अधिक रहती है जिससे योग्य निद्रा नहीं आती। फिर अन्न पचन नहीं होता। शिरमें भारीपन रहता है। मुख सूखता है। दाह होता है, एवं स्वेद अधिक आता है और विशेष प्रकारका मूत्रविष रक्तमें

बढ़ जाता है। उसे पूरा रूपसे वृक्क बाहर नहीं निकाल सकता। जिससे पेशाब पीला होजाता है। मूत्रविष रक्तके भीतर शेष रह जानेसे मस्तिष्क निर्बल बनता है। अत हिमरत्नाकरका सेवन करानेसे पेशाब साफ आता है और मूत्रविष बाहर निकल जाता है। फिर निद्रा शान्त आने लगती है, व्याकुलता नहीं होती और पाचन-शक्ति योग्य कार्य करने लगती है।

गर्मीके दिनोंमें अपचन होकर पीले पतले १-२ दस्त या के अथवा दस्त और के होजाते हैं। विशेषत यह प्रकोप दिनमें भोजनके बाद होता है बेचैनी होती है। किन्तु अधिक निर्बलता नहीं आती। शरीर शीतल नहीं होता, दस्तके समय पेशाब होता रहता है। उसपर हिमरत्नाकरके हिममें नींबू या सन्तरेका शर्बत १ तोला और ½ रत्ती कपूर मिलाकर पिला देनेसे वमन और दस्त, दोनों बन्द होजाते हैं। दूषित पदार्थ खानेमें आनेपर कीटाणुजन्य विसूचिका (हैज़ा) होजाता है, उसमें दस्त और के थोड़े-थोड़े समयमें होने लगते हैं, शरीर शीतल होजाता है, पेशाब नहीं होता, हाथ पैरमें बायटे आते हैं। उसपर इस हिमरत्नाकरका उपयोग नहीं करना चाहिये।

वृक्क कार्य योग्य न होनेसे पेशाबकी उत्पत्ति योग्य नहीं होती। फिर रक्तमें विष सगृहीत होता रहता है। इसी हेतुसे रात्रिको देह और मस्तिष्कमें उष्णता रहती है तथा नेत्रमें कमज़ोरी और जलन, आलस्य बना रहना, पचन क्रिया मंद होजाना, शरीर शुष्क और श्याम होजाना आदि लक्षण उपस्थित होते हैं। उसपर हिमरत्नाकर चूर्ण और ताज़ी गिलोय ७ तोलेका हिम बना, फिर शर्बत उन्नाब २ तोले मिलाकर पिलानेसे प्रकृति स्वस्थ होजाती है।

कितनीक स्त्रियोंको रक्तमें मूत्रविषवृद्धि हो जानेपर पेशाब पीला जलता हुआ होता है, शामके समय नशा-सा मालूम होता है, जैसे भाग पी हो, इनके अतिरिक्त हृदयका धड़कना, कण्ठ, मुखका सूखना, तृषा अधिक लगना, दाह होना, शिरमें भारीपन रहना, मासिक धर्ममें रज काला-पीला, जमा हुआ, थोड़े परिमाणमें और दर्दसह गिरना और उसी हेतुसे नेत्रमें निर्बलता आना आदि लक्षण होते हैं। उसपर हिमरत्नाकर चूर्ण १ तोला ताज़ी गिलोय ६ माशे, ज़ीरा २ माशे और काली सारिवा ६ माशे मिला हिम बनाकर पिलाना चाहिये।

२४. कमलादि फाण्ट

विधि —कमलके फूल, सफेदचन्दन, लालचन्दन, खस, मुलहठी, नागरमोथा, सारिवा और मिश्री, ये ८ औषधियाँ २-२ तोले लेकर जौकूट करें। फिर ६४ तोले उबलते हुए जलमें डालकर ढक देवें। शीतल होनेपर कपड़ेमें छानकर थोड़ा-थोड़ा (८-१० तोले) पिलाते रहते हैं। (श्री प० यादवजी त्रिकमजी आचार्य)

उपयोग —इस फाण्टका सेवन करानेसे हृदयका संरक्षण होता है, पेशाब साफ आता है, दाह शमन होता है, पित्तजन्य दस्त दूर होते हैं। एवं हृदयकी धड़कन

और नाड़ीकी गतिका बढ़ा हुआ वेग फिर कम होजाता है। तीव्र ज्वर (१०२ डिग्रीसे अधिक) अनेक दिनोंतक रह जानेपर हृदयेन्द्रिय विकृत और शिथिल होजाती है। ऐसे ज्वरोंमें यदि प्रारम्भसेही इस फाण्टका सेवन कराया जाय, तो हृदयपर ये दोनों घातक परिणाम नहीं होते।

यह फाण्ट पित्तज्वर, विविध प्रकारके विषम ज्वर (मलेरिया) मोतीझरा, और पित्तप्रधान रक्तष्ठीवी आदिमें हितकारक है।

३६. सुदर्शन मिश्रण

विधिः—महासुदर्शन चूर्ण १० तोले, सोडा बाईकार्ब (सज्जीखार) २॥ तोले, एरंड तैलमें भुने हुए कुचलेका चूर्ण आधा तोला और फिटकरीका फूला १॥ तोला लें। सबको मिलाकर खरल करलें। श्री० पं० यादवजी त्रिकमजी आचार्य

मात्राः—३-३ माशे दिनमें २ या ३ बार जलके साथ।

उपयोगः—यह मिश्रण वर्षा ऋतु और शरद् ऋतुमें आने वाले बुखार, अपचनसे आने वाले बुखार, ठण्डी लगकर आने वाले बुखार (मलेरिया), बार-बार थोड़े-थोड़े दिनोंपर आने वाले बुखार और जुकामके साथ आये हुए बुखारपर लाभदायक है। यह मलावरोध, अग्निमान्द्य, शिरदर्द, अरुचि, आलस्य, आम और कफप्रकोप आदि लक्षणोंसह ज्वरको दूर करता है। ज्वर न हो तब तथा ज्वरावस्थामें भी निर्भयतापूर्वक यह व्यवहृत होता है।

३७. संज्ञाप्रबोध प्रधमन (नस्य)

प्रथम विधिः—बच, लहशुन, कुटकी, सैंधानमक, बड़ी कटेलीके फल, रुद्राक्ष, मोम और समुद्रफल, इन सबको समभाग लें। मोमको अलग रखकर सबको कूट कपड़-छान चूर्ण करें। फिर मोम मिला आकके दूधकी ३ भावना देवें। पश्चात् मयूरपित्तकी ३ भावना देकर चूर्ण बना लेवें। (वै० सा० सं०)

उपयोगः—इस चूर्णमेंसे १ रत्ती नाकके भीतर फूँक देनेसे सन्निपातमें बेहोशी दूर होजाती है। एवं कफाधिक वायु, अपस्मार, हलीमक, शिरोरोग, कर्णरोग, मूर्च्छा आदिमें भी यह प्रधमन (नस्य) सत्वर लाभ पहुँचा देता है।

द्वितीय विधिः—शुद्ध पारद, शुद्धगन्धक, कायफलकी छाल, नयी पीपल छोटी, सफेद मिर्च और तमाखू, सब समभाग लेवें। पहले पारद-गन्धककी कज्जली करें। फिर शेष औषधियोंका कपड़-छान चूर्ण मिलाकर दो-तीन दिन खरलकर लेवें।

उपयोगः—इस नस्यमेंसे १ रत्ती जितना सुँघानेपर सन्निपात आदि रोगोंमें तत्काल मूर्च्छा दूर होकर चेतना आ जाती है।

३८. किरातादि कषाय

विधिः—चिरायता, कुटकी, गिलोय, पित्तपापड़ा, सोंठ और नागरमोथा, इन ६ औषधियोंको समभाग मिला, जौकूट चूर्ण कर २-२ तोलेका क्वाथ कर दिनमें २ बार

पिलाते रहनेसे सब प्रकारके नये ज्वर ३-४ दिनमें दूर होजाते हैं। मलावरोध, पित्त-प्रकोप और उदरमें वायु भरा रहना आदि विकारभी शमन होजाते हैं।

३९. पञ्चतिक्त कषाय

विधि —छोटी कटेलीकी जड़, नीम गिलोय, सोंठ, पुष्करमूल और चिरायता इन ५ औषधियोंको समभाग मिला, जौकूट कर २-२ तोलेका क्वाथ कर दिनमें दो बार पिलाते रहें। पिलानेके समय १-१ तोला शहद मिला देवें। (च० द०)

उपयोग —इस कषायके सेवनसे सामान्य ज्वर, अपचनसे उत्पन्न ज्वर, कफ-प्रकोपज ज्वर, शीत ज्वर, बढ़ने घटनेवाले सब प्रकारके मलेरिया ज्वर और दिनों तक बने रहने वाले जीर्ण ज्वर आदि सबका नाश होता है। सामान्य औषधि होते हुए भी अच्छा लाभ पहुँचाती है।

सूचना —इस क्वाथसे उबाक या बेचैनी होने लगे, तो मात्रा कमकर देनी चाहिये। अति मलावरोध हो, तो इस क्वाथमें कुटकीभी मिला लें।

४०. सान्निपातिक क्वाथ

प्रथम विधि —पीपलामूल, देवदारु, इन्द्रजौ, वायविडंग, भार्ङ्गी, भांगरा, सोंठ, कालीमिर्च, पीपल, चित्रकमूल, कायफल और कमलका कंद, इन १२ औषधियों को समभाग मिलाकर जौकूट चूर्ण करें। (यं० सा० सं०)

मात्रा —२-२ तोलेका क्वाथकर दिनमें २ समय (आवश्यकतापर २-२ घण्टे पर) १-१ मासा गूगल मिलाकर देवें।

उपयोग —यह क्वाथ वातप्रकोपशामक है। इसके सेवनसे सन्निपातके उपद्रव-शीत, प्रलाप, अति प्रस्वेद, शूल और कफ आदि (विशेषकर सधिक सन्निपातके) सत्वर दूर होकर रोग निवृत्त होजाता है। सूतिका ज्वरमें भी यह अति हितकारक है।

दूसरी विधि —रास्ना, हरड़, छोटी कटेली, बड़ी कटेली, निगुंडी, पाठा, बच और चव्य, इन आठ औषधियोंको समभाग मिलाकर जौकूट चूर्ण करें। (यं० सा० सं०)

मात्रा —२-२ तोलेका क्वाथकर २ समय १-१ मासा गूगल मिलाकर देवें।

उपयोग —इस क्वाथके सेवनसे सन्निपातमें वात और कफप्रकोप सत्वर शमन होजाते हैं। अति प्रस्वेद आकर शरीर शीतल होजाना, प्रलाप, उदरशूल, कण्ठमेंसे कफकी आवाज़ आना, श्वासका वेग बढ़ जाना, सूतिका रोग और आमज्वर, ये सब दूर होते हैं।

४१. दार्व्यादि क्वाथ

विधि —दारु हल्दी, देवदारु, इन्द्रजौ, मजीठ, अमलतास और पाढ २-२ तोले, कपूरकचरी, खस, पीपल, चिरायता, गजपीपल, बनफशा, तगर, धमासा, काकड़ा-सिंगी, धनियाँ, सोंठ, नागरमोथा, गिलोय, वज्रदन्ती (पियाबासा), हरड़, छोटी कटेली,

नाव, कुटकी, जवासा, नीमगिलोय और पुष्करमूल, ये २१ औषधियाँ १-१ तोला, मूलकला, त्रायमाण, सप्तपर्णकी छाल और कालमेघ ४-४ तोले लें। सबको मिलाकर जौकूट चूर्ण करें। (श्री वैद्यराज पं० रामचन्द्रजी शर्मा)

मात्राः—१-१ तोलेका क्वाथ कर दिनमें २ बार पिलावें।

उपयोगः—यह क्वाथ विषम ज्वरके लिये अति लाभदायक है। इसका उपयोग अनेक वर्षोंसे वैद्यराज रामचन्द्रजी कर रहे हैं। हज़ारों रोगियोंको दिया गया है, कभी निष्फल नहीं हुआ। साम ज्वरमें आम, विष और कीटाणुओंको जलाकर नूतन ज्वरको दूर कर देता है। जीर्ण ज्वरमें यह सर्वज्वरहर लोहके साथ अनुपान रूपसे दिया जाता है।

४२. मृतसंजीवनी सुरा

विधिः—एक वर्षसे अधिक पुराना गुड़ १०२४ तोले, बबूलकी छाल ८० तोले, अनारके फलकी छाल, अडूसेकी छाल, मोचरस, लजावंती, अतीस, असगन्ध, देवदारु, बेलकी छाल, श्योनाककी छाल, पाटलाकी छाल, शालपर्णी, पृष्टपर्णी, बड़ी कटेली, छोटी कटेली, गोखरू, बड़े बेरकी जड़, इन्द्रायणकी जड़, चित्रकमूल, कौंच और पुनर्नवा, इन २० औषधियोंको ४०-४० तोले लेवें। फिर औषधियोंका जौकूट चूर्णकर गुड़से आठ गुने जलमें मिला मिट्टीकी नांदमें भर मुँह बन्दकर देवें। १६ दिनके पश्चात् चिकनी सुपारीका मोटा चूर्ण १२८ तोले, धतूराकी जड़, लौंग, पद्माख, खस, लालचन्दन, सोया, अजवायन, कालीमिर्च, ज़ीरा, कालाज़ीरा, शटी, जटामांसी, दालचीनी, छोटी इलायचीके दाने, जायफल, नागरमोथा, गठिवन (पीपलामूल), सोंठ, मेथी, मेषश्रृङ्गी और सफेद चन्दन, इन २१ औषधियोंका मोटा-मोटा चूर्ण ८-८ तोले डालकर मुँह बन्द करें। फिर ४ दिनके बाद वक यन्त्रसे सुरा चुआ लेवें।

मात्राः—आधसे १ तोला तक जल मिलाकर सेवन करें।

उपयोगः—यह सुरा धातु, आयु और शक्ति अनुसार नित्य पीते रहनेसे शरीरको सुदृढ़ बनाती है। पुष्टि, बल, कान्ति और अग्निको बढ़ाती है। एवं घोर सन्निपात, ज्वर और विसूचिका आदि नाना प्रकारके रोगोंकी बढ़ी हुई अवस्थामें (शीताङ्ग अवस्थामें) तत्काल अपना प्रभाव दर्शाती है।

सूचनाः—इसकी विधिमें नांदमें भरकर १६ दिन तक रखनेका लिखा है किन्तु इतनेक दिनोंमें खमीर नहीं उठता। अतः ग्रीष्म ऋतुमें कमसे-कम १६ से तीस दिन तक एवं शीतकालमें ३ से १॥ मास तक अवश्य रखना चाहिये, अर्थात् जबतक इसमें मद्यकिण्व उत्पन्न न हो तब तक रखना नितान्त आवश्यक है, तत्पश्चात् यन्त्र द्वारा खेंच लें। यदि जल्दी मद्यकिण्वकी उत्पत्ति करानी हो, तो द्राक्षासव आदि आसव अरिष्ट उत्तम प्रकारके बने हुए हों उनके बर्त्तनोंमेंसे गाद डाल देनी चाहिये। फिर मद्यकिण्व उत्पन्न होजाय, तब खेंच लेना चाहिये। मद्यकिण्व उत्पन्न होजानेकी परीक्षा यह है, कि जब खमीर उठने लगता है तब बर्त्तनमेंसे एक प्रकारकी आवाज़ वाष्प निकलने

की हुआ करती है, मद्यकिर्ण्व उत्पन्न होजानेपर वह आवाज़ बन्द होजाती है और खोलकर देखनेपर झाग वगैरह न दीखकर स्वच्छ निवरा हुआ जल दिखाई देता है।

४३ मृगमदासव

बनावट —सिद्ध मृतसंजीवनीसुरा ५० तोले, कस्तूरी ४ तोले, कालीमिर्च, लौंग, जायफल, पीपल और दालचीनी, प्रत्येक २-२ तोले लें। सबको मिला बोतलमें भर मुँह बन्दकर एक सप्ताह तक रहने दें। फिर छान लेवें। (भै० र०)

वक्तव्य —मूल ग्रन्थमें इस आसवमें शहद और जल २५-२५ तोले मिलाने और एक मास तक बन्द रखनेका विधान किया है।

कस्तूरीको शराबमें खरल करके मिलानी चाहिये। फिर सब औषधियाँ मिलाकर बोतलको अच्छी तरह हिलावें। एवं रोज़ दो तीन बार बोतलको हिलाते रहना चाहिये।

मात्रा —५ से १० बूंद जल मिलाकर १-१ या आध आध घण्टेपर रोग शमन होने तक देते रहें।

उपयोग —यह आसव उत्तेजक, मस्तिष्कशामक, आमपाचन, सेन्द्रिय विषघ्न कीटाणुनाशक और बल्य है। इस आसवके उपयोगसे विसूचिका, हिक्का और सन्निपातिक ज्वरमें बेहोशी आदि तत्काल दूर होते हैं। न्युमोनिया, इन्फ्लूएन्ज़ा, पूय ज्वर और कफ प्रधान सन्निपातोंमें यह अच्छा लाभ पहुंचा देता है। विसूचिकामें शीतांग होगया हो, ऐसे समयपर १५-१५ मिनटपर १-१ मात्रा ३-४ बार देनेसे देहमें उत्तेजना आजाती है, श्वासका दौरा होनेपर १०-१० बूंद १५ १५ मिनट बाद २-३ मात्रा दे देनेसे श्वास-वेग शमन होजाते हैं। यदि हृदय और फुफ्फुसकी गति शिथिल हो गई हो, तो १५ से ३० बूंद जलके साथ मिलाकर देनेसे तत्काल हृदय और फुफ्फुस नियमित कार्य करने लगते हैं।

४४ मधुकादि कषाय

प्रथम विधि —मुलहठी, अमलतासका गूदा, मुनक्का, कुटकी, हरड़, बहेड़ा, आँवला, परवलके पत्ते, इन ८ औषधियोंको समभाग मिलाकर क्वाथ करें। (व० से०)

मात्रा —१-१ तोलेका क्वाथ दिनमें २ बार देवें। या केवल रात्रिको सोनेके समय देवें।

उपयोग —यह कषाय आमपाचन, विरेचन और ज्वरघ्न है। मलावरोधसह जीर्ण ज्वरको दूर करता है। वातज, पित्तज और कफज, तीनों प्रकृति वालोंके लिये यह हितावह है। ज्वर जीर्ण होनेपर निर्बल आंतवालोंको बहुधा मलावरोध रहता है, और मलावरोधके हेतुसे ज्वर जल्दी नहीं छोड़ता। फिर कफप्रकोप, अग्निमान्द्य, मूत्रमें पीलापन, जिह्वापर मलकी तह जमना, किसीको अपचन, अरुचि, उदरवात नेत्रदाह, आदि लक्षण उपस्थित होते हैं। उस अवस्थामें यह कषाय अति हितकारक है।

द्वितीयविधिः—मुलहठी, गिलोय, कुटकी, छोटी इलायची और पित्तपापड़ा. ये ५ औषधियाँ ३-३ माशे कुटकी (दूसरी बार) १॥ माशे और सनाय १॥ तोले मिलाकर क्वाथ करें। फिर छान, प्रातःकालको १ तोला शक्कर मिलाकर देवें। (भै० र०)

उपयोगः—यह कषाय पित्तशामक और उदरशुद्धिकर है। वातपित्तज ज्वरको नष्ट करता है। जो ज्वर विविध प्रकारके रसायन प्रयोगोंसे दूर न हुआ हो, या क्विनाइन के सेवनसे प्रकुपित हुआ हो तथा जिसमें अन्त्र निर्बल होनेसे मलावरोध बना रहता हो, तथा तृषा, कण्ठशोष, उबाक, अरुचि, जम्भाई आना, रोंगटे खड़े होना, हाड-हाडमें दर्द होना, बेचैनी, हृदयमें धड़कन, चक्कर आना, शिरदर्द, निद्रानाश, मूत्रमें पीलापन और उदरमें भारीपन आदि लक्षण प्रतीत होते हों, उसपर यह क्वाथ व्यवहृत होता है।

वक्तव्यः—यदि रोगी अतिकृश और निर्बल होगया हो, तो मात्रा कम देवें। इस कषायमें कुटकी और सनाय विशेष मात्रामें हैं। दोनों विरेचन कराती हैं। मात्रा कम (पूर्ण मात्राका $\frac{1}{2}$ हिस्सा) दिनमें २-३ बार देनेपर पचनक्रियाका सुधारकर दस्तको साफ लाती है और मात्रा अधिक होनेपर पतले दस्त कराती है।

४५ पञ्चतिक्तघन वटी

विधिः—सप्तपर्णकी ताज़ी अन्तर छाल, कांटेवाले करंजके ताज़े पान, गिलोय ताज़ी, चिरायता और कुटकी, इन ५ द्रव्योंको १-१ सेर लेवें। सप्तपर्ण छाल, करंजपत्र, और गिलोयको जलसे धोकर मोटा-मोटा कूट लें। चिरायता और कुटकीका जौकूट चूर्ण करें। सबको मिला १ मन ज़लके साथ कलईदार बर्तन या मिट्टीके बर्तनमें अष्टमांश क्वाथ करें। फिर मसलकर छान लें। शीतल होनेपर पुनः छान, कलईदार बर्तनमें डालकर मंदाग्निसे पकावें। क्वाथ कुर्छीको लगे, इतना गाढा हो, तब बर्तनको धूपमें रखकर सुखा लेवें। गोली बनने योग्य हो, तब अतीसका चूर्ण १० तोले मिलाकर २-२ रत्ती की गोलियाँ बना लेवें। (श्री पं० यादवजी त्रिकमजी आचार्य)

मात्राः—२ से ४ गोली ३-३ घण्टेपर जलसे देवें।।

उपयोगः—इस वटीके उपयोगसे सब प्रकारके विषम ज्वर रुक जाते हैं। बारीके बुखारमें बुखार आनेके ४ घण्टे पहले और २ घण्टे पहले दो मात्रा (बड़े मनुष्यको ४-४गोली) दे देवें। तीसरी मात्रा समय निकल जानेपर देवें। और दिनोंमें, दिनमें ३ बार देवें।

सूचनाः—यदि कब्ज़ हो तो पहले उदरशुद्धि कर लेनी चाहिये। चिरायता और कुटकी ४-४ माशे, हरड, बहेड़ा और आँवला २-२ माशे मिला क्वाथकर पिला देवें। आवश्यकता अनुसार वह क्वाथ दिनमें २ बार दे सकते हैं। उक्त वटीके साथ या वटी न देनेपर भी। इस क्वाथके संयोगसे वटी सत्वर गुण दर्शाती है।

४६. गजानंद वटी

विधिः—शुद्ध हिंगुल २ तोले, लोह भस्म, शुद्ध कुचिला, शुद्ध बच्छनाग, कालीमिर्च, सोंठ, पीपल, हरड, बहेड़ा, आँवला और चित्रकमूल ये १० औषधियाँ

1-1 तोला, एलवा ३ तोले और सेकी हुई कुटकी ६ तोले लेवें। पहले हिंगुल और वत्सनाग मिलावें, तत्पश्चात् लोह, कुचिला और शेष औषधियोंका कपड़छान चूर्ण क्रमशः मिलाकर एक जीव करें। फिर नींबूके रसमें 12 घण्टे खरलकर, 1-1 रत्तीकी गोलियाँ बना लेवें। (आ० नि० मा०)

वक्तव्य—मूल पाठमें लोह भस्म और चित्रकमूल नहीं है, किन्तु गुणधर्म वृद्धिकी दृष्टिसे वैद्य कान्तिलालजीके अनुभव अनुसार बढ़ा लिये हैं। एवं भावना नींबूके रसकी दी है।

मात्रा—1-1 गोली दिनमें 2 बार अग्निमांद्यपर तक्र या जलके साथ और शारीरिक निर्बलतापर दूधके साथ।

उपयोग—गगनानन्द वटी—दीपन पाचन, कीटाणुनाशक, सारक, वातहर और बल्य है। मुद्दती ज्वर या विषमज्वर दूर होनेके पश्चात् रोगीका शरीर निस्तेज और निर्बल होजाता है। पचनक्रिया मन्द होजाती है। उदरमें भारीपन बना रहता है। किसी किसीको मन्द-मन्द दर्दभी होता है। एवं आंतें कमज़ोर हो जानेसे उदरशुद्धि भी नियमित नहीं होती। इन सब लक्षणोंसह निर्बलताको दूर करने और शरीरको सबल बनाने केलिए इस वटीका अच्छा उपयोग होता है।

यकृत्की क्रिया मन्द हो जानेसे पित्ताशयमेंसे ग्रहणीके भीतर पित्त (Bile) का स्राव पूरा नहीं होता। इस प्रकारके अग्निमांद्यमें मल सफेद और दुर्गन्धयुक्त होजाता है, यदि वायु उत्पन्न होकर सड़नेकी क्रिया प्रबल होजाती है, तो सूक्ष्म-सूक्ष्म कृमियों की उत्पत्ति होजाती है। फिर हज़ारोंके हिसाबसे शौचमें प्रतीत होते हैं। इस विकारपर यह वटी तत्काल लाभ पहुंचाती है। यह उदर कृमियोंको नष्ट करती है, उनकी उत्पत्ति को रोकती है यकृत्प्लीहाको बल देकर अन्नका सम्यक् पचन कराती है और शारीरिक बलकोभी वृद्धि कराती है।

मलेरियाके आक्रमणके पश्चात् कितनेक रोगियोंको मन्द-मन्द ज्वर बना रहता है तथा अग्निमांद्य, अरुचि, शिरदर्द, उदरमें भारीपन, मलावरोध, आलस्य बना रहना और मूत्रमें पीलापन आदि लक्षण प्रतीत होते हैं। निर्बलता बढ़ती जाती है और कार्य करनेका उत्साह नहीं रहता। यदि इस विकारको शीघ्र दूर न किया जाय, तो रोगी मृत्युके मुँहमें चला जाता है। यह वटी इस निर्बलता आदि सब लक्षणोंसह ज्वरको दूर कर देती है। फिर शरीर स्वस्थ और सबल बन जाता है।

तमक—श्वासका दौरा शीत लगने और अपचन होनेपर होजाता है। फुफ्फुसोंको बल मिले, तो शीतका आघात कम पहुँचता है और पचनक्रिया सबल हो, तो अपचन कम होता है। इन दोनों अवयवोंको यह वटी शक्ति प्रदान करती है। इस हेतुसे तमक श्वासके दौरेको रोकनेमें भी यह वटी उपयोगी होती है।

४७. स्वेदल मिश्रण
(चढ़े हुए बुखारमें प्रस्वेद लानेके लिये)

पोटास एसिटास	Pot. Acetas	१२ ग्रेन
स्पिरिट इथर नाइट्रोसी	Spt. Aether Nit.	२० बूंद
लाइकर एमोनिया एसिटास	Liq. Ammon Acet.	२ ड्राम
शर्बत संतरा	Syrup Aurantii	१ ड्राम
एक्वा केम्फर	Aqua Camphore ad	१ औंस तक

सबको मिलाकर पिला देवें। इसतरह ३-३ घण्टेपर २ या ३ बार बुखार उतरे तब तक देते रहना चाहिये। इससे प्रस्वेद आकर ज्वर निवृत्त होजाता है।

(डॉक्टर कपूरसिंह)

सूचना:—इस मिश्रणका प्रयोग मुद्दती तापोंमें नहीं करना चाहिये।

४८. वान्तिशामक मिश्रण
(मलेरियामें बार-बार वमन होनेपर)

एसिड साइट्रिक	Acid Citric	१७ ग्रेन
एसिड हाइड्रोस्येनिक डिल०	Acid Hydrocyan dil.	१ बूंद
शर्बत संतरा	Syrup Aurantii	½ ड्राम
जल	Aqua ad	½ औंस तक

इन सबको मिलाकर तैयार करें। एवं निम्न मिश्रण तैयार करें।

सोडा बाई कार्ब	Soda bicarb	२० ग्रेन
शर्बत नींबू	Syrup Lemon.	½ ड्राम
जल	Aqua	½ औंस

इन दोनों मिश्रणोंको मिलावें। उफाण (Effervescence) आनेपर तुरन्त पिला देनेसे वमन और उबाकका निवारण होजाता है।

४९. विषघ्न मिश्रण

क्विनाइन हाइड्रोक्लोराइड	Quinine Hydrochlor.	३ ग्रेन
टिंक्चर फेरी	Tinct Ferri	३० बूंद
शर्बत संतरा	Syrup Aurantii	½ ड्राम
जल	Aqua	१ औंस

इन सबको मिलाकर पिला दें। इसतरह २४ घंटेमें ४-४ घंटेपर ४-५ बार दे देनेसे ज्वरकी तीव्र वेदना शमन होजाती है।

यह मिश्रण पूयस्यरक्त (Pyaemia), प्रमेहपिटिका (Carbuncle), कीटाणुप्रकोप ज्वर (Septiceamia), पूयात्मक तन्तुप्रदाह (Celluliltis), आदि रोगोंमें विषशमनार्थ प्रयोजित होता है।

५०. आल्बा विरेचन

(मिश्चुरा आल्बा—Mist. Alba)

मेग. सल्फ	Mag. Sulph.	१ ड्राम
मेग. कार्ब.	Mag. Carb.	१० ग्रेन
शर्बत सौंठ	Syrup zingiberis	१ ड्राम
एक्वा मेन्थ पिप	Aqua Menth Pip ad	१ औंस तक

इन सबको मिलाकर प्रातःकाल पिला देनेसे कोष्ठ शुद्धि होजाती है। यह मिश्रण स्वादु बन जाता है। इसका प्रयोग हॉस्पिटलोंमें विशेष रूपसे होता है।

अपचन, कण्ठरोहिणी, मोतीझरा, शोणित ज्वर, विसर्प, सूतिका ज्वर, सविराम विषम ज्वर और अन्य विषम ज्वर आदि रोगोंमें उदर शुद्धिके लिये यह मिश्रण प्रयोजित होता है। विशेषतः यह मिश्रण ज्वर और प्रदाहयुक्त रोगोंकी तरुणावस्थामें दिया जाता है।

इस मिश्रणमें विरेचन औषधि मुख्य मेगनेशिया सल्फास है। वह ग्रहणी (Duodenum) के भीतर अत्यधिक परिमाणमें जलनिःसरण कराता है, और उस जलका शोषण नहीं होने देता। यह जल प्रदाहजन्य नहीं है, किन्तु आन्त्रिक रस (Succus entericus) है। इस हेतुसे अन्त्रको इस विरेचनसे अन्य विरेचनीय औषधोंके समान प्रदाहजन्य हानि होनेकी भीतिभी नहीं है।

विविध विरेचन औषधोंकी रासायनिक क्रिया, उपयोग, अधिकारीफल आदिका विशेष विवेचन औषधगुण धर्म विवेचनमें पृष्ठ, ९३ से १०६ तक किया गया है।

५१. सेलाइन विरेचन

(मिक्सचर सेलाइन—Mist Saline)

मेग सल्फ	Mag. Sulph	३ ड्राम
पोटास नाइट्रास	Pot Nitras	१ ड्राम
स्पिरिट इथर नाइट्रोसी	Spt. Aether Nit	१ ड्राम
लाइकर एमोनिया एसेटिस	Liq Ammon Acet.	६ ड्राम
एक्वा केम्फर	Aqua Camphore ad	३ औंस तक

इन सबको मिला लेवें। इसमेंसे १-१ औंस दिनमें १-२ या ३ बार देवें। ज्वरमें कोष्ठबद्धता, शोथ, जलोदर और मूत्र रोगोंमें जब मल और मूत्र, दोनोंका विरेचन कराना हो, तब यह व्यवहृत होता है।

५२. गन्धक द्रावक

(Acidum Sulphuricum)

१ विधिः—गन्धकको जलानेपर जो उसमेंसे गैस उत्पन्न होता है, उसे सोरा और जलीय वाष्पं द्वारा प्राणवायु (ऑक्सिजन) संयुक्त और जलमिश्र करनेपर यह द्रावक तैयार होता है। इसके भीतर १२ प्रतिशत विशुद्ध गन्धकद्रावक रहता है।

ब्रिटिश फार्माकोपियाके मतानुसार उक्त अपरिशुद्ध द्रावक १२ औंस और सल्फेट ऑफ एमोनिया ½ औंसको मिलाकर यन्त्रद्वारा पुनः यथाविधि खैंच लेनेपर विशुद्ध बनता है। यह द्रावक वर्णहीन, तैलाकार, दाहक, खट्टे स्वादवाला, गन्धरहित और अत्यन्त जलशोषक है। जलमें मिलानेपर जलको गरमकर देता है। आपेक्षिक गुरुत्व १-८४ है।

सूचनाः—क्षार और उसके कार्बोनेट, सीसा (नाग शर्करा) रजत, बेरियम और चूने (Calcium) के साथ यह नहीं मिलाया जाता।

मात्राः—गन्धक द्रावक उसके वज़नसे ६ गुने वाष्प जलमें डाल देनेपर विमर्दित गन्धक द्रावक (Acid Sulphuric dil) बनता है। एक कांचकी बोतलमें आधा वाष्प जल भर, उसपर गन्धक द्रावक डाल दें। फिर शीतल होनेपर आवश्यक शेष वाष्प जल मिला लेवें। इसका आपेक्षिक गुरुत्व १-०६४ से १-०७२ होता है। इसकी मात्रा ५ से ६० बूंद दिनमें ३ बार १-१ औंस जलके साथ।

उपयोगः—गंधकाम्ल प्रबल दाहक द्रव्य है, विमर्दित द्रावकको विशेष जलमें मिलाकर प्रयोजित किया जाता है। यह अग्निप्रदीपक, किञ्चित् ग्राही, आमविषघ्न, शैत्यकारक, किञ्चित् रक्तस्रावरोधक और बल्य है। ज्वरजन्य उत्ताप, विसूचिकाकी तृषा, और राजयक्ष्मामें अधिक स्वेदस्राव, इनको ह्रास करानेके लिये व्यवहृत होता है। इनके अतिरिक्त नागविषज शूल, विविध चर्मरोग तथा आमाशय और अन्त्रकी दीवारमेंसे रक्तस्रावको दूर करनेके लियेभी प्रयुक्त होता है।

यह अम्ल रक्तमें सत्वर शोषित होजाता है। फिर शरीरके क्षारोंके संयोगद्वारा लवण बनकर अभिसरण करता है, जो क्षार अकर्मण्य बन जाता है। परिणाममें रक्तके क्षारत्व धर्मका ह्रास होजाता है। अतः जिनके रक्त और मूत्रकी प्रतिक्रिया अम्लहो, उनके लिये विशेष सम्हालपूर्वक उपयोग करना चाहिये। ज़ल मिश्र अम्ल कुछ दिनतक सेवन करनेपर क्षुधाको प्रदीप्त करता है। पचन शक्ति और पोषण क्रियामें वृद्धि होती है, तथा मलावरोध होजाता है इसके सेवनसे शारीरिक उष्णताका ह्रास होता है। नाड़ीमला दृढ़ होती है और उसकी तेजीमें कमी होती है। छोटे बच्चेकी माताको यह नहीं देना चाहिये। अन्यथा बच्चेको उदरशूल उत्पन्न होता है। यदि एक बार अधिक मात्रामें या दीर्घकाल तक अल्प मात्रामें सेवन किया जाय, तो भी अपचन, उदरमें वेदना और अतिसार उत्पन्न होता है। अति अधिक मात्रा लेनेपर अथवा निर्जल द्रावक लेनेपर प्रदाहिक और दाहक विषक्रिया उपस्थित होती है।

सीसा धातु द्वारा विषाक्त होनेपर तथा सीसा धातुजनिक शूलपर यह विशेष उपकार दर्शाता है। ४०-५० बूंद गन्धक द्रावकको १ पॉइण्ट जलमें मिलाकर रोज़ २-३ बार वाष्प देनेसे (अन्य कोईभी औषधि न देनेपर) सीसाजन्य शूल ३ दिनमें कम होजाता है।

विसूचिकाकी तृषाको शमन करनेके लिये गन्धक द्रावक जलमें मिलाकर थोड़ा-थोड़ा पिलाया जाता है। एव आमाशय और अन्त्रसे होनेवाले रक्तस्रावका रोध करनेके लियेभी इसीतरह दिया जाता है। यह गर्भाशयके रक्तस्रावमें भी हितकारक है। यह अतिसारमें और विसूचिकाकी प्रथमावस्थामें सफलतापूर्वक व्यवहृत होता है।

राजयक्ष्मा और पूयप्रधान ज्वरमें अति प्रस्वेदको कम करनेके लिये यह उत्तम औषध है। इसतरह जीर्ण अतिसार और पैत्तिक ज्वरके अति प्रस्वेद, क्षीणता लानेवाला अतिसार, मधुरा ज्वरमें अतिसार ग्रीष्मकालका विसूचिका समान अतिसार, इन सबपर यह द्रावक व्यवहृत होता है।

शीतला रोगमें फाले नष्ट होकर रक्तपूर्ण बनने और पेशाबमें नष्ट हुआ रक्त आनेपर गन्धक द्रावकका उपयोग किया जाता है।

विविध प्रकारके चर्मरोग, कण्डूमय पिटिकाएँ, जीर्ण शीतपित्त, नख विकार आदि पर यह अति लाभदायक है। व्युत्री, फोड़ा और जलपूर्ण फाले आदि पर इसे चार गुने वैसलिनमें मिला, मलहम बनाकर लगाया जाता है।

सूचना —विना वैसलीन लगानेपर त्वचा जलकर पहले सफेद होजाती है। फिर उसका वर्ण मलिन कृष्ण होजाता है।

रसकपूर, हिंगुल आदिके धूम्रपानमें मुँह आ जानेपर इसका उदर सेवन कराया जाता है तथा बबूल और बेरकी छाल तथा चमेलीके पत्तेके क्वाथसे कुल्लेभी कराये जाते हैं।

ज़हरी कीड़ेके काटनेपर दंशस्थानपर जलरहित गंधकद्रावक लगानेसे दाहक क्रिया करके लाभ पहुँचाता है।

नेत्रपुटके नीचे अथवा ऊपर उलट जाने (Intropion or ectropion) पर निर्जल गन्धक द्रावकका स्थानिक प्रयोग करनेपर क्षत होजाता है। फिर क्षत शुष्क होनेपर त्वचा खिंचनेसे अक्षिपुट समान होजाता है। जीर्ण संधिवातज वेदना और जीर्ण पक्षाघातमें ८ गुनी वराह वसामें इसे मिलाकर स्थानिक मर्दन कराया जाता है।

५३ एण्टिफ्लोजिस्टीन (केओलीन पुल्टिस)

(Cataplasma Kaolini)

केओलिन (चाइनाक्ले)
बोरीक एसिड अच्छी तरह पिसा हुआ
मेलिसिलिक एसिड
ऑइल विण्टरग्रीन
ऑइल नीलगिरी
ऑइल पिपरमेण्ट
आयोडिन
ग्लिसरीन

पहले चाइना क्लेको १००° सेण्टीग्रेड (उबलते हुए जल जितनी गरमी) पर १० मिनट गरम करें। फिर उसमें बोरिक एसिड मिला लेवें। पश्चात् ग्लिसरीनको १० मिनट १००° गरमीपर गरम करके चाइना क्लेको मिश्रित करें और थोड़ा समय अग्निपर चलाते रहें। मिल जानेपर उतार गुनगुना रहने तक चलाते रहें। फिर शेष औषधियोंका मिश्रण मिलाकर वायुरोध हो, वैसे डिब्बेमें भर लेवें।

उपयोग विधि:—पुल्टिसको लेटिनमें 'केटाप्लाज़्मा' कहते हैं। यह चाइना क्लेकी पुल्टिस होनेसे इसे केटाप्लाज़्मा केओलिन संज्ञा दी है। इस पुल्टिसका उपयोग करना हो, तब किसी भगोनेमें डिब्बेको रख चारों ओर जल भरकर उबालें। जिससे डिब्बेमें रही हुई औषधि जलकी उष्णतासे कुछ मिनटोंमें पतली होजाती है। फिर उसमेंसे छुरी (लेपनी) से फ्लालेन या किसी ऊनी वस्त्रपर एक सूत जितना मोटा (या अधिक पीड़ित स्थानके लिये दो सूत) लगावें। चारों ओर आध इञ्च कपड़ा रिक्त रखें। फिर पीड़ित स्थानपर सहन होसके उतना गरम लगावें। ऊपर रूईकी पतली तह चिपकाकर पट्टी बांधें। १२ या २४ घण्टे बाद लेपको बदल देवें या उस स्थानपर गरम जलकी बोतल रखकर पुनः गरमकर लेवें।

वक्तव्यः—लेपको फुफ्फुसपर लगानेके समय छातीकी हड्डीसे कुछ दूर रखें। एक समय लगी हुई पुल्टिस निकालनेपर त्वचाको गरम जलमें कपड़ा डुबोकर पोंछ लेवें। फिर धीरेसे तैल लगाकर पोंछ लेवें और ऊपर पाऊडर छिड़क देवें।

यह पुल्टिस डॉक्टरीमें विशेष प्रयुक्त होती है। फुफ्फुसप्रदाह, फुफ्फुसावरण-प्रदाह, कण्ठप्रदाह, वातप्रकोपज शूल, अन्य स्थानमें प्रदाह, मांसपेशियोंमें दर्द, चोट लग जाना, शीत लगनेसे छाती जकड़ जाना, वाष्प लगकर या अन्य उष्णतासे थोड़ा भाग झुलस जाना, या जल जाना, त्वचा प्रदाह, कटिशूल, गृध्रसीशूल, फौड़ेको पकाना आदि रोगोंपर, वेदना, प्रदाह, कण्डू और ज्वरका ह्रास करानेके लिये यह व्यवहृत होती है।

इसका लेप छाती, कण्ठ, कंधा, हाथ, कोहनी, मणिबंध, पैर, सांथल आदि सब स्थानोंपर लगाया जाता है। नेत्रपीड़ामें नेत्रपर भी बांध सकते हैं।

यह पुल्टिस पीड़ित स्थानपर कई घण्टोंतक आर्द्र उष्णता पहुँचाती है। जिससे स्थानिक रक्ताभिसरण क्रिया उत्तेजित होती है। फिर वहाँ अधिक रक्त आता है। जिससे वेदना, प्रदाह और स्थानिक रक्तसंग्रहका ह्रास होता है। प्रदाहिक स्थानमें आर्द्र सेक और रक्तकी आदानप्रदान क्रियाद्वारा रस; जल, पूय अथवा दूषित रक्तका अन्यत्र शोषण होजाता है। जिससे वह स्थान रोगमुक्त होजाता है।

श्वेत रक्ताणुओंको प्रादाहिक स्थानमें आनेमें यह पुल्टिस अधिक सहायता पहुँचाती है। जो विकारको नष्टकर स्वास्थ्य लाभ पहुँचाती हैं। बाहर शीतलता लगती रहे, तो प्रदाह शमन नहीं होसकता। शीतलताको रोकनेका कार्यभी इस पुल्टिसद्वारा सरलतासे सिद्ध होता है।

५४ नलबध

विधि.—किरमाणी, अजवायन, कांटेदार करंजके फलोंकी सेकी हुई गिरी, कड़वी जीरी, कोलम, कुटकी, डिकामाली, सैंधानमक, कालानमक, इन्द्रजौ, वायविडङ्ग, कचूर (शठी), काकड़ासिंगी, नीमकी निम्बोलीकी गिरी और कालीमिर्च, इन १४ औषधियोंको सममाग मिलाकर कूट कपड़-छान चूर्ण करें। (आ० नि० मा०)

मात्रा —३ से ६ रत्ती तक दिनमें ३ बार जलके साथ देवें। छोटे बालकको मात्रा १ रत्ती।

उपयोग —यह नलबन्ध चूर्ण अपचनजनित ज्वर, मन्द जीर्ण ज्वर, अपचन-जनित उदरपीड़ा, परिणामशूल, पित्तप्रकोप, उदरकृमि, वमन, अपचनजनित अतिसार और मलावरोधको दूर करता है अपचन होकर मुखपाक होजाता हो, तो उसेभी दूर करता है। यह चूर्ण अति सौम्य है। २-२ मासके बच्चेको भी निर्भय रूपसे दे सकते हैं। इसका उपयोग सूरतके स्व० वैद्य त्रिलोकचन्द जी अनेक वर्षोंसे करते रहते हैं। यह निर्भय और उत्तम औषधि है।

५५ जीर्ण ज्वरान्तक चूर्ण

विधि —वासान्तक चूर्ण १ तोला और मिश्री ४ तोले मिलाकर ७२ घण्टे खरलकरके बोतलमें भर लेवें। (वैद्यराज मुरलीधरजी मुलतानी)

मात्रा.—१ से २ रत्ती बनफशादि शर्बत और शाही चूर्णके साथ दिनमें २-३ बार देवें।

उपयोग —यह चूर्ण क्षयज्वर, जीर्ण ज्वर, पूयज्वर और विकृत विषमज्वर और लीन विषयुक्त ज्वरको दूर करता है।

५६ मयरज्वरहर चूर्ण

विधि —जीर्ण ज्वरान्तक चूर्ण १ तोला और मिश्री ४ तोलेको ७२ घण्टे खरलकरके बोतलमें भर लेवें। (वैद्यराज मुरलीधरजी मुलतानी)

मात्रा.—१ से २ रत्ती जलके साथ दिनमें २ या ३ बार देवें।

उपयोग —मोतीझरा आदि पित्तप्रधान मुद्दती ज्वरोंको दूर करता है।

(४) ज्वरातिसार

१. प्राणेश्वर रस

विधिः—शुद्ध पारद, शुद्ध गन्धक, अभ्रक भस्म, सोहागेका फूला, सौंफ, अजवायन और ज़ीरा, ये ७ औषधियाँ २-२ तोले, यवक्षार भुनी हींग, सैंधानमक, काला नमक सांभरनमक, समुद्रनमक, कांचनमक, बायविडङ्ग, इन्द्रजौ, राल और चित्रकमूल, ये ११ औषधियाँ १-१ तोला लेवें। पहले पारद-गन्धककी कज्जली करें। फिर अभ्रकभस्म और सोहागा मिलावें। पश्चात् शेष औषधियोंका कपड़-छान चूर्ण मिलाकर ३ घण्टे जलके साथ खरल करके २-२ रत्तीकी गोलियाँ बनालेवें। (र० चं०)

मात्राः—२-२ रत्तीकी गोली दिनमें ३ बार जल या मट्ठेके साथ देवें।

उपयोगः—यह रस ज्वरातिसार नाशक है। इस रसमें ग्राही, दीपन, पाचन, वातहर, शूलघ्न, और जीर्णज्वरनाशक, गुण अवस्थित हैं। उदरमें काटनेके समान वेदना होकर बार-बार सफेद, दुर्गन्धयुक्त, पतले और आटेके घोलके समान दस्त लगना, उदरमें वायु भरी रहना, अफारा. मलिन जिह्वा, मुँह बेस्वादु बना रहना, बार-बार जल छूटना, अरुचि, मंद-मंदज्वर बना रहना, क्षीण नाड़ी, थोड़ेसे परिश्रमसे श्वास भर जाना, बार-बार प्रस्वेद आते रहना, शरीर गीला-सा भासना, देहमें भारीपन, तन्द्रा, निद्रावृद्धि और किसीभी कार्य करनेका उत्साह न होना आदि लक्षण होनेपर इस प्राणेश्वर रसकी योजना करनी चाहिये। इस रसके सेवनसे यकृत्-पित्तका स्राव बढ़ जाता है, फलतः आम, कफ और कीटाणु नष्ट होते हैं; हींगके योगसे उदरवात शमन होता है तथा आमाशय और अन्त्रकी वातवाहिनियां सबल बनती हैं। फिर बढ़ी हुई कृमिवत् गति (पुरः सरण क्रिया) शान्त होती है, अन्त्रकी धारण शक्तिमें वृद्धि होती है; लघु अन्त्रमें पचनक्रिया योग्य होने लगती है; परिणाममें अतिसार और ज्वर, दोनों दूर होजाते हैं।

इस रसमें कज्जली योगवाही, रसायन, यकृत्-पित्तके स्रावकी वर्धक, अन्त्रस्थ सेन्द्रिय विषनाशक और दुर्गन्धहर है। अभ्रकभस्म रसायन, धातु परिपोषण क्रम व्यवस्थापक और शक्तिवर्धक है। सोहागा आक्षेपघ्न, शूलहर, दुर्गन्धनाशक, कफघ्न और अन्त्रविषघ्न है।

सौंफ और अजवायन आमपाचक और वातहर है। ज़ीरा पाचक और ग्राही है।

यवक्षार और पञ्चलवण पाचक और यकृत्के लिये शक्तिवर्धक है। हींग, अजवायन और बायविडंग, कीटाणुनाशक, वातहर और शूलघ्न हैं। इन्द्रजौ, अन्त्रशक्तिवर्धक, ग्राही, यकृत्, पित्तस्राववर्धक, कीटाणुनाशक और आमपाचक है। राल ग्राही, वातहर, कीटाणु-नाशक और व्रणरोपण है तथा चित्रकमूल दीपन, पाचन और उदरवातघ्न है।

२. गगनसुन्दर रस

विधिः—सोहागेका फूला, शुद्ध हिंगुल, शुद्ध गन्धक, अभ्रक भस्म, इन चारों औषधियोंको ४-४ तोले लेकर छोटी दूधीके स्वरसमें ३ दिन तक खरल कर १-१ रत्तीकी गोलियाँ बना लेवें। (र० रा० सुं०)

मात्रा —१-१ गोली दिनमें ३-४ बार २-२ रत्ती सफेद रालके चूर्णके साथ देवें।

उपयोग —यह रस विविध प्रकारके रक्तस्राव अति उग्र ज्वरातिसार और आम-शूलको नष्ट करता है, तथा जठराग्निको बढ़ाता है, जब अतिसार बढ़ जानेके हेतुसे ज्वर उपस्थित होता है। तब इस रसका सेवन अति हितकारक है।

जब कीटाणुओंके प्रकोपसे अन्त्रप्रदाह होकर अतिसार होजाता है, तब उदरपर थोड़ा दबानेसे भी दर्द होता है। इस अन्त्रप्रदाहके हेतुसे ज्वरभी उपस्थित होता है। ऐसे समयपर कीटाणुनाशक, ग्राही, ज्वरहर और संगृहीत विकारको पचन कराने वाली औषधि देनी चाहिये। ये सब रोग इस रसके सेवनसे नष्ट होते हैं और ज्वरातिसार और रक्तातिसारभी शमन होजाते हैं।

सूचना —इस रसके सेवन करने वालोंको पथ्यमें मट्ठा या बकरीका दूध देना चाहिये।

---

(५) अतिसार-प्रवाहिका

१ त्रिविक्रम रस (रक्तातिसार)

विधि —शुद्ध हिंगुल, अफीम, सोहागेका फूला और बीजाबोल, इन चारोंको समभाग मिलाकर चूर्ण करें, या शहदके साथ मर्दनकर आध-आध रत्तीकी गोलियाँ बनावें। (र० यो० सा०)

मात्रा —१-१ गोली दिनमें २-३ घण्टेपर ४ समय दें, या चूर्ण शहदके साथ चटावें।

उपयोग —यह रस पक्व आम और शूलसह रक्तातिसारका नाश करता है। यह रस स्तम्भक और संग्राही होनेसे रक्तातिसार और आम संग्रहणीकी आमावस्था दूर होनेपर अच्छा कार्य करता है।

अपचन होकर अतिसार या संग्रहणीमें बलपूर्वक दस्त होना, दिनमें ५०-१०० दस्त लग जाना, बार-बार थोड़ा-थोड़ा मल गिरना, अतिशय बलपूर्वक मरोड़ा आना, किन्हनेपर थोड़ी आम गिरना, आम कुछ रक्तमिश्रित होना, उदरमें वेदनाका अति प्रबल वेग होनेसे रोगी अति घबरा जाना, बेहोशी आ जाना, मुँहसे पानी छूटना, उबाक आती रहना, शुष्क वान्तिके हेतुसे उदरमें दर्द होजाना, साथ-साथ मदज्वरभी रहना आदि लक्षण उपस्थित होते हैं। इस स्थितिमें त्रिविक्रम रसका उत्तम उपयोग होता है।

इतर समयमें उत्पन्न होने वाले ग्रहणीमें उदरके भीतर वेदना होना, मलके साथ अधिकांश में जल रहना, आम और रक्त गिरना, बार-बार शौच होना, विशेषत मरोड़ा आ आकर और उदरमें प्रबल पीड़ा होकर दस्त होना आदि लक्षण होनेपर यह त्रिविक्रम रस प्रयोजित होता है।

रक्तातिसारमें उदरपीड़ा होकर मलमिश्रित रक्त गिरता है, गुदभ्रंश होता है तथा गुदमार्गमें दर्द होनेके हेतुसे गुदद्वार और सब अवयव ठिठरा जाते हैं। ऐसी स्थितिमें इस रसका अच्छा उपयोग होता है।

इस रसायनमें हिंगुल जन्तुघ्न, रसायन, अन्त्रके संचित आमको निर्विषकर रूपान्तरित करने वाला और अन्त्रकी दुर्गन्धका नाशक है। अफीम वेदनाशामक और स्तम्भक है। सोहागा—आक्षेपघ्न, दुर्गन्धहर, कीटाणुनाशक और पाचक है। बीजाबोल ग्राही, रक्तस्तम्भक और विशेषतः केशिकाओंके रक्तकी रोधक है।

(औ० गु० ध० शा० के आधारसे)

२. प्रमदानन्द रस

विधिः—पीपल, शुद्ध हिंगुल, कौड़ीभस्म, धतूरेके शुद्ध बीज, जायफल, सोहागेका फूला, शुद्धबच्छनाग और सोंठ, इन ८ औषधियोंको समभाग मिला नींबूके रस, धतूरेके पत्तेके स्वरस और भांगके क्वाथके साथ १-१ दिन खरलकर आध-आधरत्तीकी गोलियाँ बनावें। (वै० सा० सं०)

मात्राः—१ से २ गोली दिनमें ३ बार जल या मट्ठेके साथ देवें।

उपयोगः—यह रस योग्य अनुपानके साथ प्रयोजित करनेसे ज्वर, ग्रहणी, कफवृद्धि और उदर-शूलको नष्ट करता है।

यह औषध पाचक, दीपन किञ्चित ग्राही, शूलघ्न और किञ्चित उत्तेजक है। इसका परिणाम कोष्ठ और स्त्रियोंके प्रजनन यन्त्रपर उत्तम होता है।

इस रसका उपयोग पक्वातिसारमें अच्छा होता है। अतिसार और उसके साथ ज्वर और शूल होनेपर इसका अवश्य उपयोग करना चाहिये। विष्टब्धाजीर्ण या विदग्धाजीर्णके बाद अतिसार होनेपर प्रमादानन्द उत्तम कार्यकारी है। अतिसार रोग निवृत्त होनेपर पुनः कुछ अपथ्य सेवन करनेपर ग्रहणी, लघु अन्त्र और बृहदन्त्रमें विकृति होनेपर यह प्रमदानन्द उपयोगी होता है। शूलसह झागमय मल गिरना, साथमें कुछ रक्तभी जाना, ज्वर, तृषा तथा शौच होनेपर गुदा और उदरमें जलन होना आदि लक्षणयुक्त ग्रहणीमें प्रमदानन्द व्यवहृत होता है।

इस रसका उपयोग स्त्रियोंके गर्भाशय शूलपरभी होता है। कष्टार्त्तव (पीड़ितार्तव) आदि ऋतुदोष होनेपर यह अशोकारिष्टके साथ देनेसे बहुत अच्छा कार्य करता है।

मूल ग्रन्थकारने वाजीकरण रूपसे उपयोग लिखा है; परन्तु यह गुण अनुभवमें नहीं आया।

३. लघु शतपुष्पादि चूर्ण

विधिः—सौंफ, सोंठके टुकड़े और छोटी हरड़ तीनों ४०-४० तोले मिलाकर ७॥ तोले घीके साथ भूने। फिर कपड़-छान करके ६० तोले शक्कर और १० तोले सज्जीक्षार (सोडाबाई कार्ब) मिला लें। (राजवैद्य पं० रामचन्द्रजी शर्मा)

मात्रा —२ से ३ माशे दिनमें ३ बार जलके साथ।

उपयोगः—यह चूर्ण आमातिसार, नूतन और जीर्ण आम संग्रहणी, पेचिस आदिमें व्यवहृत होता है। यह संगृहीत आमको दूर करता है और आमकी उत्पत्तिको बन्द करता है। पहले दीपन, पाचन और ग्राही गुण दर्शाता है फिर अन्त्रका कुछ आकुञ्चन कराता है। जिससे उदरमें वायु हो, वहभी निकल जाती है और आंत सबल बनती है। जीर्ण आमदोष, वातजन्य अजीर्ण, मन्दाग्निका सदा केलिये नाश करता है। यदि रोग जीर्ण हो, तो २-४ महीने तक सतत सेवन करानेसे रोग निर्मूल होजाता है।

४. बृहच्छतपुष्पादि चूर्ण

प्रथम विधि —सौंफ, सोंठ, छोटीहरड़, गुलाबके फूल, बड़ी इलायचीके दाने, बेलगिरी, मरोड़फली और पोस्त डोडे, ये ८ औषधियाँ २०-२० तोलेके साथ घी १० तोला मिलाकर थोड़ा सेकें। फिर कूट कपड़-छानकर १ सेर शक्कर मिला लेवें।

सूचना —गुलाबके फूलको नहीं भूनें। (राजवैद्य प० रामचन्द्रजी शर्मा)

मात्रा —२ से ३ माशे दिनमें २ या ३ बार जलके साथ।

उपयोग —यह चूर्ण दीपन, पाचन और ग्राही है। अतिसार और प्रवाहिकामें रुके हुए मल आमको पचाता है, आमोत्पत्तिका ह्रास करता है और अन्त्रकी उष्णताको शमन करता है। जीर्ण संग्रहणीमें उदर पीड़ा होती रहती हो तथा बार-बार आम वृद्धि हो जाती हो, उसे यह चूर्ण दूर करता है।

दूसरी विधि —सौंफ सेकी हुई ४ तोले, सोंठ १ तोला, छोटी हरड़ ४ तोले, जीरा सेका हुआ १ तोला, आमकी गुठलीकी गिरी १ तोला, बेलगिरी १ तोला, पोस्तकी भूसी २ तोले, छोटी इलायचीके बीज १ तोला, मरोड़फली ४ तोले और मुनक्काके बीज सेके हुए १ तोला लें फिर कूट कपड़-छानकर १ सेर शक्कर मिला लेवें।

मात्रा —२ से ४ माशे दिनमें ३ से ४ बार जल या मट्ठेके साथ देवें।

उपयोग —इस चूर्णके सेवनसे आमातिसार, पेचिश और संग्रहणी दूर होते हैं। यह चूर्ण आमका पचन करता है, और अन्त्रप्रदाहको शमन करता है। अतिसारके लिये यह प्रयोग अति हितावह है। अतिसार चाहे जैसा बढ़ा हुआ हो या जीर्ण हो गया हो, यह सत्वर लाभ पहुँचा देता है। संग्रहणीमें इस चूर्णके साथ पञ्चामृत पर्पटीका सेवनकरानेसे प्रकृति जल्दी स्वस्थ होजाती है। छोटे बच्चे, सगर्भा, प्रसूता और वयोवृद्ध, सबको यह चूर्ण निर्भय रूपसे दिया जाता है। उपयोग करनेपर यह अति लाभदायक सिद्ध हुआ है।

५. खदिरादि चूर्ण

विधि —सफेद कत्था (Pulvis Catechu Co) ४ भाग, हीरादोखी गोंद (Kino) २ भाग, क्रमेरियाका मूल (Krameria root अभावमें मोलसरीकी छाल) २ भाग तथा दालचीनी और जायफल १-१ भाग लें। इन सबको मिला खरल कर लें।

मात्राः—२ रत्तीसे १ माशे दिनमें २ वार जलके साथ दें।

उपयोगः—यह चूर्ण प्रवल ग्राही है। अन्त्रस्थ श्लैष्मिक कलाकी शिथिलता और क्षीणतायुक्त अतिसार रोगमें यह चूर्ण प्रयुक्त होता है; किन्तु अन्त्रमें प्रदाह हो, तथा यकृत्की क्रियामें वैषम्य हो, तो इस चूर्णका प्रयोग नहीं किया जाता है।

सूचनाः—फिटकरी, चूनेका जल, धातव लवण, यवक्षार, अफीमक्षार (मोर्फिया) और इतर क्षारके साथ इसका प्रयोग नहीं किया जाता। उदरमें अति पीड़ा या रक्तस्राव अधिक होता हो, तो खड़िया मिट्टी और अफीमका मिश्रण करके दिया जाता है।

६. प्रवाहिकाहर योग

विधिः—एरंड तैल २॥ तोले और चूनेका जल १२ तोले लें। दोनोंको खरलमें मर्दन करनेसे श्वेत मिश्रण (Emulsion) तैयार होजाता है। फिर इलायची मिश्रणका अर्क (Tinct Cardamom Co.) ३० बूंद मिला लेवें। पश्चात् तीन विभाग करके दिनमें ३ समय पिला देनेसे प्रवाहिकाकी निवृत्ति होती है।

एरंड तैल विरेचक औषध है, किन्तु इसकी क्रिया मृदुभावसे और सत्वर प्रकाशित होती है। अतः बालक, वृद्ध, दुर्बल, सगर्भा, प्रसूता आदि सबको यह निर्भयतापूर्वक दिया जाता है। कोष्ठबद्धता, उदरशूल, अतिसार, प्रवाहिका, अर्श और गुदनलिकासंकोच आदि रोगोंमें अन्त्रस्थ मल, आम और विषका निर्गमन करानेके लिये यह व्यवहृत होता है। यदि विरेचन रूपसे एरंड तैलकी पूर्णमात्रा दी जाय, तो बहुधा ३-४ घण्टेमें यह विरेचन कराता है। इसके विरेचनसे कोई कष्ट नहीं होता। आमाशयपर इसकी कोई क्रिया प्रतीत नहीं होती। एरंड तैलका प्रभाव विशेषतः अन्त्रकी श्लैष्मिक कलापर होता है।

इस विरेचन गुणके अतिरिक्त इसमें यह विशेषता है, कि चूनेके जलके साथ मिश्रण बनाकर देनेसे अन्त्रकी श्लैष्मिक कलाके प्रदाहजन्य उग्रताका शमन कराता है। जिससे प्रवाहिका रोगमें जब १०-१० या २०-२० मिनटपर शौच जाना पड़ता हो, उदरमें सामान्य वेदना बनी रहती हो; थोड़े-थोड़े समयमें तीव्र मरोड़ा आकर दस्त होता रहता हो, दस्तमें आम जाती हो; कभी-कभी किंचित् रक्त भी जाता हो, दिन-रात क्रम चालू ही रहता हो तथा रोगीको निद्रा न मिलती हो, ऐसे समयपर अफीमयुक्त औषध देनेके पहिले अन्त्रसंशोधनकर लेना चाहिये। यह इमलशन चौथाई-चौथाई मात्रामें आध-आध घण्टेपर चटाते रहनेसे एक ही दिनमें अन्त्रकी शुद्धि और प्रदाहकी निवृत्ति होकर रोगीको शान्ति मिल जाती है। दुर्गन्धियुक्त मलके रोगाणुओंको यह औषध अति शीघ्र नाश करती है।

इस इमलशनका उपयोग आमाशयके मुद्रिका द्वार और अग्न्याशयमें रक्ताधिक्य होकर उग्रता आनेसे उत्पन्न अजीर्ण रोगमें भी किया जाता है। यह एक दिनमें ही उपकार दर्शाता है।

७ बीजकनिर्यासादि चूर्ण

(Pulvis Kino Co)

विधि —हीरादोखी गोंद (दम्मुलअखैन) ७५ तोले, अफीम ५ तोले और दालचीनीका कपड़-छान चूर्ण २० तोलेको मिला खरलकर बोतलमें भर लें। इस चूर्णमें ५ प्रतिशत अफीम मिलाया है।

मात्रा —२ से ११ रत्ती (५ से २० ग्रेन) दिनमें ३ समय जल या मट्ठेके साथ दें।

उपयोग —यह चूर्ण रक्तातिसार और पेचिशके नाशके लिये अति हितावह है। अतिसारमें जब अन्त्रकी श्लैष्मिककलाकी ग्रन्थियाँ पीड़ित होजाती हैं। तब यह चूर्ण महोपकारक है। हीरादोखी गोंदमें विशेष गुण यह है, कि अतिसार न होनेपर यह संकोचन क्रिया नहीं करता। बालक और नाज़ुक प्रकृतिकी स्त्रियोंको भी यह निर्भयतासे दिया जाता है। आमाशयमें दाह (Pyrosis) अर्थात् अपचनके हेतुसे आमाशयके भीतर अधिक परिमाणमें रसस्राव होनेपर इस चूर्णका अच्छा उपयोग होता है। दिनमें ३ बार ५-५ रत्ती देनेसे शीघ्र प्रतिकार होजाता है। साथमें मृदुविरेचन औषधकी योजना करनी चाहिए। एवं इस चूर्णके योगसे राजयक्ष्मा रोगमें रात्रिको आनेवाले अति प्रस्वेद, अतिसार और कास, तीनोंका दमन होजाता है।

सूचना —इस चूर्णके साथ क्षार, तिज़ाब, कसीस, रसकपूर, रौप्यक्षार (Argent. Ni'ras) और सुरमाके उपक्षार (Antimonium Tartaratum) का संयोग नहीं कराना चाहिये। नागशर्करा (Sugar of Lead) का संयोग लाभप्रद विदित हुआ है।

८. बिल्वादि चूर्ण

विधि —बेलगिरी, इसबगोलकी भूसी, कतीरा, बबूलका गोंद, हिहमोड़ा, बिहीदाना, रूमीमस्तगी और सोंठ, ये औषधियाँ ५-५ तोले और मिश्री ७० तोले लेवें।

(श्री पं० मुरारीलालजी वैद्यशास्त्री)

मात्रा —आधे मासे सुबह शाम बकरीके दूधके साथ और दोपहरको जलके साथ।

उपयोग —इस चूर्णके सेवनसे रक्तातिसार, पित्तातिसार और प्रवाहिका सत्वर दूर होते हैं। यदि खासीमें खफके साथ रक्त आना हो, तो उसे भी यह चूर्ण दूर करता है।

९. स्वादिष्ट गंगाधर चूर्ण

विधि —शुद्ध खड़िया मिट्टी २५ तोले, दालचीनी ७ तोले, बेलगिरी, जायफल, जावित्री और लौंग ३ ३ तोले, कपूर, नीलगिरीका तैल और छोटी इलायचीके दाने २-२ तोले और मिश्री ५० तोले लें। सबको मिलाकर अच्छी तरह खरलकर लेवें।

मात्रा —३ ३ मासे दिनमें ३-४ बार जलके साथ। बालकोंको २ या ४ रत्ती देवें।

उपयोगः—यह चूर्ण छोटे बालकों और बड़े मनुष्योंके अतिसारपर अच्छा लाभ पहुँचाता है। अपचनजनित, दुर्गन्धयुक्त दस्त उदरमें वायु संगृहीत रहना, मुरूड़ाक, उदरपीड़ा आदि दूर होते हैं। बालकोंके हरे-पीले दस्त, दांत आनेके समय दस्त और अपचनजनित दस्तपर भी लाभ पहुँचाता है।

१०. भूवनेश्वरी वटी

विधिः—शुद्धहिंगुल, दमुलखबैन, मोचरस, बेख अंजबार, राल सफेद, गुलाबके फूल, कपूर, अफीम, हींग, घीमें भूना हुआ सोनागेरू, इन सबको समान भाग लेकर बिहदानाके लुआबमें घोटकर चनेके बराबर गोलियाँ बनावें। (श्री० वैद्य रामचन्द्रजी)

मात्राः—१ से २ गोली, २ से ३ बार अनारके रस या मट्ठेके साथ।

उपयोगः—अतिसार, रक्तातिसार और प्रवाहिकामें अति लाभदायक है।

११. सिंहास्यादि वटी

बनावटः—वासा स्वरसघन ८ तोले, कपूर १ तोला, आकके मूलकी छाल और अफीम २-२ तोले लें। सबको मिला खरलकर आध-आध रत्तीकी गोलियाँ बना लेवें।

वासाघन बनानेकेलिये अड़ूसाके पत्तेके रसको कड़ाहीमें डाल मन्दाग्निपर पकावें और बार-बार सम्हाल पूर्वक चलाते रहें। रबड़ी जैसा गाढ़ा होजाने पर उतार लेवें।

मात्राः—१-१ गोली दिनमें १ या २ बार बकरीका दूध या जलके साथ देते रहें। विशेषतः रात्रिको सोनेके समय एक बार ही दीजाती है।

उपयोगः—यह वटी प्रवाहिकामें आमसह रक्तस्राव और अधिक कुन्थन, रक्तातिसार, कासरोगमें कफके साथ रक्त आना तथा राजयक्ष्मा रोगमें उरःक्षत होकर रक्तमिश्रित कफ निकलना आदि विकारोंको जल्दी दूर करती है।

पेचिशके अति तीक्ष्ण प्रकोपमें यह वटी जलके साथ देकर आध घण्टे बाद रालका चूर्ण २ माशे पक्के केलेके साथ देनेसे सत्वर लाभ पहुँचता है।

१२ प्रवाहिकाहर गुटिका

प्रथम विधिः—अफीम १ तोला, लोबान २ तोले और जाविश्री ३ तोलेको मिलाकर आध-आध रत्तीकी गोलियाँ बनावें।

मात्राः—१-१ गोली दिनमें ३ बार जल या मट्ठेके साथ दें।

उपयोगः—इस गुटिकाके सेवनसे भयंकर बढ़ा हुआ पेचिश, रक्तातिसार, संग्रहणी आदि रोग दूर होते हैं। पेचिशकी भयंकर पीड़ा एकही दिनमें शमन होजाती है।

द्वितीय विधिः—नीलाथोथा फूला १ तोला, अफीम २ तोले, सोहागेका फूला ४ तोले, अमृतासत्व ८ तोले, बीजाबोल ८ तोले लें। सबको मिला जलके साथ खरलकर आध-आध रत्तीकी गोलियाँ बना लेवें।

मात्रा —१-१ गोली दिनमें ३-४ बार जल, मट्ठे या बकरीके दूधके साथ देवें।

उपयोग —जीर्ण प्रवाहिका रोग, जिसमें आंतोंके भीतर क्षत हो जानेसे रक्त और पूयमय दस्त बार-बार होते रहते हैं, उसे दूर करनेके लिये यह गुटिका अति हितकारक है। एवं क्षयरोगके अतिसारपर भी यह वटी दीजाती है।

तृतीय विधि —आमकी गुठलीकी गिरी, बेलगिरी, जामुनकी गुठलीकी गिरी, मोचरस, खस, लोद, छोटी हरड़ और इन्द्रजौ, इन ८ औषधियोंको समभाग मिला, कूटकर कपड़-छान चूर्ण करें। इसे कुड़ेकी छालके अष्टमाश क्वाथके साथ १२ घण्टे खरलकर १-१ रत्तीकी गोलियाँ बनालें।

मात्रा —२ से ४ गोली दिनमें ३ बार जलके साथ देवें।

उपयोग —यह वटी प्रवाहिकाको दूर करनेमें बिल्कुल निर्भय है। छोटे बालक, सगर्भा, प्रसूता आदि सबको दे सकते हैं।

१३ प्रवाहिकाहर योग

विधि —बीज निकाली हुई लाल मिर्चको तवेपर डाल मन्दाग्निसे सेकें। जल न जाय, यह सम्हालें। फिर पीसकर कपड़-छान चूर्णकर लेवें।

उपयोग —१ से २ माशे तक भुनाज़ीरा, सैंधानमक और सोंठ मिले हुए मट्ठेके साथ दिनमें ३ बार देनेसे रक्तातिसार, आमातिसार तथा रक्तार्श और आममय पेचिश ३ दिनमें शमन होजाते हैं।

सूचना —केवल मट्ठेपर रोगीको रखें या भात और दही खानेको देवें। ज्वर हो तो इस औषधिका प्रयोग नहीं करना चाहिए।

---

(६) ग्रहणी

१. सुवर्णग्रहणीगजकेसरी

विधि —शुद्धपारद २ तोला, शुद्ध गन्धक २ तोला, कौड़ीभस्म १॥ तोला, सुवर्णभस्म १ तोला, सुवर्णमाक्षिक भस्म २ तोला, अभ्रक भस्म ४ तोला, शुद्ध वच्छनाग, अतीस, भुनी हुई हींग, मोचरस और ज़ीरा, ये प्रत्येक १-१ तोला लेवें।

पारद और गन्धककी २ तोले कज्जलीको थोड़े घीके साथ लोहेकी कड़ाहीमें मंदाग्नि देकर गलावें। फिर कौड़ी भस्म और माक्षिक भस्म १-१ तोला मिला भैंसके ताज़े गोबरपर केलेके पान बिछाकर उसपर डाल ऊपर दूसरा पान रख, दबाकर पर्पटी बना लेवें।

पारद १ तोलेके साथ सुवर्णभस्म १ तोला मिलाकर अच्छी तरह खरल करें। फिर गन्धक १ तोला मिलाकर कज्जली बनावें। उसे थोड़े घीके साथ मिला मन्दाग्निपर ... । इसमें ६ माशे कौड़ी भस्म मिलाकर उपर्युक्त विधिसे पर्पटी बना लेवें।

उक्त दोनों पर्पटी, माक्षिक भस्म १ तोला, अभ्रक भस्म और काष्ठादि औषधियों-का कपड़-छान चूर्ण मिला, खरलकर एक जीवकर लेवें। फिर अरणी मूल, मरोठी (भारतीय अकरकरा), चिरमीके पान, असगंध, पञ्चकोल (सोंठ, चव्य, पीपल, पीपला-मूल और चित्रकमूल), इन ९ द्रव्योंके पृथक्-पृथक् क्वाथोंकी १-१ भावना देकर १-१ रत्तीकी गोलियाँ बना लेवें। (र० र० स०)

मात्रा:—१ से २ रत्ती दिनमें २ या ३ बार घृतमें सेकी हुई सोंठ, सौंफके चूर्ण और शहदमें या रोगानुसार अनुपानके साथ देवें।

उपयोगः—यह सुवर्णग्रहणीगजकेसरी रस दीपन, पाचन, रुचिकर, ग्राही, हृदय पौष्टिक, कीटाणुनाशक, विषहर और ज्वरघ्न है। इसके सेवनसे आमोत्पत्ति बंद होती है, क्षुधा प्रदीप्त होती है। ज्वर रहता हो, तो दूर होता है। उदरमें अफारा आता रहता हो, तो उसकी उत्पत्ति नहीं होती, एवं अन्त्रकी शिथिलतासे मलशेष रहजाता हो, यथोचित उदरशुद्धि न होती हो, तो नियमित होती है। उदरमें सूक्ष्मकृमि हो, तो नष्ट होते हैं। रक्तमें कीटाणु विषकी वृद्धि हुई हो, तो वह जल जाता है। इन हेतुओंसे यह रस ग्रहणी, ज्वरसह संग्रहणी, संग्रहणी (Sprue), अन्त्रक्षय (Intestinal T. B), और राजयक्ष्मामें उत्पन्न क्षयज अतिसार आदिपर प्रयुक्त होता है। यह रस बालक, वृद्ध, युवा, सगर्भा, प्रसूता, सबको निर्भय रूपसे दिया जाता है। इसका प्रयोग गुजरात, सौराष्ट्र और कच्छमें अत्यधिक परिमाणमें होता है।

जीर्ण संग्रहणीः—जब जीर्ण संग्रहणी रोगमें मल कीटाणु और दुर्गन्धयुक्त श्वेत रंगका होजाता है और शरीर अति क्षीण होजाता है, तब प्रायः सुवर्णपर्पटी दी जाती है। किन्तु ज्वरावस्था, अग्निमान्द्य और आमप्रकोप होनेपर सुवर्णपर्पटी भी उचित प्रभाव नहीं दर्शा सकती। उन रोगियोंको सुवर्णग्रहणीगजकेसरी देनेसे सत्वर लाभ होने लगता है। यदि दुग्ध कल्पके साथ सुवर्णग्रहणीगजकेसरीका प्रयोग किया जाय और आवश्यकता अनुसार जातिफलादि चूर्णका सेवन कराया जाय तो लाभ सत्वर होताहै।

अन्त्रक्षयः—इस रोगमें अग्निमन्द होजाती है, अन्त्र अतिनिर्बल बन जाता है, ज्वर कुछ-न-कुछ अंशमें बना रहता है। शरीरनिस्तेज और कृश होजाता है। मल दुर्गन्धयुक्त थोड़ा-थोड़ा उतरता रहता है। ऐसी अवस्थामें हेमगर्भपोटली रस (द्वितीय विधि) और सुवर्णग्रहणीगजकेसरीका उपयोग होता है। ज्वर न हो, तो हेमगर्भपोटली-से भी लाभ पहुँच जाता है, किन्तु ज्वर, अफारा, अग्निमान्द्य और आमवृद्धि हो, तो इस रसका सेवन कराना ही विशेष हितावह माना जाता है।

संग्रहणीके कतिपय रोगियोंका यकृत् बहुत निर्बल होजाता है। फिर अन्त्रकी पचनक्रिया योग्य नहीं होती, अफारा होता है और मल दूषित होता रहता है। उन रोगियोंको यदि आमाशयका रसस्राव यथोचित होता हो, तो उनको विशेषतः पंचामृत पर्पटी तक्रके साथ दीजाती है। किन्तु रोग जीर्ण होजानेसे अन्त्रक्षयके लक्षण

उपस्थित हुए हों और अति निर्बलता आई हो, तो पञ्चामृतपर्पटीके साथ इस रसकी योजना की जाती है। इस रसके मिश्रणसे क्षयज लक्षण दूर होते हैं और अग्निवृद्धिमें अच्छी सहायता मिल जाती है।

प्रतिश्यायज कास —सूर्यके तापमें अधिक फिरने या कण्ठपर शीतल वायुका आघात होनेपर स्वरयन्त्रप्रदाह होकर प्रतिश्याय होजाता है। उसकी योग्य चिकित्सा न होनेपर आमाशयमें उग्रता पहुँच जानेसे बार-बार जीव मचलाता है, वान्ति होनेका भास होता रहता है और उदरमें आम संगृहित होजाता है। साथ-साथ किसी-किसीको फुफ्फुसोंमें कफ संचित होकर कफयुक्त कासकी प्राप्ति हो जाती है।

[Note —इस विकारपर सुवर्णग्रहणीगजकेसरी, सोहागाका फूला, शंख भस्म और कर्पूरादि चूर्ण घी और शहदके साथ मिलाकर दिया जाता है।]

पार्वतीय अतिसार —बदरीनारायण आदि पहाड़ोंकी तीर्थ यात्रा करनेपर अनेक रोगियोंको पार्वतीय अतिसार (Hill Diarrhoea) होजाता है। अन्त्रमें शोथ आ जानेसे उदरमें पीड़ा होती रहती है तथा मलके साथ अधिक झाग आता है। अन्न पचन योग्य नहीं होता और देह अति कृश होजाती है। इसपर इस रसकी योजना की जाती है। अनुपान रूपसे कुटजावलेह या आर्द्रकावलेह दिया जाता है।

पित्तातिसार —प्रसूता स्त्रीको गरम औषधि, अति उष्ण भोजन या सोंठ, अजवायन, गुड़ आदिका अधिक सेवन करानेपर पित्तप्रकोप होकर अतिसार होजाता है। दस्त पतला और गरम-गरम होता रहता है और शरीरनिर्बल होजाता है। उन स्त्रियोंको इस रसका सेवन लघुगंगाधर चूर्ण या जीरकाद्यरिष्टके साथ करानेपर ४-६ दिनमें लाभ होजाता है।

सुवर्णग्रहणीगजकेसरीमें पारद रसायन, कीटाणुनाशक और योगवाही है। गन्धक कीटाणुनाशक, दीपन, पाचन और ग्राहीगुण दर्शाता है। कौड़ी भस्म आमाशय, अन्त्र और यकृत्‌पर पौष्टिक और वातहर है। सुवर्णभस्म कीटाणु विषहर, मस्तिष्क और हृदयके लिये बल्य, अन्त्रपोषक और रसायन है। सुवर्णमाक्षिक, रक्तपौष्टिक, पित्तशामक, तथा आमाशय और यकृत्‌के लिये बलप्रद ग्राही रसायन और क्षयहर है। बच्छनाग प्रदाहहर और ज्वरघ्न तथा आमपाचक है। अतीस आदि औषधियाँ, दीपन पाचन और ग्राही हैं। हींगमें वातहर गुण भी अधिक है।

२. ग्रहणीगज केसरी

विधि —शुद्ध पारद, शुद्ध गन्धक, अभ्रक भस्म, शुद्ध हिंगुल, लोह भस्म, जायफल, बेलगिरी, मोचरस, शुद्ध बच्छनाग, अतिविष, त्रिकटु (सोंठ, कालीमिर्च, पीपल), धायके फूल, भांग, हरड़, कैथका गूदा, नागरमोथा, अजवायन, चित्रकमूल, अनारदाने, सोहागेका फूला, इन्द्रजौ, धतूरेके शुद्ध बीज और तालमखाने ये २६ औषधियाँ १-१ तोला और अफीम ५॥ तोले लेवें। पहले पारद-गन्धककी कज्जली करें।

फिर हिंगूल, भस्म, विष और अफीम क्रमशः मिलावें। पश्चात् शेष औषधियोंका कपड़-छान चूर्ण डाल धतूरेके पानके रसमें ३ दिन खरल करके आध-आध रत्तीकी गोलियां बनालें। (यो० र०)

इस रसायनके पाठमें 'पक्षेक्षण' के स्थानपर कितनेक ग्रन्थकारोंने 'यक्षेक्षण' मानकर लताकरंजके बीज और कितनोंने सर्जरस-राल अर्थ किया है। योगरत्नाकरके संशोधकने पक्षेक्षण अर्थात् २२ औषधियाँ लिखा है। कितनेक ग्रन्थकारोंने पक्षेक्षणका अर्थ तालमखाना माना है।

इस प्रयोगमें २२ या २३ औषधियाँ मानकर अफीम ८८ या ९२ तोले (चारगुना) लेनेका भ्रम होता है। एक ग्रन्थकारने २३ औषधियाँ १-१ तोला और अफीम ४ तोले लेनेको लिखा है। किन्तु वृद्धव्यवहारानुरोधसे हमने अफीम चतुर्थांश अर्थात् ५॥। तोले मिलायी है।

धतूरेके पत्तेको कूट स्वरस निकाल छानकर २-३ घण्टे रहने देवें। फिर ऊपर ऊपरसे नितरे हुए रसको उपयोगमें लेवें। बार-बार थोड़ा-थोड़ा स्वरस मिला-मिलाकर खरल करते रहें।

मात्रा:-१ से २ गोली दिनमें ३ बार जल, मट्ठे या रोगानुसार अनुपानके साथ देवें।

उपयोग:—यह रस योग्य अनुपानके साथ देनेसे ग्रहणीरोग, रक्तग्रहणी, आमग्रहणी, शूलसह जीर्ण अतिसार, तीव्रवेदनासह विसूचिका और असाध्य प्रवाहिकाको नष्ट करता है।

यह रस तीव्र विकारमें उपयोगी है। संग्रहणीके विकारमें तीव्र वेदनासह बार-बार अति परिमाणमें झागमय मल गिरता है, साथ-साथ रक्त और आम जाते हैं; तथा उदरमें तीव्र शूलभी रहता है। उदरमें शूल चलनेके साथ कुछ आम और रक्तमिश्रित जलमय मल गिरता है। पसलियाँ, उदर, कण्ठ और पैरोंके घुटनोंमें दर्द होता है, या ऐंठन-सी वेदना होती है। सर्वाङ्गमें शूल चुभाने सदृश पीड़ा होती है। कोढ़ी प्रदेश और आमाशयमें बार-बार खूब भींचनेका भास होता है, लघु अन्त्र और बृहदन्त्रके भीतर काटनेके समान पीड़ा होती है। कुछ खा लिया तो अच्छा लगता है, किन्तु खाया हुआ अन्न पचन होने (आमाशयमेंसे आगे जानेके) पर उदरमें अफारा आता है, या उदरमें गोले उठते हैं। रोगी थोड़े ही समयमें बिल्कुल दीन, कृश और निर्बल होजाता है। सब प्रकारके भोजन करनेकी इच्छा तो होती है, किन्तु कोई भी भोजनमें स्वाद नहीं आता। मनमें किसी प्रकारसे स्थिरता नहीं रहती। पीड़ा थोड़ी बढ़नेके साथ धैर्य मारा जाता है, देह गल जाता है। कभी-कभी मनकी निर्बलताके हेतुसे रोगी जहाँ बैठा हो, वहां ही उदरमें बलपूर्वक मरोड़ा आकर दस्त होने लगता है. उसे रोकनेकी शक्ति नहीं रहती। इस तरहकी बात प्रधान ग्रहणीपर इस रसका सत्वर प्रभाव पड़ता है।

इस रसमें धतूरा है, उसका महत्वका धर्म बृहदन्त्रकी श्लैष्मिक कलामेंसे होने वाले

रसोत्सर्गको नियमित बनानेका है। बड़े बड़े दस्त और उसके साथ पिच्छिल आमका स्राव होता है। यह दस्त अनिच्छापूर्वक या रोकनेके असामर्थ्यके हेतुसे बैठे हुए स्थानमें हो जाता है किसी-किसी रोगीको ये दस्त इतने जल्दी-जल्दी और अधिक होते हैं, कि एक घण्टेमें कम-सेकम २०-२५ बार शौच होजानेके उदाहरण मिले हैं। ऐसे अत्यन्त त्रास-दायक विकारमें यह रसायन पहले शूलको कम करता है फिर अपधातुका नियमन करके दस्तोंकी सख्याको घटाता है। यदि केवल अफीमके समान स्तम्भक औषध दिया जाय, तो उतना इष्ट परिणाम नहीं आता।

तीव्र ग्रहणीमें शूलके साथ रक्त अधिक बार जाता है। यह रक्त जानेके समय उदरमें मरोड़ा आता है। उदरको दबाकर रखना चाहिये, ऐसा रोगीको लगता है। उदरमें गुड़गुड़ आवाज़ होकर गोले उठनेके समान भासता है। रक्त गिरने और शौच होनेपर शरीरको सम्हालनेकी शक्ति नहीं रहती। लघुअन्त्र और बृहदन्त्र, दोनों रूईके समान नरम होजाते है। दोनों अति शिथिल भासते हैं। किसी-किसी रोगीको यह शिथिलता इतने तक बढ़ जाती है, कि किनछनेके साथ उसका दबाव गुदमार्गपर पड़कर काच बाहर निकल जाता है, जिसे गुदभ्रंश (Prolapsus ani) कहते हैं। साथ-साथ रक्त भी गिरता है। कितनेकको केवल रक्त गिरता है, तब कईयोंका रक्तमिश्रित जल गिरता है, अथवा मांसके धोवन सदृश लाल दुर्गन्ध-युक्त काला नीला, या अन्य वर्णका और उस-पर तैलके अणु अणु फैले हो, ऐसा जुलाब लगता है। रोगी अति व्याकुल होगया है, ऐसा विदित होता है। रोगीको रोगकी भीषणता वास्तविक स्थितिकी अपेक्षा अत्यधिक भासती है। उसके मनमें बड़ी भारी भीति घुस जाती है। इस स्थितिमें कूड़ेके छालके अर्कके साथ या इतर योग्य अनुपानके साथ ग्रहणीगज-केसरी देनेसे उत्तम लाभ होजाता है।

आमातिसार या आमसंग्रहणीमें पहले लङ्घन कराना चाहिये, परन्तु कितनेक रोगीयोंसे उपवास बिल्कुल सहन नहीं होता। उसे शोधन रूप लङ्घन कराना चाहिये। यह शोधन देनेमें स्नेह विरेचन (एरण्ड तैल) को यथार्थमें आयुर्वेदने मान्य नहीं किया स्नेह विरेचनसे आम गिर तो जाती है, किन्तु आमका पचन नहीं होता। इस हेतुसे आमोत्पत्ति कम नहीं होती। यह स्नेह विरेचनमें बड़ा दोष है। इस हेतुसे इस विकारमें दीपन,पाचन औषधिके साथ विरेचन देना चाहिये। पहले इन्द्रजौ, नागर मोथा, बिजौरा, अतीस आदि औषधिके साथ या कूड़ेकी छालके साथ अमलतासके गुदाके समान मृदु, संशोधक औषध देकर आमानुबन्धको होसके उतना कम कराना चाहिये। कोष्ठ शूल अत्यन्त तीव्र और उस शूलके साथ प्रत्येक वेगके साथ बहुत-सा आम गिरना, शूल निकलने या मरोड़ा आनेके साथ बिना प्रयत्न आमका अति स्राव होना, मुँहमें बार-बार जल छूटना, अरुचि, उबाक, किसीभी भोजनकी इच्छा न होना आदि लक्षण होते हैं। आम बार-बार बहुत पतला, केवल जल सदृश, झागदार और अति मात्रामें गिरता है। आममें रक्त हो, यह नियम नहीं। यदि रक्त हो, तो भी बहुत कम। आमस्राव और शूलके हेतुसे

रोगी थोड़े ही समयमें अति क्षीण होजाता है। रोगीको किसी तरह चैन नहीं पड़ता; भ्रमित-सा भासता है। एवं क्रोधी, आग्रही और दुर्बल मनवाला बन जाता है। इस अवस्थामें ग्रहणीगजकेसरी बहुत उत्तम कार्य करता है।

इन सब संग्रहणी विकारोंका पर्यवसान प्रवाहिकामें होता है; या कभी-कभी आरम्भसे ही प्रवाहिका होजाती है। यह विकार अति त्रासिदायक है। इस विकारमें अन्त्रकी शिथिलता मुख्य है और उसका संग्राहकत्व और पाचन शोषण आदि धर्म क्षीण होजाते हैं। इस हेतु से बार-बार शौच होते रहते हैं। जल भरे हुए हौद-का डाट हटा लेनेपर, उसमें-से शनैः-शनैः एक समान जल प्रवाह निकलने लगता है, उसतरह कोष्ठमेंसे धीरे-धीरे एक समान बुद-बुदेकी आवाज़सह जल स्राव होता रहता है। उदरमें मरोड़ा आता है, शूल चलता है, और दाह होता है, तृषा अधिक लगती है, जुलाब पिच्छिल जल-सदृश होता है; कभी-कभी उदरमें तीव्र मरोड़ा आनेसे रोगी अति व्याकुल होजाता है। शौचके वेगके समय बिल्कुल अधिकार नहीं रहता; अथवा शौचके लिये किनछनेकी बिल्कुल आवश्यकता नहीं रहती। शौच होनेमें ज़रा भी श्रम नहीं होता, कभी बिल्कुल मालूम भी नहीं पड़ता। इस तरहकी स्थिति रहने-से रोगी अत्यंत जर्जरित होजाता है। इस विकारपर उदरमें औषध देनेके साथ पिच्छा बस्तिका भी उपयोग करना पड़ता है। संग्रहणी रोगमें पिच्छा बस्तिका उपयोग अधिक होता है। प्रवाहिकाकी इस अवस्थामें ग्रहणीगजकेसरी, कोकम (आम चूर) के तैल या मक्खनको पतला बना उसके साथ प्रयुक्त करना चाहिये।

पिच्छा बस्ति—जवासा, कुश और कांस, सबकी जड़, शेमलका फूल, बड़के पत्राङ्कुर, गूलरके कोमल पत्ते, पीपल वृक्षके कोमल पत्ते, ये ७ औषधियाँ ८-८ तोले लें। इन सबको कूट २८४ तोले जल और १२८ तोले दूध मिलाकर पाक करें। दूध मात्र शेष रहनेपर उसे छान, उसमें सेमलका गोंद, लाजवन्ती, लालचन्दन, नीलोफर, इन्द्रजौ, प्रियंगु, कमलकी केसरका कल्क, घी, शहद और शक्कर मिलावें। दूध, कल्क, घी, शहद, शक्कर आदिकी मात्रा प्रकृति और शक्ति अनुसार निर्णित करें। इस बस्तिका प्रयोग करनेसे प्रवाहिका, गुदभ्रंश, रक्तस्राव और ज्वरकी निवृत्ति होती है।

परिणाम शूलके विकारमें वात दोषकी दुष्टि अधिक होनेपर शूल, विबंध और आध्मान विकार उपस्थित होते हैं, साथमें वान्ति होती है, वह शूलसह, दुर्गन्ध-युक्त, कसैली, या कुछ कड़वी और खट्टी होती है। और वान्ति होनेमें त्रास अधिक होता हो, तो ग्रहणीगजकेसरीका उपयोग करना चाहिये।

मध्यम कोष्ठमें उत्पन्न शूल विशेषतः लघु अन्त्र और बृहदन्त्रकी शिथिलतासे और उनके भीतर पिच्छिलता कम होजानेसे होता है। इस प्रकारका शूल होनेपर या वातवाहिनियोंके क्षोभ होनेपर शूल उपस्थित हुआ हो, तो ग्रहणीगजकेसरी उत्तम कार्य करता है।

उपर्युक्त विकारोंमें रोगी अति क्षीण होजाता है। बलक्षय, मांसमें क्षीणता और मानसिक निर्बलता आदि होते हैं। ऐसी परिस्थितिमें उसे अपना जीवन भाररूप भासता है। ग्रहणी, अतिसार आदि व्याधि कम होजानेके पश्चात् भी इस प्रकारकी शारीरिक और मानसिक निर्बल स्थिति भासती है। उसे नष्टकर पुनः शरीरको सम स्थितिमें लाने और धातुसाम्य प्रस्थापित करनेका उत्तमगुण इस ग्रहणीगजकेसरीमें अवस्थित है। इस रसमें रहे हुए अभ्रक भस्म और लोह भस्मका उपयोग इस शक्तिपातवाली अवस्थामें बहुत अच्छा होता है। इस औषधिमें द्रव्य संयोगका परिणाम विशेषतः लघुअन्त्र और बृहदन्त्र आदि पचन संस्थानपर और शोषपेन्द्रियपर होकर ऊपर लिखे हुए विशेष फलकी सम्प्राप्ति होती है। यह कज्जली-दरद कल्प आमाशय और अन्त्र दोनों स्थानोंपर कार्य करता है।

कज्जली जन्तुघ्न, योगवाही और रसायन है। हिंगुल-जन्तुघ्न, आमाशय दोषका नाशक, विशेषतः आमाशयस्थ कफका नियमन करने वाला है।

अभ्रक भस्म—बल्य, रसायन, सूक्ष्म स्रोतोगामी मनोदोषको नष्टकर धातु साम्य प्रस्थापित करने वाली है।

लोह भस्म—स्तम्भक, संग्राही, बल्य, रसायन, योगवाही और रक्तकी निर्बलताको नष्टकर रक्तको सबल बनाने वाली है।

जायफल—वेदनाहर, स्तम्भक और संग्राही है।

इलगिरी—आमदोषघ्न आमपाचक और उपलेपक है।

मोचरस—उपलेपक और स्तम्भक है।

वत्सनाग—वेदनाशामक और अन्त्रस्थ स्रावका नियमन कर्त्ता है।

अतीस—यकृत्को शक्ति देकर यकृत्पित्तका स्राव बढ़ाता है।

त्रिकटु—दीपन, पाचन और अन्त्रस्थ द्रव्योंकी विकृतिका नाशक है।

धायके फूल—स्तम्भक, संग्राही और अन्त्रस्थ द्रव्योंके बिगड़नेकी क्रियाको रोकने वाला है।

भांग—उत्तेजक, पाचक, संग्राही और दीपक है।

हरड़—रसायन, कसैली और पाचक है।

कैथ—स्तम्भक, कसैला और पाचक है।

नागरमोथा—आमपाचक और ग्राही है।

अजवायन—दीपन, पाचन और उदरस्थ संज्ञावाहिनियोंके सिरको बधिर बनाकर शूलको शमन करने वाला है।

चित्रकमूल—शैथिल्यनाशक, तीव्र पाचक और वातलोमशामक है।

अनारदाने—स्तम्भक और संग्राही हैं।

सोहागा—आक्षेपघ्न, दुर्गन्धहर और कीटाणु नाशक है।

इन्द्रजौ—यकृतपित्तविरेचक, अन्त्रको सबल बनाने वाला, आमपाचक तथा आमकी उत्पत्ति करने वाले कीटाणुओं एवं कृमिओंको नष्ट करने वाला है।

धतूरा बीज—वातप्रक्षोभनाशक, वेदनाहर और अन्त्रस्थ रसस्रावका नियमन करने वाला है।

तालमखाना—उपलेपक और बल्य है।

अफीम—तीव्र शामक, वेदनाहर, स्तम्भक और अन्त्रकी शिथिलताको नष्ट करने वाली है।

धतूरा रस—इस रसको धतूरेके रसकी भावना देनेसे, यह रस वेदनाशामक, स्तम्भक, तीव्र संग्राही, अन्त्रमें बढ़ी हुई अग्धातुका नियमन करने वाला, बल्य और रसायन बन गया है। (औ० गु० ध० शा० के आधारसे)

३. ग्रहणीवज्रकपाट

विधिः—पारद भस्म (रससिन्दूर), अभ्रक भस्म, शुद्ध गंधक, जवाखार, सोहागेका फूला, बच और कालीअरणीका मूल, इन, ७ औषधियोंको समभाग लें। पहले पारद भस्म, अभ्रक भस्म और गन्धकको मिलावें। फिर सोहागेका फूला, जवाखार तथा अन्तमें बच और अरणीकाचूर्ण मिलावें। पश्चात् कालीअरणीके क्वाथ, भांगरेका रस, नींबूका रस, तीनोंके साथ ३-३ दिन मर्दनकर गोला बनाकर सुखा लेवें। इस गोलेको कड़ाहीमें रख, उसपर सराव ढक गुड़ चूनेसे दृढ़ सधिलेप कर, मंदाग्निपर १॥ घण्टे तक स्वेदन करें। स्वाङ्गशीतल होनेपर इस रसके समान अतीस और उतनाही मोचरसका चूर्ण मिलावें। फिर भांगके फाण्टकी ७ भावना देकर २-२ रत्तीकी गोलियाँ बनालें। प्रत्येक भावनाके पश्चात् अच्छी तरह सुखा लें। फिर दूसरी भावना देवें।

(र० र० स०)

वक्तव्यः—रसयोगसागरमें भांगकी भावनाके स्थानपर कैथ और भांगकी ७ भावना देनेका एवं भावना देनेके पश्चात् धाईके फूल, इन्द्रजौ, नागरमोथा, लोध, बेलगिरी, गिलोय, इन ६ औषधियोंके रस या क्वाथकी भावना देनेको लिखा है; परन्तु हमें भांगकी भावनाके पश्चात् इन सब भावनाओंकी आवश्यकता नहीं भासती।

मात्राः—१ से २ गोली तक दिनमें ३ बार शहदके साथ देवें।

रसयोग सागरमें यह रस शहदके साथ देनेके पश्चात् ऊपर चित्रकमूल, सोंठ, वायविडंग, बेलगिरी, सैंधानमक, इन सबका कपड़-छान चूर्ण गुनगुने जलकेसाथ देनेका विधान किया है। यह अग्निमांद्यवालोंके लिये हितावह है।

उपयोगः—यह रस ग्रहणी रोगके नाश करनेमें वज्रके कपाट सदृश है। यह रसायन विशेषतः आमवातज ग्रहणी विकार, वातरक्तके पश्चात् उत्पन्न ग्रहणी रोग, ग्रहणीमें उत्पन्न आमवात, वातरक्त, आमसंचय और आमाजीर्णका अनुबन्ध होनेपर उत्तमकार्य करनेवाला है। यह अन्त्रमें उत्पन्न शोथको नष्टकर आमपचन करानेवाला रस है।

लजावन्ती, अतीस, लोध, कूड़ेकी छाल, इन्द्रजौ, दालचीनी, जायफल, सौंठ, बेलगिरी, धतूरेके शुद्ध बीज, दाडिमके छिलके, मजीठ, धायके फूल और कूठ, ये २८ औषधियाँ २-२ तोले लें। पहले पारद-गन्धककी कज्जली बना, फिर भस्म और शेष औषधियोंका कपड़छान चूर्ण मिला काले भांगरेके रसमें ७ दिन खरल करें। पश्चात् १ दिन बकरीके दूधमें घोटकर १ १ रत्तीकी गोलियाँ बना लेवें। (भै० र०)

मात्रा —२ से ४ गोली दिनमें २ या ३ बार देवें।

अनुपान —आम, विष और मलको बाहर फेंकनेके लिये बेलकी राब और गुड़ या बेलका शर्बत। उदरपीड़ा और अन्त्रके प्रकोपके शमनार्थ इसबगोलका लुआब। आम पचनार्थ १ तोला नागरमोथा और ३ माशे सोंठका क्वाथ।

उपयोग —यह रस उत्तम ग्राही और दीपन पाचन है। अतिसार, ज्वर, तीव्र रक्तातिसार, जीर्ण ग्रहणी रोग, शोथ, अर्श, आमवृद्धि, उदरशूल, वातावरोध, संग्रह ग्रहणी, लेसदार आम बढ़कर विविध विकार होना, तृषावृद्धि, दाह, उबाक, अरुचि, वमन, दारुण गुदभ्रंश, पक्वातिसार, अपक्वातिसार, नाना प्रकारके काले, लाल, पीले, मांस धोवनके समान वेदनासहित अतिसार, प्लीहावृद्धि, गुल्म उदररोग, मलावरोध, सूतिका रोग, उपद्रव रूप उत्पन्न रोग, प्रदर, वन्ध्यत्व, कामला, पाण्डु और २० प्रकारके प्रमेह आदि रोगोंको दूर करता है।

जब ग्रहणी रोगपर अफीमयुक्त औषधि देनी हो, तब ग्रहणीकपाट, ग्रहणीगज-केसरी आदि अनेक व्यवहृत होती है, किन्तु रोगीको अफीम अनुकूल न हो या अफीम देनेसे हानि पहुँचने की सम्भावना हो, तब यह पीयूषवल्ली रस निर्भयतापूर्वक दिया जाता है। इस रसमें आमको बाहर निकालने, पचाने और दस्त बाँधनेका गुण है साथ साथ उदरमें संगृहित वायुको निकालना वायुकी उत्पत्तिको रोकना और मलावरोध न होने देनेका उत्तम गुण अवस्थित है। यदि यह नागरमोथा और सोंठके क्वाथके साथ दिया जाय, तो आमकी उत्पत्तिको रोक देता है।

कितनेक रोगीको ग्रहणी रोग कुछ दिन रहता है और कुछ दिन कब्जका त्रास होता है। थोड़ी सी भूल होनेपर या ऋतु बदलने या जलवायु परिवर्तनसे स्वास्थ्य गिर जाता है। अपचनसह थोड़ा थोड़ा दस्त आता रहता है। तब ग्रहणी-वज्रकपाट और यह पीयूषवल्ली रस, दोनों उपकारक हैं। किन्तु ग्रहणीवज्रकपाटमें भांगकी ७ भावना होनेसे यह आमाशय रसका स्राव अधिक कराता है और तेज बनाता है। एवं अधिक ग्राही असर पहुँचाता है। तब इसके विपरीत इस पीयूषवल्ली रसमें भांगरेकी ७ भावना होनेसे यह आमाशय रसकी तीव्रताको कम करता है और यकृतको सबल बनाकर योग्य पित्तस्राव कराता है, तथा आमाशय और अन्त्रकी श्लैष्मिक कलाकी उग्रताको दूरकर स्निग्ध बनाता है। जिसमें अन्त्रस्थ अन्तःस्राव (कफप्रधान अन्धातुका स्राव) नियमित होजाता है।

नये ग्रहणी रोगमें आमावस्था होनेपर अपचन, अरुचि, आम बहुत गिरनेसे दस्तमें अति दुर्गन्ध आना, उदरमें भारीपन रहना, मुँह बेस्वादु रहना, आदि लक्षण होनेपर पहले बेलकी राख और गुड़का अनुपान देकर उदरस्थ आम, विष और मलको निकाल देना चाहिये। फिर नागरमोथा और सोंठके क्वाथका अनुपान देनेसे आमोत्पत्ति रुक जाती है और अतिसार या ग्रहणी रोग नष्ट होजाता है।

अतिसारमें वातप्रधान लक्षण—उदरमें वायुका अवरोध, हृदय, नाभि, गुदा आदिमें वातजनित पीड़ा होना, झागदार अरुण रंगका मल होना, बार-बार थोड़ा-थोड़ा शुष्क-सा दस्त आवाज़ और आमसह गिरते रहना आदि लक्षण उपस्थित होनेपर लघुअन्त्रका स्राव अधिक होता है। उस स्रावको तीव्र स्तम्भक औषधि अफीमप्रधान देकर सत्वर दबा दिया जाय, तो विकार अन्त्रमें रह जानेसे कुछ समयके पश्चात् अतिसार बढ़ जाता है या दोष धातुमें लीन होजाय तो भविष्यमें विविध विकार उत्पन्न करता है। अतः ऐसे प्रसंगोंपर अन्त्रकी श्लैष्मिक त्वचाकी उग्रताको शान्त कराकर अन्त्रस्रावकी उत्पत्ति कम करानी चाहिये। यह कार्य इस रससे उत्तम प्रकारसे होता है।

कफप्रधान संग्रहणीमें मल दुर्गन्धयुक्त, लेसदार गिरता है, उदरमें मंद-मंद वेदना होती है। अरुचि और जिह्वापर सफेद मैलकी तह बनी रहती है। कार्य करनेका उत्साह नहीं रहता ऐसे लक्षणयुक्त नये ग्रहणी विकारको यह रस सत्वर दूर करता है।

प्रवाहिका-युक्त ग्रहणीमें अन्त्रके भीतर उग्रता उत्पन्न होती है। किसी-किसी स्थान परसे श्लैष्मिक-कला निकल जाती है। फिर थोड़े-थोड़े समयमें उदरमें पीड़ा होकर दस्त लगते रहते हैं। बार-बार किनछना पड़ता है, अधिक बलसे किनछनेपर कांच बाहर निकलता है। ऐसे ग्रहणी विकारमें बेलकी राख और गुड़के साथ इस रसका प्रयोग किया जाता है। यदि उदरपीड़ा अति तीव्र हो, तो अफीमयुक्त औषध-ग्रहणी-कपाट या ग्रहणीगजकेसरी देना चाहिये। अतिसार और ग्रहणी रोग चिरकाल तक रहजानेपर बृहदन्त्र और गुदनलिकाकी अन्तस्त्वचामेंसे मलिन लेसदार, दुर्गन्धयुक्त आमका स्राव होता रहता है। जो मलके साथ बाहर निकलता रहता है। कितनेक निर्बल अन्त्र वालोंको कब्ज़ होनेपर उस आममें से विषका शोषण रक्तमें होता रहता है। जिससे मस्तिष्कमें उग्रता, व्याकुलता, अति निर्बलता आदि लक्षण उत्पन्न होते हैं। ऐसे रोगि-योंको यह रस बेलकी राख और गुड़के साथ देनेसे आश्चर्य-कारक लाभ पहुँचाता है।

यदि यकृत्पित्तका स्राव कम होनेसे दस्त सफेद, मैले रंगके, गाढ़े और दुर्गन्धयुक्त गिरते हों, ऐसे रोगियोंको यह रस नहीं दिया जाता। भांगप्रधान औषधि-ग्रहणीवज्र-कपाट, देना चाहिये।

यदि अतिसार या ग्रहणी रोगमें दस्तके साथ थोड़ा-थोड़ा रक्त गिरता हो और वेदना तीव्र न हो, गुदामें जलन होती हो; किसीको गुदभ्रंशभी होता है, तृषा अधिक लगती हो, उसपर यह रस सत्वर लाभ पहुँचाता है। आमभी साथ-साथ गिरता हो, तो

केवल गुड़के शर्बतके साथ और आम न हो, तो इसबगोलके लुआबके साथ देना चाहिये।

जीर्ण अतिसार या ग्रहणी रोगीकी पचनक्रिया निर्बल होनेसे अन्न-रस योग्य न बनता हो और आमकी उत्पत्ति अधिक होजाती हो, फिर उस हेतुसे कफ प्रधान प्रमेहकी प्राप्ति हुई हो, मूत्रमें चिपचिपा या तन्तु जैसा द्रव्य अथवा आटेके समान चूर्ण जाता हो, किंवा पेशाब गाढ़ा उतरता हो या पेशाब अधिक परिमाणमें आता हो, तथा देह निस्तेज होगई हो, तो इस रसका सेवन नागरमोथा और सोंठके क्वाथके साथ करानेसे आमोत्पत्ति बन्द होकर प्रमेह रोग दूर होजाता है।

विदेशके जलवायु या दूषित अन्न-जलके सेवनसे अतिसार होगया हो, थोड़ा थोड़ा दस्त दिनमें ४–६ बार आता हो, वृक्ककी विकृति होनेसे पेशाबकी उत्पत्ति कम होगई हो तथा पेशाब गाढ़ा होगया हो, फिर उसी हेतुसे शोथ, कभी कभी ज्वर आजाना, प्लीहा-वृद्धि, उदरमें भारीपन, मंद मंद पीड़ा, उदरमें वायु भरी रहना, अरुचि, उबाक, निस्तेजता और शुष्कता आदि लक्षण उत्पन्न हुए हों, तो इस रसका सेवन बेलकी राब या नागरमोथाके क्वाथके साथ कराना चाहिये।

यदि सूतिकाको अधिक सोंठ, अजवायन आदि खिलानेसे अपथ्य अन्नके सेवन करानेसे अतिसार होगया हो, पतले गरम-गरम दस्त होनेसे गुदामें जलन होती हो, तो इस रसका सेवन इसबगोलके लुआबके साथ करानेसे सत्वर लाभ पहुँचाता है।

५. स्वच्छन्दभैरव रस (ग्रहणी)

विधि —शुद्ध पारद १० तोले, शुद्ध गन्धक और सैंधानमक २०–२० तोले लें। पहले पारद–गन्धककी कज्जली करें। फिर सैंधानमक मिला, भिलावेके क्वाथमें ७ दिन तक खरल करें। फिर गोला बांध, छोटी हाडीमें रख, दृढ़ मुद्रामुद्रा करें। फिर वालुका यन्त्रमें रख, चूल्हेपर चढ़ाकर रात्रिभर मध्याग्नि देवें। (र० च०)

सूचना —क्वाथ केलिये भिलावेके २ २ टुकड़ेकर लेवें। भिलावेका तेल टुकड़े करनेके समय न लग जाय, यह सम्हालें। कदाच भिलावेका तेल लग जाय, तो उसपर तुरन्त नारियलका तेल लगा लेवें। क्वाथ करनेमें भिलावेकी बाष्प लगनेपर शरीर सूज जाता है, अतः सावधानी रखें।

अग्नि अत्यधिक न होजाय, यह सम्हालें। अन्यथा पारद उड़ जायगा। फिर औषधि योग्य प्रभाव नहीं दर्शा सकेगी।

मात्रा —१ से २ रत्ती दिनमें दो बार देवें।

उपयोग —यह स्वच्छन्द भैरव ग्रहणी, संग्रहणी, कफ, कास, श्वास, उग्र ज्वर, तन्द्रा और स्वल्प निद्रापर प्रयुक्त होता है। इसके सेवनसे शरीर पुष्ट तेजस्वी और स्फूर्ति वाला बनता है।

यह रस बृहदन्त्रमें संगृहीत आम और कफ दोषकी दुष्टिको नष्टकर उस स्थानको बल देता है और कफके चिपचिपापनको दूरकर स्रोतो रोधको नष्ट करता है।

मिश्र होजाता है।

संग्रहणीके विकारमें बहुत कम मल गिरना, मलके साथ झाग, चिपचिपे, गाढ़े श्लेष्मा समान आम जाना, अति किनछना, किनछनेसे अति उद्वेग होनेपर भी चैन न पड़ना, गुदभ्रंश होना, मलमिश्रित किम्वा मल-विरहित आम गिरना, मुँहसे उबाक और शुष्कता, क्वचित वमन हो जाना, उदरमें जड़ता, क्षुधा बिल्कुल नष्ट होना आदि लक्षण उपस्थित होनेपर संग्रहणी रोगमें इस रसका उत्तम उपयोग होता है।

कास और श्वास रोगमें कफका चिपचिपापन अधिक होनेपर कफकी गांठ सत्वर नहीं छूटती हो, खांस-खांसकर अति व्यथित होनेपर थोड़ा:सा गाढ़ा और लेसदार कफ निकलता हो; तो स्वच्छन्द-भैरवका प्रयोग अति हितकर होता है। तुलसीका रस या नागरबेलके पानका रस अनुपान रूपसे देना चाहिये।

कफाधिक सन्निपात ज्वरमें तन्द्रा उपस्थित होनेपर स्वच्छन्दभैरव अधिक उपयोगी होता है। आन्त्रिक सन्निपात (मधुरा) में उग्र तन्द्रा आनेपर यह रस दिया जाता है। इसतरह स्रोतोरोधके हेतुसे या अति निर्बलतासे निद्रानाश और स्वल्प निद्रा होनेपर भी यह रस हितकारक है।

इसके सेवनसे समग्र धातुपोषण क्रम व्यवस्थित होता है। इसी हेतुसे देह पुष्ट होता है। इसके प्रयोगसे मन भी शान्त होता है, सेन्द्रिय विष नष्ट होता है और शरीर मोटा बनता है। (औ० गु० ध० शा० के आधारसे)

संग्रहणी रोगमें आमाशयकी पचन-शक्ति अति मन्द होजानेसे मुँहमें चिपचिपापन रहता हो, भोजन कर लेनेपर उदरमें घण्टोंतक भारीपन रहता हो, उदरमें मन्द-मन्द पीड़ा बनी रहती हो, वायु भरी रहती हो, अपानवायु जल्दी न सरती हो तथा मलमें आम बहुत गिरता हो, ऐसे लक्षण उत्पन्न होनेपर यह रसायन व्यवहृत होता है।

सूचना:—यदि मस्तिष्कमें रक्त दबाववृद्धि होनेसे निद्रानाश हुआ हो, तो उस पर यह रस नहीं दिया जाता। शुष्क कासमे पीड़ित रोगीको यह रस न दें तथा पतले, गरम दस्तयुक्त अतिसार रोगमें भी इस रसका प्रयोग न करें।

६, राजवल्लभ रस

विधि:—जायफल, लौंग, नागरमोथा, दालचीनी, छोटी इलायचीके दाने, सोहागेका फूला, घीमें भुनी हुई हींग, जीरा, तेजपात, अजवायन, सोंठ, सैंधानमक, लोहभस्म, अभ्रकभस्म, ताम्रभस्म, शुद्धपारद, शुद्धगन्धक, कालीमिर्च, निसोत और रौप्यभस्म ये २० औषधियाँ ८-८ तोले लेवें। पहले पारद गन्धककी कज्जली करें। फिर भस्म मिलाकर एक जीव करें। पश्चात् शेष औषधियोंका कपड़-छान चूर्ण डाल, आँवलेके स्वरसकी ७ भावना देकर २-२ रत्तीकी गोलियाँ बना लेवें। इसे अन्य ग्रन्थकारोंने नृपतिवल्लभ संज्ञा भी दी है। (र० चं०)

मात्रा:—२-२ गोली दिनमें ३ बार जल या मट्ठेके साथ देवें।

उपयोग—यह राजवल्लभ ग्रहणी रोगके लिये अति उपकारक है। उदर शूल, गुल्म, दारुण आमवात, हृदयशूल, पार्श्वशूल, नेत्रशूल, हलीमक, शिर शूल, कटिशूल, आनाह (मलावरोध), आठ प्रकारके शूल, उदरकृमि, कुष्ठ, दाद, वातरक्त, भगंदर, उपदंश, अतिसार, ग्रहणी, अर्श और प्रवाहिका आदि रोगोंको नष्ट करता है।

यह औषध दीपन, आमपाचक, कफघ्न, ग्राही, वेदनाशामक और रसायन है। यह यकृतको बल प्रदान करता है और अन्त्रस्थ सेन्द्रिय विष और कीटाणुओंको नष्ट करता है। यह अति निर्भय औषधि है। सगर्भा, प्रसूता, बालक और निर्बल प्रकृतिवालोंको दे सकते हैं। यह आमाशय और अन्त्र, दोनों स्थानोंकी पचन विकृतिको सुधारता है। यह अपचन और अग्निमान्द्यजनित विकार तथा यकृत्के विकारसे उत्पन्न अतिसार और ग्रहणी रोगको दूर करता है। यकृत्वृद्धि होकर या शोथ आकर योग्य पित्त-स्राव न होता हो, पचन क्रिया योग्य कार्य न करती हो, दस्त सफेद और दुर्गन्धयुक्त आता हो, दिनमें ३-४ बार थोड़ा-थोड़ा कुछ पतला दस्त होता हो, कभी दस्तमें छोटे-छोटे कृमि भी निकलते हों, जिह्वापर मलकी तह रहती हो, कभी कब्ज रहकर दस्त मैलेरंगका होजाता हो, उदरमें भारीपन रहता हो, वायु बार-बार उत्पन्न होती हो, ऐसे लक्षणयुक्त अतिसार और ग्रहणी रोगमें यह रस अच्छा लाभ पहुँचाता है।

कतिपय रोगियोंको अतिसार कुछ दिनोंतक रहता है और कुछ दिनोंतक नहीं रहता। पचन क्रिया मंद रहती है, दस्तमें आम जाता रहता है। उदरमें पीड़ा बारम्बार उत्पन्न होजाती है शरीर अशक्त और कृश होजाता है। आम अधिक संगृहित होनेपर एरण्ड तैलका विरेचन लेना पड़ता है अन्यथा विविध उपद्रव उपस्थित होते हैं। ऐसे रोगियोंको यह राजवल्लभ रस, प्रवालपञ्चामृत और शुद्ध कुचिला (१ रत्ती) के साथ मिलाकर दिया जाता है।

यकृन्मूत्र (मूत्र बूँद-बूँद टपकने) की उत्पत्ति अन्त्रस्थ पचन क्रियाकी विकृतिसे भी होती है। ऐसे रोगीको प्राय दिनकी अपेक्षा रात्रिको बार बार पेशाबके लिये उठना पड़ता है, रोग जीर्णरूप धारण करे, तब दिनमें भी पेशाब बूँद-बूँद आता रहता है, कुछ जलन भी होती है, साथमें अग्निमान्द्य, पेशाब पीला होना, यकृद्वृद्धि, हृदय फूला हुआ, मलावरोध, निर्बलता, खट्टे पदार्थ खानेपर साधों साधोंमें दर्द, स्वप्नदोष आदि लक्षण उपस्थित होते हैं। इस रोगपर इस राजवल्लभ रसका सेवन करानेसे यकृत् सबल बनकर फिर थोड़ेही दिनोंमें लाभ पहुँच जाता है। अति पुराना रोग भी जड़ मूलसे दूर होजाता है। घी पचन हो, उतना खाना चाहिये, दहीका त्याग करना चाहिये। धूम्रपानका व्यसन हो तो, होसके उतना कम करदेना चाहिये। प्रारम्भमें यह रस त्रिकटु और शहदके साथ दिनमें २ या ३ बार देना चाहिये।

आमवात रोग एक बार होजानेपर अनेकोंको आजीवन बार-बार त्रास देता रहता है। मधुर पदार्थ खाने या शीत लगनेपर भिन्न भिन्न स्थानोंके साधोंमें दर्द

होजाता है। दूषित ग्रहणीवालोंको पतले दस्त भी होते रहते हैं। ऐसे रोगियोंको पथ्यपालनसह इस रसका सेवन कराया जाय, तो अच्छा लाभ पहुँचता है। हृदयमें शिथिलता हो, तो इस रसके साथ कुचिला १-१ रत्ती मिला देना विशेष गुणकारक होता है।

वातवाहिनियोंकी विकृति होनेपर पार्श्वशूल, हृदयशूल, मस्तिष्कशूल, चक्षुःशूल आदि उत्पन्न होते हैं। यदि शूलके रोगीको आमवृद्धि भी हो, तो इस रसका सेवन करानेपर शूल निवृत्त होता है और वातवाहिनियोंकी विकृति भी दूर होजाती है। इस रसके साथ शृंगभस्म, हींग और शुद्ध कुचिलेका चूर्ण मिला देनेसे अधिक लाभ पहुँचता है।

७. रत्नविजय पर्पटी

विधिः—शुद्ध गन्धक ४ तोले, शुद्ध पारद २ तोले, रौप्य भस्म १ तोला, स्वर्ण भस्म ६ माशे, वैक्रान्त भस्म और मुक्ता पिष्टी ३-३ माशे लें। पारद गन्धककी कज्जली करके शेष भस्में मिलाकर एक दिन मर्दन करें। फिर घी लगी हुई कड़ाहीमें रसपर्पटीके समान रसकर गोबरपर रखे हुए केलेके पत्तेपर पर्पटी बना लें।

(श्री पं० यादवजी त्रिकमजी आचार्य)

मात्राः—१ से ३ रत्ती दिनमें २ या ३ बार शहद, चतुःसम चूर्ण और शहद या ज़ीरा और शहद अथवा बकरीके दूध, मट्ठे; मीठे अनारके रस, मोसम्मीके रस या मीठे अंगूरके रसके साथ अथवा प्रवालपिष्टी, अमृतासत्व, कमलककड़ीके चूर्ण और बेलगिरीके चूर्णके साथ देवें।

चतुःसमः—लौंग, भुना ज़ीरा, सोहागेका फूला और जायफल समभाग मिला-चूर्णकर लेनेपर चतुःसम चूर्ण तैयार होता है।

उपयोगः—यह रत्नविजय पर्पटी कष्टसाध्य संग्रहणी, अन्त्रक्षय, राजयक्ष्मामें उपद्रवयुक्त ग्रहणी, शोथ, अतिसार, पाण्डुरोग, प्लीहावृद्धि, जलोदर, परिणाम शूल, अम्लपित्त, हृद्रोग, जीर्ण विषम ज्वर तथा कफ और वातप्रकोपसे उत्पन्न अन्य रोगोंको नष्ट करती है। एवं शरीरको पुष्ट और सबल बनाती है। पर्पटीके अन्य प्रयोगोंसे लाभ न हुआ हो, ऐसे रोगियोंको इस पर्पटीके सेवनसे लाभ मिल जानेके उदाहरण मिले हैं। दुग्ध-कल्प या तक्र-कल्प, इनमेंसे किसीका आश्रय लिया जाता है।

जब ग्रहणी रोगमें भोजनकर लेनेपर तुरन्त दस्त लग जाते हैं। आमाशय और अन्त्र, भोजनको अधिक बार धारण नहीं करते। जिससे बड़े-बड़े १-२ पीले दस्त गरम-गरम तुरन्त आजाते हैं। फिर उसी हेतुसे देह शुष्क और निस्तेज होती जाती है। शरीरका वज़न धीरे-धीरे घटता जाता है। किसी-किसी रोगीको कुछ ज्वर भी रहता है। अन्त्रमें रोगकीटाणु (यक्ष्माकीटाणु) की आबादी होजाती है। फिर रोग सुदृढ़ होनेपर कास-श्वास आदि उपद्रव भी उपस्थित होते हैं। शरीर कृश और निस्तेज होजाता है

उसपर उपद्रवोंकी प्राप्ति होनेके पहले दुग्धकल्पके साथ सेवन करानेसे यह पर्पटी अमृतके समान उपकार दर्शाती है।

ताम्रप्रधान पञ्चामृत पर्पटीका सेवन तक्र कल्पके साथ कराया जाता है। दुग्धकल्पके साथ कभी नहीं। जिन रोगियोंको तक्र अनुकूल न हो या राजयक्ष्मा, अन्त्रक्षय, अम्लपित्त, रक्तपित्त, दाह, शोथ, कफप्रकोप या सुजाक आदि विकार हो, उनको संग्रहणी-शमनार्थ रसविजय पर्पटी दुग्धकल्पके साथ देनेपर लाभ पहुँच जाता है।

संग्रहणी रोगमें जिह्वासे लेकर गुदनलिका पर्यन्त, आमाशय, अन्त्र आदि समस्त संस्थाकी श्लैष्मिक झिल्लीपर सूक्ष्म-सूक्ष्म स्फोट होजाते हैं। इस प्रकारके विकारमें जिह्वा लाल काटेवाली भासती है, दस्त बड़े-बड़े, सफेद या पीले रंगके और गरम गरम लगते हैं। खाया हुआ अन्न बिना पचन हुए कच्चा ही निकल जाता है। यदि दस्त सफेद रंगके हों, तो यकृत् पित्तका अभाव मानकर पञ्चामृत पर्पटी देनी चाहिये। यदि दस्त पीले रंगके हों, तो इस रसविजय पर्पटीकी योजना करनी चाहिये।

सूचना —यदि ज्वर अधिक हो या पर्पटी देनेपर ज्वर अधिक होजाय, तो मात्रा कमकर देनी चाहिये।

८. ग्रहणीशार्दुल रस

विधि —शुद्ध पारद और शुद्ध गन्धक १-१ तोला, सुवर्णभस्म १॥ माशा, लौंग, नीमके पान, जायफल, जावित्री और छोटी इलायचीके दानेका चूर्ण १-१ तोला ले। सबको अनारदानेके रसमें १२ घण्टे खरलकर मोतीकी बड़ी दो सीपोंके भीतर लेप करके सम्पुट करें। ऊपर ३ कपड़ मिट्टी करके पुटपाक कृतिसे पाक करें। स्वाग शीतल होनेपर निकालकर पीस लेवें। (र० सा० स०)

मात्रा —१ से २ रत्ती दिनमें ३-४ बार भुने जीरेका चूर्ण और शहदके साथ। उदरमें पीड़ा होती हो, तो कुटजारिष्टसे।

उपयोग —ग्रहणीशार्दुल प्रबल ग्रहणीरोग, सूतिकारोग, अर्श, अग्निमान्द्य, कास, श्वास, अतिसार और आमशूलको दूर करता है और बल वीर्यकी वृद्धि करता है।

ग्रहणीशार्दुल रसका निर्माण सर्वाङ्गसुन्दर रसके पाठमें किञ्चित् अन्तर करके किया है। सर्वाङ्गसुन्दर रसमें रसपर्पटी मिलायी है। पुटपाककी तरह पाक करनेपर कज्जली रसपर्पटीमें रूपान्तरित होजाती है। इसमें सुवर्ण मिलाकर इसके कीटाणुनाशक गुणको बढ़ाया है। सर्वाङ्गसुन्दर रसका जो कार्य है, वे सब करते हुये यक्ष्माकीटाणु और कीटाणुविषको नष्ट करनेका महत्वका कार्य यह रस कर देता है। अतः सर्वाङ्गसुन्दर रसकी अपेक्षा इसमें इतनी विशेषता है। इसी तरह यह प्रसूताके ज्वरयुक्त ग्रहणी रोगमें मस्तिष्क और हृदयका संरक्षण करता है। शेष गुणधर्म सर्वाङ्गसुन्दर रसमें (रसतन्त्रसार व सिद्धप्रयोग संग्रह प्रथम-खण्डमें) लिखा है।

९. अष्टामृत पर्पटी

विधिः—शुद्ध पारद, लोह भस्म, अभ्रक भस्म, ताम्र भस्म, वङ्ग भस्म, रौप्य भस्म और जहरमोहरा पिष्टी, ये ७ औषधियाँ ४-४ तोले और शुद्ध गन्धक ८ तोले लेवें। पहले पारद गंधककी कज्जली करें। फिर भस्म मिला घीवाली कड़ाहीमें मंदाग्निपर रसकर (गोबर फैलाकर ऊपर रखे हुये) केलेके पानपर पर्पटी बना लेवें।

मात्राः—१ से ३ रत्ती दिनमें २ बार शहद, पीपल या लौंग, सोहागेका फूला, जायफल और दालचीनीके समभाग चूर्ण मिलाकर ४ रत्तीके साथ देवें।

उपयोगः—यह पर्पटी जीर्ण संग्रहणी रोगमें व्यवहृत होती है। यह आमाशयमें वेदना, वान्ति होना, अन्त्रमें मंद-मंद पीड़ा बनी रहना, दस्तमें दुर्गन्ध आना, शरीर निस्तेज और कृश होजाना, अग्निमान्द्य, अरुचि, प्लीहावृद्धि और मंद-मंद ज्वर आदि लक्षणोंसह ग्रहणी रोगको दूर करती है।

१०. लवङ्ग द्रावक

विधिः—लौंग, अतीस, नागरमोथा, पाठा, बेलगिरी, धनियाँ, धायके फूल, मोचरस, ज़ीरा, लोध, इन्द्रजौ, खस, राल, काकड़ासिंगी, सैंधानमक, सोंठ, पीपल, खैरैटीका मूल, यवक्षार, अफीम और रसोंत, ये २१ औषधियाँ १-१ तोला तथा लौंग २१ तोले लें। सबको मिला कपड़-छान चूर्णकर पोस्त डोडेके क्वाथकी ७ भावना देकर २-२ रत्तीकी गोलियाँ बना लेवें। (भै० र०)

मात्राः—१ से २ गोली दिनमें ३ बार जलके साथ दें।

उपयोगः—यह वटी चिरकारी ग्रहणी, शोथयुक्त पाण्डु, कामला, पक्व अतिसार, आमवृद्धि और उससे उत्पन्न विविध विकार, मन्दाग्नि और दारुण अम्लपित्त आदि रोगोंका नाश करती है।

यह वटी दीपन, पाचन, ग्राही और स्तम्भन है। जब अतिसार रोगमें मुखपाक, खट्टी डकार आना, छातीमें दाह, उदरमें भारीपन रहना और दिनमें ३-४ दस्त उदर पीड़ासह होना आदि लक्षण उत्पन्न होते हैं, तब यह वटी अच्छा लाभ पहुँचाती है।

इस वटीके सेवनसे आमाशयकी उग्रताका शमन होता है, आमोत्पत्ति बन्द होती है तथा अन्त्रगत वेदना दूर होती है। यदि दस्तमें रक्त जाता हो, तो वह भी बन्द होजाता है।

ग्रहणी विकार और जीर्ण अम्लपित्त रोगमें इस वटीके साथ १-२ रत्ती अभ्रपर्पटी मिला देनेसे सत्वर लाभ पहुँचता है।

मूत्रपिण्डोंके शोथ या विकृतिके हेतुसे रक्तमें रहा हुआ विष बाहर नहीं निकल सकता। फिर शोथ और निस्तेजता (पाण्डु) बढने लगते हैं। ऐसे शोथमय पाण्डुपर यह वटी मूत्रल अनुपान (या पुनर्नवारिष्ट या पुनर्नवासव) के साथ देनेपर अच्छा लाभ पहुँचाती है।

११. कामचार मण्डूर

विधिः—मण्डूर भस्म ४० तोलेको लोहेकी कड़ाही या खरलमें डाल भृङ्गराज स्वरसमें ७ दिन मर्दन करें। फिर जितना वज़न हो उससे आधा पीपलका चूर्ण मिलाकर घोट लें। (आ० स०)

मात्रा —२ से ४ रत्ती दिनमें २ या ३ बार दूने गुड़के साथ मिला मसूर और बेलगिरीके क्वाथके साथ देवें।

उपयोग—यह मण्डूर जीर्ण अतिसार, संग्रहग्रहणी, आमवात और अम्लपित्तको नष्ट करता है तथा पुष्टिप्रद और अग्निप्रदीपक है।

जब आमाशयका पित्त तेज़ होजानेसे खट्टी डकार और वान्ति होती रहती है तथा यकृत् निर्बल बन जानेसे अन्त्रके भीतर पचन क्रिया योग्य नहीं बनती, जिससे आमविषकी वृद्धि होकर अपचन, आमवात, अम्लपित्त, यकृत्का शोथ, उदरवात, संग्रहग्रहणी, शिरदर्द, नेत्रकी निर्बलता, चक्कर आना, बाल सफेद होजाना, पाण्डु और त्वचा रोग आदि विकार उत्पन्न होते हैं। इन सब विकारोंपर यह रस अद्भुत लाभ पहुँचाता है।

मण्डूरको भांगरेके रसमें ७ दिन खरल करनेसे, वह आमाशय और यकृत्की क्रियाको सुधारता है। फिर पचन क्रिया सबल बनती है और निर्बलता दूर होकर शक्ति बढ़ने लगती है। छोटे बालक, सगर्भा, प्रसूता और वृद्ध आदिको यह मण्डूर निर्भयता पूर्वक दिया जाता है।

बालकोंकी पचन क्रिया विकृति, प्लीहावृद्धि और हृदयकी निर्बलताजनित शोथ होनेपर कामचार मण्डूर पुनर्नवाके क्वाथ या पुनर्नवारिष्टके साथ देनेसे थोड़ेही दिनोंमें लाभ होजाता है।

संग्रहग्रहणी रोगमें रसमण्डूरके साथ सुवर्ण पर्पटी या अभ्र पर्पटी मिलाकर कम मात्रामें लम्बे समयतक सेवन कराया जाता है।

१२. ग्रहणीहर योग

विधि —श्योनाककी छाल २० तोलेको चावलके धोवनमें पीसकर कल्क करें। कल्कको गीले चौलड़े कपड़ेमें लपेट ऊपर १-१ अंगुल कपड़मिट्टी करें। पश्चात् निर्धूम गोबरीकी अग्निमें दबाकर बाटीके समान सेक लेवें। मिट्टी लाल होकर पक जाने पर बाहर निकाल कपड़ेको खोल कल्कको किसी मोटे कपड़ेमें लपेट दबाकर रस निचोड़ लें।

मात्रा —॥-॥ तोला दिनमें ३ बार देवें। साथमें लवङ्ग चतुःसम (लौंग, जायफल, ज़ीरा और सोहागेका फूला) १-१ माशा शहदके साथ देते रहें।

उपयोग —यह योग जीर्ण ग्रहणी, जीर्ण अतिसार और प्रवाहिकामें अच्छा लाभ पहुंचाता है। पथ्यका आग्रहपूर्वक पालन करना चाहिये। यदि अन्नपचन हो, तो खिचड़ी

आदि हल्का भोजन देवें। ज्वर हो या अन्नपचन न होता हो, उदरमें वायु उत्पन्न होती हो और सरलतासे अपानवायु न सरती हो, तो रोगीको मट्ठेपर रखना चाहिये। इस योगके साथ निम्नानुसार बाह्य परिमार्जन करते रहनेसे सत्वर लाभ पहुँचता है।

बहिः परिमार्जनः—आँवलेको जलमें पीसकर कल्क करें। फिर रोगीको चित लेटा नाभिके चारों ओर आलवाल किनारी बांध बीचमें अदरकका रस भरें। इसतरह रोज़ आध घण्टेतक लेटाये रखनेपर नदीके पूरके समान प्रवृद्ध अतिसार भी रुक जाता है, अग्नि प्रदीप्त होती है तथा उदरवात शमन होजाती है।

१३ बबूलाद्यरिष्ट

विधिः—बबूलकी अन्तर छाल ८०० तोलेको ४०९६ तोले जलमें मिलाकर क्वाथ करें। चतुर्थांश जल शेष रहनेपर उतारकर छानलें। फिर १२०० तोले गुड़ और ६४ तोले धायके फूल, एवं पीपल ८ तोले तथा जायफल, शीतल मिर्च, दालचीनी, छोटी इलायचीके दाने, तेजपात, नागकेशर, लौंग, कालीमिर्च, इन ८ औषधियोंके ४–४ तोले जौकूट चूर्ण को मिला देवें। फिर चीनीके बोयाममें भर एक मासपर्यन्त बन्द रखें। आसव परिपक्व होनेपर छानकर बोतलोंमें भर लेवें। (भै० र०)

मात्राः—१। से २॥ तोलेतक दिनमें २ बार समान जल मिलाकर भोजन कर लेनेपर पिलावें।

उपयोगः—यह अरिष्ट क्षय, कुष्ट, अतिसार, प्रमेह, श्वास और कासको नष्ट करता है।

इस बबूलाद्यरिष्टमें मुख्य औषध बबूलकी अन्तरछाल है। यह कसैली, स्तम्भक और अन्त्रस्थ दोषनाशक है। यह अरिष्ट पक्वातिसार और जीर्ण संग्रहणीमें स्तम्भक गुणके लिये व्यवहृत होता है। बारबार बड़े जुलाब होकर थकावट आजाने और अग्निमान्द्य आदि लक्षण होनेपर यह अरिष्ट हितावह है।

कुष्ठके विकारमें कोष्ठस्थ विष, प्रमुख कारण होनेपर बबूलाद्यरिष्टका उपयोग होता है। शरीरपर काले दाग होजाना, स्थान–स्थानपर कील गाड़नेके समान रोमरन्ध्रोंके मूलमें मोटापन आजाना आदि लक्षण होनेपर बबूलाद्यरिष्ट अच्छा लाभ पहुँचाता है।

अच्छमेह, लालामेह और हस्तिमेह विकारपर यह अच्छा कार्य करता है। इसका उपयोग मधुमेहमें चाहिये वैसा नहीं होता। (औ० गु० ध० शा० के आधारसे)

इस अरिष्टमें मुख्य औषधि बबूलकी छाल है। उसमें गोंद और टेनिक एसिड (Tannic Acid) अधिक मात्रामें रहते हैं। जिससे यह छाल ग्राही गुण करती है तथा आम, रक्त, अतिसार, पित्त और दाहका नाश करती है। कास रोगमें श्वासप्रणालिकाकी उग्रताका शमन करती है। एवं मूत्रकृच्छ्र, अश्मरी, मूत्रेन्द्रिय और जननेन्द्रियकी प्रादाहिक उग्रताका ह्रास करती है। इसीतरह इस छालमें कुष्ठ, कृमि और विषको नष्ट करनेका गुण भी अवस्थित है। वंगसेनने जलोदर रोगपर भी बबूलकी छालके क्वाथकी योजना की है।

११. कामचार मण्डूर

विधिः—मण्डूर भस्म ४० तोलेको लोहेकी कड़ाही या खरलमें डाल भृङ्गराज स्वरसमें ७ दिन मर्दन करें। फिर जितना वज़न हो उससे आधा पीपलका चूर्ण मिलाकर घोट लें। (आ० सं०)

मात्रा—२ से ४ रत्ती दिनमें २ या ३ बार चूने गुड़के साथ मिला मसूर और बेलगिरीके क्वाथके साथ देवें।

उपयोग—यह मण्डूर जीर्ण अतिसार, संग्रहग्रहणी, आमवात और अम्लपित्तको नष्ट करता है तथा पुष्टिप्रद और अग्निप्रदीपक है।

जब आमाशयका पित्त तेज़ होजानेसे खट्टी डकार और वान्ति होती रहती है तथा यकृत् निर्बल बन जानेसे अन्त्रके भीतर पचन क्रिया योग्य नहीं बनती, जिससे आमविषकी वृद्धि होकर अपचन, आमवात, अम्लपित्त, यकृत्का शोथ, उदरवात, संग्रहग्रहणी, शिरदर्द, नेत्रकी निर्बलता, चक्कर आना, बाल सफ़ेद होजाना, पाण्डु और त्वचा रोग आदि विकार उत्पन्न होते हैं। इन सब विकारोंपर यह रस अद्भुत लाभ पहुँचाता है।

मण्डूरको भांगरेके रसमें ७ दिन खरल करनेसे, वह आमाशय और यकृत्की क्रियाको सुधारता है। फिर पचन क्रिया सबल बनती है और निर्बलता दूर होकर शक्ति बढ़ने लगती है। छोटे बालक, सगर्भा, प्रसूता और वृद्ध आदिको यह मण्डूर निर्भयता पूर्वक दिया जाता है।

बालकोंकी पचन क्रिया विकृति, प्लीहावृद्धि और हृदयकी निर्बलताजनित शोथ होनेपर कामचार मण्डूर पुनर्नवाके क्वाथ या पुनर्नवारिष्टके साथ देनेसे थोड़ेही दिनोंमें लाभ होजाता है।

संग्रहग्रहणी रोगमें रसमण्डूरके साथ सुवर्ण पर्पटी या अभ्र पर्पटी मिलाकर कम मात्रामें लम्बे समयतक सेवन कराया जाता है।

१२. ग्रहणीहर योग

विधि—श्योनाककी छाल २० तोलेको चावलके धोवनमें पीसकर कल्क करें। कल्कको गीले चौलड़े कपड़ेमें लपेट ऊपर १-१ अंगुल कपडमिट्टी करें। पश्चात् निर्धूम गोबरीकी अग्निमें दबाकर बाटीके समान सेक लेवें। मिट्टी लाल होकर पक जाने पर बाहर निकाल कपड़ेको खोल कल्कको किसी मोटे कपड़ेमें लपेट दबाकर रस निचोड़ लें।

मात्रा—॥-१। तोला दिनमें ३ बार देवें। साथमें लवङ्ग चतु सम (लौंग, जायफल, ज़ीरा और सोहागेका फूला) १-१ माशा शहदके साथ देते रहें।

उपयोग—यह योग जीर्ण ग्रहणी, जीर्ण अतिसार और प्रवाहिकामें अच्छा लाभ पहुंचाता है। पथ्यका आग्रहपूर्वक पालन करना चाहिये। यदि अन्नपचन हो, तो खिचड़ी

आदि हल्का भोजन देवें। ज्वर हो या अन्नपचन न होता हो, उदरमें वायु उत्पन्न होती हो और सरलतासे अपानवायु न सरती हो, तो रोगीको मट्ठेपर रखना चाहिये। इस योगके साथ निम्नानुसार बाह्य परिमार्जन करते रहनेसे सत्वर लाभ पहुँचता है।

बहिः परिमार्जनः—आँवलेको जलमें पीसकर कल्क करें। फिर रोगीको चित लेटा नाभिके चारों ओर आलवाल किनारी बांध बीचमें अदरकका रस भरें। इसतरह रोज़ आध घण्टेतक लेटाये रखनेपर नदीके पूरके समान प्रवृद्ध अतिसार भी रुक जाता है, अग्नि प्रदीप्त होती है तथा उदरवात शमन होजाती है।

१२ बबूलाद्यरिष्ट

विधिः—बबूलकी अन्तर छाल ८०० तोलेको ४०९६ तोले जलमें मिलाकर क्वाथ करें। चतुर्थांश जल शेष रहनेपर उतारकर छानलें। फिर १२०० तोले गुड़ और ६४ तोले धायके फूल, एवं पीपल ८ तोले तथा जायफल, शीतल मिर्च, दालचीनी, छोटी इलायचीके दाने, तेजपात, नागकेशर, लौंग, कालीमिर्च, इन ८ औषधियोंके ४–४ तोले जौकूट चूर्ण को मिला देवें। फिर चीनीके बोयाममें भर एक मासपर्यन्त बन्द रखें। आसव परिपक्व होनेपर छानकर बोतलोंमें भर लेवें। (भै० र०)

मात्राः—१। से २॥ तोलेतक दिनमें २ बार समान जल मिलाकर भोजन कर लेनेपर पिलावें।

उपयोगः—यह अरिष्ट क्षय, कुष्ठ, अतिसार, प्रमेह, श्वास और कासको नष्ट करता है।

इस बबूलाद्यरिष्टमें मुख्य औषध बबूलकी अन्तरछाल है। यह कसैली, स्तम्भक और अन्त्रस्थ दोषनाशक है। यह अरिष्ट पक्वातिसार और जीर्ण संग्रहणीमें स्तम्भक गुणके लिये व्यवहृत होता है। बारबार बड़े जुलाब होकर थकावट आजाने और अग्निमान्द्य आदि लक्षण होनेपर यह अरिष्ट हितावह है।

कुष्ठके विकारमें कोष्ठस्थ विष, प्रमुख कारण होनेपर बबूलाद्यरिष्टका उपयोग होता है। शरीरपर काले दाग होजाना, स्थान–स्थानपर कील गाड़नेके समान रोमरन्ध्रोंके मूलमें मोटापन आजाना आदि लक्षण होनेपर बबूलाद्यरिष्ट अच्छा लाभ पहुँचाता है।

अच्छमेह, लालामेह और हस्तिमेह विकारपर यह अच्छा कार्य करता है। इसका उपयोग मधुमेहमें चाहिये वैसा नहीं होता। (औ० गु० ध० शा० के आधारसे)

इस अरिष्टमें मुख्य औषधि बबूलकी छाल है। उसमें गोंद और टेनिक एसिड (Tannic Acid) अधिक मात्रामें रहते हैं। जिससे यह छाल ग्राही गुण करती है तथा आम, रक्त, अतिसार, पित्त और दाहका नाश करती है। कास रोगमें श्वास-प्रणालिकाकी उग्रताका शमन करती है। एवं मूत्रकृच्छ्र, अश्मरी, मूत्रेन्द्रिय और जननेन्द्रियकी प्रादाहिक उग्रताका ह्रास करती है। इसीतरह इस छालमें कुष्ठ, कृमि और विषको नष्ट करनेका गुण भी अवस्थित है। वंगसेनने जलोदर रोगपर भी बबूलकी छालके क्वाथकी योजना की है।

(७) अर्श।

१ बावली बूटी

(ले० Lochnera Pusilla)

यह वनौषधि राजपूताना, यू पी आदि अनेक स्थानोंमें ज्वार बाजराके खेतोंमें आश्विनसे पोष, माघ तक मिलती है। यह बूटी लगभग १॥-२ फीट ऊंचाईतक बढ़ जाती है। इसमें २-३ अंगुलके लम्बे पतले पत्ते होते हैं और मिर्चके आकारकी छोटी फली आती है, जिसमें काले ज़ीरेके समान बीज निकलते हैं। इस बूटीके बीजोंको चूहे प्रेमसे खाते हैं। इसका स्वाद अति कड़वा है। पशु इसे खा ले, तो वह पागल बन जाता है।

मात्रा —६ माशेसे १ तोलातक ११ कालीमिर्चोंके साथ मिला चटनीकी तरह पीसकर दिनमें दो समय ४० दिनतक पिलाते रहें।

उपयोग —यह औषध रक्तार्श रोगमें रामबाण है। केवल ४-५ दिनमें ही रक्तार्शका रक्त गिरना बन्द होजाता है। ४० दिन तक सेवन करनेसे रोग जड़ मूलसे चला जाता है। शुष्क अर्श रोगमें भी यह बूटी लाभ पहुंचाती है।

२ लोहादि मोदक

विधि —लोहभस्म, इन्द्रजौ, सोंठ, शुद्ध भिलावे, चित्रकमूलकी छाल, बेलगिरी, वायविडङ्ग और हरड़, ये ८ औषधियाँ समभाग लें। फिर सबके समान गुड़ मिला कर ३-३ माशेके मोदक बना लेवें। (र० र० स०)

मात्रा —१-१ मोदक सुबह शाम सेवन करें।

उपयोग —इस मोदकका सेवन करनेपर अर्श, शुष्कार्शजनित वेदना, रक्तार्शका रक्त गिरना, मलावरोध, अग्निमान्द्य आदि दूर होते हैं।

३ अर्शोहर भस्म

विधि —एक ताज़ा जमीकन्द २॥ सेर वजन का लेकर उसको बीचसे खड्डा करें। इसमें लाल फिटकरीका चूर्ण ४० तोले भर देवें। फिर जमीकन्दके टुकड़ेसे खड्डेको ढक्कर कपड़मिट्टी करें। सूखनेपर गजपुट अग्नि देनेसे सफेद भस्म होजाती है।

श्री० वैद्य गोपालजी कुंवरजी ठक्कुर।

मात्रा —६ से १२ रत्ती दिनमें २ बार मक्खन या मलाईके साथ।

उपयोग —यह भस्म अर्शके मस्सेमेंसे रक्त गिरता हो, उसे एक दो दिनमें ही बन्द कर देता है। एवं पचन क्रिया सुधारता है और मल शुद्धि कराता है।

४ अर्शोहर गुटिका

प्रथम विधि —रीठेके बक्कल और रसौंतको समभाग मिला जलके साथ खरलकर २-२ रत्तीकी गोलियाँ बनावें।

मात्रा—१-१ गोली दिनमें २ बार निगलकर ऊपर बकरीका दूध १० तोले गरम कर ठण्डा किया हुआ पीवें।

उपयोगः—इस वटीके सेवनसे १–२ सप्ताहमें रक्तार्श दूर होजाते हैं।

द्वितीय विधिः—शुद्ध मैनसिल और शुद्ध गन्धकको समभाग मिला ७ दिन तक भांगरेके रसमें मर्दनकर २–२ रत्तीकी गोलियाँ बनावें।

मात्राः—१ से २ गोली मट्ठे या बकरीके दूधके साथ दिनमें २ बार सेवन करें।

उपयोगः—इस वटीके सेवनसे अर्श और अर्शजनित मंदाग्नि, उदरपीड़ा, मलावरोध और निर्बलता दूर होते हैं।

तृतीय विधिः—मोतीकी सीपको ३ पुट मूली स्वरसके देकर भस्म बनावें। फिर यह भस्म, एलवा और रसौंत, सब समभाग मिला मूली स्वरसके साथ ७ दिन घोटकर २–२ रत्तीकी गोलियाँ बनावें। (वैद्य रामचन्द्रजी)

मात्राः—१ से २ गोली सौंफका अर्क अथवा जलके साथ प्रातः सायं देनेसे मल शुद्ध होता है। अर्श और यकृत्के विकार, बद्धकोष्ठ, आध्मान, शूल, मंदाग्नि, अरुचि नष्ट होते हैं। रक्तार्शका रुधिर बन्द होता है, एवं वातार्शमें भी इसका उपयोग सद्यःफलदायी देखा गया है। यकृद्वृद्धि, तज्जन्य उदररोग, आमका संग्रह एवं आम प्रधान रोग इस महौषधसे नाश होते हैं। इसमें मुक्ताशुक्तिकी भस्म है, इस कारण केल्शियमकी कमी होनेसे त्वचाके फोड़ाफुन्सी अथवा शीतपित्तके समान ददौरेको भी नाश करता है। अधिक विरेचन हो तो बीच-बीचमें यह गोली बन्द कर देनी चाहिये अथवा मात्रा आधी कर देनी चाहिये। यह अनुभूत वटी है, कभी निष्फल नहीं जाती।

५. अर्शोहर लेप

प्रथम विधिः—सोमल, नीलाथोथा और सिंदूर, तीनों १–१ तोला लेकर बारीक चूर्ण करें। फिर निर्मलीके बीजको जलके साथ पत्थरपर घिस, उसमें उक्त चूर्ण आधरत्ती मिला मस्सेपर लेप करें। मस्सेको छोड़ इतर किसी स्थानपर न लग जाय, इस बातका सम्हाल रखना चाहिये। यदि इतर स्थानपर लग जाय, तो वहाँ मक्खन या घी लगा लेवें। इस लेपके लगानेके पश्चात् रोगी पौन घण्टेतक औंधा सोता रहे। जिससे औषध अन्य भागमें न लग जाय। इस लेपसे जलन अधिक होनेपर निम्न मलहम लगाना चाहिये।

दाहशामक मलहम—कत्था १ तोला, कपूर १ तोला, और सोनागेरू २ तोलेको ४ तोले घीमें मिला मस्सेपर लेपकर देनेसे दाह शमन होजाता है। जब जलन सहन न हो सके, तब यह मलहम लगाना चाहिये।

इस तरह सोमलयुक्त लेप प्रति दिन दो समय लगाते रहनेसे थोड़ेही दिनोंमें मस्से जलकर गिरजाते हैं। मस्सेके समीप व्रण होनेपर सोहागे का फूला, सफेदा और

सेलखड़ीको धोये घीमें मिलाकर दिनमें २-३ बार लेप करते रहनेसे व्रणादूर हो जाते हैं।

सूचना —इस अर्शोहर लेपका प्रयोग करनेके पहले रोगीको ३ दिनतक अपथ्य वस्तुएँ हो सके उतनी अधिक खा लेनेको कहें। जिससे भीतरके मस्से भी अच्छी तरह फूल कर बाहर आ जायँ। फिर लेप करना प्रारम्भ करें। प्रयोग प्रारम्भ करनेके पश्चात् पथ्य भोजन देवें। प्रति दिन मृदु विरेचन औषध देकर कोष्ठ शुद्धि कराते रहें।

द्वितीय विधि—पीलेसोमलको जलमें घिसे, इसके ऊपर रेवा चीनी को घिसे फिर मस्से पर बूंद डाले या लेप करे, मस्सेके अतिरिक्त स्थानपर न लग जाय, इस लिये पहले चारों ओर घी या वेसलीन लगा लेवें। इस तरह दिनमें दो बार लेप करते रहनेसे मस्से फूल जायगे। फिर उसमेंसे जल टपकने लगेगा और थोड़ेही दिनोंमें मस्से सूख जायें गें।

फिर पञ्च वल्कल (वट, पीपल, गूलर, पिलखन और बेंतकी छाल) के गुनगुने क्वाथसे धो देवें। पश्चात् प्याज ८ तोलेको कूट १० तोले घीमें भून, १ तोला हल्दी डाल दें। फिर प्याज़की पोटली बांधकर मस्सेपर सेक करें। पोटली शीतल हो जानेपर प्याज़को गरम घीमें डुबो लेवें। इसतरह सेक करते रहनेपर वेदना शमन हो जाती है, मस्से गिर जाते हे और उनके खड्डे भी भर जाते ह। खड्डेपर शीतलताके लिये दूधकी मलाई (किञ्चित् सोहागाका फूला अथवा बोरिक एसिड मिली हुई) या धोया घी या वेसलीन लगाते रहें। (आ० नि० मा०)

तृतीय विधि —निम्बकी निम्बोलीकी मज्जा, रसौंत, कपूर और सोनागेरु, इन चारोंको जलके साथ पीसकर मस्सेपर लेप करनेसे मस्से मुरझा जाते हैं। इन चारोंको एरण्ड तैलमें मिलाकर मल्हम बनाकर भी लगा सकते हैं।

चतुर्थ विधि —यदि मस्से फूल गये हों और वेदना होती हो तो कड़वी तोरई या तुम्बीके बीजोंकी गिरीको खट्टे मट्ठेमें पीसकर लेप करनेसे मस्से फूट जाते हैं और पीड़ा शान्त हो जाती है।

६ अर्शोहर योग

(१) निम्बकी निम्बोलीकी गिरीका तैल ४-५ बूंद शक्कर या केपसुलमें रख-कर निगलवाते रहनेसे थोड़ेही दिनोंमें मस्से नष्ट हो जाते हैं और शरीर भी बलवान् बन जाता है।

७ दन्त्यरिष्ट।

विधि —दन्तीमूल, चित्रकमूल, दशमूल (१० औषधियां), हरड, बहेड़ा, आँवला, इन १५ औषधियाँ ४-४ तोले ले, २०४८ तोले जलमें मिलाकर चतुर्थांश क्वाथ करें। फिर छान, ४०० तोले गुड़ मिला, चीनीके बोयाममें भर मुखमुद्राकर १५ दिन रख देवें। परिपक्व होनेपर छान लेवें। (च० सं०)

मात्राः— १। से २॥ तोलेतक दिनमें दो बार भोजनकर लेनेपर समान जल मिलाकर देवें।

उपयोगः— इस अरिष्टके सेवनसे अर्श, ग्रहणी और पाण्डु रोग दूर होते हैं मल और उदरवातकी गतिको अनुलोम करता है, तथा पचन क्रियाको सबल बनाता है। यह अरिष्ट, अर्श, ग्रहणी, गुल्म, आध्मान, उदरकृमि, उदावर्त, पाण्डु रोग, मूत्ररोग, गर्भाशय विकार आदिमें मलावरोध रहनेपर व्यवहृत होता है। रात्रिको देनेपर सुबह शौचशुद्धि होती है।

वक्तव्यः—वंगसेन और वृन्द माधवने इस अरिष्टमें चित्रकमूल नहीं लिखा। (कदाच लेखकके प्रमाद वश वह भूल हुई होगी) और १ मासतक बन्द रखनेका विधान किया है। पाक १५ दिनमें नहीं होता, अतः १ मास बन्द रखना चाहिये। अथवा सिद्ध न हो तो १॥-२ मास भी।

---

(८) अग्निमान्द्य, अजीर्ण, विसूचिका

१. तिक्तजीरक भस्म

बनावटः—१ मन गोमूत्रको कड़ाहीमें डालकर चूल्हेपर चढ़ावें। उफाण आने पर उसमें ५ सेर कालीज़ीरी डाल गोमूत्र और कालीज़ीरीकी भस्म बना लें। पश्चात् कड़ाहीको उतार राखको तुरन्त बोतलमें भर लेवें। दो तीन घण्टे देर होनेसे बाहरकी वायु लगकर क्षारमें गीलापन आ जाता है। (आ० नि० मा०)

मात्राः— २ से ६ रत्ती दिनमें ३ बार शहद या जलके साथ।

उपयोगः—यह भस्म आमाजीर्ण, विष्टब्धाजीर्ण और रसाजीर्णको सत्वर दूर करती है। उदर शुद्धि करती है। उदरकृमि और सूक्ष्म कीटाणुओंका नाश करती है। कफ, मेद और आमको जलाती है। तथा पचनशक्तिको बढ़ाती है। यह भस्म सब प्रकारके अजीर्ण, उदर रोग और शूलको नष्ट करती है। जलोदर और शोथ रोगमें भी अति हितावह है। इस भस्मको सिरके अथवा गोमूत्रके साथ लेप करनेसे त्वचाके श्वेत दाग मिटते हैं।

२. नागेश्वर रस

बनावटः—शुद्ध बच्छनाग, लौंग, दालचीनी, पीपल, कालीमिर्च, अकरकरा, सोंठ, अजवायन, ज़ीरा, कालाज़ीरा, पीपलामूल, कालानमक, सैंधानमक, साँभरनमक, भुनीहींग, ये १५ औषधियाँ १-१ तोला; सोहागेका फूला और शंखभस्म ४-४ तोले तथा शुद्ध हिंगुल २ तोले लेवें। पहले हिंगुल और बच्छनागको मिलावें। फिर सोहागेका फूला और शंख भस्म डालें। पश्चात् शेष औषधियोंका कपड़छान चूर्ण मिला नीबूका रस २५ तोले डाल, खरलकर, सुखा चूर्ण बना लेवें। (आ० नि० मा०)

वक्तव्य —हम नींबूका रस १०० तोले डालकर १-१ रत्ती की गोलियाँ बनाते हैं।

मात्रा —२ से ३ रत्ती अदरखका रस और शहद या जलके साथ दिनमें २ या ३ बार देवें।

उपयोग — यह रस सब प्रकारके अजीर्ण रोग और अग्निमान्द्यको दूर करता है। उदरशूल और उदरवातको शमन करता है, तथा रुचिको बढ़ाता है। विशेषतः वातप्रधान और कफप्रधान रोगोंपर व्यवहृत होता है। आमाशय और यकृत्, दोनों स्थानोंके पित्तस्रावको बढ़ाता है और अन्त्रको भी बल देता है। कब्ज़ रहता हो, मलमें दुर्गन्ध आती हो या सूक्ष्म कृमि उत्पन्न होते हों, वे सब विकार दूर होते हैं।

३. अग्निमुख रस

विधि – शुद्ध पारद, शुद्धगन्धक, शुद्धवत्सनाग, तीनों १-१ तोला मिलाकर अदरखके रसके साथ खरल करें। फिर अश्वत्थ (पीपल वृक्ष) का क्षार, इमलीका क्षार, अपामार्गका क्षार, जवाखार, सज्जीखार, सोहागाका फूला, जायफल, लौंग, सोंठ, काली-मिर्च, पीपल, हरड़, बहेड़ा, आँवला, ये १४ औषधियाँ १-१ तोला तथा शंख भस्म, सैंधानमक, साँभरनमक, समुद्रनमक, कालानमक, काँचनमक, भुनी हींग और जीरा, ये ८ औषधियाँ २ २ तोले मिला नींबूके रसमें ३ दिन मर्दनकर १-१ रत्तीकी गोलियाँ बनावें। (र० का०)

मात्रा —१ १ गोली दिनमें ४ ७ समय मुँहमें रखकर रस चूसें या २ २ गोली दिनमें ३ बार गुनगुने जलके साथ देवें।

उपयोग —यह वटी पाचनी और दीपनी है। अजीर्ण, शूल और विसूचिकाको तत्काल दूर करती है। एवं हिक्का, गुल्म और उदररोगको भी नष्ट करती है।

इस अग्निमुखका कार्य अग्निकुमार और अग्नितुण्डीकी अपेक्षा भिन्न प्रकारका है। इन दोनों औषधोंकी अपेक्षा इसमें क्षार अत्यधिक होनेसे इस रसका विशेषतः वियोजन और शोषण यकृत, मध्यम कोष्ठ, कफ स्थान और वृक्कोंमें होता है। यह औषध पाचन दीपन, कफस्थानमें रहे हुए कफका हरणकर पतला बनानेवाला तथा यकृदादि इन्द्रियोंको शक्तिदायक है।

यकृतकी अशक्तता या यकृत्पित्तकी उत्पत्ति कम हो जानेसे जो एक प्रकारका अतिसार होजाता है। उसमें कफदुष्टि भी दोषप्रत्यनीक चिकित्साकी दृष्टिसे एक कारण होता है। ऐसे अतिसारमें दस्त सफेद, जलमें घुले हुये आटेके सदृश, क्वचित् खड़िया मिट्टीके जलके सदृश, सफेद दुर्गन्धयुक्त, कुछ अंश बंधा हुआ और कुछ बिना बंधा हुआ होता है। इसमें दूसरा प्रकार ऐसा है कि, मेथी आदि शाकके निचोड़े हुए रसके समान हरा-सा, दुर्गन्धयुक्त और कुछ मल मिला होता है। इन दो प्रकारोंमेंसे पहले प्रकारमें इस अग्निमुख रसका उपयोग अधिक होता है। एवं दूसरे प्रकारमें अग्नितुण्डीसे

लाभ पहुंचता है। प्रथम प्रकारमें कफ दोषका प्राधान्य होनेसे यकृत्पित्तका सम्यक् स्राव नहीं होता। इस कफकी प्रधानता कम हो जानेपर यकृत्का स्राव सम्यक् होने लगता है। फिर अतिसार नष्ट होजाता है।

इस प्रकारके अतिसारमें या इस प्रकारके यकृद् विकारमें जुलाबके साथ वमन भी होती है। यह वमन, चिपचिपी और झागयुक्त होती है। आमाशयमेंसे कफदुष्टिके हेतुसे पाचक पित्तका स्राव योग्य नहीं होता, जिससे भोजनका परिपाक भी योग्य नहीं हो सकता और इसी हेतुसे वमन उपस्थित होती है। यह विकार कभी कभी बहुत पुराना भी देखनेमें आता है। इस स्थितिमें अग्निमुखका अच्छा उपयोग होता है।

अन्नके विदाह और विष्टब्धताके हेतुसे उत्पन्न शूलके साथ-साथ अफारा, दूषित डकार आना, उदर और कण्ठको बांध दिया हो, ऐसा भासना आदि लक्षण होते हैं। कुछ समयतक उदरशूल अधिक और कुछ समयतक कम रहता है। क्वचित् भयंकर शूल चलने लगता है। इस विकारपर अग्निमुखका अधिक उपयोग होता है। शंख और हींगके हेतुसे आक्षेपके सदृश वेदनाका निवारण होजाता है, तथा शामक औषधियोंके योगसे अवशिष्ट वेदना शमन होजाती है।

लघु अन्त्र और बृहदन्त्रके कुछ भागमें अन्न दूषित होने लगता है, उसमें एक प्रकारके कीटाणुओंकी क्रियाकी सहायता मिल जानेसे वायुका संचय खूब हो जाता है। इस हेतुसे कब्ज़ और कभी अत्यन्त तीव्र अफारा उत्पन्न होजाता है। उदर तंग होजाता है, यहांतक कि श्वासोच्छ्वास क्रियामें भी बाधा पहुंचती है। कौड़ी स्थानतक समग्र उदरमें वायु भरजाती है, इस हेतुसे उदर अतिशय खिंचता है। रोगी बेचैन होजाता है। सारे उदरमें मंद मंद वेदना होती है, पहले मलशुद्धि नहीं होती, फिर अधोवायु भी नहीं सरता, मूत्रका भी कुछ अवरोध होता ही है। इस स्थितिमें वायुको अनुलोमन कराने-वाली और कोष्ठस्थ दुष्टिको नष्ट करनेवाली औषधि देनी चाहिये। केवल विरेचन देनेसे यह कार्य नहीं होता। अग्निमुखमें वातानुलोमक और कोष्ठ दुष्टिनाशक गुण अव-स्थित होनेसे इस समग्र विकार समूहका इस रसके सेवनसे निवारण होजाता है।

निर्जन्तुक विसूचिका (अजीर्णके तीव्र प्रकोपसे उत्पन्न विसूचिका) में सारे कोष्ठमें शूल चुभानेके सदृश वेदना होती है। किसी किसी रोगीको जलके सदृश बड़े-बड़े जुलाब होते हैं। जुलाबके हेतुसे सर्वाङ्गकी नाड़ियाँ खिंचती हैं। हाथ पैरमें ऐंठन होती हैं। कभी-कभी मूत्रावरोध होता है। किसीको वमन भी होता है। इस व्याधिका कारण कोष्ठस्थ अन्नदुष्टि है। इस स्थितिमें अग्निमुखके सेवनसे सत्वर लाभ होजाता है।

गुल्म अर्थात् गोला यह किसी भी प्रकारका हो फिर भी उसे गुल्म ही कहनेकी परिपाटी होनेसे गुल्म चिकित्सामें अनेक बार बड़ी गड़-बड़ होजाती है। अन्त्रके भीतर अन्त्रस्थ भागमें वायुका संचय और अवरोध होकर अन्त्र फूल जानेपर वह गोलाके सदृश भासता है। ऐसे प्रकारके वातगुल्मपर अग्निमुखका अच्छा उपयोग

होता है। ऊपर आनाहकी जो अवस्था कही है, उसकी व्याप्ति सम्पूर्ण कोष्ठमें होती है और इस गुल्मकी व्याप्ति अन्त्रके थोड़ेसे भागमें होती है। इस तरह यह केवल वातावरोध ही होनेसे वह सत्वर दूर होजाता है। कफगुल्म, रक्तगुल्म, अष्ठीला आदि रोगोंपर इसका उपयोग कम होता है।

वृक्कविकृति होनेपर मूत्रस्राव कम और लालरंगका होता है। मूत्रमें क्लेद जाता है। मुँह और हाथ पैरपर सूजन आ जाती है। उदरकी त्वचा भी शोथमय बन जाती है। यह शोथ धीरे-धीरे बढ़नेपर उदरमें जलसंचय होने लगता है। पतला और आटेके घोलके सदृश बार-बार जुलाब होता है। वृक्कद्वारा क्लेद-वहन सम्यक् प्रकारसे न होनेसे और कोष्ठस्थ कफदुष्टिके हेतुसे सर्वाङ्गशोफ या उदररोग (जलोदर) की उत्पत्ति होजाती है। इस प्रकारके विकारमें अग्निमुख मूत्रल औषधके साथ अर्थात् गोखरू, धमासा, पित्तपापड़ा, सारिवा और पुनर्नवा आदि औषधियोंके क्वाथके साथ देनेपर मूत्र पिण्डमेंसे क्लेदवहन कार्य सम्यक् होकर मूत्रस्राव भली प्रकारसे होने लगता है और उसमेंसे मल द्रव्य बाहर निकल जाता है। इस स्थानपर अग्निमुखका कार्य द्विविध होता है। एक तो उसमें रहे हुए क्षारके योगसे मूत्रपिण्डोंसे क्लेदवहन और मूत्रस्राव यथोचित होता है, तथा दूसरा कार्य शङ्खभस्म, हींग, अजमोद आदि औषधोंका वियोजन उदर और अन्त्रमें होनेसे उस स्थानके विकारका शमन होकर अतिसार कम होजाता है।

जीर्णकास और उसके साथ अतिसार होनेपर अग्निमुख रसका प्रयोग करना चाहिये। जीर्ण कासमें कफका अच्छी तरह स्राव नहीं होता, कफ बिल्कुल घट्ट और गाठदार बन जाता है। अतिशय खासनेपर कफकी छोटी-सी गाठ निकलती है। साथ-साथ उदरपीड़ा, अपचन, उदरमें अफारा और सफेद दुर्गन्धमय दस्त आदि लक्षण प्रतीत होते हैं। इस स्थानपर भी अग्नि-मुखका कार्य उत्तम होता है। अनुपान रूपसे कफस्रावी और श्वासवाहिनियोंकी उपशामक औषधियाँ—मुलहठी, वासा, छोटी कटेलीके मूल आदिके क्वाथकी योजना करनी चाहिये।

इस अग्निमुख रसमें पारद-गन्धककी कज्जली जन्तुघ्न और रसायन है। वत्सनाग, शूलघ्न और वातशामक है।

अश्वगन्धक्षार, चिंचाक्षार, अपामार्गक्षार, सज्जीखार, सोहागा, तथा पञ्चलवण, ये पाचक, कफघ्न और दुर्गन्धनाशक हैं। जवाखार मूत्रल और पाचक है। जायफल शामक, पाचक और शूलहर है। जीरा और लौंग कोष्ठस्थ विदाहनाशक हैं। त्रिफला किंचित् स्तम्भक और अन्त्रकी पुर सरण क्रियावर्धक है। हींग वातशूलघ्न और आक्षेपहर है। शङ्खभस्म विदाहनाशक, स्वादुतोत्पादक, शूलघ्न, दीपक और पाचक है। नींबूका रस पित्तस्राववर्धक और पाचक है।

सूचना—यह औषध तीक्ष्ण होनेसे रक्त पित्त, रक्तार्श और उर क्षत विकार वाले को नहीं देना चाहिये। (औ० गु० ध० शा० के आधार से)

सौभाञ्जन (सुहिजना) के वृक्षकी छालके स्वरसकी अथवा क्वाथकी भावना देनेसे विशेष गुणकी वृद्धि होती है।

४, भीमवटी

विधि:—रससिन्दूर या भिलावेसे पकाया हुआ हिंगुल 'रसायन और शुद्ध-कुचिला २-२ तोले लें। लोहभस्म ३ तोले, भुनी हींग ४ तोले, काली मिर्च ५ तोले एलुवा ६ तोले और शुद्धगूगल ७ तोले लें। गूगलको छोड़ शेष सब औषधियोंका बारीक चूर्ण करें। गूगलको एरण्ड तैल मिल-मिलाकर अच्छी तरह कूटें। फिर चूर्ण मिला चित्रकमूलके क्वाथमें ३ रोज मर्दन करा २-२ रत्तीकी गोलियाँ बनालेवें। (र० यो० सा०)

मात्रा:—१-१ गोली सुबह शाम जल, अदरखका रस या त्रिकटु और अजवायनके चूर्ण अथवा दूधके साथ।

उपयोग:—यह भीम वटी अग्निमांद्य (वातज और कफज) हिस्टीरिया, संग्रहग्रहणी, आमवात, श्वास, कास, हिक्का, वातरक्त, शूल, उपान्त्रप्रदाह, गुल्म, इन सबको नष्ट करती है और मन्दाग्निके लिये उत्तम योग है।

अजीर्ण और अग्निमान्द्य रोग जीर्ण होनेपर आमाशय और अन्त्र शिथिल होजाते हैं। आमाशय और यकृतके पित्तकी उत्पत्ति बहुत कम होती है। फिर उदरमें भारीपन, अफारा, उदरपीड़ा, निर्बलता, मुखमण्डलकी निस्तेजता, मलावरोध आदि लक्षण उत्पन्न होते हैं। उनपर इस भीम वटीका सेवन कुछ दिनोंतक करानेसे आमाशय, यकृत, अन्त्र और उदरस्थ वातनाड़ियाँ सब बलवान् बनती हैं। पचनक्रिया सबल होती है। फिर सर्वलक्षणोंसह अजीर्ण और अग्निमान्द्य रोग दूर होते हैं।

विषमज्वर दिनोंतक रह जानेसे और अपथ्य आदि कारणोंसे प्लीहा बढ़जाती है। फिर पचनक्रिया अति मन्द हो जाती है। भोजन करनेपर उदरमें भारीपना आजाता है। मधुर पदार्थ खाने या अपथ्य सेवन करनेपर ज्वर आजाता है। किसी-किसीको मन्द-मन्द ज्वर बारम्बार सताता रहता है। कभी-कभी प्लीहा नाभितक बढ़जाती है। शरीर निस्तेज बनजाता है। उसपर यह भीमवटी कासीसगोदन्ती भस्म या प्लीहान्तक क्षार चूर्णके साथ मिलाकर थोड़े दिनोंतक सेवन करानेपर रोग निवृत्त होजाता है। अनुपान रूपसे गोमूत्र दिया जाय, तो लाभ जल्दी होता है।

शराब, तमाखू अथवा गरम मसाला आदि दाहक पदार्थोंका अति सेवन, विषप्रकोप और कीटाणुओंके आक्रमण और कार्योंसे यकृद् बढ़जाता है। फिर मन्द-मन्द ज्वर, क्षीण नाड़ी, शुष्क-श्वेत जिह्वा और शारीरिक निर्बलता आदि लक्षण उपस्थित होते हैं। इस विकारपर भीमवटी—प्लीहान्तक चूर्ण के साथ देते रहनेसे यकृत् पूर्वावस्थामें आजाता है। भोजनमें घी, तैल और शक्कर कमसे कम देना चाहिये। अनुपानमें गोमूत्र दिया जाय, तो विशेष लाभ पहुँचता है।

संग्रहणी, अजीर्णातिसार और जीर्ण आमवात रोगमें अग्नि प्रदीप्त करने और

आमको जलानेके लिये यह वटी अति हितावह है। इसी तरह अपतन्त्रक, हिक्का, श्वास, कास और शूल आदि रोगोंमें वातशमन, कफनाश और शक्तिवृद्धिके लिये भीमवटी दी जाती है।

वातप्रधान प्रकृतिवालोंको ज्वरके पश्चात् या वृद्धावस्थाके हेतुसे निर्बलता आनेपर बहुधा अग्निमांद्य, अरुचि, उदरवात और मलावरोध आदि लक्षण उत्पन्न होते हैं। किसी किसीको हाथ पैरोंमें भी वायुकी फड़कन होती रहती है। कटिवेदना बनी रहती है। शरीर निर्बल होजाता है। त्वचा शुष्क और श्याम होजाती है। ऐसी अवस्थामें भीम वटीका सेवन आशीर्वादके समान है। अनुपान अजवायनका फाण्ट।

गृध्रसी रोग होनेपर नितम्बसे लेकर नीचे पैरोंकी ओर गृध्रसी नाड़ीमें शूल चलता रहता है। उसकी तीव्रावस्था शमन होनेपर कुचिला प्रधान औषधि समीरगज केसरी या भीम वटी दी जाती है जिनको मलावरोध रहता हो, उनको अफीममिश्रित समीरगज केसरी बहुधा अनुकूल नहीं रहती। उनको भीमवटी कम मात्रामें २-३ मास तक सेवन करानेपर लाभ हो जाता है।

सूचना—पित्तप्रकोपज अजीर्ण और अम्लपित्तज अग्निमांद्यके रोगोंको यह औषधि नहीं देनी चाहिये।

५. अजीर्णारि रस

विधि—शुद्ध पारद और शुद्ध गन्धक ४-४ तोले, हरड़ ८ तोले, सोंठ, पीपल, काली मिर्च, सैंधानमक १०-१० तोले और भांगीभाग १६ तोले लें। पारद-गन्धककी कज्जलीकर शेष द्रव्योंका कपड़-छन चूर्ण मिला, ७ दिन नींबूके रसमें सूर्यके तापमें खरल रखकर घोटें। फिर १-२ रत्तीकी गोलियां बनावें। (यो० र०)

मात्रा—१ से २ गोली प्रातःकाल या भोजनकर लेनेपर जलके साथ दिनमें १ या २ बार लें।

उपयोग—अजीर्णारी रस प्रातःकालमें सेवन करनेपर नये अपचनको दूर कर दस्त साफ ला देता है। जीर्ण अजीर्ण और अग्निमान्द्यमें दिनमें दो बार भोजन कर लेनेके १-१॥ घण्टे बाद लेना चाहिये। भोजनकर लेनेपर जिनको उदरमें भारीपन आ जाता है, उनके लिये अति हितकर है।

उदरशूल, प्लीहावृद्धि और वातज गुल्म रोगोंमें भी लाभदायक है। निर्बल शरीर वालेको ज्वर आनेके पश्चात् यकृत् बढ़ जाता है, पाचन शक्ति मंद होजाती है, उन रोगोंको अजीर्णारि रस देनेसे यकृद् प्लीहावृद्धि दूर होकर पचनक्रिया सबल बन जाती है।

६. सर्वतोभद्र रस

विधि—अभ्रक भस्म २ तोले, शुद्ध गंधक १ तोला, शुद्ध पारद ६ माशे, तथा कपूर, केशर, जटामांसी, तेजपात, लौंग, जायफल, जावित्री, छोटी इलायचीके दाने,

गजपीपल, कूठ, तालीसपत्र, धायके फूल, दालचीनी, नागरमोथा, हरड़, कालीमिर्च, सोंठ, बहेड़ा, पीपल और आँवला, इन २० औषधियोंको ३-३ माशे लें। पहले पारद-गन्धककी कज्जली करके भस्म मिलावें। फिर कपूर और केशर मिलाकर अदरखके रसमें घोटें। पश्चात् शेष काष्ठादि औषधियोंका कपड़छन चूर्ण मिला ६ घण्टे अदरखके रसमें खरल कर १-१ रत्तीकी गोलियां बनाकर छायामें सुखा लें। (र० सा० सं०)

मात्राः—२ से ४ गोली दिनमें २ बार शहद मिश्री, जल, अनार रस या कच्चे नारियलके जलके साथ।

उपयोगः—यह सर्वतोभद्र रस अग्निमान्द्य, आमवृद्धि, विसूचिका, वातकफ-प्रकोप, पित्तकफप्रकोप, आनाह, मूत्रकृच्छ्र, सग्रहणी, वमन, अम्लपित्त, शीतपित्त, रक्तपित्त, पित्तप्रकोपज जीर्ण ज्वर, धातुस्थ विषमज्वर, पाँच प्रकारकी कास, कामला, पाण्डु आदि रोगोंको दूर करता है।

आमाशयका पित्त दूषित होनेपर अम्लपित्त, विदग्धाजीर्ण, उदरमें भारीपन बना रहना, मुखपाक, खट्टी वमन आदि विकार उपस्थित होते हैं। उनके लिये यह रसायन अति लाभदायक है। आमाशयके पित्तप्रकोपको शमन कर पचन क्रियाको सुधारता है।

७. अग्निसुत रस

विधिः—कौड़ी भस्म १ तोला, शंख भस्म २ तोले, शुद्ध पारद ६ माशे, शुद्ध गन्धक ६ माशे और कालीमिर्च ३ तोले लें। पहले पारद गन्धककी कज्जली करें। फिर भस्म और अन्तमें कालीमिर्चका कपड़छन चूर्ण मिला नींबूके रसमें ३ दिन खरल करके २-२ रत्तीकी गोलियाँ बनवा लेवें। इस रसायनको अग्निसूनु और अग्निकुमार भी कहते हैं। (यो० र०)

मात्राः—१ से २ गोली दिनमें ३ बार घी शक्करके साथ देनेसे क्षीण मनुष्य भी हाथीके समान बलवान बन जाता है। पीपलका चूर्ण और घीके साथ सेवन करानेपर ग्रहणी विकार दूर होता है। सब प्रमेहोंपर मट्ठेके साथ देवें।

उपयोगः—यह रस युक्तिपूर्वक प्रयुक्त करनेसे शोष, ज्वर, अरुचि, शूल, गुल्म, पाण्डु, उदररोग, अर्श, ग्रहणी और प्रमेह आदि रोगों को जीत लेता है।

यह रस अग्निमान्द्यनाशक है। अग्निमान्द्यकी उत्पत्ति कफवृद्धिसे एवं पित्तमें द्रव आदि गुणोंकी वृद्धिसे भी होती है। पित्तमें द्रव आदि गुणकी वृद्धि होनेपर अग्निसुत घृतके साथ देना चाहिये। इस द्रवत्व गुण वृद्धिके साथ पित्तमें विस्रत्व गुण बढ़ जानेपर दुर्गन्धमय डकार आती है; और खट्टी दुर्गन्धमय वान्ति होती है। ऐसी परिस्थितिमें इस रसका उपयोग घी शक्करके साथ किया जाता है।

अग्निमान्द्यके हेतुसे क्षीणता और कृशता आनेपर घी-शक्करके साथ इस औषधका सेवन कराया जाता है। इस रसका कार्य तिर्यग् गत दोष या लीन दोषोंपर

नहीं होता। उत्तान दोष होनेपर इस रसका कार्य अच्छा होता है। अत जीर्ण विकारकी अपेक्षा नूतन विकारपर इसका कार्य अधिक होता है।

नूतन कफज ग्रहणी रोगमें बार-बार पतले दस्त होते हों, मल और जल अधिक न मिले हों, मुँहमें जल आता हो, तथा उबाक, उदर और अन्त्रमें जड़ता आदि लक्षण प्रतीत होते हों, तो यह रस पीपलके चूर्णके साथ देना चाहिये। यदि आम और रक्त गिरता है, तो यह रस नहीं देना चाहिये। इस विकारमें दोष लीन रहते हैं। कफज ग्रहणी या कफवातज ग्रहणी विकार नया उत्पन्न हुआ हो, तो इस रसका उपयोग करना चाहिये।

आमाजीर्ण कफप्रकोपसे उत्पन्न होता है। इसकी उपेक्षा होनेपर कभी अतिसार का प्रारम्भ होजाता है। इस प्रकारके अतिसारमें पित्तकी क्षीणता और कफकी अधिकता के हेतुसे मल सफेद, जड़, गाढ़ा-सा झागमय होता है। बार-बार शौच जाना पड़ता है। इस पर अग्निसुतु प्रयुक्त होता है।

इस प्रकारके आमाजीर्ण या विष्टब्धाजीर्णके हेतुसे ज्वरकी उत्पत्ति होनेपर अथवा अजीर्णजन्य अतिसार या ग्रहणीके साथ अतिसारके लक्षण या उपद्रव उपस्थित होनेपर भी इस रसका उपयोग किया जाता है।

इस रसको मट्ठाके साथ देनेसे अरुचि, शूल, गुल्म, पाण्डु, उदर और अर्श रोग नष्ट होते हैं, ऐसा मूल ग्रन्थकार ने लिखा है। यदि ये विकार नये हों, तो इन पर लाभ पहुंच सकता है, किन्तु रोगबल अधिक हो जानेपर इस रसका उपयोग नहीं हो सकेगा। ये सब रोग अन्त्रके दूषित होनेपर होते हैं। कफ-दोषसे अन्त्र दुष्टि हुई हो, किन्तु दुष्टि अधिक न हो गई हो, तब तक इस रसका उपयोग हितकारक माना जायगा।

अग्निसुतमें कज्जली जन्तुघ्न, रसायन और योगवाही है। शंख और कपर्दिका-भस्म, दीपन, पाचन और स्तम्भक हैं। कालीमिर्च तीक्ष्ण, उष्ण, चरपरे रसयुक्त, दीपन, पाचन और उस हेतुसे पाचक पित्तका सम्यक् स्राव करानेवाली है। नींबूका रस पित्तस्रावी और पाचक आदि गुणोंको बढ़ाने वाला है।

(औ० गु० ध० शा० के आधार से)

८ अग्नि प्रदीपक गुटिका

बनावट:—पीपरमेण्टका फूल, हींग और कालीमिर्च, तीनों समभाग लेवें। पहले हींगके साथ कालीमिर्चका चूर्ण मिलावें। फिर पीपरमेण्टका फूल मिलाकर (गीलापन उत्पन्न हो जानेपर) आध-आध रत्तीकी गोलियाँ बनालें।

मात्रा—१ से २ गोली दिनमें ३ बार या आवश्यकतापर २-२ घण्टे पर जल, मिश्री या शहदके साथ देवें।

उपयोग—इस गुटिकाके सेवनसे अपचनजनित उदरपीड़ा, शूल, बार-बार दस्त लगना, उबाक, वमन अफारा, शिरदर्द आदि तत्काल शमन होजाते हैं।

९. बिड़लवणादि वटी

विधि:—बिड़नमक, कालानमक और सैंधानमक १५-१५ तोले, सोंठ, कालीमिर्च, छोटीपीपल, चित्रकमूलकी छाल, अजवायन, अजमोद, धनियाँ, डांसरिया (गिर्दसमाक), सूखा पोदीना, मीठे सुहिजनेकी छाल, भुनी हींग, पीपलामूल और नौसादरपुष्प, ये १३ औषधियाँ १०-१० तोले लें। सबका कपड़-छन चूर्ण मिला नीबूके रसमें ३ दिन खरल करके १-१ रत्तीकी गोलियाँ बना लेवें। (स्व० आयु० मा० स्वामी लक्ष्मीरामजी)।

मात्रा:—१ से २ गोली जलके साथ अग्निमान्द्यमें भोजन करनेपर। उदरपीड़ामें आवश्यकतापर २-२ घण्टे पर ३-४ बार।

उपयोग:—यह वटी दीपन-पाचन और उदरवातहर है। अजीर्ण, उदरशूल, अफारा, उदरमें भारीपन आदि विकारोंको दूर करती है, और पाचन शक्तिको बढ़ा देती है। कफ और वात प्रकृतिवालोंके लिये तथा मेदवृद्धि वालोंके लिये यह वटी लाभदायक है।

सूचना:—सगर्भा स्त्री तथा अम्लपित्त, रक्तपित्त, प्रवाहिका और अर्शरोग, इनसे पीड़ितोंको यह वटी नहीं देनी चाहिये।

१० जम्बीरलवण वटी

औषध द्रव्य—जंबीरी या कागज़ी नीबूका रस १२० तोले, सैंधानमक १२ तोले, सोंठ, अजवायन, सज्जीखार, पीपल, भुनी हींग, काँटेवाले करंजके सेके हुए फलोंकी गिरी, कालीमिर्च, छिला हुआ लहसुन, सफेद सांठीकी जड़, (पुनर्नवा) सफेद (पीली) सरसों, सेका हुआ सफेद ज़ीरा, अतीस और समुद्रलवण, ये १३ औषधियां २॥—२॥ तोले लेवें।

विधि:—पहले नींबूके रसको कपड़ेसे छान अमृतबान या काँचके बरतनमें भर, सैंधानमक मिला बर्तनके मुँहपर स्वच्छ सफेद कपड़ा बाँध कर ४ दिन सूर्यके तेज तापमें रखें। रात्रिको रोज़ बरतनको उठालें। पाँचवे दिन उस रसको मज़बूत मिट्टीके बरतनमें डाल मंदाग्नि पर पकावें। लकड़ीके दण्डेसे चलाते रहें। रस गाढ़ा होने पर अन्य द्रव्योंका कपड़छन चूर्ण मिला नीचे-उतार शीतल होनेपर ३-३ रत्तीकी गोलियाँ बना लेवें। (श्री० पं० यादवजी त्रिकमजी आचार्य)

मात्रा:—२-२ गोली शीतल जलसे अथवा मुँहमें रखकर चूसें। आवश्यकतानुसार दिनमें ३-४ बार या भोजनके बाद देवें।

उपयोग:—जम्बीरलवण वटी उत्तम दीपन-पाचन है। अग्निमान्द्य, अरुचि, उदरशूल, अजीर्ण और अफारामें अच्छा लाभ पहुंचाती है। आमाशय और अन्त्र, दोनों स्थानोंकी पचनक्रियाको सुधारती है, आमको जलाती है और दूषित मलको बाहर निकालनेमें सहायता पहुंचाती है।

शाक भोजी, मांसाहारी और जड़ान्न खानेवाले, सबके लिये वह हितकारक है उदरमें अन्न पत्थर समान पड़ा रहता हो, उदरशूल चलता हो, उदरमें वायु संगृहीत होती हो और अन्त्रकी क्रिया शिथिल होनेसे कब्ज होजाती हो, उन विकारोंपर यह दी जाती है। यकृत् पित्तका योग्य स्राव न होनेसे दस्तमें दुर्गन्ध आती हो, मलका रंग सफेद या मैला प्रतीत होता हो, उदरमें छोटे छोटे कृमि होजाते हों और पेशाब भी पूरा साफ न होता हो, उन दोषोंको यह वटी दूरकर पचनशक्तिको सबल बना देती है।

पाचन क्रिया मंद होनेसे आम और कफकी वृद्धि होती हो, अरुचि बनी रहती हो, थोड़े-थोड़े दस्त लगते रहते हों, जुकाम, कास और श्वास भी होजाता हो, उन सब विकारोंको जम्बीर लवण वटी थोड़े ही दिनोंमें दूर करती है।

११. वातपन्नग वटी

विधि —धतूरेके पक्के डोडे २ सेर, सोंठके टुकड़े १ सेर और अजवायन आधसेर लेवें। एक मिट्टीके घड़ेमें कुचले हुए धतूरेके डोडे १ सेरको बिछावें। फिर ऊपर सोंठ, उसपर अजवायन फैला, सबपर शेष डोडको बिछाकर ढक देवें। पश्चात् ४ अंगुल ऊपर रहे, उतना जलभर, ढक्कन ढक चूल्हेपर चढ़ाकर मंद मंद अग्नि देवें। ६ घण्टे लगभग अग्नि देनेपर जल सूख जायगा। फिर सोंठको निकाल छायामें सुखाकर कपड़छन चूर्ण करें। इस चूर्णमें २ तोले शुद्ध हिंगुल और १ तोला कपूर मिला पोदीनेके रसमें ६ घण्टे खरलकर १–१ रत्तीकी गोलियाँ बना लेवें।

मात्रा—१ से २ गोली दिनमें २ बार जलके साथ देवें।

उपयोग—वात पन्नगवटी अफारा, अग्निमांद्य, उदावर्त रोग (आमाशयमें गेस उत्पन्न होने) और उदरवातको दूर करती है। आमाशय और अन्त्रकी उग्रताका शमन कराती है। नये और पुराने रोगमें भी तत्काल अपना प्रभाव दर्शाती है।

१२. द्राक्षादि गुटिका (अरुचि)

विधि —धोकर बीज निकाली हुई काली मुनक्का १ सेर, भुना हुआ जीरा १० तोले, सेंधानमक, कालीमिर्च, मिश्री और नीबूका सत्व (Citric acid) ५-५ तोले लें। पहले मुनक्काको पीसकर नीबूका सत्व मिलावें। फिर नमक, मिश्री और काली मिर्च क्रमशः मिला खरलकर २-२ रत्तीकी गोलियाँ बनाकर सोंठके चूर्णमें डालते जायँ।

मात्रा —१-१ गोली मुँहमें रखकर रस चूसें। दिनमें १० गोली तक भोजनके आध घंटा पहले या भोजनके पश्चात्।

उपयोग —इस गोलीके सेवनसे अरुचि दूर होती है, क्षुधा प्रदीप्त होती है तथा उदर शुद्धि होती है। अपचन, उदरवायु, कब्ज आदि विकारोंमें यह लाभदायक है। गर्भिणीको भी हितावह है।

१३. रोचक गुटिका

बनावटः—पहले लिखा हुआ नागेश्वर रस और गुठली रहित खजूर (अथवा मुनक्का बीज निकाली हुई) समभाग मिला खरलकर १-१ रत्तीकी गोलियाँ बना लेवें। (आ० नि० मा०)

मात्राः—१-१ गोली मुँहमें रखकर रस चूसे दिनमें १० गोली तक।

उपयोगः—यह गुटिका अपचन और अरुचिको दूर करनेमें अति हितावह है; उदरका शोधन करती है, और क्षुधा भी बढ़ाती है।

१४. नरसारादि पुष्प।

बनावटः—नौसादर और साँभरनमक १०-१० तोले मिलाकर बारीक चूर्ण करें। फिर एक बड़े सरावमें रख, उसके समान दूसरा सराव ऊपर औंधा रख, दोनोंकी संधिपर कपड़ मिट्टी करें। सूख जानेपर २॥ सेर लकड़ीके कोयलोंकी अग्निपर सम्पुटको रख देवें। स्वाङ्ग शीतल होनेपर ऊपरके सरावके भीतर लगे हुये पीले वर्णके पुष्पोंको सम्हालकर निकाल लें। (आ० नि० मा०)

मात्राः—ज्वरमें प्रस्वेद लानेके लिये ८ रत्तीतक तथा अग्निमान्द्य, ज्वर, विषमज्वर और यकृद्विकार में ४ रत्ती तक जलके साथ दिनमें ३ बार देवें।

उपयोगः—यह पुष्प अपचन, अग्निमांद्य, यकृत्के पित्तस्रावकी न्यूनता, कफवृद्धि, उदरका भारीपन, कोष्ठबद्धता आदिको दूर करता है। यह पुष्प पित्ताशय शूलमें गरम जलके साथ देनेसे पित्तस्राव बढ़ाकर शूलको सत्वर शमन करता है। अजीर्णजन्य शिरःशूलके लिये अति उत्तम दवा है।

१५. लवण रसायन (नमक सुलेमानी)

विधिः—सैंधानमक, कालानमक, संचरनमक और नौसादर ७-७ तोले, चित्रकमूल, अजवायन, अजमोद; कालीमिर्च; सोंठ; पीपल; सफेदजीरा; कालाजीरा, जायफल और जावित्री; ये १० औषधियाँ १-१ तोला लें। सबका कपड़छान चूर्ण मिलाकर पक्के पत्थरकी खरलमें आधसेर सिरकेके साथ मर्दन करें। सिरका थोड़ा थोड़ा मिलाकर खरल करते रहें। फिर शुष्क बन जानेपर बोतलमें भर लेवें।

(हकीमहाजक उत्तमचन्दजी)

मात्राः—४ से ८ रत्तीतक दिनमें २ बार जलके साथ देवें।

उपयोगः—यह नमक सुलेमानी खाये हुए भोजनको सत्वर पचा देता है। उदरमें भारीपनको तत्काल मिटाता है। अपचन, उदरशूल, अपचनजनित अतिसार, अरुचि और अग्निमान्द्यको दूर करता है।

१६. दीपनपाचन चूर्ण

बनावटः—सैंधानमक, कालानमक, साँभरनमक, ८-८ तोले और कांच लवण

(बिड़ नमक) ४ तोले ले। सबको पहले कूटकर कपड़छन चूर्ण करें। फिर कालीमिर्च पीपल २-२ तोले, डासरिया (गिर्द समाक) अकलकरा, अम्लवेंत ८-८ तोले, धनियाँ, दालचीनी, चित्रकमूल, कैथ ४-४ तोले और अनारदाना ३० तोले लेकर चूर्ण करें। पश्चात् इमलीके सत (टारटरिक एसिड) ४ तोलेमें १ तोला जल मिलाकर घोटें। उसमें उपरोक्त दोनों प्रकारका चूर्ण मिला लेवें। अच्छी तरह मिलकर शुष्क हो जानेपर १६ तोले मिश्री, कालाज़ीरा और सफेद जीरा ८-८ तोले तथा सोंठका चूर्ण २ तोले डालकर खरलकर लेवें।

मात्रा —½ माशेसे २ माशे तक।

उपयोग —यह चूर्ण दीपन-पाचन है। इसके सेवनसे अपचन, अफारा, उदरपीड़ा, उबाक और अरुचिका नाश होता है, तथा अग्नि प्रदीप्त होती है।

१७. शतपत्र्यादि चूर्ण

विधि —गुलाबके फूल २० तोले, नागरमोथा, ज़ीरा, श्वेतचन्दनका बुरादा, छोटीइलायचीके दाने, शीतलमिर्च, गिलोयसत्व, खस, वंशलोचन, खसखस, इसबगोलकी भूसी, गोखरू, दालचीनी, तेजपात, नागकेसर, लौंग सारिवा (अनन्तमूल), कमलगट्टा (जिब्भी निकाले हुए), नीलोफर, कमल और तबाशीर (तवखीर) ये २० औषधियां १-१ तोला तथा मिश्री ४० तोले लें। सबको कूटकर कपड़छन चूर्ण करें।

(श्री प० यादवजी त्रिकमजी आचार्य)

मात्रा —।॥ से ३ माशे दिनमें २ बार जलके साथ।

उपयोग —यह चूर्ण विदग्धाजीर्ण, अम्लपित्त और आमाशयविकारसे उत्पन्न मुखपाकपर व्यवहृत होता है।

अधिक मिर्च और अधिक नमकका सेवन, धूम्रपान, तमाखू खाना, विष, संक्रामक तीव्र ज्वर, शराब, सड़े हुए अन्न या फल, अधकच्चे भोजन आदि कारणोंसे आमाशयमें विकृति हो जाती है। तब आमाशयमें पचन करानेके लिये जो आमाशयिक रस (gastric juice) बनता है उसमें लवणाम्ल (hydrochloric acid) विशेषाशमें उत्पन्न होता है और आमाशयमें प्रदाह होजाता है। फिर पित्तप्रकोपजनित विदग्धाजीर्ण और अम्लपित्त आदि विकार उत्पन्न होते हैं। इन आमाशयिक पित्तप्रकोपज विकारमें मुखपाक, दाह, भोजनकर लेनेपर उदरमें भारीपन, अपचन, प्यास अधिक लगना, पेशाबमें पीलापन आजाना आदि लक्षण उत्पन्न होते हैं। इन विकारोंपर यह चूर्ण अच्छा लाभ पहुँचाता है।

विदग्धाजीर्ण होनेपर खट्टी मट्टी डकार आना, छातीमें दाह, तृषा, पसीना अधिक आना, व्याकुलता, निद्रानाश, चक्कर आना, मलमूत्रमें पीलापन और उदरमें भारीपन आदि लक्षण प्रतीत होते हैं। इस अजीर्णपर भूल करके अग्निकुमार रस या हिंग्व-

ष्टक, लवणभास्कर, वज्रक्षार आदि तीक्ष्ण और पित्तवर्द्धक औषधि नहीं देनी चाहिये। अन्यथा रोग बढ जाता है। उसपर यह शतपत्र्यादि चूर्ण विशेष कार्य करता है।

विदग्धाजीर्णके साथ उदरमें वायु उत्पन्न हुई हो, अफारा रहताहो तथा खट्टी डकारें बार बार आती रहती हों, तो इसके साथ सोडा बाई कार्ब मिलाकर शीतल जलके साथ दिनमें ३ बार लेते रहना चाहिये।

सूचना:—अधिक नमक, अधिक मिर्च, अति गरम-गरम भोजन, अधिक चावल, इनमेंसे जो विपरी या अधिक हों, उनका त्याग करें। तमाखू, शराब आदिका व्यसन हो तो उसे छोड़ देना चाहिये।

१८. भल्लातकादि क्षार

विधि:—भिलावां, सोंठ, कालीमिर्च, पीपल, हरड़, बहेड़ा, आंवला, सैंधानमक, कालानमक और बिड़लवण, इन १० औषधियोंको ३२-३२ तोले मिलाकर एक हांडीमें भर, ढक्कन ढक, मुखमुद्राकर गजपुट अग्नि देवें। स्वांग शीतल होनेपर काली भस्मको निकाल पीसकर बोतलमें भर लेवें। (च० सं०)

मात्रा:—४ रत्ती से १॥ माशेतक दिनमें २ बार घीके साथ पिलावें या भोजनके साथ मिलाकर खिलावें।

उपयोग:—यह भल्लातकादि क्षार हृदयरोग, पाण्डु, ग्रहणी, गुल्म, उदावर्त (आमाशय और अन्त्रमें वायु-गैसकी उत्पत्ति) अफारा और उदरशूलको दूर करता है।

यह क्षार उत्तम अग्निप्रदीपक और शूलहर है। वायुको अनुलोम कराता है। इस हेतुसे उदावर्त, अपचन, अतिसार, ग्रहणी, अर्श, अफारा और वातज गुल्म रोगमें व्यवहृत होता है। आमाशयमें गैस उठनेपर यह तुरन्त लाभ पहुँचाता है।

वर्तमानमें गरम गरम चाय, आइसक्रीम, अधिक मसाला, सिगारेट, अपथ्य सेवन और रात्रिका जागरण आदि कारणोंसे आमाशयसे वायु (गैस) उठता रहता है। फिर आमाशयमें अम्लपित्त सदृश खट्टापन बढजाता है। नेत्र निर्बल होजाते हैं, मस्तिष्कमें दर्द होता रहता है और बेचैनी बनी रहती है। इन रोगियोंकी आमाशयस्थली बहुधा शिथिल बनजाती है। आमाशयिक पित्त परिमाणमें कम किन्तु अधिक उग्र बनता है। इस पित्तकी उग्रता कम कराने और आमाशयको बल देनेके लिये यह भल्लातकादिक्षार अति हितावह है।

आमाशयके समान अन्त्रमें वायु उत्पन्न होकर गड़-गड़ शब्द होनेपर अन्त्र शिथिल होने लगते हैं। फिर मलमें दुर्गन्ध उत्पन्न होती है। मलावरोध रहता है। दिनमें ३-४ बार थोड़ा थोड़ा शौच होता रहता है। किसी किसीको अर्श त्रास देता है। उन रोगियोंको भल्लातकादि क्षारका सेवन करानेसे आमाशय और अन्त्रकी पचन-क्रिया सुधर जाती है और देह स्वस्थ होजाती है।

आमाशयमें वायु बार-बार उठनेपर हृदयको आघात पहुँचता है। फिर हृदयाधरिक प्रदेशमें दर्द होता है, हृदयकी गति बढ़जाती है। स्पन्दनक्रिया अनेक बार अनियमित बन जाती है। यह हृदयरोग आमाशयके लक्षण रूप होनेसे भल्लातकादि क्षारके सेवनसे सरलतासे शमन होजाता है।

पचनक्रियाविकृति होनेपर अन्न रसका योग्य शोषण नहीं हो सकता, एवं आम विषका भी रक्तमें प्रवेश होता रहता है। जिससे रक्तकी उत्पत्ति कम होती है और जो उत्पन्न होता है वह भी निर्बल होता है। फिर देह पाण्डु भासता है। इस रोगपर भल्लातकादि क्षारका सेवन करानेपर पचनक्रिया सबल बनजाती है। फिर देह पुष्ट और तेजस्वी बनजाती है।

१९. पाचन चूर्ण

विधि —इन्द्रायणके पक्के फलोंमें लवण पञ्चक (सेंधानमक, साम्भर नमक, कालानमक, समुद्रनमक, काचनमक) का चूर्ण भरें फिर सुखा, हंडीमें भरकर गजपुट देवें। स्वाङ्ग शीतल होनेपर क्षार भस्म निकाल लेवें। फिर हरड़, बहेड़ा, आवला, सोंठ, कालीमिर्च, पीपल, चव्य, चित्रकमूल, और पीपलामूलका कपड़छन चूर्ण भस्मके समान वजनमें मिलाकर बोतलमें भर लेवें।

मात्रा —१॥ से २ मासे जलके साथ देवें।

उपयोग —इस चूर्णके सेवनसे अग्नि प्रदीप्त होती है। कफ प्रधान और वात प्रधान अजीर्ण, उदरकृमि, आमविकार, अफारा, उदरशूल आदि व्याधियाँ दूर होती हैं। यह चूर्ण उत्तम पाचन और मारक है।

२० पिप्पल्याद्यासव

विधि —पीपल, कालीमिर्च, चव्य, हल्दी, चित्रकमूल, नागरमोथा, बायविडङ्ग, सुपारी, लोध, पाठा, आवला, एलवालुक (अभावमें मीठा कूठ या नेत्रवाला), खस, रक्तचन्दन, मीठा कूठ, लौंग, तगर, जटामासी, दालचीनी, छोटी इलायचीके दाने, तेजपात, प्रियङ्ग, नागकेशर, ये २३ औषधियाँ २-२ तोले लेकर जौकूट चूर्ण करें। फिर चूर्णके साथ २०४८ तोले जल, १२०० तोले गुड़, ४० तोले धायके फूल और २४० तोले मुनक्का डाल, सबको मिश्रित कर चीनीके बोयाममें भरदें। मुनक्काको कुछ कूट लेना चाहिये। जिससे जल्दी मिश्रण बन जाय। फिर आसव विधान अनुसार १-१॥ मासतक बन्द रखकर आसव तैयारकर लेवें। आसव विधि रसतन्त्रसार प्रथम खण्डके आसव अरिष्ट प्रकरणमें विस्तारसे लिखी है। (शा० स०)

मात्रा —१। से २॥ तोले, समान जल मिलाकर दिनमें २ बार भोजनकर लेनेपर देवें।

उपयोग —यह आसव क्षय, गुल्म, उदररोग, कृशता, ग्रहणी, अन्त्रक्षय, पाण्डुता और अर्श रोगको सत्वर नष्ट करता है।

यह पिप्पल्याद्यासव उत्तम दीपन पाचन औषध है। यह आमाशय और यकृत, दोनोंको सबल बनाता है, जिससे आमाशय और लघु अन्त्र, दोनों स्थानोंकी पचनक्रिया प्रबल होती है और रस, रक्तादि सब धातुओंकी उत्पत्ति सत्वर होने लगती है। परिणाममें शारीरिक क्षीणता दूर होजाती है। पाचक अग्निकी क्षीणता होनेपर अपचन उत्पन्न हुआ हो, तो उसे दूर करनेके लिये यह अति उपयोगी है। बार-बार होनेवाले अजीर्ण विकारमें विशेषतः आमाजीर्ण और विष्टब्धाजीर्णपर यह उत्तम लाभदायक है। कतिपय लोगोंको दाल (द्विदल धान्य), गेहूं और दूधके पदार्थका पचन नहीं होता। फिर अजीर्ण होजाता है। ऐसे अजीर्णपर पिप्पल्याद्यासव अच्छा कार्य करता है।

आमाशय रसका निर्माण योग्य न होनेपर रसाजीर्ण और फिर रसक्षय होता है। रसक्षयके बाद रक्तक्षय, मांसक्षय आदि धातुओंका क्षय होता जाता है। इस प्रकारके क्षयमें यह आसव अमृतके सदृश उपकारक है।

कफगुल्म और वातगुल्मपर पिप्पल्याद्यासव उपयुक्त है। कफोदर और वातोदरमें जल संगृहित होनेके पहले इस औषधका उत्तम उपयोग होता है।

ग्रहणी रोगकी तीव्रावस्थामें इस आसवका उपयोग नहीं करना चाहिये, किन्तु रोग जीर्ण होनेपर या तीव्रता शमन होनेपर आम संग्रहणी होजाती है। फिर मलके साथ बहुत आम जाता हैं, किसी-किसीको अन्त्रक्षय (Intestinal Tuberculosis) होजाता है। इन दोनों प्रकारके विकारोंमें यदि अग्नि मान्यके लक्षण हों, तो इस आसवको व्यवहृत करनेसे लाभ पहुँचता है।

पाण्डुरोगमें लोह और शिलाजतु आदि औषधियोंके साथ इस आसवका सेवन करानेसे सत्वर गुण होता है।

वातार्श और कफार्शपर इस आसवका सेवन लाभदायक है।

(औ० गु० ध० शा० के आधारसे)

२१. मधूकासव

विधिः—महुवेके सूखे फूल १०२४ तोले, वायविडंग ५१२ तोले, चित्रकमूल २५६ तोले, भिलावा २५६ तोले और मजीठ १२ तोले लें। भिलावेके ४–४ टुकड़े करके मिलावें। शेष सबका जौ कूट चूर्ण करें। सबको ३०७२ तोले जलमें मिलाकर क्वाथ करें। तीसरा हिस्सा (१०२४ तोले) जल शेष रहनेपर उतारकर छान लें। क्वाथके समय शरीरको वाष्प न लगे, यह सम्हालें। क्वाथ शीतल होनेपर शहद १२८ तोले मिलावें। फिर उसे छोटी इलायची, नेत्रवाला, अगर और चन्दनके कल्कसे अन्दर लीपे हुए घड़ेमें डाल देवें और मुखमुद्राकर १ मासतक रहने दें। आसव तैयार होनेपर छानकर बोतलोंमें भर लेवें। (च० सं०

सूचना —यदि १८ दिनके पश्चात् १२८ तोले शहद और मिला दिया जाय, तो आसव विशेष गुणकारी बनता है।

मात्रा —१।—१। तोला दिनमें दो बार समान जल मिलाकर भोजनकर लेने-पर पिलावें।

उपयोग —यह आसव बृंहण और कफपित्तजित है तथा ग्रहणीको प्रदीप्त करता है। इसके प्रयोगसे शोथ, कुष्ठ, किलास (श्वित्र) और प्रमेह रोग नष्ट होते हैं।

यह आसव उत्तम आमपाचक और अग्निप्रदीपक है। इस आसवका परिणाम आमाशयस्थ पाचक पित्तपर अधिक होता है। आमाशय, अग्न्याशय, और अन्त्रकी पचन क्रिया सबल बनती है। इसहेतुसे रस-रक्त आदि सब धातुएँ बलवान बन जाती हैं।

इस आसवमें कीटाणुनाशक, दुर्गन्धहर और किञ्चित् उत्तेजक गुण होनेसे फुफ्फुस और श्वासप्रणालिकाओंमें संगृहित कफ सरलतापूर्वक बाहर निकलता रहता है। इस हेतुसे यह आसव जीर्णकास, जिसमें दुर्गन्धयुक्त सफेद या पीला कफ बार-बार निकलता रहता है, उसपर लाभ पहुँचाता है।

उपकुष्ठोंकी उत्पत्ति प्राय अन्त्रमेंसे दूषित रस, आमवात, कृमि विष या कीटाणुओंके शोषणसे होती है। अत अन्त्रका शोधन होनेपर वे रोग सरलतासे दूर हो सकते हैं। यह आसव अन्त्रसंशोधक, कीटाणुनाशक और सेन्द्रियविष नाशक होनेसे नये उपकुष्ठ (विविधचर्म रोगको भी) दूर करता है। इस तरह वृक्कोंकी सशक्त बनाकर नये कफज शोथको शमन करता है। यह आसव दीपन-पाचन गुणयुक्त होनेसे कफज-प्रमेहोंपर भी अच्छा लाभदायक है। इनके अतिरिक्त यह जीर्ण आमवातमें लीन दोषको जलाकर देहको नीरोगी बना देता है।

२२. द्राक्षादि चाटण

विधि —किसमिस, गुठलीरहित आलूबुखारा, गुठली रहित खजूर, अमलतास-की फलीका गूदा, कालीमिर्च, सोंठ, पीपल, दालचीनी, भूनीहींग, भूनाजीरा, काला-नमक, सैंधानमक और लहसुन साफ किया हुआ, ये १३ औषधियाँ ४ ४ तोले, नींबूका रस ३० तोले और गुड़ ३० तोले लेवें। अमलतासकी फलीके गूदाको नींबूके रसमें भिगो दें। फिर मसलकर छान लें। किसमिस, आलूबुखारा, खजूर और लहसुनको पहले अच्छी तरह शिलापर पीसकर कल्क बना लेवे। शेष औषधियोंको कूटकर कपड-छन चूर्ण करें। फिर कल्क, चूर्ण, गुड, और अमलतासमिश्रित नींबूकारस मिला अवलेहके सदृश बना लेवें।

मात्रा —४ से ६ माशे दिनमें २-३ बार देवें।

उपयोग —द्राक्षादि चाटण रुचिकर, कीटाणुनाशक, उदरकृमिहर, दीपन, उदरवातहर और मारक है। उदरशुद्धिके लिये यह निर्भय औषधि है। कोमल

स्वभाववाली स्त्रियां, सगर्भा और बच्चोंको भी दे सकते हैं। पुराना मलावरोधसे पीड़ित और ज्वरपीड़ित रोगीके लिये यह उपयोगी है।

२३. विसूचिकान्तक रस

विधिः—ताल चन्द्रोदय १ तोला; आमकी गुठलीकी गिरी, अजवायन सत्व और कपूर ६–६ माशे; लाल या पीली मिर्च बीजरहित १॥ तोले; जायफल और लौंग ३–३ माशे लें। कपूर और अजवायन सत्व मिलाकर जल बनावें। ताल चन्द्रोदय और मिर्चको खरल करें। फिर शेष औषधियोंका चूर्ण मिलाकर नींबूके रस और लहसुनके रसमें ६–६ घण्टे खरल करें। पश्चात् कपूर, अजवायनके सत्वका मिश्रण मिला, एक जीव करके १–१ रत्तीकी गोलियाँ बना लेवें।

वक्तव्यः—पहले प्रयोगदाताके पाठके अनुसार हम मल्लचन्द्रोदय मिलाते थे। किन्तु मल्लचन्द्रोदय कभी कभी वृक्कोंके कार्यमें प्रतिबन्ध करता है; इसलिये अब ताल-चन्द्रोदय मिलाते हैं। इस तरह अजवायन सत्वके परिमाणमें भी सुधार किया है।

मात्राः—१–१ गोली प्रति घण्टे ४–६ बार देवें।

उपयोगः—विसूचिकान्तक रस अपचनजन्य और कीटाणुजन्य; दोनों प्रकारके हैजेपर प्रयुक्त होता है। यह प्रयोग विसूचिकाके लिये विशेष लाभदायक सिद्ध हुआ है।

अपचनजन्य रोग होनेपर दिनमें ३ बार प्याजके रसके साथ देने मात्रसे लाभ पहुंच जाता है। रोग कीटाणुजन्य होनेपर १–१ घण्टेपर देते रहनेसे ४–६ घण्टेमें कीटाणुओंका नाश होकर विसूचिका दूर हो जाता है। तुरन्त योजना न होनेसे बलह्रास हो गया हो; तो आवश्यकता अनुसार कस्तूरी आध-आध रत्ती भी मिला देनी चाहिये।

रसतन्त्रसार व सिद्धप्रयोगसंग्रह प्रथमखण्डमें लिखी हुई विसूचिकाहरवटी (पिपरमेण्टयुक्त) और यह विसूचिकान्तक रस; दोनों विसूचिकाकी उत्तम औषधियाँ हैं। यदि औषधरचनाकी दृष्टिसे विशेष विचार किया जाय; तो कहना पड़ेगा कि, इस रसकी अपेक्षा विसूचिकाहर वटीका कार्य विशेष व्यापक है। फिर भी कफप्रधान प्रकृतिवाले; तेजस्वी और अफीम जिनको प्रतिकूल है; उनको यह रस जीवनदान देता है। विसूचि-काहर वटीमें अफीम आती है। अतः जबतक दूषितमल हो, तब तक नहीं दीजाती। एवं सगर्भा, बालक आदि जो अफीम सहन नहीं कर सकते; उनको विसूचिकाहर वटी नहीं दे सकते। अतः दूषितमल हो तबतक और बालक, सगर्भा आदिको यही रस देना पड़ता है। एवं शरीर अधिक शीतल बनजाने और हृदय क्रिया मन्द होजानेपर यह रस आशीर्वाद-रूप है। इसके सेवनसे मृत्युमुखमें जानेके लिये तैयार हुए अनेक रोगियोंके जीवनकी रक्षा हुई है।

२४. अजीर्णान्तक वटी (रसोन वटी)

विधिः—भुनाजीरा, भुनीसोंठ १२–१२ तोले; कालीमिर्च १० तोले, पीपल ५ तोले, कालानमक और सांभरनमक १२–१२ तोले, भुनी हींग १० तोले और साफ

किया हुआ एक कलीका लहसुन ४०तोले लेवे । लहसुनको चटनीके समान पीसलें। फिर शेष सब औषधियों का कपड़छान चूर्ण मिला, १ घण्टा खरलकर तुरन्त १-१ रत्तीकी गोलिया बनालेवे । (वैद्यराज कांतिलालजी)

मात्रा —२ से ४ गोली दिनमें ३ वार या आवश्यकता अनुसार जल, नींबू और अदरकके रस या चविकासवके साथ।

उपयोग—यह वटी उत्तम दीपन पाचन और स्वादु है। उपयोग करनेपर विदित हुआ है कि वैद्य जीवनोक्त रसोनादि वटीकी अपेक्षा यह अधिकतर प्रभावशील है। यह वटी अजीर्ण, नये अपचन, अफारा, सूक्ष्म उदरकृमि, उदरशूल और अपचन-जनित विसूचिकाको दूर करनेमें अति हितावह है। स्वादु भोजन अधिक करलेनेसे भारीपन आजाता है। फिर अपचनक्रिया सम्यक कार्य नहीं देती। ऐसी अवस्थामें २ २ गोली १-१ घण्टेपर ३ बार ले लेनेपर उदरका भारीपन दूर होता है। फिर अपचन नहीं होता।

मलावरोध रोग जीर्ण हो जानेपर विरेचन लेते रहना यह हितकर नहीं माना जायगा। विरेचन नहीं लें तो व्याकुलता बनी रहती है। विरेचन लेते हैं, तो निर्बलता बढ़ती है आते अधिक शिथिल होती जाती है। ऐसी अवस्थामें सत्वर फलदायी और अनपायी औषधिकी योजना करनी चाहिये। जो दीपन, आमपाचन, कृमिघ्न और सारक हो। अजीर्णान्तकवटी इन गुणोंसे युक्त होनेसे मलावरोध पीड़ित निर्बल रोगियों के लिये आशीर्वादके समान है।

ग्रीष्मकालमें ककड़ी खरबूजा, तरबूज और आम आदि फल जल्दी उतर जाते हैं। ऐसे फलोंका सेवन करनेपर विसूचिकाके सदृश अपचन, अफारा, पतले दस्त लगना और व्याकुलता आदि विकार उपस्थित होते हैं। उनपर यह वटी तत्काल अपना प्रभाव पहुचाती है।

आमसंग्रहणी होनेपर पाचनक्रिया अति मन्द हो जाती है। शौचके साथ आम निकलती रहती है और कुछ आंतोंमें जमा होती जाती है। फिर आंतोंमें बढ़ जानेपर ५–७ पतले दस्ते हो जाते हैं और रोगी निर्बल होजाता है। इस विकारमें आमोत्पत्ति रोकने और अग्निको प्रदीप्त करनेके लिये अजीर्णान्तकवटी ४–४ गोली नींबू और अदरकके रसके साथ दिनमें २ बार भोजनके आरम्भमें दी जाती है और भोजनकर लेनेपर पिप्पल्यादि आसव पिलाया जाता है।

२५. रसोनकर्पूर वटी

विधि —कपूर, साफ किया हुआ एक कलीवाला लहसुन और हींग तीनोंको समभाग मिला प्याजके रसमें ३ घण्टे खरलकरके १-१ रत्तीकी गोलियाँ बना लेवे।

मात्रा —१-१ गोली आध आध घण्टेपर प्याजके रसके साथ देते रहें या १ शक्करके साथ निगलवा देवे।

उपयोगः—यह गुटिका विसूचिकामें अच्छा लाभ पहुंचाती है। अपचन, शूल, जुकाम और अतिसार आदिको दूर करके अग्नि प्रदीप्त करती है। इसवटीके सेवनसे रोगबल कम हो जानेके बाद अधिक निर्बलता नहीं आती। एवं यह निर्बल हृदय वालों को भी निर्भयतापूर्वक अधिक बार दे सकते हैं।

विसूचिकाके तीव्र प्रकोपमें आध आध घण्टे पर १-१ गोली देते रहना चाहिये। बर्फ जैसा शीतल जल १-१ चमच देते रहें। रोगबल कम होनेपर मात्रा भी देरसे देनी चाहिये।

२६. वज्र वटी

विधिः—एरंड तैलमें शोधित कुचिलेका चूर्ण १६ तोले, कालीमिर्च ८ तोले, शुद्ध हिंगुल, ताम्रभस्म, पीपल और वच्छनाग २–२ तोले लेवें। सबको मिला अदरख और नीबूके रसमें १–१ दिन खरल करके आध आध रत्तीकी गोलियां बनावें।

मात्राः—१ से २ गोली दिनमें २ या ३ बार जलके साथ दें।

उपयोगः—यह वटी दीपन–पाचन, कृमिघ्न और वातहर है। अपचन, अग्निमान्द्य, अफारा, मलावरोध, उदरकृमि, आमातिसार, उदरशूल, वातविकार और ज्वरको नष्ट करती है।

वज्रवटीमें कुचिलाके गुणोंकी प्रधानता है। कुचिला शारीरिक चयापचय (Metabolism) क्रियावर्द्धक, आमाशयपौष्टिक (दीपन-पाचन), अन्त्रकी पुरःसरणगतिवर्द्धक, हृद्य, उदरकृमिनाशक, श्वासोच्छ्वास करानेवाले केन्द्र और रक्ताभिसरणके लिये उत्तेजक, कफस्रावी, कामोत्तेजक और वातनाडीपौष्टिक है।

सूचना—कुचिला या कुचिलाप्रधान औषधि नये तीक्ष्ण वातरोगमें कभी प्रयुक्त नहीं होती। जीर्ण पक्षाघात, कम्प आदि वातरोग; जो संचालक नाड़ियोंकी विकृतिसे हुआ हो, उसपर व्यवहृत होता है।

कुचिलाके साथ हिंगुल और ताम्र मिलाया है। जिससे यह वटी यकृत्को उत्तेजित करके अधिक पित्तस्राव कराती है तथा यकृत्प्लीहाकी निर्बलताको भी दूर करती है। गजानन्दवटी और भीमवटी, दोनों कुचिलाप्रधान हैं। फिर भी इन तीनोंके गुणधर्ममें अन्तर रहा है।

ज्वर—बच्छनागका मिश्रण होनेसे मुद्दती ज्वर, जीर्ण विषमज्वर, सूतिका ज्वर, बालकोंका आक्षेपसहज्वर इन सबपर यह सफलतापूर्वक व्यवहृत होता है। विषमज्वर दिनोंतक रह जानेपर उसका विष रक्तादि धातुओंमें लीन होजाता है। फिर मन्द-मन्द ज्वर बना रहता है; देह कृश और निस्तेज होजाती है। प्रायः यकृत्प्लीहावृद्धि भी होती है। यदि थोड़ा-सा कुपथ्य किया, तो ज्वर प्रकुपित होकर १०१° से १०२° तक बढ जाता है। इनके अतिरिक्त अग्निमान्द्य, अरुचि, मलावरोध, उदरवात, आमवृद्धि, शिरदर्द, नेत्रदाह और मूत्रमें पीलापन आदि लक्षण भी प्रतीत होते हैं। इन रोगियोंको डाक्टरीमें

क्विनाइन प्रधान औषधि देते रहते हैं। किन्तु पित्त प्रकृतिवालोंसे क्विनाइन सहन नहीं होती और जो रोगी अति क्विनाइन सेवनकर चुका है उनको क्विनाइनसे लाभ भी नहीं पहुचता। उन सब रोगियोंको इस वटीका सेवन करानेपर थोड़े ही दिनोंमें देह वज्रके समान दृढ़ बनजाती है।

अजीर्ण—अपचन होनेपर दुर्लक्ष्य करनेसे रोग जीर्ण और दृढ़ बनजाता है। फिर थोड़ा थोड़ा दस्त आते रहना उदरमें भारीपन अग्निमान्द्य, मलावरोध, निद्रावृद्धि आलस्य, सिरमें भारीपन मुँह पर कुछ शोथ भासना, मूत्रमें मैलापन, बार बार दूषित डकार आते रहना, भोजन करनेकी इच्छा न होना आदि लक्षण उपस्थित होते हैं। इस रोगपर इस वटीका सेवन १-२ सप्ताह करानेपर लाभ पहुचजाता है। एव अजीर्णसे शूल आदि उपद्रवोंकी प्राप्ति हुई हो, तो ये भी नष्ट होते हैं।

आमाजीर्ण—असमय पर भोजन करने या अत्यधिक भोजन करनेपर योग्य पचन नहीं होता। फिर अन्नरस दूषित होजानेपर आमाशयमें दाह-शोथ होकर अपचन होजाता है। फिर दूषित डकार आना, उदरमें भारीपन, जुकाम, किसी किसीको ज्वर होजाना, उदरमें शूल चलना, थोड़ा थोड़ा दुर्गन्धयुक्त दस्त होना और बेचैनी आदि लक्षण प्रतीत होते हैं। उसपर यह वज्रवटी और अग्नितुण्डी, दोनों हितावह औषध हैं। ४-४ घण्टेपर दिनमें ३ बार देनेसे प्रकृति स्वस्थ होजाती है। उदरमें विशेष भारीपना हो, तो साथमें हरड और सोंठका चूर्ण देनेसे सत्वर लाभ पहुँचता है। यदि भोजन न दिया जाय और केवल चाय या तक्रपर रखा जायतो विशेष अच्छा। दोपहरको अति क्षुधा लगनेपर मोसम्बी, सन्त्रा, अनार आदि फल दे सकते हैं।

यकृद्विकृति—यकृत् अशक्त हो जानेपर पित्तस्राव कम होता है। फिर अन्त्रमें अन्नका योग्य पचन नहीं होता। जिससे दस्तमें दुर्गन्ध आना, दस्तका रंग सफेद होना, उदरमें छोटे-छोटे कृमिकी उत्पत्ति होना, कभी कभी पतले दस्त लगना, उदरमें शूल चलना आदि लक्षण उपस्थित होते हैं। उसपर इस वटीका सेवन कुमार्यासवके साथ करानेसे यकृत् सबल होजाता है और यकृद् विकार-जनित सब लक्षण दूर होजाते हैं।

उपान्त्रदाह शोथ (appendicitis) रोग होनेपर उदरके दक्षिण भागमें जड़ता बनी रहती है। दबानेपर कुछ दर्द मालूम पड़ता है। कुछ कुछ दिनोंपर शूलका दौरा होता रहता है। वातवर्द्धक या गुरु भोजन करनेपर बहुधा दौरा होजाता है। अन्य दिनोंमें भी अग्निमान्द्य, मलावरोध, शारीरिक निर्बलता, जिह्वा सफेद मलयुक्त रहना आदि लक्षण भासते हैं। उसपर इस वटीका सेवन कुछ दिनोंतक कराना चाहिये और भोजन लघु पथ्य देना चाहिये।

अग्नितुण्डी-वटी और वज्रवटी, दोनों अपचन और वात प्रकोप पर हितावह हैं। दोनोंमें कुचिलाकी प्रधानता है। इन दोनोंमें कुचिलाकी मात्रा समान है। फिर भी ताम्र के योगसे यह वटी अग्नितुण्डीकी अपेक्षा अधिक तीक्ष्ण और पित्तस्रावी बनी है।

अतः यकृत्‌की निर्बलता होने पर वज्रवटी अग्नितुण्डीकी अपेक्षा अधिक उपकारक है। परन्तु सामान्य अपचन हो; तो वज्रवटीकी अपेक्षा नमक मिश्रित अग्नितुण्डीका प्रयोग करना; यह विशेष अच्छा माना जायगा।

वक्तव्यः—जिनका हृदय अधिक निर्बल हो और जीर्ण अजीर्णके हेतुसे जिनको औषधि दीर्घकाल तक देनी हो, उनको कुचिला प्रधान औषधि बहुत कममात्रामें देनी चाहिये।

सबल हृदय वालोंको सत्वर लाभ पहुंचाने और तीव्रप्रकोपमें विकारको तत्काल दबानेके लिये वज्रवटी विशेष उपकारक है। तीव्रप्रकोपमें एक दो दिन औषध सेवन कराना हो, तो निर्बल हृदय वाले को भी वज्रवटी दे सकते हैं।

२७. तण्डुलादि कृशरा

विधिः—लाल शालि चावल २ भाग; तिल और मूँग १-१ भाग लें। सबको पृथक् पृथक् भूनें। तिलको कूटकर छिल्टे दूर करें। फिर सबको मिला खिचड़ी बना घी मिलाकर खिलावें। (हा० सं०)

उपयोगः—यह खिचड़ी अच्छी तरह पेट भरकर खिलाते रहनेसे तीव्राग्नि अर्थात् भस्मक रोग शमन होजाता है। रोग अधिक तीव्र न हो, तो खिचड़ी १-१ दिन छोड़ कर खिलाना चाहिये।

इस खिचड़ीके सेवन कालमें प्रवाल पिष्टी ६ रत्ती, वंशलोचन, १ माशा, सोनागेरू ४ रत्ती और गिलोय सत्व १॥ माशा (या गिलोय स्वरस ४ तोले) मिला दो हिस्से कर प्रातः सायं शहदके साथ देते रहनेसे अधिक लाभ पहुँचता है।

२८. एफरवेसेन्ट एपसम सॉल्ट

(Magnesii sulphas Effervescens, B. P.)

मेग. सल्फ.	Mag. sulph.	५० औंस
सोडा बाई कार्ब.	Soda Bicarb	३६ औंस
टारटरिक एसिड	Tartaric Acid	१६ औंस
साइट्रिक एसिड	Citric Acid	१२॥ औंस
शर्करा	Sugar	१०॥ औंस

पहले मेगनेशिया सल्फासको फार्नहीट १३० (५४.४ सेन्टिग्रेड) तापांशपर शुष्क करें। जबतक २३ प्रतिशत वजन कम न हो, तबतक अग्निपर रक्खें। फिर उसे खरलकर, चूर्णबना शक्कर मिलावें। पश्चात् क्रमशः और औषधियाँ मिला लेवें। इस चूर्णको भगोनेमें डाल तपांश २०० से २२० फार्नहीट (९३.३ से १०४.४ सेन्टिग्रेड) पर गरम करें। चूर्णको बराबर चलाते रहना चाहिये। जब तक इसके दाने न बन जायँ तबतक चलाते रहें। फिर चालनीसे समानाकार चूर्णको छानकर अलग करें और शेष चूर्णको पुनः किञ्चित् अग्नि देकर दाने बना लेवें। इन सब दाने (चूर्ण) को १३० डिग्री फार्नहीट तापपर सुखाकर बोतलोंमें भर लें। वजन लगभग १००औंस होता है।

मात्रा—एक समयके लिये ४ से ८ ड्राम और बार-बार देने केलिये १ से ३ ड्रामतक।

उपयोग—अपचन, उदरमें भारीपन, अफारा, खट्टीडकार, उदरशूल, उबाक, वमन आदिपर इस औषधिको थोड़े जलमें डाल उफाण आनेपर तुरन्त पिला दिया जाता है।

२६. लवण द्रावक

(Acidum Hydrochloriam)

विधि—नमक ४८ औंस, गन्धकका तिजाब ४४ औंस, जल ३६ औंस और वाष्प जल ५० आंस। पहले २२ औंस जलपर गन्धकका तिजाब डालें। शीतल होनेपर लवण मिला चीनी मिट्टीके वक यन्त्रमें भरें। आधार पात्रके भीतर शेष ८ औंस जल रक्खें और अग्नि देकर तेजाब बना लेवें। जो वाष्प रूप द्रावक निकले, वह आधार पात्रमें होकर नल द्वारा दूसरे आधार पात्रमें रक्खे हुए वाष्प जलके भीतर ले जाँय। वाष्प जलके योगसे वाष्प द्रावकका तेजाब बन जाता है। इस तरह ६६ औंस होनेपर प्रक्रिया समाप्त करें। प्रारम्भसे अन्ततक क्रममें आधार पात्रको सावधानतापूर्वक शीतल रखना चाहिये। इस ३१ ७६% वजनमें हाइड्रोजन क्लोराइड रहा है। यह विशुद्ध लवण द्रावक वर्णहीन, तीक्ष्ण और अम्ल स्वादयुक्त है। इसे वायुमें रखनेपर श्वेत वर्ण और गन्धयुक्त धूम (लवण मिश्रित क्लोरिन गैस) निकलता है। इस तेजाबको डाक्टरीमें म्युरियाटिक एसिड (Muriatic acid) भी कहते हैं।

इस तरह लवण द्रावक बनानेपर नमक जल और गन्धकके तेजाबके मिश्रणके योग से वक यन्त्रमें सल्फेट ऑफ सोडा रह जाता है तथा लवणमें अवस्थित क्लोरिन गेस उस तेजाबमेंसे निकलती है।

वक्तव्य—इस तेजाबको अल्कोहाल, क्षार, क्षारघटित सब कार्बोनेट, भस्म, सुरमा (टार्टर) इमेटिक, कसीस, नागशर्करा, रजत और पारद घटित लवणके साथ नहीं मिलाना चाहिये।

मात्रा—लवण द्रावक ३७॥ औंस वजनको इतने जलमें मिलावें; कि सब मिलाकर १०० औंस नापमें होजाय। इसे विमर्दित लवण द्रावक (Acid Hydrochloric dil) कहते हैं। इसके भीतर १०% हाइड्रोजन क्लोराइड रहता है। इसका आपेक्षिक गुरुत्व १०५४ से १०५२ होता है। इसकी मात्रा ५ से ६० बूंद है। इसे १ औंस जलमें मिलाकर देवें। सामान्यतः २० बूंदसे अधिक नहीं देना चाहिये।

गुणधर्म—स्वल्प मात्रामें जलके साथ मिलाकर सेवन करनेपर आमाशय पौष्टिक, रसायन, क्षारनाशक और कृमिघ्न है। अधिक मात्रामें और जलरहित सेवन करनेपर दाहक विषक्रिया करता है।

उपयोगः—लवण द्रावक आदि सब खनिक द्रावक शरीरके भीतर सामान्यतः क्षारप्रधान स्राव (Alkaline secretion) की वृद्धि और अम्ल गुणका ह्रास कराता है। इस हेतुसे इस द्रावकका सेवन करनेपर लाला (Saliva): यकृत् पित्त (Bile): आग्नेय पित्त (Pancreatic Juice) और अन्त्ररस (Succus entericus), इन सबकी वृद्धि होती है तथा आमाशयको अम्लगुणविशिष्ट रस (Gastric juice) का ह्रास होता है। इसलिये आमाशयमें अम्लगुणविशिष्ट पाचक रसका निःसरण आवश्यकता से अधिक होनेपर भोजनके २० मिनट पहले लवण द्रावकका सेवन करानेसे अम्ल रसोत्पत्तिका ह्रास होजाता है। इसके विपरीत पाचक रसका निःसरण न होता हो या न्यून होता हो, तो भोजनकर लेनेपर इस द्रावकका सेवन करानेसे अम्ल रसकी पूर्ति भी होजाती है। इस तरह प्रयोग अनुरूप यह आमाशय पित्तोत्पत्तिका दमन या वृद्धि कराता है।

आमाशयमें अम्लपाचक रसका निर्माण दीर्घकालतक अधिक होता रहे, तब पचनक्रिया विकृत होकर विदग्धाजीर्ण (Acid dyspepsia) की सम्प्राप्ति होती है। फिर भोजनकर लेनेपर उदरमें भारीपन आजाता है, छातीमें दाह होता है; अम्ल उद्गार आता है और व्याकुलता होती है। इस विकारके शमनार्थ भोजनके २० मिनट पहले लवण द्रावकका प्रयोग करना चाहिये।

क्वचित् अन्य दूरवर्ती यन्त्रोंके साथ आमाशयकी समवेदकता रखनेके लिये आमाशय रस अधिक परिमाणमें निःसृत होता है। फिर खट्टी डकार, उबाक, वमन, छातीमें दाह आदि विदग्धाजीर्णके लक्षण उपस्थित होते हैं। इसपर भी अम्ल रसाधिक्यके दमनार्थ भोजनके पहले लवण द्रावकका प्रयोग जल मिलाकर किया जाता है।

यदि क्षार आदिके अति योगसे छातीमें दाह (Pyrosis) होता हो, तो उस विकारपर इस द्रावकका उपयोग आहारके पीछे किया जाता है। इस अम्लाधिक्यके निवारणार्थ भोजनके प्रारम्भमें लवणद्रावक और सोरक द्रावकका प्रयोग किया जाता है।

आमाशयके अत्यधिक और अनियमित उत्स्रेचन क्रियाके हेतुसे आमाशयमें विविध प्रकारके रस (एसेटिक एसिड, ब्युटिरिक एसिड, लेक्टिक एसिड) उत्पन्न होकर अम्लपित्त होजाता है। उस अवस्थामें भी इस द्रावकको जलमें मिलाकर देनेसे अम्लोत्सेचनका दमन होता है।

एक प्रकारके विष्टब्धा जीर्णरोग (Fermentative dyspepsia) में आमाशयमेंसे अम्ल रसका स्राव स्वल्प होता है। ऐसे समयपर भोजनके पश्चात् लवण द्रावकका प्रयोग करनेपर अम्लस्रावको सहायता पहुँचाकर पचन करनेकी क्षमताको बढ़ा देता है। आमाशयमें यदि मुक्त रस न हो, तो मांसवर्धक सत्व (पेपसिन प्रोटिन) नहीं गल सकता। अतः अम्ल रसकी अल्पता होनेपर भोजनके पश्चात् लवण द्रावकका उपयोग करना चाहिये।

आमाशय रसकी उत्पत्तिमें अनियमितता होनेपर इस द्रावकका उपयोग कुचिले और कितनाक कड़वी औषधियोंके साथ करनेपर पचन क्रियाको विशेष लाभ पहुँचता है। एवं यह अन्त्र प्रसेक (Intestinal Catarrh) और चिरकारी अतिसारमें भोजन के २–३ घण्टे बाद प्रयुक्त होता है।

यह पेशाबमेंसे क्षारका ह्रास कराता है। अतः मूत्रमें फोस्फेट जानेपर अश्मरी रोगमें तथा यकृत पित्तके स्रावमें उत्तेजना आनेके लिये इस द्रावकका प्रयोग क्वचित् ३ बार होता है। इसी तरह पेशाबमें ऑक्जलिक एसिड या सिस्टिक ऑक्साइड उपस्थित होनेपर भी यह व्यवहृत होता है। यदि पेशाबमें लिथेट ऑफ अमोनिया (यूरेट) जाता हो, तो इसका प्रयोग नहीं करना चाहिये।

घातक पाण्डु (Pernicious Anaemia) रोगमें तथा आन्त्रिक ज्वरमें आमाशय रसस्रावका ह्रास या अभाव होनेपर २० से ३० बूंद लवण द्रावक अधिक जल (२-४ औंस) के साथ प्रयुक्त होता है।

सब खनिज तेजाबकी क्रिया जीवित और मृत तन्तु (Tissue) पर रासायनिक (Chemical) होती है। ये तन्तुओंके एल्ब्युमिनके ऊपर क्रिया करते हैं और उसके भीतरसे समस्त जलका शोषण करके तन्तुओंको ध्वंस करते हैं। इस हेतुसे दुष्ट व्रण जो सत्वर फैलता है और तन्तुजालको नष्ट करता है (Phagedenic ulceration and sloughing), उसपर ये विशेष उपकारक हैं। मुँहमें विविध दुष्ट और जीर्ण बिगड़े हुए क्षत तथा कोथमय क्षत (Cancrum oris) पर इसका प्रयोग किया जाता है।

कण्ठमें कृत्रिम झिल्ली (Aphthal or Thrush) होनेपर जलरहित लवण द्रावकको ८ गुने शहदमें मिलाकर स्थानिक लेप किया जाता है। इनके अतिरिक्त बिगड़े हुए। गले हुए क्षतोंपर भी इसका स्थानिक प्रयोग होता है।

कण्ठरोहिणी (डिप्थेरिया) रोगपर इसके उग्र द्रावकको समभाग शहदके साथ मिलाकर कण्ठमें झिल्लीमय रोगग्रस्त स्थानपर लगानेपर लाभ पहुंचता है। स्वस्थ स्थान पर प्रयोग करनेपर प्रबल प्रदाह उत्पन्न होता है। अतः सावधानतापूर्वक प्रयोग करना चाहिये।

सूचना —विशुद्ध द्रावक (जिसमें जल मिलाकर विमर्दित न बनाया हो ऐसा द्रावक) त्वचापर लगानेसे प्रबल दाहक असर पहुँचाता है। एवं यदि उदरमें सेवन कराया जाय, तो जिन जिन तन्तुओंको उसका स्पर्श होगा, उन सब तन्तुओंको नष्ट कर देता है तथा विषाक्त लक्षण प्रकाशित करता है।

कण्ठ और आमाशयके प्रदाहसे बचनेके लिये इस द्रावकको अत्यधिक जलमें मिलाकर काचकी नलीद्वारा लेना चाहिये, ताकि इसके प्रभावसे दांतोंको बाधा न हो।

वक्तव्य —आमाशयकी प्रसेकावस्था (Catarrhal Condition) जिसमें श्लेष्माका अत्यधिक संग्रह हो, उसमें तेजाब सेवनका निषेध है। यह तेजाब

स्वस्थ व्यक्तियोंको बड़ी मात्रा में दीर्घकालतक दिया जायगा, तो उत्तेजना और अपचनकी उत्पत्ति कराता है। एवं आमाशयमें क्षत उत्पन्नकर देता है।

३०. सोराद्रावक।

(Acidum Nitricum, Nitric Acid)

विधिः—गन्धकके तेजाब १७ औंसके साथ सोरा (Sodium Nitrate) १ पौण्ड और जलको मिलाकर बक यन्त्रद्वारा खिंच लेनेपर सोरक द्रावक तैयार होता है। इस द्रावकमें ७० प्रतिशत हाइड्रोजन नाइट्रेट (वजनमें) और ३० प्रतिशत जल है। यह द्रावक स्वच्छ, वर्णहीन, प्रवाही और तीक्ष्ण, गन्धयुक्त है। आपेक्षित गुरुत्व १. ४२ है। वायुमें रखनेपर उसमेंसे तीव्रदाहक वायु निकलती है।

सूचनाः—क्षार, मद्यार्क, कार्बोनेट ऑक्साइड, सल्फाइड, अम्लप्रधान, द्रव्य, कासीस और नागशर्कराके साथ इस द्रावकको नहीं मिलाना चाहिये।

निर्जल द्रावक दाहक होनेसे उसका उपयोग उदर सेवनमें नहीं होता। विमर्दित (जलमिश्रित) अधिक मात्रामें लेनेपर या जलरहित द्रावकका सेवन करनेपर प्रदाहकी उत्पत्ति और दाहक-विष क्रिया करता है। विशक्त लक्षण उपस्थित होनेपर गंधक द्रावकके समान चिकित्सा की जाती है। दोनोंमें भेद यह है, कि गन्धक द्रावकसे मुँहकी श्लैष्मिक त्वचा श्वेतवर्णकी तथा सोरक द्रावकके लगनेपर पीतवर्णकी होजाती है। यह द्रावक दीर्घकालतक सेवन करनेपर मुँह आजाता है। अतः कुछ दिन बन्दकर देना चाहिये।

मात्राः—इस द्रावकके १५ औंस ४५ ग्रेन वजनको इतने जलमें मिलावें, कि सब मिलकर १०० औंस नापमें हो जाय। इस विद्मित सोरा द्रावकमें 10% हाइड्रोजन नाइट्रेट होता है। इसकी मात्रा ५ से २० बूंद १ औंस जलके साथ देवें।

उपयोगः—सोरा द्रावक योग्य मात्रामें सेवन करनेपर यह लालानिःसारक, अग्नि प्रदीपक, पौष्टिक, शीतलताप्रद, रसायन पित्तनिसारक और क्षारनाशक है। इसके सेवनसे क्षुधा प्रदीप्त होती है। पचनशक्तिकी वृद्धि होती है और शरीर बलवान बनता है। गन्धक द्रावकके समान इसमें संकोचक गुण नहीं है। अधिक दिनोंतक सेवन करनेपर अजीर्ण और उदरमें वेदना उपस्थित होती है। इसके सेवनसे कभी कभी मुँह आजाता है। आमाशाय व्रण अर्थात् अलसर पैदा कर देता है।

बाह्यउपचारमें निर्जल द्रावक अति प्रबल दाहक है। उपदंशज सड़े हुए घाव (Chancres), माँसांकुर (Warts), अर्शके मस्से (Haemorrhoids), दुष्ट सड़े हुए क्षत (Phagedaenic) (Sores) जहरीले सर्प और पागल कुत्तेका विष, इन सबको जलानेके लिये व्यवहृत होता है।

रोगान्त दौर्बल्य और अग्निमान्द्यको दूर करनेके लिये कड़वी वनौषधिके साथ विमर्दित द्रावक देनेपर उपकार होता है।

अजीर्ण रोगमें पेशाबके भीतर ओग्ज़ालिक एसिड जाता है और मानसिक दुर्बलता आती है, उसपर इस द्रावकके प्रयोगसे विशेष फल मिल जाता है।

बालकोंके अतिसार, जिसमें अधिक किंठना पड़ता हो, मल हरे रंगका दहीके कण जैसा और आमामिश्रित हो, उसपर यह द्रावक आश्चर्यकारक उपकार दर्शाता है। बालकोंके चिरकारी अतिसारमें मल हलके रंगका हो, खट्टी वास आती हो, रचना भी योग्य न हो, उसपर भी इस द्रावकका अच्छा उपयोग होता है।

अम्लपित्त रोगमें किसी किसीको भोजनकर लेनेपर थोड़े ही समयमें खट्टी डकार और अम्ल रस मुँहमें आजाता है, दाँत भी खट्टे होजाते हैं तथा छातीमें दाह (Pyrosis) होता है। उस रोगमें भोजनके पहले सोराद्रावक और लवण द्रावक मिश्रण देनेपर अम्लता सत्वर निवृत्त होती है। किसी किसीको आमाशयमें मुँहमें आया हुआ रस क्षारगुण विशिष्ट होता है, अतिशय कष्ट, उबाक और वान्ति होती है, ऐसे प्रकारपर भोजनकर लेनेके २ घण्ट बाद सोरा द्रावक या लवणद्रावकका प्रयोग करनेपर, उपकार होता है।

जीर्ण यकृत्प्रदाह (Chronic hepatitis) में पारद सेवनसे उपकार न होनेपर या किसी हेतुसे पारद प्रयोग अविधेय हो, तो विमर्दित सोरा द्रावक ५-१० बूँदकी मात्रामें १-२ औंस जलके साथ दिनमें ३ बार कुटकी, चूर्ण, रोहितकारिष्ट या कुमार्यासवके साथ एकाध मास सेवन करानेपर लाभ हो जाता है। (प्रति सप्ताह २ दिन औषधि बन्द कर देवें) चिरकारी यकृद्दाल्युदर (Cirrhosis) रोगमें भी इसके प्रयोगसे उपकार होता है। बालकोंके यकृत्क्रियाकी शिथिलताके हेतुसे मलावरोध होनेपर यह द्रावक निसोत या कुटकीके साथ दिया जाता है। यकृत्के समान चिरकारी प्लीहावृद्धिपर भी यह द्रावक लाभदायक है।

फिरंग रोगकी द्वितीयावस्थामें किसी किसीको सन्धिवात और चर्मरोग हो जाता है। रोगी वृद्ध और दुर्बल होनेपर अथवा रसकपूर, समीररस और मल्लप्रधान औषधि अविधेय होनेपर इस द्रावकका उपयोग १०-१० बूँद मात्रामें (सारिवासव और रक्त शोधकारिष्टके सेवन कराते हुए) करनेपर रोग निवृत्त हो जाता है।

पेशाबमें क्षारकी अधिकता होनेपर या फोस्फेट क्षारकी अश्मरी होनेपर इस द्रावकका सेवन कराया जाता है। इसके अतिरिक्त १ बूँद द्रावकको १ औंस जलमें मिलाकर मूत्राशयमें पिचकारी देनेसे अश्मरी गल जाती है। इस तरह जीर्ण मूत्राशय-प्रदाह रोगमें भी यह पिचकारी हितावह है। परन्तु प्रदाहमें उग्रता हो, तो पिचकारी नहीं देनी चाहिये। प्रारम्भमें दो दिनके अन्तरपर पिचकारी देवें। फिर रोज एक बार देवें। पिचकारी देनेके पश्चात् मूत्राशयमें ४० सेकण्डसे अधिक समयतक औषधको न रक्खें। ५ पिचकारीसे कष्ट हो, तो पिचकारी न देवें।

मधुमेह रोगीको पीनेके १ पिण्ट जलमें १ ड्राम द्रावक मिला लें। फिर थोड़ा थोड़ा पिलाते रहनेपर अधिक पिपासा और गात्र दाहका निवारण होता है तथा मूत्र परिमाण कम होता है। यदि साथमें अतिसार हो, तो सोराद्रावक न देवें।

अर्श रोगमें मस्सा भीतरकी वलीमें हो, जो वली बन्धन योग्य न हो उसपर निर्जल सोराद्रावकका स्थानिक प्रयोग करनेपर यथेष्ट उपकार होता है। बिल्कुल मँद अवस्थामें २–३ बार लगानेपर ही बहुधा ठीक होता है। रक्तस्रावयुक्त अर्शरोगमें इसका स्थानिक प्रयोग करनेपर रक्तस्राव बन्द होता है। स्फीत और प्रदाहयुक्त वली कुञ्चित होती है तथा वेदना शान्त होती है।

सड़े और गले हुए दुष्टक्षत, विशेषतः दूषितशस्त्रके लग जानेसे उत्पन्न क्षत (Hospital gangrene) सत्वर फैलने और तन्तुओंके नाशक (Phagedenic) क्षत, मुखका सड़ा हुआ क्षत (Cancrum oris) कोमल कर्कस्फोट वेदनाविहीन और भग्न भयंकर व्रण आदिपर निर्जल सोरा द्रावकका स्थानिक प्रयोग सर्वोत्तम माना गया है।

वक्तव्य—कांचकी सलाकाको द्रावकमें डुबोकर घावपर स्पर्श करानेपर समस्त मृत तन्तु नष्ट होजाते हैं। चारों ओरके जीवित तन्तुओंकी अवस्था परिवर्तित होती है, तथा विकार दूर होकर स्वस्थावस्थाकी प्राप्ति होजाती है।

प्रचुर पूयनिःसरणयुक्त दुष्ट व्रणको धोनेके लिये सोराद्रावकके धावनका व्यवहार करनेपर उपकार होता है।

इस द्रावककी क्रिया त्वचाके ऊपरके हिस्सेके तन्तुओंतक सीमाबद्ध होती है। भीतरमें रहे हुए गम्भीर तन्तुओंमें यह प्रवेश नहीं कर सकता।

देह पर किसी स्थानमें कृत्रिम त्वचाकी उत्पत्ति होकर मांसाकुंर (मस्से Naevus-wart) बनने और गुदापर त्वचा विकृति या गुदशूक (Condyloma) हो जानेपर उनको जलानेके लिये यह द्रावक महौषध है। १-२ ड्राम विमर्दित द्रावकको १ पाइन्ट जलमें मिलावें। फिर उसमें पट्टी भिगोकर निरन्तर उसपर रखनेसे और बार-बार पट्टीको गीली रखनेपर वह विकार दूर होजाता है और कोई कष्ट नहीं होता। कितनेक चिकित्सक निर्जल द्रावकको स्पर्श कराकर उसे जला डालते हैं। गर्भाशयके जीर्णप्रदाहमें भी यह द्रावक भीतर लगाया जाता है। इस तरह विषाक्त जन्तुका दंश होनेपर यह द्रावक उत्तम दाहक है। शीतपित्तके ददोरोंपर कण्डूके शमनार्थ इस द्रावकके धावनमें कपड़ा भिगोकर(स्पंजिंग) पोंछा जाता है।

मुखके भीतर श्लैष्मिक झिल्लीका प्रदाह, मुखमें क्षत कण्ठमें नयी कृत्रिम झिल्ली (Thrush) बनना, रसकर्पूर आदिके सेवनसे अधिक लाला-स्राव होना, आमाशयकी अति उग्रताके हेतुसे मुँहकी श्लैष्मिक त्वचाका लाल लाल, प्रदाहयुक्त और उज्वल होना, इन सबपर यह विमर्दित द्रावक हितकारक है। कम मात्रामें और जल मिलाकर उदर सेवन करनेपर उपकार दर्शाता है।

गवैयाके स्वरभङ्ग पवन विकृतिमें प्रतिफलित (रिफ्लेक्स) होकर उत्पन्न स्वरभङ्ग, तथा स्वरयन्त्रकी अति थकावटसे उत्पन्न स्वरभङ्गमें १० बूंद विमर्दित सोरा द्रावकका सेवन जल मिलाकर करानेपर लाभ होजाता है।

आशुकारी श्वासनलिकाप्रदाहमें निकलनेवाले कफका परिमाण अत्यधिक होनेपर जलमिश्र द्रावकका सेवन कराया जाता है।

३१ विमर्दित सोरा-लवण द्रावक
(Acidum Nitro-Hydrochloricum dilutum)

विधि —सोरा द्रावक नापके १० औंस, लवण द्रावक १६ औंस और शेष वाष्पजल मिलाकर १०० औंस बना लेवें। इनको मिलाकर १४ दिनतक बोतलमें रहने देवें। फिर व्यवहारमें लावें। इसका आपेक्षिक गुरुत्व १.०७ है।

मात्रा —५ से २० बूंदतक १-१ औंस जलके साथ दिनमें ३ बार।

उपयोग।—यह मिश्र द्रावक बल्य, अग्निप्रदीपक, क्षारनाशक, पित्तनिःसारक और रसायन है। कुछ दिनतक सतत सेवन करनेपर मुँह आ जाता है।

मूत्रमें ऑक्ज़लिक एसिड उपस्थित होनेपर यह द्रावक अन्य द्रावकोंकी अपेक्षा श्रेष्ठ है। पेशाबमें यूरेट क्षार उपस्थित होनेपर इसका सेवन कुछ दिनके लिये बन्द करें। पुनः कुछ दिन बाद चालू करें। इस तरह वर्षमें ३-४ बार सेवन कराने और पथ्य पालन करनेपर ऑक्ज़लिक एसिडका परिवर्तन होकर आरोग्यकी प्राप्ति होती है।

जीर्ण यकृत्प्रदाह और तीव्र यकृत्प्रदाहकी उग्रता शमन होनेपर इसका आभ्यन्तरिक और बाह्य प्रयोग विशेष उपकारक है। यकृत्में रक्ताधिक्य होनेपर सोरा लवण विमर्दित द्रावक ८ औंसको १ गैलन जल (९८%उष्ण) में मिला, उसमें कपड़ा भिगोकर यकृत्पर लपेटा जाता है तथा ऊपर तैलमय रेशमी कपड़ा बांधा जाता है। इस तरह सुबह शाम दिनमें दो बार प्रयोग किया जाता है। इस तरह पैर, जंघा, उरु आदि भागोंको पोंछनेके लिये भी इस द्रावकका उपयोग शीतल जलमें मिलाकर किया जाता है। देहके दक्षिण पार्श्वके बाहुमूलतक स्पन्ज किया जाता है। यह स्पन्ज दिनमें दो बार १-१ मिनिटतक किया जाता है। स्नानके निमित्त धातुपात्र नहीं लेना चाहिये। एवं जिस स्पन्जका उपयोग किया जाता है, उसे शीतल जलमें रख देंं। अन्यथा द्रावकके तेजसे स्पन्ज नष्ट होजाता है।

कामला, यकृत् रोगमें उत्पन्न अतिसार और शोथ होनेपर इस मिश्र द्रावकका उपयोग विशेष उपकार दर्शाता है। एवं पित्तनिःसरणकी विकृतिसे उत्पन्न विविध पीड़ाओंपर यह उपकारक है।

मुँहके भीतर उपदंशज व्रण होनेपर यह द्रावक शहद और जलमें मिलाकर कुल्ले करानेसे विलक्षण उपकारक होता है। फुफ्फुस कोथ (gangrine of the lungs) रोगमें मृत द्रव्य (विष) शरीरमें शोषित होनेपर विविध उपद्रव उपस्थित

होते हैं। उस रोगपर इस द्रावकका प्रयोग हितकारक है। एवं कफकासमें इसके मृदु प्रवाहीमें कपड़ा भिगोकर वक्षः स्थल पोंछ लेनेपर लाभ पहुँचता है।

३२. संजीवन अर्क

विधिः—अफीम ४ ड्राम, छोटी इलायचीके दाने १ औंस, जायफल २ औंस, कपूर ४ औंस और रेक्टिफाइड स्पिरिट २० औंस लेवें। इन सबको बोतलमें बन्दकर १ सप्ताह रहने देवें। बोतलको रोज २-३ बार चलालें। सप्ताहके पश्चात् फिल्टरपेपरसे छानलें और स्पिरिट कम हुआ हो उतना और मिला लेवें।

मात्राः—५ से १५ बूंद दिनमें ३ बार १-१ औंस जल या शक्करके साथ।

उपयोगः—यह संजीवन अर्क अपचन, अपचनजनित पतले दस्त, वमन, अपचनजन्य विसूचिका, कीटाणुजन्य विसूचिका, कालज अतिसार, भयजनित अतिसार, पार्वतीय अतिसार, प्रवाहिका, रक्तातिसार, पक्वातिसार, उदरशूल, प्रसूताका मक्कलशूल, मासिकधर्ममें शूल और छातीमें कफसंग्रह आदिपर व्यवहृत होता है। कर्णशूलमें इसकी बूंद कानमें डाली जाती हैं। दन्तशूल होनेपर इसका फोहा दांतोंमें रखा जाता है। सुजाककी जलनपर और स्त्रियोंके सोमरोगमें भी यह अर्क अच्छा लाभ पहुँचाता है।

विदग्धाजीर्णः—यह रोग होनेपर थोड़ा-थोड़ा पतला दस्त होता रहता है, प्यास, छातीमें दाह, बेचैनी आदि लक्षण भी प्रतीत होते हैं। इसपर यह अर्क दिनमें ३ बार देनेसे रोग शमन होजाता है।

नूतन अजीर्णः—अपचनसे जब आमाशय और अन्त्रमें शदाह उपस्थित होता है, तब दिनमें ५-७ बार वमन और दस्त होते रहते हैं। ऐसी अवस्थामें संजीवन अर्क देनेसे तुरन्त लाभ पहुँच जाता है।

विसूचिकाः—कीटाणुजन्य हैजा होनेपर वमन और दस्त बहुत जल्दी-जल्दी होने लगते हैं। प्यास भी बनी रहती है। थोड़े समयके पश्चात् हाथ पैरोंमें ऐंठन भी आती है। इस रोगकी प्रथमा और द्वितीयावस्थामें यह अर्क शर्तिया लाभ पहुँचाता है। १२ घण्टे व्यतीत हो जानेपर जब शरीर शीतल होजाता है, शक्ति क्षीण होजाती है, रक्त गाढा हो जाता है और रोगीमें बोलनेकी शक्ति भी नहीं रहती, तब इसके प्रयोगसे और अन्य दवाईसे भी लाभ होनेकी आशा कम हो जाती है। इस विकारपर ५-५ बूंद आध-आध और फिर १-१ घण्टेपर या वमन-दस्त होनेपर जल १-१ चमच या शक्करके साथ देते रहना चाहिये।

मोतीझरामें अतिसारः—मोतीझरामें कभी कभी अतिसार अति दुःखदायी बन जाता है। रोगी इस अतिसारके हेतुसे अति पीड़ित रहता है। बहुधा ऐसे समयपर मानसिक अस्वस्थता, निद्रानाश, मन्द मन्द प्रलाप भी होता है। इन सब लक्षणोंको संजीवन अर्क बहुत सरलतासे दूर कर देता है। मात्रा बहुत कम देनी चाहिये।

कफ प्रकोप —श्वास और कासरोगमें थोड़ा अपथ्य होने या आहार विहारमें भूल होने अथवा ऋतुदोषसे कफसंग्रह बढ जाता है। छाती कफसे भारी रहती है और सरलतासे कफ नहीं निकलता। जिससे रोगी बड़ा बेचैन रहता है। इस अवस्थामें दिनमें ३ बार ५-५ बूँद सजीवन अर्क देते रहनेसे २-४ दिनमें ही कफ निकलकर छाती मुक्त हो जाती है।

मक्कल शूल —प्रसव होनेके पश्चात् गर्भाशयमें कीटाणु अथवा वायुका प्रवेश होने, शीत लग जाने या आवलका कुछ अंश रह जानेपर मक्कल शूल उत्पन्न होता है। इसपर यह अर्क चमत्कारिक लाभ पहुँचाता है। शूल को शमन करनेके लिये मात्रा पूरी दी जाती है, किन्तु स्तन्यद्वारा बच्चेको हानि न हो, यह सम्हालना चाहिये।

पीडितार्तव —बीजाशय या बीजाशयनलिकामें विकृति होनेपर मासिकधर्ममें शूल चलता है। कितनीक स्त्रियाँ इस विकारसे मूर्छित होजाती है। इस विकारपर यह अर्क स्त्रियोंको अच्छी शान्ति दे देता है। यदि कब्ज हो, तो उसे दूर करना चाहिये और पथ्य भोजन लेना चाहिये। मात्रा १५ बूंद देनी चाहिये।

जीर्ण आमवातिक उपद्रव —आमवात (Rheumatism) हो जानेके पश्चात् थोड़ा शीत लग जाने या शक्कर खानेपर कितनेक रोगियोंको बार-बार कष्ट पहुँचता है। हृदयमें विकृति, ज्वरोत्पत्ति, देहमें भिन्न-भिन्न स्थानपर दर्द होना आदि लक्षण प्रतीत होते हैं। इनपर सोंठके फाण्टके साथ १५-१५ बूंद दिनमें ३ बार देते रहनेसे जल्दी गुण प्रतीत होता है। आवश्यकता अनुसार वातशूलान्तक मलहमकी मालिश भी करते रहना चाहिये।

कालज अतिसार —ग्रीष्म ऋतुमें धूपमें फिरना तरबूज, खरबूजे आदि अधिक खाना और फिर शीतल जल पीना आदिसे कालज अतिसार (Summer Diarrhoea) उपस्थित होता है। इसको यह अर्क तत्काल दबा लेता है।

पार्वतीय अतिसार —पर्वतोंमें अधिक फिरना, झरनेका दूषित जल पीना, बिना विश्रान्ति लिये गरम-गरम दूध, चाय पीना आदि कारणोंसे पार्वतीय अतिसार (Hill diarrhoea) होजाता है। यह रोग कभी-कभी बद्रीनाथ, अमरनाथ आदिकी यात्रा करके वापस आनेपर जलवायु परिवर्तन और भारी भोजनसे भी होजाता है। इन दोनों प्रकारोंपर यह सजीवन अर्क रोगियोंको जीवनदान देता है। भोजनमें दही, मट्ठा, खिचड़ी, भात आदि लघुपथ्य अन्न देना चाहिये।

सूजाकमें मूत्रदाह —सुजाक रोगीको तीक्ष्णावस्थामें मूत्रत्यागमें जलन होती है, किसी-किसीको जलन इतनी अधिक होती है कि आँखोंमें अश्रु आ जाते हैं। इन रोगियोंको सजीवन अर्क देनेसे २-३ दिनके भीतर जलन और उग्रताका दमन होजाता है।

सोमरोग —स्त्रियोंको सोमरोग-मूत्रातिसार होनेपर मूत्रत्यागपर उनका अधिकार नहीं रहता। देह शुष्क और निर्बल होजाता है। ऐसी स्त्रियोंको सजीवन अर्क देते रहनेसे अच्छा लाभ पहुँच जाता है।

अति विरेचनः—कभी विरेचनका अति योग हो जानेपर दस्त बन्द नहीं होता। रोगी अति दीन और पीड़ित होता है। उसे यह अर्क ५-५ बूंद २-३ बार देनेपर स्वास्थ्यकी प्राप्ति हो जाती है।

मानस अतिसारः—स्त्रियों और बालकोंको जाग्रत् या स्वप्नमें भय लग जानेपर किसी—किसीको अतिसार होजाता है। किसीको ज्वर भी आ जाता है। इस भयजनित विकारोंपर यह अर्क तत्काल लाभ पहुँचा देता है। भयके समान शोकके आघातसे भी अतिसार होजाता है। शरीर शीतल होजाता है और नाड़ी मन्द होजाती है। उस समय भी संजीवन अर्क अपना प्रभाव तुरन्त दर्शा देता है।

३३. स्वादिष्ट छुहारे

विधिः—१ सेर छुहारेको पहले ४-५ दिनतक नीबूके रसमें भिगोवें। फूल जानेपर भीतरसे गुठली निकालकर निम्न मसाला भरें। ऊपर नींबूका रस डाल देवें।

मसालाः—कालीमिर्च, पीपल, और दालचीनी तीनों २-२ छटांक, सोंठ, जीरा, स्याहजीरा, तीनों १-१ छटांक, सैंधानमक ६ छटांक और शक्कर २ सेर, इन सबको मिलाकर भरें और अमृतबानमें रखकर मुँह बांध देवें। अमृतबानको ४-५ दिन धूपमें रखें।

उपयोगः—यह छुहारा रुचिवर्द्धक और पाचक है। अपचनको दूर करता है। भोजनके साथ अचारके समान इसका उपयोग हो सकता है। एवं रुचि उत्पन्न करानेके लिये अन्य समयमें भी इसे ले सकते हैं।

उपर्युक्त मसाले (शक्कर रहित) को नीबूके रसमें मिलाकर रबड़ी जैसा घोल बनावें। फिर १-२ दिन घोटकर ४-५ दिन धूपमें रखकर सुखावें। फिर छोटी छोटी गोलियां बना लेवें। ये गोलियां पाचन और रुचिकर बन जाती हैं।

छुहारेके समान मुनक्काको नीबूके रसमें भिगो, मामूली मसाला मिलाकर खानेसे स्वादिष्ट, पाचन और सारक गुणकी प्राप्ति होती है।

गुलकन्दके भीतर उक्त मसाला मिला लेनेपर गुलकन्दमें पाचन गुण बढ जाता है।

---

(८) कृमिरोग

१. कृमिशत्रु चूर्ण

बनावटः—पलाशके बीज सेके हुए ५ तोले, कपीला, अजमोद, वायविडंग और इन्द्रजौ २॥-२॥ तोले तथा भुनी हींग ६ माशे लें। सबको मिला कूट कपड़छान चूर्णकर नीमके पत्तेके स्वरसके ५ पुट और अजमोद, वायविडंगके क्वाथके दो पुट देकर सूखा चूर्ण बना लेवें।

मात्रा—२ से ४ रत्ती दिनमें तीन बार जलके साथ दें।

उपयोग.—इस औषधके सेवनसे सब प्रकारके कृमि नष्ट हो जाते हैं। छोटे बालकको देना हो, तो मात्रा कम देनी चाहिये।

२. कृमिकुठार रस

विधि—सोंठ, कालीमिर्च, पीपल, हरड़, बहेड़ा, आंवला, भुनी हींग, सफेद-जीरा, कालाजीरा, अजवायन, खुरासानी अजवायन, अजमोद, किरमाणी अजवायन, हिंगुपत्री (डीकामाली), वायविडङ्ग, सौंफ, सैंधानमक, कालानमक, इन्द्रजौ, नागरमोथा, छरीला, नीमकी शलाकाएं, कोलम्बो, (Columba) और चिरायता, ये २४ औषधियां १-१ तोला और ताम्र भस्म २ मासे लेंवे। सबको कूटकर कपड़-छान चूर्ण करें। (र० यो० सा०)

मात्रा—३ मासे अवस्था अनुसार जलमें मिलाकर घोल दें। फिर २-३ ठीकरीको तपाकर उसमें डाल कर ढक दें। बाष्प शान्त होनेपर छानकर बच्चेको पिला देवें। इस तरह सुबह शाम दो बार देवें।

उपयोग—इस रसके सेवनसे बालकोंके सब प्रकारके कृमि और इनसे उत्पन्न ज्वर, पाण्डु, वमन, अतिसार, उदरपीड़ा, अग्निमान्द्य, कास, श्वास आदि दूर होते हैं। यह रस बालकोंके लिये अति लाभदायक है।

३ मुस्तादि योग

विधि—शुद्धपारद, शुद्धगन्धक, नागरमोथा, पलासके बीज सेके हुए, वायविडङ्गकी मज्जा (छिलका निकाले हुए) दाडिमके मूल या वृक्षकी छाल, सेकी हुई कांटेवाले करजकी गिरी, सेके हुए इन्द्रजौ, कपीला और किरमानी अजवायन (खुरासानी अजमोद), ये १० औषधियाँ १०-१० तोले तथा अजवायन सत्व (Thymol) और भुनी हुई हींग ५-५ तोले लें। पहले पारद गन्धककी कज्जली कर फिर अन्य द्रव्योंका कपड़छान चूर्ण मिला अनन्नासके पत्तोंके रसमें एक दिन खरलकर २-२ रत्तीकी गोलियां बना छायामें सुखा लें। (श्री० प० यादवजी त्रिकमजी आचार्य)

मात्रा—२ से ४ गोलीतक दिनमें दो बार निम्न क्वाथसे देवें।

अनुपान—नागरमोथा, मूसाकानी, पलासके बीज, वायविडङ्ग, दाडिमवृक्षकी छाल, अजवायन, किरमाणी अजवायन, सुपारी, देवदारु, सुहिंजनेकी छाल, हरड़, बहेड़ा आंवला और इन्द्रजौ, इन १४ औषधियोंको समभाग मिलाकर जौकूट चूर्ण करें। फिर १ तोला चूर्णको १६ तोले जलमें मिला चतुर्थांश क्वाथ करके पिला देवें।

उपयोग—इस योगके ७ से २१ दिन सेवन करनेसे उदरकृमि और इनसे उत्पन्न उपद्रव सब दूर होजाते हैं।

आमाशयके विकारसे कृमि उत्पन्न होनेपर अरुचि, अपचन, वान्ति मदज्वर,

अफारा, उदरपीड़ा, हिक्का, पाण्डुता आदि लक्षण उपस्थित होते हैं। उसपर इस औषधका सेवन करनेपर सब कृमियोंका नाश होकर पचनक्रिया सुधर जाती है।

आमाशयके समान यकृत् और अन्त्र विकारसे (निर्बलता से) अन्त्रमें विविध प्रकारके कृमि उत्पन्न होते हैं। फिर अति निर्बलता आजाती है। जुकाम, कास, उदर-पीड़ा, उदरमें वायु भरा रहना, उदरमें भारीपन, मलावरोध, थोड़ा-थोड़ा दस्त होना, उबाक आना, मंद मंद ज्वर बना रहना, नाक, गुदा और सर्वाङ्गमें खुजली चलना, शीतपित्तके समान रक्तपित्तके धब्बे हो जाना आदि लक्षण उपस्थित होते हैं। उस विकारपर मुस्तादि योगके सेवनसे लाभ होजाता है।

४. कृमिघ्न योग

योगः—कपिला, वायबिडङ्ग, नागरमोथा, डिकामाली और कालानमक, इन पांचोंको समभाग मिलाकर चूर्ण करें। इसमेंसे २-२ माशे भोजन करनेके पहले गुनगुने जलके साथ दिनमें २ समय लेते रहनेसे उदरकृमि तथा रक्तमें उत्पन्न कीटाणु, अरूचि, अग्निमान्द्य, उदरशूल, कोष्ठबद्धता और ज्वर आदि सब लक्षण थोड़े ही दिनोंमें दूर होजाते हैं।

अनेक बार पाण्डुरोगकी उत्पत्ति उदरकृमिकी वृद्धि होनेपर होती है, उसमें पाण्डुता, कृशता, उदरमें आध्मान, ज्वर रहना, प्लीहावृद्धि, (क्वचित् यकृद्वृद्धि भी), किसीको कफवृद्धि, अग्निमान्द्य, मलावरोध आदि लक्षण प्रतीत होते हैं। उसपर यह चूर्ण देनेसे कृमि गिरने लगते है। फिर थोड़े ही दिनोंमें रोगशमन होकर सब लक्षण दूर होजाते हैं।

५. नियमनादि कषाय

विधिः—कड़वे निम्बकी अन्तरछाल, हरड़, बहेड़ा, आंवला, कुड़ेकी छाल, बच, सोंठ, कालीमिर्च, पीपल, खैरकी छाल और निसोत, इन ११ औषधियोंको मिलाकर जौकूट चूर्ण करें। (नि० र०)

मात्राः—१-१ तोलेको १६ गुने गोमूत्रमें मिलाकर चतुर्थांश क्वाथ करके सुबह पिलावें।

उपयोगः—इस कषायके सेवनसे तमाम उदरकृमि (पुरीषज कृमि) एक सप्ताहमें गिरजाते हैं। जब पुरीषज कृमि-सूत जैसे पतले और छोटे छोटे कृमि उत्पन्न होते हैं, तब उदरमें वायुसंग्रह, गुदामें खाज आना, हाथ पैर गलना, दिनमें ३-४ बार दस्त लगना, उदरपीड़ा, कृशता, नेत्रके चारों ओर कालापन, रोग बढ़नेपर डकार और निःश्वासमें मलकी दुर्गंध आना, पाण्डुता, रोंगटे खड़े होना और अग्निमान्द्य आदि लक्षण प्रतीत होते हैं। उन सूक्ष्म कृमियोंके लिये यह क्वाथ अति हितकारक है। यह कषाय कृमियोंको गिराता है तथा उत्पत्ति भी बन्द कर देता है। प्रारम्भसे जब तक कृमि निकलते रहें, तब तक ऊपरकी सब वस्तु मिलाकर कषाय तैयार करें। कृमि निकलना

बन्द होनेपर विरेचन औषधि निसोत न डालें। एवं उलमें क्वाथ करके १०-१५ दिन-तक देते रहनेसे कृमिकी उत्पत्ति बन्द होजाती है।

६ कृमिकण्टक चूर्ण (नलवंध)

विधि—किरमाणी अजवायन, कांटेदार करंजके सेके हुए बीज, कालीजीरी, कोलग्वो, कुटकी, हिंगुपत्री, सेंधानमक, कालानमक, इन्द्रजौ वायविडङ्ग, कचूर, काकडासिंगी, निम्बौड़ीकी गिरी, कालीमिर्च और अनीम, इन १५ औषधियोंको समभाग मिलाकर कपड़छान चूर्ण करें। (आ० नि० मा०)

वक्तव्य—मूल ग्रन्थमें अतीस नहीं है, हमने बढ़ाया है।

मात्रा—२ से ४ रत्तीतक बालकोंको। बड़े मनुष्यको ३ माशेतक दिनमें ३ बार जलके साथ देवें।

उपयोग—यह कृमिकण्टक चूर्ण उदरकृमिकी उत्पत्तिको रोकता है। पचन संस्थानमें रहे हुए गोल कृमि और सूक्ष्म कृमियोंको निकाल देता है और कृमिजन्य ज्वर, उदरपीड़ा, अफारा, वमन अतिसार, मलावरोध, अपचन और अग्निमांद्यको दूर करता है।

यदि उदरकृमिमें पाण्डुता, शोथ और अति निर्बलता आ गई हो और मलावरोध रहता हो तो यह चूर्ण गोमूत्रके साथ देते रहना चाहिये।

बालकोंके सूखारोगमें अपचन, मलावरोध, हाथ पैर और मुख मण्डलपर शोथ आदि लक्षण हों, उदर जड़ा प्रतीत होता हो, तो कृमिकण्टकचूर्ण और १ १ रत्ती फिटकरीका फूला मिलाकर देते रहनेसे थोड़ेही दिनोंमें बालक स्वस्थ होजाता है।

सूचना—इस रोगमें बालकोंका यकृत् और वृक्क अपना कार्य उचित रूपसे नहीं कर सकता। अतः घृत-तैल शक्कर और गुड़ नहीं देना चाहिये।

---

१० पाण्डु-कामला

१ प्रवालमाक्षिक मिश्रण

विधि—प्रवालपिष्टी, सुवर्णमाक्षिक भस्म, और अमृतासत्व, तीनों १-१ रत्ती प्रात साय शहदके साथ देते रहनेसे थोड़े ही दिनमें पाण्डु, रक्तकी न्यूनता, रक्तमें श्वेताणुवृद्धि, निस्तेजता और दाह आदिका शमन होकर रक्तवृद्धि हो जाती है।

आवश्यकतापर २-२ रत्तीतक तीनों औषधि दे सकते हैं। इस मिश्रणमें लोह भस्म आधसे एक रत्तीतक मिलानेसे रक्ताणुओंकी सत्वर वृद्धि होती है। यदि दाह न हो, तो अमृतासत्वके बदले ६४ प्रहरीपीपल २-२ रत्ती मिला देनेसे अग्नि प्रबल बनती है और पाण्डुरोग जल्दी दूर होता है।

यदि हृदयकी धड़कन, हृदयावरोध, हृदयशूल या हृदयमें दाह आदि लक्षण भी प्रतीत होते हों, तो अर्जुन छालका क्वाथ अनुपान रूपसे दिया जाता है।

यह अति सौम्य औषधि है। सुकुमार स्त्रियों और बच्चोंको भी यह दी जाती है।

२. कालमेघ नवायस

विधिः—नवायस चूर्ण (रसतन्त्रसार प्रथम खण्ड) २ भाग और कालमेघ पञ्चाङ्गका चूर्ण १ भाग मिला कालमेघके स्वरस या क्वाथकी ७ भावना देकर १-१ रत्तीकी गोलियां बना लेवें। (श्री वैद्यराज यादवजी त्रिकमजी आचार्य)

मात्राः— २ से ३ गोली दिनमें २ बार जलके साथ।

उपयोगः—यह रसायन जीर्ण विषमज्वर, ज्वरके पश्चात्‌की निर्बलता, पाण्डु-रोग और यकृद्‌वृद्धिमें लाभदायक है।

३. पञ्चानन वटी (पाण्डु)

विधिः—शुद्धपारद, शुद्ध गन्धक, ताम्रभस्म, अभ्रकभस्म, शुद्ध गूगल और शुद्ध जमालगोटा, इन ६ ओषधियोंको समभाग लें। पहले पारद गन्धककी कज्जली करें। फिर भस्म और शेष ओषधियां क्रमशः मिला १ प्रहरतक १ तोले घृतके साथ मर्दन कर या १-१ रत्तीकी गोलियां बनावें। (र० सा० सं०)

मात्राः—१ से २ गोली प्रातः काल जल या पुनर्नवाष्टक कषायके साथ।

सूचनाः—इस रसके सेवनकालमें शीतल जल और अम्ल पदार्थोंका त्याग कराना चाहिये। शोथ होनेपर नमकका भी त्याग करना चाहिये।

उपयोगः—यह पञ्चानन वटी शोथसह पाण्डुरोगको दूर करती है। आहार विहार या ओषधि प्रयोगमें भूल होनेसे या यकृद्‌विकृतिसे शोथ उपस्थित होता है; तब उस शोथसह पाण्डुको दूर करनेके लिये इस रसकी योजना होती है।

जब त्रिदोषज पाण्डु (Progressive Pernicious Anaemia) होता है, तब नेत्रके अन्तर पटल, त्वचा और श्लैष्मिकला आदिमेंसे बूंद बूंद रूपसे रक्तस्राव होता है; फिर त्वचापर चारों ओर रक्तके धब्बे हो जाते हैं; पैरोंके घुटनोंकी ओर शोथ बढ़ता जाता है। मेद बढ़जाता है। बलका क्षय होता है। हृत्स्पंद वेगकी वृद्धि, हृदय-प्रसारण, बारबार मूर्च्छा, रात्रिको ज्वर १०२-१०४ डिग्रीतक रहना, रोगवृद्धिके साथ साथ विचार शक्तिका ह्रास होना आदि लक्षण प्रकाशित होते हैं। त्रिदोषज पाण्डुकी उत्पत्ति रक्तमें विषवृद्धिसे होती है। इसपर विशेषतः मल्ल प्रयोग किया जाता है; किन्तु प्रारम्भमें बिषको बाहर निकालने और जलानेका प्रबल प्रयत्न किया जाय, तो सत्वर लाभ हो जाता है। यह कार्य इस रससे उत्तम रूपसे होता है। अतिसार न हो और रक्तस्राव न होता हो, ऐसे रोगियों पर पञ्चानन वटीका प्रयोग किया जाता है। इसके साथ कुछ रोगोक्त महातिक्तघृतका सेवन कराया जाय, तो विशेष लाभ पहुँचता है।

लसीका ग्रन्थिवृद्धिजन्य श्वेताणुवृद्धि (Lymphatic Leukaemia) रोगमें मुखमण्डल निस्तेज सफेद-सा बन जाना, लसीका ग्रन्थियां बढ़ जाना, अपचन,

प्लीहावृद्धि, यकृद्वृद्धि, वृक्कवृद्धि, नेत्रकी पुतलियां पीली हो जाना आदि लक्षण होते हैं। रोग बढ़नेपर निम्नाङ्गगत शोथ उपस्थित होता है। यदि मुख, नासिका आदि स्थानोंसे रक्तस्राव न होने लगा हो, तो इस पञ्चानन वटीके सेवनसे सत्वर लाभ पहुँचने लगता है। यह औषधि प्रातःकाल एक ही समय देनी चाहिये। दोपहर और रात्रिको लोह या मण्डूरप्रधान औषधिकी योजना करनी चाहिये।

— पञ्चानन वटीके मुख्य ३ कार्य हैं (१) पचनसंस्थानसे अवस्थित उत्तान मलको बाहर निकालना (२) रक्त आदि धातुओंमें प्रवेशित लीन विषको जलाना, तथा (३) वातसंस्थान और यकृत्प्लीहाको बल देना। इनमें पहला कार्य जमालगोटा करता है। यह तीव्र विरेचन द्रव्योंमें श्रेष्ठ है। शोथ और जलोदरसह पाण्डु रोगपर इसका अधिक प्रयोग होता है।

स्वास्थ्यको हानि पहुँचानेवाले द्रव्य—नया पुराना मल, आमविष, कफ, कृमि, कीटाणु, पूय, बाहरसे प्रवेशित विष और मृत घटक आदि, जो पचनसंस्थान या (बृहदन्त्र) में अड्डा जमाकर दृढ़ हो गये हों, उन सबको बलात्कारसे बाहर फेंकनेका कार्य जमालगोटाकर देता है।

प्रथमकार्यकी सिद्धि होनेपर त्वचाके नीचे सगृहीत जल, जो शोथ उत्पन्न कराता है, वह रक्तमें आकर्षित हो जाता है। फिर ताम्र वंशलोचन आदिकी सहायतासे द्वितीय कार्यकर देता है।

ताम्रके योगसे यकृत्पित्तस्राव अधिक होनेसे अन्त्रमें रहे हुए सेन्द्रिय विषके हानिकर प्रभावसे बचनेकी क्रिया होने लगती है। एवं यकृत्प्लीहामें प्रवेशित विष जल जाता है। तथा रक्ताभिसरण क्रिया बलपूर्वक होने लगती है।

पारद और गन्धक रक्तमें प्रवेशित होकर लीन विषको नष्ट करनेमें सहायता पहुँचाता है।

तृतीय कार्यकी सिद्धिके लिये अभ्रक और गूगलको मिलाया है। अभ्रक रक्तकी न्यूनता पूर्ण करता है। हृदय और वातवाहिनियोंको सबल बनाता है। पाण्डुरोगमें उत्पन्न घबराहट, श्वास और बेचैनीको दूर करता है। उदरमें बढ़ी हुई लसीका ग्रन्थियां और रसवहन विकृतिको सुधारता है। मांस को दृढ़ और नीरोगी बनाता है। इस हेतुसे पाण्डुरोग सम्पूर्ण उपद्रवोंसह नष्ट हो जाता है।

गूगल वातवाहिनियोंको सबल बनाता है, सेन्द्रिय विष और दुर्गन्धको नष्ट करता है। मेदको कम करता है। हृदयको पुष्ट बनाता है। परिणाममें विष नष्ट होकर सत्वर स्वास्थ्यकी प्राप्ति होजाती है।

वक्तव्य—इस औषधिमें जमालगोटा है। अतः अन्त्रप्रदाह (उदरपर दबानेसे वेदना होना) या वृक्कोंमें व्रण होनेसे मूत्रमें पूय जाता हो तो पञ्चानन वटीका प्रयोग न करना चाहिये।

४. लोहसिन्दूर

विधिः—रससिन्दूर ४ तोले, लोहभस्म ८ तोले और शुद्ध गन्धक १२ तोले लेवें। इन सबको खरलमें मिलाकर आतशी शीशीमें भरें। ऊपर आधी बोतलतक २४ तोले सेमलका क्वाथ भरें। फिर वालुकायन्त्रमें रखकर मृदु अग्नि देवें। सेमल का रस लगभग समाप्त होनेपर त्रिफलाका गरम क्वाथ २४ तोले डालें। फिर गिलोयका गरम स्वरस २४ तोले डालें। द्रव सुख जाने और गन्धक लगभग जल जानेपर (मलस्थ रसायन बन जानेपर) अग्नि देना बन्द करें। अग्नि लगभग १ दिन देनी पड़ती है। फिर स्वांग शीतल होनेपर निकाल त्रिकटुके क्वाथ और अदरखके रसमें १२-१२ घण्टे खरलकर १-१ रत्तीकी गोलियां बना देवें। (र० यो० सा०)

वक्तव्य—बोतलमें रस डाल अग्निसे सुखानेकी अपेक्षा खरलमें ही तीनों प्रकारके रसोंको घोट, सुखा, शुष्क औषधिको आतशी शीशीमें भरकर सिन्दूर बनानेपर विशेष गुणवान बनता है।

मात्राः—१-१ गोली दिनमें दो बार च्यवनप्राशावलेह या रोगोचित अनुपान के साथ देवें।

उपयोगः—यह लोहसिंदूर शुष्क (धातुक्षयसह) पाण्डुका नाश करता है। विविध ज्वर, उदरकृमि, आमवात, मधुमेह, उपदंश आदि रोगोंसे आई हुई पाण्डुता, निर्बल माताओंको संतानोत्पत्ति, बालकोंको स्तनपान, अति मैथुन, हस्तमैथुन, उपवास, मानसिक चिन्ता, अति शुक्रस्राव, पौष्टिक भोजनका अभाव, तमाखू आदिका अति सेवन तथा शीशा विष, इत्यादि कारणोंसे पाण्डुरोगकी उत्पत्ति होती है। इनमेंसे सबपर तो इसका प्रयोग नहीं हो सकेगा। जिनमें विषप्रकोप अवस्थित हो ऐसे राजयक्ष्मा, लसीकामेह (Albuminum), मधुमेह, उपदंश और शीशा विषसे उत्पन्न पाण्डुपर इसका योग्य उपयोग नहीं होता। एवं जब तक तीक्ष्ण ज्वर हो, तब तक भी इस औषधसे पाण्डुता दूर नहीं होसकती। फिर भी कुछ शक्ति तो प्रदान अवश्य करता है। यदि मांसमें अधिक क्षीणता आ गई है, तो अभ्रकभस्म साथमें मिला देनी चाहिये तथा च्यवनप्राशअवलेह या आंवलोंका मुरब्बा अनुपान रूपसे देनेसे शुष्कता, पित्तप्रकोप, दाह, कोष्ठबद्धता आदि दूर होकर सत्वर लाभ मिल जाता है।

अधिक संतानोत्पत्ति या बालकको स्तन्यपानके हेतुसे शुष्कता आई हो, सो प्रवालपिष्टी और अमृतासत्वके साथ इस रसका सेवन कराना चाहिये।

अति मैथुन, हस्तमैथुन, बाल्यावस्थामें ब्रह्मचर्य भङ्ग आदि कारणोंसे शुष्कता आई हो, तो च्यवनप्राश, अमृतप्राश अथवा शतावर्यादि चूर्ण अनुपान रूपसे मिला देना चाहिये।

त्रिदोषज पाण्डु (Progressive Pernicious Anaemia), जिसमें रक्तस्राव होता रहता है तथा हृदय मेदापक्रान्तियुक्त होजाता है। उसपर इस रससे लाभ

नहीं पहुँचता। लसीका धातु या लसीका ग्रन्थियोंसे उत्पन्न पाण्डुरोगमें भी इस रसायनका उपयोग नहीं होता है। एवं स्त्रियोंके स्त्रीमकर्म भी रुग्णा शुष्क नहीं होती, मोटी ताजी प्रतीत होती है। उनपर इस औषधका प्राय उपयोग नहीं होता।

इस रसमें मुख्य औषधि रस सिंदूर लोहभस्म और गन्धक हैं। लोह भस्म रसायन, हृद्य, रक्तके रक्ताणुओंको बढ़ानेवाली, पित्तशामक और रुधिराभिसरण क्रियावर्धक है। रससिंदूर रसायन, कीटाणुनाशक, हृद्य और उत्तेजक है। लोह भस्मका संयोग होनेसे रक्तमें लाली बढ़ानेमें सहायता पहुँचाता है। गंधक रक्तप्रसादन कृमिघ्न, हृद्य और पाचन है। सेमलकी जड़, त्रिफला और गिलोय पित्तशामक और पौष्टिक है।

५ नारायण मण्डूर

विधि.—सोंठ, कालीमिर्च, पीपल, अपामार्गकी जड़, चव्य, पीपलामूल, भूनी हींग, भारंगी, गजपीपल, अजमोद, अजवायन, वच, हरड़, बहेड़ा, आँवला, हल्दी, दन्तीमूल, मजीठ, वज्रवल्ली (अस्थि संहारी), लहसुन, कालीमिर्च, पाठा, सरफोंका, पुनर्नवा, शुद्ध जमालगोटा, सेंधानमक, मूर्वा, कुटकी और इन्द्रायण, इन २८ औषधियोंका कपड़-छान चूर्ण १-१ तोला तथा मण्डूर भस्म या लोहभस्म २६ तोले लेवें। फिर भांगरा, बिजौरा, हल्दी, अदरक, प्रसारणी, तुलसी, वनतुलसी, नागरमोथा, आवलेके रस या क्वाथके साथ १-१ दिन खरलकर २-२ रत्तीकी गोलियां बना लेवें।

(र० यो० सा०)

वक्तव्य —इस रसायनमें लोहभस्मकी अपेक्षा मण्डूरभस्म मिलाना अधिक हितावह माना जायगा। मण्डूरका वियोजन और रूपान्तर लोह भस्मकी अपेक्षा सरलतासे होता है। एवं मण्डूर उदर शोधनमें सहायक भी होता है।

मात्रा —१ से २ गोली प्रातःकालको सफेद पुनर्नवाके स्वरस, मट्ठा या गुनगुने जलके साथ दें। शोथ और जलोदरके विषको पेशाब द्वारा बाहर निकालना हो, तब थवहार भी पुनर्नवा रसमें मिला देना चाहिये। विरेचन कराके मलको निकालना हो, तब अनुपानमें गुनगुना जल देवें। दोषको पचन कराना हो और ज्वर न हो, तब मट्ठाके साथ देना हितकारक है।

उपयोग —इस रसके सेवनसे सब प्रकारके *प्रबल पाण्डुरोग*, विषप्रकोपज पाण्डु, शोथसह पाण्डु, कामला, शोफ रोग, अरुचि, अग्निमान्द्य, गुल्म, हृद्रोग, शूल, उदररोग, पार्श्वपीड़ा, विविध प्रकारके विषमज्वर वमन, मलावरोध, क्षय, त्रिदोषज श्वास-कास आदि रोग समूह दूर होते हैं। यह रस पाण्डुरोगके लिये अति लाभप्रद है।

पाण्डुरोगकी सम्प्राप्तिके अनेक कारण हैं। विविधरोग, कीटाणु या विषसे रक्त रचनामें विकृति, आमाशय, हृदय और यकृत्प्लीहाकी निर्बलता, ये मुख्य कारण हैं। रक्तस्राव, मानसिक चिन्ता, फुफ्फुस विकार, गर्भाशय विकृति, विषप्रयोग आदि अन्य भी कुछ हेतु हैं। इनमेंसे विविध रोगकीटाणु और आमाशय आदि इन्द्रियोंकी निर्बलता या कार्य विकृति होनेपर यह मण्डूर अच्छा लाभ पहुँचाता है।

पाण्डुरोगमें रक्तकी न्यूनता, रक्ताणुओंकी न्यूनता और केशिकाओंकी विकृति, इन तीनमेंसे किसी भी प्रकारकी विकृति हो, उन सबपर यह रस व्यवहृत होता है। इस मण्डूरकी योजना विविध गुणयुक्त द्रव्योंको मिलाकर की है।

पाण्डुरोगको दूर करनेके लिये उदरमें संगृहीत मल, आम, विष, कीटाणु आदि-को कफ, मल, मूत्र-प्रस्वेदद्वारा बाहर निकाल देना चाहिये और पचनेन्द्रिय संस्थानकी इन्द्रियोंको कार्यक्षम बना देना चाहिये। जिससे पुनः रोगोत्पादक दोषकी उत्पत्ति न हो। इसलिये उदर संशोधनार्थ नारायण मण्डूरमें दंतीमूल, जमालगोटा, कुटकी और इंद्रा-यणकी योजना की है। मुँहसे कफद्वारा दोषको बाहर निकालनेके लिये बच, बेहड़ा, भारंगी आदि तथा श्वासोच्छ्वास और प्रस्वेदद्वारा विषको बाहर निकालनेके लिये हींग, तुलसी, अजवायन, लहशुन आदि मिलाये हैं। विष, आम और कीटाणुओंके नाशका कार्य भी इन हींग, लहशुन, अजवायन, प्रसारणी, त्रिकटु आदिसे सम्यक् प्रकारसे होता है।

आमाशय आदि इन्द्रियोंके लिये उपकारक त्रिकटु, त्रिफला, पीपलामूल, लह-शुन, हींग, अजवायन, चव्य, गजपीपल, अजमोद आदि मिलाये हैं। वृक्कोंद्वारा विष बाहर निकलनेके लिये पुनर्नवा, अपामार्ग आदि। यकृत् प्लीहापर लाभ पहुँचानेके लिये अपामार्ग, सरफोंका और पाठा तथा जीवन विनिमय क्रिया सुधारनेके लिये अपामार्ग, मूर्वा, आंवला, हरड़, भांगरा आदिका सम्मिलन कराया है। इन सब द्रव्योंकी सहायता लेकर मण्डूरभस्म रक्त, रक्ताणु, रक्तवाहिनियाँ, रक्ताभिसरण क्रिया और हृदयेन्द्रिय आदिपर लाभ पहुँचाकर पाण्डु, शोथ, उदररोग, श्वास, अग्निमान्द्य, विबंध आदिको नष्ट करती है।

वक्तव्यः—जिनको दस्त पतले होते हों अर्थात् मलकी प्रवृत्ति हो उस दशामें इसका प्रयोग सावधानतापूर्वक करना चाहिये। क्योंकि इसमें जमालगोटा है। जमाल-गोटा क्षीण रोगी, क्षतक्षयी, वृक्करोगी और उदरप्रदाहके रोगीको निषेध है।

६. पञ्चामृत मण्डूर

विधिः—लोह भस्म, ताम्र भस्म, शुद्ध गन्धक, अभ्रक भस्म, शुद्ध पारद, सौंठ, कालीमिर्च, पीपल, हरड़, बहेड़ा, आंवला, नागरमोथा, बायविडंग, चित्रकमूल, चिरायता, देवदारू, हल्दी, दारुहल्दी, पुष्करमूल, अजवायन, जीरा, कालाजीरा, कचूर, धनिया और चव्य, ये २५ औषधियां २-२ तोले, मण्डूर भस्म २५ तोले, गोमूत्र १०० तोले और पुनर्नवाके मूलका क्वाथ २०० तोले लेवें। पारद गन्धककी कज्जली करके भस्म मिला लेवें। पश्चात् गोमूत्र मिलाकर पाक करें। फिर पुनर्नवाका क्वाथ मिलाकर पाक करें। नीचे उतार काष्ठादि औषधियोंका कपड़छान चूर्ण मिलावें। शीतल होनेपर शहद ८ तोले मिलाकर चौड़े मुँहके बोतल या अमृतबानमें भर लेवें। (भै० र०)

उपयोग —पञ्चामृत मण्डूर शोथयुक्त जीर्ण संग्रहणी रोग, पाण्डु, कामला, अग्निमान्द्य, जीर्णज्वर, प्लीहावृद्धि, गुल्म, उदररोग, यकृद्वृद्धि, कास, श्वास, प्रतिश्याय इन सबको दूर करता है तथा कान्ति और पुष्टिकी वृद्धि कराता है।

पञ्चामृत मण्डूर उत्तम शक्तिवर्द्धक है। इसका उपयोग जीर्णरोगमें अधिक होता है। रोग जितना पुराना हो और रोगीकी शक्ति कम हो, उतनी ही मात्रा कम देनी चाहिये। मात्रा अधिक हो जानेपर प्रतिफलितक्रिया होकर हानि पहुँचती है।

आंतोंमें सूजन आजानेपर अन्त्रकी पचक्रिया दूषित होती है। आहार रस और मलको आगे सरकानेकी क्रिया यथोचित नहीं होती। आम, मल, विष, कृमि और कीटाणु आदि बृहदन्त्रमें सगृहीत होते रहते हैं। फिर बड़ी कठिनाईसे थोड़ा थोड़ा मल त्याग होता है।

इस स्थितिमें इन आम मलादिमेंसे विषका शोषण रक्तमें होता रहता है। इसी हेतुसे पाण्डु, कृशता, निस्तेजता, प्रतिश्याय, श्वास, कास, उदरवात, उदरशूल, उदरकृमि, आदि रोगोंका निर्माण होता है। यह पञ्चामृत मण्डूर इन सब रोगोंके मूलरूप अन्त्र-शोथको दूर करता है। जिससे वे सबरोग कारण नाशके साथ छिन्नमूल होकर नष्ट हो जाते हैं।

अन्त्रमेंसे जब आमविष अधिक मात्रामें रक्तके भीतर शोषित होजाता है, तब ज्वर आजाता है। यह विषशोषण क्रिया दूर नहीं हुई या अपथ्य सेवन होनेसे सगृहीत विषका नाश नहीं हुआ तो ज्वर जीर्ण बन जाता है। फिर देह निस्तेज और कृश हो जाती है। यदि विषशोषण भी होता रहता है, तो ज्वर विष धातुओंमें लीन होजाता है। फिर सरलतासे दूर नहीं होता। इस प्रकारके दृढ़ जीर्ण ज्वर उदरविकृतिसह पञ्चामृत मण्डूरके सेवनसे १ मासमें दूर होजाता है।

क्षुधा न लगती हो, उदरको दबानेपर दर्द होता हो, भोजन बिना पचन हुये मल बन जाता हो और देह अति कृश और निस्तेज होगई हो, ऐसे संग्रहणी रोगमें इस औषधिका उपयोग होता है। इस रोगमें यदि ज्वर, कास, श्वास आदि लक्षण हों तो वे सब ही कुछ दिनोंमें दूर होजाते हैं।

फुफ्फुस, यकृत्, प्लीहा और वृक्क स्थानको यह बल देता है और पचन क्रिया सुधारता है। इस हेतुसे यकृद्वृद्धि, प्लीहावृद्धि और इनसे उत्पन्न पाण्डु, कामला और उदररोगकी भी इसके सेवनसे निवृत्ति होजाती है।

७. मण्डूर वटक

विधि —सोंठ, कालीमिर्च, पीपल, हरड़, बहेड़ा, आंवला, नागरमोथा, वायविडङ्ग, चव्य, चित्रकमूल, दारुहल्दी, दालचीनी, सुवर्णमाक्षिक भस्म, पीपलामूल और देवदारु, ये १५ औषधियाँ ८-८ तोले, मण्डूर भस्म २४० तोले और गोमूत्र १९२० तोले (२४ सेर) लें। पहले मण्डूरको गोमूत्रमें मिलाकर पाक करें। फिर

शेष औषधियोंका कपड छान चूर्ण मिलाकर, २-२ रत्तीकी गोलियां बनालेवें। (च०सं०)

मात्रा:—१ से २ गोली दिनमें २ बार प्रातः सायं मट्ठेके साथ देवें।

उपयोगः—मण्डूर वटक पाण्डुरोगीको प्राणदा जीवनदान देनेवाला है। इसके अतिरिक्त कुष्ठ, कृमि, उदररोग, कण्ठरोग, अग्निमांद्य, अरुचि, अजीर्ण, शोथ, उरुस्तम्भ, कफविकार, सब प्रकारके अर्श, अतिसार, अफारा, ग्रहणी, कामला, प्रमेह और प्लीहावृद्धि, इन रोगोंको दूर करता है।

जिन रोगियोंको तक्र सेवन अनुकूल रहता है। उनको तक्र कल्प कराना चाहिये अथवा मट्ठा-भातपर रखना चाहिये। इस तरह पथ्यपालन दृढ़तापूर्वक हो तो त्रिदोषजपाण्डु, विविध उपद्रवयुक्त पाण्डु, विषप्रकोप, अस्थिमज्जाविकृति, लसीका-की वृद्धि, प्लीहावृद्धि आदि सब विकार सरलतासे नष्ट हो जाते हैं।

८. क्षारादि मण्डूर

विधिः—सैंधानमक, एलुवा, सोंठ कालीमिर्च, पीपल और मण्डूर भस्म, इन ६ औषधियोंको समभाग मिला घीकुंवारके रसमें ३ दिन खरलकर २ २ रत्तीकी गोलियां बनालेवें।

मात्रा:—१ से ३ गोली दिनमें २ बार गोमूत्र या जलके साथ देते रहनेसे थोड़े ही दिनोंमें मिट्टी खानेसे उत्पन्न पाण्डु और अन्य प्रकारके पाण्डु रोग दूर होजाते हैं।

यह मण्डूर अन्त्र शोधक है। अन्त्रमें आम, मल, मिट्टी या अन्य विष आदि संग्रहसे उत्पन्न विकारोंपर यह लाभदायक है। उदर जिनको बढ़ गया हो, दबानेपर कठोर भासता हो, उन रोगियोंको यह मण्डूर दिया जाता है।

पथ्यः—दही, भात, या मट्ठा और भात देना चाहिये। शोथ हो तो नमक नहीं देना चाहिये। ज्वर हो तो दूध भातपर रोगीको रखना चाहिये।

९. गोमूत्रादि क्षार

विधिः—लोहेकी कढ़ाहीमें ८ सेर गोमूत्र और १ सेर कड़वी जीरी मिलाकर चूल्हेपर चढावें। जब कालीजीरी और गोमूत्र जलकर भस्म हो जाय, तब कढ़ाही-को नीचे उतार लें। शीतल होनेपर राखको बोतलमें भर लेवें। (आ० नि० मा०)

मात्रा:—४ से ६ रत्ती दिनमें ३ बार शहद या गुनगुने जलके साथ देनेसे अपचन, आमाजीर्ण, विष्टब्धाजीर्ण, पाण्डु, कीटाणुजन्य घातक पाण्डु, श्वेताणुवृद्धिसह पाण्डु, मन्द ज्वर, प्लीहावृद्धि, आदि रोग थोड़े ही दिनोंमें दूर होजाते हैं।

यह क्षार आमाशय और अन्त्र, दोनों स्थानोंकी पचनक्रियाको सुधारता है। आमविष, कीटाणु और उदर कृमिका नाश करता है। एवं रक्तस्थ आम विषको जलाता है। पचन संस्थान और रक्तको शुद्ध बनाता है। इसलिये पाण्डु, मन्द ज्वर, अजीर्ण, मलावरोध और उदरवात आदि रोग सहज दूर होजाते हैं।

१०. विशाला क्षार

विधि —सज्जीखार, लोटिया सज्जी, जवाखार, कालानमक, काचनमक, साभरनमक, सेंधानमक, सोहागा, मोरा और नौसादर ये १० औषधियां २-२ तोले और अजवायन २० तोले लेवें। सबको मिलाकर १ दिनतक इन्द्रायनके रसमें खरल करें। फिर इसको इन्द्रायन फलोंमें भरकर डोरेसे बांधें। सब फलोंको हांडीमें बन्द कर गजपुटमें फूंकें। स्वांग शीतल होनेपर भस्मको निकाल लेवें।

मात्रा —४ से ६ रत्ती दिनमें २ बार गुनगुने जलके साथ देवें।

उपयोग —विशालाक्षार अपचन, आमप्रकोप, उदरशूल, मलावरोध, उबाक, वमन, उदरकृमि, अतिसार, प्लीहावृद्धि, मन्द ज्वर आदि लक्षणोंसह पाण्डुरोगको दूर करता है।

यह क्षार अन्त्रगत अम्लता, आमप्रकोप और रक्तस्थ आम विषको जलाता है। अत इन कारणोंसे उत्पन्न रोग दूर हो जाते हैं।

११ विशालादि चूर्ण

विधि —इन्द्रायण फल, कुटकी, नागरमोथा, कड़वा कूठ, देवदारु और इन्द्रजौ ये ६ औषधियाँ १ १ तोला, मूर्वा २ तोला और कड़वा अतीस ६ माशे लेवें। सबको मिला, कूट कपड़छान कर लेवें। (भै० र०)

मात्रा — ३ से ६ माशे चूर्ण प्रात कालको गुनगुने जलसे देकर ऊपर ६ माशे शहद चटादेवें अथवा ६ माशेसे १ तोला चूर्ण गरम जलमें रात्रिको कांचके पात्रमें भिगोदेवें। सुबह छानकर पिला देवें।

उपयोग —यह चूर्ण कोष्ठ शुद्धि करनेवाला और कीटाणुनाशक है। पाण्डुरोग, ज्वर, दाह, कास, श्वास, अरुचि, गुल्म, और रक्तपित्त आदि रोगोंका नाश करता है।

पाण्डुरोगीको जब मन्द ज्वर, मलावरोध, उदरकृमि, दाह आदि विकार सताते हों, तब प्रात कालको इस चूर्णका सेवन कराते रहनेसे और दिनमें दो बार भोजनकर लेनेपर लोह या मण्डूर प्रधान औषध देते रहनेसे थोड़े ही दिनोंमें ज्वर आदि लक्षणोंसह पाण्डुरोग दूर हो जाता है।

इस चूर्णसे रोगीको २-३ दस्त लगते हैं। इस हेतुसे भोजनमें खिचड़ी, चावल, आदि देने चाहियें। चने, मटर, सेम आदि नहीं। एवं गेहूं, जौ आदि कम देने चाहियें। इस चूर्णकी मात्रा अधिक नहीं देनी चाहिये अन्यथा विरेचन अधिक होता है। जिससे आंतें कमज़ोर बनती हैं, और मरोड़े होकर दस्त लगते हैं, फिर अरुचि और मन्दाग्नि बढ़ जाती है। एवं निर्बलता अधिक आ जाती है।

सूचना —इस चूर्णमें प्रधान औषधि इन्द्रायण है। यह प्रबल विरेचक है। होनेसे मात्रा अधिक देनेपर यकृत् और अन्त्रको हानि करता है। अत्यधिक

मात्रा हो जानेपर विष क्रिया करती है। आमाशय और अन्त्रमें प्रदाह होता है। तथा रक्त और श्लैष्ममिश्रित मलका विरेचन होने लगता है। एवं अधिक मात्रासे वृक्क और मूत्राशयमें भी प्रदाहकर देती है। अतः इस चूर्णका सेवन योग्य मात्रामें करना चाहिये। सगर्भा स्त्रियोंको यह चूर्ण नहीं देना चाहिये।

१२. हरीतकी रसायन

विधिः—उत्तम रसदार काबुली हरड़ोंको रात्रिमें गोमूत्रमें डालें। दिनमें धूपमें सुखावें। गर्मीके दिनोंमें सूख जानेपर धूपमेंसे उठा लेवें। इस तरह २१ दिनतक भिगोकर सुखावें (वृ० नि० र०)

मात्राः—१-१ हरड़ रोज सुबह सेवन करें।

उपयोगः—यह हरीतकी रसायन पाण्डु, अग्निमान्द्य, आमवृद्धि, जीर्ण-अजीर्ण, ग्रहणी, जीर्ण ज्वर, उदररोग, प्लीहावृद्धि, उदरकृमि, मलावरोध, शोथ आदिको दूर करता है। ४-६ माशे मात्रामें दीर्घकालतक शान्तिपूर्वक सेवन करनेपर शरीर नीरोग बन जाता है। अपचन और मलावरोधपर एक दिन या २-४ दिनके लिये सुबह-शाम, दोनों समय और अधिक मात्रामें भी दी जाती है। पुराने मलावरोधके रोगीके लिये यह प्रयोग अति हितकारक, सरल और निर्भय है। जिनका शरीर व्याधि मंदिर बन गया हो, शीतल या उष्ण, उत्तेजक या शामक अथवा कोई भी औषध सहन न होती हो, आहार विहारके आनंदसे जो वंचित हो गये हो और अति दुखसे जीवन व्यतीत करते हों, उनके लिये हरीतकी रसायनका कल्प अति गुणकारक है। श्रद्धासह एक वर्ष सेवन करनेपर शरीर स्वस्थ, सबल और तेजस्वी बन जाता है।

सूचनाः—चेटकी जातिकी हरड़ इसमें विशेष उपयोगी है। किन्तु उसके अभावमें बाजारमें मिलनेवाली काबुली हरड़ कमसे-कम ६ माशे और १ तोलेके बीचमें वजन-वाली हो और जो पानीमें डालनेसे डूब जाय अर्थात् तैरे नहीं, उसको काममें लेना चाहिये। इसकी सामान्यमात्रा गुठ्ठीरहित छालकी ३ से ६ माशेतक। अतिक्षीण, सगर्भा, अति वृद्ध और प्रसूताको इसका सेवन निषेध है। उदररोगी, बद्धकोष्टी और स्थूल पुरुषको यह अति उपयोगी है।

१३. लोहासव

विधिः—लोहभस्म, सोंठ, कालीमिर्च, पीपल, हरड़, बहेड़ा, आंवला, अज-वायन, वायविडङ्ग, नागरमोथा, चित्रकमूलकी छाल, ये ११ औषधियाँ १६—१६ तोले तथा धायके फूल ८० तोले लें। त्रिफलाको छोड़ शेष सबका जौकुट चूर्ण करें। लोह-भस्मको हरड़के चूर्णके साथ खरलकर थोड़ा जल मिलाकर ३ दिन रहने देवें। फिर उसके साथ आँवले और बहेड़ेका चूर्ण खरलकर जल मिलाकर ४ दिन रहने देवें। पश्चात्

तोले शहद और ४०० तोले गुड़में अच्छी तरह मिला अमृतबानमें भर मुखमुद्राकर १ मास रहने देवें। फिर देख लें। आसव परिपक्व होनेपर छानकर बोतलोंमें भर लें। (शा० सं०)

कतिपय फार्मेसीवाले लोहेका बुरादा लेते हैं, कोई मण्डूर मिलते हैं। एवं कितने ही कासीस (Ferri Sulph.) मिलाते हैं। बुरादा और मण्डूर आसवमें बिल्कुल नहीं मिलता। कासीस पूर्णांशमें मिल जाती है। फिर भी लोहभस्म मिलाना विशेष श्रेयस्कर माना जायगा। लोहभस्म मिलानेपर कोहलोत्पत्ति अधिक होती है और भस्मका मिश्रण भी होजाता है।

मात्रा —॥-१॥ तोला दिनमें दो बार जल मिलाकर भोजनके बाद देवें।

उपयोग —यह आसव अति अग्निप्रदीपक है। पाण्डु, शोथ, गुल्म, उदररोग, अर्श, प्लीहावृद्धि, जीर्णज्वर, कास, श्वास, भगन्दर, अरुचि, ग्रहणी और हृद्रोगका नाश करता है।

इस आसवमें अग्निप्रदीप्त करनेके लिये त्रिकटु, अजवायन, चित्रकमूल और नागरमोथा मिलाया है। उदरशुद्धि और कृमिहर गुणकी उत्पत्ति निमित्त त्रिफला वायविडङ्ग, नागरमोथा मिलाया है। इन सबके साथ लोहभस्मका संयोग होनेसे सबके गुणमें अति वृद्धि होजाती है। इस प्रयोग रचनापर लक्ष्य देनेसे विदित होता है कि, जिस पाण्डुरोगमें अग्निमान्द्य लक्षण प्रबल हो, उसपर यह आसव लाभ पहुँचाता है।

विषमज्वर, आमवात आदि संक्रामक ज्वर मानसिक चिन्ता और उदरकृमि आदि कारणोंसे पाण्डुता आजाती है। इस पाण्डुरोगमें विशेषतः रक्त रचना विकृत हो जाती है। जब रक्तमें प्राणवायु मिश्रण विधान (Oxidation) विकृत होजाता है, तब रक्त अशुद्ध बन जाता है। रक्तजीवाणुका ह्रास होजाता है। धमनियोंकी दीवार मृदु होजाती है और रक्ताभिसरणक्रिया बलपूर्वक नहीं हो सकती। फिर केशिकाओंमें यथोचित पूर्ण रक्त नहीं पहुँच सकता। जिससे देह अति शिथिल और निस्तेज होजाती है। साथ-साथ देहको सम्यक् पोषण न मिलनेसे इन्द्रियां स्वकार्यक्षम नहीं रह सकतीं। इस पोषण हेतुसे निराधार निम्न प्रदेशमें शोथ आने लगता है। मांसमें क्षीणता आनेपर हृत्कोष शिथिल होजाता है। मस्तिष्कविकृति होनेपर रोगी चिड़चिड़ा हो जाता है या निरुत्साही और उदासीन बन जाता है। फिर नेत्र आदिकी श्लैष्मिककलामें रक्तहीनता, शिरदर्द, तन्द्रा चक्कर आना, हाथ पैरोंपर शोथ हाथ पैरोंमें शीतलता, निद्रावृद्धि आदि लक्षण प्रतीत होते हैं। ऐसे लक्षणयुक्त पाण्डुरोगपर यह आसव सत्वर लाभ पहुँचाता है। यह पाचनक्रिया बढ़ाता है तथा रक्ताणुओंकी वृद्धिकर रक्ताभिसरण क्रियाको सबल बनाकर स्वास्थ्यकी प्राप्ति करा देता है।

अनेक बार लंघन आदि कारणोंसे रक्तरञ्जक द्रव्य (Haemoglobin) की ...-रक्तरञ्जक कम हो

जानेपर देह निस्तेज भासती है। इस रक्तरञ्जककी न्यूनताको भी यह लोहासव दूर करता है।

कभी-कभी युवा स्त्रियोंको एक प्रकारका हलीमक रोग हो जाता है। उसमें त्वचा हरी-पीली होजाती है। रक्तमें रक्ताणुओंकी संख्या आधी भी नहीं रहती। एवं रक्तरञ्जक (रञ्जक पित्त) का भी ह्रास होजाता है। देखनेमें रोगिणी पुष्ट भासती है किन्तु हृदयमें घबराहट, मन्द ज्वर (रक्ताणुओंकी न्यूनतासे एक प्रकारका ज्वर होने लगता है), अग्निमान्द्य, चक्कर आना, मलावरोध, थोड़े परिश्रमसे श्वास भर जाना, श्वेत प्रदर, मासिकधर्म कष्टसे और असमयपर आना, तथा बलक्षय आदि लक्षण उपस्थित होते हैं। इस विकारपर लोहासवका सेवन अमृतके समान उपकारक है। साथ-साथ रुग्णाको शुद्ध वायुका सेवन तथा अग्नि बलके अनुसार घृत और पौष्टिक आहारकी योजनाकर देनी चाहिये।

अनेक बार उदरकृमिकी उत्पत्ति हो जानेसे पाण्डुरोगकी प्राप्ति होती है। उदर-कृमि होनेपर कुछ अंशमें ज्वर बना रहना, उबाक, वमन, उदर-पीड़ा, आध्मान, क्षुधा-नाश, मुखमण्डलपर निस्तेजता, हृदयमें कम्प होना, चक्कर आना, श्वासकृच्छ्रता, आम और रक्तमिश्रित दस्त तथा पैर, नाभि और मूत्रेन्द्रियपर सूजन, आदि लक्षण उपस्थित होते हैं। इस विकारपर पहले कृमिनाशक औषधिका सेवन कराना चाहिये। फिर लोहासव देनेसे देह सत्वर तेजस्वी और बलवान बन जाती है। तथा रक्तकी न्यूनता और अग्निमान्द्य, दोनों दूर होजाते हैं।

पाण्डुरोगमें उत्पन्न लक्षणरूप शोथ, पाण्डुरोगमें इन्द्रियाँ अपना कार्य करनेके लिये असमर्थ हो जानेसे और पचन विकृति हो जानेसे उत्पन्न गुल्म, अर्श, और उदरमें आध्मान, अपचन, अपचनके पश्चात् होनेवाला मलावरोध या बार-बार दस्त होना, उदरशूल, प्लीहावृद्धि, कास, श्वास, गौण कुष्ठ (त्वचाविकार) अरुचि, ग्रहणी, हृदयविकृति आदि हो जानेपर उन सबको यह लोहासव दूर करता है।

१४. योगराज रस

विधिः—त्रिफला, त्रिकटु, चित्रकमूल और वायविडङ्ग, ये ८ औषधियाँ ३-३ तोले शुद्ध शिलाजीत, रौप्यमाक्षिक भस्म, सुवर्णमाक्षिक भस्म और लोहभस्म, ये ४ औषधियाँ ५-५ तोले, मिश्री ८ तोले और शहद २४ तोले लेवें। पहले काष्ठादि औषधियोंका कपडछान चूर्ण करें। फिर भस्म मिलावें। मिश्रीको शिलाजीतके साथ खरल करें। उसमें चूर्ण-भस्मका मिश्रण मिलावें। पश्चात् शहद मिला, लोहेके पात्रमें भरकर, १ सप्ताह धान्यराशिमें दबा देवें। फिर निकाल कर प्रयोगमें लावें। (च० सं०)

मात्राः—४ से ८ रत्तीतक दिनमें २ बार सुबह रात्रिको देवें।

अनुपानः—इस योगराज रसके साथ विपाकरहित और मूत्रपिण्डकी क्रियामें बाधा न पहुँचानेवाला मिलाना चाहिये। पाण्डुमें दुग्ध, कामलामें मूलीका रस या

गोमूत्र, नूतन बालग्रह और धनुर्वातमें एरण्डतैल, रक्तदबाववृद्धिमें लहसुनका रस या विरेचन, नूतन अर्शमें मट्ठा, अपस्मार और शोष रोगमें दूध आदि।

उपयोग —योगराज रस हृदय और पचन महास्थानकी निर्बलतासे उत्पन्न सब रोगोंका नाश करनेमें उत्तम औषधि है। शीतज्वरके पश्चात् उत्पन्न पाण्डु, मृदभक्षण-जन्य, पाण्डु, उदरकृमिजन्य पाण्डु (Tropical Chlorosis), तरुण स्त्रियोंको होनेवाला पाण्डु, रक्तस्राव और अधिक रज-स्रावसे उत्पन्न पाण्डु और विषप्रकोपज पाण्डु आदि सब प्रकारके पाण्डु सर्वप्रकारके कामला और हलीमक (Chlrosis) आदि रोगोंको नाना प्रकारके उपद्रवोंसह यह रस नष्ट करता है।

जीर्ण अजीर्णरोग या आमाशयविकृति और उदर रोगोंके सेन्द्रिय विषसे उत्पन्न धनुर्वात, अपस्मार, वातनाडीप्रदाहके पश्चात् होनेवाले विविध वातप्रकोप, जीर्ण विषविकार, जीर्णकास, राजयक्ष्मा, विषमज्वर, श्वास, अरुचि, अजीर्णजन्य कफप्रमेह, सब प्रकारके कुष्ठ और अर्शरोगमें शान्तिपूर्वक कुछ समयतक योगराज रसका सेवन करानेपर वे सब नष्ट होजाते हैं। मूल ग्रन्थकारने भी "विषपाण्ड्वन्त्यपस्मार कामला गुदजानि च" इस वचनसे अपस्मारको दूर करनेमें इसे महौषधि मानी है।

जिस तरह माप्यादि लोह घटित विविध रोगोंपर लाभ पहुँचाता है, उसी तरह यह योगराज रस भी अति दिव्य औषधि है। किसी रोग विषसे वातनाडियाँ अति पीडित होती है और वात धातु दूषित होती है। फिर श्लेष्म प्रकोप होकर जब रक्तमें श्वेत जीवाणु संख्या बढजाती है, तब श्वेतजीवाणुवृद्धिमय पाण्डु (Leukaemias) रोगोंकी सम्प्राप्ति होती है, उसपर और त्रिदोषज पाण्डु (Perniciους Anaemia) रोगपर अनेक सफल औषधियाँ भी व्यर्थ होजाती हैं। ऐसे प्रबल मारक रोगपर भी इस योगराज रसका पथ्य पालनसह सेवन करनेपर लाभ होजाता है।

यदि पाण्डुरोग उपद्रव रूपसे उत्पन्न हुआ हो, तो साथमें मूलरोगको दूर करनेवाली चिकित्सा भी करनी चाहिये। जिससे सत्वर आरोग्य प्राप्ति होसके।

१५. कामलाहर रस

विधि —समगुण गंधक और पारेकी कज्जली, नौसादर पुष्प, यवक्षार और सोडा बाई कार्ब (सज्जी खार) ८-८ तोले तथा त्रिफलेका कपडछान चूर्ण १६ तो० मिलाकर खरलकर लेवें। (श्री० प० यादवजी त्रिकमजी आचार्य)

मात्रा —२ से ४ मासेतक दिनमें ३ बार मक्खनरहित ताजे मट्ठेके साथ दें।

उपयोग —इस कामलाहर रसका सेवन ४ दिनतक करानेसे नया कामलारोग दूर होजाता है। भोजनमें मात्र मट्ठा और भात देना चाहिये। फलोंमें ईख, संतरा, मोसम्बी अनार, अंगूर आदि दे सकते हैं।

सूचना:—अधिक कब्ज हो, तो कुटकी या पञ्चसकार या मेग सल्फ देकर उदर शुद्धि करा लेना चाहिये। मूत्रावरोध या मूत्रदाह हो, तो कच्चे नारियलका जल पिलाना चाहिये।

---

(११) रक्तपित्त

१. रक्तपित्तान्तक रस

विधि—अभ्रक भस्म, लोहभस्म. सुवर्णमाक्षिक भस्म, शुद्ध पारद, शुद्ध गन्धक, शुद्ध हरताल, इन ६ औषधियोंको समभाग लें। पहले पारद गन्धककी कज्जली करके हरताल मिलावें। फिर भस्म मिला मुलहठीके क्वाथ, मुनक्काका घोल और गिलोयके रसके साथ ३–३ दिन खरलकर १–१ रत्तीकी गोलियां बना लेवें।

मात्राः—१ से २ गोली दिनमें २ बार शहद–मिश्री के साथ देवें।

उपयोगः—रक्तपित्तान्तक रस दारुण रक्तपित्त, ज्वर. दाह. क्षतक्षय, तृषा, शोथ और अरुचिको दूर करता है। रक्तपित्तके साथ ज्वर हो, तो वह भी दूर होजाता है।

त्रिदोषज रक्तपित्त (Purpura) होनेपर प्रायः ज्वर भी १००° तक बढ़ जाता है, कभी कभी शिरदर्द होता है। संधिस्थानोंमें वेदना या अतिसार होजाता है। कण्ठ, हाथ, पैर और कभी–कभी मुखमण्डलपर धब्बे होजाते हैं और श्लैष्मिक कला-से भी रक्तस्राव होने लगता है। इस रोगपर रक्तपित्तान्तक रसका सेवन अति हितावह है। रोगी दूध, मोसम्बी, संतरे, मीठे अनार आदिपर रह जाय, तो जल्दी लाभ पहुंचता है। इस त्रिदोषज रक्तपित्तके रोगीको पूर्ण आराम कराना चाहिये और सिगरेट, गरम–गरम चाय, शराब आदिका व्यसन हो तो छुड़ा देना चाहिये।

त्रिदोषज रक्तपित्तके अतिरिक्त उरःक्षतमें भी रक्तपित्तान्तक रस अच्छा कार्य करता है। अनुपान रूपसे वासा स्वरस और अजा दुग्ध देना चाहिये।

वर्तमानमें विदेशी औषधियां, अन्तःक्षेपणसे औषध ग्रहण, निरंकुशवर्ताव आदि कारणोंसे रक्तविकार और रक्तपित्तप्रकोप होजाता है। इन रोगियोंको पथ्य पालनसह रक्तपित्तान्तक रसका सेवन करानेपर कुछ दिनोंमें देह स्वस्थ और सुदृढ बनजाता है।

२. अर्केश्वर रस

विधिः—ताम्र भस्म, रससिन्दूर, वङ्ग भस्म, अभ्रक भस्म और सुवर्णमाक्षिक भस्म, इन ५ औपधियोंको समभाग मिला गिलोयके स्वरसकी २१ भावना देकर १–१ रत्तीकी गोलियां बना लेवें। (र० स्रो० सा०)

मात्राः—१ से २ गोली दिनमें २ बार वासा स्वरस और मधु अथवा अडूसाकेपान और क्षीर विदारीके चूर्ण और शहदके साथ देवें।

उपयोग —इस अर्केश्वर रसका सेवन लघुपथ्य, पौष्टिक भोजनके साथ करनेसे थोड़ेही दिनोंमें दारुणरक्तपित्तको दूर करता है।

श्लेष्म रक्तज रक्तपित्त शीताद (scurvy) रोग आवश्यक पोषण न मिलनेपर होता है। इस प्रकारमें मसूढ़े शिथिल होजाते हैं और उनमेंसे रक्तस्राव होता है। मुहसे दुर्गन्ध निकलती है। शनैः शनैः दांत गलते जाते हैं, नेत्र, नाक और मुंहकी श्लैष्मिक कलासे रक्तस्राव होता रहता है। यदि रुधिरमें लालरंग (रक्त रजक) कम होजाय तो पाण्डु हो जाता है और हृदयमें धड़कन होने लगती है। किसी किसीमें मूत्र के साथ रक्त या लसीका (एलब्युमिन) जाता है और अतिसार भी हो जाता है। इस रोगपर चन्द्रकला रस और अर्केश्वररस दोनों हितावह हैं। दोनों ताम्रप्रधान होनेसे यकृत्को बल देते हैं और रुधिरवाहिनियोंपर शामक और प्रसादक गुण दर्शाते हैं। शारीरिक कृशता, पाण्डुता, अग्निमांद्य और शुक्रकी निर्बलता अधिक हो, दाह कम हो या न होता हो और ज्वर न रहता हो तो, अर्केश्वररस चन्द्रकलाकी अपेक्षा अधिकतर लाभ पहुँचाता है। कफ प्रकोप और रक्तवमन हो, उर क्षत हो, नासिकासे बार बार रक्तस्राव होता हो, तो वासा स्वरस और शहद अनुपान रूपसे अधिक अनुकूल रहता है। प्रकृतिभेदसे या वातपित्त वृद्धि के हेतुसे या मूत्रके साथ श्लेष्म, लसीका या रक्त जानेसे जिनको अड़ूसापान और विदारीकंदका चूर्ण अनुकूल रहे तो उनको इनकी योजना करनी चाहिये। जो रोगी अतिमासमें भी पीड़ित रहता हो, उसे दाडिमावलेह या खट्टे मीठे अनारके रसके साथ देनेसे विशेष लाभ पहुँचता है।

३ रसामृत रस

विधि —शुद्ध पारद १ तोला, शुद्ध गन्धक २ तोले, सुवर्णमाक्षिक भस्म शुद्ध शिलाजीत, गिलोय, श्वेत चन्दन, मुनक्का, महुएके फूल, धनिया, कुड़ेकी छाल, इन्द्रजौ, धायके फूल, नीमके पान और छिली हुई मुलहठी, इन १२ औषधियोंको १-१ तोला लेवें। पहले पारद गन्धककी कज्जली करें। फिर भस्म और कपड़छान-चूर्ण मिलावे। पश्चात् शीलाजीतको जलमें घोलकर मिला देवे। (र० यो० सा०)

मात्रा —१ से १॥ माशेतक समान शक्कर मिला, फिर शहद मिलाकर दिनमें २ बार सेवन करे। प्रातःकाल बकरीका धारोष्ण दूध पीवे रात्रिको गरम करके शीतल किया हुआ दूध पीवे।

उपयोग —रसामृत रस पित्तप्रकोप, अम्लपित्त, रक्तपित्त, और त्रिदोषज ज्वरको दूर करता है।

अति धूपमें घूमना, गरम मसाले आदिका अतिसेवन, दीर्घकालस्थायी ज्वर आदि रोगजनित उष्णता और विषप्रकोप आदि कारणोंसे रक्तपित्तके लक्षण उपस्थित होनेपर रसामृत रस आशीर्वादके समान कार्य करता है।

मोतीझराका उपचार सदोष होने या पथ्यका पालन न होनेपर वह मस्तिष्क को उष्णता पहुंचाता है और अनेकोंको अम्लपित्तकी प्राप्ति करा देता है। उनको रसामृतका सेवन कुछ दिनतक करानेपर ज्वरविषसह रक्तपित्त और अमलपित्तके लक्षण दूर होजाते हैं।

अपथ्यः—रक्तपित्त और अम्लपित्तके रोगीको चाहिये कि दही, मट्ठा, हींग, लहसुन, लालमिर्च, तेज नमक, शराब, धूम्रपान और स्त्रीसमागमका त्याग करें। धूप और अग्निका सेवन भी नहीं करना चाहिये।

४. शतमूल्यादि लोह

विधिः—सतावर, शक्कर, धनिया, नागकेशर, श्वेतचन्दन, हरड़ बहेड़ा, आंवला, सोंठ, कालीमिर्च, पीपल, बायविडङ्ग, नागरमोथा, चित्रकमूल, और सफेद तिल, ये १५ ओषधियां १-१ तोला और लोहभस्म १५ तोले लें। पहले काष्ठादि ओषधियोंका कपड़ छान चूर्ण करें। फिर लोहभस्म मिलाकर खरल करें। (भै० र०)

मात्राः—२-२ रत्ती दिन ३ बार देवें।

अनुपानः—बकरीका दूध, शहद, मक्खन, मिश्री, वासास्वरस, पेठेका रस, गूलरके मूलका जल और धमासेका क्वाथ आदि व्यवहृत होते हैं। इनमें वासास्वरस और शहदके साथ देकर ऊपर बकरीका दूध पिलाना विशेष हितकर माना जाता है। दाह और तृषा अधिक हो, तो शतमूलादि लोहके साथ मुक्तापिष्टी, प्रवालपिष्टी, वंशलोचन और गिलोय सत्व भी मिला देना हितकारक है और अनुपान रूपसे पेठेका रस देवें।

उपयोगः—यह शतमूल्यादि लोह रक्तपित्त अधिकारमें कहा है। तृषा, दाह, ज्वर, वमन आदि विकारोंसह रक्तपित्तको नष्ट करता है। ऊर्ध्व रक्तपित्तमें इसका प्रयोग विशेष किया जाता है।

इस रसायनका सेवन करनेपर पित्तवर्धक आहार-विहार, मिर्च, अधिक नमक, क्षार, हींग, गरम चाय, तेज खटाई, सिरका, राई, धूम्रपान, अग्नि और सूर्यके तापका सेवन, शराब आदि छुड़ा देने चाहियें।

५. रक्तरोधक वटी

विधिः—प्रवाल पिष्टी २ तोले, रसौंत, गिलोय सत्व, सुवर्णमाक्षिक भस्म, बकायनके ताजे पान और नीमके कोमलपान १—१ तोला और कपूर ३ माशे लें। सबको मिला घीकुंवारके रसमें खरलकर १—१ रत्तीकी गोलियां बना सोनागेरूके चूर्णमें डालते जायं।

मात्राः—१ से २ गोली दिनमें २—३ बार जलके साथ देवें। आवश्यकता हो, तो दोपहरको भी दे सकते हैं।

उपयोग —रक्तपित्त, रक्तप्रदर, अर्श आदि रोगोंमें रक्तप्रवाहको रोकनेके लिये यह वटी निर्भयतापूर्वक दीजाती है।

(१२) कास

१ अमृतार्णव रस (वातज कास)

विधि —शुद्ध पारद, शुद्धगन्धक, लोहभस्म, सोहागेका फूला, रास्ना, वायविडङ्ग, हरड, बहेड़ा, आवला, देवदार, सोंठ, कालीमिर्च, पीपल, गिलोय, पद्माख और शुद्ध बच्छनाग, इन १६ औषधियोंको समभाग मिलाकर खरल करें। फिर शहद मिलाकर १-१ रत्तीकी गोलिया बना लेवें। (र० यो० सा०)

मात्रा—१ से २ गोली दिनमें २ या ३ बार दूध या जलके साथ देवें। शुष्ककासका श्वास अधिक हो, तो कपूर ½ रत्ती भी मिलाते रहें।

उपयोग —अमृतार्णव रस वातिक कासको दूर करनेमें अति हितावह है। यदि मन्द मन्द ज्वर रहता हो, तो वह भी इस रसके सेवनसे दूर होजाता है।

वातज कास होनेपर छातीमें शूल सदृश वेदना, कण्ठ और मुखका सूखना, मुखमण्डल निस्तेज होजाना, वेगपूर्वक सूखी खाँसी चलना, तन्द्रा और भोजनका परिपाक होनेपर खाँसीका वेग उठना आदि लक्षण प्रतीत होते हैं। इस विकारपर अमृतार्णव रस बहुत अच्छा काम देता है।

पित्तप्रकोपज कास होनेपर भी शुष्क कास चलती है, किन्तु कण्ठ और छातीमें दाह, मुँहमें कड़वापन, खाँसीका वेग उठनेपर विद्युत या तारेके सदृश प्रकाशका भास होना, अधिक तृषा लगना और व्याकुलता आदि लक्षण उपस्थित होते हैं। इन लक्षणोंसे यह वातज काससे पृथक् होजाती है। पित्तज कासपर प्रवाल पिष्टी और सितोपलादि चूर्ण अधिक उपकारक हैं। फिर भी रोगविषको नष्ट करनेके लिये कभी-कभी अमृतार्णव रस (या सूतशेखर) मिला करके भी दिया जाता है।

फुफ्फुसोंमें वायुकोष स्फीति (Emphysema) की सम्प्राप्ति होनेपर फुफ्फुस कोषोंका यथोचित आकुंचन नहीं होता। यह विकार बहुधा कास या तमक श्वासके साथ उपस्थित होता है। इस रोगमें श्वासकृच्छ्रता, गात्रनीलता, कभी कास रहना, कभी न रहना और झागदार कफ आना आदि लक्षण उपस्थित होते हैं। यह रोग निवृत्त नहीं होता, किन्तु श्वास कष्ट और कफको दूर करानेके लिये उपचार किया जाता है। यह कार्य अमृतार्णवसे सरलतापूर्वक होजाता है, यदि कफ चिपकता हो, तो कफकुञ्जरकी योजना की जाती है।

२. नागवल्लभ रस

विधि — कस्तूरी, दालचीनी, सोहागेका फूला, तीनों १-१ तोला, केशर,

शुद्ध हिंगुल, पीपल, तीनों २-२ तोले, अकरकरा, जायफल, जावित्री, बच्छनाग चारों ४-४ तोले लें। सबको मिला नागरवेलके पानके रसमें ३ दिन खरलकर पाव पाव रत्तीकी गोलियाँ बनावें।

(यो० र०)

मात्रा--१ से २ गोली दिनमें ३ बार नागरवेलके पानमें या अदरखके रस और शहदके साथ दें। तीव्र प्रकोपमें आवश्यकतापर १-१ या २-२ घण्टेपर ३-४ बार दें।

सूचना--इस नागवल्लभमें बच्छनागका परिमाण अत्यधिक है। इस हेतुसे इस रसायनका उपयोग अति सम्हालपूर्वक करना चाहिये।

उपयोग--यह नागवल्लभ रस प्रमेह, कास, क्षय और वायुको नष्ट करता है। यह रस श्वसन मार्गको उत्तेजित करता है; कास श्वास कम कराता है; कफोत्पत्तिको कम करा कफका नियमन करता है। तथा पित्तका द्रवत्व धर्म बढ़ा हो, तो उसका भी ह्रास कराता है। एवं यह बलदायक, पीड़ाहर और किञ्चित् उत्तेजक है।

श्वासयन्त्रमें किसी कारणवश, विशेषतः कफप्रकोप होनेपर विकृति होकर श्वासोच्छ्वास कमसे कम हो जाना, नाड़ीमंद होना, रोगीको शून्यता भासना, जीव भीतरकी ओर खिंचता जा रहा हो अथवा किसी गाढ अंधकारमें पड़ा हूं ऐसा भासना आदि लक्षण उपस्थित होनेपर श्वासयन्त्रको उत्तेजित करनेका महत्वका कार्य इस रसके प्रयोगसे होता है। इसमें बच्छनाग अवसादक है। किन्तु गोमूत्रद्वारा विशेष संशोधित बच्छनागमें अवसादक गुण उतना प्रबल नहीं रहता। इस रसायनके योगसे श्वसनमार्ग नियामक वातवाहिनियां और सुषुम्णास्थित वातवाहिनियोंका नियामक केन्द्र, दोनोंपर परिणाम होकर श्वासोच्छ्वास उत्तेजित और नियमित बन जाता है। एवं प्रतिबन्ध दूर हो जाता है।

कासकी प्रथमावस्थामें जब श्वासवाहिनियां क्षुभित होती हैं। कास बिल्कुल शुष्क आती है, तब इस औषधका उपयोग नहीं किया जाता; किन्तु क्षोभ दूर हो जानेपर कफोत्पत्ति अधिक कम होनेपर, श्वासवाहिनियोंमेंसे पतला, झागयुक्त सफेद थूक जैसा स्राव होनेपर, साथ साथ मंद ज्वर, अंग टूटना, देह भारी हो जाना, बैठे हुए स्थानसे उठनेकी इच्छा न होना, मुँहमें बराबर जल भर जाना, मुँह बेस्वादु रहना, खांसीके वेगसे नाक और आंखसे स्राव होनेका भासना आदि लक्षण होनेपर नागवल्लभका उपयोग करना चाहिये। नागवल्लभसे कफोत्पत्ति कम होजाती है और सर्वाङ्गमें एक प्रकारकी उत्तेजना आनेके समान भासता है।

तमक श्वास या प्रतमक श्वास व्याधि जीर्ण होनेपर अथवा इसका दौरा अधिक दिनोंतक रहनेपर एवं कभी कभी निर्बल मनुष्योंका श्वासका वेग अति प्रबल होनेसे श्वसनेन्द्रिय आगे आगे अधिक थकती जाती हैं। इस विकारमें भी कफोत्पत्ति होती ही है। एक ओर श्वसनमार्गकी थकावट और दूसरी ओर कफोत्पत्ति, फिर वह जहांका

नाड़ा अवरुद्ध रहना। परिणाममें रोगीकी अति दयनीय अवस्था होजाती है। श्वास लेने और छोड़नेमें त्रास होता है। कण्ठ और छातीमेंसे घड़ घड़ आवाज निकलती रहती है। श्वासका वेग कम होनेपर प्राणवायुकी योग्य पूर्ति नहीं होती। इस स्थितिमें नागवल्लभका उपयोग अच्छा होता है।

कीटाणुजन्य क्षयमें इस रसका कितना उपयोग होता है, यह तो निश्चित नहीं हुआ। किन्तु कफप्रधान दोषसे श्वासवाहिनिया रुद्ध होकर क्षय होनेपर कफका स्राव करा जल्दी विकारको दूर कर देनेका कार्य इस रसायनमें होजाता है।

छोटे बच्चोंको क्षीरालसक नामका विकार होनेपर बालक कृश होजाता है, सर्वाङ्गमें सिलवट होजाती है, उदरमें विकृति हो जानेसे बारबार वान्ति होती है। दूध भी नहीं पचता। जल मिला दस्त सफेद खड़ियाके समान होता है। उदर कठोर और बढ़ा हुआ भासता है। छातीमेंसे घरघर आवाज निकलती है। थोड़ी थोड़ी वान्ति और खासीके हेतुसे शिशु उत्साहहीन होजाता है। खासी आनेपर शारीरिक ह्रच बल होती है। शेष समय सुन्नभावसे पड़ा रहता है। इस विकार और अस्थिमार्दव (मृदु अस्थि) रोगमें महत्वका यह प्रभेद है कि, अस्थिमार्दवमें शरीरकी हड्डी मुड़ जाती है, ऐसा इस क्षीरालसकमें नहीं होता। क्षीरालसककी इस स्थितिमें नागवल्लभका अति कम मात्रामें ($\frac{1}{16}$ से $\frac{1}{8}$ रत्ती) प्रयोग करनेपर अच्छा लाभ पहुँचा जाता है। अस्थि-मार्दवमें अस्थि विकृति होनेसे इस औषधका कुछ भी उपयोग नहीं होता। प्रवाल मिश्रण प्रयुक्त किया जाता है।

कफज प्रमेह हस्तिमेह, लालामेह, अच्छमेह, पिष्टमेह आदि प्रकारोंमें रोगीको अति आलस्य, जड़ता, त्वचामेंसे दुर्गन्ध निकलना आदि लक्षण होते हैं। पेशाब बहुधा श्वेत रंगका किन्तु अधिक मात्रामें बार बार होता है। मूत्रका विशिष्ट गुरुत्व कम होजाता है। (लालामेहमें मात्र गुरुत्व अधिक होता है) प्रमेहके इन प्रकारोंपर नागवल्लभका अच्छा उपयोग होता है।

पक्षाघातका तीव्र मदका शमन हो जानेपर मन्दावस्थामें पक्षाघातके शेष रहे हुए विष और विकृति दूर करनेके लिये यदि कफभूयिष्ठ लक्षण हों, तो नागवल्लभकी योजना की जाती है।

बार बार कफप्रकोपके होनेवालोंको और प्रतिश्यायकी आदतवालोंको इस औषधका सेवन अवश्य कराना चाहिये।

नागवल्लभमें कस्तूरी श्वास वाहिनिया, इनसे सम्बन्धवाली वातवाहिनियाँ, इन केन्द्र तथा श्वसनयन्त्र, इन सबको उत्तेजित करती है। एव शक्तिप्रद, उष्णवीर्य, रसायन और वाजीकर है। दालचीनी वेदनाशामक, आक्षेपहर, कफनाशक और दीपनपाचन है। सोहागा आक्षेपघ्न, कफनाशक और कासश्वासशामक है। केशर उत्तेजक और कफघ्न है। हिंगुल जन्तुघ्न, प्रतिश्यायनाशक, स्वेदल, योगवाही और रसायन है। पीपल

दीपन, पाचन और रसायन है। अकरकरा उत्तेजक और कफघ्न है। जायफल और जावित्री वेदनाशामक, ज्वरहर, सूक्ष्म स्रोतोगामी, विकासी और व्यवायी है तथा स्वेद और मूत्रद्वारा क्लेदको बाहर निकालते हैं। नागरवेलका पान उत्तेजक, श्वासनलिका प्रदाहहर (कफहर), पाचक, कृमिघ्न और दुर्गन्धनाशक है। (औ० गु० ध० शा०)

३. नाग रसायन

विधिः—लौंग जायफल, जावित्री, नागभस्म, कालीमिर्च और पीपलामूल, ये ६ औषधियां १-१ तोला तथा कस्तूरी और केशर ३-३ माशे लें। सबको मिला अदरकके रसमें ६ घण्टे खरलकर आध आध रत्तीकी गोलियाँ बना लेवें। (योग० र०)

वक्तव्यः—इस रसमें हम कपूर ६ माशे मिलाते हैं। कपूर मिलानेसे श्वास क्रिया सबल बननेमें सुविधा अधिक रहती है और कफ पतला और शिथिल होकर सरलतासे बाहर निकलता है।

मात्राः—१ से २ गोली दिनमें ३ बार अदरकके रस और शहदके साथ या रोगानुसार अनुपानके साथ देवें।

उपयोगः—यह रस कफक्षय, श्वास, कास, शूल आदि व्याधियोंको हरता है। कफप्रकोप होनेसे कास, श्वास या शूल उत्पन्न हुआ हो, उस हेतुसे अति अशक्ति आगई हो, शरीर अति निर्बल हो गया हो, किसी भी कार्य करनेका उत्साह न रहा हो, बार बार सफेद चिपचिपा कफ कष्टपूर्वक गिरता रहता हो तथा पचनक्रिया अति मन्द होगई हो, ऐसी परिस्थितिमें इस रसायनके उपयोगसे सत्वर लाभ पहुँच जाता है।

४. कफकेतु रस

विधिः—सोहागेका फूला, पीपल, शंखभस्म और शुद्ध बच्छनाग ये सब समभाग मिलाकर अदरखके रसमें ३ दिनतक खरलकर ½-½ रत्तीकी गोलियां बनालेवें।

मात्राः—१ से २ गोली अदरखके रस और शहद या नागरबेलके पानके रसके साथ।

उपयोगः—यह कफकेतुरस प्रतिश्याय, पीनस, श्वास, कास, गलरोग, गलग्रह, दन्त रोग, कर्णरोग, नेत्ररोग और सन्निपातपर सेवन करानेसे उपरोक्त रोगोंको नष्ट कर देता है।

इस रसमें प्रधान द्रव्य बच्छनाग है। बच्छनागके मुख्य गुण प्रदाह शामक, अवसादक, पीडाहर और ज्वरघ्न है। नासिका, कण्ठ, मस्तिष्कावरण, फुफ्फुस और आमाशय आदिकी किसी भी स्थानकी श्लैष्मिककलामें प्रदाह होनेपर बच्छनागप्रधान औषधि दी जाती है। बच्छनाग स्वेद और मूत्रको बढाता है और श्लैष्मिक स्रावको कम कराता है।

सूचना—(१) इस प्रयोगमें बच्छनागका परिमाण अत्यधिक है। अतः इसका उपयोग अति सम्हालपूर्वक करना चाहिये। जिनके हृदयके खण्ड या कपाट सदोष हों, हृदयावरणमें विकृति हुई हो, या हृदय अधिक निर्बल हो, उनको यह रस नहीं देना चाहिये। बहुत कम मात्रामें देवें और साथमें हृदय पौष्टिक औषधि अभ्रक भस्म आदि मिला देवें।

(२) बच्छनाग प्रधान औषधि देनेपर आरम्भमें मूत्र परिमाण बढ़जाता है और मूत्र साफ आता है। फिर रोग घटने या वृक्क थक जानेपर पेशाब पीले रंगका होजाता है और कम मात्रामें उतरता है। यदि वृक्क थक गये हों, तो वह बच्छनागवाली औषधि बन्दकर देनी चाहिये।

(३) जिनका वृक्क मूत्रोत्पत्ति कार्य यथोचित न करता हो, उनको बच्छनागवाली औषधि देनी पड़े तो ३ दिनसे अधिक दिनोंतक नहीं देनी चाहिये।

(४) कफपीड़ित रोगियोंको जल गरम करके ठण्डा किया हुआ पिलाना चाहिये। नदी और कुए के ताजे जलमें कफवृद्धि होती है। एवं भोजन भी कफवर्द्धक नहीं देना चाहिये।

कफकेतुका उपयोग मुख्यतः कफप्रधान ज्वरोंपर होता है। कफज्वरोंमें मुख्य लक्षण कफविकृतिके होते हैं। फुफ्फुसकोष्ठ और श्वासनलिकाएं कफपूर्ण होजाती हैं। कण्ठमें कफ और घर घर आवाज होती रहती है। फुफ्फुसोंमें खिंचाव होता है और बेचैनी प्रतीत होती है। अनेक रोगियोंको चित लेटनेमें या दूषित पार्श्व पर लेटनेमें अधिक कष्ट होता है। ऐसी अवस्थामें कफकेतुके प्रयोगसे आश्चर्यकारक लाभ पहुंच जाता है।

कफज्वरके अतिरिक्त वातज्वर, वातकफज्वर और पित्तकफज्वर आदिमें भी जब कफ प्रकोप होकर दूषित कफ छातीमें भर जाता है, तब कफको दूर करने और नई उत्पत्तिको रोकने, आम विषको गलाने, कीटाणुओंका नाश करने और ज्वरको शमन करनेके लिये कफकेतुका प्रयोग सफलता पूर्वक किया जाता है।

निमोनिया, इन्फ्लुएंजा, कण्ठरोहिणी और आमवातिक ज्वर कफप्रधान हैं। इनके अतिरिक्त विषम ज्वरके कतिपय रोगियोंमें भी कफकी प्रधानता होती है। इन सब पर अनुपान भेदसे कफकेतुका अच्छा उपयोग होता है। सामान्यतः अनुपान अदरखका रस और शहद या तुलसीका रस दिया जाता है।

कफप्रधान सन्निपात होनेपर कफ-कास, श्वासावरोध, घबराहट, मंद मंद प्रलाप, शरीर शीतल रहना, मंदनाड़ी और मलावरोध आदि लक्षण प्रतीत होते हैं। इसपर मलावरोध दूर करनेके पश्चात् कफ और आमका पचन कराकर ज्वरको दूर करनेके लिये शीतभंजी, सूतराज, कफकेतु, समीरपन्नग आदिकी योजना की जाती है। समीरपन्नग सोमल प्रधान है। तमाखूके व्यसनी और वयोवृद्ध, जिनको बार बार पेशाब होता रहता है उनको कम अनुकूल रहता है। शीतभंजी ताम्र प्रधान है। ताम्रको रक्तदबावबृद्धि और वृक्कशोथवाले को न दिया जाय तो अच्छा। सूतराजमें बच्छनाग और धतूरा मिला

हुआ है। धतूरा मिल जानेसे हृदयपर अवसादक असर अधिक होता है। अतः निर्बल हृदयवाले, सुकुमार स्त्री और बालकको यह नहीं दिया जाय। किन्तु उन सब प्रकारके विकारवालोंको कफकेतु सरलतापूर्वक दिया जाता है।

सूर्यके तापमें अधिक फिरनेपर नासिका और स्वरयन्त्रमें प्रदाह होकर प्रतिश्याय होजाता है। प्रारम्भमें जलसदृश स्राव होता है और किसी किसीको कुछ ज्वर भी आ जाता है। हाथ-पैर टूटते हैं। मूत्र पीला हो जाता है। इस विकारमें तीव्रावस्था हो और बार बार छींके आती रहती हो, तबतक, तो बच्छनाग प्रधान औषधि न दी जाय और बनफशा मिश्रित क्वाथ दिया जाय तो अच्छा। फिर वेग मन्द होने और कफ कुछ गाढा बननेपर कफकेतुका सेवन कम मात्रामें करानेपर २-३ दिनमें ही प्रदाहसहज्वर, प्रतिश्याय आदि सब विकार शमन होजाते हैं।

धूपमें फिरनेके अतिरिक्त शीत लगने और वर्षामें भीगनेपर नासामार्गमें प्रदाह होकर प्रतिश्याय होजाता है। इसमें छींक कम आती है और त्रास कम होता है। किन्तु क्षुधानाश, उदरमें भारीपन, मलावरोध, शिरमें भारीपन, अंग जकड़ जाना और मन्द ज्वर आदि लक्षण उपस्थित होते हैं। शीतका आघात होनेपर कभी कभी प्रदाह बहुत दूरतक फैलजाता है। इसे तुरन्त न सम्हालनेपर इन्फ्लुएन्जा, निमोनिया या लकवा आदि रोगोंकी संप्राप्ति हो सकती है। अतः ऐसी प्रदाहावस्थामें कफकेतु रस अच्छा लाभ पहुंचाता है।

प्रतिश्याय रोगकी योग्य चिकित्सा न करनेपर और आहार विहारमें स्वच्छंदी रहनेपर पीनस रोगकी प्राप्ति होजाती है। फिर नासिकासे पूयमय दुर्गन्धयुक्त कफस्राव होता रहता है। शिरदर्द, तालु और कण्ठमें शुष्कता, नासाशोष, स्वरभंग, कृशता, पाण्डुता, त्वचा शुष्क होकर खुजली चलना और ज्वर आदि लक्षण उपस्थित होते हैं। इस रोगपर कफकेतु और व्योषादि वटीका सेवन कराया जाता है तथा व्याघ्री तैल, कलिंगादि तैल या अन्य औषधिका नस्य और बाह्योपचार किया जाता है।

कफकास और कफप्रधान श्वास रोगमें कफको बाहर निकालने और कफोत्पत्ति कम करानेके लिये कफकेतुका प्रयोग अदरकके रस और शहदके साथ किया जाता है।

सूचनाः—यदि रोगकी तीव्रावस्थामें कफकेतु या इतर बच्छ-नागप्रधान औषधि-का उपयोग अधिक परिमाणमें हो जायगा, तो कफ सूख जायगा। फिर फुफ्फुसोंमें खिंचाव होगा। शुष्क कास आती रहेगी। ऐसा क्वचित् हुआ हो तो मरिचादि क्वाथ देकर कफको तरल बनाना पड़ता है।

उदरस्थ अवयवोंमें प्रदाह होनेपर वहां दबानेपर वेदना होती है। आमाशयमें प्रदाह होनेपर बहुधा उबाक आती है और मुँहमें जल आता रहता है। अन्त्रमें प्रदाह होनेपर मलावरोध होता है, दर्द रहता है और उदरमें वायु उत्पन्न होती है। आमाशय और अन्त्रके इन सब रोगोंपर अग्निकुमार, प्राणदापर्पटी आदि अनेक मुख्य औषधि हैं तथापि उनके अभावमें कफकेतु अजवायनके फाण्टके साथ दिया जाता है।

इस रसमें मुख्य औषधि वत्सनाग है । यह ज्वरघ्न, प्रदाहनाशक, वेदनाशामक और वातवाहिनियोंके लिये शामक है । सोहागा-आक्षेपहर, कीटाणुनाशक, दुर्गन्धहर, पाचक, कफस्रावी और श्वास-कास शामक है । पीपल-दीपन पाचन, ज्वरहर, कफहर और रसायन है । शखभस्म, अग्निप्रदीपक, विदाहनाशक, कफोत्पत्तिरोधक, आमाशयपित्तशोधक है । अदरक ज्वरहर अग्निप्रदीपक, आमपाचक, श्लेष्महर और स्वेदल है ।

५. कफकेसरी रस

विधि —गोदन्ती भस्म १० तोले और शुद्ध मन शिल २॥ तोले मिलाकर ६ घण्टे खरल कर लेवें । (धी० वैद्य गोपालजी कुवरजी ठक्कुर)

मात्रा —२ से ६ रत्ती शक्कर या शहदसे दिनमें २ या ३ बार ।

उपयोग —यह रस कास और श्वासमें कफको सरलतासे अलग करके निकाल देता है । जो अधिक उत्तेजक औषधि सहन नहीं कर सकते, ऐसे निर्बल प्रकृतिके मनुष्योंके लिये और जिनको दाह होता है या कफके साथ रक्त जाता है, ऐसे रोगियोंके लिये यह निर्भय और उत्तम औषधि है ।

६ कफकुञ्जर रस

विधि —शुद्धपारद, शुद्ध गन्धक, थूहर और आकका दूध ४-४ तोले तथा पाचों नमक मिले हुए ४ तोले लें । सबको खरलकर सुखा दें । फिर आकके दूधमें मिला चटनी जैसाकर शखके भीतर भरे तथा पीपल, गजपीपल और [illegible]सके ४ तोले चूर्णको आकके दूधमें पीस चटनी जैसा बनाकर शखके मुख और सधिस्थानपर लेप करें । सूखनेपर शखके ऊपर कपड़मिट्टी करे । मिट्टीका लेप १-१ अगुल मोटा करें । फिर अग्निमें डाल एक प्रहर आंच देवें । स्वाग शीतल होनेपर कपड़मिट्टी दूर कर शखसहित सूक्ष्म चूर्ण करलेवे । (यो० र०)

मात्रा —यह रस आध रत्ती और कपूर आध रत्ती, दोनोंको कत्थाचूना लगे नागरवेलके पानमें डालकर दिनमें ३ बार देवे ।

उपयोग —यह कफकुञ्जर श्वास, कास, हृद्रोग और पाचों प्रकारके कफप्रकोपोंको दूर करता है । यह रस उत्तेजक कफघ्न है । फुफ्फुसोंमेंसे कफको बाहर निकालनेके लिये यह व्यवहृत होता है ।

जीर्ण कास या श्वासमें जब कफ दृढ़ चिपक जाता है सरलतासे नहीं छूटता तब रोगीको अति घबराहट रहती है । छाती और पसलियोंमें दर्द होता है, कफ पीला हो जानेपर कितनोंको मद ज्वर आता है । कब्ज रहता है । शान्त निद्रा नहीं मिलती और अग्नि भी मन्द होजाती है । ऐसी अवस्थामें यह रस कफको सरलतासे बाहर निकालता है, साथ साथ पचन क्रिया सुधारता है और कब्जको भी नहीं होने देता ।

[illegible] रोगियोंका आमाशय निर्बल होनेसे थोड़ा सा अधिक भोजन करने या

असमयपर खानेसे अपचन हो जाता है। फिर श्वास कासकी पीड़ा बढ़ जाती है। ऐसे रोगियोंको कफ कुञ्जर कुछ दिनोंतक सेवन करानेसे कफप्रकोप दूर होता है और आमाशय सबल होजाता है।

प्रतिश्यायमें योग्य उपचार यथा समय न होनेपर वह जीर्ण होकर स्थिर होजाता है। फिर नासिकासे पीला श्लेष्म बार बार गिरता रहता है। मस्तिष्कमें भारीपन, व्याकुलता, आलस्य, निद्रामें वृद्धि, नेत्रकी निर्बलता और क्षुधामान्द्य आदि लक्षण उपस्थित होते हैं। ऐसी जीर्णावस्थामें कफकुंजर देनेसे थोड़े ही दिनमें कफप्रकोप दूर होकर स्वास्थ्यकी प्राप्ति हो जाती है।

सूचनाः—क्षतकास (उरःक्षत और राजयक्ष्मा) होनेपर हो सके तब तक लवण या तीव्र क्षार प्रधान औषधि—कफकुंजर रस या अन्य नहीं देनी चाहिये। एवं शुष्क कास (वातिक या पैत्तिक) में भी इस रसका प्रयोग नहीं करना चाहिये।

तमक श्वासमें यदि कफप्रकोप हो तो कफको बाहर निकालने और श्वासरोगको शिथिल बनानेमें कफकुंजर रसका उपयोग होता है। यदि तमक श्वासके साथ हृदयकी गति बढ़ी हुई हो (Cardiac Asthma), तो उसपर भी यह कफकुंजरकी योजना होती है।

७. बृहच्छृङ्गाराभ्र रस

विधिः— शुद्धपारद, शुद्धगन्धक, सोहागेका फूला, नागकेशर, जावित्री, कपूर, लौंग, तेजपात और सुवर्णभस्म १-१ तोला, अभ्रक भस्म ४ तोला, तालीसपत्र, नागरमोथा, कूठ, जटामांसी, दालचीनी, धायके फूल, छोटी इलायचीके दाने, सोंठ, कालीमिर्च, पीपल, हरड़, बहेड़ा, आंवला और गजपीपल २-२ तोले लें। पहले गन्धककी कज्जली करके भस्म मिलावें। फिर शेष औषधियोंका कपड़छान चूर्ण मिला पीपलके क्वाथके साथ ७ दिन खरल करके २-२ रत्तीकी गोलियां बना लेवें। (र० सा० सं०)

वक्तव्य—हम इस रसायनमें ४ तोले शृंगभस्म भी मिलाते हैं।

मात्रा— १ से २ गोली दालचीनीके चूर्ण और शहदके साथ दिनमें २ बार।

उपयोग—यह शृंगाराभ्र विशेषतः कासरोग, वातज, पित्तज, कफज और त्रिदोषज कास, हृदयशूल, पार्श्वशूल, शिरःशूल, स्वरभंग, कुष्ठ, कफप्रकोप, वातरक्त, रक्तपित्त और श्वासरोगको नष्ट करता है। मूसलीका चूर्ण, घी और शहदके साथ दिया जाय तो वाजीकरण गुण दर्शाता है।

यह रस उत्तेजक, दीपन-पाचन, वातहर, कफघ्न, कीटाणुनाशक तथा हृदय और फुफ्फुसोंके लिये बलवर्द्धक है। जीर्णकास, जीर्णश्वास, राजयक्ष्मा, न्युमोनियाके पश्चात्की निर्बलता, जीर्ण प्रतिश्याय आदिमें श्लेष्म प्रकुपित होता है और छातीमें अति संगृहीत होजाता है। पहले सफेद गिरता है और फिर पीला हो जाता है। इस कफको यथा समय न निकालनेसे जीवनीय शक्ति अति क्षीण हो जाती है और विविध रोगोंकी

उत्पत्ति होती है। इस रसके सेवनसे सञ्चित कफ सरलतासे बाहर निकलने लगता है; नूतन उत्पत्ति बन्द होजाती है तथा ज्वर रहता हो, तो वह भी शमन होजाता है। फिर थोड़े ही दिनोंमें कफधातु शुद्ध होकर शरीर स्वस्थ होजाता है।

कास रोग और राजयक्ष्माकी प्रथमावस्थामें खांसी बार बार आती रहती है, किन्तु कफ नहीं गिरता। अति बेचैन होनेपर थोड़ासा झाग गिरता है। ऐसी अवस्थामें इस रसका उपयोग नहीं होता (इस समय गोदन्ती भस्म, प्रवाल आदि शामक औषधि की योजना की जाती है) किन्तु वह अवस्था दूर होकर कफ सञ्चित हो जानेपर अग्नि मन्द होजाती है। अरुचि, श्वासवाहिनियोंकी विकृति होनेसे बार-बार खांसी चलना पसलियोंमें शूल चलना, सिरमें भारीपन, मन्द मन्द ज्वर, हाथ पैर टूटना, थोड़े परिश्रमसे प्रस्वेद आना, आलस्य, निद्राकी वृद्धि और मुखमण्डल उदास रहना आदि लक्षण उपस्थित होते हैं। उस अवस्थामें वह शृंगाराभ्र व्यवहृत होती है। कफ अधिक गाढ़ा न हुआ हो, तब यह रस गोदन्ती भस्म, प्रवालपिष्टी, अमृतासत्व और अति कम मात्रामें सुवर्ण-वसन्त मिलाकर शहद या घी शहदके साथ देना चाहिये।

फुफ्फुसावरणमें अकस्मात् वायु प्रवेशकर जानेसे पार्श्वशूल उपस्थित होता है। तीव्र शूल, श्वासकृच्छ्रता, नाड़ीकी तेज गति, घबराहट आदि लक्षण उपस्थित होते हैं। इसपर इस रसका उपयोग होता है। अधिक वेदना होनेपर ३ ३ घण्टे बाद ३ समय देनेसे वेदनाका ह्रास होजाता है। साथ-साथ गरम घीमें भिगोई हुई रूईकी पोटलीसे सेक करना चाहिये। अथवा हींग और अफीमको घिस गुनगुना करके लेप करना चाहिये।

जीर्ण प्रतिश्याय या जीर्ण कासके पश्चात् कितनेक रोगियोंकी मस्तिष्क शक्ति कम होजाती है। विशेष विचार करना हो, तो मस्तिष्क थक जाता है। स्मरण शक्ति क्षीण होजाती है। बार-बार चक्कर आता है। मन अस्थिर रहता है। रोगी निस्तेज, चिन्ताग्रस्त और शुष्क भासता है। उनको यह शृंगाराभ्र देनेसे थोड़े ही दिनोंमें मस्तिष्कगत विकृति दूर होती है। मुखमण्डल प्रसन्न बन जाता है और शारीरिक स्फूर्ति आ जाती है।

अति स्त्रीसहवास या अन्य कारणसे वातवाहिनियाँ शिथिल होगई हों, उससे या मानसिक आघात पहुँचनेसे नपुंसकता आई हो, तो वह इस रसके सेवनसे दूर होती है। भोजनमेंसे रस योग्य न बननेसे रक्त आदि धातुओंका रूपान्तर सम्यक् नहीं होता। फिर उस हेतुसे शुक्र धातुकी निर्बलता और नपुंसकताकी प्राप्ति हुई हो, तो इस रसके सेवनसे रक्त आदि धातुओंका परिपोषण सम्यक् होकर विकार शमन होजाता है।

८. कासकेसरी रस

विधि—शुद्ध गन्धक, सोंठ, कालीमिर्च, पीपल, अभ्रकभस्म, कुटकी, रस-माणिक्य (या शुद्ध हरताल), इन ७ औषधियोंको ४-४ तोले मिला पञ्चकोल (पीपल, पिप्पलामूल, चव्य चित्रकमूल और सोंठ) के क्वाथमें ३ दिन खरल करके गोला बनावें।

फिर दो सरावके भीतर रख, दृढ मुखमुद्रा कर भूधर यन्त्रमें (गजपुटके नीचे खड्डाकर उसमें) रक्खें। फिर ऊपर ६ इञ्च मिट्टी डाल ऊपर गजपुटमें अग्नि जलावें। स्वाङ्ग शीतल होनेपर निकालकर खरलकर लेवें। (र० यो० सा०)

वक्तव्य—इस रसायनमें कुटकी आदि बनौषधियां हैं, वे पक जानी चाहियें। किन्तु जलकर नष्ट न होनी चाहिये। अन्यथा योग्य लाभ नहीं पहुँचता। कुटकी उत्तेजक और कफस्रावी है। वह कफको पतला बनाकर बाहर निकालती है। पीपल आदि भी कफस्रावी हैं, वे भी जल जानेपर योग्य क्रिया नहीं कर सकती।

मात्राः—१ से २ रत्ती नागरवेलके पान, आर्द्रकावलेह, बहेड़ा, शहद या शहदके साथ दिनमें २ या ३ बार देवें।

उपयोगः—कासकेसरी कफ, कास, ऊर्ध्वश्वास, रक्तविकार, त्वग्विकार आदिको नष्ट करता है।

छातीमें कफ संगृहीत होनेपर कफकुठार और कासकेसरी. दोनों हितकारक हैं। इनमेंसे कफकुठारमें ताम्रभस्म होनेसे वह अधिक उग्र है। जिन रोगियोंसे अधिक उग्रता सहन न होसके उनके लिये यह कासकेसरी हितावह है।

इसके सेवनसे कफ सरलतासे बाहर निकलता है और अग्नि प्रदीप्त होकर कफोत्पत्तिका ह्रास होता है। इस हेतुसे जब कफ गाढा होजाता है, सरलतासे नहीं निकलता। अधिक खाँसनेपर छातीमें वेदना होजाती है. तब इसका उपयोग होता है।

कास रोग जीर्ण होनेपर कफ सफेद और गाढा बन जाता है। फिर कुछ दिनोंके पश्चात् पककर रंग पीला होजाता है। देहमें मंद मंद ज्वर भी बना रहता है, अग्नि मंद हो जाती है, किसी-किसीको फुफ्फुसमें कफ संगृहीत हो जानेसे बार बार खांसी चलती रहती है और कफकी गांठ निकलती रहती है। शिरमें भारीपन भासता है। थोड़ा चलने या थोड़ा परिश्रम करनेपर श्वास भर जाता है। पेशाब प्रायः पीला होता है। ऐसी अवस्थामें कफकुठार और यह रस अति हितकारक है।

किसी किसी रोगीको पीले बँधे हुए कफके साथ रक्त भी गिरता है। उसे कफ निकालनेके लिये कफकुठार देनेपर रक्तस्राव बढ जानेका भय रहता है। उसे कासकेसरी सितोपलादि चूर्ण, घी और शहदके या वासावलेहके साथ देनेसे लाभ होजाता है।

वर्षाऋतुमें कितनेक व्यक्तियोंको कफकास और श्वास हो जाता है। उनको कासकेसरी और शृंगभस्म मिलाकर नागरवेलके पानमें दो बार देते रहनेसे उत्पन्न विकार नष्ट हो जाता है और नयी उत्पत्ति रुक जाती है।

९. कफान्तक रस

विधिः—शुद्ध बच्छनाग १ तोला, हल्दी १४ तोले, सोहागेका फूला और पीपल १०-१० तोले लें। सबको मिला, खरलकर बोतलमें भरलेवें। (र० का०)

मात्राः—१-१ रत्ती दिनमें ३ बार कत्था-चूना लगे हुए नागरवेलके पानके साथ लेवें।

उपयोग —इस रसके उपयोगसे कफ सरलतासे बाहर निकल जाता है और नयी उत्पत्ति रुक जाती है। कास और श्वास रोगमें हितावह है।

१० द्राक्षादि गुटिका (कफ)

विधि —खानेकी तमाखू २० तोले। कालीमिर्च २० तोले और बीज निकाली हुई मुनक्का ४० तोले लें। तमाखू और कालीमिर्चके कपड़छान चूर्णको मिला मुनक्काके साथ कूट एक जीव बना आध आध रत्तीकी गोलियां बना लेवें (इन गोलियोंको कालीमिर्चके चूर्णमें डालते जाय)।

मात्रा —१-१ गोली दिनमें ३ बार देवें।

उपयोग —द्राक्षादि गुटिकाके सेवनसे कफ बहुत जल्दी पक जाता है और सरलतासे निकल जाता है। यह वटी तमाखूके व्यसनीको विशेष अनुकूल रहती है। दूसरोंको कुछ बेचैनी लाती है। बेचैनी हो तो १-१ तोले घी पिलाना चाहिये।



११ मधुयष्ट्यादि गुटिका

विधि —मुलहठी, लौंग, सफेदमिर्च, बहेड़ा, छोटी इलायचीके दाने, सौंफ, सफेद कथा, ये ७ औषधियां ८-८ तोले, रबसूस २० तोले और पिपरमेण्टका फूल १ तोला लें। पिपरमेण्टको छोड़ शेष औषधियोंको मिलाकर खरलकर लेवें। फिर पिपरमेण्ट मिला थोड़े जलमें खरलकर १-१ रत्तीकी गोलियां बना लेवें।

मात्रा —१—१ गोली दिनमें ८-१० बार मुँहमें रखकर रस चूसें।

उपयोग —मधुयष्ट्यादि गुटिका सूखे हुए कफको गीला बनाकर सरलतासे बाहर निकालती है। श्वासग्रहणमें कष्ट हो रहा हो, उसे दूर करती है। शुष्क कास, और कफ कास, दोनों पर यह उपयोगी है।

१२. अर्क लवङ्गादि वटी

विधि —लौंग, बहेड़ा और पीपल ४ ४ तोले, काकड़ासिंगी, दालचीनी २-२ तोले, अनारका सूखा छिलका और सोहागेका फूला १ १ तोला, कथा और मुलहठी सत्व १०-१० तोले, मुनक्का और आकके फूल ८-८ तोले लें। पहले मुनक्का और आकके फूलोंको कूटकर चौगुने जलमें क्वाथ करें। चतुर्थांश जल शेष रहनेपर छानकर मुलहठी सत्व और सोहागा मिलावें। पश्चात् शेष द्रव्योंका कपड़छान चूर्ण मिला १-१ रत्तीकी गोलियां बना लेवें। (श्री० वैद्यराज यादवजी त्रिकमजी आचार्य)

मात्रा —१-१ गोली दिनमें ४-६ बार मुँहमें रखकर रस निगलते रहें।

उपयोग —इस वटीके सेवनसे खांसीका वेग कम होकर कफ सरलतासे निकलकर कण्ठ साफ होजाता है। जब छातीमें कफ भरा हो और खांसी बहुत आनेपर भी कफ न निकलता हो, तब यह वटी अति उपकारक होती है।

१३. कासान्तक चूर्ण

विधिः—घीकुंवारके छोटे छोटे टुकड़े कर सूर्यके तापमें सुखावें और छोटी कटेलीके पञ्चाङ्गको छायामें सुखा लेवें। फिर दोनोंको १।-१। सेर लेकर मिला लेवें। कालानमकका चूर्ण ५० तोले लेवें। फिर एक हांडीमें घीकुंवार-कटेलीका चूर्ण आधा भरें, ऊपर कालानमक डालें। फिर शेष चूर्ण ऊपर बिछा, ढक्कन ढककर कपड़मिट्टी करें। सुखनेपर गजपुट अग्नि देवें। स्वांग शीतल होनेपर भस्मको निकाल पीसकर बोतलोंमें भर लेवें। (आ० नि० मा०)

मात्राः—२-३ रत्ती दिनमें ५-७ बार मुँहमें डालकर रस निगलते रहें।

उपयोगः—इस कासान्तक चूर्णके सेवनसे संगृहीत कफ सरलतासे खुलकर बाहर आजाता है। फिर फुफ्फुस और श्वास वाहिनियां अपना कार्य करनेमें सशक्त हो जाती हैं। अग्निप्रदीप्त होती है और मलावरोध दूर होता है। यह सामान्य औषधि होनेपर भी खांसी और मंदाग्निके लिये चमत्कारिक लाभ पहुँचाती है।

तमाखूके व्यसनीको कुछ वर्षोंके बाद श्वास रोग हो ही जाता है और कफ गिरता रहता है। उनको इस चूर्णका सेवन करानेपर कास और श्वासरोगमें भी लाभ पहुँचता है। यदि व्यसन छोड दें तो पूरा पूरा लाभ होजाता है।

१४. कासविजय चूर्ण

विधिः—छिली मुलहठी, मग्ज कद्दू, वंशलोचन, बबूलका गोंद और कतीरा गोंद, ये सब २-२ तोले तथा मिश्री १० तोले लेवें। इन सबको कूटकर मिला लेवें। (श्री० पं० मुरारिलालजी शर्मा)

मात्राः—२-३ माशे शहद या घी-शहद मिलाकर दिनमें ३ बार लेवें। अथवा जल मिला चटनी जैसा बनाकर चाट लेवें।

उपयोगः—यह चूर्ण वातज और पित्तज शुष्क कासको शमन करनेमें उत्तम है। वातिक कासमें सैंकड़ों बार खांसनेपर कफ नहीं निकलता, अति त्रास होनेपर थोड़ा झाग आता है। किसी किसीको छातीपर कफ चिपका हुआ रहता है, किन्तु छूटता नहीं, उसके लिये यह चूर्ण आशीर्वादके समान कार्य करता है।

पैतिककास होनेपर कण्ठमें जलन, कण्ठ और मुखमें शोष, जलपानकी इच्छा बनी रहना, कफ छातीमें सूख जाना तथा खांसनेपर छाती और पसलियोंमें दर्द होना आदि लक्षण प्रतीत होते हैं। इस पैतिक उत्तेजक कासपर यह कास विजय चूर्ण तत्काल लाभ दर्शाता है। शुष्ककफको शिथिल करके निकालता है तथा श्लैष्मिक कलाकी उग्रताको शमन करता है।

१५. अर्कमूलत्वगादि चूर्ण

विधिः—आकके मूलकी छाल (एप्रिल मासमें निकाली हुई) ४ तोले, लौंग, अपामार्गक्षार, अभ्रकभस्म, और शृंगभस्म, सब १-१ तोला मिलाकर खरलकर लेवें।

मात्रा —४-४ रत्ती शहद या नागरबेलके पानमें दिनमें ३-४ बार।

उपयोग—यह चूर्ण उष्ण, कफस्रावी, रसायन और ज्वरघ्न है। जब छातीमें कफ सचित हो जाता है, मद-मद ज्वर बना रहता है। तथा बार-बार कष्टपूर्वक कफकी गाठ निकलती है, अग्निमान्द्य, अरुचि, बेचैनी आदि लक्षण होते हैं, तब इसके सेवनसे वे सब दूर होते हैं। एवं फुफ्फुस, श्वास वाहिनिया, यकृत् और आमाशयमें उत्तेजना आती है। फुफ्फुस उत्तेजित होनेपर कफस्राव होता है, तथा आमाशय और यकृत उत्तेजित् होनेपर पचनक्रियामें लाभ पहुँचता है। इनके अतिरिक्त इस चूर्णमें रसायन धर्म भी अवस्थित है। जिससे विविध रसोत्पादक ग्रन्थियोंकी क्रिया सबल बननेसे जीवन विनिमय क्रिया सुधरती है। परिणाममें इस चूर्णके सेवनसे शरीर स्वस्थ और सबल बनता है।

१६ कफनाशक क्वाथ

विधि —कायफलकी छाल, भारगमूल, कटेलीकी जड़, आकके मूलकी छाल, काकड़ासिंगी, मुलहठी, हरड़, बहेड़ा, अडूसाके पत्ते, गिलोय, नागरमोथा, सोंठ और पुष्करमूल, इन १३ औषधियोंको २-२ तोले मिला जौकूटकर २६० तोले जलमें मिलाकर क्वाथ करें। चतुर्थांश जल रहनेपर उतारकर छान लेवे। फिर शीतल होनेपर २० तोले शहद मिलाकर बोतलमें भरलेवे। (श्री० वैद्य गोपालजी कुवरजी ठक्कुर)

मात्रा —२॥-२॥ तोले दिनमें ३-४ बार ३-३ घण्टे बाद देते रहें।

उपयोग —इस क्वाथके सेवनसे कफ जल्दी पक जाता है और कण्ठमेंसे आवाज साफ निकलने लगती है। कफकास, तमकश्वास, पसलीका शूल, कफज्वर, न्युमोनिया, इन्फ्लुएन्जा, जुकाम, और फुफ्फुसशोथ आदि रोगोंमें जहा कफका जमाव अधिक होता है, वहापर इस क्वाथके सेवनसे सत्वर लाभ पहुँचता है।

१७ शर्बत जूफा

विधि —मुनक्का जलसे धोकर कुचली हुई ३० तोले, उन्नाब, सपिस्तान (सूखे पक्के लिहसोड़े), सूखे अजीर, सोसनके मूल (बेख सोसन) और मुलहठी ये ५ औषधिया २०-२० तोले, साफका मूल, कर्फसका मूल (बेख कर्फस) जूफा और हसराज, १०-१० तोले, बिहीदाने, अनीसून और सौंफ ५-५ तोले, छिले हुये जौ, अलसी, जटामासी और खतमीके बीज ३-३ तोले लें। सबको जौकूटकर रात्रीको ३ गुने जलमें भिगो दें। सुबह मन्दाग्निपर पकावें। एक तिहाई जल रहनेपर उतार शीतल करके कपड़ेसे छान लें। फिर ६ सेर चीनी मिला शहद जैसी चाशनी बना लें। शीतल होनेपर कपड़ेसे छानकर बोतलमें भर लें। (श्री० वैद्यराज यादवजी त्रिकमजी आचार्य)

मात्रा —१ से २ तोले शर्बत जलके साथ मिलाकर दिनमें २-३ बार देवें।

उपयोग—वात और पित्तप्रधान कासमें इसका उपयोग अच्छा होता है। सेवनसे कफ शिथिल होकर खासनेके साथ तुरन्त सरलतासे बाहर निकल जाता है।

१८ भार्ङ्यादिक्वाथ

विधिः—भारंगमूल, बहेड़ा नागरमोथा, पुनर्नवा, देवदारु, गिलोय, कुटकी, नीमकी अन्तरछाल, दारुहल्दी और मिश्री, इन १० औषधियोंको समभाग मिलाकर जौकुट चूर्ण करें।

मात्राः—२–२ तोलेका क्वाथकर दिनमें ३ बार पिलावें।

उपयोगः—यह क्वाथ उरस्तोय (प्ल्युरसी) की प्रथमावस्थामें अति हितकर है। उरस्तोयकी प्रथमावस्थामें फुफ्फुसावरणमें थोड़ा जल संचय होता है। एवं शुष्क कास ज्वर, पार्श्वशूल और घबराहट आदि लक्षण उपस्थित होते हैं। यह विकार अति त्रास-दायक माना गया है। इस रोगमें छातीमें स्रोतोरोध होनेसे फुफ्फुसावरणमें जल भरने लगता है। इस स्थितिमें इस क्वाथके सेवनसे अच्छा लाभ पहुंचता है। निस्तेजता, शोथ और बद्धकोष्ठ होनेपर आरोग्यवर्द्धनी, मण्डूर भस्म और शृंगभस्म दिनमें दोबार आमके मुरब्बाके साथ देना चाहिये। तीव्र प्रकोपमें रोगीको केवल दूधपर रखना चाहिये। यदि फुफ्फुसप्रणालिकाओंमें पीला कफ भी संगृहीत हो, तो छोटी कटेली क्वाथमें मिला लेनी चाहिये।

(१३) श्वास हिक्का VP

१. श्वासकासचिन्तामणि रस

विधिः—शुद्धपारद, सुवर्णमाक्षिक भस्म, सुवर्णभस्म, तीनों १-१ तोला, मुक्ता पिष्टी ६ माशे, शुद्ध गन्धक और अभ्रकभस्म २–२ तोले और लोह भस्म ४ तोले लेवें। पहले पारद-गन्धक मिलाकर कज्जली करें। फिर शेष भस्म मिला कटेलीकारस, बकरीका दूध, मुलहठीका क्वाथ और नागरबेलके पानके रसकी क्रमशः ७-७ भावना देकर १–१ रत्तीकी गोलियां बनालेवें। (र० यो० सा०)

मात्राः—१-१ गोली दिनमें २ या ३ बार शहद-पीपल या रोगानुसार अनुपान के साथ।

उपयोगः—श्वासकासचिन्तामणि समशीतोष्ण, रक्तपौष्टिक, फुफ्फुसबलवर्द्धक, हृद्य और कफस्रावी है। इस रसका प्रयोग तीव्र आक्षेपकालमें नहीं होता। आक्षेपका दमन होनेपर होता है। मूलभूत श्वासरोग तथा लक्षण और उपद्रवरूप श्वासरोग, दोनोंपर यह व्यवहृत होता है। सामान्यतः मूलभूत श्वासमें फुफ्फुस संस्थान निर्बल बनजाती है; कफ प्रकोप कुछ न कुछ अंशमें होता ही है और अग्निमन्द होजाती हैं। इन सब सामान्य स्थितिको लक्ष्यमें रखकर मूल ग्रन्थकारने अनुपानरूपसे शहद-पीपल लेनेका विधान किया है। किन्तु विशेष लाभ लेनेके लिये आवश्यक्ता अनुसार अनुपान बदल लेना चाहिये।

हृदयविकृतिसह श्वास — पाण्डुरोग, विषमज्वर या मुद्दतीज्वर दीर्घकालतक रह जाना और आमवात (Rheumatism) आदि रोगोंसे हृदय निर्बल हो जाता है या किसी हृदयखण्डका प्रसारण या अन्य विकृति हो जाती है, तब रुधिराभिसरण क्रिया सम्यक् नहीं हो सकती। देहको आवश्यक शुद्धरक्त नहीं मिलता। फिर हृत्केन्द्रगति वर्द्धककेन्द्र (Cardio-Accelerating Centre) उत्तेजित होता है। जिससे हृदयको अधिक कार्य करना पड़ता है और पीड़ित हृदय जब अशुद्ध रक्तको नहीं खींच सकता, तब दूषित वायु रक्तमें बढ़ती जाती है, जो सुषुम्णागत श्वसन केन्द्र (Respiration Centre) को प्रकुपित करता है। फिर हृद्विकारज तमक श्वास (Cardic Asthma) की सम्प्राप्ति होती है। इस विकारमें नाड़ीतालम विकृति, छातीमें दबाव, श्वासावरोध, श्वासग्रहणमें व्याकुलता, क्षारमय कफस्राव, कुछ अंशमें मूत्रावरोध आदि लक्षण प्रतीत होते हैं। इसपर श्वासकासचिन्तामणि शहद पीपलके अनुपानसे देते रहनेपर हृदयको बल मिलता है और शनैः शनैः श्वासरोगका दमन होजाता है।

चिपके हुए कफयुक्त श्वास —श्वास लेनेपर वायु श्वसनयन्त्रके भीतर प्रवेश करती है, तब उरोगुहाका विस्तार होता है और फुफ्फुसस्थ वायुकोष फूलते हैं और निःश्वासरूपसे वायु बाहर निकलनेपर वायुकोष और उरोगुहाका आकुंचन होता है। यह आकुंचन प्रसारण क्रिया नियमित होती रहती है, किन्तु जब ऊष्ण या अफीम आदि औषधिके सेवनसे इस श्वसनयन्त्र (श्वासप्रणालिका, फुफ्फुस आदि) में श्लेष्मा चिपक जाती है। तब वायुके आवागमनमें प्रतिबन्ध होता है। उस कफको यदि सत्वर बाहर न निकाल दिया जाय, तो वायुकोष और श्वासप्रणालियां पीड़ित होकर शिथिल होजाती हैं। और फिर बारम्बार श्वासावरोध (Dyspnoea) होता है और तमक श्वास (Asthma) की प्राप्ति होजाती है। इस प्रकारके विकारमें इस रसको उत्तेजक कफस्रावी अनुपान वासापत्र मुलहठी, बहेड़ा, भारंगी और मिश्रीके क्वाथ या मरिचादि क्वाथ अथवा शामक कफस्रावी जूफा शर्बतके साथ देना चाहिये। यदि कफ शुष्क हो गया हो तो उसे पुनः आर्द्र बनाकर बाहर निकालनेमें मरिचादि क्वाथ विशेष हितावह है।

अजीर्णजन्य श्वास —आमाशय विकृति होनेपर विदग्धाजीर्ण या विष्टब्धकी प्राप्ति होती है। ये दोनों प्रकारके अजीर्णरोग जीर्ण होनेपर हृदय और फुफ्फुसको भी हानि पहुँचाते हैं। फिर श्वासरोगकी प्राप्ति होजाती है। इस प्रकारके श्वासरोगको उपद्रवरूप श्वास माना है। इस प्रकारमें मूल कारणरूप अजीर्णको दूर करना चाहिये। केवल श्वासरोगका उपचार करनेपर उसका दमन नहीं हो सकेगा। विष्टब्धाजीर्ण हेतु होनेपर अदरकके रस और शहदके साथ श्वासकासचिन्तामणि दिया जाता है। यदि विदग्धाजीर्णरूप कारण हो, दाह, खट्टी डकार, कफका अभाव, श्वासवेगवृद्धि और अति व्याकुलता हो, तो श्वासकासचिन्तामणि, प्रवालपिष्टी और सितोपलादि चूर्णको शहद के साथ देते रहनेसे श्वासरोगका दमन होजाता है।

पित्तप्रकोपसहश्वासः—पित्तप्रधान प्रकृतिवालोंको गरम गरम आहार, धूम्रपान, अधिक मिर्च आदिके सेवनसे और उष्णोपचारसे श्वासरोग बढ़ता है। तथा समशीतोष्ण उपचारसे शमन होता है। फुफ्फुसोंमें प्रायः कफ नहीं बढ़ता, मामूली रहता है, पचनक्रिया मन्द और मन्द होती जाती है। शरीर दिन प्रति दिन निर्बल होता जाता है और बारबार चक्कर आता रहता है। इस प्रकारके विकारमें श्वासकासचिन्तामणि जूफा शर्बतके साथ दिया जाता है। एवं आवश्यकता अनुसार अग्निप्रदीपक औषधि प्रवालपंचामृत या शंख भस्म मिलादेनी चाहिये।

धूम्रपानवालोंका श्वासः—कितनेक धूम्रपानके व्यसनियोंकी छाती कफसे भरी रहती है और कभी कभी फुफ्फुसोंमें व्रत हो जाते हैं। फिर यक्ष्मापीड़ित रोगीके सदृश दुर्गन्धयुक्त कफ गिरता रहता है। प्रतिदिन २० से ४० तोलेतक कफ गिरता है। ऐसे रोगियोंको श्वासकासचिन्तामणिके साथ शृंग भस्म और लोहबान पुष्प मिला कर देनेसे शारीरिक उत्ताप बढ़ा हो, तो वह भी कम होजाता है।

वृद्धावस्थामें श्वासः—वृद्धावस्था, अति स्त्री सेवन, मानसिक चिन्ता, उपवास आदि कारणोंसे शारीरिक निर्बलता आजाती है। फिर थोड़ा-सा परिश्रम करनेपर श्वास भर जाता है। इसे क्षुद्र श्वास (Breathlessness) कहते हैं। इस विकारपर श्वासकासचिन्तामणि कम मात्रामें शहद-पीपलके साथ देते रहनेसे थोड़े ही दिनोंमें शरीर सबल बन जाता है और श्वासरोगकी निवृत्ति होजाती है।

वंशागत श्वासः—कितनेक कुटुम्बोंमें वंशागत श्वासरोग (Bronchial Asthma) प्राप्त होता है। इस विकारमें श्वासनलिका या वायुकोषोंमें प्रदाह उत्पन्न करनेवाले बाह्य कारणका अभाव होता है। केवल फुफ्फुस संस्थानकी स्वाभाविक निर्बलता ही प्रतीत होती है। ऐसे रोगियोंको छोटी आयुमें जब स्थिति स्थापक गुण (Elasticity) अधिक हो, उस समय अति कम मात्रामें लम्बे समयतक सितोपलादि चूर्ण और शहद के साथ श्वासकासचिन्तामणि दिया जाय, तो लाभ पहुँच जाता है।

सूचना:—श्वासरोगीको मलावरोध हो, तो उसे दूर करना चाहिये। श्वासका आक्षेप हो, उस समय आक्षेपशामक उपचार करना चाहिये।

कफप्रधान कासः—कास रोगकी उत्पत्ति प्रतिश्याय, कीटाणुविषप्रकोपज ज्वर-इन्फ्लुएन्जा आदि विषाक्त वायु, वाष्प आदिका आकर्षण या आर्द्र वायुका आघात और धूम्रपान आदि कारणोंसे होती है। इसमें आशुकारी और चिरकारी ऐसे २ प्रकार हैं। आशुकारीमें तीव्र वेग रहते हैं। कफोत्पत्ति नहीं होती अथवा झागमय कफ रहता है। उस अवस्थामें इस रसका उपयोग अधिक लाभप्रद नहीं है; किन्तु रोग जीर्ण होनेपर वेग शिथिल हो जाता है। फिर फुफ्फुसोंमें कफ संचय होने लगता है। इस चिरकारी अवस्थामें निर्बल हृदय और नाजुक प्रकृतिवालोंको कफकुठारकी अपेक्षा श्वासकासचिन्तामणि देना विशेष अच्छा माना जायगा।

हिक्का—हिक्काकी उत्पत्तिके अनेक कारण हैं। किन्तु सब कारणोंद्वारा बहुधा महाप्राचीरापेशी (Diaphragm) का आक्षेप पहले होता है। यदि आमाशयनलिका, आमाशय अथवा अन्त्रके प्रदाहके हेतुसे यह विकृति हुई हो तो यमला हिक्का उपस्थित होती है। इस विकारपर श्वासकासचिंतामणि गुड़ मिले सोंठके फाण्टके साथ दिया जाता है।

वक्तव्य—भैषज्यरत्नावलीकारने इस प्रयोगका नाम श्वासचिन्तामणि रखा है और नागरवेलके पानके स्थानपर अदरकके रसकी भावना दी है तथा सुवर्णका परिमाण आधा कर दिया है। बंगाल और इतर आर्द्र वायुवाले प्रदेशमें इस तरहका प्रयोग हितावह रहेगा। ऐसे देशोंके लिए पारदके स्थानपर भी कितनेक चिकित्सकोंने रससिन्दूर कर दिया है।

रससिन्दूर और अदरकके रसका सम्मिश्रण होनेपर उग्रता बढती है। यह पित्तप्रधान प्रकृतिवालोंसे सहन नहीं होती। आवश्यकता होनेपर शीतल अनुपानके साथ कम मात्रामें सेवन करावें।

२. पीत श्वासकुठार

विधि—शुद्ध मनशिला और कालीमिर्चका कपड़छान चूर्ण, दोनोंको समभाग मिला अदरखके रस और नागरवेलके पानके रसमें १२-१२ घण्टे खरलकर १-१ रत्तीकी गोलियां बना लेवें। (आ० नि० मा०)

मात्रा—१-१ गोली २-२ घण्टेपर २-३ बार नागरवेलके पानमें या जलसे एवं दिनमें २ बार लेते रहें।

उपयोग—पीतश्वासकुठार यह श्वासरोगका दमन करनेमें उपयोगी है। आशुकारी आक्षेपकालमें २-२ घण्टेपर देते रहना चाहिये। जब आक्षेपका असर हो तबतक गरमकरके शीतल किया हुआ जल देवें। अन्न नहीं देना चाहिये। इस तरह सम्हालकर २-३ बार देनेपर दौरा शमन हो जाता है। यह शीतप्रकोपज श्वासकी अपेक्षा अपचन-जन्य श्वासप्रकोपपर अधिक कार्य करता है।

बारबार एफेडिन आदि तीक्ष्ण औषधियोंका अन्तःक्षेपण करानेवालोंको देरसे असर होता है। यदि रोगी थोड़े समयतक कष्ट सहन कर लेवें तो रोगनिरोधक शक्ति सबल हो जायगी और अन्तःक्षेपणकी उपाधि सदाके लिये छूट जायगी।

चिरकारी जीर्ण तमक श्वासमें पथ्यपालनसह २-४ मासतक पीतश्वासकुठारका सेवन करनेपर लाभ पहुंचता है। श्वासके अतिरिक्त कफ कासमें भी यह रस हितावह है।

३. श्वासहारी रस

विधिः—सुवर्ण भस्म, नाग भस्म, ताम्र भस्म, शुद्ध पारद और शुद्ध गन्धक,

ये ५ औषधियाँ समभाग लेवें। पहले पारद गन्धककी कज्जली करें। फिर शेष भस्म मिलाकर, अगस्त्यके रसके साथ ३ दिन खरल करके 1-1 रत्तीकी गोलियां बना लेवें।†

(र० यो० सा०)

मात्रा:—१ से २ गोली दिनमें १ या दो बार शहद-पीपल, मलाई-मिश्री, मुलहठी और बहेड़ेका चूर्ण और शहद, शर्बत जूफा अथवा रोगानुसार अनुपानके साथ।

उपयोग:—यह श्वासहारि रस, कास श्वास और हिक्का रोगको नष्ट करता है। आचार्योंने इस रसका नाम श्वासहारी रखा है। अर्थात् वे इस रसको कास और हिक्काकी अपेक्षा श्वासपर अधिक कार्यकारी मानते हैं। श्वास रोगमें महाश्वास ((Infaction of the Lungs), ऊर्ध्व श्वास (Acute Oedema of the Lungs), छिन्न श्वास (Cheyne-Stokes Breathing), तमक श्वास (Asthma) और क्षुद्र श्वास (Breathlessness) ये ५ प्रकार हैं।

इनमेंसे पहले २ प्रकारपर औषधप्रयोग सफल नहीं होता। तृतीय प्रकारके श्वास (छिन्न श्वास) में यदि सुषुम्णास्थित श्वसनकेन्द्रकी अति विकृति नहीं हुई है और वृक्कसंन्यास (Uraemia) प्रबलरूपमें न हुआ हो तो लाभ हो सकता है। शेष २ प्रकारके श्वास रोगपर इस श्वासहारीका प्रयोग होता है। इन २ प्रकारोंमें तीव्र दौराके शमन हो जानेके पश्चात् इसका उपयोग होता है।

तमकश्वासका आक्रमण विशेषतर पिछली रात्रिमें होता है। बारबार छींके आना, अफारा, अपचन, बारम्बार मूत्रत्याग और अति व्याकुलता आदि लक्षण उपस्थित होते हैं। किसीको शुष्क काससह और किसीको अति कफविकृतिसह होता है। इस रोगमें बहुधा यकृत् भी कमजोर होता है। इस प्रकारपर यह श्वासहारी रस सफल औषधि है। यदि शुष्क कास है, तो सितोपलादि चूर्ण और शहदके साथ दिया जाता है। कफ हो और आमाशयकी पचनविकृति हो, तो अदरकका रस और शहद अनुपान रूपसे दिया जाता है। सामान्य कफ हो अधिक शुष्कता न हो, तो नागरबेलके पानमें या शहद-पीपलके साथ यह रस दिया जाता है।

तमक श्वासका दौरा अनेक बार हृदयविकृतिके हेतुसे होता है। जब हृदय शिराओंमेंसे आवश्यक दूषित रुधिरका योग्य शोषण नही कर सकता, तब रक्तमें आंगारिक वायु (Carbonic Acid Gas) बढ़ती जाती है। जब यह अत्यधिक हो जाती है, तब श्वासका दौरा उपस्थित होता है। इस प्रकार श्वासग्रहणमें अति व्याकुलता, कास और झागमय कफ आदि लक्षण होते हैं। इसपर यह रस महोपकारी है। यह रस एकाध मास सेवन करनेपर हृदयको सबल बनाकर श्वासविकारको नष्ट कर देता है।

† कनकभुजगशुल्वं, सूतराजं सुगन्धं, मुनिरसपरिघृष्टं वल्लमात्रं दिनान्ते।
हरति सकलकासं श्वासहिक्कासमेतं, त्रिभुवनहितकारी जायते श्वासहारी॥

वक्तव्य—श्वासरोगीको चाहिये कि श्वास दूर होनेपर एक वर्षतक आहार विहारमें संयम रखें। आग्रहपूर्वक पथ्यका पालन करें।

मुद्दती ज्वर आदि रोगोंका अधिक समयतक रहना, तीव्र मिर्च आदि पदार्थोंका अति सेवन, तेज औषधियोंका सेवन या शीतल वायु आदिका आघात होकर श्वसनयन्त्रमें प्रदाह हो जाना आदि कारणोंसे शुष्क कासकी प्राप्ति होती है। यह कास वेगपूर्वक चलती रहती है। फिर अति व्याकुलता आकर थोड़ा झाग निकलता है। यह कास कभी कभी मिथ्या उपचार या अपथ्य सेवनसे जीर्ण हो जाती है। फिर शारीरिक कृशता, हृदय, मस्तिष्क और यकृतकी निर्बलता, फुफ्फुस और श्वासप्रणालिया प्रदाहपीड़ित हो जाना, अग्निमान्द्य, आलस्य, मलावरोध, उत्साहका अभाव और कासके हेतुसे रात्रिको आवश्यक निद्रा न मिलना आदि लक्षण उपस्थित होते हैं। उस अभ्रक आदि उत्तेजक औषधि नहीं दी जाती। शामक उपचार ही किया जाता है। यह रस शामक तथा मस्तिष्क, यकृत और फुफ्फुसबलवर्द्धक होनेसे जीर्ण कासमें अति हितावह है। मात्रा आध आध रत्ती। प्रवालपिष्टी, सितोपलादि चूर्ण और घी शहदके साथ मिलाकर दिनमें ३ बार देते रहनेसे १५ दिनमें फुफ्फुसप्रदाहसह कासकी निवृत्ति हो जाती है।

कफ कासरोगपर श्वासहारीको मुख्य औषधि नहीं कह सकेंगे, तथापि मस्तिष्क और फुफ्फुसको बल देने और कीटाणुओंका नाश करनेके लिये यह रस नागरवेलके पानमें या शहद पीपलके साथ दिया जाता है।

राजयक्ष्मा रोगकी प्रथमावस्थामें शुष्क कास उत्पन्न होती है। फिर कफोत्पत्ति हो जाती है। पहले कफ सफेद बनता है। फिर पीला-हरा, दुर्गन्धयुक्त और बताशेके सदृश बधा हुआ बन जाता है। इस प्रकारकी कासपर भी इस रसका उपयोग होता है। शुष्क कास होनेपर अमृतपाश घृत या प्रवालपिष्टी, सितोपलादि चूर्ण और शहद पीपल से दिया जाता है। कफ होनेपर वासावलेहके साथ सेवन करानेपर विशेष लाभ पहुंचता है।

हिक्कारोगपर भी श्वासहारीका प्रयोग होता है। जो हिक्का शीतल वायुके आघातसे अन्ननलिकामें प्रदाहके कारण उपस्थित हुई है। जो सौम्य प्रकारकी होती है। छातीमें मन्द मन्द वेदना, हिक्का रुक रुक चलना, शीतल जलपान करनेपर अधिक कष्ट देना और अफारा आदि लक्षण उपस्थित होते हैं। इसपर यह शहद-पीपल या गुड़ मिले सोंठके क्वाथके साथ दी जाती है। यदि यह हिक्का १०–२० दिन रहनेसे कुछ कफप्रकोप भी हो गया हो तो ३–३ माशे कटेलीके क्वाथ और शहदके साथ श्वासहारी दिया जाता है।

४. श्वासदमन गुटिका

विधि—धतूराके पक्के फल, आकके पीलेपान, तमाखूके सूखे पान, अडूसाके पान, अनाज निकाली हुई मक्काकी सूखी डोडी, अपामार्ग पञ्चाङ्ग और केलेके पान, ये ७

औषधियाँ १–१ सेर नौसादर; सोरा और सैंधानमक ८–८ तोले और मुलहटी १० तोले लेवें। सबको मिला एक हांडीमें भर मुखमुद्राकर गजपुट अग्नि देवें। स्वांग शीतल होनेपर भस्मको निकाल ४ गुने जलमें मिलावें। जल नितर जानेपर ऊपरसे सम्हालपूर्वक जल निकाल लें। भस्ममें क्षारांश रहा हो, तो पुनःजल मिलाकर नितार लेवें। पश्चात् जलको उबालकर क्षार बना लेवें। उसे बोतलमें भर लेवें।

उक्त क्षार ४ तोले, काकड़ासिंगीका चूर्ण १२ तोले, लोहबान पुष्प १ तोला, सकमोनिया (Scammonia Resina) ६ तोले और बीज निकाली हुई मुनक्का ६ तोले मिला खरलकर १–१ रत्तीकी गोलियां बना त्रिकटुके कपड़छान चूर्णमें डालते जायं। (श्री० वैद्यराज० पं० गंगादत्तजी पन्त)

मात्राः—१–१ गोली दिनमें २ बार मलाईके साथ।

उपयोगः—श्वासदमन गुटिका तमक श्वास और प्रतमक श्वास दूर करती है। कफको सरलतासे बाहर निकालती है और उसकी उत्पत्तिका दमन करती है १ सप्ताह सेवन होनेपर लाभ मालूम होने लगता है और ४० दिन पथ्य पालनसह सेवन करनेपर फुफ्फुसोंमें चिपका हुआ कफ निकल जाता है। फिर रोगी स्वस्थ हो जाता है।

यदि श्वासरोगीको गाढा कफ अत्यधिक गिरता हो, कफका रंग सफेद हो और शारीरिक निर्बलता अधिक रहती हो तो अभ्रक भस्म और लोह भस्म चौथाई चौथाई रत्ती साथमें देते रहनेसे लाभ विशेष मिलता है। यदि कफ पीला हो या दुर्गन्धयुक्त हो तो शृंग भस्म भी १-१ रत्ती मिला देनी चाहिये। एवं रोगीको जल गरम करके शीतल किया हुआ पिलाना चाहिये।

जीर्ण कसकासमें जब कफ अति चिपचिपा और गाढा बन जाता है, तब रोगी कफ प्रकोपसे बेचैन रहता है। थोड़ेसे परिश्रममें श्वास भर जाता है और स्वेद आ जाता है। उस अवस्थामें इस वटीका सेवन करानेपर कफ सरलतासे बाहर निकलने लगता है। व्याकुलता दूर होती है और थोड़े ही दिनोंमें रोगी स्वस्थ हो जाता है। यदि अग्नि मन्द हो तो ६४ प्रहरी पीपल भी १-१ रत्ती साथमें देते रहना चाहिये।

५. श्वासारि एला

विधिः—उत्तम जातिका पारदर्शकि एलवा २० तोले, वङ्गक्षार १ तोला और गुड़ ४ तोले लें। तीनोंको मिलाकर कूटें। गोलियां बनने लगे तब १-१ रत्तीकी गोलियां बनावें। यदि गोली न बन सके तो थोड़ा गुड़ और मिला लेवें इन गोलियों-को सुवर्ण वर्क्में डालते जायं, जिससे वे सुवर्ण सदृश तेजस्वी और अधिक गुणदायक बन जाती हैं।

मात्राः—२-२ गोली दिनमें २ बार जलके साथ निगलवा देवें। फिर सुबह

ऊपर सिवाया घी २ तोले पिलावें। या ४ तोले मलाई मिश्री मिलाकर खिलावें। रात्रिको घी या मलाई देनेकी जरूरत नहीं है।

सूचना—(१) घी पिलानेके पश्चात् आध घण्टेतक जल न पिलावें। अति प्यास लगे तो सिवाया दूध या निवाकी चाय पिलावें।

(२) तेल, मिर्च, खटाई और पक्का भोजन न खिलावें।

(३) तमाखू के व्यसनीका हो सके उतना धूम्रपान कम करा देना चाहिये।

उपयोग—यह श्वासारि गला कफप्रधान श्वासके लिये अति हितकारक है। देह निर्बल बनने, वृद्धावस्था या मेदवृद्धि होनेपर थोड़े परिश्रममें श्वास भर जाता हो और श्वसन क्रियामें कष्ट होता हो, तो इसपर यह लाभ पहुंचाती है।

६. तालीशसोमादि चूर्ण

विधि—तालीशपत्र, सोम, मुलहठी, अडूसेके फूल और पुष्करमूल इन ५ ओषधियाको समभाग मिला, कूटकर कपड़छान चूर्ण करें। (सि० यो० स०)

मात्रा—४-५ रत्ती दिनमें ३-४ बार शहदके साथ देवें।

उपयोग—यह चूर्ण श्वासवेगका दमन करता है। एवं श्वास, कास और प्रतिश्यायको दूर करता है।

७. सोमभृङ्ग्यादि चूर्ण

विधि—सोम (Ephedra Intermedia), काकड़ासिंगी, कटेलीमूल, तालीसपत्र, लौंग, तेजपात, पीपल, मुलहठी, बहेड़ा, वासापत्र और छोटी इलायचीके दाने, ये १२ औषधिया समभाग मिला कूटकर चूर्ण करें। (श्री० वैद्यराज कांतिलालजी)

मात्रा—२ से ३ माशे दिनमें २-३ बार निवाये जलके साथ।

उपयोग—सोम भृङ्ग्यादि चूर्ण उत्तेजक कफघ्न, ज्वरहर, मूत्रल और श्वास-कासहर है। इस चूर्णका उपयोग कफकासपर अधिक होता है। जिसमें सफेद बंधा हुआ या पीला कफ गिरता है, मन्द मन्द ज्वर रहता है। सिर और छातीमें भारीपन, अग्नि-मान्द्य, मूत्रमें पीलापन और शीतल वायु सहन न होना आदि लक्षण भी होते हैं। उसपर यह चूर्ण अच्छा लाभ पहुचाता है। यदि पोटास क्लोरास १-२ रत्ती मिला दिया जाय, तो कफनिःसारक और मूत्रल असर अधिक होता है।

धूम्रपानका व्यसन पुराना होनेपर अनेकोंको श्वासरोगकी संप्राप्ति होजाती है। फिर फुफ्फुस और श्वास प्रणालिकाओंमें कफ बना रहता है, थोड़ा चलनेपर श्वास भर जाता है और कार्य करनेका उत्साह मन्द होजाता है। उसपर इस चूर्णका सेवन २-४ मासतक कम मात्रामें करानेपर लाभ पहुचता है। यदि तमाखूके व्यसनको छोड़ देवें तो स्थिर लाभ मिलता है।

८. श्वासान्तक चूर्ण

विधि—बहेड़ा १० तोले, लौंग ३ तोले, अपामार्ग क्षार, वंग क्षार, वच और

सोनागेरू ६-६ माशे लेवें । बहेड़े और लौंगको कूटकर कपड़छान चूर्ण करें । फिर शे ओषधियां मिलाकर खरलकर लेवें ।

मात्राः—३-३ माशे प्रातः सायं शहदके साथ । मंद मंद ज्वर भी रहता हो तो शृंगभस्म २-२ रत्ती मिलाते रहना चाहिये ।

उपयोगः—यह चूर्ण कास और श्वासरोगमें संगृहीत कफको सत्वर दूर करत है । थोड़े दिनोंतक सेवन करानेसे कफ निकलकर साफ होजाता है, कफोत्पत्ति बन्द हे जाती है, पचनक्रिया सबल बनती है तथा श्वास और कासरोग दूर होजाते हैं ।

सूचनाः—धूम्रपान करनेका व्यसन हो, तो छोड़ देना चाहिये । ज्वर रहता है और अधिक कफोत्पत्ति हो तो जल गरम करके शीतल किया हुआ पीना चाहिये । तथ स्नान भी निवाये जलसे करना चाहिये ।

६. मरिचादि कषाय

प्रथमविधि—कालीमिर्च १ तोला, बनफसा १६ तोले, वासापत्र १२ तोले गावजवां ८ तोले और मुलहठी ४ तोले लें । सबको मिलाकर जौकूट चूर्ण करें

(श्री राजवैद्य पं० रामचन्द्रजी शर्मा

मात्राः—क्वाथ चूर्ण १ तोलेको ४० तोले जलमें उबालें । चतुर्थांश शेष रहनेपर १ तोला शक्कर मिलाकर छान लेवें । इस तरह दिनमें २ बार सुबह रात्रिको क्वाथ करके पिलावें ।

उपयोगः—इस क्वाथका उपयोग जुकाम बिगड़कर उत्पन्न हुई शुष्क कास, जिसमें कफ सूख जाता है और नहीं निकलता, साथ साथ कितनेक रोगियोंको ज्वर भी बना रहता है । इस प्रकारकी ज्वरसह कासपर इस कषायका अच्छा उपयोग होता है । हजारों रोगियोंपर आजमाया हुआ अनेक वर्षोंका परीक्षित प्रयोग है । यदि रोगीको मलावरोध भी रहता हो, तो हरड़, बहेड़ा २-२ तोले ऊपर कहे हुए कषायमें मिलाते हैं । उस कषायको मध्यम मरिचादि कषाय नाम दिया है । तथा रेशाखतमी और खुब्बाजी २-२ तोले मिलाते हैं । उस कषायको बृहन्मरिचादि कषाय संज्ञा दी है ।

यदि कफाधिक श्वासरोगीको देनेके लिये कषाय तैयार करना है, तो प्रतिमात्रा १-१ तोला अड़ूसा मिला लेते हैं । इस तरह एक ही कषायको ३ प्रकारसे बनाकर व्यवहृत करते हैं । यह अति सन्तोषप्रद सफल प्रयोग है ।

१०. रसेश्वर अर्क

विधिः—रसकपूर ५ माशे ... कपूर १ तोलेको ... साथ पीसें । फिर नागरबेलके पान ... पर आगेकी ओर ... अन्य ४० पानोंपर ... । लेप सुखनेपर ... पर कपूर लगे हुए पान ... एक पर दूसरे

डोरेसे बांध लेवें। पश्चात मिट्टीकी हाडीमें ४ सेर जल भर, उसमें दौलायन्त्रके समान पानके गट्ठेको लटकावें। पान हाडीके तलसे १ अंगुल ऊंचा रहना चाहिये। उसे चुल्हे-पर चढाकर आंच देवें। ६० तोले जल शेष रहनेपर हाडीको उतार लें। शीतल होनेपर पानोंको मसल जलको छानकर बोतलमें भर लेवें। (पं० आत्माराम शंकरजी)

मात्रा —१-१ औंस २-२ घण्टेपर २ या ३ बार ६ माशे शहद मिलाकर पिलावें।

उपयोग —श्वास रोगका तीव्र आक्रमण होकर अति घबराहट होनेपर और सन्निपातमें श्वास प्रकोप होनेपर इस अर्कका सेवन करानेपर तत्काल लाभ पहुँचता है।

सूचना—(१) रोगीको अर्क पिलानेके पश्चात् बबूलकी छालके क्वाथके ६-७ कुल्ले करावें और पान खानेको देवें। पानमें चौथाई रत्ती कपूर डाल देवें। पुन २-३ घण्टे बाद दूसरी बार भी कुल्ले करा लेवें।

(२) जिन रोगियोंके दांतोंमेंसे पीप निकलता है या मसूढा हिलता हो तो यह अर्क नहीं देना चाहिये। अन्यथा दांत गिर जायगा।

११ वासकासव

विधि —वासापञ्चाङ्ग १० सेरको २०४८ तोले जलमें उबालें। तृतीयांश (तीसरा हिस्सा) जल शेष रहनेपर उतार मसलकर छान लें। फिर गुड़ ४०० तोले, धायके फूल ३२ तोले, दालचीनी, तेजपात, छोटी इलायचीके दाने, नागकेशर, शीतल-मिर्च, सोंठ, कालीमिर्च, पीपल और नेत्रबाला, ये ९ औषधियाँ ४ ४ तोले मिला अमृतबानमें भर मुखमुद्रा कर १५ दिन रहने दें। परिपक्व होनेपर छानकर बोतलोंमें भर लें। (ग० नि०)

मात्रा —१।-१। तोला जलके साथ दिनमें २ बार देवें।

उपयोग —गदनिग्रहकारने लिखा है कि यह अरिष्ट सब प्रकारके शोथोंको दूर करता है। इस आसवमें मुख्य वस्तु वासा है। इसका उपयोग प्राचीन आचार्योंने श्वास यन्त्रके प्रदाह, कफप्रकोप, कास, श्वास, रक्तपित्त, उरःक्षत, रक्तवमन, राजयक्ष्मा आदि-रोगोंपर लिखा है। नव्य चिकित्सकोंके मतमें वासाके सुखाये पत्तेकी बीड़ी बनाकर पिलानेसे कास और श्वासरोगमें लाभ होता है। इनके मतानुसार वासा कफ निःसारक आक्षेपहर और संशोधक है। एवं विषमज्वर, आमवात, क्षय, तमकश्वास और चिरकारी श्वासनलिकाप्रदाह और उरोगत अन्य कफप्रधान रोगोंमें व्यवहृत होता है। इन गुणोंके अनुरूप कासरोगमें, इसको प्रयुक्त करनेपर कफ सरलतासे बाहर निकलता रहता है। जिससे रोगीकी बेचैनी दूर होती है और रोगबल सत्वर कम होजाता है।

श्वासरोग, रक्तपित्त और क्षयरोगमें भी इस आसवसे लाभ पहुँचता है। यद्यपि वासा स्वरसकी अपेक्षा इसके गुणमें कुछ अन्तर पड़ जाता है, तथापि वासास्वरस निकालने

भी जहाँ सुविधा न हो वहाँपर वासासवका प्रयोग हो सकता है और यह उपकारक ही होता है। (औ० गु० ध० शा० के आधारसे)

१२. श्वासहर योग

(१) महायोगराज गूगल ४ से ८ रत्ती तकका धूम्रपान करानेसे तत्काल श्वासका दौरा शमन होजाता है। आवश्यकतापर एक घण्टा बाद फिरसे दूसरी बार धूम्रपान कराना चाहिये।

पथ्य रूपसे गुड़ या शक्कर मिलाहुआ दूध पिलावें। जिनको दूध अनुकूल न हो, उनको ११ नग कालीमिर्च निगलवाकर यकृत् बलके अनुसार १ से ४ तोले घी पिलावें।

सूचना:—धूम्रपान करनेपर धुंएको मुखसे ही निकालें, नाकसे नहीं। चावल, दही, लालमिर्च, तैल आदिका कुछ दिनोंके लिये परित्याग करना चाहिये।

कुछ दिनोंतक अति कम मात्रामें दिनमें २-३ बार श्वासकुठार या समीरपन्नग, अभ्रक और शृंग भस्मका मिश्रण सेवन करें और प्रतिदिन सुबह फुफ्फुसोंपर सरसोंके तैलकी मालिशकर फिर बालुकास्वेद १५-२० मिनटतक करते रहें, तो कफाधिक श्वास रोग समूल नष्ट होजाता है।

(२) कपूर ३ रत्ती गुड़में लपेटकर निगलवा देनेसे श्वासका दौरा शमन होजाता है। आवश्यकतापर १ घण्टा बाद दूसरी बार देवें। पीनेके लिये गुनगुना जल देवें।

(३) नारियलकी जटाको चिलममें रख धूम्रपान करानेसे तुरन्त श्वासका दौरा निवृत्त होजाता है।

(४) छायामें सुखाई हुई अडूसेकी पत्ती ४ भाग, छायामें सुखाई हुई धतूरेकी पत्ती, भांग, काली चाय और खुरासानी अजवायनकी पत्ती २-२ भाग लें। सबको कूट मोटा चूर्ण बना कलमीसोरेके तृप्त द्रवमें (कलमीसोरेको जलमें मिलाकर घोल करें। जब उसमें अधिक सोरा न घुल सके, तब उस घोलको तृप्तद्रव कहते हैं) भिगोकर छायामें सुखालेवें। आवश्यकतापर इसकी मोटे कागजमें बीड़ी बनाकर धूम्रपान करनेके लिये देवें। (श्री० वैद्यराज यादवजी त्रिकमजी आचार्य)

उपयोग:—इस धूम्रयोगसे श्वासका दौरा तत्काल दब जाता है। छातीमें घबराहट होती हो, वह दूर होती है और कफ सरलतासे बाहर निकल जाता है। यदि धूम्रपान करनेसे कण्ठमें शुष्कता उत्पन्न हो, तो थोड़ी देरके बाद शक्कर मिला हुआ गोदुग्ध पिलावें।

१३. हिक्काहर योग

(१) इन्द्रायणकी १ पत्ती और कालीमिर्च ३ नगको पीस १० तोले बकरीके दूधमें मिलाकर पिला देवें। आवश्यकतापर ३-३ घण्टेपर दूसरी और तीसरी बार देनेसे कष्टदायक हिक्का, कास और कफप्रकोपका निवारण होजाता है।

(१४) राजयक्ष्मा-उरःक्षत।

१ अभ्रकल्प

विधि —अभ्रकभस्म ८ तोले, लोहभस्म ६ तोले, पारद ४ तोले और शुद्ध गन्धक २ तोले लें। पहले पारद-गन्धककी कज्जली करें। फिर भस्म मिला त्रिफला, भांगरा, सुहिंजनेकी छाल, चिरायता और चित्रकमूलकी छाल, इनके क्वाथ या रसकी क्रमश ७-७ भावना देकर २-२ रत्तीकी गोलिया बना लेवें। (र० यो सा०)

मात्रा —१-१ गोली दिनमें २ बार वंशलोचन ४ रत्ती, पीपल २ रत्ती, केशर ½ रत्ती, कस्तूरी ½ रत्ती और शहद ३ माशे (राजयक्ष्माकी प्रथमावस्थामें गोघृत १॥ माशा भी) के साथ मिलाकर ४० दिन या अधिक समयतक देते रहें।

उपयोग —यह रस राजयक्ष्मा, धातुशोष, जीर्णज्वर, श्वास, कास, अग्निमान्द्य, राजयक्ष्माजनित ज्वर, मलावरोध, अरुचि, पाण्डु, आदिको दूर करता है।

यह रसायन राजयक्ष्माकी प्रथमावस्थामें और अति निस्तेज और निर्बल बने हुए जीर्ण ज्वरके रोगियोंके लिये अति हितकारक है। यह कल्प रक्तधातु, वातसस्थान तथा फुफ्फुस, हृदय, आमाशय, यकृत और अन्त्र, इन इन्द्रियोंपर विशेष लाभ पहुचाता है। ज्वर दीर्घकाल पर्यन्त रहजानेपर जब पचनसस्थान अपना कार्य योग्य नहीं कर सकता, तब अन्त्रमें मल सगृहीत होकर, उसमेंसे विषका शोषण रक्तमें होता है। फिर यकृत, वृक्क, फुफ्फुस और मस्तिष्कमें विक्रिया होने लगती है। पश्चात धातुशोषकी प्राप्ति होती है। अथवा क्षयकीटाणुकी प्राप्ति होकर राजयक्ष्माकी उत्पत्ति होजाती है। अत इस उत्पत्तिको सत्वर रोक दिया जाय और अन्तर शक्तिको सबल बना दिया जाय तो राजयक्ष्माकी आगेकी सम्प्राप्ति नहीं होती। इस अवस्थामें यह कल्प अति हितकारक है।

वक्तव्य —अति शुष्क कास हो, तो यह अथवा अन्य अभ्रक मिश्रित औषधि नहीं दी जाती।

२ हेमाभ्रसिंदूर

प्रथमविधि —सुवर्ण भस्म, रससिंदूर और अभ्रकभस्म, तीनोंको समभाग मिला अदरकके रसकी ७ भावना देकर शुष्क चूर्ण बना लेवें। या आध आध रत्तीकी गोलिया बना लेवें। (नि० र०)

मात्रा —१ से २ गोलीतक दिनमें दो या तीन बार अदरकके रस, शहद या रोगानुसार अनुपानके साथ देवें।

उपयोग —इस रसका ४० दिनतक सेवन करनेसे क्षय, क्षयजनित पाण्डु और दारुण क्षयज कास नष्ट होते हैं। यह औषध क्षयकी द्वितीयावस्थाकी प्राप्ति होनेपर अति हितावह माना गया है।

यह सिंदूर कल्प, बल्य, रसायन, क्षयहर और कफघ्न है। इस औषधिमें मुख्य गुण सुवर्ण भस्मका है। सुवर्ण भस्म सब प्रकारके कीटाणुजन्य क्षयोंकी प्रशस्त औषधि है। इसका मुख्य धर्म क्षयके कीटाणुओंको नष्ट करना है। यह उसमें स्वाभाविक शक्ति है। अभ्रकभस्म उरःस्थ अवयवोंको विशेषतः फुफ्फुस और श्वासनलिकाको बल देता है। एवं हृद्य और रसायन है। इन दोनोंके साथ रससिंदूरका संयोग कराया है। रससिंदूरमें रसायन, कीटाणुनाशक, योगवाही और कफघ्न गुण अवस्थित हैं। इन तीनोंके संयोगसे क्षयरोगमें कीटाणुओंको नाश करनेके अतिरिक्त शारीरिक शक्तिके संरक्षक अद्वितीय गुणका आविर्भाव होजाता है। इस हेतुसे इस औषधका उपयोग राजयक्ष्मापर उत्तम होता है।

ज्वर अधिक होनेपर इस रसायनका उपयोग नहीं करना चाहिये। क्योंकि इसके सेवनसे ज्वरोष्मा बढनेकी संभावना है। कफ अधिक गिरता हो और सहज सहज कफ निकलता हो, तो इस औषधका उपयोग करना चाहिये। यदि उरःक्षत हो, और उसमेंसे रक्तस्राव होता हो तो इस रसका उपयोग न करना ही अच्छा माना जायगा। इस रसके प्रयोगसे ज्वर बढता है। रक्त न गिरता हो तो भी गिरने लगता है। कफज क्षयमें बलमांस विहीनत्व अधिक होनेपर इस रसायनकी बहुत कम मात्रा अनुकूल अनुपान (वासावलेह या च्यवनप्राशावलेह आदि) के साथ देते रहनेसे या दूधका ताजा मक्खन, शहद और मिश्री अनुपान रूपसे देनेसे अच्छा लाभ पहुंचाता है।

सूतिका रोगमें पाण्डुता एक लक्षण होता है। इसके अनेक हेतु होते हैं। (१) प्रसवकालमें अति रक्तस्राव होजाना; (२) गर्भकी वृद्धिके लिये निर्बल रुग्ण माताके रक्तका विशेष अंश नष्ट होजाना; (३) प्रसवकालकी वेदनाका परिणाम माताके मननाड़ीचक्र और वातवाहिनियोंपर होना; (४) प्रसूतावस्थाके प्रारम्भके १० दिनोंमें और इनके बाद भी प्रदस्राव अधिक होना, (५) क्लेसवके पश्चात् पीड़ाके शमनार्थ पूर्ण विश्रान्ति न मिलना; (६) प्रसवकालमें योग्य सम्हाल न रहना; (७) गर्भावस्था या जापामें योग्य आहार न मिलना, (८) मानसिक व्यथा हो जानेसे एक प्रकारकी पाण्डुता आजाना, आदि कारण होते हैं। यह पाण्डुता रक्तके भीतर रक्ताणुओंकी कमीसे होती है। इस पाण्डुताके साथ अनेक इन्द्रियां भी बलहीन होजाती हैं। ओज और स्नेहका क्षय होजाता है इस हेतुसे केवल लोह कल्पसे पूरा लाभ नहीं मिल सकता। ऐसी परिस्थितिमें इस हेमाभ्रसिंदूरका उत्तम उपयोग होता है

यदि क्षयकास और क्षतकासमें कफकी अधिकता हो, तो इस औषधका उत्तम उपयोग होता है।

इनके अतिरिक्त जिस कुष्ठ रोगमें पृथक् पृथक् स्थानपर दाग हों, उनमें यदि स्पर्शबोध न होता हो, सुप्ति अधिक हो, तो उस विकारपर इस रसायनसे लाभ होजाता है। (औ० गु० ध० शा० के आधारसे.)

द्वितीयविधि —हेममाक्षिकभस्म, रससिंदूर (षड्गुणगंधक जारित), अभ्रक भस्म शतपुटी (रक्तवर्ग भावित), ये तीनों द्रव्य समभाग लें। पहिले रससिंदूरको अदरकके रसमें घोटें। निश्चन्द्र होनेपर अभ्रक और हेममाक्षिकभस्म मिला पुनः अदरकके रसकी भावना देकर १-१ रत्तीकी गोलिया बना लेवें।

मात्रा —१ से ३ गोली दिनमें २ या ३ बार मधुके साथ दें। ऊपर भृङ्गराज, जलपिप्पली (कथरा) और मकोयका स्वरस २॥ से ४ तोले पिलावें।

उपयोग —यह रस प्रथम विधिकी अपेक्षा अल्प मूल्य होनेपर भी पाण्डु, शोथ, जलोदर, अन्य उदर व्याधि, तथा क्षयकी पूर्वावस्था, मध्यमावस्था, प्लीहावृद्धि, यकृद्रोग, अन्त्रविकार, सर्वांग शोथ, एकांग शोथ, शरीरके किसी भी अवयवका शोथ, स्त्रियोंके अनेक जटिल रोग (गर्भाशयके रोग, योनीव्यापद्रोग), शिरोरोग और अनेक विधि फुफ्फुसविकारमें कौतूहलपूर्वक लाभ करता है। यह हमारा शतशोऽनुभूत, अव्यर्थ प्रयोग है। शोथके सम्यक् प्रकार और उदररोगोंमें रोगीको केवल, दूधपर रखना चाहिये।

रोगीकी निर्बल अवस्थामें जबकि विरेचन कराना कठिन और सन्देहास्पद हो, तो उक्त अनुपानसे सेवन करानेपर केवल २-४ बार मूत्र विशेष मात्रामें आते हैं और १ सप्ताहके अंदर ही चमत्कारी लाभ होता है। प्रथम विधिवाला हेमाभ्रसिंदूर जिन जिन रोगोंपर दिया जाता है, उन सब रोगोंमें यह भी पूर्व कथित रीतिसे सेवन करानेपर विलक्षण लाभ दर्शाता है, यह अचूक औषधि है। (राधाकृष्ण वैद्य)

वक्तव्य —हृदय, आमाशय, अन्त्र, फुफ्फुस, वृक्क आदि अवयवोंको आधुनिक विद्वानोंने इन्द्रिय कहा है। इसी हेतुसे फिजियोलोजीका अर्थ इन्द्रिय विज्ञान या इन्द्रिय-कार्यविज्ञान करते हैं। उस प्रवाहके अनुसार हमने भी स्वतन्त्र क्रिया करनेवाले अवयवोंके स्थानपर इन्द्रिय शब्दका प्रयोग किया है।

शोथ होनेमें हेतु विशेषतः हृदय, यकृत् और वृक्क, इन ३ इन्द्रियोंके कार्यकी विकृति है। अतः इन इन्द्रियोंके कार्योंको मूल स्थितिमें स्थापित कराना चाहिये। एवं दूसरा कार्य रक्तमेंसे जलको बाहर निकालना है। (रक्तमें जलकी न्यूनता होनेपर अन्तर त्वचामें अथवा जलोदर रोगमें उदर्य्याकलाके भीतरसे संगृहीत जल रक्तमें आकर्षित हो जाता है।) हृदय विकारज शोथमें इन दोनों प्रकारके कार्योंकी सिद्धि इस रसके सेवनसे होजाती है।

इस रसमें अभ्रक और रससिंदूर रहे हैं जो हृदयको सबल बनाते हैं। रससिंदूर और अदरकमें यकृत्पित्तस्रावको बढानेका गुण भी रहा है। सुवर्णमाक्षिक पित्तशामक, शीतवीर्य और रक्तप्रसादक है। भृंगराज यकृद् बलवर्द्धक है। रससिंदूरादिके प्रभावसे यकृत् अपने कार्य करनेमें सशक्त बन जाता है। अभ्रकभस्म वृक्क और मूत्राशयको बल प्रदान करती है। माक्षिक मूत्रमें जानेवाले पित्त, अम्ल द्रव्य आदिका रूपान्तर कराती है, तथा मकोय आदि अनुपान द्रव्य मूत्रवृद्धि करा रक्तस्थ विष और अधिक जलको बाहर

निकालनेमें सहायता पहुंचाते हैं। इस तरह संप्राप्ति-शास्त्रानुसार विचार करनेपर इस रसायनसे रोगके मूल हेतु और संगृहीत दोषको दूर करनेका गुण विदित होता है।

वक्तव्यः—इस हेमाभ्रसिन्दूरको गूलरके शर्बतके साथमें सेवन कराया जाय, तो उरःक्षत एवं रक्तष्ठीवीको विशेष लाभकारी है। हृदयकी विशेष निर्बलता होनेपर आध आध रत्ती मुक्तापिष्टी अथवा मुक्ता भस्म भी मिला दी जाय तो, अधिक गुण होताहै।

३. राजयक्ष्मकरिमत्तकेसरी।

विधिः—शुद्धपारद, शुद्धबच्छनाग, सुवर्णभस्म, मौक्तिक भस्म और शुद्धगन्धक, इन पांचोंको २-२ तोले लें। पहले पारद गन्धककी कज्जलीकर फिर बच्छनाग, सुवर्ण भस्म और मौक्तिक भस्म क्रमशः मिलावें। पश्चात चित्रकमूलके क्वाथ और अदरखके रसकी अनुक्रमसे ३-३ भावना देवें। चूर्ण शुष्क हो जानेपर ताम्बेके कटोरदानमें भर संधिस्थानपर बाम्बीकी मिट्टी और नमक मिलाकर कपड़ मिट्टी करें। संधिस्थान सूखने पर कटोरदानको एक हांडीमें रक्खें। ऊपर नीचे चारों ओर ४-४ अंगुल सफेद राख दबावें। फिर यन्त्रको चूल्हेपर चढ़ावें। ३ घण्टेतक मंदाग्नि देवें। पश्चात् स्वाङ्ग शीतल होनेपर निकाल त्रिकटुके क्वाथ और अदरकके रसकी ३-३ भावना देकर आध आध रत्तीकी गोलियां बना लेवें। (र० यो० सा०)

मात्राः—१-१ गोली दिनमें दो वार अमृतासत्व, पीपल और शहदके साथ दें।

उपयोगः—इस रसका उपयोग राजयक्ष्माकी प्रथमावस्था, द्वितीयावस्था और तृतीयावस्था, तीनोंमें होता है। यदि राजयक्ष्मामें अग्निमान्द्य प्रधान हो, तो प्रथमावस्थामें इस रसके साथ प्रवाल पिष्टी २ रत्ती, शृंगभस्म १ रत्ती और सितोपलादि १॥ माशा मिला घी-शहदके साथ देनेसे ज्वर शुष्क कास और अग्निमान्द्य दूर होकर सत्वर रोग शमन होजाता है। द्वितीयावस्थामें इस रसके साथ प्रवाल पिष्टी २ रत्ती और शृंगभस्म २ रत्ती मिला देनी चाहिये। तृतीयावस्थामें ज्वर कम हो उस समय इस रसका प्रयोग हो सकता है। किन्तु तीव्र ज्वरावस्था होनेपर प्रवाल, शृंग और रौप्यभस्म देना, विशेष लाभदायक माना जायगा। इस रसमें अदरक, चित्रकमूल और त्रिकटुकी भावना होनेसे अग्निको प्रबल करने और विकारको शमन करनेमें अच्छी सहायता मिल जाती है। बच्छनागका संयोग होनेसे इस रससे ज्वर शमनका कार्य भी होता है। राजयक्ष्मा की उत्पत्तिमें मूलहेतु पचनेन्द्रिय संस्थानकी विकृति और जीर्ण ज्वर होनेपर यह रसायन विशेष हितकारक माना जाता है।

वक्तव्यः—शारीरिक बल और हृदय कमजोर हो, तो मात्रा कम देनी चाहिये। ज्वर कम रहता हो, तो इसका विशेष उपयोग नहीं करना चाहिये। सुवर्णवसंत विशेष हितावह माना जायगा।

४ क्षयकुलान्तक रस

विधि —हरताल, मौक्तिक, सुवर्ण और रजत, इन, सबकी भस्म तथा हिंगुल ४-४ तोले, भीमसेनी कपूर १ तोला और प्रवाल भस्म १ तोला लें। सबको मिला वासापत्रके स्वरसमें १२ घण्टे और सफेद कटलीके रसमें ६ घण्टेतक खरलकर चक्रिका बनावें। फिर सूर्यके तापमें सुखा बालुकायन्त्रमें रख शिवशक्तिकी पूजाकर ६ घण्टे तक दीपककी अग्नि देवें। पश्चात् यन्त्र स्वाङ्ग शीतल होनेपर चक्रिकाको निकालकर पीस लेवें। (र० यो० सा०)

मात्रा —आध आध रत्ती दिनमें दो बार शहदके साथ ४० दिन या कमसे कम २० दिनतक करावें।

उपयोग —यह रस कीटाणुनाशक पूयका रूपान्तर करानेवाला, बल्य, कफस्रावी, दीपन, पाचन और हृद्य है। प्रमेह, रक्तप्रकोप, श्वास, कास आदि सब उपद्रवोंसह सर्व प्रकारके क्षयोंको नष्ट करता है। तथा देहको सुवर्णके सदृश बना देता है। क्षयकी द्वितीया और तृतीयावस्थामें व्यवहृत होता है।

सूचना —पथ्यका यथोचित पालन करना चाहिये। इमली और धूम्रपानका अति निषेध है। स्त्रीसहवासमें आग्रहपूर्वक बचना चाहिये। मन, कर्म, वचनसे ब्रह्मचर्यका पूर्ण पालन करना चाहिये।

५ क्षयकेसरी रस

विधि —हरतालमेंसे बना हुआ माणिक्य रस ४ तोले, रौप्यभस्म, अभ्रकभस्म, नागभस्म और प्रवालपिष्टी २-२ तोले, शङ्खभस्म, रससिंदूर और सफेदमिर्च १-१ तोला मोतीकी पिष्टी, सुवर्णके वर्क, लोबानके फूल, कपूर और केशर ६-६ माशे कस्तूरी ३ माशे और पीपरमेण्टके फूल १॥ माशा लें। पहले माणिक्य रसके साथ भस्म पिष्टी और सुवर्णवर्क मिलावें। पश्चात् लोबान पुष्प और मिर्च मिला गिलोय, वासापत्र और कटेली पञ्चाङ्गके क्वाथकी १-१ भावना देकर सुखा चूर्ण कर। फिर केशर कस्तूरी पीपरमेण्टके फूल और कपूर मिला नागरवेलके पानके रसमें ६ घण्टे खरल करके आध आध रत्तीकी गोलियां बनालें। (आ० नि० मा०)

मात्रा —१ से २ गोली दिनमें २ या ३ समय ½ रत्ती कपूर और नागरवेलके पानमें या सितोपलादि चूर्ण अथवा लवङ्गादि चूर्णके साथ दें।

उपयोग —यह रस राजयक्ष्मा, जीर्ण विषमज्वर, राजयक्ष्मामें ज्वर और कफ विकार, तथा श्वासरोग, वातरोग कुष्ठरोग, त्वचारोग तथा वातरक्त आदि व्याधियोंका नाश करता है। क्षयकी सब अवस्थामें यह व्यवहृत होता है किन्तु प्रथमावस्थामें प्रायः अनुकूल नहीं रहता उत्तेजना बढ़कर कास बढ़ जाती है।

हरताल और सुवर्णके योगमें क्षयकीटाणु नष्ट होते हैं। तीव्र ज्वरावस्थामें

इतर सुवर्णयुक्त योग प्रयुक्त नहीं होता। ऐसे समयपर विष और कीटाणुओंका नाश करनेके साथ ज्वरको शमन करनेका महत्वका काम इस रससे होता है। इसके सेवनसे संगृहीत कफ बाहर निकलता है; कफोत्पत्ति कम होनेसे फुफ्फुस दोष मुक्त होते जाते हैं। ज्वरविषका ह्रास होता जाता है तथा शक्ति शनैः शनैः बढने लगती है। राजयक्ष्मा रोगपर यह उत्तम औषध है।

वक्तव्यः—इस रसमें यदि शुद्ध बच्छनाग मिलाया जाय, तो ज्वर निराकरण-के लिये उत्तम है।

६. रसराज रस (यक्ष्मा)

प्रथमविधिः—मोतीपिष्टी, प्रवालपिष्टी, पारदभस्म (रससिंदूर), सुवर्णभस्म, शुद्ध मनःशिल, अभ्रकभस्म, लोहभस्म और बङ्ग भस्म, इन ८ औषधियोंको समभाग मिलाकर गिलोय और शतावरके स्वरसकी ७-७ भावना देकर १-१ रत्तीकी गोलियां बनावें। (र० चं०)

मात्राः—१-१ गोली दिनमें २ बार शहद, घी और सफेदमिर्चके चूर्णके साथ अथवा वासा स्वरस और शहदके साथ या बकरीके दूध के साथ देवें।

उपयोगः—यह रस क्षयकी द्वितीयावस्था और तृतीयावस्थामें उरःक्षत होकर रक्तस्राव होनेपर हितकारक है। इसके सेवनसे रक्तस्रावका रोग होता है। कफकी शुद्धि होती है ज्वर मर्यादामें रहता है तथा स्फूर्तिकी वृद्धि होती है। इस रसमें आम और दूषित कफको जलाना; विषको नष्ट करना और क्षय कीटाणुओंको नष्ट करनेका गुण होनेसे उरःक्षतके मूल हेतुको दूरकर शरीरको स्वस्थ बना देता है।

क्वचित् बाहरकी चोट लगने, शराब, गांजा आदिके अधिक सेवन करने या तीक्ष्ण औषधि आदि कारणोंसे क्षयकी संप्राप्ति न होनेपर भी उरःक्षत होकर रक्तस्राव (रक्तवमन या कफके साथ रक्त आना) होने लगता है। उन विकारोंपर ६ माशे घी, ३ माशे शहद और ४ रत्ती सफेदमिर्च चूर्ण या (१॥ माशे सितोपलादि चूर्ण) के साथ दिनमें २ या ३ बार देनेसे सत्वर लाभ हो जाता है।

शुक्रक्षयके हेतुसे कृशता, पाण्डुता और अग्निमान्द्य होकर क्षयकी प्राप्ति हुई हो, छाती बिल्कुल पोकल बनगई हो, कफ सरलतासे न निकलता हो, कफका रंग पीला और दुर्गन्धयुक्त हो गया हो, उसपर भी इस रसका सेवन अति हितकारक है। इसके साथ शृंगभस्म, गोदंती भस्म और मुलहठी मिला देनेसे विशेष लाभ पहुंचता है।

द्वितीय विधिः—शुद्ध शंख और शुद्ध शुक्ति १०-१० तोले, तथा शुद्ध गन्धक २० तोलेको मिला ३ दिन आकके दूधमें खरल करके गोला बनावें। फिर सूर्यके तापमें सुखा, सराव संपुटकर गजपुटमें फूंक देवें। स्वाङ्गशीतल होनेपर सम्पुटको खोल गोले-को निकालकर पीस लेवें। (र० यो० सा०)

मात्रा —२-२ रत्ती । ४-४ रत्ती सफेदमिर्चके चूर्ण और घृतके साथ मिलाकर दिनमें ३ समय देते रहें ।

उपयोग —यह रस राजयक्ष्माकी कासको शमन करता है । यह रसराज अति सौम्य मृदु क्षार रूप औषध है । तीव्र क्षारके समान यह बलपूर्वक कफको बाहर नहीं निकालता, किन्तु इसका कार्य अति कोमल रूपसे होता है । राजयक्ष्मामें तीव्र औषधका प्रयोग नहीं किया जाता । तीव्र औषधसे रक्तस्रावकी वृद्धि होनेकी भीति रहती है । एवं बार बार कास वेगपूर्वक चलती रहे, ऐसी उत्तेजक औषधि भी हितकर नहीं मानी जाती । कारण, रोगीके कष्टमें वृद्धि हो जाती है । अतः इस सौम्य औषधिका प्रयोग हितकर माना जाता है । इस रसराजसे कफ सरलतासे बाहर निकलता है कासके वेगकी अधिक वृद्धि नहीं होती । रक्तस्राव नहीं होने देता । एवं रक्त गिरता हो, तो भी उसे बन्द करता है । साथ साथ पचन क्रियाको सबल बनाता है और भोजनमेंसे योग्य रसका निर्माण कराता है । यदि अतिसार हो गया हो, तो उसे भी दूर कर देता है ।

राजयक्ष्माकी प्रथमावस्थामें जब तक कासका वेग प्रबल होता है और शुष्क कास चलती रहती है, तबतक कोई भी उत्तेजक औषधिका प्रयोग नहीं होता । उस अवस्थामें यह समशीतोष्ण औषधि दे सकते हैं । इसके अतिरिक्त शुष्क कासके शमनमें मुक्ता पिष्टी प्रवाल पिष्टी और सितोपलादि भी घी-शहदके साथ विशेष हितकारक है । फिर जब कफ गिरने लगता है, तब इस रसका प्रयोग कफ स्रावार्थ होता है ।

चिरकारी और जीर्ण श्वासनालिकाके प्रदाहजन्य कासरोगकी रसोत्सृजनावस्थामें कफ गिरने लगता है । यह शनै शनै गाढ़ा और बताशेके सदृश बन जाता है । कभी कभी कफ कठिनतासे और कभी कभी अत्यधिक परिमाणमें सहज निकलता है । इस विकारपर सबल रोगीको कफनिःसारक उत्तेजक क्षारप्रधान औषध, अर्कक्षार, वज्रक्षार, अपामार्गक्षार आदि कफको पतला बनाकर बाहर निकालनेके लिये दिये जाते हैं । किन्तु वृद्ध, बालक सगर्भा स्त्री तथा दुर्बल और कृशरोगियोंको अग्नि प्रदीप्त कराने, कफ निकालने तथा कफोत्पत्तिका ह्रास और श्वासनलिकाके प्रदाहको शमन करानेके लिये सौम्य औषधि देनी चाहिये । यह कार्य इस रससे उत्तम प्रकारसे होता है ।

श्वासनलिका प्रसारण हो जानेपर उसमें कफ संग्रहीत होता है । फिर उसमें दुर्गन्धकी उत्पत्ति होती है । शनै शनै कीटाणुओंके हेतुसे व्रण होजाते हैं । पश्चात् कफके साथ किञ्चित् रक्त भी आता है । बार बार प्रबल कास उपस्थित होती है । विशेषतः रात्रिको और प्रातःकाल उठनेपर कास अधिक आती है । इस व्याधिपर रसराजको कज्जली, कालीमिर्च और गोघृतके साथ मिलाकर देनेसे कफको बाहर निकलनेमें सहायता मिल जाती है । कीटाणु नष्ट होते हैं । कफकी दुर्गन्ध दूर होती है, तथा व्रण शनै शनै भर जाते हैं ।

७. कर्चूरादि गुटिका

विधिः—१ सेर कुचिलेको ४२ दिन गोमूत्रमें भिगोवें। दिनमें सूर्यके तापमें बर्तन रक्खें। रोज गोमूत्र बदल देवें। फिर ऊपरसे छिल्टे और भीतरसे जिब्भी निकाल कर जलसे धोवें। जबतक हरा जल निकले तब तक बारबार जल मिला मिलाकर धोवें। धोनेकी रीति ऐसी है कि, आज जलमें मसल धोकर फिर जलमें भिगोदें। दूसरे दिन मसल धोकर, फिर नया जल रख दें। इस तरह लगभग एक सप्ताहतक धोनेसे कुचिलेकी तीव्रता विशेषांशमें निकल जाती है। जल हरा न होनेपर उसे १० सेर दूधमें मिलाकर उबालें। दूधकी रबड़ी बन जानेपर कुचिलेको निकाल जलसे धोकर खरलमें मर्दन करें। आवश्यकता हो, तो जल मिला लेवें। फिर केशर, दालचीनी और पीपल २–२ तोले, लौंग, जायफल, जावित्री, कालीमिर्च और चांदीके वर्क ४-४ तोले, अकरकरा ८ तोले, कपूर १ तोला, कस्तूरी और सोनेके वर्क ३-३ माशे, कुचिलेके कल्कके साथ मिलावें। पहले वर्क मिलावें। फिर केशर, कपूर और कस्तूरी मिलावें। पश्चात् शेष औषधियोंका कपड़छान चूर्ण मिलाकर एक जीव करलें। बादमें जायफल १० तोले, कालीमिर्च १० तोले और लौंग २० तोलेको कूट ४ सेर जलमें मिला क्वाथ करें। जल १ सेर रहनेपर उतार, छानकर उसके साथ खरल करें। इस क्वाथकी ३ भावना देकर २-२ रत्तीकी गोलियां बनालेवें। (आ० नि० मा०)

मात्रा:—१-१ गोली दिनमें ३ समय दूध या जलके साथ देवें।

उपयोगः—यह गुटिका उत्तम रसायन, दीपनपाचन, ग्राही, कीटाणुनाशक, बल्य, कामोत्तेजक और वातशामक है। इसके सेवनसे राजयक्ष्मा रोगीके ज्वर और कफज कासका शमन होकर क्षुधा प्रदीप्त होती है और शक्ति बढ़ती है। नीरोगी मनुष्यको शक्ति-वृद्धिके लिये भी यह गुटिका हितकारक है। स्वस्थ व्यक्तियोंको देना हो, तो पचनशक्तिके अनुसार दूध–घीका सेवन अधिक कराना चाहिये। इसके सेवनसे वीर्यकी स्तम्भन शक्ति, स्फूर्ति और शारीरिक बलकी वृद्धि होती है।

८. शुक्रसंजीवन रस

विधिः—मुक्ता पिष्टी, प्रवाल पिष्टी, सुवर्ण भस्म, भीमसेनी कपूर, पीपल, केशर, वंशलोचन, अमृतासत्व, दालचीनी, छोटी इलायचीके दाने, तेजपात, लौंग, बीज निकाली हुई मुनक्का, शुद्ध शिलाजीत, चन्द्रोदय और कस्तूरी, इन १६ औषधियोंको समभाग लेवें। पहले चन्द्रोदय, सुवर्ण भस्म, मुक्ता, और प्रवालको मिलावें। फिर काष्ठादि द्रव्योंका कपड़छन चूर्ण मिलावें। कपूर, केशर, कस्तूरीको अलग रखे। मुनक्का चटनीकी तरह पीसकर मिलावें। शिलाजीतको जलमें मिलाकर डालें। फिर १-१ दिनतक गुलाबजल और वासापत्र स्वरसमें खरल करें। तीसरे दिन सुबह कपूर, केशर और कस्तूरी मिला गुलाबजलमें ६ घण्टे खरल करा २-२ रत्तीकी गोलियां बनालें। (सि० भै० मं०)

वक्तव्य —हम इसके साथ यशदभस्म और जसद भस्म भी मिलाते हैं ।

मात्रा —१-१ गोली दिनमें २ बार बकरी या गौके दूध अथवा पेठेके रसके साथ ।

उपयोग —यह रस शामक, मस्तिष्क बलवर्द्धक, हृद्य, अस्थिपोषक, निद्राप्रद, और वयस्हर है । पित्तप्रकोप और शुक्रक्षयके रोगियोंके लिये अति हितकारक है । देहमें उष्णता, निस्तेज, मुखमण्डल, बार बार चक्कर आना, कानमें गुंज, मस्तिष्कमें घड़ीके लोलकके समान टक टक होते रहना, अग्निमान्द्य, मन्द मन्द ज्वर रहना, पेशाबमें पीलापन, हाथ-पैर टूटना, आलस्य बना रहना, थोड़ा विचार करनेपर मस्तिष्क थक जाना, साधारण प्रतिकूलतामें क्रोध उत्पन्न होना, नेत्रदृष्टि मन्द हो जाना, ऊंची आवाज भी सहन न होना, शीत-उष्ण सहन न होना, वीर्यमें पतलापन और उष्णता रहना, स्वप्नदोष होना आदि लक्षण भासते हैं । इसपर यह रस अति हितकारक है । जो मनुष्य युवावस्थामें वृद्ध बन जाता है, उसके वीर्यको सुदृढ बनाकर पुन नवयुवावस्थाकी प्राप्ति कराता है । यह रस स्त्रियों और बालकोंके लिये भी हितकर माना गया है ।

शुक्रके अति दुरुपयोगसे उत्पन्न क्षय, ज्वरके पीछेकी निर्बलता, अति मानसिक परिश्रमसे उत्पन्न मस्तिष्ककी शिथिलता, वातप्रकोप, पित्तवृद्धि और हृदयकी धड़कन बढ़ जाना आदिपर यह हितकारक है ।

६. रजतादि लोह

विधि —हरताल मारित रजत भस्म और अभ्रक भस्म १ १ तोला, त्रिकटु, त्रिफला और लोह भस्म, तीनों २-२ तोले । सबको खरल करके मिला लें । (र० च०)

मात्रा —२ से ४ रत्ती दिनमें २ बार घी शहदके साथ दें ।

उपयोग —यह रस अति बढ़े हुए क्षय, पाण्डु, उदररोग, अर्श, श्वास, कास, नेत्ररोग तथा सब प्रकारके पित्तप्रकोपज रोगोंको दूर करता है ।

राजयक्ष्मा रोगकी द्वितीयावस्थामें जब ज्वर अधिक हो, तब सुवर्णवाली औषधि देनेसे बहुधा ज्वर बढ़ जाता है । उस अवस्थामें यह रस हितावह है । इस रसके सेवनसे ज्वरका ह्रास होता है । पार्श्वशूल शमन होता है । प्लीहावृद्धि दूर होती है । अर्शकी पीड़ा शान्त होती है तथा मानसिक प्रसन्नता होती है । किसी स्थानमें खिंचाव या शूल होता हो, खट्टी डकार आती हो, पेशाबमें जलन होती हो, नेत्रज्योति मन्द हो गई हो तो ये सब लक्षण दूर हो जाते हैं ।

राजयक्ष्माकी प्रथमावस्थामें मन्द ज्वर, शुष्क कास, कण्ठमें शुष्कता, पाण्डुता, नेत्रमें दाह, अपचन, चक्कर आना और बेचैनी आदि लक्षण प्रतीत होते हैं । उस अवस्थामें यह लोह, प्रवाल पिष्टी और अमृतासत्वके साथ घी-शक्करमें दिया जाता है । इसके सेवनसे ज्वर और कासमें लाभ पहुंचता है और पाण्डुता दूर होती है ।

यदि रक्तवाहिनियां सकुचित हो जानेसे निर्बलता, वातिक पीड़ा और धातुक्षय

उत्पन्न हुए हों, स्थान स्थानपर अकस्मात् पीड़ा होजाती हो और अग्निमान्द्य रहता हो, तो उसे दूर करनेके लिये रजतादि लोह अति हितावह है। इसके सेवनसे शुष्कता, शिथिलता, शूल और पाण्डुता दूर होकर देह सबल बन जाती है।

१०. लोकेश्वरपोटली (सुवर्ण लोकनाथ रस)

विधिः—रससिंदूर ४ तोले, सुवर्ण भस्म १ तोला और शुद्ध गन्धक ८ तोले मिला कज्जलीकर चित्रकमूलके क्वाथमें ३ दिन मर्दन करें। फिर उसे पारदसे चौगुनी शुद्ध पीली कौडियोंमें भरें और सोहागेको आकके दूधमें घोटकर सब कौड़ियोंके मुँह बन्द करें। पश्चात् उनको चूना पोती हुई मिट्टीकी छोटी हंडी या तवेके संपुटमें रखकर दृढ़ मुखमुद्रा करें। सब कौड़ियोंका मुँह नीचे रहना चाहिये। अन्यथा पारा उड़ जानेकी संभावना है। सूखनेपर शामको १५ इञ्चके खड्डेमें अग्नि देवें। (आंच कम होनेपर कौड़ियां कची रह जायगी, अधिक अग्नि होगी तो पारद उड़ जायगा) स्वांग शीतल होनेपर निकालकर पीस लेवें। (र० र० स०)

मात्राः—१ से २ रत्ती पुष्टिके लिये शहद-पीपल और क्षयादि रोगोंपर कालीमिर्च और घीके साथ देवें।

उपयोगः—यह लोकनाथ दीपन-पाचन, क्षयनाशक, कृमिघ्न, उग्र, पौष्टिक और वीर्यवर्द्धक हैं। शारीरिक कृशता, अग्निमान्द्य, कास, कफपित्तप्रकोप और राजयक्ष्मा आदिको दूर करता है। अति कृश, विषम भोजनजनित क्षय, तथा कास, हिक्का, पाण्डु, मूर्ख वैद्योंके उपचारसे क्षीण और रोगग्रस्त बने हुए रोगी, विविध प्रकारके ज्वरसे संतप्त, जिन्हे चक्कर आते रहते हों, मदात्यय रोगी और उन्मादसे ग्रसित, सब इस लोकेश्वर पोटलीके सेवनसे स्वस्थ होते हैं।

सूचनाः—इस रसायनके सेवनकालमें नमकका त्याग करना चाहिये। अन्यथा पारद भस्मका रूपान्तर होकर यथोचित लाभ नहीं दे सकता। भोजन घी और दहीके साथ करना चाहिये। बैंगन, बेलफल, तैल, करेले, मैथुन और क्रोधका त्याग करना चाहिये। औषध सेवनकर चित लेटें और पैर ऊंचे रखें (जिससे उदरमें रक्ताभिसरण क्रिया अधिक होकर दोषको जलानेमें सुविधा रहती है)।

आमाशयपित्त तेज होने अथवा रसायनका अति सेवन हो जानेसे वमन हो जाय, तो गिलोयका स्वरस या बिजौरेकी जड़का स्वरस अथवा सैंधानमक लगे हुए लाजा चूर्ण (भातकी लाही) या शहद-पीपलका सेवन करें।

पित्तप्रकोप उपस्थित होनेपर शीतल जलसे स्नान करावें या शिरपर शीतल जलकी धारा डालें और केले खिलावें। VP

कफ वृद्धि हो, तो भोजनमें कालीमिर्चका चूर्ण या गुड़ मिला हुआ अदरकका शाक देवें। VD

वमन होनेपर धनियेका मगज या छोटी इलायची और कालीमिर्चका चूर्ण घी-शक्करसे देवें। कृमिकोपमें अजमोद और वायविडंग मट्ठेके साथ देवें या एरण्डमूल और नागरमोथेका क्वाथ पिलावें।

विरेचन होनेपर छोटी दूधीका रस गुनगुना कर या भांगका चूर्ण शहदके साथ देवें।

हडफूटन होनेपर घीकी मालिश करा उष्ण जलसे स्नान करावें।

यह लोकेश्वर पोटली अत्यन्त वीर्यवान, उत्तम औषध है। यह कफप्रकोपपर और कफ प्रकृतिवालोंके लिये हितकर है। इस लोकेश्वर रसका गुण रसतन्त्रसार प्रथम खण्डमें लिखे हुए लोकनाथ रससे मिलते जुलते हैं। लोकनाथमें सुवर्ण नहीं है और इसमें सुवर्ण होनेसे इन्द्रियविष, गरविष और राजयक्ष्माके कीटाणुओंके नाशके लिये यह विशेष कार्य करता है। आमवृद्धिजन्य शारीरिक कृशता, संग्रहणी, अन्त्रक्षय, फुफ्फुसक्षय, कफप्रकोप, देहमें विविध स्थानोंपर उत्पन्न गांठ और मांसक्षयपर व्यवहृत होता है। विशेष गुणधर्म लोकनाथ रसके समान हैं।

११ मृगाङ्क रस

विधि — शुद्ध पारद २ तोले, सुवर्ण भस्म २ तोले, मोती पिष्टी ४ तोले शुद्ध गन्धक ४ तोले और सोहागेका फूला २ तोले लें। पहले पारद-गन्धककी कज्जली करें। फिर शेष औषधियोंको मिला कांजीके साथ ३ दिनतक खरल करके गोला बनावें फिर सूर्यके तापमें सुखाकर दृढ सराव संपुट करें। पश्चात् लवण यन्त्रमें रखकर ४ प्रहर-तक अग्नि देवें। स्वांग शीतल होनेपर रक्ताभ गोलेको निकालकर पीस लेवें।

(र० यो० सा०)

मात्रा — ½ से १ रत्ती, तुरन्त पीसे हुए ७ या १४ नग कालीमिर्चके चूर्ण और शहदके साथ दिनमें २ बार सुबह और रात्रीको देवें।

उपयोग — यह मृगाङ्क रस राजयक्ष्मा रोगको दूर करता है। सामान्यतः इसका प्रयोग शुष्क कासका दमन होने और कफोत्पत्ति हो जानेके पश्चात् करना चाहिये।

क्षयकी प्रथमावस्थामें सूखी खांसी चलती रहती है, ऐसी अवस्थामें फुफ्फुसोंकी श्लैष्मिक कलाको स्निग्ध बनाने और कीटाणुओंकी ग्रन्थियोंको नष्ट करनेकी आवश्यकता रहती है। अतः प्रवालपिष्टी और सितोपलादि चूर्णके साथ मृगांकका सेवन कराया जाता है। अनुपान घी शहद विशेष हितावह रहता है। द्वितीयावस्थामें कफ गाढा, सफेद फिर पीला बन जाता है, उस कफको बाहर निकालने, कीटाणुओंकी वृद्धि रोकने, विषको दूर करने और फुफ्फुसोंको निर्दोष बनानेके लिये उपचार किया जाता है। इस हेतुसे अभ्रक भस्म और शृंग भस्मके साथ मृगांक मिलाया जाता है। अनुपान रूपसे कास कण्डनोवलेह विशेष सहायक बनता है। यदि कफमें रक्त आ रहा हो तो अनुपान देना चाहिये।

तृतीयावस्थामें फुस्फुसोंमें बड़े बड़े गढ्ढे होजाते हैं। कफ हरे पीले रंगका दुर्गन्धमय बताशेके सदृश बन्धा हुआ आता है। उस अवस्थामें अभ्रक, शृंग और वासावलेहके साथ ही मृगांक देना चाहिये। यदि कोई महत्वका अन्य लक्षण उपस्थित हो, तो उसके अनुरूप योजना कर देनी चाहिये। राजयक्ष्माके समान धातुक्षय, जीर्ण ज्वरजन्य निर्बलता तथा संग्रहणी, कास, श्वास, कुष्ठ, पाण्डु आदिसे प्राप्त निर्बलताको नष्ट करनेके लिये यह मृगांक रस निर्भय रूपसे व्यवहृत होता है। अनुपान कालीमिर्च या रोगानुसार।

पथ्यः—लघु पथ्य भोजन, मांस रस, बकरीका घी, दूध और मक्खन, गायके दहीका मट्ठा, इलायची, जीरा, कालीमिर्चकी छौंकवाले भात, दाल, शाक, गेहूँके मोटे आटेकी पतली रोटी, दलिया, परवल आदि शाक पथ्य हैं। विदाही पदार्थ, हींग, क्षार, बेलफल, बेंगन, करेला, स्त्री सहवास, क्रोध, परिश्रम, मानसिक चिन्ता आदि अपथ्य हैं। जो लहशुन और प्याज रोज खाते हैं, उनके लिये हितावह हैं।

सूचनाः—रसतन्त्रसार प्रथम खण्डमें दिये हुए महा मृगांककी अपेक्षा इस रसमें स्वर्ण और मुक्ता अधिक मात्रामें मिलाया है। अतः इसका उपयोग कम मात्रामें करना चाहिये।

१२. कपर्दपोटली रस

विधिः—कपर्दिका भस्म १२ तोले, शंख भस्म ८ तोले, प्रवाल भस्म ४ तोले, सोहागेका फूला ३ तोले, शुद्ध गन्धक और शुद्ध पारद २-२ तोले, सुवर्णभस्म १ तोला और कालीमिर्चका चूर्ण २४ तोले लेवें। पहले पारद गन्धक मिलाकर कज्जली करें। फिर शेष औषधियाँ मिलाकर खरलकर लेवें।

मात्राः—१ से २ रत्ती दिनमें २ बार मक्खन मिश्री या घी-शहदके साथ देवें।

उपयोगः—कपर्द पोटलीरस कीटाणुनाशक, अग्निप्रदीपक और शुष्ककासहर है। इसका उपयोग राजयक्ष्माकी प्रथमावस्थामें मन्द-मन्द ज्वर, अग्निमान्द्य, हाथ पैर टूटना, मूत्रमें पीलापन और शुष्क कास आदि लक्षण होनेपर किया जाता है। आवश्यकता अनुसार सूतशेखर, लघुवसंत नं० २, सितोपलादि चूर्ण या अन्य क्षयहर औषधि मिलाकर उपयोग किया जाता है।

१३. सुवर्णसर्वाङ्गसुन्दर

विधिः—शुद्ध पारद, शुद्ध गन्धक, मोती भस्म, प्रवाल भस्म, शंख भस्म, ये ५ औषधियां १-१ तोला, सोहागेका फूला २ तोले और सुवर्ण भस्म आधा तोला लेवें। पहले पारदगन्धककी कज्जलीकर शेष औषधियां मिला ३ दिन नींबूके रसमें खरलकर चन्द्रिका बनावें। उसे धूपमें सुखा दृढ़ सरावसंपुट कर लघुपुट (१ सेर गोबरीके चूर्णकी अग्नि) देवें। स्वांग शीतल होनेपर निकाल लोह भस्म ६ माशे और हिंगुल ३ माशे मिलाकर खरलकर लेवें। (र० सा० सं०)

मात्रा —आधसे २ रत्ती दिनमें २ बार पीपल-शहद, घृत, मिश्री नागरबेलके पान, मिश्री अथवा अदरकके रस और शहदके साथ।

उपयोग.—यह रस राजयक्ष्मा, घोर वातपित्तज्वर, दारुण सन्निपात, अर्शरोग, ग्रहणी विकार, प्रमेह, गुल्म, भगन्दर, वातज रोग तथा कफज रोगोंका नाश करता है। यह रस सगर्भा, प्रसूता, बालक आदि सबको निर्भयतापूर्वक दिया जाता है। नूतन संग्रहणी रोगमें भी कितनेकोंको मुखपाक, बड़े बड़े जुलाब, अरुचि, पाण्डुता, उदरमें वातसंग्रह, जिह्वा पतली, लेसदार और निस्तेज, अच्छी निद्रा न आना, शिरके बाल गिरते रहना आदि लक्षण उपस्थित होते हैं। उसपर यह रस उत्तम लाभ पहुँचाता है। आमाशय और अन्त्र, दोनों अवयवोंकी क्रिया योग्य बनाता है। कीटाणुओंका नाश करता है। आमविषको जलाता है और रक्ताणुओंकी वृद्धि करा स्वास्थ्य और बल प्रदान करता है।

राजयक्ष्माकी प्रथमावस्थामें शुष्क कास और मंद ज्वरके साथ किसी किसीको दाह, मुखपाक और अधिक निर्बलता रहती है। उसे १-१ माशे सितोपलादि चूर्ण और घी शहद के साथ दिनमें ३ बार देते रहनेसे कास ज्वर और दाह आदि लक्षणोंसह राजयक्ष्मा दूर हो जाता है।

राजयक्ष्माकी दूसरी अवस्थामें बंधा हुआ कफ गिरना, दोपहरके बाद ज्वर बढ़जाना, किसीको दाह, मुखपाक, अरुचि और पतले दस्त भी लगना आदि लक्षण उत्पन्न होते हैं। उनको इस रसका सेवन अभ्रक भस्म और शृंग भस्म १-१ रत्ती मिलाकर शहदके साथ कराया जाता है। कफमें दुर्गन्ध हो, आमाशयमें अम्लरस हो, तो लोहबान-के फूल और मुलहठी २-२ रत्ती मिला देना चाहिये। यदि कफमें रक्त गिरता हो तो अनुपान रूपसे वासावलेह देना चाहिये।

१४ गुडूच्यादि-रसायन

प्रथम विधि.—खस, वासाके पान, तेजपात, कूठ, आवलें, सफेद मूसली, छोटी इलायचीके दाने, रेणुकबीज, मुनक्का, केशर नागकेशर, कमलका कन्द, कपूर, सफेद चन्द-नका बुरादा, लालचंदन, कालीमिर्च, सोंठ, पीपल, मुलहठी, धानका लावा, असगंध, शतावर, गोखरू, कौंचके बीज, जायफल, शीतलमिर्च और तगर, इन २७ औषधियोंका कपड़छान चूर्ण १-१ तोला, रससिन्दूर, अभ्रक भस्म, वङ्ग भस्म और लोह भस्म १-१ तोला और गिलोय सत्व ३१ तोला लें। पहले भस्मोंको मिलावें। फिर गिलोय सत्व और शेष काष्ठादि औषधियोंका कपड़छान चूर्ण मिला लें। (यो० र०)

वक्तव्य—मूल ग्रन्थकारने इस चूर्णका मोदक बना लेनेको लिखा है। हमने मिश्री, घी और शहद रोज मिला लेना अच्छा माना है। इस हेतुसे प्रयोग चूर्ण रूपसे दिया है।

मात्रा—चूर्ण ३ माशे, मिश्री ३ माशे, घी ३ माशे और शहद ३ माशे मिलाकर दिनमें २ बार सुबह देवें, ऊपर गौका दूध पिलावें।

उपयोगः—इस रसायनके सेवनसे क्षय, रक्तपित्त, पैरोंकी जलन, रक्तप्रदर, मूत्राघात, मूत्रकृच्छ्र, वातकुण्डलिका (मूत्राघात), सब प्रकारके प्रमेह, दारुण सोम-रोग और जीर्ण ज्वर आदि दूर होते हैं। यह रसायन बल्य, वृष्योंमें उत्तम, मेध्य और राजरोग (दृढ़ घोर रोगों) का नाशक है। शास्त्रकारोंने इसका प्रयोग १ वर्ष या ६ मास तक करनेका विधान किया है। यह उत्तम कल्प है।

सूचनाः—इस कल्पके सेवन कालमें क्षार (सज्जीखार, जवाखार आदि) और तेज खटाईका त्याग करना चाहिये। वृक्कविकार हो और मूत्रमें पूय जाता हो, तो रससिंदूर नहीं मिलाना चाहिये।

द्वितीय विधिः—गिलोय सत्व और खूबकला ४-४ तोले तथा प्रवाल पिष्टी और छोटी इलायचीके दाने २-२ तोले और शृङ्ग भस्म १ तोला लेवें। सबको मिलाकर मिश्रण करें।

मात्राः—१-१ माशा दिनमें ३ बार शहदके साथ देवें। ऊपर बनफशाका अर्क पिलावें।

उपयोगः—यह रसायन क्षयके बढ़े हुए ज्वरके विषको दूर करनेके लिये अति उपयोगी है। इसके सेवनसे क्षयज्वर अधिक नहीं बढ़ता, कफ सरलतासे निकल जाता है और शारीरिक शक्तिका क्षय नहीं होता। जीर्ण ज्वरमें भी इस रसायनके सेवनसे अच्छा लाभ पहुँचता है।

१५. अमृतप्राश घृत

विधिः—जीवक (लम्बा सालब) ऋषभक (अभावमें विदारीकंद), वीरा (क्षीरविदारी अर्थात् पेठा), जीवन्ती, सोंठ, कचूर, शालपर्णी, पृश्निपर्णी, मुद्गपर्णी, माषपर्णी, मेदा (शकाकल छोटी), महामेदा (शकाकलबड़ी), काकोली (श्याम मुसली) क्षीरकाकोली (श्वेत मुसली), छोटी कटेलीकी जड़, बड़ी कटेलीकी जड़, सफेद पुनर्नवा, लाल पुनर्नवा, मुलहठी, कौंचके बीज, शतावर, ऋद्धि (अभावमें खरैंटी) फालसा, भारंगी, बड़ी-द्राक्षा (मुनक्का), बृहती, सिंघाड़ा, भुई आंवला, श्वेत विदारीकंद, पीपल, खरैंटी, बेर, अखरोटकी गिरी, खजूर, बादामकी गिरी और पिस्ता, ये ३६ औषधियाँ और चिरौंजी, नेवजा (चिलगोज़ा), खुरमाणी ये सब १-१ तोले लेकर बारीक चूर्ण करें। उसे जलमें पीसकर कल्क करें। फिर आंवले, विदारीकन्द (शतावर काभी) और ईखका स्वरस, बकरेके मांसका रस (अकनी), गोदुग्ध और गोघृत, ये सब १२८-१२८ तोले और उक्त कल्क मिलाकर मंदाग्निपर घृत पाक करें। घी पक जानेपर कढ़ाहीको उतार तुरन्त घी निकाल लेवें। घृत शीतल होनेपर शहद ३२ तोले, मिश्री २०० तोले, तथा कालीमिर्च, दालचीनी, छोटी इलायचीके दाने, तेजपात और नागकेशरका चूर्ण २-२ तोले मिला देवें। (च० सं०)

सूचना —(१) मांसरस न मिलाना हो, तो उतना उड़दका क्वाथ डालें।

मात्रा —आधसे एक तोलातक दिनमें दो बार गोदुग्ध या अजादुग्धके साथ सेवन करें। भोजनमें मुख्य दूध और मांसरसका सेवन करें।

उपयोग —यह अमृतप्राश मनुष्योंके लिये अमृत रूप ही है। यह शीतवीर्य, उत्तम पौष्टिक अवलेह है। यह कृश, क्षीणवीर्य, क्षीणदेह और क्षीण स्वरवालेको मांस और बलवान बना देता है। एवं यह कास, हिक्का, ज्वर, क्षय, रक्तपित्त, श्वास, तृषा, दाह, पित्तप्रकोप, वमन, मूर्च्छा, हृद्रोग, योनिरोग, मूत्ररोग आदिको भी नष्ट करता है। एवं यह सतानप्रद और पौष्टिक है।

यह घृत राजयक्ष्मा और बालकोंके सूखा रोगमें हितकारक है। विशेष स्त्रीसमागम करनेवाले, दुर्बल और ज्वर आदि रोगसे मुक्त हुए निर्बल मनुष्योंको पुष्ट बनाता है।

१६ गन्धक-कज्जली योग

विधि —छोटी कटेली, निर्गुण्डी और पूतिकरञ्ज, तीनोंका रस या क्वाथ ४ सेर एक कड़ाहीमें डाल चूल्हेपर चढ़ाकर अग्नि देवें। उबलनेपर उसमें शुद्ध गन्धकका चूर्ण ४० तोले डालकर कलछीसे चलावें। गंधक गलकर मिल जानेपर शुद्ध पारद ४० तोले डालें। पारद-गन्धक मिलजाने पर कड़ाहीको नीचे उतार तुरन्त दूसरे लोहपात्रमें निकालकर रख देवें। शीतल होनेपर पात्रको (या पत्थरकी खरलको) धूपमें रखकर धोटें। रस सूखकर कज्जली तैयार होजानेपर बोतलमें भर लेवें। (र० च०)

मात्रा —१-१ रत्ती दिनमें २ या ३ बार देवें। नूतन घोर ज्वरमें १ माशा भूना जीरा और १ माशा सैंधानमकके साथ मिलाकर नागरवेलके पानमें देवें। ऊपर गरम जल पिलावें।

वमन होनेपर शक्करके साथ। आमप्रकोप (अपचन) में गुड़के साथ देकर ऊपर जल पिलावें। क्षयमें अजा दुग्धके साथ। रक्तातिसारमें कुड़ेकी छालके क्वाथके साथ। रक्तक्षयमें उदुम्बरके रसके साथ।

उपयोग —गन्धक-कज्जली योग वातज, पित्तज और कफज, तीनों प्रकृति-वालोंके लिये उपकारक है। ज्वर, कफकास, शुष्क कफप्रकोप, अपचन, उदरकृमि, क्षय, रक्तक्षय, रक्तातिसार, रक्तप्रदर और वमन आदि रोगोंको दूर करता है। इसे आचार्योंने सर्व व्याधिहर कहा है। यह देहशुद्धिकर, व्याधिनाशक और आयुवर्द्धक है। यह सब प्रकृतिको अनुकूल आजाय, ऐसा सौम्य योग है। सगर्भा, प्रसूता और बालकोंके लिये भी इसकी योजना निर्भयरूपसे कर सकते हैं।

राजयक्ष्माकी प्रथमावस्थामें सामान्यतः मंद मंद ज्वर और शुष्क कास, द्वितीया-वस्थामें कफोत्पत्ति होकर पहले सफेद कफ बनना, फिर पीला बनना, बताशे सदृश बनना, बादमें पूयमिश्रित होकर नीलाभ बताशे सदृश बनना आदि क्रमशः रूपान्तर होता जाता

है। तृतीयावस्थामें ज्वर ९९° से १०१° तक बढना घटना, दुर्गन्धयुक्त नीलाभ कफ निकलना, बलक्षय, शरीर हाडपिंजरवत् और निस्तेज बनजाना, रात्रिको स्वेद आकर अधिक निर्बलता आना, आदि लक्षण उपस्थित होते हैं। इन सब अवस्थाओंमें भिन्न भिन्न अनुपानोंके साथ गन्धक कज्जलीयोगकी योजना हो सकती है। प्रथमावस्थामें प्रवाल पिष्टी, अमृतासत्व, सितोपलादि चूर्ण और घी शहद मिलाना विशेष हितावह विदित हुआ है। द्वितीयावस्थामें सुवर्णप्रधान औषधि मृगांक, अभ्रक भस्म, शृंगभस्म, प्रवाल पिष्टीके साथ मिलाकर च्यवनप्राश, अमृतप्राश या एलादि मंथके साथ देना चाहिये। कफ अत्यधिक हो गया हो तो वासावलेहके साथ। तृतीयावस्थाकी प्राप्ति होनेपर रोगनिवारणकी आशा बहुधा नहीं रहती। फिर भी सुखरूप और शान्तिमय अन्तिम जीवन व्यतीत होनेके लिये तृतीयावस्थामें अनुपान वासावलेह उपकारक है। आवश्यकता अनुसार सुवर्ण, अभ्रक, मुक्ता, प्रवाल, शृंग मिला देना चाहिये।

सामान्य स्थितिके राजयक्ष्मा रोगीके लिये यह कम खर्चवाला और प्रभावशाली योग है। सुवर्ण, मुक्ता आदि बहुमूल्य औषधियां मिलायी जायगी, तो यह अपना विशेष चमत्कार दर्शाता है।

यह योग बालकोंके ज्वर, अतिसार, वमन, प्रतिश्याय और उदरकृमिपर भी अच्छा लाभ पहुँचाता है। प्रसूताको भी मंद ज्वर और अतिसार होनेपर दिया जाता है।

१७. एलादि मंथ

विधिः—छोटी इलायचीके दाने, अजमोद, आमला, हरड़, बहेड़ा, तथा खैर, नीम, असना (सालभेद) और साल (विजय सार) (इन ४ वृक्षोंके बीचकी कठोर लकड़ीका बुरादा) वायविडंग, भिलावा, चित्रकमूलकी छाल, बच, सोंठ, कालीमिर्च, पीपल, नागरमोथा, और फिटकरी, इन १८ औषधियोंको १६-१६ तोले लेकर जौ कूट चूर्ण करें। फिर १६ गुने जलमें मिला चतुर्थांश क्वाथ करें। इस-क्वाथमें ६४ तोले गो-घृत मिलाकर सिद्ध करें। घृत शेष रहनेपर निकाल मिश्री १२० तोले, वंशलोचन २४ तोले और शहद १२८ तोले मिला, मथनीसे मथकर एकजीव बना लेवें। (च० द०)

वक्तव्यः—हम इस घृतमें तेजपात, दालचीनी और छोटी इलायची ४—४ तोले मिलाते हैं।

मात्रा—१ से २ तोले प्रातःकाल देवें। ऊपर गौ अथवा बकरीका गुनगुना दूध पिलावें। इस तरह रात्रिको भी सोनेके आध घण्टे पहले दे सकते हैं।

उपयोग—यह मंथ अत्यन्त मेधावर्धक, बुद्धिको शुद्ध करनेवाला, नेत्रके लिये हितकारक और आयुवर्धक है। तथा राजयक्ष्मा, शूल, पाण्डु और भगंदरको नष्ट करता है। इसके सेवनमें कुछ भी अपथ्य नहीं है फिर भी जो प्रकृतिके विरुद्ध हो उससे दूर रहना चाहिये।

यह राजयक्ष्माकी सब अवस्थाओंमें तथा उर क्षत, कास और कृशतामें हितकारक है। इसके सेवनसे शक्तिका संरक्षण होता है। ज्वरके पश्चात्की निर्बलता, बराबर संतान होनेसे आई हुई कृशता, बालकोंको सूखारोग इन सबके लिये यह सफलतापूर्वक व्यवहृत होता है।

यह अग्निमांद्य, उदररोग एवं उदरमें चलनेवाली कोई भी प्रकारकी शूल-परिणामशूलमें अजवायनके रस साथ पथ्य पालनसह सेवन करनेसे लाभ करता है। यह उदरके समस्त विकार नष्ट करके अग्निप्रदीप्त करता है।

१८. कुर्स कहरुवा

विधि —गिलेअरमनी (स्वर्ण गैरिक) निशास्ता और गुलाबके फूल १४-१४ माशे, केहरवा और हब्बुलास २१-२१ माशे, मीठे जलके कैंकड़ेकी संपुटमें की हुई भस्म, कुलफेके बीज, सफेद चंदनका बुरादा, कद्दूका मगज़ और ककड़ीका मगज़ ३५-३५ माशे, गीले मखतुम १०॥ माशे, प्रवाल पिष्टी, कतीरा, वंशलोचन और धोया हुआ साइनजका चूर्ण १७॥ १७॥ माशे, अरबी गोंद (या बबूलका गोंद) और मुलहठी सत्व (रुब्बेसूस) २४॥-२४॥ माशे तथा कपूर ॥। माशा लेवें। सबको कूट कपड़छान चूर्णकर बिहीदानेके लुआबमें पीसकर ३-३ रत्तीकी गोलियाँ या टिकिया बना लेवें।

(तिब्बे अकबरी)

मात्रा —२ से ४ गोली, दिनमें २ या ३ बार वासारसरस और शहदके साथ अथवा पेठेके ४-५ तोले स्वरसके साथ देवें।

उपयोग —यह प्रयोग उर:क्षत होकर होनेवाले रक्तस्रावको सत्वर बन्द करता है। एवं खाँसीमें कफके साथ रक्त आता हो रक्तकी वान्ति होती हो, नकसीर चलती हो, इन सबमें लाभ पहुँचाता है।

१९. खर्जूरासव

विधि —पिण्डखजूर बीजरहित कुचली हुई ३२० तोलेको २०४८ तोले जलमें मिलाकर अर्धावशेष क्वाथ करें। फिर मसल छान उसमें हाउबेर, धायके फूल ३२-३२ तोलेका कषाय मिलाकर अमृतबानमें भर दें। मुखमुद्रा कर १५ दिन रहने दें। परिपक्व हो जानेपर छान लें। (यो० र०)

मात्रा —१-१ औंस समान जल मिलाकर दिनमें दो बार दें।

उपयोग —यह खर्जूरासव राजयक्ष्मा, शोफ, प्रमेह, पाण्डु कामला, ग्रहणी, पांच प्रकारके गुल्म और अर्शरोगको अति शीघ्र नष्ट करता है।

यह पौष्टिक, उत्तेजक और कीटाणुनाशक है। पित्तप्रकोपको शमन करता है। सुजाक और प्रमेह रोगीके लिये भी हितकारक है। राजयक्ष्मामें दाह, अम्लपित्त, रक्त-पित्तके समान लक्षणवालोंकी शक्ति कायम रखनेके लिये प्रयुक्त होता है। अन्तर्विद्रधि

और बाह्य विद्रधिमें विडङ्गारिष्टके साथ देनेसे अच्छा लाभ पहुँचता है। थोड़ी थोड़ी मात्रामें दिनमें ३-४ बार देना चाहिये। साथमें वङ्गभस्म और शृंग भस्मका सेवन कराते रहनेसे सत्वर गुण दर्शाता है।

२०. रसायन बिन्दु

विधिः—कौड़िया लोहवान २० तोले, कपूर, जायफल, जावित्री और लौंग २-२ तोले लें। सबको मिला कूटकर पातालयन्त्रसे चुवाले। यह काले रंगका गाढ़ा सुगन्धित चोवा निकलता है। (श्री० पं० मुरारीलालजी शर्मा वैद्यशास्त्री)

मात्राः— १ सींक भर पानमें लगाकर खिलावें। या बादामके तैल और गोंदके साथ दिनमें ३-४ समय दे सकते हैं।

उपयोगः—यह बिन्दु जीर्ण श्वासनलिकाप्रदाह, दुर्गन्धमय कफ संगृहीत होना, प्रतिश्याय, आमवात, प्रसूताके ज्वर और वातप्रकोप, शिरदर्द, कण्ठके भीतर शोथ, दुर्गन्धमय खट्टी डकार आना, कण्ठमें जलन, निद्रा कम आना, बालकोंका शय्यामूत्र, दांत चबाना आदि रोगोंपर हितकारक है।

इस रसायन बिन्दुका सेवन करनेपर यह श्वासनलिकाद्वारा बाहर निकलता है। जिससे जीर्ण श्वासनलिकाके दाहशोथमें जिसमें हरा या पीला कफ बार बार निकलता रहता है, उसपर अच्छा लाभ पहुँचाता है। इसके सेवनसे श्लेष्मल त्वचाको शक्ति और उत्तेजना मिलती है इस हेतुसे संचित कफ सत्वर बाहर निकल आता है और नूतन उत्पत्तिका ह्रास होजाता है। यह औषधि फुफ्फुसके सब रोगोंपर लाभदायक है। बादामके तैल और गोंदके साथ देनेपर दुर्गन्धयुक्त कफमें सत्वर लाभ पहुँचता है।

नूतन प्रतिश्यायज ज्वरमें कण्ठके भीतर वेदना, हाड़ हाड़ दुखना, शिरमें भारीपना, शारीरिक उत्ताप अधिक नहीं बढ़ना, अरुचि, उबाक आना, मलावरोध, मुँहमें चिपचिपापन आदि लक्षण प्रतीत होते हों, तब इस चोवेका सेवन पानेके साथ करनेपर प्रतिश्यायसह ज्वर आदि दूर होते हैं और आवाज खुल जाती है।

कितनेक बालकोंके मूत्राशयके द्वारपर संयम कम होनेसे रात्रिमें निद्रामें पेशाब हो जाता है और उसमें कीटाणु विष संगृहीत होजानेसे दाँत चबाते हैं। ये दोनों विकार इस चोवेके सेवनसे दूर होते हैं। बालकों यह औषध शक्कर या दूधके साथ दिया जाता है।

आमवातके हेतुसे सांधि सांधिमें पीड़ा होती हो और सूतिकाको मंद ज्वर और वातप्रकोप होकर हाड़ हाड़में दर्द होता हो, तो इस बिन्दुका सेवन करानेपर दर्द दूर होकर जीवनविनिमयक्रिया बलवान बन जाती है। नये आमवातमें यह चोवा ४-४ रत्ती समान लोटिया सज्जा या सोडा बाईकार्बके साथ मिलाकर दिनमें ४ बार देना चाहिये।

यदि आमाशयरस अम्ल और दुर्गन्धित हो जानेसे कण्ठमें दाह होता हो, खट्टी डकार आती रहती हो, कभी मुँहमें छाले हो जाते हों तथा बार बार अपचन हो जाता

हो, तो रसायन बिन्दुका सेवन शक्करके साथ करनेपर आमाशयरस निर्दोष बन जाता है।

प्रतिश्यायजनित शिरदर्द हो तो इस रसायन बिन्दुको ४ गुने गुनगुने तिल तैल या सरसोंके तैलमें मिलाकर कपालपर लगाया जाता है।

यह रसायन बिन्दु १ तोला, दालचीनीका तेल २ तोले, मालकांगनीका तेल ४ तोले और चमेलीका तेल ८ तोले मिलाकर नपुंसकता दूर करनेके लिये तिला रूपसे उपयोग किया जाता है। पं० मुरारिलालजी मिश्रने इसको अनेकबार अजमाया है।

२१. नागशर्करा

(Plumbi Acitas, Lead Acitate)

इसे डाक्टरीमें एसिटेट ऑव लेड तथा शुगर ऑव लेड भी कहते हैं।

विधि —मुर्दासङ्ग (Plumbi oxidum) २४ औंस, सिर्का (Acetic Acid) २ पिण्ट या आवश्यकतानुसार तथा बाष्प जल १ पिण्ट। जल और सिर्केको मिला लेवें। उसमें मुर्दासङ्ग डालकर मंदाग्निपर द्रव करें और फिर गाढ़ा करें। उपरमें मलाई आनेपर द्रव स्पष्ट अम्लगुण विशिष्ट न हुआ हो, तो थोड़ा सिर्काम्ल मिलाकर रख दें। दाना तैयार होनेपर शोषक पत्र (ब्लोटिंग पेपर) पर सुखालें। यह शर्करा सफेद वर्णकी, उज्वल, दानेदार, मधुर कषाय स्वादवाली तथा सिर्केकी गन्धयुक्त होती है।

वक्तव्य —इस नागशर्कराके साथ सिर्काके अतिरिक्त द्रावक और अम्ल (खनिज तेजाब और टेनिक एसिड), उनके क्षार, आल्कलीज, चूनेका जल, क्लोराइड आयोडाइड, अफीममेंसे एसिड आदिके योगसे बनी हुई कृति, बबूलका गोंद, एल्ब्युमिन युक्तजल और भारीजल (Heavy-water) को नहीं मिलाना चाहिये।

नागशर्कराका प्रयोग जलमिश्रित सिर्केके साथ बिना कष्ट दीर्घ कालपर्यंन्त हो सकता है। यदि यह शर्करा वटी रूपसे दी जाय, तो उपरमें अनुपान रूपसे सिर्का जल पिलाना हितकारक है।

यदि इस औषधके सेवन करनेपर मसूड़े काले हो जायें, उदरमें वेदना, आमाशयमें दाह अथवा छातीमें भारीपन हो जाय, तो इसे बन्दकर देना चाहिये। सिर्केके साथ देनेपर ये उपद्रव सत्वर उपस्थित नहीं हो सकने।

नेत्रकी पुतलीके क्षतके ऊपर इस शर्कराके धावनका उपयोग नहीं होता। अन्यथा मलिन श्वेत दाग हो जाता है।

मात्रा —½ से १ रत्ती जलमें गलाकर या गोली रूपसे।

उपयोग —यह शर्करा स्रावण क्रियाके आधिक्यके दमनार्थ और रक्तरोधार्थ प्रयुक्त होती है। इसमें अवसादक गुण होनेसे प्रदाहपर प्रयोग होती है। इस शर्कराका बाह्य प्रयोग करनेपर संकोचक और अवसादक होनेसे यह प्रदाहकी प्रथमावस्थामें उपकार करती है। इसके धावनमें वस्त्रको भिगोकर पट्टी रूपमें भी बांधी जाती है।

उदरसेवनः—विविध प्रकारके रक्तस्रावपर यह सत्वर लाभ पहुँचाती है। भयंकर बढ़ा हुआ अतिसार, राजयक्ष्मा तथा मधुरारोगमें अन्त्र और आमाशयमेंसे रक्तस्राव होनेपर यह व्यवहृत होती है। ऐसी अवस्थामें अफीमके साथ मिलाकर देनेसे आशुप्रतिकार दर्शाती है। गुदनलिकासे रक्तस्राव होनेपर अफीम मिश्रित वर्त्ति (सपोजिटरी) चढ़ाते हैं या एनिमा देते हैं। इस तरह जीर्ण प्रवाहिका रोगमें भी इसकी वर्ति चढ़ाते हैं। जिन स्थानोंमें औषध चिपककर कार्य करती हैं उन स्थानोंके रक्तस्रावमें नागशर्कराकी अपेक्षा फिटकरी ही श्रेष्ठ है। किन्तु शोषण होकर दूरस्थ यन्त्रादिके रक्तस्राव दमनार्थ नागशर्करा हितकर मानी गई है। रक्तवमन, रक्तकास, रक्तातिसार, रक्तप्रदर, रक्तस्राव आदि रोगोंमें नागशर्करा आधसे १ रत्ती और अफीम ½ रत्ती मिलाकर सेवन कराना चाहिये। यदि सगर्भाको गर्भाशयमेंसे अधिक रजःस्राव या रक्तस्राव होने लगे और गर्भपातकी शंका होती हो तो ½ रत्ती नागशर्करा ⅙ रत्ती अफीम (या शंखोदर रस ½) के साथ मिलाकर बार बार दी जाती है। आमाशयमें क्षत होकर रक्तवमन होनेपर यह अति हितकारक है। यह वमनको बन्द करती है। एवं क्षतको भी शुष्क बनाती है।

अतिसार रोगमें यदि अन्त्रप्रदाह न हो तो यह महोपकारक है। मधुराकी अन्तिम अवस्थामें अतिसार हो जानेपर नागशर्कराका अवलम्बन लिया जाता है। किन्तु इसका प्रयोग दीर्घकाल तक नहीं करना चाहिये। इस तरह दो दो वर्षके बालकोंके भयंकर अतिसारमें भी इसका प्रयोग होता है।

महाधमनी और अन्य बृहद् धमनीमें वायुके प्रकोपसे अर्बुद (Aneurysm) होनेपर नाग शर्करा किञ्चित् अफीमके साथ कुछ दिनतक सेवन करायी जाती है। एवं यक्ष्मारोगमें अति प्रस्वेद, अति पूयमय कफनिःसरण तथा सुजाकमें पूयस्राव आदिपर भी यह उपकारक है।

नाग शर्करा ½ रत्तीको १ औंस वाष्प जलमें मिलाकर चक्षुप्रदाहमें इसके धावनका उपयोग होता है। अक्षि पल्लवके भीतर रोहे उत्पन्न होनेपर नाग शर्कराका चूर्ण लगाया जाता है। सुजाक और श्वेतप्रदररोगमें १-२ रत्ती नाग शर्करा २॥ तोले वाष्प जलमें मिलाकर दिनमें ४-६ बार पिचकारी लगायी जाती है।

पारदके प्रयोगसे मुखसे लालानिःसरण होनेपर इसके कुल्ले कराये जाते हैं। विविध प्रकारके चर्मरोग प्रदाहजनित और आघातजनित, दोनोंपर इसके द्रवकी पट्टी लगानेसे संकोचक और अवसादक गुणकी प्राप्ति होकर लाभ पहुँचता है। इनके अतिरिक्त विसर्प (Erysipelas), ग्रन्थिविसर्प (Erythema), कण्डूमय पिटिकाएं (Prurigo), व्युची, शीतपित्तके ददोरे आदिपर नाग शर्करा और नौसादरको समभाग मिला धावनकर के उपयोगमें लेते हैं। दन्तशूल होनेपर नागशर्कराका चूर्ण गह्वरमें रक्खा जाता है। एवं गुदापर चर्म फट जानेपर इसका मलहम लगाया जाता है।

सूचना —इस औषधिकी मात्रा अत्यधिक ले लेनेपर यह प्रादाहिक विषक्रिया दर्शाती है। कण्ठ और आमाशयमें दाह, उदरमें वेदना और मरोड़ा आना, वमन, कभी आक्षेप, अचेतना, पक्षाघात आदि लक्षण प्रकाशित होते हैं। ऐसा होनेपर यशद लवण (सल्फेट ऑव जिंक) द्वारा वमन और सल्फेट ऑव मेगनेशिया द्वारा विरेचन कराना चाहिये। फिर प्रदाहके निमित्त योग्य चिकित्सा करनी चाहिये।

२२ सुदर्शनादि कषाय

विधि —महासुदर्शन चूर्ण और गिलोय 1-1 तोला, काली द्राक्षा और मुलहठी ६-६ माशे और वासापान २० नगको १६ गुने जलमें मिलाकर क्वाथ करें। चतुर्थांश रहने पर छान लें। (श्री० वैद्य कांतिलालजी)

मात्रा —ऊपरके क्वाथके ३ विभागकर दिनमें ३ बार पिलावें।

उपयोग —यह क्वाथ राजयक्ष्मामें ज्वर, कास, कफ, रक्तस्राव और मलावरोधको दूर करता है तथा शान्ति और शक्ति प्रदान करता है।

२३ बनफशादि शर्बत

विधि —गुलबनफसा और अजीर २-२ तोले, नीलोफर, गावजवां, मुलहठी, गिलोय, उन्नाव, सिपस्तान (लेसवा), सौंफ, छोटी इलायचीके दाने, कालीमिर्च, दालचीनी, बीहदाना, काली मुनक्का, वासापत्र ये १३ औषधियां 1-1 तोला लेवें। सबको मिला जवकूटकर रात्रिमें २ सेर जलमें भिगोदें। सुबह चतुर्थांश क्वाथ करें। फिर मँथनकर लुआबको छान लेवें। इसमें 1 सेर मिश्री मिलाकर शर्बत बना लेवें।

(वैद्यराज मुर्लीधरजी मुलतानी)

मात्रा —1। से २॥ तोलेतक ४-10 तोले जलमें मिलाकर दिनमें २ या ३ बार सुबह, दोपहर, रात्रिको पिलावें।

उपयोग —यह शर्बत पित्तशामक, कफघ्न और रक्तशोधक है। विशेषतः श्वासान्तक चूर्ण या शाही चूर्णके साथ दिया जाता है। राजयक्ष्मामें कफको बाहर निकालने और उत्पत्तिको रोकनेके लिये दिया जाता है।

२४. शाही चूर्ण

विधि —वंशलोचन, छोटी पीपल और छोटी इलायचीके दाने, तीनों 1-1 तोला, दालचीनी, गिलोयसत्व और शिरखिस्त, तीनों ६-६ माशे, मोतीपिष्टी, प्रवालपिष्टी, पन्नापिष्टी, माणिक्यपिष्टी, नीलमणिपिष्टी, पुखराजपिष्टी, तृणकान्तमणिपिष्टी, अकीकपिष्टी, अभ्रक भस्म ३-३ माशे, सुवर्णभस्म (या वर्क) 1॥ माशा, रौप्यभस्म (या वर्क) 1॥ माशे लेवें। मिश्री सबके वजन समान (७ तोले) लेवें। सबको अच्छी तरह मिलाकर खरलकर लेवें। (वैद्यराज मुर्लीधरजी मुलतानी)

मात्रा —२ से ४ रत्ती दिनमें ३ बार बनफशादि शर्बत या रोगानुसार अनुपान

के साथ दें। वातप्रकृतिवालेको १॥ तोले बनफशादि शर्बतके साथ देवें। पित्तप्रकृतिवालोंको यह चूर्ण देकर ऊपर ४ गुना जल मिला हुआ शर्बत पिलावें। कफप्रकृतिवालोंको २-३ बूंद अदरकका रस तथा २-३ बूंद नागरबेलके पानकारस शर्बतमें मिलाकर देवें। पुरुषोंके वीर्यविकार और स्त्रियोंके रक्तप्रदर, पीतप्रदर और दुष्ट प्रदरमें उटंगनके बीज, बीजबंध और बीहदाने २-२ माशेको १० तोले जलमें उबाल ३ तोला जल शेष रहनेपर छान उसमें चूर्ण मिलाकर देवें।

उपयोगः—यह शाही चूर्ण राजयक्ष्माको दूर करता है। इसका प्रयोग सब अवस्थाओंमें किया जाता है। वात, पित्त या कफाधिक लक्षण भेदसे अनुपानमें भेद करना चाहिये। यह प्रयोग वैद्यराज मुर्लीधरजी का वंशागत है। १०० से अधिक वर्षोंका सफल अनुभूत प्रयोग है। यदि प्रथमावस्थामें ही इसका प्रयोग किया जाय, तो रोग बहुत जल्दी दूर हो जाता है।

सूचना:—ज्वर ९९° से अधिक हो तो मात्रा कम देनी चाहिये। एवं निर्बलता अधिक आगई हो तो भी मात्रा कम देनी चाहिये।

राजयक्ष्माके अतिरिक्त विलासी मनुष्योंकी निर्बलता और कृशताको दूर करनेके लिये भी यह प्रयुक्त होता है। स्वप्नदोष, वीर्यका पतलापन, श्वेतप्रदर, रक्तप्रदर, दुष्टप्रदर, अधिक संतान, सगर्भा, प्रसूता और ज्वरादि हेतुसे उत्पन्न स्त्रियोंकी कृशता आदिको भी यह दूर करता है।

---

(१५) स्वरभंग। VP

१. कुलिंजनाद्य गुटिका

विधिः—कुलिंजन ५ तोले, कूठ, बच, अकरकरा, लौंग, सौंठ, कालीमिर्च, पीपल छोटी, इलायचीके दाने, जावित्री, तेजपात, कपूर, नागरमोथा, कत्था और बहेड़ा १-१ तोला, केशर ३ माशे और कस्तूरी १ माशा लेवें। सबको मिला कूट नागरबेलके पानके रसमें ६ घण्टे खरलकर १-१ रत्तीकी गोलियां बना लेवें।

मात्राः—१-१ गोली मुँहमें रखकर या नागरबेलके पानमें रखकर दिनमें १० गोलीतक चूसते रहें।

उपयोगः—यह वटी स्वरभेदको दूर करती है। अधिक गाने, व्याख्यान करने, जागरण करने, सूर्यके तापमें घूमकर शीतल जलपान करने या अपथ्य भोजनसे गला बैठ जानेपर इस वटीका अच्छा उपयोग होता है। एवं यह वटी जुकाम, कास और श्वासमें भी हितावह है।

२. कुलिंजनावलेह

विधिः—कुलिंजन (पानकी जड़) १ सेर लेकर १० सेर जलमें मिलाकर चतुर्थांश क्वाथ करें। फिर क्वाथको छान पुनः चूल्हेपर चढ़ा गाढ़ा करें। उसमें १२४ तोले शक्कर डालकर पाक करें। पश्चात् कायफल, पुष्करमूल, भारंगी, सोंठ, पीपल, चव्य, चित्रकमूल, पीपलामूल, कालीमिर्च, सोंठ, पीपल, हरड़, बहेड़ा, आँवला, वायविडङ्ग, धनियाँ, जीरा, कालाज़ीरा, काँटेवाले करंजके भुने फलका मगज़, काकड़ासिंगी, अडूसाके पान, इन २१ द्रव्योंका कपड़छन चूर्ण ८-८ तोले मिलाकर अवलेह बना लेवें।

माત્रा—आधसे १ तोलातक दिनमें ३ बार।

उपयोग—यह अवलेह सब प्रकारकी कफज कास, हिक्का, स्वरभेद कण्ठ विकार, प्रतिश्याय आदिपर व्यवहृत होता है। विशेषतः यह आवाज सुधारनेमें उत्तम है। क्षयरोगमें स्वरभेदपर भी दिया जाता है। इसके सेवनसे जठराग्नि सुधरती है।

३. मृगनाभ्यादि चूर्ण

विधिः—कस्तूरी ३ माशे, छोटी इलायचीके दाने २ तोले, लौंग ३ तोले और वंशलोचन ४ तोले, इनको खरलकर बोतलमें भर लेवें।

उपयोग—२-२ रत्ती दिनमें ३ बार घी और शहद के साथ सेवन करानेसे थोड़े ही दिनोंमें आदेपज स्वरभ्रंश और वाक् स्तम्भ दूर होते हैं।

४. चव्यादि चूर्ण

विधि—चव्य, अम्लवेतस, सोंठ, कालीमिर्च, पीपल, तालरिया (अभावमें इमली पकी), तालीसपत्र, जीरा, वंशलोचन, चित्रकमूल, दालचीनी, तेजपात और छोटी इलायचीके दाने इन १३ औषधियोंको समभाग मिलाकर कपड़छान चूर्ण करें। फिर चूर्णमें ४था भाग गुड़ मिलाकर २-२ रत्तीकी गोलियाँ बनावें। (आ० सं०)

मात्रा—१-१ गोली दिनमें ५-७ बार मुँहमें रखकर रस चूसें।

उपयोग—यह चूर्ण स्वरभेद, पीनस और श्लेष्मिक अरुचिको थोड़े ही दिनोंमें दूर करता है।

५ गोरख वटी

विधि—रससिन्दूर, ताम्रभस्म और लोह भस्म, तीनों समभाग मिला छोटी कटेलीके फलोंके स्वरसमें २१ दिनतक खरल करा आध आध रत्तीकी गोलियाँ बना लेवें। (बृ० यो० त०)

मात्रा—१-१ गोली दिनमें २-३ बार मुँहमें रखकर चूसें या नागरवेलके कथा चूना लगे पानमें रखकर सेवन करें।

उपयोग—गोरख वटी सब प्रकारके स्वरभेदोंको दूर करती है। व्याख्यान अथवा जोर जोरसे गानेसे, रोमान्तिका, इन्फ्लुएन्जा आदि ज्वरसे, धुआँ, धूल आदिका

प्रवेश, गरम पेय अथवा गेसका आघात, प्रतिश्याय अथवा शीतका आघात लग जाना आदि कारणोंसे प्रसेकमय स्वरयन्त्र प्रदाह (Catarrhal Laryngitis) हो जाता है। इस प्रकारके स्वरभेदमें स्वरयन्त्रमें गुदगुदी, भारी आवाज, शुष्क कास, झागदार कफ आना आदि लक्षण उत्पन्न होते हैं। यदि आक्रमण प्रबल हो, तो लगभग स्वरलोप हो जाता है। इस प्रकारपर गोरक्ष वटीका बहुत अच्छा उपयोग होता है।

तेजाब आदिके सेवन, मुख मण्डलपर शोथ, कण्ठरोहिणी और कण्ठके भीतर विसर्प प्रकोप आदि कारणोंसे स्वरयन्त्रद्वारमें सूजन (Oedematous Laryngitis) आजाती है। फिर श्वासग्रहणमें कष्ट, आवाज बैठ जाना, गात्रनीलिमा आदिलक्षण उपस्थित होते हैं। यह रोग यदि क्षयरोगके उपद्रव रुप न हो, तो गोरक्षवटीका सेवन कुलिञ्जनाद्यवलेहके साथ करानेसे लाभ जल्दी पहुंचता है। गलेके ऊपर बर्फ रखवाने और वाष्पका नस्य करानेसे रोग शमनमें सहायता मिल जाती है।

६. त्र्यम्बकाभ्र

विधिः—अभ्रकभस्म १० तोले और कटेली, खरैंटी, गोखरु, घीकुंवार, पीपलामूल, भांगरा, वासापत्र, तेजपात, बेरके पान, आंवले, हल्दी और गिलोय इन १२ औषधियोंका घन सत्व १०-१० तोले मिला खरलकर २-२ रत्तीकी गोलियां बना लेवें।

(भै० र०)

मात्राः—१ से २ गोली दिनमें ३ बार शहद, नागरबेलके पान, कुलिञ्जनाद्यवलेह या अन्य रोगानुरूप अनुपानके साथ देवें।

उपयोगः—त्र्यम्बकाभ्र सब प्रकारके स्वरभंग—वातज, पित्तज, कफज, व्याख्यान आदिसे उत्पन्न, त्रिदोपज और वातवहानाड़ियोंकी विकृतिसे उत्पन्न स्वरभंग दूर करता है। इनके अतिरिक्त दूपित जलवायुसे उत्पन्न ज्वर, कास, श्वास, उरोग्रह, यकृद्विकार, हिक्का, तृषा, कामला, अर्श, ग्रहणी, विविध प्रकारके ज्वर, शोथ, क्षय और अर्बुद आदि रोगोंको शमन करता है। यह अद्भुत गुणदर्शक, उत्तम वाजीकर, अग्नि प्रदीपक, श्रेष्ठ रसायन और सर्व रोगनाशक औषधि है।

यह रस उत्तम शक्तिवर्द्धक और वातवाहिनियोंके लिये पौष्टिक है। नूतन और जीर्ण, दोनों अवस्थाओंमें प्रयुक्त होता है। यदि पक्षवध होकर वाणीका लोप हो गया हो, तो त्र्यम्बकाभ्र कितना कार्य करेगा, यह नहीं कह सकते। एवम् क्षयरोगकी तृतीयावस्थामें स्वरयन्त्रकी वातनाड़ियां नष्ट हो जाती हैं, उसके लिये भी कोई उपाय नहीं है। शेष सब स्थानोंमें यह प्रभाव दर्शाता है।

क्षयज स्वरयन्त्र प्रदाह (Tuberculous Laryngitis) प्राथमिक हो, आवाजमें भारीपन हो, स्वरयन्त्रकी कला अन्तर्भरण युक्त हुई हो, क्षय ग्रन्थियां न हुई हों, तो यह त्र्यम्बकाभ्र लाभ पहुंचा सकता है।

(१६) छर्दि

१. पारदादि चूर्ण (छर्दि)

विधि—शुद्ध पारद, शुद्ध गन्धक, कपूर, बेरकी मींगी, लौंग, नागरमोथा, तंप्रियगु, धानका लावा, सफेद चन्दनका बुरादा, पीपल, दालचीनी, छोटी इलायचीके दाने और तेजपात, इन १३ औषधियोंको सममाग लें। पहले पारद गन्धककी कज्जली करें। फिर शेष औषधियोंका कपड़छान चूर्ण मिलाकर चन्दनके अर्क या ४ गुने गरम जलमें भिगोये हुए चन्दनके फाण्टमें एक दिन खरल करके सूखा चूर्ण बना लेवें। (यो० र०)

मात्रा —४ से ८ रत्ती २-२ घण्टेपर दिनमें ४-६ समय कालीमिर्चके चूर्ण और शहदके साथ अथवा जल, लाजमण्ड या पोदीनेके रसके साथ देवें। यदि इस रसके साथ ज़हरमोहरा पिष्टी २-२ रत्ती मिलाते रहें, तो लाम सत्वर होता है।

उपयोग —यह पारदादि चूर्ण प्रबल वमनका भी नाश करता है। इसका उपयोग अम्लपित्त और विदग्धाजीर्ण जनित वमनपर अच्छा होता है। पित्ताशयगुल्म और वृक्कशूल (वृक्काश्मरी) आदि कारणोंसे वमन होती है, एवं विसूचिका और ताम्र, सोमल, जमालगोटा, कनेर आदिके विषप्रकोपसे वमन भी होती है। इन सबपर इसका उपयोग नहीं होता। जमालगोटा और कनेर आदिके विषपर जब शामक उपचार करना हो, तब इस चूर्णका प्रयोग हो सकता है। सगर्भाके वमनमें इस चूर्णके साथ मुक्तादि चूर्ण मिला देनेपर विशेष लाभ होता है। वमनके अतिरिक्त यह हिक्कापर भी लाभदायक है।

२ वमनान्तक योग

(१) मोरपंखकी चन्द्रिकाको जलाकर की हुई राख २ रत्ती छोटी इलायचीके दाने २ रत्ती तथा $\frac{1}{2}$ रत्ती पीपरमेण्टके फूलको शहदमें मिलाकर चटानेसे विविध उपद्रवों-सह वमन और हिक्का त्वरित दूर होते हैं। मोरपंखकी भस्म कासरोगमें भी लाभदायक है।

(२) आवलोंका शर्बत या जामुनका शर्बत या सन्तरेका शर्बत या नींबूका शर्बत शीतल जल मिलाकर थोड़ा पिलानेसे सूर्यके तापमें घूमनेसे उत्पन्न बेचैनी और वान्ति शमन होजाती है।

(३) चमेलीके पानोंका स्वरस कालीमिर्च और मिश्री मिलाकर देनेसे नयी और पुरानी छर्दि नष्ट होजाती है।

(४) चन्दन और मुलहठीको जलमें ठण्डाईके समान पीस, छानकर पिलानेसे रक्तवमन और पित्तप्रकोपज वमन दूर होती है।

(५) नींबूका रस निचोड लेनेपर शेष रहे हुए छिल्केको छायामें सुखालें। फिर जलाकर राख करें। उसमेंसे ४ से ८ रत्ती राख शीतल जलके साथ या शहदके साथ २-२ घण्टेपर देनेसे वान्ति रुक जाती है। सगर्भा, बालक और वृद्ध आदिके लिये हितावह है।

३. लाजमण्ड

विधिः—धानका लावा १ तोला, छोटी इलायची २-४ नग, लौंग २-४ नग और मिश्री ३ से ६ माशे लें। सबको २० तोले जलमें मिला ५-७ उफान आवें, तब तक उबालें। फिर शीतल होनेपर कपड़ेसे छान लेवें। (श्री पं० यादवजी त्रिकमजी आचार्य)।

उपयोगः—इस मण्डमेंसे १-२ चम्मच थोड़ी थोड़ी देरसे रोगीको पिलाते रहनेसे वमन निवृत्त हो जाती है। यदि वान्ति हरी-पीली और कडुवी होती हो और वमन होनेपर कण्ठमें दाह होता हो, तो थोड़ा नीबूका रस मिला देवें। यदि इस मण्डके पात्रको बर्फपर रख कर शीतल करके उपयोगमें लिया जाय, तो विशेष लाभ होता है। यह मण्ड वमन, हिक्का और तृषा रोगपर उत्तम औषध और पथ्य है।

वान्ति और हिक्का रोगमें सेव मीठा बेदाना (अनार) मोसम्बी और ईख उत्तम पथ्य हैं।

४. पित्तशामक योग

(१) सिकंजवीन सिरका (उत्तम सिरकेमें दुगनी शक्कर डालकर बनाया हुआ शर्बत) ६ माशा, सौंफका अर्क २ तोले, पोदीनेका अर्क २ तोला, ये तीनों मिलाकर बार बार देते रहनेसे २-४ मात्रामें पित्तकी वमन बन्द होजाती है।

(श्री पं० रामचन्द्र जी वैद्य)

५. सगर्भाका छर्दिनाशक योग

(१) रेक्टीफाइड स्पिरिटसे बना हुआ टिंचर आयोडीन (मैथिलेटेड स्पिरिटका न हो) १ बूंद प्रातःकाल प्रतिदिन एकबार २॥ तोले शीतल जलके साथ देनेसे एक सप्ताहमें सगर्भाकी दारुण छर्दि अवश्य नष्ट होजाती है। (श्री० पं० रामचन्द्रजी वैद्य)

(२) नागरमोथा, धनिया और मिश्री २-२ तोले और सोंठ ६ माशे मिलाकर क्वाथ करें। उसका ३ हिस्सा कर दिनमें ३ बार पिलानेसे वमन रुक जाती है।

---

(१७) दाह

१ सुधाकर रस

विधिः—रससिंदूर, अभ्रकभस्म, सुवर्णका वर्क और मौक्तिक पिष्टी, इन ४ औषधियोंको समभाग, लेवें। फिर त्रिफला क्वाथ और शतावरके क्वाथमें ७-७ दिन तक खरल करके १-१ रत्तीकी गोलियां बना लेवें। (आ० सं०)

मात्राः—१-१ गोली दिनमें २ बार शीतल जल, काली सारिवाका फांट या पितपापड़ा, खस और नागरमोथाके क्वाथके साथ देवें। मदात्ययज दाहमें आँवलोंके हिमके साथ।

उपयोग —यह रस घोर दाह, मदात्ययज दाह, प्रमेह और वातरक्तज दाह आदिको दूर करता है तथा बल्य और शुक्रवर्द्धक है। जब रक्तमें मूत्रविष, क्षार, मद्यज विष, पित्त अथवा अन्य तीक्ष्ण द्रव्योंके विषकी वृद्धि होकर दाह होता है, तब इस रस-के सेवनसे विष शमन और रक्तप्रसादन होकर दाह निवृत्त हो जाता है।

२ रसादि वटी

विधि —शुद्ध पारद शुद्ध गन्धक, कपूर, श्वेत चंदनका बुरादा, जटामासी, नेत्रवाला, नागरमोथा खस, छोटी इलायचीके दाने और दरियाई नारियल, ये, १० ओषधियाँ समभाग लें। पहले पारद गन्धककी कज्जली करें। फिर शेष औषधियोंका कपड़छान चूर्ण मिला चन्दनादि अर्कके साथ ३ दिन खरल करके १-१ रत्तीकी गोलिया बना लें। (श्री प० यादवजी त्रिकमजी आचार्य)

मात्रा —१ से २ गोली गुलाबजल या चन्दनादि अर्कके साथ दिनमें ३ ४ बार।

चन्दनादि अर्क —चन्दनका चूर्ण, मोसमी गुलाबके फूल, केवड़ेके फूल और कमलके फूल, इन सबको ८ गुने जलमें मिलाकर १० या १२ सेर अर्क खींच लेवें।

उपयोग —यह रसादि वटी किसी भी प्रकारके दाह, तृषा, हिक्का और पित-प्रकोपज वमन (खट्टी वमन) को दूर करता है। विसूचिकामें भी इसका उपयोग होता है। वमन और विसूचिकामें पोदीनेके रसके साथ देनेपर विशेष गुण होता है।

३ चन्द्रप्रभा चूर्ण

बनावट —सफेदचन्दन, लालचन्दन, मुलहठी, मुनक्का, (काली), नीलो-फर, कमलके फूल, महुएके फूल, नेत्रवाला, छोटी इलायचीके दाने, नागरमोथा और धनिया, ये सब समभाग और सबके समान मिश्री लेवें। (वै० चि० सा०)

मात्रा —३ से ६ मासे, दिनमें ३ बार गौ या बकरीके दूध या जलके साथ।

उपयोग —यह चूर्ण दाह रोगपर अच्छा लाभदायक है। कण्ठ, हृदय और आमाशयमें दाह, मुखपाक, नाकमेंसे रक्तस्राव और मस्तिष्कमें दाह आदिको दूर करता है। पितप्रकोपज श्वेतप्रदरमें भी हितावह है।

४ खर्ज्जूरादि चूर्ण

विधि —पिण्ड खजूर, आंवलेके बीज, पीपल, शिलाजीत, छोटी इलायचीके दाने, मुलहठी, पाषाणभेद, सफेदचंदन, खीरा ककड़ीका मगज और धनिया, इन १० औषधियोंको समभाग और शक्कर सबके समान लेवे। पिण्डखजूर और शिलाजीत-को छोड़ शेष ओषधियोंका कपड़छान चूर्ण करें। फिर पिण्डखजूरको अलग कूटे। पश्चात् उसके साथ शक्कर, चूर्ण और शिलाजीत मिला कूटकर एक जीव बना लेवे। (आ० स०)

मात्रा —६ मासेसे १ तोला, प्रातःकाल जलके साथ। मूत्ररोगमें शक्कर मिले-मुलहठीके फाण्टके साथ।

उपयोगः—यह चूर्ण अंगदाह, मूत्रेन्द्रियदाह और अश्मरी या शर्करा, सिकतासे उत्पन्न शूलको नष्ट करता है। पेशाबको साफ ला देता है। यह चूर्ण वृष्य और बल्य है तथा शुक्र विकृतिसे उत्पन्न रोगोंको नष्ट करता है।

५. गुडूच्यादि क्वाथ

विधिः—गिलोय, आंवला, नागरमोथा, रक्तचंदन, हरड़ और सोंठ, इन ६ द्रव्योंको समभाग मिलाकर जौ कूट कर लेवें।

उपयोगः—२-२ तोले जौकूट चूर्णका क्वाथकर दिनमें २ बार पिलाते रहनेसे विविध प्रकारके दाहकी निवृत्ति हो जाती है।

मलेरिया ज्वरमें क्विनाइनका अधिक सेवन करनेपर कितनेक रोगियोंको नेत्रदाह दृष्टिमान्द्य, मस्तिष्कदाह, बधिरता, चक्कर आना आदि लक्षण उत्पन्न होते हैं। उसपर इस क्वाथका सेवन करानेसे लाभ हो जाता है। इस क्वाथके सेवनके साथ कामदूधा रस देते रहनेसे विशेष लाभ पहुँचता है।

ज्वर आकर चले जानेके पश्चात् कभी कभी वातनाड़ियोंमें प्रदाह तथा रक्त, मांस, मज्जा आदि धातुओंमें दुष्टि शेष रह जाती है। फिर किसीको नेत्रमें दाह, नेत्र खुले रहनेपर दाह होना, नेत्र बन्द करनेपर दाह शमन हो जाना, किसीको हृदयमें दाह और घबराहट एवं किसीको मस्तिष्कमें दाह, विचार शक्तिका ह्रास, स्मरणशक्तिका अभाव आदि लक्षण प्रतीत होते हैं। इन सब प्रकारोंपर इस क्वाथके सेवनसे लाभ पहुँचता है।

दिनोंतक ज्वर रह जाने या मिर्च आदिका अधिक सेवन और गरम गरम भोजन करनेकी आदत आदिसे अन्त्रमें दाह हो जाता है। फिर मन शुष्क हो जाना, उदरमें वातसंचय, मलावरोध आदि लक्षण उपस्थित होते हैं। उस विकारपर इस क्वाथ से दूध सिद्ध करके दिनमें २ बार देते रहनेसे थोड़ेही दिनोंमें लाभ पहुंच जाता है, इस सिद्ध दुग्धके साथ बादामका तैल १-१ ड्राम देते रहनेसे अधिक लाभ पहुँचता है।

६. कज्जली रस

विधिः—शुद्ध पारद १ भाग, सात बार घृत-दुग्धसे शुद्ध किया हुआ गंधक २ भाग और मिश्री ६ भाग लेवें। पहले पारद गन्धककी कज्जली करें। फिर मिश्री मिलाकर ३ घण्टे खरलकर बोतलमें भर लेवें। (यो० र०)

मात्राः—१ से १॥ माशे तक दिनमें २ या ३ बार देवें।

अनुपानः—मिश्री मिला हुआ आंवलोंका स्वरस या हिम अथवा नारियलका जल।

उपयोगः—यह कज्जली रस मदात्यय रोगपर कहा है। यह मदात्ययज दाह, विषप्रकोपज दाह, रक्तपित्त, वमन और उबाकको दूर करता है।

फिरंग रोग संतानोंको भी त्रास पहुंचाता है। ऐसे फिरंग पीड़ित मनुष्यके

बालकोंको यह कज्जली रस दिया जाय, तो फोड़ा फुन्सी, श्वेतकुष्ठ, नासाव्रण, तालुछिद्र आदि विकारोंसे रक्षा हो जाती है। अनुपान शहद।

(१८) उन्माद-अपस्मार

१. उन्मादगजांकुश रस

विधि —धतूरेके शुद्ध बीज, शुद्ध पारद, शुद्ध गन्धक, बंग भस्म, सुवर्ण भस्म, रौप्य भस्म, जटामासी, बायविडङ्ग, नागरमोथा, मोचरस, शरपुंखी, भूतकेशी तगर और एलवा, इन १४ औषधियोंको समभाग लेवें। पहले पारद गन्धककी कज्जलीकरके भस्में मिलावें। फिर काष्ठादि औषधियोंका कपड़छान चूर्ण मिलाकर ब्राह्मी (बाम-जलनीम) के स्वरसमें ३ दिन खरलकर १-१ रत्तीकी गोलिया बना लेवें। (र०यो०सा०)

मात्रा:—१ से २ गोलीतक दिनमें २ बार ब्राह्मीके क्वाथ, सारस्वतारिष्ट या चन्दनासवके साथ देवें।

वक्तव्य —ब्राह्मी (बाम—Moniera Cuneifolia) में वामक गुण है। इसके रसकी मात्रा २-३ माशे है। इसके साथ दूधका सेवन नहीं कराना चाहिये। पचन हो जानेपर दूध देना चाहिये। मण्डूकपर्णी (हरद्वारकी ब्राह्मी–Hydrocotyle Asiatica) के छायाशुष्क पानोंकी मात्रा २–४ रत्ती ही है, किन्तु धूपमें सुखानेपर १-१ तोलेका क्वाथ सहन हो जाता है और इसके साथ दूध दे सकते हैं।

उपयोग —उन्मादगजांकुश रस शीतवीर्य, कीटाणुनाशक, विषघ्न उन्मादहर और बल्य है। जीर्ण और नूतन वातज और पित्तज उन्मादको दूर करती है।

बहुधा सब प्रकारके उन्माद रोगके प्रारम्भमें बुद्धि विभ्रम (विवेकाभाव), मनकी चञ्चलता और शून्यता, व्याकुलदृष्टि, अधीरता और असम्बन्ध भाषण, ये सामान्य लक्षण उपस्थित होते हैं। इस प्रथमावस्थामें ही यदि इस रसका सेवन ब्राह्मी स्वरस ४ मासे या हरद्वारसे आनेवाली ब्राह्मी (मण्डूकपर्णी) एक तोले क्वाथके साथ दिनमें २ बार दिया जाय, तो थोड़े ही दिनोंमें सेन्द्रियविषनाश और क्षोभ शमन होकर उन्माद दूर हो जाता है।

गांजा, शराब आदिका सेवन, मानसिक चिन्ता और विषप्रकोपके हेतुसे पित्तज उन्माद उपस्थित होता है। उसकी तीव्रावस्था होनेपर सामाजिक मर्यादाका बिल्कुल अभाव (लज्जाका अभाव), अविचार, सामान्य बातमें भी अति क्रोध, सहनशीलताका अभाव, निद्रानाश, दौड़ादौड़ी, मारपीटकरना आदि उपस्थित होते हैं। इस अवस्थामें पहले स्थान दोषको दूर करनेके लिये विरेचन देकर उदरशोधन करना चाहिये। फिर रक्त आदि धातुओंमें लीन विषको जलाने और उग्रताके शमनार्थ पथ्य पालनसह उन्माद गजांकुश और कामदुधा मिलाकर मण्डूकपर्णीके क्वाथ या चन्दनासवके साथ देना चाहिये। हस्तमैथुन आदि आदत हो, तो वह भी छोड़ देनी चाहिये।

उन्माद जीर्ण होनेपर प्रायः वातिक या श्लैष्मिक लक्षण उपस्थित होते हैं। वातिक होनेपर चिन्तातुर या शुष्क और निस्तेज मुखमण्डल, बिना हेतु रुदन, हास्य, नृत्य, भोजन पचन हो जानेपर वातप्रकोप होकर कभी अकस्मात् तीव्र प्रकोपके लक्षण—अविचार, अति चंचलता, निद्रानाश आदि उपस्थित होते हैं। ऐसी अवस्थामें चतुर्भुज रस अथवा यह रस कम मात्रामें २–४ मासतक ब्राह्मी घृतके साथ देते रहनेपर लाभ पहुँच जाता है।

चतुर्भुज कस्तूरी प्रधान होनेसे इस रसकी अपेक्षा निद्रानाश और अति चंचलताको दबानेमें अधिक उपयोगी है। इसी तरह उन्माद रोगमें यदि कफप्रकोपलक्षण—मंद चेष्टा, उदासीनता आदि हों तो इस रसकी अपेक्षा चतुर्भुज रसको विशेष लाभप्रद माना जायगा।

२. अपस्मारहर रस

विधिः—शुद्ध सुरमा, शुद्ध बच्छनाग, रससिंदूर, सोमल, शुद्ध हरताल (रस माणिक्य), शुद्ध मैनसिल ये ६ औषधियाँ ५-५ तोले और सक्तुक विष (अभावमें बच्छनाग) ६ माशे लेवें। सबको मिला देवदालीके रसमें १ दिन खरलकर १-१ तोलेकी शिव लिङ्गाकार गोलियां बनावें। फिर सुखनेपर अलग-अलग मल-मलके कपड़ेकी पोटलीमें बन्दकर गुच्छ बनावें। उसे एक हांडीमें ठंडा गन्धक के बीच लटकावें। वह गुच्छ तलेसे कुछ ऊंचा रहना चाहिये। फिर मंद-मंद अग्नि देवें। अच्छी तरह गन्धकका पाक होनेपर अग्नि देना बन्द करें। स्वाङ्ग शीतल होने-पर पोटलियोंमेंसे गोलियाँ निकाल ऊपरसे गन्धकको हटा देवें। फिर कूट चूर्णकर देवदालीके रसमें ३ दिन खरलकर $\frac{1}{8}$–$\frac{1}{4}$ रत्तीकी गोलियां बनालें। (र० यो० सा०)

मात्राः—१-१ गोली, रोज सुबह कड़वी तुम्बीके गर्भ २ रत्तीके साथ मिला करेलेके १ तोले रसके साथ देवे।

उपयोगः—यह अपस्मारहर रस सब प्रकारके नये और पुराने अपस्मारको थोड़े ही दिनोंमें दूर करता है।

सूचनाः—मात्रा सहन हो सके, तो अधिक देवें। भोजनमें घृत अधिक देवें। खटाई, मिर्च आदिका त्याग करावें।

३. चतुर्भुज रस

विधिः—पारदभस्म (अभावमें रससिंदूर) २ तोले तथा सुवर्णभस्म, शुद्ध मैनसिल, कस्तूरी, रसमाणिक्य (हरतालसे बना हुआ), ये ४ औषधियां १–१ तोला लें। सबको मिला घीकुंवारके रसमें १ दिन खरलकरके गोला बनावें। फिर एरंडके पत्तोंमें लपेट धान्यराशिमें ३ दिन रखकर निकाल लेवें। फिर त्रिफलाके क्वाथमें १ दिन खरलकर आध आध रत्तीकी गोलियां बनालेवें। (र० सा० सं०)

मात्रा —१ से २ गोली त्रिफला चूर्ण और शहदके साथ या वचके चूर्णके साथ नागरवेलके पानमें रख दिनमें दो बार देवें।

उपयोग —यह रस उन्माद रोगपर कहा है। वातसस्थाकी विकृतिसे उत्पन्न सब रोगोंपर लाभदायक है। अग्निबलके अनुसार सेवन करनेपर वलीपलितका नाशकर देहको सुदृढ और सुन्दर बनाता है। अपस्मार, ज्वर, कास, शोष, अग्निमान्द्य, क्षय, हस्तकम्प, शिर कम्प, विशेषत गात्रकम्प, वातपित्तज रोग और कफप्रकोपज व्याधियाँ इन सबको यह चतुर्भुजरस निसन्देह नष्ट कर देता है। जो रोग सब प्रकारकी औषधियोंके सेवन, वमन, विरेचन आदि पञ्चकर्मके योग और मन्त्र या विविध औषधि आदिसे दूर न हुए हों, ऐसे असाध्य रोगोंको भी यह रस नष्टकर देता है। जिस तरह वज्र वृक्षोंका नाश करता है, उसी तरह यह असाध्य रोगोंका नाशक है।

इस रसमें उत्तेजक, आक्षेपनिवारक, रसायन और सेन्द्रिय विषनाशक गुण हैं। इस रसका वातवाहिनियों और वातकेन्द्रपर तत्काल प्रभाव पड़ता है। इस हेतुसे उन्माद, अपस्मार, मूर्च्छा, हिस्टीरिया (अपतन्त्रक), और इतर वातप्रकोपज व्याधियाँ शमन होजाती हैं। एव मानसिक प्रसन्नताकी प्राप्ति होती है। उन्माद, हिस्टीरिया आदिमें यह रस जटामासी या ब्राह्मीके अर्क या शखपुष्पीके स्वरसके साथ सेवन करानेसे विशेष लाभ पहुँचता है।

यदि गर्भाशयमें दोष है, तो इस रसके सेवनके साथ शर्बत बनफशा भी दिनमें २ बार पिलाते रहना चाहिये। हिस्टीरिया, अपस्मार आदिमें इस औषधके सेवनसे पहले ही दिनसे लाभ प्रतीत होने लगता है। रोगिणीको पहले दिनसे निद्रा आने लगती है। एव दौराका वेग भी कम होने लगता है।

हृदयकी शिथिलता, शक्तिपात, श्वासकृच्छ्रता, चेतनानाश, मूर्च्छा और सन्निपातमें शीतांगावस्थाकी प्राप्ति होनेपर अदरखके रस और शहदके साथ देनेसे तत्काल लाभ पहुंचता है। रोगीको होश आजाती है। देहमें उष्णता आजाती है और हृदय नियमित कार्यकरने लग जाता है। एव प्रसूताके आक्षेप और बालकोंके धनुर्वातको दूर करनेमें भी यह रस उपकारक है।

कण्ठनलिका, आमाशय अन्त्र, मूत्रनलिका, पित्तनलिका और महाप्राचीरा पेशी आदि स्वाधीन मांसपेशियोंके आक्षेप होनेपर इस रसायनके सेवनसे तत्काल लाभ पहुंचता है। महाप्राचीरा प्रभावित होनेसे हिक्कारोगमें भी अच्छा लाभ पहुंचता है। जटामासीके क्वाथके साथ देना चाहिये।

हिस्टीरिया जीर्ण पक्षाघात अर्दित, गृध्रसी और कटिवात आदि वात विकारोंपर निर्गुण्डी पत्रके स्वरस और शहदके साथ देने और ऊपर रास्नादि अर्क पिलाते रहनेसे रोगका निवारण सत्वर होता है। वृद्धावस्थाकी निर्बलता या व्याधि विशेषसे उत्पन्न गात्रकम्प हस्तकम्प, शिर कम्प आदिपर त्रिफला चूर्ण और शहदके साथ दिया जाता है।

विद्याध्ययन, मानसिक श्रम, चिन्ता, अधिक जागरण आदि कारणोंसे देह दिन प्रतिदिन सूखता जाता हो, अग्निमान्द्य, श्वास, मस्तिष्कमें भारीपन, जीर्णज्वर, कोष्ठबद्धता, हाथपैर टूटना, किसी कार्यमें उत्साह न होना, बेचैनी, नाड़ीकी मंद गति, स्वप्नदोष होता रहना और वीर्यकी निर्बलता आदि लक्षण प्रतीत होते हों, तो इस रसका सेवन त्रिफला, पीपल और शहदके साथ करानेसे थोड़े ही दिनोंमें अग्नि प्रदीप्त होती है। मलावरोध दूर होता है। मानसिक प्रसन्नता होती है। मगज सबल बनता है; तथा रोगी बलवान, पुष्ट और नीरोगी होजाता है। यदि कोष्ठबद्धता न हो, तो ब्राह्मीघृत अथवा ब्राह्मीके अर्कके साथ सेवन कराना विशेष हितकारक है।

राजयक्ष्माकी द्वितीयावस्थामें यह रस उपकारक है। प्रथमावस्थामें जब शुष्क कास हो, तब इस रसका सेवन न कराया जाय, तो अच्छा माना जायगा। क्योंकि कस्तूरीके हेतुसे किसी किसी रोगीके कण्ठमें शुष्कताकी वृद्धि होजाती है और फिर श्वासनलिकापर उत्तेजना उत्पन्न होजाती है। क्षयकी द्वितीयावस्थामें जब शुष्ककास नहीं रहती और कफ निकलने लगता है, तब इस रसका सेवन १ रत्ती बचके चूर्ण और नागरबेलके पानमें करानेसे क्षयकीटाणु नष्ट होते हैं। कफ सरलतासे बाहर आ जाता है। ज्वरका निवारण होता है। पचनक्रिया प्रबल होती है और रोगीको शान्ति मिलने लगती है।

शराबी लोगोंके उन्माद, निद्रानाश, अग्निमान्द्य आदि विकारोंपर भी यह रस लाभदायक है। उन्माद रोगमें यदि सर्वाङ्गमें दाह, असहिष्णुता, जोर जोरसे चिल्लाना, नग्न रहना, बीभत्स चेष्टा करना, अथवा मानसिक विलक्षण चंचलता और बार-बार जड़ सदृश बन जाना आदि लक्षण प्रतीत होते हों, तो धमासा या ब्राह्मी अर्कके साथ चतुर्भुज रस दिया जाता है।

इस रसमें सुवर्ण भस्म होनेसे हृदय सबल बनता है। तथा रक्तप्रसादन कार्य अच्छा होता है। कीटाणु और सेन्द्रिय विष नष्ट होते हैं। एवं त्वचागत पित्तविकार शमन होता है। एवं सुवर्णमें वृष्य गुण होनेसे नपुंसकता भी दूर होती है।

रससिंदूर रसायन, उत्तेजक, कफघ्न, हृद्य और कीटाणुनाशक है। सुवर्णभस्म शीतवीर्य, रसायन, हृद्य, प्रज्ञावर्धक, वृष्य, बृंहण, कीटाणुनाशक और विषघ्न है। मनःशिल और हरताल उत्तेजक, कफवातनाशक, आक्षेपघ्न, कीटाणुनाशक और विषघ्न है। है। कस्तूरी आक्षेपहर, उत्तेजक और निद्राप्रद है और घीकुंवार, उदरशोधक है।

सूचनाः—(१) चतुर्भुज रसमें रससिंदूर, मनःशिल और हरताल उग्र औषधियां होनेसे इसका उपयोग सम्हालपूर्वक कम मात्रामें करना चाहिये।

(२) जब हृदयकी गति बढ़ गई हो और मस्तिष्कमें रक्तकी वृद्धि हो, तब इस रसका उपयोग नहीं करना चाहिये।

४ अपस्मारहर योग

(१) घोड़ा वचका कपड़छान चूर्ण शक्ति अनुसार ३ से ६ रत्तीतक दिनमें २ बार शहदके साथ देते रहने और दूध भातका भोजन कराते रहनेसे जीर्ण अपस्माररोग भी दूर हो जाता है। (भै० र०)

आयुर्वेद निबन्ध मालाकारने वचके चूर्णमें शहद मिलाकर मटर सदृश गोलिया बनाकर ३-३ गोलिया देनेको लिखा है। गोलियोंका उपयोग करना विशेष सुविधावाला है। आयुर्वेद निबंधमालाकारने अनुभव करके इस प्रयोगको उन्मादके लिये भी लाभदायक दर्शाया है। एवं नाम भी उन्मादहर वटी दिया है।

(२) शुद्ध हींग १ से २ रत्ती गधीके दूधके साथ दिनमें २ बार देते रहनेसे १ मासमें अपस्मार दूर होजाता है। रोज दूधकी योजना न हो, तो हींगको ३ दिन गधीके दूधमें खरलकर १-१ रत्तीकी गोलीया बाधकर उपयोगमें ले सकते हैं।

(३) नमक जिसमें न मिलाया हो वैसी इमली १ सेर लेकर मिट्टीके बर्तनमें १ मन जलमें उबालें। १॥ सेर जल अर्थात् दो बोतल जल शेष रहनेपर नीचे उतार कपड़ेसे छानकर बोतलमें भरले। इसमेंसे १-२ तोले जल दिन में ३ बार पिलाते रहनेसे शराब, भाग और गांजाके विषप्रकोपसे हुआ उन्माद विकार सत्वर शमन हो जाता है।

(५) शंखकीटादि नस्य

विधि —शंखका सूखा हुआ कीड़ा, पलाशपापड़ा, नकछिकनी, कालीमिर्च, कायफल और कपूरको समभाग मिला कूटकर कपड़छान चूर्ण करें।

उपयोग —इस चूर्णमेंसे एक चुटकी लेकर सूंघनेसे अपस्मारका दौरा रुक जाता है। यह चूर्ण मस्तिष्कशोधक होनेसे शिरदर्दको भी दूर करता है।

६. महाचैतस घृत

क्वाथ द्रव्य —शणके बीज, निसोत, एरण्डमूल, दशमूल, शतावरी, रास्ना, पीपल, सुहिंजनेकी छाल इन १७ औषधियोको २०-२० तोले मिलाकर जौकुट करें। फिर ६४ सेर जल मिलाकर चतुर्थांश क्वाथ करके छान लेवें।

कल्क द्रव्य—विदारीकन्द, मुलहठी, मेदा, महामेदा, काकोली, क्षीरकाकोली, मिश्री, पिण्डखजूर, मुनक्का, शतावरी, मुञ्जातक कन्द, (अभावमें ताल फल) और गोखरू तथा चैतस घृतोक्त कल्क द्रव्य (इन्द्रायण, हरड़, बहेड़ा, आवला, रेणुकबीज, देवदारू, एलवालुक, शालपर्णी, तगर, हल्दी, दारुहल्दी, काली सारिवा, सफेद सारिवा, प्रियङ्गु, नीलोफर, छोटी इलायची, मजीठ, दन्तीमूल, अनारदाने, नागकेशर, तालीस पत्र, बड़ी कटेली, मालतीके ताजे फूल, वायविडङ्ग, पृश्नपर्णी, कूठ, रक्तचन्दन और पद्मकाष्ठ ये २८ औषधिया) सब मिलाकर ४० औषधियोंको २-२ तोले मिला जलके साथ ८८ तोले कल्क तैयार करें। फिर क्वाथ, कल्क और ४। सेर गोघृतको मिलाकर मन्दाग्निपर यथाविधि पाक करें। (भै० र०)

मात्रा—१ से २ तोले दिनमें दो बार देवें। मात्रा प्रारंभमें आधे से १ तोला देवें। तत्पश्चात् अग्निबलको देखकर मात्रा बढ़ावें।

उपयोगः—यह घृत अपस्मार और उन्माद रोगमें अति हितावह है। सब प्रकारकी मस्तिष्ककी निर्बलताका नाश करता है। एवं अपस्मार, दूषी विषप्रकोप, उन्माद, प्रतिश्याय, श्वास, कास, तृतीयक ज्वर, चातुर्थिक ज्वर और ग्रहपीड़ा आदि रोगोंको दूर करता है। यह घृत शुक्र और आर्त्तवका विशोधन करता है। मानसिक विकृति और वातप्रकोपको दूर करता है। मस्तिष्क, मन, बुद्धि, शुक्राशय और गर्भाशय को सबल बनाता है।

७. ब्राह्मी तैल

मुख्य द्रव्यः—काले तिलोंका तैल, ब्राह्मी स्वरस, भृंगराज स्वरस, शंखपुष्पी स्वरस और बकरीका दूध ४-४ सेर लें।

कल्क द्रव्यः—बच, कूठ, दशमूल, एरण्डमूल, नागकेशर, तेजपात, छरीला, पानड़ी, जटामांसी, श्वेतचन्दन, दारुहल्दी, शंखपुष्पी, ब्राह्मी, खरैंटी और गिलोय, इन २४ औषधियोंको २-२ तोले मिला ब्राह्मी क्वाथमें पीसकर कल्क बनावें।

विधिः—पहले दिन तेलके साथ कल्क और ब्राह्मी स्वरस मिलाकर मन्दाग्नि-पर पाक करें। फिर क्रमशः एक दिनके अंतरसे शेष स्वरस और दूध डालकर मन्दाग्निसे पकावें। सबका पचन होकर तैल सिद्ध होनेपर उतारकर तुरन्त छान लेवें। इसमें इच्छानुसार मोतिया आदिकी सुगन्ध मिला सकते हैं।

(श्री० पं० विश्वनाथजी द्विवेदी आयुर्वेदशास्त्राचार्य)

वक्तव्यः—यहाँपर जिस ब्राह्मीका प्रयोग किया है, उसे हिन्दीमें ब्राह्मी, जल-नीम, सफेद चमनी, बंगालीमें ब्राह्मी, धोपचमनी; बम्बई महाराष्ट्रमें बाम, गुजरातमें बांव, कड़वी लूणी; आंध्रमें समरेणु, कृष्णपर्णी; तेलगुमें सम्ब्राणि चेट्टु और लेटिनमें मोनीएरा कुनीफोलिया-Moniera Cuneifolia कहते हैं।

इस ब्राह्मीके छाते जमीनपर फैलते हैं। इसके पान सामने सामने, वृन्तरहित, कुछ मांसल, चोसरके समान बिल्कुल अखण्ड, काले दागवाले, ६ से २५ मिलीमीटर ($\frac{1}{4}$ से १ इञ्च) लम्बे और २.५ से १० मिलीमीटर ($\frac{1}{12}$ से $\frac{1}{3}$ इञ्च) चौड़े होते हैं। ये स्वादमें कड़वे हैं। पुष्प पत्रकोणमेंसे निकले हुये एकाकी होते हैं। उप पुष्पप (उप वृन्तपत्र) ५ मिलीमीटर ($\frac{1}{6}$ इञ्च) लम्बे होते हैं। डोडी ५ मिलीमीटर लम्बी, अण्डाकार, चिकनी होती है। यह ब्राह्मी भारतमें सर्वत्र गीले स्थानोंपर होती है। ग्रीष्म ऋतुमें फूल-फल आते हैं।

इसी ब्राह्मीमें उत्तेजक, मूत्रल, रसायन, पौष्टिक, विषघ्न, ज्वरहर, शोथनाशक और कफघ्न गुण अवस्थित हैं। यही मस्तिष्कगत विकृति और वातविकारपर लाभदायक है। जीर्ण उन्माद और जीर्ण अपस्मारपर यह हितावह है। यह उत्तेजक होनेसे तीव्र

प्रकोपकालमें इसका प्रयोग नहीं किया जाता। एवं जीर्णरोगमें भी नाड़ी मंद हो, तब यह नहीं दी जाती।

इस ब्राह्मीमें क्षुधाको मंद करनेका दोष रहा है। इस हेतुसे खानेकी औषधिमें इसके साथ दीपन पाचन औषधि मिलानी पड़ती है।

उपयोग।—इसके तेलकी मालिश सिरपर करते रहनेसे मस्तिष्ककी शक्ति बढ़ जाती है। जीर्ण उन्मादरोग और जीर्ण अपस्मारमें अति हितकारक है। मानसिक श्रम अधिक करनेवालोंके मस्तिष्कको सबल बनाकर लाभ पहुँचाता है।

उपरोक्त ब्राह्मीसे बने हुए तेलका अनुभव करनेपर विशेष प्रभावशाली पाया है। यह उन्माद अपस्मार आदि मनोविकार और जीर्ण ज्वरादि रोगोंको नष्टकर मनुष्योंको मेधावी और क्रान्तिवान बनाता है। १५ वर्षोंसे निरन्तर इसका अनुभव कर रहा हूँ। इसके नस्य और शिरो बस्ति अप्रतिम गुणकारी सिद्ध हो चुके हैं।

(श्री० पं० राधाकृष्ण द्विवेदी)

८ चन्द्रहास अर्क

विधि—अजमोद, खुरासानी अजवायन, भांग, धतूरेके बीज, कपूर, अफीमके डोडे और जायफल, प्रत्येकको ४-४ तोले लेकर जौकुट चूर्णकर ४०० तोले गोदुग्धमें मिलाकर रात्रिको भिगो देवें। प्रातःकाल भभकेसे अर्क निकाल लें।

(श्री गोपालजी कुँवरजी ठक्कुर आयुर्वेदाचार्य

मात्रा—१। से २॥ तोले शामको या आवश्यकतापर देवें। जिनका पित्त तेज न हो, उनको ऊपर नागरबेलका पान (कस्तूरी ½ रत्ती मिला हुआ) खिलावें।

उपयोग—यह अर्क पहले कुछ उत्तेजक, फिर शामक, पाचक, निद्राप्रद वेदनाशामक और बल्य है। किसी भी रोगमें निद्रा लानेके लिये यह निर्भय और उत्तम औषधि है। श्वास, कास अग्निमान्द्य, संग्रहणी, मधुमेह और हैजेमें भी यह लाभ पहुँचाता है।

निद्रा लानेवाली और वेदनास्थापक औषधिके रूपमें अफीम विशेष कार्य करती है। किन्तु सगर्भा, प्रसूता, बालक, मलावरोधके रोगी, अत्यन्त गाढ़े कफयुक्तकास, शिराओंमें नीलापनकी वृद्धि, नेत्रकी पुतली सकुचित होना आदि विकारवालोंको अफीम नहीं दी जाती। तब इन स्थानोंमें यह अर्क निर्भयतापूर्वक दिया जाता है। यह अर्क कष्टोंतक शान्त निद्रा ला देता है। अन्त्रपर शामक असर पहुँचाता है और दस्त भी साफ ला देता है। इसके सेवनसे अफीमके समान नशा नहीं आता। किसी भी रोगमें वेदनाके हेतुसे निद्रा न आती हो, वहाँपर निद्रा लानेके लिये इसका उपयोग किया जाता है।

मस्तिष्ककी निर्बलतामें यह अर्क १५-१५ बूंद द्राक्षारिष्ट और जलमें मिलाकर जाता है। इसके सेवनसे मस्तिष्क शान्त रहता है।

९. अपस्मारारि रस

विधिः—नीलाथोथा, शुद्ध पारद और शुद्ध गन्धक तीनों ४-४ तोले लेकर कज्जली करें। फिर ३ दिन गिलोयके स्वरसमें खरलकर गोला बनावें। इसे धूपमें सूखा सराव संपुटकर कपोत पुट (२-३ गोवरीके टुकड़ोंकी अग्नि) देवें। अधिक अग्नि लगेगी, तो पारा उड़ जायगा। अग्नि कम लगेगी तो गन्धक नहीं उड़ सकेगा और नीला-थोथा पक नहीं सकेगा। फिर निकाल केलेके खम्भेके स्वरसमें ७ दिन खरलकर चूर्ण शीशीमें भर लेवें। (र० यो० सा०)

मात्राः—आधसे १ रत्ती ब्राह्मीके रस, घी या नींबूकी सिकंजीके साथ देवें। बेचैनी हो तो नींबूका जल पिलावें।

उपयोगः—यह अपस्मारारि रस सब प्रकारके नये और पुराने अपस्मारको दूर करता है।

वक्तव्यः—इस रसके सेवन करनेवालोंको चाहिये कि कुष्माण्ड, ककड़ी, तरबूज, करेला, कुसुम्भ, ककोड़े, कलम्बी और मकोय इन वस्तुओंका सेवन नहीं करना चाहिये।

१०. चन्द्रावलेह

विधिः—शतावरी, विदारीकंद, पेठा और शंखाहुली, प्रत्येकका स्वरस २५६-२५६ तोले, तथा शक्कर ४०० तोले मिलाकर मन्दाग्निपर पकावें। अवलेह योग्य चाशनी बननेपर नीचे उतार लें। शीतल होनेपर छोटी इलायचीके दाने ६४ तोले, दालचीनी, तेजपात, नागकेशर, मुनक्का, सफेद चंदन, कमल, अनन्तमूल काला, नागरमोथा, पद्माख, खस, आंवला, जटामांसी और लौंग, ये १२ औषधियाँ ४-४ तोले, वंशलोचन और सर्पगन्धा १६-१६ तोलेका कपड़छान चूर्ण मिला लेवें।

(श्री पं० यादवजी त्रिकमजी आचार्य आयुर्वेदमार्तण्ड)

मात्राः—आधसे १ तोलातक, चंदनादि अर्क, केवड़ेका अर्क, गावजवाँके फूलोंका अर्क, बेदमुश्कका अर्क या गोदुग्धके साथ दिनमें दो बार।

उपयोगः—यह अवलेह निद्रानाश, उन्माद, शिरमें चक्कर आना, मूर्च्छा, हाथ पैरोंका दाह आदि विकारोंको दूर करता है। यह अवलेह मस्तिष्कको शान्त और पुष्ट बनाता है। उन्मादकी तीव्रावस्थामें विशेष व्यवहृत होता है। जीर्णावस्थामें भी लाभदायक है।

११. सर्पगन्धा चूर्णयोग

V P

प्रथम विधिः—सर्पगन्धाका कपड़छन चूर्ण ५ तोले और रससिन्दूर ३ माशे मिलाकर खरलकर लेवें। (श्री पं० यादवजी त्रिकमजी आचार्य)

मात्राः—१-१ माशा प्रातःसायं जल, दूध या गुलाबके अर्कके साथ।

उपयोगः—इस योगका सेवन करानेपर अनिद्रा, अपतन्त्रक (हिस्टीरिया), उन्माद और नये अपस्मारमें लाभ पहुँचता है।

सूचना —(१) सर्पगन्धाका प्रयोग करनेके पहले निशोत या कालादाना अथवा मेगनेशिया सल्फास जैसा विरेचन द्रव्य देकर उदर शुद्धिकर लेनी चाहिये।

द्वितीय विधि —सर्पगन्धा चूर्ण ४ तोले, जहरमोहरा पिष्टी, प्रवाल पिष्टी और अमृतासत्व, ६–६ माशे मिलाकर खरलकर लेवें।

मात्रा —१॥–१॥ माशा प्रातः सायं गुलाबके अर्क या गुलकंदके साथ।

उपयोग —इसके सेवनसे निद्रा आ जाती है और मस्तिष्ककी निर्बलता दूर होती है।

सूचना —(१) सर्पगन्धाके सेवन कालमें नमकरहित भोजन करें तो, विशेष और सत्वर गुण दर्शाता है।

(२) रक्तभार (ब्लड प्रेसर) का कम करता है अतः अति क्षीण और निर्बल रोगी, जिनका ब्लड प्रेसर पहले ही कम हो, उनको यह औषधि न दें अथवा विशेष सावधानीके साथ दें।

१२. विजया वटी

विधि —भांगसत्व (Ext. Cannabis Indicae) १ तोला, छोटी इलायचीके दाने और वंशलोचन २-२ तोले मिला थोड़ा जलके साथ खरलकर १-१ रत्तीकी गोलियां बना लेवें।

मात्रा —१-१ गोली दिनमें ३ बार। तीव्र प्रकोपमें आवश्यकता अनुसार २-२ घण्टेपर जलके साथ।

उपयोग —विजयावटी उन्माद, वातानेप, प्रलाप, रज शूल, राजयक्ष्माकी कास, अग्निमान्द्य, अरुचि, अतिसार, ग्रहणी, वृक्कशूल और स्वप्नदोषको दूर करती है।

इस वटीमें मुख्य औषधि भांगसत्व है। यह दीपन, उष्णवीर्य, ग्राही, मादक, आनेपहर, वेदनाशामक, कामोत्तेजक, गर्भाशय उत्तेजक और आकुंचक, कफघ्न और वातशामक है। शेष दोनों सहायक औषधियां हैं। भांग सत्वकी मुख्य क्रिया प्रलापशमन और शान्त निद्रा लाना, ये मस्तिष्कपर प्रकाशित होती है। और यह मनको प्रसन्न बनाती है। इसी हेतुसे उन्माद, हिस्टीरिया और प्रलापपर यहवटी लाभ पहुँचाती है।

इसमें वेदनाशामक गुण और गर्भाशयपर क्रियाकारी होनेसे आर्तवशूलमें यह वटी व्यवहृत होती है। इसी तरह यह वृक्कशूलमें भी अपना गुण तुरन्त दर्शाती है। ग्राही गुणके हेतुसे अतिसार, ग्रहणी और प्रवाहिकामें अन्य औषधिके साथ यह दी जाती है।

१३. चण्डासव

विधि —शालवलीका स्वरस ४ सेर, शक्कर ३॥ सेर, शहद १॥ सेर, धायके फूल २० तोले, मुनक्का २० तोले, ब्राह्मी (जलनिम्ब), जटामांसी और नेत्रवाला ४-४

तोले तथा छोटी इलायचीके दाने, तालीसपत्र, दालचीनी, तेजपात, नागकेसर और कालीमिर्च २॥-२॥ तोले लें। मुनक्काको चटनीकी तरह पीस लें। काष्ठादि औषधियोंको जौकूट कर लें। फिर सबको मिलाकर अमृतबानमें भर मुखमुद्राकर १ मासतक बन्द रक्खें। आसव परिपक्व होनेपर बोतलोंमें भर लेवें। (पं० मदनलालजी)

वक्तव्यः—१० सेर शंखावलीको जलसे धोकर स्वरस निकालें। लगभग २॥ सेर जल मिलाना पड़ता है। तैयार होनेपर ३॥-४ बोतल आसव बनता है।

मात्राः—१। से २॥ तोले दिनमें दो बार समान जल मिलाकर।

उपयोगः—यह आसव मस्तिष्कपर शामक असर पहुँचाता है। उन्माद, अपस्मार, मदात्ययजनित निद्रानाश, प्रमेह, पूयमेह और दाह आदि रोगोंको दूर करता है, तथा मानसिक अस्वस्थताको शमन करता है।

इसी प्रकार (उपरोक्त विधिसे) ब्राह्मी तैलमें कही हुई ब्राह्मीसे जलनिम्बासव बनालें। तो वह भी अपूर्व फलदाता है। मस्तिष्क सम्बन्धी प्रत्येक रोगमें जलनिम्बको अनेक प्रकारसे सेवन करने पर चमत्कारी लाभ मिलता है।

शंखावलीमेंसे जो आसव बनता है वह शामक है इस हेतुसे उन्मादकी तीव्रावस्थामें उपयोगी हैं और ब्राह्मीमेंसे बना हुआ आसव उत्तेजक होनेसे चिरकारी अवस्थामें लाभ पहुँचाता है। (श्री० पं० राधाकृष्णजी द्विवेदी)

---

(१८) वात व्याधि

१. रसराज रस (वात)

विधिः—शुद्धपारद (रससिंदूर) ४ तोले, अभ्रकका सत्व (अभावमें अभ्रकभस्म) १ तोला और सुवर्णभस्म ६ माशे, इन तीनोंको मिलाकर १२ घण्टे घीकुंवारके रसमें खरल करें। फिर लोहभस्म, रौप्यभस्म, वंगभस्म, असगन्ध, लौंग, जावित्री, और क्षीरकाकोली, ये ७ औषधियां ३-३ माशे मिलाकर मकोयके रसमें ३ दिन खरल करके २-२ रत्तीकी गोलियां बना लेवें। (भै० र०)

मात्राः—१ से २ गोली, दिनमें २ बार मिश्री मिले दूध, च्यवनप्राश या समीरगजकेसरी अम्बरीके साथ।

उपयोगः—इस रसके सेवनसे पक्षाघात, अर्दित, हनुस्तम्भ, अपतन्त्रक (हिस्टीरिया), धनुस्तम्भ, अपतानक, (Tetanus), बधिरता, चक्कर आना और समस्त वातविकार नष्ट होकर बल, वीर्य और वाजीकरण शक्तिकी वृद्धि होती है।

रसराज रसका ११ पाठ रसयोगसागरमें दिया है। इनके अतिरिक्त नाम बदलकर कुछ पाठ दिये हैं। और ४-६ पाठ प्रकाशित नहीं हुये। इन सब पाठोंमें यह पाठ

मात्रा—१ से २ गोली नागरवेलके पानमें दिनमें २ बार देवें। हिस्टीरियापर जटामासीका अर्क या हिस्टीरियानाशक फाण्टके साथ। सन्निपातमें तगरादि क्वाथके साथ।

उपयोग—इस रसायनके सेवनसे समस्त रोगसमूह तथा पित्ताश्रित वातरोग नष्ट होते हैं। वृद्ध मनुष्य भी तरुण पुरुषके समान स्फूर्ति और बलवाला बन जाता है। पित्तप्रधान वातविकारमें यह उत्तम औषधि है। तत्काल अपना प्रभाव दर्शाती है। नव्य और जीर्ण रोगपर भी इसका विशेष उपयोग होता है। यह उत्कृष्ट वातपित्तप्रकोपशामक औषधि है।

यह रस महावातविध्वंसनके समान आशुकारी तीव्र प्रकोपमें लाभदायक नहीं है, किन्तु तीव्र क्षोभ शमन होनेपर तथा चिरकारी अवस्थामें जीर्ण वातप्रकोपको नष्ट करनेमें अति हितकारक है। जब वातरोगमें दाह, हृदयमें घबराहट, बेचैनी, मस्तिष्कमें उष्णता, मुखपाक आदि प्रतीत होते हैं, तब पित्तवर्द्धक ताम्र भस्म, मल्ल या कुचिलाप्रधान औषधियाँ लाभ नहीं पहुँचा सकती। ऐसी अवस्थामें सूतशेखर, योगेन्द्ररस और बृहद्वातचिन्तामणि प्रयुक्त होते हैं। इनमेंसे सूतशेखरका कार्य योगेन्द्ररस और बृहद् वातचिन्तामणिसे भिन्न प्रकारका है। सूतशेखर प्रधानरूपसे पित्तकी अम्लता और तीक्ष्णताको नष्ट करता है और गौण रूपसे पित्ताश्रित वातविकारको शमन करता है। योगेन्द्ररस और बृहद्वातचिन्तामणि वात संस्थानपर मुख्य प्रभाव पहुँचाकर वातप्रकोपको शान्त करते हैं। दोनों रसायन वातकेन्द्रको लाभ पहुँचाकर वातवाहिनियोंमें वातवहन कार्य व्यवस्थित करते हैं, तथा साथ साथ पित्त प्रकोपको भी दबाते हैं।

इन दोनों रसायनोंकी रचना विशेषांशमें समान है। इनमेंसे बृहद्वातचिन्तामणिमें मुक्ता, प्रवालकी मात्रा योगेन्द्ररसकी अपेक्षा दूनी होनेसे विषप्रकोपज शारीरिक उत्ताप कुछ अधिक रहनेपर विशेष लाभ दर्शाता है, तथा योगेन्द्ररसमें सुवर्णकी मात्रा अधिक होनेसे यह मस्तिष्क और हृदयको बल देना और रक्तप्रसादन करना, ये कार्य अधिकतर करता है।

अपतन्त्रक (हिस्टीरिया) रोग विशेषतः युवतियोंको होता है। इस रोगके आरम्भमें मनोवृत्ति, विवेकशक्ति और वातनाड़ियोंमें विकार उत्पन्न होता है। फिर जननेन्द्रिय (गर्भाशय आदि) में विकृति होजाती है। कभी गर्भाशय और बीजाशयके विकारसे मनोवृत्तिमें विकृतावस्था आ जाती है। फिर अपतन्त्रक रोग उत्पन्न होजाता है। इस रोगमें अति हास्य या अति रुदन, दीर्घ निःश्वास, बीच-बीचमें हास्य या रुदन, घबराहट, श्वासावरोध, कण्ठावरोध, किसी किसीको आमाशयमें आध्मान आदि लक्षण उपस्थित होते हैं। रुग्णा गिर जानेपर भी उसे चारों ओरके वर्तावका ज्ञान रहता है किन्तु वह उस समय बोल नहीं सकती। गिर जानेपर हाथ पैरोंमें आक्षेप आता है। इस प्रकारके लक्षणयुक्त रोगमें मस्तिष्कको बल देकर विकारके कारण रूप मानसिक ... दूर करनेके लिये यह रसायन अति हितावह है। आवश्यकतापर इस रसायनके

साथ कस्तूरी या अम्बर चौथाई रत्ती देने और ऊपर हिस्टीरियानाशक फाण्ट या जटामांसी-का अर्क पिलानेसे विशेष लाभ पहुँचता है।

सान्निपातिक ज्वरोंमें जब वातप्रकोप होकर मंद मंद प्रलाप, तन्द्रा, नाड़ीमें क्षीणता, हृदयमें घबराहट, हाथपैरोंमें कम्पन, प्रस्वेद अधिक आकर शरीर शीतल हो जाना आदि लक्षण प्रकाशित हों, तब इस रसका प्रयोग करनेपर प्रलाप आदि सब लक्षण शमन होजाते हैं। अनुपान तगरादि कषाय।

प्रसव होनेपर आई हुई दुर्बलताको दूर करने और सूतिका रोगको नष्ट करनेमें यह शीघ्र लाभ पहुँचाता है। वृद्धावस्थामें वातवृद्धि होने और दुर्बलता आनेपर यह रसायन जादूकी तरह शक्तिप्रदान करता है। बैठे बैठे कार्य करनेवाले व्यापारी वर्ग और अन्य कितनेकोंको कमरमें पीड़ा बनी रहती है। उनके लिये यह रस कटि स्थानकी वातनाड़ियां और वातनाड़ीजाल (Ganglion) पर कार्य करके कटिवातको दूर कर देता है।

रक्तकी न्यूनता तथा वातकेन्द्र और वातवाहिनियोंकी शिथिलता होनेपर बार-बार चक्कर आना, भ्रम, क्वचित प्रलाप, मानसिक विकृति और स्मृतिनाश आदि लक्षण उपस्थित होते हैं। उसपर इस रसके उपयोगसे रोगी थोड़े ही दिनोंमें स्वस्थ हो जाता है। किन्तु शारीरिक उताप ९९ डिग्रीसे अधिक रहता हो, तो सूतशेखर देना चाहिये।

शराब सेवन करनेवालोंके चिरकारी वातरोग और जीर्ण पक्षाघातमें अन्य औषधियोंकी अपेक्षा यह रस और योगेन्द्ररस विशेष अनुकूल रहते हैं। दोनों तत्काल अपना चमत्कार दर्शाते हैं। इस रसमें रौप्य भस्म होनेसे यह वृक्क स्थान और मस्तिष्कपर विशेष शामक असर पहुँचाता है और योगेन्द्र रस रक्तप्रसादनकर तथा हृदयपर बल्य असर पहुँचाकर विशेष फल दर्शाता है।

ग्रीष्म ऋतु तथा उष्ण देशोंमें और पितप्रधान प्रकृतिवालोंको वातप्रकोप होकर मस्तिष्कमें पीड़ा होना, बेचैनी, हाथपैरोंमें फड़कन होना, या झनझनाहट होना, कभी-कभी मन्द-मन्द शूल चलना, कमरमें कुछ दर्द होना, बार बार खट्टी डकार आना, मुखपाक होना, अन्त्रमें वायुकी गुड़गुड़ाहट होना, मलावरोध रहना, यकृतका पित्तस्राव कम होनेसे दस्तमें दुर्गन्ध आना आदि लक्षण प्रतीत होनेपर यह रस अच्छा लाभ पहुँचाता है। उपदंशके कीटाणु या सुजाकके कीटाणुओंके विषप्रकोपसे वातवाहिनियोंकी विकृति होकरनपुंसकता आई हो, तो इस रसायनसे वातवाहिनियों का संकोच दूर होकर नपुंसकताकी निवृत्ति हो जाती है।

अनेकोंको शुक्रक्षय होनेपर रक्तकी न्यूनता और वाप्रकोप होकर कमर, एिड़ी आदि स्थानोंमें नाड़ियें खिंचना, मन्द मन्द शूल चलना, सामान्य वेदना होना, मूत्र-मार्ग और शुक्रमार्गमें अति दाह होना आदि लक्षण उपस्थित होते हैं। उनके लिये

रसराज और वृहद् वातचिन्तामणि, दोनों रस अमृतके सदृश उपकारक हैं। अग्निमान्द्य और पाण्डुता अधिक हो, तो रसराजकी अपेक्षा यह रस विशेष अनुकूल रहता है।

शुक्रका दुरुपयोग होनेसे नपुंसकता आई हो, वह भी इस रसके सेवनसे दूर होती है और शुक्रस्रावका भी दमन होता है।

विद्यार्थी वर्ग, वकील और अन्य मस्तिष्क श्रम लेनेवालोंके लिये यह महौषधि है। मानसिक अधिक श्रम पहुँचनेपर ओजका क्षय होता है। फिर मस्तिष्ककी निर्बलता, शिरदर्द, चक्कर आना, स्मरण रखने योग्य विषय विस्मृत हो जाना, निस्तेजता आलस्य, अप्रसन्नता, हाथ पैरोंकी नसें खिचना और अग्निमान्द्य आदि लक्षण प्रकाशित होते हैं। वे सब लक्षण इस रसके सेवनसे थोड़े ही दिनोंमें दूर होते हैं। मुखमण्डल प्रफुल्लित और तेजस्वी बनता है, शरीर और मन उत्साहित बनते हैं तथा स्मरणशक्ति और विचारशक्ति सबल होती है। अनुपान अश्वगन्धारिष्ट।

इस रसमें मिलाये हुए द्रव्योंमेंसे सुवर्ण भस्म मेन्द्रिय विषनाशक, वातकेन्द्र-पोषक, हृद्य, रक्तप्रसादक और शुक्रवर्धक है। रौप्यभस्म मास संस्था और वातवाहिनियोंकी विकृतिको दूर करती है और हृदयको शक्ति प्रदान करती है। लोहभस्म रक्तपौष्टिक है, रक्ताणु और रक्ताभिसरण क्रिया दोनोंको बढ़ाती है। प्रवाल और मौक्तिक विषघ्न, अस्थिबलवर्धक और पित्तप्रकोपशामक है। रससिन्दूर रसायन, हृदय पौष्टिक, विषनाशक और वातहर है। घीकुँवार आमाशय और अन्त्रस्थ विषको निर्विष बनानेमें सहायता पहुँचाता है।

४ वृहद् ब्राह्मीवटी

विधि —अभ्रक भस्म, सगेयशवकी पिष्टी, सुवर्णके वर्क, अकीक पिष्टी, माणिक्यपिष्टी, प्रवालपिष्टी, मुक्ता पिष्टी, कहरवा पिष्टी और चन्द्रोदय, ये ९ औषधिया ६-६ माशे, जायफल, जावित्री, वंशलोचन, लौंग, कूठ, कालाजीरा, पीपल, पीपलामूल, दालचीनी, तेजपात, छोटी इलायचीके दाने, नागकेशर, अनीसून, सौंफ, धनिया, अकरकरा, असगन्ध, चित्रकमूलकी छाल, कुलिंजन रूमीमस्तगी, शखावली और श्वेतचन्दनका बुरादा, ये २२ औषधियाँ ४-४ माशे, कस्तूरी, अम्बर, ब्राह्मी, निसोत, अगर और केशर, ये ६ औषधिया १॥ १॥ तोले लें। पहले केशर, कस्तूरी और अम्बरको खरल करें। फिर भस्म और पिष्टी, पश्चात् सुवर्णके एक एक वर्क मिलाकर खरल करें। तत्पश्चात् शेष औषधियोंका कपड़छान चूर्ण मिला ब्राह्मी (जल नीम) के स्वरसमें २ दिन मर्दन कर १-१ रत्तीकी गोलिया बना लें। (श्री प० यादवजी त्रिकमजी आचार्य)

मात्रा —१ से ४ गोलीतक दिनमें २ या ३ बार देवें।

अनुपान — (१) सन्निपात ज्वरमें प्रलाप शमनार्थ तगरादि क्वाथ।

(२) अपतन्त्रक (हिस्टीरिया) और आक्षेपक वातपर मांस्यादि क्वाथ।

(३) सतत ज्वरमें शहद।

(४) विविध वातप्रकोपपर दशमूल क्वाथ ।

(५) हृदयकी निर्बलतापर खमीरेगावजवां ।

(६) भ्रम, चक्करपर द्राक्षादि चूर्ण ।

उपयोगः—इस ब्राह्मी वटीके सेवनसे मस्तिष्क, वातवाहिनियां और हृदय सबल बनते हैं, उदरमें मलसंग्रह होगया हो, तो वह दूर होता है और आम जलजाता है । इस हेतुसे सन्निपात, हिस्टीरिया, विषमज्वर और हृदयकी निर्बलतापर सफलतापूर्वक व्यवहृत होती है ।

हिस्टीरिया रोगिणीको यदि बारबार हिस्टीरियाका दौरा होता है । सामान्य वचनोंसे दुःख पहुँचनेपर बेहोशी आजाती हो, हृदयमें धड़कन बढ़ जाती हो और निरुत्साह करनेवाले विचार बारबार आते रहते हों, तब मुख्य औषधिके साथ अथवा स्वतन्त्र रूपसे अकेली मानसकेन्द्र और हृदयको सबल बनानेके लिये इस वटीका सेवन कराया जाता है ।

बृहद् ब्राह्मी वटीका उपयोग ज्वरावस्थामें प्रलाप आदि लक्षण उपस्थित होनेपर भी किया जाता है । वातपित्तप्रधान प्रलापावस्थामें सूतशेखर, बृहत् कस्तूरीभैरव और बृहद् ब्राह्मीवटी उपकारक हैं । ये तीनों हृद्य औषधि हैं. किन्तु तीनोंका उपयोग लक्षण भेदसे पृथक होता है । शारीरिक उत्ताप १०२° से १०४° या अधिक हो, दाह, निद्रानाश, तृषा, शीर्षशूल, पीले पतले गरम गरम दस्त, अचेतावस्थामें असम्बद्ध प्रलाप और सचेतावस्था में प्रलापशमन आदि लक्षण होनेपर सूतशेखर विशेष लाभ पहुँचाता है । शारीरिक उत्ताप १०२° या अधिक, आक्षेप, दाँत भिंचना, पतले दस्त, नाड़ियोंका खिंचाव और प्रबल प्रलाप होनेपर बृहत् कस्तूरीभैरव सत्वर फलदायी है । शारीरिक उत्ताप १०१° या कम, निद्रानाश, शक्तिपात, मानसिक व्याकुलता, उदासीनता, अन्त्रमें आम, कृमि या दूषित मलका संग्रह होना, मललिप्त जिह्वा, मंद मंद प्रलाप और मस्तिष्कमें भारीपन आदि आदि लक्षण होनेपर उदर शोधन करके बृहद् ब्राह्मी वटी तगरादि कषायके साथ देनेपर सत्वर लाभ पहुँच जाता है ।

विषमज्वर अनेक दिनोंतक रह जानेपर शारीरिक निर्बलता अधिक आई हो, तब रोगशामक मुख्य औषधिके साथ इस वटीका सेवन कराते रहनेसे रोगसत्वर शमन होकर बलकी वृद्धि होती है ।

५. पीतमृगाङ्क रस

विधिः—सफेद सोमल, हरताल, मनःशिल और फिटकरी, चारों औषधियां १-१ तोले लेकर जौ कूट करें । फिर केलेके खम्भेका रस और शिवलिङ्गीका रस २०–२० तोलेके साथ क्रमशः खरल करा, टिकिया बनाकर सुखा लेवें । पश्चात् ऊपर दूसरी समान मुँहवाली हांडी रख डमरूयन्त्र बनाकर दृढ संधिलेप करें । सूखनेपर चूल्हेपर चढा ६ घण्टे अग्नि देकर पुष्प उडा लेवें । यन्त्र स्वाङ्ग शीतल होनेपर पीला सत्व निकाल लेवें ।

वक्तव्य —रस चण्डांशुकारने स्वयं इसका उपनाम पीत मृगांक दिया है, किन्तु वह सौम्य है और यह उग्र है। (र० च०)

मात्रा—½ से ¼ रत्ती, १ से २ तोले घृत मिश्रीके साथ दिनमें एक बार भोजन कर लेनेपर तुरन्त देना विशेष अनुकूल रहता है।

उपयोग —यह सत्व वातविकार, हिक्का श्वासरोग, वातरक्त और कुष्ठ रोगका नाश करता है। यह औषध रसायन, उत्तेजक, सेन्द्रियविषनाशक, कीटाणुनाशक और बलप्रद है।

फिरंग रोग होनेपर प्रारम्भमें उचित लक्ष्य न देनेसे उसका विष मांस आदि धातुओंमें लीन होजाता है। फिर वातविकार, पक्षाघात, अर्दित, कटिवात, कम्प, रक्तविकार, फोड़ा-फुन्सी, गुदपाक, नासाव्रण, तालुछिद्र, नाड़ीव्रण, उदरकृमि और कुष्ठ आदि उपद्रव उपस्थित होते हैं। इन सब उपद्रवोंको दूर करनेके लिये मल्लप्रधान औषधि दी जाती है। उपदंशचूर्ण, मल्लसिन्दूर, मल्लादिवटी, व्याधिहरण, अष्टमूर्ति रसायन, नवग्रहरस और यह पीतमृगांक, सब उपकारक हैं। इनमेंसे मेदोवृद्धि और कफ प्रधान प्रकृतिवालोंको मल्लप्रधान व्याधिहरण अथवा पीतमृगांक इतर औषधियोंकी अपेक्षा सत्वर फल दर्शाता है।

यह रस श्वास, मंदाग्नि, फिरंग, क्लीवता, मलेरिया ज्वरके वेग इत्यादि रोगोंमें उचित अनुपानसे अत्यन्त लाभदायक है। उत्तेजक और बल्य है। अनेक त्वचाके रोगोंका नाश करता है।

सूचना—भोजनमें दूध भात या मट्ठा-भात तथा शीतल जल पथ्य रूपसे देवें। उष्णपदार्थोंका त्याग करावें।

(२) यह सत्व वात और कफप्रकोपज रोगोंपर हितावह है। पित्तप्रधान लक्षण दाह, नेत्रमें लाली, अति प्रस्वेद आदि हों तो इस रसका प्रयोग नहीं करना चाहिये।

(३) यह तीक्ष्ण औषध है अतः इसे अकेला सेवन न करावें। फिटकरीकी भस्म १ रत्ती मिलाकर सेवन कराना चाहिये। (राधाकृष्ण वैद्य)

(४) ज्वर अधिक हो, उस समय इस औषधका सेवन नहीं कराना चाहिये। रक्तपित्त, अम्लपित्त या मूत्ररोग हो, तो भी इस रसका सेवन नहीं कराना चाहिये। पित्तप्रधान प्रकृतिवालोंको या पित्त प्रधान ऋतुके हेतुसे इस औषधके सेवन करनेके पश्चात् ज्वर आजाय, अथवा मुँहपर शोथ उपस्थित होजाय, तो तुरन्त इसे बन्दकर देना चाहिये। केवल दूधका ही आहार करें। उष्णता प्रतीत हो तो घीकी मात्रा बढानी चाहिये।

६. स्पर्शवातारि रस

विधि—शुद्ध पारद (रससिंदूर) ८ भाग, एरंड तैलमें शुद्ध किया हुआ कुचिला १० भाग, शुद्ध गन्धक १२ भाग, कुटकी और त्रिफला (हरड़, बहेड़ा, आंवला)

१–२ भाग, मिलावां, चित्रकमूल, नागरमोथा, वच, असगन्ध, रेणुका (अभावमें निर्गुण्डीके बीज), शुद्ध बच्छनाग, कूठ, पीपलामूल, नागकेशर और लोहभस्म, ये ११ औषधियां १–१ भाग तथा गुड़ २४ भाग लें। पहले पारद गन्धककी कज्जली करें। फिर लोह भस्म, बच्छनाग, कुचिला, और शेष औषधियोंका कपड़छान चूर्ण क्रमशः मिलाकर मर्दन करें। तत्पश्चात् गुड़के साथ खरल करके १–१ रत्तीकी गोलियां बनालें (इसे महा योगराज गुग्गुलके समान काष्ठ मूसलीसे कूटकर तैयार करना चाहिये)। (र० र० स०)

मात्राः—१ गोलीसे प्रारम्भ कर प्रकृतिके अनुकूल रहे, उतने तक (१२ गोली या न्यूनाधिक) बढावें। दिनमें दो समय निवाये जलसे या मलावरोध होने पर त्रिफला चूर्ण से दें।

उपयोगः—यह रस २–३ मास तक शान्तिसे सेवन करनेपर स्पर्शवातको नष्ट करता है। शरीरके भीतर बहुधा तोड़नेके समान पीड़ा और दाह हो, बाह्यत्वचा पर स्पर्शका बोध न होता हो, तथा स्थान स्थान पर रक्तविकारके धब्बे देखनेमें आते हों, तब स्पर्शवात रोग कहलाता है। इस विकारपर यह रस प्रयोजित होता है।

इस रसमें लोहभस्मके स्थानपर कितनेक चिकित्सकोंने इन्द्रायणका मूल मिलाया है। इन्द्रायणका मूल रक्तशोधनमें हितावह है। और लोह भस्मका पारदके साथ संयोग होनेसे कीटाणुनाश, रक्ताणुवृद्धि और रक्ताभिसरण क्रिया वृद्धि, इन तीन कार्योंमें अच्छी सहायता मिल जाती है। इस हेतुसे हमने लोहभस्म मिलाना विशेष हितावह माना है। आवश्यकता पर इन्द्रायण मूलका उपयोग भी अनुपान रूपसे हो सकता है।

७. खञ्जनिकारि रस

विधिः—एरंड तैलसे शुद्ध किये हुए कुचिलेका कपड़छन चूर्ण, मल्लसिन्दूर (रसतन्त्रसार प्रथम खण्ड दूसरी विधि) और रजतभस्म, तीनों समभाग मिला अर्जुन छालके क्वाथकी ७ भावना देकर आध आध रत्तीकी गोलियां बना लेवें।

(श्री० पं० यादवजी त्रिकमजी आचार्य)

मात्राः—१ से २ गोली प्रातः सायं गोदुग्ध या दशमूल क्वाथसे देवें।

उपयोगः—यह रस उत्तेजक, वातनाडीपौष्टिक, हृद्य और कृमिनाशक है। अर्दित, खञ्जवात, बहिरायाम, अन्तरायाम, कौब्ज, खल्ली, वातशूल और पुराने पक्षवधपर अच्छा लाभ पहुँचाता है। इसके सेवनसे मांसपेशियां और रक्तवाहिनियोंकी विकृति दूर होती है। वातवाहिनियां सबल बनती हैं। यदि उपदंशका विष रक्तमें अवस्थित हो तो वह भी नष्ट हो जाता है। जीर्ण उपदंशके विषको नष्ट करनेके लिये माजून चोपचीनी या अन्य रक्तशोधक अनुपानके साथ खञ्जनिका रस देना चाहिये।

८. अर्दितारि रस

विधिः—केशर, एरण्ड तेलमें शुद्ध किया हुआ कुचिला, हिंगुल, रौप्य भस्म,

अकरकरा, जायफल, जावित्री और लौंग १-१ तोला, सोमल और कस्तूरी ३-३ माशे लेवें। सबको मिला ब्राह्मी (जलनीम) के क्वाथमें १२ घण्टे और अदरखके रसमें १२ घण्टे खरल कर आध आध रत्तीकी गोलिया बनावें।

मात्रा —१-१ गोली प्रात सायं गोदुग्धके साथ देवें।

उपयोग —इस वटीके सेवनसे अर्दित, रुञ्जवात, पक्षाघात और कम्पवात आदि रोग दूर होते हैं। जीर्ण अर्दित और जीर्ण पक्षवधमें विशेष उपकार दर्शाती है।

९ भल्लातकादि गुटिका

विधि —भिलावे ८ तोले, गुड़ ४ तोले, पीपलामूल, पीपल, अकलकरा, सोंठ और मालकागनी, ये सब १-१ तोला लें। सब औषधियोंको कूट गुड़में मिलाकर २-२ रत्तीकी गोलिया बनावें। (भा० नि० मा०)

मात्रा —२ से ४ गोली तक दिनमें दो बार जलके साथ देवें।

उपयोग —यह वटी सधिवात, गठियावात, कटिवात और उदरवातको दूर करती है। इस वटीके साथ तैलके पदार्थोंका सेवन अधिक अनुकूल रहता है। खटाई, शक्कर और घी वाला पदार्थ और दूध कम अनुकूल या प्रतिकूल रहते हैं। सुजाक आदि रोगसे सधि जकड़ जाते हैं। उस पर भी यह वटी लाभ पहुँचाती है। मलावरोध रहता हो तो त्रिफलाका फाण्ट अनुपान रूपसे देना चाहिये।

सूचना —छौंक देनेमें राईका उपयोग नहीं करना चाहिये। अन्यथा सारे शरीर में राईके समान फुन्सिया निकल आती हैं।

१०. वातहर गूगल

विधि —शुद्ध गूगल १० तोले, बीजाबोल ४ तोले, पीपलामूल ४ तोले और शुद्ध हिंगूल १। तोले लेवें। सबको मिला घी लगा लगा कूटकर २ २ रत्तीकी गोलियां बना लेवें।

मात्रा —१ से ४ गोली तक दिनमें ३ बार अदरखके रस और शहद अथवा रास्नादि अर्कके साथ देवें।

उपयोग —इस गूगलके सेवनसे थोड़े ही दिनोंमें कमरकी वायु दूर हो जाती है। स्त्रियोंके मासिकधर्मकी शुद्धि न होती हो तो उसमें भी लाभ हो जाता है। एव समस्त शरीरके वात रोगोंका शमन हो जाता है। जीर्ण रोगोंमें शान्तिपूर्वक पथ्य पालन सह २-३ मासतक सेवन कराना चाहिये।

११. रसोनादि गूगल

विधि —शुद्ध गूगल १० तोले, लहसुन साफ किया हुआ ४ तोला, सोंठ, कालीमिर्च, पीपल, रास्ना और एरडके बीजोंका मगज, ये औषधियाँ २॥-२॥ तोले लें। सबको मिला कूट घीके साथ २ २ रत्तीकी गोलिया बनावें।

सूचना:—एरण्डके मगजमेंसे जिब्भी (पत्ती) निकाल देनी चाहिये। अन्यथा औषध सेवनसे बेचैनी और उबाक होने लगती है।

उपयोग:—इस गूगलकी २ से ४ गोली दिनमें ३ बार निवाये जलके साथ देते रहनेसे संधिवात, हाथ-पैर आदि अवयवोंमें बार बार होने वाली वातज पीड़ा और उदरवात आदि विकार शमन हो जाते हैं।

कितनेक रोगियोंको कुछ वातुल पदार्थ खाने, शीतकालमें बद्दल आने और वर्षा ऋतु आदि कारणोंसे कभी किसी एक अवयवमें तो कभी दूसरे अवयवमें वातप्रकोपजनित वेदना होती रहती है। उनके लिये यह गूगल हितावह है।

१२. अपतन्त्रकारि वटी

विधि:—भुनीहींग १ तोला, कपूर १ तोला, गांजा ६ माशे, खुरासानी अजवायन और तगर (आसारूव) २-२ तोले लें। सबके कपड़छान चूर्णको मिला जटामांसीके क्वाथ (फाण्ट) में १ दिन खरल करके २-२ रत्तीकी गोलियां बना लेवें।

(श्री० पं० यादवजी त्रिकमजी आचार्य)

मात्रा:—२-२ गोली दिनमें ३-४ बार मांस्यादि क्वाथके साथ।

उपयोग:—यह वटी अपतन्त्रक (हिस्टीरिया) पर अच्छा लाभ पहुँचाती है। नये रोग और पुराने, दोनों पर हितकारक है।

१३. गृध्रसीहर गुटिका

विधि:—महायोगराज गूगल ८ तोले, भूनी हींग २ तोले, और जिब्भी निकाली हुई एरण्डकी सिंगी २ तोलेको मिला रास्नादि क्वाथमें ६ घण्टे खरलकर ४-४ रत्तीकी गोलियां बना लेवें।

मात्रा:—१ से ४ गोली तक प्रातः या प्रातः सायं निवाये जलके साथ देते रहें। कब्ज हो, तो एरण्ड तैलके साथ देवें।

उपयोग:—इस वटीके सेवनसे गृध्रसी वायु थोड़े ही दिनोंमें दूर हो जाता है। इस औषधके सेवन कालमें घी और तैल वाले पदार्थोंका सेवन अधिक अनुकूल रहता है।

१४. कारस्करादि गुटिका

प्रथम विधि:—एरण्ड तैलमें शुद्ध किया कुचिला २० तोले, शुद्ध सिंगरफ ४ तोले, अकलकरा ५ तोले, सोंठ, पीपल, कालीमिर्च, जायफल और जावित्री २-२ तोले तथा लौंग, दालचीनी, पीपलामूल और केशर १-१ तोला लें। सबको मिलाकूट कर कपड़छान चूर्ण करें। फिर जायफल, कालीमिर्च और लौंग ५-५ तोलेको ८ गुने जलमें मिलाकर अर्धावशेष क्वाथ करें। इस क्वाथके साथ चूर्णको १ दिन खरलकर १-१ रत्तीकी गोलियां बना लेवें।

मात्रा —१ से २ गोली दिनमें ३ बार जल या दूधके साथ देवें।

वक्तव्य —केवल वातनाड़ियोंकी दुर्बलता, आमाशय दौर्बल्य, अग्निमान्द्य और कोष्ठाश्रित दोषोंको दूर करनेके लिये कुचिला मिश्रित औषधि भोजनके १ घण्टे बाद गर्म जलमें देना विशेष लाभदायक है। शाखाश्रित दोषोंमें तथा सर्वांग वायु और मासगत वायुके शमनार्थ भोजनसे २ घण्टे पहले उचित अनुपान-कषाय, स्वरस या दूधके साथ देवें।

(श्री प० राधाकृष्णजी द्विवेदी)

उपयोग —इस वटीके सेवनसे सब प्रकारके जीर्णवातरोग नष्ट होजाते हैं, शरीरमें बल और रक्तकी वृद्धि होती है, अन्त्रकी परिचालन क्रियामें वृद्धि होनेसे मलशुद्धि नियमित होती है, पतले दस्त होते हों तो मल बंध जाता है, क्षुधा प्रदीप्त होती है, मन्दाग्नि, अजीर्ण, ग्रहणी और वीर्यविकार शमन होते हैं, तथा हाथ पैर और कमरका दर्द दूर होता है। यदि मांसपेशियां सूखती जाती हों, तो वह विकृति भी दूर होती है। अर्दितवात, अधांगवात, मन्धिवात, शिरोगतवात और उदरवातके शमनमें यह औषधि अति हितावह है। देहके किसी भी भागमें वातवाहिनियोंकी विकृति होनेपर यह वटी उसे सत्वर दूर करती है। संज्ञावह वातनाड़ियोंकी विकृति अर्थात् जिस स्थानपर स्पर्शजनित बोध न हो उसपर इसका प्रयोग नहीं होता। चेष्टा नाड़ियोंकी विकृतिमें यह लाभदायक है।

इस वटीके उपयोगसे उदरवात दूर होते हैं। जीर्ण कोष्ठबद्धता अग्निमान्द्य उदरकृमि और अपचन आदि विकार दूर होते हैं। पचन क्रिया सबल बनती है। आलस्य, अधिक निद्रा और मस्तिष्ककी निर्बलता दूर होकर उत्साहकी वृद्धि होती है।

पौष्टिक औषधिके साथ प्रयोग करने पर बल्य और कामोत्तेजक गुण दर्शाती है। स्वप्नदोष दूर होता है। स्मरणशक्ति और वीर्यकी वृद्धि होती है। पुष्टिके लिये यह गुटिका प्रातःकाल और रात्रिको मिश्री मिले दूधके साथ सेवन करनी चाहिये।

१५. नागराद्य गुटिका

विधि —सोंठ, कालीमिर्च, पीपल और पीपलामूल चारोंको समभाग मिला कपड़छान चूर्ण करें। फिर शहदसे मर्दन कर २-२ रत्तीकी गोलियां बनावें और सोंठके चूर्णमें डालते जाँय। यह सोंठका चूर्ण अलग ले लें।

उपयोग —२ से ४ गोली दिनमें दो या तीन बार सेवन करानेसे हाथपैरोंकी नसें खिंचना, वायटे आना, निद्रा न आना, ऐंठन, आमवृद्धि, उदरमें वातसंचय रहना, क्षुधानाश और मुँहमें चिपचिपापन रहना आदि विकारोंको दूर करती है। यह सामान्य औषधि होनेपर भी अच्छा लाभ पहुँचाती है।

यदि पैरोंपर अधिक ऐंठन हो, तो जायफलको ४ गुने तिल तैलमें उबाल कर, उस तैलसे मालिश करनेपर सत्वर लाभ पहुँचता है। विसूचिका रोगकी ऐंठनपर भी यह तैल लाभ पहुँचाता है।

कितनेक वृद्धोंको रात्रिमें निद्रा नहीं आती, उनके लिये इस गुटिकासे निद्रा आने लगती है और वात-प्रकोप नहीं होता।

१६. कुष्माण्ड अर्क

विधिः—एक पेठा पक्का ५ सेर वजनका लेकर उसके डण्ठलकी जगह चाकूसे काट, छेद कर उसमेंसे चम्मचसे गर्भ, बीज आदिको चला देवें। फिर उसमें २० तोले हीरा हींग भर, पूर्ववत् बन्द कर, कपड़मिट्टी करके सुखा देवें। फिर उसका मुख ऊपरकी तरफ रहे, उस तरह जमीनमें दबा देवें। किसीको शंका हो कि जमीनमें दबानेसे पेठा सड़ जायगा; तो उस शंका के निवारणार्थ कहना पड़ेगा कि, ऊपरकी छाल भी जैसीकी वैसी रहती है और भीतरका मग्ज रस रूप बन जाता है। एक मासके पश्चात् पेठेको निकाल, सम्हाल कर मुख परसे कपड़ मिट्टी दूर कर, पेठेके मुंहको खोल, उसमें से लोहेकी नली द्वारा अर्क निकाल, छानकर बोतलोंमें भर लेवें। यह अर्क २-३ वर्ष तक अच्छा रहता है। (आ० नि० मा०)

सूचनाः—पेठेके ऊपर लगभग ८-६ इञ्च मिट्टी आजाय, उतना गहरा गड्ढा खोदना चाहिये। जिस जमीनमें शुष्कता हो, ऐसे स्थानपर पेठेको दबाना चाहिये। भूलसे मुख भाग नीचे न रहजाय, यह सम्हालें, अन्यथा सब अर्क जमीनमें चला जायगा।

मात्राः—५ से १० बूंद दिनमें ३ बार २॥-२॥ तोले जलमें मिलाकर पिलावें।

उपयोगः—इस अर्कके सेवनसे देहमें अति उष्णता उत्पन्न होती है, समस्त वातरोग, कटिग्रह, सांधों सांधोंमें वेदना और पक्षघात आदिका शमन होजाता है। तथा कफ-प्रधान सब रोगोंका भी निवारण होजाता है।

१७. मांस्यादि क्वाथ

विधिः—जटामांसी ८ तोले, असगन्ध २ तोले और खुरासानी अजवायन १ तोला लें। सबको मिलाकर जौ कूट करलें। (श्री० पं० यादवजी त्रिकमजी आचार्य)

मात्राः—१।-१। तोला चूर्णको १० तोले जलमें मिला अर्धावशेष क्वाथ करें।

उपयोगः—इस क्वाथका उपयोग हिस्टीरिया, आक्षेपक वात और बालकोंके नृत्य वात (Chorea)पर अकेले या बृहद् वात चिन्तामणि, ब्राह्मीवटी, हिस्टीरियानाशक वटी, अपतन्त्रकारि वटी या सर्पगन्धावटीके साथ होता है।

१८. त्रयोदशाङ्ग गुग्गुलु

बनावटः—लहशुन, असगन्ध, हाऊबेर, गिलोय, शतावरी, गोखरू, विधारा, रास्ना, सौंफ, कचूर, अजवायन और सौंठ, ये १२ औषधियाँ ४-४ तोले, शुद्ध गूगल ४८ तोले और गोघृत २४ तोले लेवें। सब औषधियोंके कपड़छान चूर्ण और गूगलको थोड़ा थोड़ा गोघृत मिला कूटकर एक जीव बनालें। फिर २-२ रत्तीकी गोलियां बना लेवें। (भै० र०)

मात्रा:—२ से ४ गोली दिनमें ३ बार शराब, यूप या रास्नादि अर्क या रोग-नाशक अनुपानके साथ देवें।

उपयोग —यह गूगल कटिग्रह, गृध्रसी, बाहु, पीठ, जानु (घुटने), पैर, साधे, हड्डी, मज्जा और स्नायुगतवात, हनुग्रह और कुष्ठ आदि रोगोंको दूर करता है। वातज और कफज रोग, हद्रोग, योनिदोष, खञ्जवात और अस्थिमज्जा आदि विकारोंका नाश करता है।

पक्षाघातकी प्रारम्भिक अवस्थामें दशमूल क्वाथके साथ सेवन करानेपर थोड़े ही दिनोंमें रोग निर्मूल होजाता है। यदि गृध्रसी आदि जीर्ण वातरोगोंपर देना हो, तो शान्तिपूर्वक ४-६ मासतक सेवन करना चाहिये।

१६ पञ्चामृतलोहगुग्गुलु

विधि —शुद्ध पारद, शुद्ध गन्धक, रौप्यभस्म, अभ्रकभस्म और सुवर्णमाक्षिक भस्म ४-४ तोले, लोह भस्म ८ तोले और शुद्ध गूगल २८ तोले लें। पहले पारद गन्धककी कज्जली करके भस्म मिलावें। फिर लोहेके खरल यत्तेमें गूगलको थोड़ा थोड़ा कडुवा तैल मिलाकर कूटें। गूगल नरम होनेपर उसमें पारद मिश्रण मिला ६ घण्टे तक कूट कर २-२ रत्तीकी गोलियाँ बनालें। (आ० म०).

मात्रा —१ से २ गोली दिनमें दो बार दूध या सोंठ और एरण्डमूलके क्वाथ अथवा असगन्धके क्वाथके साथ दें।

उपयोग,—इस रसायनका प्रयोग करनेपर मस्तिष्कगत वातविकार, मांस-पेशियोंमें पीड़ा, गृध्रसी, अवबाहुक कटिवात, सन्धिवात आदि वातविकार नष्ट होते हैं।

जब मस्तिष्कगत वातकेन्द्रमें और वातनाड़ियोंमें विकृति, रक्तकी न्यूनता और आमानुबन्ध सह चिरकारी रोग हो या तीव्र क्षोभवाली अवस्था शान्त होगयी हो, तब इस रसायनका उपयोग होता है। यह रसायन आमको जलाता है, रक्तका प्रसादन करता है तथा मस्तिष्क, हृदय रक्त और रक्तवाहिनियों और वातवाहिनियोंको सबल बनाता है। जिससे मस्तिष्कमें शून्यता आ जाना चक्कर आना, घबराहट, मानसिक बेचैनी, अर्दित और देहके विविध स्थानोंमें वातजनित वेदना होना आदि लक्षण दूर होजाते हैं।

यह पञ्चामृत लोह गुग्गुलु वातपित्त मिले हुए प्रकोप या पित्त प्रकृति वालोंके उत्पन्न वात रोगपर व्यवहृत होता है। आयुर्वेद संग्रह कारने इसे मुख्य मस्तिष्कगत विकारपर लिखा है, तथापि मस्तिष्कके अतिरिक्त गृध्रसी आदिपर भी अच्छा लाभ पहुँचाता है।

२०. रसोनपिंड

बनावट —एक पेठा पक्का ५ सेर वजनका लेकर उसके डण्ठलकी जगह चाकूसे काट छेदकर भीतरसे बीज आदि होसके उतने निकाल देवें। फिर एकपोथी लहशुन

छिलका और बीचका अङ्कुर दूर किया हुआ ४० तोलेको उस पेठेके भीतर भर देवें। पश्चात् काटा हुआ डण्ठल ऊपर लगा कपड़ मिट्टी करें। डण्ठलवाला भाग ऊपर ही रहना चाहिये। फिर गोबरीकी अग्निमें पुटपाक रीतिसे पकालेवें। जब कपड़मिट्टी ऊपरसे लाल प्रतीत होने लगे, तब पेठेको बाहर निकाल लेवें। शीतल होनेपर कपड़मिट्टी दूर कर लहशुन सह पेठेको कूट (बीज निकाल) कर कल्क बनालें। पश्चात् कलईकी हुई पीतलकी कड़ाहीमें २० तोले तिल तैल डालकर गरम करें। उसमें छौंक रूपसे हींग १ तोला तथा दालचीनीके छोटे-छोटे टुकड़े, जीरा, राई और लौंग २॥-२॥ तोले डालें। फिर पेठेका कल्क डाल अच्छी तरह चलाकर पकावें। शीतल होनेपर सौंठ, कालीमिर्च, पीपल, अकलकरा, दालचीनी, तेजपात, कालाजीरा, अजवायन, पीपलामूल, धनिया और जीरा, इन ११ औषधियोंका कपड़छान चूर्ण १-१ तोला तथा सैंधानमक ५ तोले (या कम ज्यादा) डालकर अमृतबानमें भर लें।

(पं० श्री गोवर्धनजी छांगाणी भिषक्केसरी)

मात्राः—६ माशे से २ तोले तक खिलाकर ऊपर वायविडङ्ग और एरण्डमूलका क्वाथ पिलावें।

उपयोगः—यह प्रयोग सब प्रकारके वात रोगोंपर हितकारक है। सर्वाङ्ग वात, अर्धाङ्ग वात, अर्दित, अपस्मार, उन्माद, अपतन्त्रक, गृध्रसी, कटिवात, उदर वात, उरुस्तम्भ, उदरकृमि, कफप्रकोप, उदावर्त, अपचन और आमवृद्धि आदिको दूर करता है। जीर्ण आमवात और संधिस्थानके शोथपर भी यह योग लाभ पहुँचाता है। इसके सेवनसे वातवाहिनियां, मांसपेशी और हृदय सबल बनते हैं, पेशाब साफ आता है, ज्वर रहता हो, तो दूर होता है, रक्तदबाव वृद्धि हुई हो, तो उसका ह्रास होजाता है, तथा देहमें पूयोत्पत्ति हुई हो, तो पूयकीटाणु नष्ट होते हैं।

वात विकार एवं तज्जन्य रक्तदबाव (ब्लड प्रेशर) पर भी अवश्य लाभ करेगा।

पक्षाघातके रोगीको प्रातः सायं मल्लसिन्दूर या व्याधिहरण सोमलयुक्त ½ रत्ती और कस्तूरी ½ रत्तीको मिला अदरखके रस और शहदके साथ देते रहें, और ऊपरमें इस रसोनपिण्डमेंसे २॥-२॥ तोले खिलाते रहनेसे पक्षाघात रोग सत्वर दूर होजाता है। जिन रोगियोंको शराब सेवनसे पक्षाघात होगया हो, या जिनको पक्षाघात होनेपर भी मस्तिष्क और कोष्ठमें उष्णता रहती हो, उनके लिये यह रसोनपिण्ड अति उपकारक है।

२१ गुञ्जाभद्र रस

विधिः—गोदुग्धमें शुद्ध की हुई सफेद चिरमीकी गिरी अंकुर रहित, जयन्ती (अरणी) के मूल और नीमकी निम्बोलीकी गिरी ६-६ तोले, शुद्ध पारद ३ तोले और शुद्धगन्धक १२ तोले लें। पहले पारद गन्धककी कज्जली करें। फिर शेष औषधियोंका महीन चूर्ण मिला मकोय, भांग, धतूरेके पान और नीबूके रसमें क्रमशः १२-१२ घण्टे खरलकर १-१ रत्तीकी गोलियां बना लेवें। (र० त०)

मात्रा—१ से २ गोली दिनमें २ बार हींग और सैंधानमकके साथ देवें। ऊपर *गिलाजीत, गूगल मिला हुआ दशमूलक्वाथ पिलावें।*

उपयोग—गुन्जाभद्र रस ऊरुस्तम्भ (Paraplegia) पर व्यवहृत होता है। प्राचीन आचार्यों ने इस रसमें बहुत कम परिमाणमें जमालगोटा मिलाया है। शास्त्र मर्यादा अनुसार ऊरुस्तम्भमें स्नेहन, वमन, विरेचन और बस्तिद्वारा शोधन या रक्तमोक्षण नहीं कराया जाता। विकृत मेद या मज्जाद्रव्यके सचयको जलाना पड़ता है और नयी उत्पत्तिको रोकना पड़ता है। यद्यपि जमालगोटा परिमाणमें कम होनेसे विरेचन नहीं करा सकता तथापि अन्त्रमें उग्रता तो लाता ही है। बहुधा ऊरुस्तम्भ पीड़ितोंकी आंत शिथिल होती है। ऐसी अवस्थामें जमालगोटा लाभ नहीं पहुँचा सकेगा। एवं जमालगोटा मिलानेपर औषधि लम्बे समयतक नहीं दे सकेंगे और ऊरुस्तम्भ थोड़े ही दिनोंमें निवृत्ति नहीं होता। इस हेतुसे रसतरंगिणीकारने उसे निकाल दिया है, वह उचित ही प्रतीत होता है।

यदि ऊरुस्तम्भकी आशुकारी अवस्था हो और उदरशोधनार्थ जमालगोटा मिलानेकी आवश्यकता हो तो इस गुन्जाभद्र रसके साथ इच्छाभेदी रस मिलाकर उपयोग करनेपर इच्छित लाभ मिल जाता है।

ऊरुस्तम्भकी उत्पत्तिके अनेक कारण हैं। सुषुम्णाकाण्डपर चोट लगना, सुषुम्णा काण्डप्रदाह, मदात्यय, मलेरिया, विषप्रकोप, पाण्डु, मस्तिष्कक्षत आदि। इनमेंसे सुषुम्णा काण्डप्रदाह या अन्य कारणसे केन्द्रस्थानकी शक्ति नष्ट न होगई हो, तो लाभ पहुँचने की आशा रख सकते हैं।

चोट आदि कारणोंसे आशुकारी ऊरुस्तम्भकी संप्राप्ति हुई हो, अथवा मलेरिया या अन्य विष प्रकोप होकर चिरकारी रोगकी संप्राप्ति हुई हो, दोनोंपर यह प्रयुक्त होता है। यह दारुण आशुकारी रोगकी वेदनाको तुरन्त दबादेता है। एवं चिरकारी रोग, जो अति जीर्ण न हो गया हो, वह भी पथ्य पालन करनेपर २-४ मासमें दूर हो जाता है।

सूचना—स्नेह स्वेद, उत्सादन, लेप और व्यायाम आदिका उपयोग रोग और लक्षण अनुसार करना चाहिये।

२२. काकतिन्दुक वटी

विधि.—एरण्ड तैलमें भूने हुए कुचिले ७ छटाक, सोंठ, कालीमिर्च, पीपल, हरड़, बहेड़ा, आंवला और लोहबानके फूल १-१ छटाक लें। सबका कपड़छान चूर्णकर नागरवेलके पानके रसमें १२ घण्टे खरल करें (६ घण्टे हो जानेपर केशर ३ मासे और कपूर १ तोला मिला लेवें) फिर १-१ रत्तीकी गोलियां बना लेवें।

मात्रा—१ से २ रत्ती दिनमें २ बार दूध, जल या रोगानुसार अनुपानके साथ देवें।

उपयोग—यह काकतिन्दुक वटी उदरवात, बारबार उठनेवाला शूल, आध्मान,

जीर्ण कटिवात, हाथ पैरोंमें झनझनाहट, शून्यता आना, कम्प, वात और कफ वृद्धि आदि
दूर करती है और अग्निको प्रदीप्त करती है।

यह कुचलेकी गोलियोंके नामसे प्रसिद्ध है। दूधके साथ सेवन करनेपर शारीरि
शक्तिको बढाती है, कामोत्तेजना कराती है और वीर्यको भी बढाती है।

सूचनाः—(१) शक्ति वर्द्धक मानकर ज्यादा मात्रामें नहीं लेनी चाहिये। ए
१५ दिन सेवन करके १ सप्ताह बन्द करें। फिर आवश्यकता हो, तो सेवन करें।

(२) वातपीड़ितोंको चाहिये कि तेज खटाई न लेवें। नीबू, मट्ठा, टमाटर
सकते हैं। अमचूर, इमली, सिरका आदिका त्याग करें।

२३. रसोन पाक

विधिः—छिलके और बीचके अंकुर रहित शुद्ध लहशुन ६४ तोलेको २५
तोले दूधमें मिलाकर खोआ बनावें। उसे ६४ तोले घी मिलाकर भूनें। तथा सों
कालीमिर्च पीपल, दालचीनी, छोटी इलायचीके दाने, तेजपात, नागकेसर, पीपलामूल
चव्य, चित्रकमूल, बायविड्ग. हल्दी, दारुहल्दी, हाऊबेर, विधारा, पुष्कर मूल (मी
कूठ), अजवायन, लौंग, देवदारु, पुनर्नवाकी जड़, गोखरु, नीमकी अन्तर छाल, रास्न
सोवा, शतावर, कचूर, असगन्ध और कौंच बीज, इन २८ ओषधियोंका चूर्ण १-१ तोल
डालें। पश्चात् १२८ तोले शक्करकी चाशनी कर खोआ और चूर्ण मिला कर पाक बना लें।

मात्राः—४-४ तोले प्रातः सायं देते रहे।

उपयोगः—इसपाकके सेवनसे सर्व प्रकारके वातरोग, अपस्मार, उरःक्षत, गुल्म
उदररोग, वमन, प्लीहावृद्धि, वृषणवृद्धि, कृमि, कोष्टबद्धता, आनाह, शोथ, अग्निमान्
बलक्षय, हिक्का, श्वास, कास, अपतन्त्रक, धनुर्वात, अंतरायाम, पक्षाघात, अपतान
अर्दित, आक्षेपक, कुब्जवात, हनुग्रह, शिरोरोग, विश्वाची, गृध्रसी, खल्लीवात, पङ्गुवा
संधिवात, बधिरता और सम्पूर्ण प्रकारके शूलोंका अति जल्दी नाश होता है। यह पा
वातव्याधि रूप हाथीको सिंहके समान नाश करता है। एवं कफप्रकोपजनित विकारों
दूरकर बल और पुष्टि देता है। इस पाकका एक वर्ष तक सेवन करनेसे वात आ
सब रोग नष्ट होजाते हैं।

२४. एरण्डपाक (वातारिपाक)

बनावटः—अरण्डीके बीजकी गिरी (भीतरकी जिह्वी निकली हुई) ६४ तो
गोदुग्ध ५१२ तोले, घी ४० तोले, सोंठ, कालीमिर्च, पीपल, लौंग, छोटी इलायची
दाने, दालचीनी, तेजपात, नागकेसर, असगंध, सोंवा, रास्ना, षडगंधा (घुड़ बच
रेणुकबीज, शतावर, पुनर्नवाकी जड़, काली निसोत, खस, जावित्री, जायफल, लोहभस्म
अभ्रकभस्म २-२ तोले लें। पहले एरण्ड मज्जाको ४० तोले दूधमें भिगोकर शिला
बारीक पीसकर मक्खनके समान बना लेवें। तत्पश्चात् शेष दूधमें मिलाकर खोआ ब

ें। खोआ बन जानेपर घृतमें बादामी रंगका होने तब तक भूनें। इसके बाद उपरोक्त प्यादि औषधियोंका कपड़छान चूर्ण और धात्वादिकी भस्में मिलाकर खूब अच्छी तरह लालें। फिर ५२॥ सेर शक्कर लेकर गुल्छावट चाशनी बना, कुछ शीतल होने औषधियामिश्रित खोआ मिलाकर चक्कियाँ बना लें। लड्डू बनाना हो, तो गनी गोली बद्ध करें।

मात्रा —२ से ४ तोला या बलाबलके अनुसार प्रात कालको सेवन करें।

उपयोग —इस वातारि पाकके सेवनसे ८० प्रकारके वात विकार, ४० प्रकारके ररोग, अन्त्र वृद्धि २० प्रकारके प्रमेह, ६० प्रकारके नाडी व्रण, १८ जातिके कुष्ठ सब ारके क्षय, ५ प्रकारके पाण्डु, ५ प्रकारके श्वास, ४ प्रकारके ग्रहणी रोग, दृष्टि रोग, ग्रह और अनेक प्रकारके वातप्रकोपज विकार नष्ट होते हैं। यह पाक शुक्रल और ायन है।

२५. चोप-चीनी पाक।

बनावट —नयी चोपचीनी ४० तोलेके चूर्णको ४ सेर गोदुग्धमें पकाकर खोआ वें। फिर २०० तोले शक्करकी चाशनी मिलावें। साथमें छोटी इलायचीके दाने ४ न तथा लौंग, कपूर, दालचीनी, तेजपात नागकेशर, सोंठ, कालीमिर्च, पीपल, नारीके फल, जाविंत्री, मालतीकेफूल, कौंच, काकोली, कस्तूरी, सिंघाड़े, वंशलोचन, मासी, तेजबल, जायफल, नीलोफर विदारीकन्द, सफेद मूसली, शीतलमिर्च, गरी, इन २४ औषधियोंका कपड़छान चूर्ण दो दो तोले तथा ताम्रभस्म और भस्म दो दो तोले मिलाकर दो दो तोलेके लड्डू बना लेवें। (र० यो० सा०)

मात्रा —१-१ लड्डू दूधके साथ सेवन करे।

उपयोग —यह पाक सब प्रकारके वातव्याधि, अति दारुण्य आमवात, अपस्मार, माद, पक्षाघात, अपतानक, सब प्रकारके शिरोरोग, सन्धिपीड़ा, कटिग्रह, अरुचि, ाम, कास, श्वास, क्षय, धातुक्षीणता, बलक्षय, ओज क्षय और सब प्रकारके उपदंश उपद्रव आदिको नष्ट कर देहको सबल और तेजस्वी बनाता है। इस पाकके सेवन मयमें तेलवायु का सेवन नहीं करना चाहिये। दूध और मांस रस पथ्य हैं।

रक्तविकार और उपदंशके विषसे पीड़ितोंके विविध उपद्रव दूर कर शक्तिप्रदान के लिये यह पाक अति हितकारक है। इसका अनुभव श्री पं० राधाकृष्णजी द्विवेदीने क बार किया है।

२६. माजून कुचिला

विधि —शुद्धकुचिला २० तोले, कालीमिर्च, श्वेतमिर्च, रूमीमस्तगी, केशर, ा, दालचीनी, सफेद तोदरी, लाल तोदरी, चोपचीनी, शीतलमिर्च, आवला, दाने, अजवायन, सफेद चन्दन, पीपल, वंशलोचन, सफेद मुसली,

गावजवां, जायफल, अगर, शुद्ध बच्छनाग, उदबिलसां, तेजपात, जटामांसी, सौं सालममिश्री, कबाबा (तुम्बरू) ये २७ औषधियां १-१ तोला, सोना का वर्क औ चांदीका वर्क २-२ माशे तथा शहद सबसे ६ गुना लेवें। काष्ठादि औषधियोंको कूटव कपड़छान चूर्ण करें। फिर वर्क और शहद मिलाकर माजून बना लेवें।

(पं० गुरुशरणदासजी

मात्राः—२-२ माशे बकरी या गौके दूधके साथ या निवाये जलसे दिनमें २ ३ बार देवें।

उपयोगः—यह माजून सब प्रकारकी वातप्रकोपज वेदनाको नष्ट करता है। कलायखञ्ज, गृध्रसी, सर्वाङ्गवात, पार्श्ववेदना आदिमें पीड़ाको शमन करनेके लिये य प्रयोजित होता है। हृदयको सबल बनाता है। उदरवातका निवारण करता है औ पाचन शक्तिको बढाता है।

सूचनाः—इस माजूनमें बच्छनाग मिलाया है। वह वातहर और वेदनाशाम है। किन्तु वह उग्रविष होनेसे इस माजूनकी अधिक मात्रा नहीं देनी चाहिये।

यह माजून अति कड़वी है। इस हेतुसे शहदके बदलेमें चूर्णके समान शक्क की चासनी में मिलाकर २ २ रत्तीकी गोलियाँ बना सकते हैं। मात्रा २-२ गोली

२७. महामाष तैल

क्वाथः—उड़द ४ सेर (कपड़ेकी ढीली पोटलीमें बंधा हुआ), दशमूल १ सेर और बकरेका मांस १५० तोले (कपड़ेकी ढीली पोटलीमें बंधा हुआ), इन सबव ६४ सेर जलमें मिलाकर चतुर्थांश क्वाथ करें।

कल्कः—कौंचमूल, एरण्डमूल, सोवा, सैंधानमक, बिड़लवण, कालानमव जीवक, ऋषभक, मेदा, महामेदा, काकोली, क्षीरकाकोली, मुद्गपर्णी, मांसपर्ण जीवन्ती, मुलहठी, मजीठ, चव्य, चित्रकमूल, कायफल, सोंठ, कालीमिर्च, पीपल पीपलामूल, रास्ना, मुलहठी, सैंधानमक, देवदारु, गिलोय, कूठ, असगंध, बच औ कचूर, इन ३३ औषधियोंको २-२ तोले मिला जलमें पीसकर कल्क करें।

विधिः—क्वाथ, कल्क, तिलका तैल ४ सेर और दूध १६ सेर मिलाकर यथ विधि तैल पाक करें।

(भै० र०

उपयोगः—इस तैलके मर्दनसे पक्षाघात, अर्दित, बधिरता, हनुग्रह, कर्णशूल मन्यास्तम्भ, शिरःशूल, त्रिदोषज तिमिर रोग, हाथ, पैर, शिर और कण्ठके कम्प औ आक्षेप, कलायखञ्ज, पैर रह जाना, गृध्रसी और अवबाहुक आदि नाना प्रकारके वा रोग नष्ट होजाते हैं। इस तैलका व्यवहार, पान, बस्ति, अभ्यङ्ग, नस्य, कर्णपूरण औ अक्षिपूरण (नेत्रमें अञ्जन और नेत्रमें तैल भरना), इन सब प्रकारसे होता है।

२८. सहचरादि तैल

विधि —मूलसहित पियावासाका पचाग ४०० तोले, दशमूल ४०० तोले और शतावर २०० तोले लें। सबको जौकुट कर ८११२ तोले जलमें मिलाकर चतुर्थांश क्वाथ करें। फिर छान कर पुन चूल्हेपर चढ़ावें। उसमें रसम, भुने हुए नख, कूठ, चन्दन, छोटी इलायची, ब्राह्मी (जल नीम) प्रियङ्गु, नलिका (सुगंधित पानड़ी), खवाला, पत्थरफूल, रक्तचंदन, जटामासी, अगर, देवदारु, खुरासानी अजवायन, हींग, शिलारस और तगर, इन १६ औषधियोंका ४–४ तोलेका कल्क, ५१२ तोले दूध और ५१२ तोले तिल तेल मिलाकर मन्दाग्निसे सिद्ध करें। (अ० हृ०)

मात्रा —१ से ६ माशे तक दिनमें दो बार।

उपयोग —इस तैलका उपयोग उदर सेवन, नस्य, बस्ति और मालिश आदिके लिये होता है। यह तैल विविध प्रकारके कष्टसाध्य वात रोग, कम्प, आक्षेप, ऊरुस्तम्भ (अंग जकड़ जाना) मांस शोष-युक्त वात रोग, गुल्म, उन्माद, पीनस और योनि रोग आदिको दूर करता है।

व्रण, प्रसवकालमें दुर्लक्ष्य और दूषित आहारके सेवनसे विविध प्रकारके वाताक्षेप रोग उपस्थित होते हैं। किसी किसीको कटके बार बार आते रहते हैं। मलावरोध, ज्वर, घबराहट, कफप्रकोप, हड़फूटन आदि लक्षण उपस्थित होते हैं। उस विकारपर यह तैल पिलाया जाता है। इस तैलसे सत्वर लाभ पहुँचता है। इस तरह कम्प रोगपर भी महायोगराज गूगलके साथ इस तैलका सेवन कराने पर सत्वर गुण प्रगट होता है।

अति शीत लग जाने पर देहके विविध संधि स्थानोंमें जकड़ाहट आजाती है। योग्य उपचार न होने पर कुछ दिनके पश्चात् कलायखञ्ज (Loco Motor ataxia) उपस्थित होता है। फिर चलनेमें अति कष्ट होना, वायु सहन न होना, पेशाब गँदला और थोड़ा होना, कोष्ट बद्धता, घबराहट आदि लक्षण उपस्थित होते हैं। उस रोगपर इस सहचरादि तैलका पान कराया जाता है। जिससे कीटाणुनाश और आमविषका नाश होता है। एवं दिनमें २ बार आरोग्यवर्द्धनीका सेवन करानेसे पचनेन्द्रिय संस्थान निर्दोष होकर रोगवृद्धिमें सहायक विषकी उत्पत्तिका रोध हो जाता है। इस तरह १ २ मास तक चिकित्सा करने पर रोगी स्वस्थ हो जाता है। कितनेक चिकित्सक पियावासा, देवदारु और सोंठ के क्वाथके साथ इस तैलका सेवन कराते हैं।

कम्परोग पर सहचरादि तैल, महायोगराज गुग्गुलु और महावातविध्वंसन तीनों उपकारक हैं। किन्तु तीनोंका कार्य भिन्न भिन्न है। केवल वात विकृति हो, वातवाहिनियों में स्तम्भ, शोष और आक्षेप हो तथा आम और कफका संसर्ग अधिक न हो और स्नेहनकी आवश्यकता हो तो सहचरादि तैल देना चाहिये। अग्निमान्द्य और आम प्रकोप हो तो महायोगराजगूगल और स्वेद स्राव की आवश्यता हो तो महावातविध्वंसन दिया जाता है।

मानसिक आघात पहुँचनेसे वातप्रकोप बढजाता है, फिर किसी किसीको मस्तिष्कमें वातसंचय होता है, निद्रानाश, बेचैनी, कण्ठमें शुष्कता, क्षुधानाश, थकावट, मनकी अस्थिरता, मिर्च युक्त भोजन करने पर जिह्वा पर चटका लगना आदि लक्षण उपस्थित होते हैं। उस रोग पर सहचरादि तैल १-१ माशेका सुबह और रात्रिको कराने, नस्य देने तथा कानमें डालते रहनेसे विकार शमन होजाता है। यदि ऐसे आघातसे अर्दित रोग हो गया हो, एक ओरका नेत्र बन्द न होता हो, बोलने, थूकने और निगलने आदि में कष्ट पहुंचता हो, तो वे सब लक्षण भी इस तैलके मर्दन और सेवनसे दूर होजाते हैं।

२६. हिमसागर तैल

बनावटः—शतावरका रस, विदारीकन्दका रस, पक्के पेठेका रस आंवलोंका स्वरस, सेमलकी जड़का क्वाथ, गोखरू पञ्चाङ्ग का क्वाथ, नारियलका जल, तिल तैल, केलेके खम्भेका रस, ये ६ औषधियाँ २-२ सेर और दूध ८ सेर लेवें। कल्कके लिये रक्तचंदन, तगर, कूठ, मजीठ, धूपसरल, अगर, जटामांसी, मुरा (अभावमें तगर या कपूरकचरी) छरीला, मुलहठी, देवदारु, नख, हरड़, पूतिका (जुन्देबेदस्तर), पोईके पत्ते, कुन्दरु, नलिका (अभावमें महारुख की छाल), शतावर, लोध, नागरमोथा, दालचीनी, छोटी इलायचीके दाने, तेजपात, नागकेशर, लौंग, जावित्री, सौंफ, कचूर, सफेद चन्दन, गठिवन और कपूर, इन ३१ औषधियोंको ।।-।। तोले लेवें। सब औषधियोंको पीस, कल्क कर मिला मन्दाग्नि पर तैल सिद्ध करें। (भै० र०)

उपयोगः—यह तैल उच्च स्थान या वायुके वेगसे गिरने वाले, हाथी, घोड़ा, ऊँट और मकान परसे गिरने वाले, लँगड़े, पीठसे लाचार बने हुए, एक अङ्ग जिनका सूख गया हो, सब अङ्ग जिनके सूख गये हों, क्षत रोगी, क्षीणवीर्य वाले, अत्यन्त बढे हुए क्षयरोगी, हनुस्तम्भ रोगी, मन्यास्तम्भ वाले, दुर्बल, शोषरोगी, जिह्वा जिनकी बढ़ गई हो, मिन्मिनाकर बोलनेवाले, दाहसे अत्यन्त पीड़ित, क्षीणदेह वाले और वातरोगसे पीड़ित, इन सबके लिये अति हितावह है। जो रोग वातप्रकोपसे या पित्तप्रकोपसे उत्पन्न हुए हों, मस्तिष्कमें उत्पन्न विकार और शाखाश्रित रोग हों, ये सब इस तैलके प्रभावसे प्रशमन होजाते हैं।

जब वात रोगमें हाथ पैरोंमें दाह या सारे शरीरमें दाह हो, तब यह अति उपकारक होता है।

३०. पञ्चगुण तैल

विधिः—तिल तैल १ मनको कड़ाहीमें डाल गरम कर फिर शीतल करें। पश्चात् गूगल, राल, गंधाबिरोजा, शिलारस, मोम, आंवला, बहेड़ा, और हरड़, ये ८ ओषधियाँ ।।-।। सेर, नीमके पान और निर्गुण्डी २॥।-२॥ सेर लें। इनमेंसे त्रिफला, नीम और निर्गुण्डीका कल्क करें। फिर कल्क, तैल और ४ मन जल मिलाकर

मन्दाग्नि पर पाक करें। तैलसिद्ध होने पर कड़ाहीको उतार, तुरन्त तैलको छान १। सेर कपूरका चूर्ण मिला देवें। (कविराज प्रतापसिंहजी)

उपयोग —यह तैल सब प्रकारके वेदनाप्रधान वातव्याधिपर मालिश करनेके लिये अति लाभदायक है। बहुत वर्षोंका कविराजजीका परीक्षित है। चोट लगनेपर इसके प्रयोगसे दर्द और शोथ दूर होजाते हैं।

इस तेलका उपयोग व्रणरोपणार्थ और पीड़ाशमनार्थ, दो प्रकारसे होता है। अतः हम इस तैल मेंसे, आधा तैल व्रणरोपणार्थ रख लेते हैं। शेष आधे तेलमें शीतल होनेपर नीलगिरी तैल और तार्पिन तैल १।१। सेर मिला लेते हैं। नीलगिरी (यूकेलिप्टस् ऑयल) और तार्पिन तैल मिलानेसे इस तैलकी पीड़ाशामक शक्तिकी वृद्धि हो जाती है।

वक्तव्य —इस पीड़ाशामक तेलके बनानेमें २० सेर तेलमें ५ तोले अफीम बारीक पीसकर डाल देवें और बर्तनको बंदकर १८ दिन तक धूपमें रखकर बादमें उपयोगमें लेवें तो पीड़ाशामक शक्ति बहुत बढ़ जाती है।

व्रणरोपणार्थ इसका उपयोग करनेके पहले व्रणोंको नीमके क्वाथसे या त्रिफलाके क्वाथसे धो, पोंछकर फिर इस तैलमें भिगोई हुई पट्टी रख, ऊपर नागरवेलका पान रखकर बांध देते हैं। (श्री राज वैद्य प० रामचन्द्रजी)

३१. रसोन सुरा

विधि —तेज पुरानी शराब ८ सेर, छिलके और अङ्कुरको निकाल, पीसकर कल्ककी हुई लहशुन ७॥ सेर तथा पीपल, पीपलामूल, जीरा, मीठा कूठ, चित्रकमूल, सोंठ, कालीमिर्च और चव्य, इन ८ औषधियोंका चूर्ण १।१। तोला लें। सबको मिलाकर अमृतबानमें भर दें। एक सप्ताहके पश्चात् छानकर बोतलों में भरलें।

(च० द०)

मात्रा —इसमेंसे १ माशेसे १ तोले तक प्रकृति और अभ्यासके अनुसार जलके साथ देवें।

उपयोग —यह सुरा वातविकार, आमवात, कृमिरोग, विसूचिका, कुष्ठ, क्षय, आनाह, गुल्म अर्श, पाण्डु, प्लीहा और प्रमेह आदिको दूर करती है, तथा अग्निको प्रदीप्त करती है।

३२. मल्लातकासव

विधि —टोपीरहित भिलावा १ सेर, लौंग, सोंठ, कालीमिर्च, पीपल २॥-२॥ तोले, दालचीनी, तेजपात, नागकेशर, छोटी इलायचीके दाने ५-५ तोले, धायके फूल ४० तोले, गुड़ १० सेर और उबाला हुआ जल २५ सेर लेवें। भिलावे और अन्य औषधियोंका जौकुट चूर्ण करें। फिर जल गुड़ और सब औषधियां मिला, अमृतबानमें

भरकर मुखमुद्रा करें। १॥ मास बाद आसव परिपक्व होनेपर निकालकर छान लेवें।

मात्राः—१-१ औंस दिनमें २ बार समान जलके साथ।

उपयोगः—भल्लातकासव सर्व प्रकारके वातरोग, शुष्कार्श, उदरकृमि, यकृत-विकृति, प्लीहावृद्धि, अग्निमान्द्य, अपचन, अफारा, उदरवात, उदरशूल, कफकास, श्वासरोग, कुष्ठ और वातरक्त आदि रोगोंको दूर करता है। यह वात और कफप्रधान रोगोंमें उपकारक है।

सूचनाः—अति धूपमें घूमनेवाले, पित्तप्रकोपसे पीड़ित और शुष्क कासवालों-को भल्लातक प्रधान औषधि नहीं दी जाती। एवं ग्रीष्म ऋतुमें इसका उपयोग नहीं करना चाहिये।

३३. वातशूलान्तक मर्दन

विधिः—स्नान करनेका साबुन ४ औंस कपूर २ औंस और तार्पिन तैल २४ औंस लें। इन सबको मिलालें।

उपयोगः—इस वातशूलान्तक मर्दनकी कटिशूल और इतर भागमें वातजनित वेदनापर मालिश करनेसे तत्काल पीड़ा शमन हो जाती है।

३४. वातशूलान्तक योग

(१) रेवतचीनी और कुंदरुको समभाग मिलाकर बारीक चूर्ण करें। इसमेंसे थोड़े चूर्णको जलमें मिला गरमकर संधि पीड़ा, शूल, और संधिशोथपर लेप करनेसे पीड़ा सत्वर निवृत्त हो जाती है।

(२) शिलाजीत १ तोला, एलुआ ६ माशे, कपूर ३ माशे, अफीम १॥ माशे और एक अण्डेकी जर्दीको मिला निवायाकर लेप लगा देनेसे वात प्रकोपज अति भयंकर शूल, जीर्ण वेदना और सब प्रकारके दर्द दूर होते हैं।

(पं० रोशनलाल जी शर्मा आयुर्वेदाचार्य)

(३) कुन्दरू गोंद २० तोले, आमाहल्दी, एलवा, मेथी और हालों ५-५ तोले तथा सज्जीखार, हीराबोल, मैदालकड़ी और डीकामाली २॥-२॥ तोले मिला कूटकर चूर्ण करलेवें। आवश्यकता अनुसार इस चूर्णको जलके साथ पीस गरमकर चोटसे आई हुई सूजनपर मोटा मोटा लेपकर देवें। फिर रुई चिपकाकर बांध देनेसे वेदना सह शोथ शमन हो जाता है।

३५. पार्श्वशूलहर मलहम

विधिः—सरसोंका तैल २० तोले और देशी मोम ५ तोले मिलाकर गरम करें। फिर कड़ाहीको नीचे उतार हिंगुलका चूर्ण १। तोला मिलाकर लोहेकी मूसलीसे घोटें। कुछ शीतल हो जानेपर तार्पिन तैल १० तोले, दालचीनी और नीलगिरीका

तैल २॥-२॥ तोले और जमालगोटाका तैल (Croton Oil) १ ड्राम डाल अच्छी तरह घोट लेनेसे लाल रंगका मलहम बन जाता है। उसे चौड़े मुँहकी शीशीमें भर लेवें।

उपयोग —इसमेंसे थोड़ा मलहम निकाल शूल स्थानपर मालिश करें। फिर ऊपर नमक या बालुकाकी पोटलीसे सेक करनेसे शूल शमन होजाता है।

सूचना —इसके हाथ आँखोंको न लग जाय, यह अवश्य सम्हालें।

३६ धनुर्वातहर योग

विधि —काली तुलसी, ताजा लहसुन, अदरख, प्याज और पोदीनाको मिला कूटकर २-२ तोले स्वरस निकालर १-१ घण्टे पर ३ बार पिलानेसे धनुर्वातका आक्षेप तुरन्त शमन हो जाता है।

गोघृत गरम कर इस स्वरसको छौंक दें, फिर ४-५ कालीमिर्च खाकर ऊपर से घृतमिश्रित यह स्वरस पिलाना, यह मृगाक्के समान आशु गुणकारी एवं बलदायक है। (राधाकृष्ण वैद्य)

३७. संधिवातहर योग

विधि —५ सेर या अधिक करेली पञ्चाङ्गको कूटकर हाडीमें भरें और मुख-पर कपड़ा बाँध, ऊपर औंधा भगोना रख, सम्हाल पूर्वक सन्धि स्थानमें मुद्रा करें। फिर भगोनासह हाडीको लगभग पौनी जमीनमें दबावें। भगोनेको नीचे और हाडीके तल भागको ऊपर रखें। फिर तीन घण्टे तक ऊपर अग्नि जलानेसे अर्क भगोनेमें गिरेगा। इस अर्कको छानकर बोतलमें भरलेवे। इसमेंसे ।।-।। तोला (आध आध औंस) अर्क दिनमें २ समय पिलाते रहनेसे सधिवातकी पीड़ा दूर होती है। उदरपीड़ा वातप्रकोप, अफारा और कफप्रकोपमें भी यह अर्क अच्छा लाभ पहुँचाता है।

३८. अर्दितहर योग

विधि —सरसोंके तेलमें उड़दके बड़े बना मक्खनके साथ खिलाते रहनेपर अति बढ़ा हुआ तीक्ष्ण अर्दित रोग भी एक सप्ताहमें शमन हो जाता है। नये रोगके लिये यह उत्तम उपाय है। रोग पुराना होने पर उतना लाभ नहीं पहुंचता। अत्यधिक बड़े खानेसे बद्धकोष्ट होकर या अपाचित आम अन्त्रमें शेष रहकर नया उपद्रव उपस्थित करता है। अत अन्त्रको पहले एरण्ड तेलसे शुद्ध कर लेना चाहिये और पचन शक्तिके अनुसार बड़े खाने चाहिये। एव बड़े पचन होकर फिर क्षुधा न लगे, तब तक कुछ भी नहीं खाना चाहिये।

३९ सूची मर्दन

(Linimentum Belladonnae)

विधि —लिक्विड एक्स्ट्रैक्ट बेलेडोना १० औंस, कपूर १ औंस, वाष्पजल २ औंस और अल्कोहाल २० औंस तक लेवें। पहले कपूरको ६ औंस आलकोहालमें

द्रव करें। फिर सबको मिलाकर २०. औंस लिनिमेण्ट (मर्दन) तैयार करें। इसे २४ घण्टे रखकर फिर छान लेवें।

उपयोगः—इस मर्दनका उपयोग वेदनाके निवारणार्थ किया जाता है। वातज शूल और वेदनायुक्त रोगोंमें यह महोपकारक औषध है। गृध्रसी आदि वातरोगोंपर मर्दन करनेसे वेदनाको दूर कर देता है। हृदयशूलमें हृदयपर भी मर्दन किया जाता है। राजयक्ष्मा रोगमें वक्षः प्रदेशकी मांसपेशियोंमें उग्रता तथा त्वचामें स्पर्श शक्तिकी अधिकता होनेपर इस मर्दनका उपयोग किया जाता है। एवं प्लास्तर भी लगाया जाता है। स्तनोंमें वेदना होनेपर इसकी मालिश करनेसे सत्वर लाभ हो जाता है।

४०. तार्पिन मर्दन

(Linimentum Terebinthinae)

तार्पिन तैल ६५ औंस, कपूर ५ औंस, मृदु साबुन (Soft soap) ७॥ औंस और बाष्प जल २२॥ औंस लें। तार्पिन तैलमें कपूर मिलावें। साबुनको जलमें मिलावें। फिर दोनोंको मिला घोटकर मर्दन बना लेवें। १०० भागमें कम हो उतना जल मिला लेवें।

उपयोगः—यह मर्दन उत्तेजक, प्रत्युग्रतासाधक (Counterirrtant) और चर्मप्रदाहक (Rubefacient) है। चिरकारी वातरोग, गृध्रसीशूल कटिशूल, जीर्ण आमवात, संधिवात और वातरक्तमें इस मर्दनका उपयोग होता है। सूतिका रोगमें आक्षेप आनेपर भी इसकी मालिश करायी जाती है।

यह मर्दन प्रत्युग्रता साधक होनेसे जिस स्थान पर मर्दन किया जायगा, उसके सम्बन्धवाले इतर भागपर इसका फल प्रकाशित होता है। प्रत्युग्रतासाधक क्रियाका विशेष विचार औषधगुणधर्म विवेचन पृष्ठ २७०।२७२ में किया है।

४१. रम्यतैल

विधिः—१। सेर कुचिलेके मोटे मोटे टुकड़ेको २॥ सेर जलमें ७ दिन भिगो देवें। दिनमें सूर्यके तापमें रखें। फिर उसे पीतलकी, कलई की हुई कड़ाहीमें १० सेर तिल तैलके साथ मिलाकर चूल्हेपर चढावें। अग्नि अति मन्द देवें। जलका शोषण होकर तैल लाल रंगका होजाने पर कड़ाहीको उतारकर तुरन्त तैल निकाल लेवें।

उपयोगः—रम्य तैलका उपयोग अर्दित आदि वातरोग, शूल और पक्षाघात आदि रोगोंमें मर्दन करनेके लिए किया जाता है।

(२०) आमवात

१ बृहत् सिंहनाद गुग्गुलु

बनावट —त्रिफलाके क्वाथसे शुद्ध किया हुआ गूगल ६४ तोलेको सरसोंका तैल मिला मिलाकर कूटें। कूट कूट कर तैल ६४ तोले मिला देवें। फिर सोंठ, कालीमिर्च, पीपल, हरड, बहेड़ा, आवला, नागरमोथा, वायविडंग, देवदारु, गिलोय, चित्रकमूल, निसोत, दन्तीमूल, चव्य, जिमींकंद, मानकन्द, शुद्धपारद और शुद्ध गन्धक, इन १८ औषधियोंका कपड़छान चूर्ण ४–४ तोले तथा १० तोले जमालगोटेके बीजोंकी शुद्ध मींगीका चूर्ण मिला, कूट त्रिफला क्वाथ में १२ घण्टे खरल कर २–२ रत्तीकी गोलिया बना लेवें।

वक्तव्य —मूलपाठमें १००० जमालगोटेकी मींगी लिखी है। उतनी वर्तमानमें सहन नहीं हो सकेगी, ऐसा मानकर मात्रा कम की है। पारद और गन्धकको मिला कज्जली कर फिर प्रयोगमें डालना चाहिये। (भै० र० के आधार से)

मात्रा —१ से ४ गोली प्रात काल जलके साथ देवें।

उपयोग —इस रसके सेवनसे कोष्ठबद्धतासह आमवात दूर होता है। आमवातके दोषको बाहर फेंकने और जलानेके लिये बहुत लाभदायक औषधि है। तीव्रविकारमें यह विशेष हितकारक है। जीर्ण विकारमें कोष्ठबद्धता वाले रोगियोंको कम मात्रामें प्रात काल, आवश्यकता हो तबतक देते रहना चाहिये।

२ अश्वगन्धादि गुग्गुलु

विधि —असगध और शुद्ध गूगल ३०–३० तोले, एरण्डबीज छिलके और अन्तर्जिह्वारहित १५ तोले, सज्जीखार (सोडा बाई कार्ब) और उसारेरेवन १०–१० तोले और सोंठ ५ तोले लेवें। गूगलको एरण्ड तैलमें मिलाकर कूटें। फिर एरण्ड गिरीका कल्क मिलावें। पश्चात् शेष औषधियोंका कपड़छान चूर्ण थोड़ा थोड़ा डालकर कूटें और सबको एक जीव करके २-२ रत्तीकी गोलिया बना लेवें।

मात्रा —१ से ३ गोली दिनमें २ बार घी मक्खन या निवाये जलसे देवें।

सूचना —जिनको पहले पेचिश हो गया हो, उनको मात्रा पहले बहुत कम देवें या न देवें। एव सगर्भाको भी यह औषधि नहीं देनी चाहिये।

उपयोग —यह अश्वगन्धादिगुग्गुलु आमवातको दूर करनेके लिए विशेष हितकर है। नूतन अवस्थाओंपर प्रयुक्त होता है। एव जीर्ण अवस्थामें भी मलावरोध होकर दर्द उठनेपर दिया जाता है। यह मलावरोधसह दर्दको सत्वर दूर करता है।

आमवात रोगका विष धातुओंमें लीन हो जानेपर बार बार आजीवन दुःख पहुँचाता है। वर्षाऋतुमें या अपचन होनेपर आक्रमण करता है। मन्द ज्वर, मलावरोध,

रात्रिको स्वेद आना, पीड़ास्थान बदलते रहना आदि लक्षण प्रतीत होते हैं। ऐसे रोगियोंको पूर्व रूपका भास होनेपर यदि इस गूगलका सेवन कराया जाय, तो रोगाक्रमणका दमन हो जाता है।

अश्वगन्धादि गुग्गुलुमें उसारेरेवन (Cambogia) मिलाया है, वह गार्सिनिया हैनबुरई (Garcinia Hanburyi) का गोंद है। चीनसे यहां आता है। यह तीव्र विरेचन है मात्रा १ से २॥ रत्तीकी है। वह तत्काल उदरशुद्धि कराकर, मल, कृमि, कीटाणु और सेन्द्रिय विषको बाहर फेंक देता है। इस हेतुसे आमवातज वेदनाका दमन हो जाता है।

यद्यपि आमवातपर बृहत् सिंहनाद गुग्गुलुकी योजना उदरशुद्धिके लिये होती है तथापि उसमें जमालगोटा है। जिनको जमालगोटा सहन नहीं होता या जो जमालगोटा के सेवनके अधिकारी नहीं हैं। उनको उदरशोधनार्थ अश्वगंधा गुग्गुलु दिया जाता है।

जिनको विरेचन द्रव्य सहन न हो सके या अन्त्रशुद्ध हैं उनको उक्त दोनों औषधियां देनेकी आवश्यकता नहीं है। उनको ज्वर हो तो वातगजेन्द्रसिंह और ज्वर न हो तो आमवातेश्वर देना चाहिये।

आमवातके अतिरिक्त, उदरवात, उदरकृमि और उदरशूलपर भी उदरशोधनार्थ यह दिया जाता है।

३. आमवातेश्वर रस

विधिः—शुद्ध गन्धक और ताम्रभस्म २-२ तोले, शुद्ध पारद और लोहभस्म १-१ तोला लेवें। पहले कज्जली बनाकर फिर भस्म मिलावें। पश्चात् क्रमशः एरंड पत्रोंके रसकी ७ भावना दें। पश्चात् पञ्चकोल (पीपल, पीपलामूल, चव्य, चित्रक, सोंठ) के क्वाथकी २० भावना देकर सूर्यके तापमें बार बार सुखावें। इसी तरह गिलोय स्वरससे १० भावना दें। तत्पश्चात् सब चूर्णके समान सोहागेका फूला, सोहागेसे आधा आधा विडलवण, कालीमिर्च और इमलीका क्षार, दन्तीमूल १ तोला, सोंठ, कालीमिर्च, पीपल, हरड़, बहेड़ा, आंवला और लौंग, ये ७ औषधियां ६-६ माशे मिलाकर मर्दन कर लेवें। (र० यो० सा०)

मात्राः—२ से ४ रत्ती दिनमें दो बार २-३ माशे मक्खन या घीमें मिलाकर देवें। फिर ऊपर निर्गुण्डीका रस या एरंडमूलका क्वाथ पिलावें।

स्वानुभव—आमवात रोगमें महारास्नादि क्वाथसे आश्चर्यप्रद प्रभाव देखा गया है। अदरख स्वरसमें इसकी १—२ रत्तीकी मात्रा लेकर ऊपर क्वाथ पिलाना। मूत्रकी कमी होने पर महारास्नादि कषायमें २ से ६ रत्ती तक यवक्षार मिलाकर पिलाने से ३-४ मात्रामें ही लाभ होता है। (राधाकृष्ण वैद्य)

अनुपानः—अजीर्णमें नीबू रस या सैंधानमक मिश्रित मट्ठा। गुल्ममें सजीक्षार

और घी अथवा सुहिंजनेकी छालका स्वरस। आध्मानमें भूनीहींग और घी। उदररोग और शोथ पर गोमूत्र या कुटकीका चूर्ण। मेदोवृद्धिमें शहद मिश्रित जल और पाण्डुरोगमें आवले और पीपलका चूर्ण अनुपान रूपसे मिला दें। अथवा रोगनाशक और अनुपान-की योजना करें। यह रस रोगनाशक अनुपानसे सर्वथा हितकारी है।

उपयोग —यह आमवातेश्वर रस विष्णु भगवान्‌ने निर्माण किया है। यह रस अत्यन्त अग्निप्रदीपक और आमवातको सम्पूर्ण उपद्रवसह नष्ट करने वाला है। स्थूल (मेद वृद्धिवाले) मनुष्योंको कृश और कृश मनुष्योंको स्थूल (मोटा और सबल) बनाता है। उचित अनुपानोंके साथ योजना करनेपर यह रस पचन संस्थानकी विकृतिसे उत्पन्न समस्त व्याधियोंको नष्टकर देता है। यह रस साध्य और असाध्य, तीव्र और जीर्ण दारुण आमवातको बहुत जल्दी नाश करता है।

इस रसके सेवन करनेवालोंको (जीर्ण रोगमें ज्वर न होनेपर) गुरु और कामोत्तेजक अन्नपान, दूध, मांसरस आदि हितकारक हैं। भोजन खूब पेटभर करना चाहिये। चरपरे, खट्टे और कड़वे रसको छोड़कर भोजन करें। (आमप्रकोपसे पीड़ित और आम-वातके रोगीको विशेषतः मधुरपदार्थका त्याग करना चाहिये) भोजन किया हुआ सत्वर पचन होजाता है। अग्निको प्रदीप्त करनेके लिये इसके समान दूसरी औषधि नहीं है। एवं यह गुल्म, अर्श, ग्रहणी, शोथ, पाण्डु और उदर रोग आदिका निवारण करता है।

यह रस क्षार-लवण प्रधान होनेसे आमाशयरसका स्राव बहुत कराता है एवं ताम्र-पारद योगसे यकृत्पित्तका स्राव भी अधिक कराता है। इस हेतुसे अग्निप्रदीप्त होती है, तथा मंदाग्नि, आमवृद्धि, सेन्द्रियविष और कीटाणु आदिसे उत्पन्न समस्त रोग समूह जलकर नष्ट होजाते हैं।

आयुर्वेदके मतानुसार विरुद्ध आहार-विहार आदिसे उत्पन्न आमविष जब धमनियोंमें चारों ओर फैलता है तब आमवातकी उत्पत्ति होती है। डाक्टरी मतानुसार आमवात कीटाणु जन्य है। कीटाणुजन्य होनेपर भी एक प्रकारके विषकी उत्पत्ति तो माननी ही पड़ती है। उस विषको आयुर्वेदने आमविष संज्ञा दी है। इस आमविषको जलानेका कार्य इस रस द्वारा उत्तम रूपसे होता है।

किन्तु आमवातकी तीव्रावस्थामें ज्वर १०२° से १०६° डिग्री तक रहता हो, बिच्छूके काटनेके समान स्थान-स्थानपर पीड़ा होती हो सांधों सांधोंमें भयंकर दर्द होता हो प्रस्वेद अधिक आता हो, पेशाब पीले-लाल रंगका और बहुत कम होता हो, तथा ज्वरवृद्धिके हेतुसे प्रलाप आदि लक्षण उपस्थित हुए हों, ऐसी अवस्थामें हो सके, उतने अधिक अंशमें विषको बाहर फेंकने और जलाने वाली तथा पीड़ाशामक गुण युक्त विरेचन प्रधान औषधि देनी चाहिये। ऐसी तीव्रावस्थामें बृहत् सिंहनाद गुग्गुलु अथवा आमवातप्रमथिनि (रसतंत्रसार प्रथम खण्ड) निसोतके क्वाथके साथ दी जाती है।

उत्तान विकार नष्ट हो जानेके पश्चात् संधिस्थानोंमें लीन दोषको जलाने वाली

तथा नूतन दोषोत्पत्तिको रोकने वाली अग्निप्रदीपक ओषधिकी आवश्यकता होनेपर यह रस हितकारक है। अतः आमवातेश्वर रस जीर्णावस्थामें अधिक उपयोगी होता है। इस रसका कार्य आमाशय और अन्त्रमें प्रमुख रूपसे तथा रक्त और रक्तवाहिनियोंपर गौण रूपसे होता है।

अग्नि मन्द होनेपर उत्पन्न विविध प्रकारके रोग अजीर्ण, गुल्म, आध्मान, उदर रोग, शोथ, मेदोवृद्धि, पाण्डु आदि सब अग्निमान्द्य रूप हेतु नष्ट होनेसे निवृत्त हो जाते हैं। अतः उन सब रोगोंपर रोगानुसार अनुपानके साथ आमवातेश्वरका सेवन करानेसे लाभ होजाता है।

४. वातगजेन्द्रसिंह रस

विधिः—अभ्रक भस्म, लोह भस्म, शुद्ध पारद, शुद्ध गन्धक, ताम्रभस्म, नागभस्म, सोहागेका फूला, दूधसे भली भांति शुद्ध किया हुआ बच्छनाग, सैंधानमक, लौंग, भूनी हींग और जायफल, ये १२ औषधियां १–१ तोला तथा त्रिसुगन्ध (दालचीनी, तेजपात और छोटी इलायची), त्रिफला (हरड़, बहेड़ा, आँवला) और जीरा, ये ७ औषधियां ६–६ माशे लें। पहले पारद, गन्धक मिलाकर कज्जली करें। फिर भस्म, बच्छनाग, सोहागेका फूला और शेष औषधियोंका कपड़छान चूर्ण क्रमशः मिला घी कुंवारके रसमें ३ दिन खरल करके १–१ रत्तीकी गोलियां बना लेवें। (भै० र०)

मात्राः—१ से २ गोली दिनमें दोबार दूध या रोगानुसार अनुपानके साथ।

उपयोगः—यह वातगजेन्द्रसिंह समस्त प्रकारके वातरोगके नाशके निमित्त कहा है। यह रसायन ८० प्रकारके वात रोगों, ४० प्रकारके पित्त रोगों तथा २० प्रकारके श्लेष्म रोगोंको नष्ट करता है। अभिघातजन्य क्षीणता, अर्धाङ्गमें आई हुई क्षीणता, किसी व्याधिसे उत्पन्न अशक्ति, वृद्धावस्थाके हेतुसे आई हुई निर्बलता, अधिक स्त्री समागमजनित दुर्बलता, इन सबको यह वातगजेन्द्रसिंह दूर करता है। क्षीणेन्द्रिय, नष्टवीर्य और अग्निमान्द्यवाले रोगियोंके लिये यह रस वृष्य, ओजवर्धक, बल्य और रसायन रूप है। खञ्जरोगी, पंगु, कुब्ज और कृश रोगियोंके मांसको बढ़ाता है। यह रस स्वस्थ मनुष्यको सुख देता है। अर्थात् मानसिक प्रसन्नता प्रदान करता है। बलका ह्रास नहीं होने देता और रोगोत्पत्तिका भय नहीं रहता। एवं यह रस रोगी मनुष्योंको रोगसे मुक्तकर देता है। यह वातगजेन्द्रसिंह सम्पूर्ण रोगोंका विनाशक है।

यह रस वातप्रकोपशामक, अन्त्रशोधक, शक्तिवर्धक और अग्निप्रदीपक है। महावातविध्वंसन और इस वातगजेन्द्रसिंहकी मुख्य औषधियां समान हैं। इसमें बच्छनाग कम मिलाया है और भावना अन्त्रदोष शोधन कार्यके निमित्त केवल घीकुंवारकी दी है। इस हेतुसे महावातविध्वंसन तथा इसके कार्य और अधिकारमें अन्तर होजाता है।

महावातविध्वंसनका कार्य वातनाड़ियों और रक्तवाहिनियों पर प्रधान रूपसे होता है, तथा उसमें बच्छनागका परिमाण अत्यधिक होनेसे उसका उपयोग निर्बल

हृदयवाले आमवातके रोगीपर नहीं होता । कारण आमवातमें प्राय हृदयपर आघात पहुँचता है और वत्सनाग भी हृदयकी शिथिलता लाता है । यह दोष इस रसमें नहीं है । इस रसमें वत्सनाग वातविध्वंसनकी अपेक्षा अति न्यून मात्रामें है तथा लोह-भस्म, अभ्रकभस्म आदि हृदयपौष्टिक औषधियोंका मिश्रण होनेसे यह आमवातपर निर्भयतापूर्वक व्यवहृत होता है । मूल ग्रन्थकारने इस रसायनको आमवाताधिकारमें ही लिखा है ।

आमवातकी तीव्रावस्थामें ज्वर रहता है । कभी कभी ज्वर १०२° से १०६° डिग्री तक बढ़ जाता है । ऐसे समय पर हृदयको बाधा न पहुँचाते हुए रस-रक्तादि धातुओंमें लीन मलको जलाकर ज्वरको उतारना चाहिये और औषधि विरेचनके साथ देनी चाहिये । तीव्रप्रकोपमें दोष उत्तान रहनेसे उसे विरेचन द्वारा बाहर निकालना पड़ता है । अत ऐसी अवस्थामें इस रसके साथ सौंठके क्वाथसह एरण्ड तैल या निसोतका क्वाथ देना चाहिये । एव रोगीको केवल दूधपर या हलके पेयपर रखना चाहिये ।

जीर्ण विकारमें रस-रक्तादि धातुओंके भीतर लीन हुए आमविषको जलाकर रक्तप्रसादन करना और पचन क्रियाको बढ़ाना, ये दो कार्य मुख्य रहते हैं । ये दो कार्य होनेपर विकार दूर होता है और शक्ति बढ़ जाती है । मूल प्रयोगकारने इस अवस्थामें अनुपान रूपसे दूध देनेका कहा है, किन्तु कोष्ठबद्धता रहती हो, तो त्रिफला क्वाथ या अन्य अनुलोमन और पाचन अनुपान की योजना करनी चाहिये ।

आमवातके अतिरिक्त आमवृद्धि सह उत्पन्न वातरोगकी नूतनावस्थामें महावात-विध्वसन रस जिनको न देसके, उन रोगियोंको वातगजेन्द्रसिंह रास्ना अर्क या अन्य वातशामक अनुपानके साथ दिया जाता है ।

जीर्ण आमवातमें आमवातेश्वर उपयोगी है । परन्तु उसमें क्षार अधिक है तथा पचकोलके क्वाथकी २० भावना देनेसे आमाशय और अन्त्रमें पचनक्रिया बढाना और सधिस्थानोंमें सचित दोषको जलाना, इन क्रियाओंकी जहाँ आवश्यकता हो, वहाँ आमवातेश्वर हितावह है, किन्तु देहकी शक्ति बढाना, पचन क्रियाका सरक्षण करना, दोषकी उत्पतिको रोकना, उत्पन्न दोषको अधिक पित्त न बढ़ाते हुए जलाना इष्ट हो, अथवा पित्तप्रधान प्रकृतिवालोंकी चिकित्सा करनी हो, वहाँ वातगजेन्द्रसिंह प्रयुक्त किया जाता है । अनेक रोगियोंसे तीव्र क्षारप्रधान औषध सहन नहीं होता । क्षारकी तीव्रताके हेतुसे रक्तस्राव होने लगता है, उनके लिये यह वातगजेन्द्रसिंह अधिक हितकारक है । रक्तमें रक्ताणु वृद्धि, मास और वातसस्थानके बलकी वृद्धि, ये सब कार्य आमवातेश्वरकी अपेक्षा वातगजेन्द्रसिंहसे विशेषतर होते हैं ।

यदि अन्त्र-विष, कृमि, आम और मलसे पूर्ण हो, कोष्ठबद्धता हो, तो अनुपान दूध नहीं देना चाहिये । एरण्ड तैल या निसोतका क्वाथ आदि सशोधक अनुपान देना

चाहिये। वातप्रकोपमें कोष्ठ शुद्ध हो और तीव्र प्रकोप हो, तो रास्नादि अर्क या निर्गुण्डी स्वरस अनुपान रूपसे देना चाहिये।

इस रसमें बच्छनाग मिला है। बच्छनाग मूत्र और प्रस्वेद द्वारा विषको बाहर निकालता है, तथा ज्वरका शमन करता है, वेदनाको तत्काल दबाता है। एवं शक्तिको बढ़ाता है। बच्छनागमें उष्ण, वातवाहिनियोंके लिये साक्षात् सम्बन्धसे शामक, धमनियोंके लिये परम्परागत शामक, वेदना निवारक, स्पर्शहारक, स्वेदल और मूत्रल गुण हैं। यदि इसकी मात्रा शक्ति से अधिक होजाय, तो हृदय और रक्तवाहिनियोंको हानि पहुँचाता है। अतः बच्छनागमिश्रित औषधियोंकी मात्रा सर्वदा कम देनी चाहिये।

तीव्र आमवातमें आमवातप्रमथिनि वटी भी हितकारक है, उसमें सोरा और अर्कमूलत्वक् आनेसे रक्तस्थ विषको बाहर निकालनेमें विशेष हितकारक है; तथापि ज्वर की प्रधानता होनेपर इस रसमें ज्वरघ्न औषध (बच्छनाग) की योग्य मात्रा और योग्य मिश्रण सह योजना की है। अतः ज्वरको दूर करनेके लिये इसका उपयोग किया जाता है।

VP

५. विण्टरग्रीन मर्दन

(Liniment Methylis Salicylatis)

विधिः—पिपरमेण्टका तैल ५ भाग, नीलगिरी तैल १० भाग, कर्पूरतैल २५ भाग और शेष (६० भाग) विण्टरग्रीन तैल मिलाकर १०० भाग पूरा करें।

उपयोगः—इस औषधिकी मालिश करनेपर आमवातिक शूलका तुरन्त शमन होता है। जिन जिन संधिस्थानों पर या अन्यत्र वातनाडीमें वेदना हो, वहांपर भी मालिश करके गरम कपड़ा बांध देनेसे वेदनाका निवारण होता है।

६. वातशूलान्तक मलहम

(Ung. Methylis Salicylatis)

विधि—विण्टरग्रीन तैल ५० भाग, पिपरमेंटके फूल १० भाग, नीलगिरी तैल २॥ भाग, काजुपुटी तैल २॥ भाग, सफेदमोम (White bees'wax) २० भाग और ऊनकी चर्बि (Lanoline) १५ भाग लें। पिपरमेण्टके फूलको विण्टरग्रीन में मिलावें मोमको गरम करके चर्बि मिलालेवें। उष्णता कम होने पर और औषधियां मिलाकर बोतलोंमें भरलेवें।

उपयोगः—यह बाम आमवातिक शूल, गृध्रसीशूल, कटिशूल, किसी भी स्थानकी तीक्ष्ण पीडा आदि विकारोंपर तत्काल लाभ पहुँचाता है। इनके अतिरिक्त तीव्र शिरदर्द, किसी जन्तुके काटनेसे उत्पन्न शोथ एवं भीतर के विकारसे उत्पन्न सांधाओंकी सूजन और अकड़ाहट, इन सबपर सत्वर लाभ पहुँचाता है। इसकी

साधारण १-२ मिनिट तक मालिश करनेसे त्वचा पर चुन चुनाहट होती है और थोड़े ही समयमें प्रस्वेद आकर विकार शमन होजाता है।

यह 'बाम' नीचे लिखे हुए वातान्तक बाम और रसतन्त्रसार प्रथम खण्डमें दिये हुए शिर:शूलान्तक बामकी अपेक्षा अधिक तेज है। इस बाम वाला हाथ आखको लगजाने पर जलन होती है। एव कोमल त्वचापर लगानेसे वह लाल होजाती है। अत सम्हालना चाहिये।

इस बाममें वेसलीनके स्थानपर ऊनकी चर्बी (लेनोलीन) मिलायी है। इसलिये औषधद्रव्यका प्रवेश त्वचाके भीतर सत्वर होता है और उस भागको अधिक मुलायम रखता है।

७ वातान्तक बाम

विधि —पीपरमेण्टके फूल ३॥। तोले, विण्टरग्रीन तैल २॥ तोले, वेसलीन सफेद ८४ तोले, मोम ८॥। तोले लें। पीपरमेण्टको तैलमें मिलावें। वेसलीन और मोम को मिला कड़ाहीमें पिघलाकर नीचे उतार लेवें। उष्णता कम होने पर पीपरमेंट मिश्रण मिला अच्छी तरह चला लेवें। फिर निवाये को ही शीशियों में भर लेवें।

उपयोग —यह बाम आमवातज वेदना, तीक्ष्ण शूल, वात शूल, तीव्र शिरदर्द, ततैया आदिके दंश से उत्पन्न शोथ, सन्धिशोथ और अकड़ाहट आदिको दूर करता है। गरम जल, गरमतैल और अन्य गरम पदार्थसे जलनेपर इस बामकी मालिश करने पर तुरन्त वेदना शमन होजाती है। आमवात और अन्य पीड़ित स्थानपर मालिश करनेसे त्वचापर चुनचुनाहट होती है। फिर स्वेद आकर दर्द दूर होजाता है।

वक्तव्य —श्लैष्मिक कला और कोमल त्वचापर इस बामको न लगावें। एव आखोंको न लगजाय, यह सम्हालें।

---

(२१) वातरक्त

१ बृहद् वातरक्तान्तक लोह

बनावट—लोहभस्म (सिंगरफ मारित) २ तोले, शुद्ध पारद, शुद्ध गन्धक, मुक्तापिष्टी, अभ्रक भस्म, शुद्ध खपरिया (अभावमें जसद भस्म) और सुवर्ण भस्म १-१ तोला, तथा रसमाणिक्य (या शुद्ध हरताल) ६ माशे लें। पहले पारद गन्धककी कज्जली करें। फिर हरतालका चूर्ण मिलावें। पश्चात् अन्य औषधियां मिला, कुपीलु (लघुपीलु—खारीपीलु) मण्डूकपर्णी (यू० पी० में जिसे ब्राह्मी कहते हैं) और द्रोणपुष्पीके रसकी ३-३ भावना देकर १-१ रत्तीकी गोलिया बनावें। (र० यो० सा०)

मात्रा —१ से २ रत्ती दिनमें दो बार। हरड़के फाटे या हिमके साथ देवें ४

या दूध या सिद्ध घृतके साथ देवें। आवश्यकता हो तो आध घण्टेपर शिलाजीतका सेवन कराते रहें।

उपयोगः—इस लोहके सेवनसे निश्चयपूर्वक उपद्रव सह दारुण वातरक्त रोग नष्ट होता है। यह लोह गम्भीर और उत्तान वातरक्त, उपदंश, उग्रप्रमेह, मूत्रकृच्छ्र तथा कपाल, उदुम्बर, ऋक्षजिह्व, सिध्म, मण्डल-पुण्डरीक आदि कुष्ठ रोगोंका नाशकर रक्तको विशुद्ध बनाता है। यह रसायन वर्णको सुधारता है, तथा बल, वर्ण और अग्निको बढ़ाता है।

यह रसायन नये और पुराने वातरक्तके लिये अति लाभदायक है। इस रोगमें संधि-स्थान कठोर और सूजनयुक्त होजाते हैं। प्रातःकाल लक्षण कम और रात्रि होनेपर वेदना और लक्षण बढ़ जाते हैं। क्षुधा-वृद्धि, अफारा, अपचन, उदरशूल, किसीको वमन होना, तृषावृद्धि, कोष्ठबद्धता, फिर अतिसार, मूत्रका परिमाण घट जाना और लाल होजाना, शारीरिक और मानसिक शक्तिका ह्रास, स्वभावमें उग्रता, किसी किसीको श्वासकृच्छ्रता अथवा हृदयकम्प, निद्रानाश और शिरदर्द आदि लक्षण प्रकाशित होते हैं। फिर चर्मविकार होता है। पश्चात् वातरक्तकी स्पष्ट प्रतीति होती है। इस विकार पर यह लोह लाभप्रद सिद्ध हुआ है।

आशुकारी रोगमें रात्रिको अंगुलियोंकी संधियोंमें अति दाह होता है। एवं रोग जीर्ण होने पर संधिस्थल विकृत हो जाते हैं। फिर अनेक स्फोटकोंकी उत्पत्ति होती है। उनमें सुई चुभानेके समान पीड़ा होती है, किन्तु उनमें पूय नहीं होता। इसके अतिरिक्त दृष्टिमान्द्य, तृषा, ज्वर, पंगुता, विसर्प शिराओंका संकोच, प्रलाप, बेहोशी और मूर्च्छा आदि लक्षण उपस्थित होते हैं। इस अवस्थामें इस लोहका सेवन लघुमंजिष्ठादि क्वाथके साथ कराया जाता है और यवक्षार भी दिया जाता है।

अनेक बार शराबियोंको वातरक्त हो जाता है, तब दाह, प्यास, निद्रानाश, व्याकुलता आदि लक्षण प्रबल होते हैं। शिर दर्द और प्रलाप भी होते हैं। उनके लिये यह रसायन अमृतके सदृश उपकारक है। अनुपान रूपसे अमृताघृत दिया जाता है।

इस तरह इतर कारणसे उत्पन्न वातरक्तमें भी पित्तप्रकोपकी प्रधानता हो, तो वातरक्तान्तक लोहका सेवन कराना चाहिये। कब्ज अधिक हो, तो उसे दूर करनेके लिये हरड़की मात्रा बढा देनी चाहिये। अथवा छोटी हरड़ या इतर विरेचन औषधि अथवा मंजिष्ठादि क्वाथकी योजना करनी चाहिये।

सब प्रकारके वातरक्तके हेतुसे सन्धिस्थानोंके भीतर सज्जीखारके समान क्षार सोडियम यूरेट्स (Sodium Urates) का प्रवेश होजाता है। एवं रक्तमें भी युरिक एसिडकी वृद्धि होती जाती है। फिर मूत्रके साथ कुछ कुछ अंशमें निकलता रहता है। इस क्षारको बाहर निकालने और नयी उत्पत्तिको रोकनेकी आवश्यकता रहती है। इन दोनों कार्योंकी सिद्धि इस रसायनके सेवनसे होजाती है। तीव्रावस्थामें क्षारको बाहर निकालनेके उद्देश्यसे तीव्र विरेचन और मूत्रल यवक्षार आदि अनुपानकी योजना करनेसे

क्षार सरलापूर्वक बाहर निकल जाता है। जिससे वेदनाका ह्रास होजाता है। यदि चिरकारी अवस्था है, तो हरड़ आदि सारक और शिलाजतुके समान सौम्य मूत्रल गुणयुक्त अनुपान विशेष हितकारक माना जाता है।

इस लोहका शान्तिपूर्वक सेवन किया जाय, तो वातरक्त रोग और इसके सब उपद्रव निःसन्देह नष्ट होजाते हैं। एवं इसके सेवनसे रक्तका प्रसादन होनेसे विविध कुष्ट, उपदंश और प्रमेह आदि व्याधियोंका भी निवारण हो जाता है। पित्तज, वातज, कफज, द्वन्द्वज आदि सब प्रकारके नये कुष्ट रोग पर भी यह लोह हितावह है।

२ वातरक्तान्तक रस

विधि —शुद्ध गन्धक, शुद्ध पारद, लोहभस्म, शुद्ध मैनसिल, शुद्ध हरताल, अभ्रकभस्म, शुद्ध शिलाजीत, शुद्धगूगल, इन ८ ओषधियोंको १-१ तोला लें। पहले कज्जली करें। फिर भस्म, मैनसिल, हरताल, शिलाजीत, गूगल आदि क्रमशः मिलावें। तत्पश्चात् सफेद कोयल, दारुहल्दी, बावची, चित्रकमूल, पुनर्नवा, देवदारु, हरड़, बहेड़ा, आवला सोंठ, कालीमिर्च, पीपल और वायविडङ्ग इन १३ औषधियोंका कपड़छन चूर्ण १-१ तोला मिला त्रिफला और भांगरेके रसमें ३-३ दिन खरल कर १-१ रत्तीकी गोलियां बनालेवें। (र० सा० सं०)

वक्तव्य —रसरत्नाकार और भैषज्यरत्नावली कारने बावचीके स्थानपर समुद्रफेन मिलाया है। समुद्रफेनकी अपेक्षा बावची विशेष हितकर मानी जायगी। अतः हमने बावची मिलाई है। लेकिन छोटी बावची नहीं, किन्तु कलौंजीके समान काली और बड़ी जाति होती है अर्थात् जिसको माली बावची कहते हैं।

मात्रा —२ से ४ गोली प्रात काल लेवें, ऊपर नीमके पत्र, पुष्प और अन्तर छालका चूर्ण ३ माशेको घृतमें मिलाकर चाट लेवें।

उपयोग —यह वातरक्तान्तकरस सब प्रकारके वात विकार, साध्य और असाध्य नूतन वातरक्त, जो महाघोर और गंभीर हो, जिसका विष सम्पूर्ण शरीरमें फैलगया हो और विविध उपद्रवयुक्त हो उन सबको यह रस नष्टकर देता है।

यह रस विशेषतः आमप्रधान कफप्रधान और द्वन्द्वज वातरक्त पर हितावह है। पित्तप्रकोप अधिक होने पर इसका उपयोग नहीं करना चाहिये।

सूचना —वातरक्त रोगसे पीड़ितोंको मांस सेवनका सर्वथा आग्रह पूर्वक निषेध करना चाहिये।

३ वज्र गुग्गुलु

बनावट —सोंठ, कालीमिर्च, पीपल, हरड़, बहेड़ा, आवला, दन्तीमूल, चित्रकमूल, निसोत, कचूर, वायविडङ्ग, नागरमोथा, हल्दी, बावची, इन्द्रजौ, वच, अकोलकी छाल, कूठ और अमलतासकी छाल, ये १९ ओषधियां ४-४ तोले, शुद्ध गूगल ७६

तोले, भिलावेका तैल ८ तोले, ताम्रभस्म और तालभस्म ४-४ तोले लें। गूगलको घी मिलाकर कूटें, फिर भिलावेका तैल मिला लेवें। पश्चात् शेष काष्ठादि औषधियोंका कपड़छान चूर्ण कूट कर मिलादेवें। (र० र०)

मात्राः—१ से १॥ माशा तक दिनमें दो बार गोघृतके साथ देवें।

उपयोगः—यह गूगल भयंकर बढ़े हुए अनेक उपद्रवों युक्त वातरक्तको भी दूर कर देता है, तथा श्लीपद, शोथ, शूल, प्रमेह, मेद, कण्ठके रोग, प्लीहा, गुल्म, उदर-रोग, अष्ठीला, कास, श्वास, अरुचि, जीर्ण ज्वर, आनाह आदिको नष्ट करता है। यह गूगल बल, वर्ण और अग्नि को बढ़ाता है। एवं दुष्ट संग्रहणी, पाण्डु, कामला और हलीमक को भी निवृत करता है।

इस गूगलमें अन्त्र, त्वचा और रक्तके भीतर संगृहीत मल, आम और विषको बाहर निकालने, नयी उत्पत्तिको रोकने और रक्त प्रसादन करने, तीनों कार्य करनेवाले द्रव्य मिलाये हैं। जिससे जिन रोगियोंकी पंच कर्मसे शुद्धि न हो सके, उनको विना शुद्धि कराये इस गूगलका सेवन करानेसे विविध उपद्रवयुक्त जीर्ण वातरक्त भी दूर हो जाते है। यह गूगल आम, मेद और कफ प्रधान रोगीके लिये विशेष अनुकूल रहता है। पित्त प्रधान प्रकृतिवालों और शुष्क देह वालोंको नहीं देना चाहिये।

वक्तव्यः—भिलावेका तैल पाताल-यन्त्रसे निकालना चाहिये। इस गूगलके सेवन कालमें तैल वाले पदार्थ पथ्य माने जाते हैं। यदि मात्रा बढानेपर या औषध सहन न होनेसे कण्डू उत्पन्न हो जाय, तो थोड़े दिनोंके लिये औषध बन्द करें और तैल प्रधान फल-बादाम, चिरौंजी, काजू, नारियलकी गिरी आदिका सेवन करें और नारियलके तैलकी मालिश करें। कण्डू शमन होनेपर कम मात्रामें फिरसे औषध सेवनका आरम्भ करें।

इस प्रयोगमें ताम्र, ताल और भल्लातक तैल, तीन उग्र औषधि होनेसे पथ्यका पालन आग्रहपूर्वक करना चाहिये। गरम गरम भोजन, सूर्य और अग्निका सेवन, अधिक मिर्च, खटाई, जलचर जीवोंका मांस, दही, शराब, स्त्रीसेवन, क्षार, तेज नमक और बैंगन आदि का त्याग करना चाहिये।

४. गुडूच्यादि लोह

बनावटः—गिलोयसत्व, सोंठ, कालीमिर्च, पीपल, हरड़, बहेड़ा, आंवला, दालचीनी, तेजपात, छोटी इलायचीके दाने, ये सब १-१ तोला और लोहभस्म १० तोले लें। काष्ठादि औषधियोंको कूटकर कपड़छान चूर्ण करें। फिर सबको मिला गिलोयके स्वरसके साथ मर्दन कर लेवें। (र० सा० सं०)

मात्राः—४ से ६ रत्ती, दिनमें दो बार २-२ तोले गिलोयके क्वाथके साथ।

उपयोगः—यह लोह अति बढ़े हुए जीर्ण वातरक्तको दाह आदि विकारोंसह

सत्वर नष्ट कर देता है। शुष्क, निर्बल और पित्त-प्रधान प्रकृतिवालोंके लिये यह विशेष अनुकूल है।

५ सिंहास्यादि क्वाथ

बनावट —अडूसेकी जड़, लघु पञ्चमूलकी पाचों ओषधियाँ, गिलोय, एरण्ड-मूल और गोखरू, इन ६ ओषधियोंको समभाग मिलाकर जोकूट चूर्ण करें। (भै० र०)

मात्रा —४-४ तोलेका क्वाथकर एरण्ड तैल २-२ तोले, भूनी हींग १ रत्ती और ४ रत्ती सैंधानमक मिलाकर प्रात काल पिलाते रहें।

उपयोग—इस क्वाथके सेवनसे वातरक्त रोग शमन होजाता है। एवं आमवात, कटिशूल, मल मूत्रका विबंध और अति बढ़ा हुआ वृक्क विकार दूर होता है।

६. अमृतादि घृत

विधि —गिलोय, मुलहठी, मुनक्का, हरड़, बहेड़ा, आवला, सोंठ, खरैटी, वासाके पान, अमलतासका गूदा, पुनर्नवा, देवदार, गोखरू, कुटकी, हरड़, पीपल, गम्भारीके फल, रास्ना, तालमखाना, एरण्डमूल, देवदारु, गंगेरन, नीलोफर, इन २३ औषधियोंको २-२ तोले लेकर कल्क करें। फिर कल्क, १२८ तोले गोघृत, १२८ तोले आवलोंका रस, ३८४ तोले दूध मिलाकर मदाग्निसे घृत सिद्ध करें। (नि० र०)

मात्रा —१-१ तोला भोजनके साथ दिनमें दो बार देवें।

उपयोग —इस घृतके सेवनसे विविध दोषप्रकोपसे उत्पन्न और रक्तमें वात-मिश्रित या प्रकुपित वातरक्त, उत्तान वातरक्त, गम्भीरवातरक्त, त्रिक, जंघा, उरु और जानुमें पीड़ा करनेवाला वातरक्त, क्रोष्टुशीर्ष, महाशूल, दारुण आमवात, महारोगसे पीड़ितको अतिशय दुस्तर वेदना, मूत्रकृच्छ्र, उदावर्त, प्रमेह और विषम ज्वर आदि रोग जो वात, पित्त और कफप्रकोपसे उत्पन्न हुए हों, सब शमन हो जाते हैं। इसका उपयोग सब समयमें प्रात काल, रात्रिको भोजनके प्रारम्भ, बीच या अन्तमें होता है। इसका उपयोग सर्वदा करते रहनेसे वर्ण, आयु और बलकी वृद्धि होती है।

यह घृत सब प्रकारके वातरक्त पर हितकारक है। नये रोग और पुराने रोगमें भी गुणदायक है। दही, मूली, शराब, क्षार, लवण, अम्ल रस, अग्निसेवन, अधिक मिर्च, सूर्यके तापका अधिक सेवन और दिनमें निद्रा लेना आदिका त्यागकरें, तो लाभ सत्वर मिलता है। मधुर, वातशामक और कड़वे द्रव्य गुणदायक हैं। इस तरह पथ्य पालन सह इस घृतका सेवन अन्य मुख्य ओषधिके साथ सहायक रूपसे कराया जाता है। कदाचित् रोगीने अनेक तेज ओषधि लेकर रोगको बढ़ा लिया हो, ऐसी अवस्थामें केवल इस घृतका ही सेवन कराया जाता है। इसके योगसे रोगविष और दुष्ट ओषधिकी उग्रता, दोनों थोड़े ही दिनोंमें शमन होजाते हैं।

७. अमृता घृत

विधिः—गिलोय ४०० तोलेको २०४८ तोले जलमें मिलाकर चतुर्थांश क्वाथ करें। फिर छान, गिलोयका कल्क ३२ तोले, २५६ तोले दूध और १२८ तोले घी मिलाकर मंदाग्नि पर सिद्ध करें। (शा० सं०)

मात्राः—१-१ तोला दिनमें २ बार।

उपयोगः—यह घृत उत्तान (त्वचागत) वातरक्त और अवगाढ़ (मांस आदि धातुओंमें लीन), वातरक्त सबका नाश करता है। वातरक्तमें पित्तकी प्रधानता हो, मंद-ज्वर, दाह, शोष, शुष्ककास, प्रमेह, मूत्रकच्छ्र आदि लक्षण हों, उसपर यह हितकारक है।

८. शतावरी घृत (वातरक्त)

विधिः—शतावरका कल्क ३२ तोले, शतावरका रस, दूध और गोघृत १२८-१२८ तोले मिला मंदाग्नि पर सिद्ध करें। (नि० र०)

मात्राः—१-१ तोला दिनमें दो बार भोजनके प्रारम्भ में।

उपयोगः—यह घृत वातरक्त नाशक उत्तम योग है। पित्तवातप्रधान लक्षण-शूल, अम्लपित्त, दाह, रक्तविकार और हृदयकी निर्बलता सह वातरक्तमें यह व्यवहृत होता है।

९. महारुद्र तैल

बनावटः—पुनर्नवा, हल्दी, नीमकी अन्तर छाल, बैंगन, अनार फलकी छाल, बड़ी कटेली, छोटी कटेली, दुर्गन्ध करन्जकी जड़, अडूसेकी जड़, निगुंण्डीके पान, परवलके पत्ते, धतूराका मूल, अपामार्गका मूल, जयन्ती (अरणी) की जड़, दन्तीमूल, हरड़, बहेड़ा, आंवला, ये १८ औषधियां ४-४ तोले, अशुद्ध बच्छनाग, १६ तोले, सोंठ, मिर्च, पीपल २४-२४ तोले मिलाकर कल्क करें। फिर कल्क, गिलोयका स्वरस या क्वाथ १०२४ तोले, जल, सरसोंका तैल, और वासापत्रका स्वरस २५६-२५६ तोले मिला विधिपूर्वक तैलको सिद्ध करें। (भै० र०)

उपयोगः—इस तैलकी मालिश करनेसे नाना दोषयुक्त वातरक्त और १८ प्रकारके कुष्ठ शीघ्र दूर होकर वर्ण और अग्निकी वृद्धि होती है, तथा कृमि, दुष्टव्रण, दाह, कण्डु, प्रस्वेद न आना और अति प्रस्वेद आना आदि विकार भी नष्ट होते हैं।

१०. विषतिन्दुक तैल

बनावटः—कुचिला २५६ तोलेको कूट १६ गुने जलमें मिला कर उबालें। चतुर्थांश जल शेष रहने पर उतार डंडेसे खूब मसलकर छान लेवें। फिर सुहिंजनेकी छालका स्वरस (अभावमें क्वाथ), वड़हरके मूलका क्वाथ, काले धतूरेके पत्तोंका रस, बल्लाके पानोंका रस, चित्रकके पानोंका रस, निर्गुण्डीके पत्तोंका रस, थूहरके पत्तोंका रस,

असगन्धका क्वाथ, वैजयन्ती (अरणी)का क्वाथ या रस २५६-२५६ तोले मिलावें। एवं लहसुन, धूपसरल, मुलहठी, कूठ, सैंधानमक, चित्रकमूल, हल्दी और पीपल, इन ८ औषधियोंका कल्क ६४ तोले और तिलोंका तैल ५१२ तोले मिलाकर तैल सिद्ध करें।
(भै० र०)

उपयोग —यह तैल अत्यन्त भयङ्कर और असाध्य वातरोगोंको दूर करता है। इस तेलको प्रतिदिन मर्दन करनेसे सुसवात, १८ प्रकारके कुष्ठ, दोनों प्रकारके वातरक्त देहकी विवर्णता और त्वचाके सब प्रकारके विकार नष्ट हो जाते हैं।

जब त्वचामें शून्यता आजाती है सुई चुभानेपर वेदना नहीं होती, ऐसे वातरोग, वातरक्त और शून्यकुष्ठमें मर्दनके लिये इस तैलका प्रयोग किया जाता है।

---

(२२) शूलरोग।

१. नारिकेल लवण

बनावट —जल भरे हुए पक्के नारियलके ऊपरसे थोड़े भागको काट उसमें सैंधानमक भरें। फिर कटे हुए भागसे पुनः मुखको बन्द कर, सारे नारियल पर कपड़ मिट्टी करें। कपड़मिट्टी इस तरह सम्हाल पूर्वक करें कि, ऊपरका हिस्सा ऊपर को ही रहे। फिर सुखा, ५ सेर गोबरीके भीतर गजपुटमें फूंक देवें। स्वाङ्गशीतल होने पर जले हुए खोपरे सह नमकको निकालकर पीस लेवें। (भै० र०)

मात्रा —आधसे १ माशे तक दिनमें २ बार। परिणाम शूलमें पीपलके चूर्णके साथ। अम्लपित्तपर नारियलके जलके साथ तथा वृक्कशूलमें चन्दनासवके साथ देना चाहिये।

उपयोग —इस लवणके उपयोगसे परिणामशूलजनित पीड़ा दूर होती है। एवं अम्लपित्त रोगमें पित्तकी अम्लता और उग्रताका ह्रास होकर वमन कम होने लगती है। धीरे धीरे कुछ दिनोंमें पित्त (आमाशयरस) की विकृति दूर होकर अम्लपित्त रोग नष्ट हो जाता है।

वृक्क शूलका तीव्र प्रकोप शमन होनेपर यह लवण दिनमें २ या ३ बार चन्दनासवके साथ देते रहनेसे कुछ दिनोंमें वृक्कके भीतर रहे हुए अश्मरी उत्पादक द्रव्यका निवारण हो जाता है। नयी उत्पत्ति रुक जाती है। एवं शर्करा और सिकता टूटकर वृक्कशूलकी निवृत्ति हो जाती है। त्रिदोषज गुल्म रोगमें उदरमें वेदना बारबार होती रहती है। गोला पत्थरके समान प्रतीत होता है जो दबानेपर चारों ओर सरकता है। ऊपर में दबानेपर वेदना होती है, गोलेके हेतुसे मलावरोध बना रहता है कुछ कुछ दिनोंके बाद उदरशूल बढ़ जाता है, उस समय उदरमें दाह भी होता है। ऐसे लक्षण

युक्त गुल्मपर यह नारिकेल लवण उत्तम औषध है। नारिकेल लवण, शंखभस्म और हिंग्वष्टक चूर्ण मिला, नीबूके रसके साथ दिनमें ४-६ समय देते रहनेसे शूलसह गुल्म निवृत्त होजाता है। मलशुद्धिके लिये रात्रिको ३-३ माशे त्रिफला देते रहें।

२. धात्रीलोह।

विधि—आंवलेका चूर्ण ३२ तोले, लोहभस्म १६ तोले, मुलहठीका सत्व ८ तोले लें। तीनोंको मिला ७ दिन तक गिलोयके क्वाथकी भावना दे, मर्दनकर सूर्यके तापमें सुखावें। (र० र०)

वक्तव्यः—लोह भस्म १६ तोलेके स्थानपर मंडूर भस्म ८ तोले ही मिलावे और मात्रा १ से २ माशे देनेपर लाभ अधिक पहुँचता है।

मात्राः—४ रत्तीसे १ माशा तक घी और शहदके साथ दिनमें २ या ३ बार लें। भोजनके आध घण्टे पहले लेनेसे आमाशयके पित्तकी उग्रता और वातप्रकोप शमन होते हैं। भोजनके बीचमें लेनेपर मलावरोध दूर होता है और आहार विदग्ध होकर दाहकी उत्पत्ति नहीं होती। भोजनके अन्तमें सेवन करनेपर अन्नपानजनित दोष, जरत्पित, उदरशूल, परिणामशूल, आदि पर लाभ पहुंचता है।

उपयोगः—यह लोह अम्लपित्त, परिणामशूल, पाण्डु, कामला रोगमें हितावह है। कफपित्तप्रकोपज व्याधियों पर इसका सेवन कराया जाता है। यह रक्तका प्रसादन करता है। जिससे चक्षुकी देखनेकी शक्ति बढ़ जाती है तथा अकालमें शिरके बालोंका सफेद होना रुक जाता है।

३. पार्श्वशूलहर योग

विधिः—रससिंदूर १ तोला, अभ्रक भस्म २ तोले और शृंगभस्म ६ तोले मिलाकर खरलकर लेवें। इसमेंसे ४-४ रत्ती गोघृत और शहदके साथ २-२ घण्टे पर २-३ बार देनेसे तीव्र पार्श्वशूल, हृदयशूल और छातीमें होने वाली वेदना सब शान्त हो जाते हैं।

४. पित्ताशयशूलहर योग

विधिः—तालमखाना पञ्चाङ्गकी राखमेंसे बनाया हुआ क्षार ४ से ८ रत्ती शीतल जलके साथ १-१॥ घण्टे पर २-३ बार देनेपर भयंकर शूल और वमन आदि लक्षणोंपर पित्ताशयकी अश्मरीका नाश होता है। यह क्षार अश्मरी कणको पिघलाकर निकाल देता है। शूलशमन हो जानेपर यह क्षार दिनमें २ बार घीके साथ कुछ दिनों-तक देते रहनेसे पित्ताश्मरीकी उत्पत्तिमें प्रतिबन्ध होजाता है तथा पित्ताशयमें उत्पन्न अश्मरी गल जाती है।

५. उदरशूलहर योग

(१) सुहिजनेका गोंद १-२ माशे लेकर अग्निपर फूला लेवें। फिर सूर्यके

शक्कर मिलाकर खिला देनेसे तत्कालशूल नष्ट होजाता है। रोगीको शीतल जल या शीतल पेय नहीं देना चाहिये।

(२) नीलगिरीतैल ५ बूंद १-२ माशे शक्करके साथ मिलाकर खिला देनेसे उदरशूल, उबाक, वमन, उदरवायु, अपचन, थोड़े थोड़े दस्त लगना और हैजा आदि रोग दूर होजाते हैं। आवश्यकतानुसार १-१ घण्टेपर ३-४ बार यह तैल दिया जाता है।

(३) सागके बीजोंका चूर्ण १-१॥ माशा गुड़के साथ मिला निवाये जलसे देनेपर उदरशूल, गुल्म, घबराहट और उबाक दूर होते हैं। कितनेक चिकित्सक सागके १ बीजको जलमें घिस जल मिलाकर पिलाते हैं।

(४) सत्यानाशीके बीज १॥ माशे और जवाखार ३ रत्ती या नारिकेल लवण ४ रत्ती मिलाकर जलके साथ दे देनेसे उदरशूल, मलावरोध और बेचैनी दूर होते हैं।

(५) छोटी कटेली पञ्चाङ्गका पाताल यन्त्रसे अर्क निकाल आध आध तोला जल मिलाकर दिनमें ३ बार देनेसे उदरशूल, हृदयशूल और सन्धिशूल आदि सब दूर होते हैं। यह अर्क कफ गुल्मपर भी अच्छा लाभ पहुँचाता है।

(६) छिल्टे निकाली हुई राई, गुड़ और नमकको घीकुंवारके रसमें खरलकर लेप लगानेसे उदरशूल और सन्धिशूल दूर होते हैं। एवं यह श्वासप्रकोपमें फुफ्फुसपर और वमन बन्द करनेके लिये आमाशयपर लेप लगाया जाता है।

सूचना —वेदना शमन होनेपर पट्टी निकालकर वहां तैल वाला हाथ लगा देवें।

(७) शुद्ध कुचिलेका चूर्ण २ रत्ती गुड़के साथ मिला जलके साथ देनेसे वातप्रकोपज और कफप्रकोपज शूल शमन हो जाते हैं।

(८) आक की चौफूली और अजवायनको समभाग मिला, दोनोंके समान गुड़के साथ २ रत्तीकी गोली बनाकर जलके साथ दे देनेसे उदरशूल, अफारा, अपचन और-कफप्रकोप दूर होते हैं।

६ लवणाद्य चूर्ण

विधि —समुद्र नमक, सैंधानमक, साभर नमक, बलानमक, काच लवण, सज्जीखार, (सोडा बाई कार्ब), नौसादर, सोहागेका फूला, आकका क्षार और जवाखार, ये १० औषधियां ५-५ तोले, सोंठ, कालीमिर्च, पीपल, हरड़, बहेड़ा, आंवला, अजवायन, जीरा, दालचीनी और छोटी इलायची, ये १० औषधियां २॥-२॥ तोले, छिल्टे और जिव्हीरहित लहशुन २५ तोले और २५ नग नींबू लें। लवण और काष्ठादि औषधियों को कूटकर कपड़छान चूर्ण करें। फिर लहशुनको नीम्बूके रसमें खरल कर, सब चूर्ण मिला, सूखा चूर्ण बना लेवें।

मात्रा —२ से ३ माशे दिनमें २ या ३ बार निवाये जल या नीम्बूके जलके साथ देवें।

उपयोगः—यह लवणाद्य चूर्ण सब प्रकार के वातज और कफप्रकोपज शूल, अपचन, आध्मान, मलावरोध और उदर कृमिको दूर करता है और अग्निको प्रदीप्त करता है।

कितनेक चिकित्सक समुद्रनमक आदि १० औषधियोंके चूर्णको ही नीम्बूके जलमें मिलाकर पिलाते हैं। उससे अपचन और अपचनजनित व्यथा तुरन्त दूर होती है।

७. सामुद्राद्य चूर्ण (शूल)

विधिः—समुद्रनमक, सैंधानमक, सज्जीखार, यवक्षार, कालानमक, सांभरनमक, कांच लवण, दन्तीमूल, लोहभस्म, मण्डूर भस्म, निसोत और जमीकन्द, इन १२ औषधियोंको समभाग मिलाकर चूर्ण करें। फिर दही, गोमूत्र और दूध, तीनों ४-४ गुना मिला मन्दाग्निपर पकाकर शुष्क करें। फिर खरलकर बोतलोंमें भर लेवें।
(यो० र०)

मात्राः—१॥ से ३ माशेतक दिनमें २ बार या आवश्यक्तापर गुनगुने जलके साथ देवें। आमाशय रस कम हो, तो भोजनके आध घण्टे पहले देवें। आमाशय रस अधिक खट्टा होता हो, तो भोजनके २-२॥ घण्टे बाद देना चाहिये।

उपयोगः—सामुद्राद्य चूर्ण नाभिशूल, पार्श्वशूल, गुल्म, प्लीहा, परिणामशूल, अन्तर्विद्रधि, अष्टीला, कफवात प्रधान शूल, अन्नद्रव शूल, अजीर्ण और ग्रहणी रोगको दूर करता है। शूलोंके लिये इससे श्रेष्ठ दूसरी औषधि नहीं है।

सामुद्राद्य चूर्ण आमाशय और अन्त्र दोनों स्थानोंपर पचन कार्य करता है। अपचनावस्थामें यह तुरन्त लाभ पहुंचाता है। आमविषको नष्ट करके प्रकृतिको स्वस्थ बनाता है। अम्लपित्त, क्षत आदि हेतुसे आमाशयमें खट्टा रस बढ जानेपर उसे क्षारीय बनाता है। ऐसी अवस्थामें भोजनके पश्चात् इसका प्रयोग किया जाता है। यह अन्नद्रव शूल, परिणाम शूल, अफारा, उदरवात, आमप्रकोप, कृमि और आमविषको नष्ट करता है।

आमाशय रसका स्राव कम होनेपर अग्नि मन्द हो जाती है। भोजनका पचन कम होता है और देरसे भी होता है। इसके अतिरिक्त उदरमें वायु संग्रह होना, मलावरोध, आमप्रकोप आदि लक्षण भी उपस्थित होते हैं। इस विकारमें भोजनके आध घण्टे पहले दिया जाता है।

आमाशयके समान अन्त्रकी पचन क्रियाको भी बढाता है। इसके लिये यकृत् पित्तका स्राव अधिक कराता है जिससे अन्त्रमें पचन क्रिया सरलता पूर्वक होती है।

———

(२३) गुल्मरोग

१. नाराच रस (गुल्म)

विधि —ताम्रभस्म, शुद्धपारद, शुद्धगन्धक, शुद्ध जमालगोटा, हरड़, बहेड़ा, आवला, सोंठ, कालीमिर्च, पीपल, इन १० औषधियोंको समभाग लेवें। पहले पारद, गन्धककी कज्जली करें। फिर ताम्रभस्म, जमालगोटा और शेष औषधियोंका कपड़छान चूर्ण मिलाकर मर्दन कर लेवें। (र० र०)

मात्रा—२ से ४ रत्ती प्रात काल सोहागेके फूले और शहदके साथ दें। ऊपर निवाया जल पिलावें।

उपयोग —यह रसायन तीव्र विरेचक है। गुल्म और उदर रोग दूर करनेमें अति हितावह है। जब आमाशयकी पचन क्रिया मन्द होकर आम और कफकी वृद्धि हो गई हो, यकृत्पित्तका स्राव बहुत कम होता हो, इस हेतुसे कफप्रधान गुल्म या कफोदर की प्राप्ति हुई हो, तब इस रसके सेवनसे बड़े बड़े जलके सदृश पतले जुलाब लगकर विकृति, कफ और आम सब निकल जाते हैं। फिर आमाशय, यकृत और अन्त्रका व्यापार सबल होजाता है। इस हेतुसे कफज गुल्म और कफोदर शमन होजाते हैं। इनके अतिरिक्त कृमिरोग, प्लीहावृद्धि, अष्ठीला प्रत्यष्ठीला, और आनाह रोगमें भी यह रसायन अच्छा लाभ पहुँचाता है।

२ गुल्महर रस

विधि.—अभ्रकभस्म, लोहभस्म, शुद्ध गन्धक, १-१ तोला तथा सोहागका फूला, सोंठ, कालीमिर्च और पीपल २-२ तोले लेकर मिला लेवें। इसमेंसे १-१ माशा दिनमें ३ समय मक्खन या गोघृत और शहदके साथ देते रहनेसे थोड़े ही दिनोंमें दाह, मन्दाग्नि, पाण्डुता और निर्बलता आदि लक्षणोंसह गुल्मरोग दूर होकर शरीर सुदृढ बन जाता है। यह पित्त और कफगुल्म रोगकी उत्तम औषधि है।

३ अभयादि वटी

विधि —हरड़, कालीमिर्च, पीपल, सोहागेका फूला, प्रत्येक २-२ तोले और धतूरेके शुद्ध बीज ८ तोले लेवें। सबको कूट कपड़छान चूर्णकर थूहरके दूधमें मिला रबड़ी जैसा बनावें। फिर गरमकर आध आध रत्तीकी गोलिया बना लेवें।

मात्रा.—१-१ गोली ४-४ माशे हरड़के चूर्णके साथ रोज सुबह निवाये जलके साथ देते रहें। विरेचन हो जानेपर गरम करके शीतल किया हुआ जल पिलावें।

उपयोग —अभयादिवटीके सेवनसे गुल्म, जीर्ण ज्वर, पाण्डु, प्लीहा, अष्ठीला, उदररोग, रक्तपित, अम्लपित्त और सब प्रकारके अजीर्ण रोग निवृत्त होते हैं।

यह वटी अन्त्रगत आम, विष मल, कृमि, कीटाणु आदिको दूर करती है, रक्तमें रहे हुए लीन विषको [illegible]

४. बचादि चूर्ण

विधिः—बच २ तोले, हरड़ ३ तोले, बिड़लवण ६ तोले, सोंठ ४ तोले, भुनी हींग १ तोला, कूठ ८ तोले, चित्रकमूल ७ तोले और अजवायन ५ तोले लें। सबका कपड़ छान चूर्ण मिला खरलकर बोतलमें भरलेवें।

मात्राः—३-३ माशे दिनमें २ बार शराब या निवाये जलसे देवें।

उपयोग—बचादि चूर्ण सब प्रकारके गुल्म, आनाह, उदररोग, शूल, अर्श, श्वास, कास और ग्रहणीरोगको दूरकरके अग्निप्रदीप्त करता है।

५. दंती हरीतकी

विधिः—बड़ी हरड़ साबुत, दन्तीमूलका जौकूट चूर्ण और चित्रकमूलका जौकूट चूर्ण, तीनों १००-१०० तोलेको, २०४८ तोले जलमें मिला, उबालकर अष्टमांश क्वाथ करें। फिर हरड़को निकाले जलको छान लेवें। पश्चात् क्वाथको पुनः उबालें। लगभग १। सेर जल रहनेपर १०० तोले गुड़ मिलाकर शर्बत जैसी चाशनी करें। उष्णता कम होनेपर उबाली हुई हरड़, निशोथका चूर्ण १६ तोले, तिलतैल १६ तोले, पीपल और सोंठका चूर्ण २-२ तोले मिलावें। शीतल होजानेपर १६ तोले शहद, दालचीनी, तेजपात, छोटी इलायचीके दाने और नागकेशर १-१ तोला डालें।

मात्राः—रोज सुबह २-२ तोले लेह चाटें और १ हरड़ खायें। भोजनमें भात और मांस रस (या उड़दकी दाल) अथवा खिचड़ी लेवें।

उपयोगः—दन्ती हरीतकी गुल्म, शोथ, अर्श, पाण्डु, अरुचि, हृद रोग, ग्रहणी, कामला, विषमज्वर, कुष्ठ, प्लीहावृद्धि और आनाह आदि रोगोंका नाश करता है।

दंती हरीतकी उत्तम उदरशोधक दीपन, पाचन है। कृमि कीटाणुओंका नाश करता है, गुल्मको शनैः शनैः काटता है, आम, मल, विषको बाहर फैंकता है और पचन क्रियाको बढाता है। पथ्य पालन सह एकाध मास सेवन करनेपर गुल्मकी निवृत्ति हो जाती है।

६. पञ्चानन रस (रक्त गुल्म)

विधि—शुद्ध पारद, शुद्ध नीलाथोथा, शुद्ध गन्धक, शुद्ध जमालगोटा, पीपल, अमलतासका गूदा, इन ६ औषधियोंको समभाग मिला, १२ घण्टे थूहरके दूधमें खरलकर १-१ रत्तीकी गोलियां बनावें।

मात्राः—१-१ गोली रोज सुबह आंवलेके पान या इमलीके पानोंके रसके साथ देवें। बेचैनी हो तो आंवलोंका हिम या नीबूका रस जल मिलाकर पिलावें।

उपयोग—पञ्चाननरस नये रक्त गुल्मको निवृत कराता है। जो रक्तगुल्म बहुत पुराना न हो नया हो, रूग्णामें विरेचनकी उग्रता सहन करनेकी शक्ति है, जिसे

पहले पंचित न हुआ हो, अम्लपित्तमे जो पीड़ित न हो और जो दही-भात और मठ्ठेपर रह सकती है, उसे १ मास तक पंचानन रसका सेवन करानेसे गुल्ममेंसे रक्तस्राव होकर सब विकार बाहर निकल जाता है।

७. दन्त्यादि गुटिका

विधि —दन्तीमूल, हींग जवाखार, कड़वी तुम्बीके बीज, पीपल और गुड़, इन ६ औषधियोंको समभाग मिला थूहरके दूधमें १२ घण्टेतक खरलकर २-२ रत्तीकी गोलिया बनावें।

मात्रा —१ से २ गोली प्रति दिन सुबह जलके साथ देवें।

उपयोग —दन्त्यादि गुटिका निर्बल स्त्रियोंके रक्तगुल्मका नाश कराती है। जो पंचानन रसकी उग्रताको सहन नहीं कर सकती, उनको दन्त्यादि गुटिका दी जाती है। इस वटीके सेवन कालमें भी दही भातपर रखणाको रखना पड़ता है। पथ्यपालन सह सेवन करनेपर १-२ मास तक योनिद्वारमे रक्त और मासके छिछड़े गिर गिरकर गुल्म गल जाता है।

---

(२४) हृद्रोग

१. शङ्कर वटी

विधि —शुद्धपारद ४ तोले शुद्धगन्धक ८ तोले, लोह भस्म ३ तोले और नाग भस्म २ तोले लें। पहले पारद गन्धककी कज्जली करें। फिर सबमें मिला मकोय, चित्रकमूल, अदरख, जयन्ती (अरणी), वासा, बेलछाल और अर्जुनछाल, इन ७ द्रव्योंके स्वरस या क्वाथके साथ १-१ दिन खरलकर १-१ रत्तीकी गोलिया बनालेवें। (भै० र०)

मात्रा —१ से २ गोली दिनमें दो बार शहद, दूध या जलके साथ देवें।

उपयोग —इस वटीके उपयोगसे फुफ्फुस जन्य व्याधियां हृदयके रोग, जीर्ण-ज्वर, २० प्रकारके घोर प्रमेह, कास श्वास, आमवात और दुस्तर संग्रहणी आदि दूर होते हैं। यह वटी अति बलवर्धक और पौष्टिक है।

यह वटी हृद्रोगके नाशके निमित्त कही है। हृद्रोग नया हो, तो मात्रा २ रत्ती लेवें, किन्तु रोग जीर्ण हो, तो मात्रा १ रत्ती या आध रत्ती ही लेनी चाहिये। यह रसायन लोहप्रधान होनेसे रक्तप्रसादन होता है, रक्तकी वृद्धि होती है, तथा रक्ताभिसरणक्रिया भी सबल बनती है। इस प्रयोगमें दूसरी सीसा भस्म मिलाई है। वह रस, रक्त आदि सब धातुओंको शनैः शनैः पुष्ट करती है। अतः इस रससे रक्तवृद्धि और मासकी पुष्टि होती है। जिससे हृदय सुदृढ़ होकर शिथिलता और धड़कन आदि विकारोंकी निवृत्ति होजाती है।

आमातिसार, मोतीझरा और संग्रहणी आदि रोगोंकी निवृत्ति होनेपर हृदय

आदि सब इन्द्रियां शिथिल होजाती हैं। रक्ताभिसरण क्रिया और नाड़ीकी गति मंद होजाती है। थोड़े परिश्रम और उष्ण पदार्थके सेवनसे धड़कन बढ जाती है तथा श्वास भरजाता है। पचन क्रिया मंद होजाती हैं। मुख निस्तेज और हाथ पैरोंपर रात्रिको कुछ शोथ भासता है, ऐसे लक्षणयुक्त हृद्रोगपर शंकरवटी लाभदायक है। एक मास सेवन करनेपर सब इन्द्रियां सबल होजाती हैं।

आमवात होनेपर प्रायः हृदयको धक्का पहुंच जाता है। आमवात भी वर्षाऋतुमें आक्रमण करता रहता है। इस आमवातको और हृदयकी शिथिलताको यह शंकरवटी दूर कर देती है। कम मात्रामें २-३ मासतक अर्जुनारिष्टके साथ सेवन करना चाहिये। रोगीको मधुरपदार्थ कम सेवन करना चाहिये और वासी, बिगड़े हुए फल और अन्नका त्याग करना चाहिये। कदाच हृदय या हृदयावरणपर शोथ आयाहो तो वहभी दूर होजाता है।

प्रबल रक्तातिसार, रक्तार्श या आगन्तुक घाव लगकर अति रक्तस्राव होकर रोग शमन हो जानेपर देहमें रक्तकी कमी रहती है। नाड़ी निर्बल होनेपर भी गति तेज भासती है। मुखमण्डल निस्तेज प्रतीत होता है। थोड़ा चलने, जोरसे बोलने, बड़ी आवाजवाले स्थानमें खड़े रहने और गरम भोजन आदिका सेवन करने आदि कारणोंसे हृदयमें वेदना होती है। इस हृदय विकारको यह शंकरवटी थोड़े ही दिनोंमें दूर करती है और देहको सबल बनाती है।

आमाशय और यकृत् निर्बल बनने पर पचन क्रिया मंद हो जाती हैं। ऐसी स्थितिमें अधिक भोजन, देरसे पचनेवाला भोजन, बार बार भोजन और अपथ्यका सेवन करते रहने पर प्रमेह रोगकी संप्राप्ति होती है। यह रोग जीर्ण होनेपर हृदय भी निर्बल बनजाता है। इन पचन विकार, प्रमेह और हृदय रोग, तीनोंके लिये शंकरवटी उपकारक है। अनुपान रूपसे चविकासवका सेवन विशेष लाभप्रद है। पथ्यका आग्रहपूर्वक पालन कराना चाहिये।

फुफ्फुस संस्थान निर्बल होनेपर किसी किसीको धूपमें फिरने, शीत लग जाने, बद्दल आने अथवा अपचन होनेपर तमक श्वासका दौरा होजाता है। यह दौरा बार बार होता रहता है। विशेषतः दौरा रात्रिके समय होता है। इस रोगमें फुफ्फुसके अतिरिक्त हृदय और पचन संस्थान भी निर्बल होते हैं इन तीनोंको सबल बनाकर जीर्ण तमक श्वासको दूर करनेके लिये कम मात्रामें शंकरवटीका सेवन दीर्घकाल तक करना चाहिये। कफ अधिक हो, तो अनुपान रूपसे वासकासव और पचन क्रिया अधिक मंद हो तो पिप्पल्याद्यासव देना चाहिये।

२. चिन्तामणि रस (हृदय)

विधिः—शुद्धपारद, शुद्ध गन्धक, अभ्रकभस्म, लोहभस्म, वङ्गभस्म और शिलाजीत, १-१ तोला, सुवर्णका वर्क ३ माशे और चाँदीका वर्क ६ माशे लें। पहले कज्जली कर फिर भस्म और शिलाजीत मिला चित्रकमूलके क्वाथ और भांगरेके स्वरसकी १-१

भावना देवें। फिर अर्जुनछालके क्वाथकी ७ भावना देकर १-१ रत्तीकी गोलियां बना लेव। (भै० र०)

वक्तव्य—इस रसमें हम १ तोला प्रवालभस्म भी मिलाते हैं।

मात्रा—१ से २ रत्ती दिनमें दो बार गेहूंके क्वाथ, अर्जुन क्षीर, बलाघृत या खरैंटीके मूलके क्वाथके साथ या च्यवनप्राशावलेहके साथ।

उपयोग—चिन्तामणि रस हृदयके समग्र रोगोंपर हितावह है। इसके अतिरिक्त फुफ्फुस स्थानके रोग, प्रमेह, श्वास, कास आदिको दूर करता है तथा देहको सबल और पुष्ट बनाता है।

हृदयेन्द्रियकी निर्बलतासे उत्पन्न हृदयस्पन्दन वृद्धि (धड़कन), हृदयके पर्दकी विकृति, हृदयेन्द्रियका शोथ, धमनीकी दीवारोंकी विकृति होनेसे उसमेंसे रक्तवारि टपकना आदिपर यह व्यवहृत होता है इस रसका मुख्यगुण हृदय और धमनीको बलप्रदान करनेका है।

अर्जुन क्षीर—अर्जुनकी छालका जौकूट चूर्ण १ तोला, गोदुग्ध और जल १६-१६ तोले मिला मन्दाग्नि पर दुग्धावशेष क्वाथकर १ तोला मिश्री और थोड़ा इलायचीका चूर्ण मिलाकर उपयोगमें लेवें।

३. पञ्चसार रस

विधि—आंवलासार गन्धकको घीमें मिला तपा तपाकर ७ बार आंवलोंके रसमें बुझावें। फिर ४० तोले गन्धक और ४० तोले शुद्ध पारद मिलाकर कज्जली करें। पश्चात् आंवलोंके पत्तोंके रस, मुलहठी, पिण्डखजूर और मुनक्काके क्वाथमें क्रमशः १-१ दिन खरलकर सूखा चूर्ण बना लेवें। (र० च०)

मात्रा—२-२ रत्ती दिनमें २ बार भोजनके आध घण्टे पहले आंवलेके शर्बतके साथ दें या सुबह रात्रिको शक्कर मिश्रित आंवलोंके चूर्णके साथ देकर ऊपर दूध पिलावें।

उपयोग—पञ्चसार रस निर्भय, पित्तशामक और हृद्य कज्जली योग है। आमाशयकी पित्त विकृति होकर उदावर्त होने (गैस बननेपर) हृदयको धक्का पहुंचता रहता है। ऐसे विकारमें हृदयमें भारीपन, दाह, व्याकुलता, तृषा, कण्ठशोष, स्वेदाधिक्य, गरम गरम डकार आना आदि अम्लपित्तसे मिलते जुलते लक्षण उपस्थित होते हैं। इस रोगको आयुर्वेदमें पैत्तिक हृद्रोग कहते हैं। इस प्रकारमें जबतक मूल कारणरूप उदावर्त दूर नहीं होगा, तब तक हृदयरोगका शमन नहीं होता। यह रस आमाशयपर कार्यकारी होनेसे उदावर्तसह हृदयरोगको दूर करता है।

वक्तव्य—जब गैस उठकर हृदयको तीव्र आघात हो रहा हो, ऐसी अवस्थामें दिवालमुश्क या इतर कस्तूरीप्रधान हृद्य औषधि देकर वेगका तुरन्त दमन कराना चाहिये।

४. बलाद्यघृत

विधि—खरैंटीके मूल, गंगेरनकी छाल और अर्जुन छाल, तीनों २-२ सेर

का जौकुट चूर्ण मिला १६ गुने जलमें चतुर्थांश क्वाथ करें। फिर छान कलई किये हुए बरतन में भरकर चूल्हे पर चढावें। उसमें गो घृत २ सेर तथा मुलहठीका कल्क ६० तोले मिलाकर मंदाग्नि पर पाक करें। घृत सिद्ध होने पर नीचे उतार तुरन्त छान लें।
(भै० र०)

मात्राः—यह घृत हृद्रोग, हृदयशूल, हृदयमें क्षत, उरःक्षत, रक्तपित्त, वातज शुष्ककास, वातरक्त और पित्तप्रकोपज रोगोंको दूर करता है।

५. जवाहर मोहरा

विधिः—माणिक्य, पन्ना और मोती २-२ तोले, प्रवालपिष्टी, शृंग भस्म और संगयसब पिष्टी ४-४ तोले, कहरबा पिष्टी २ तोले, सोना और चांदीके वर्क ६-६ माशे दरियाई नारियलका चूर्ण ४ तोले, आबरेशम कतरा हुआ और जदवारका चूर्ण २-२ तोले तथा कस्तूरी और अम्बर १-१ तोले लें। पहले सब पिष्टी और भस्म मिला लें फिर १-१ वर्क तत्पश्चात् दरियाई नारियल आदि ३ औषधियोंका कपड़छान चूर्ण मिलाकर १४ दिन गुलाबजलमें खरल करें। १५ वें दिन कस्तूरी और अम्बर मिला गुलाबजलमें ६ घण्टे खरलकर आध आध रत्तीकी गोलियां बनालें।
(श्री पं० यादवजी त्रिकमजी आचार्य)

मात्राः—१ से २ गोली दिनमें २ या ३ बार शहद, खमीरे गावजवां अम्बरी (पाठ रसतंत्रसार प्रथमखण्डमें लिखा है) चार माशेके साथ देवें। ऊपर दूध या केवड़े या गावजवांके फूलका अर्क पिलावें।

उपयोगः—जवाहरमोहरा उत्तम हृदय पौष्टिक और मस्तिष्क पौष्टिक योग है। इसके सेवनसे हृदयकी घबराहट, हृदयकी निर्बलतासे थोड़ासा चलने पर दम भर जाना और दिल धड़कना, निस्तेजता, स्मरण शक्ति कम होजाना, निकम्मे निकम्मे विचार आते रहना, थोड़ासा विचार करने पर मस्तिष्क थक जाना और मस्तिष्ककी उष्णता आदि दूर होते हैं।

हृदयकी घबराहट, हृदयकी कमजोरीसे थोड़ासा चलनेपर दम भर जाना, दिल धड़कना, निस्तेजता, स्मरणशक्ति कम हो जाना, निकम्मे निकम्मे विचार आते रहना, थोड़ासा विचार करनेपर मस्तिष्क थक जाना, थोड़ासा विरोध होनेपर मस्तिष्क गरम होजाना आदि विकृतिपर जवाहर मोहरा केवड़े या गावजवांके अर्क या दूध के साथ दिया जाता है।

सन्निपात, मानसिक आघात, अति रजःस्राव, आगन्तु आघात या वमन-विरेचन आदि होकर शक्तिपात होजाना आदि प्रसंगोंमें जवाहर मोहरा तत्काल जीवन शक्तिकी रक्षा करनेमें सहायक होता है।

महाधमनी या हार्दिक धमनीके रक्ताभिसरण क्रियामें प्रतिबन्ध होनेपर हृदय-शूल चलता है। फिर रोगी अति व्याकुल हो जाता है। पहले शूलको तुरन्त शमन करने, फिर हृदयको सबल बनाने और भावी आक्रमणकी उत्पत्तिको रोकने के लिये

औषध व्यवस्था करनी पड़ती है। तीव्रावस्था (आक्रमणावस्था) शमन होने पर यह जवाहर मोहरा दिया जाता है। इससे हृदय बलवान बन जाता है। फिर भावी आक्रमण की भीति टल जाती है। हृदय सबल न हो, तब तक रोगीको पूर्ण आराम कराना चाहिये।

मुद्दतीज्वर, विषमज्वर अथवा मोतीझरा दिनोंतक रह जानेपर हृदय निर्बल बन जाता है। फिर हृदयकी गति तेज हो जाती है, निद्राका ह्रास हो जाता है, पचनक्रिया मन्द हो जाती है और देह निर्बल व कृश होजाती है। ऐसे रोगीको जवाहरमोहराका सेवन करानेसे थोड़े ही दिनोंमें अच्छा लाभ पहुँच जाता है।

बार बार १॥-२ वर्षके भीतर सन्तानोत्पत्ति होनेपर माता कमजोर हो जाती है और संतान भी कमजोर होती है। इनके संरक्षणार्थ जवाहरमोहरा और प्रवाल पिष्टी का सेवन कराना चाहिये। अन्यथा माता हृदयरोगसे पीड़ित हो जायगी और सन्तानों का हृदय भी कमजोर रह जायेगा।

६. याकूती

विधि —माणिक्यपिष्टी, पन्नापिष्टी, मुक्तापिष्टी, प्रवालपिष्टी, कहरवापिष्टी, पूर्ण चन्द्रोदय, सुवर्णके वर्क, अम्बर, कस्तूरी, आबरेशम कतरा हुआ और केशर ये ११ औषधियां २-२ तोले, बहमन सफेद, बहमन लाल, जायफल, लौंग और सफेदमिर्च १-१ तोला लें। पहले चन्द्रोदयके साथ सुवर्णके वर्क १-१ मिलाकर खरल करें। फिर सब पिष्टी और अन्य द्रव्योंका कपड़छान चूर्ण मिला गुलाबजलमें २१ दिन खरल करें। २१ वे दिन अम्बर कस्तूरी मिला गुलाबजलमें ६ घण्टे खरलकर आध-आध रत्ती-की गोलियां बनालेवें। यह प्रयोग स्वर्गवासी वैद्य श्री तिलकचन्द ताराचन्दसे श्री प० यादवजी त्रिकमजी आचार्यको मिला है।

मात्रा —१ से २ गोली पोदीनेके स्वरस या रोगानुसार अनुपानके साथ दिनमें २ बार।

उपयोग —यह याकूती सन्निपात ज्वर आदि विकारोंमें नाड़ीकी क्षीणता, देह शीतल होजाना, स्वेदाधिक्य आदि लक्षणों तथा हृदयकी दुर्बलता, थोड़ा चलने पर दम भर जाना और हृदयस्पन्दन बढ़जाना आदि लक्षणोंको दूर करनेके लिये व्यवहृत होती है।

इस याकूतीका सन्निपातमें सेवन कराने पर तत्काल नाड़ी सबल बनती है, घबराहट दूर होती है, तन्द्रा और मानसिक विकृति दूर होती है। वात और पित्त-प्रकोपज सन्निपातमें इसका प्रयोग होता है।

हृदयेन्द्रिय निर्बल बनने, विविध रोगोंसे रक्तको योग्य पोषण न मिलने और मस्तिष्कगत हृदयकेन्द्र विकृत हो जानेसे हृदय क्रिया अव्यवस्थित (Cardiac neurosis) हो जाता है। इनमें यदि हृदयेन्द्रिय या पर्देपर शोथ न आया हो तो इस

याकूतीका सेवन करानेसे क्रिया नियमित होजाती है। फिर हृद्वेपन (Palpitation), हृदयस्पन्दनके तालमें अनियमितता (Arhythmia) या अस्वाभाविक हृत्स्पंदन वृद्धि (Tachycardia) तथा इनसे उत्पन्न पचन क्रिया विकार, उदरमें वातसंग्रह, निस्तेजता, दम भर जाना आदि लक्षण दूर होजाते हैं।

अति मानसिक श्रमसे मस्तिष्क निर्बल बन जाता है। फिर स्मरण शक्तिका ह्रास, आलस्य, मनमें विविध कल्पना आती रहना, मानसिक व्याकुलता बनी रहना, निस्तेजता, शारीरिक कृशता, अग्निमान्द्य आदि लक्षण उपस्थित होते हैं। उसपर यह याकूती अच्छा लाभ पहुँचाती है।

शुक्रका दीर्घ काल तक दुरुपयोग करने पर शुक्रक्षय होजाता है। मुखमण्डल श्याम, निस्तेज होजाना, शरीर शुष्क होजाना, स्वभाव क्रोधी और संशयी बन जाना, कोई भी कार्य करनेका उत्साह न रहना, आलस्य, अग्निमान्द्य, वीर्य अति पतला हो जाना, किसी स्त्रीका चित्र सामने आने, पैरोंकी आवाज सुनने या स्मरण होनेपर शुक्रस्राव होजाना आदि लक्षण उपस्थित होते हैं। इस विकारपर ब्रह्मचर्य पालन सह इस याकूतीका सेवन कराया जाय, तो देह सबल और तेजस्वी बन जाती है। अनुपान दूध।

७. हृदयपौष्टिक चूर्ण

विधिः—प्रवाल पिष्टी, लाल फिटकरीका फूला, कहरवा, नागरमोथा और पोदीना १०॥-१०॥ माशे, जटामांशी ३॥ माशे, मुक्तापिष्टी ३॥ माशे, जराबन्द मुदहरिंज और दरुनज अकरबी १॥।-१॥। माशे, कस्तूरी ६ रत्ती और मिश्री सबके समान लेकर मिला लेवें।

मात्राः—१॥ से २ माशे तुरबुद (सफेद निशोथ) के क्वाथके साथ दिनमें २ या ३ बार देवें।

सूचनाः—जिस रोगीको मलकी प्रवृत्ति हो अर्थात पहले ही पतले दस्त होते हों अथवा अति क्षीण एवं शोधन करनेके योग्य न हो, उनके लिये निशोथके क्वाथके स्थानपर मीठे अनारका स्वरस अथवा गोदुग्धका अनुपान हितावह है।

उपयोगः—यह चूर्ण पित्तप्रकोप और वातविकृतिसे उत्पन्न हृद्रोगको दूर करता है।

८. हृद्य चूर्ण

प्रथमविधिः—डिजिटेलिसके पान, प्रवालपिष्टी और अकीक भस्म, तीनों समभाग मिलाकर खरलकर लें। इसमेंसे १-१ रत्ती शहदके साथ २-२ घण्टेपर दिनमें २-३ बार देनेसे हृदयकी धड़कन शान्त हो जाती है।

द्वितीय विधिः—डिजिटेलिस पत्रचूर्ण १ भाग और शृंग भस्म २ भाग मिलाकर ३ घण्टे खरलकर लेवें। इसमेंसे १-१ रत्ती शहदके साथ देनेसे हृदयकी दुर्बलता, धड़कन तथा

(नाड़ीका वेगाधिक्य दूर होते हैं। हृद्रोगोंमें उपद्रवरूप सर्वांग शोथ हो तब आरोग्य-वर्धनीके साथ मिलाकर इसका प्रयोग करनेसे विशेष लाभ होता है।

जीर्णकासमें कफ चिपचिपा और अधिक गिरता हो, साथमें हृदयकी दुर्बलता हो तो इसमें सूखे जंगली प्याज (वनपलाण्डु) का चूर्ण १-१ रत्ती मिलाकर प्रयोग करें। यदि रोगीको हृल्लास और वान्ति भी हो, तो इसका प्रयोग कुछ दिनके लिए बन्द करें। (श्री० प० यादवजी त्रिकमजी आचार्य)

सूचना —डिजिटेलिसको एलोपेथिक कोषमें एक क्षुपजातिका पौधा लिखा है। इसका चूर्ण एक्सट्रेक्ट और टिंचर आदिके रूपमें व्यवहृत होता है। यह मूत्रल, हृद्य, विशेषकर हृदयरोगजन्य शोथ जलोदर आदि रोगोंकी अवस्थामें चमत्कारी गुण दिखाता है। किन्तु जिस रोगीकी हृदयगति पहले ही न्यून हो, उनको देना निषेध लिखा है। यदि देना आवश्यक ही हो तो कुचिलेके साथ देना चाहिये। दूसरी बात यह है, कि इसका विशेष गुण देखनेपर भी दीर्घकाल तक इसका सतत सेवन कदापि नहीं करना चाहिये। आवश्यकतानुसार १ या २ सप्ताह तक सेवन करके १ सप्ताहके लिये बन्दकर देना चाहिये। इस विधिसे अधिक समय तक भी प्रयोग हो सकता है।

---

(२५) मूत्रकृच्छ्र, मूत्राघात

१ सूर्यावर्त्त क्षार

बनावट —२॥ सेर जल रहे उतनी बड़ी १ मिट्टीकी हांडी लेकर उसमें हाथी दांतका चूर्ण दबाकर आधी भरें। फिर आध सेर कलमीसोरा रखें। पश्चात् ऊपर हाथी दांतका चूर्ण भरकर ढक्कन लगा खुले मैदानमें जलती हुई अंगीठीपर रखें। शनै शनै हाथी दाँत जलने लगेगा, जिससे उसमेंसे दुर्गन्धयुक्त धुआं निकलने लगेगा। साथ साथ सोरा फूलने लगता है जिससे बड़ी बड़ी आवाज होती रहती है। उस समय ऐसा भास होता है, कि हांडी फूट गई, किन्तु हाँडी नहीं फूटती, और सोरा भी नहीं उड़ता। इस तरह हाथी दांत पूर्णांशमें जल जानेपर धुंआ निकलना बन्द हो जाता है। फिर हांडीको उतार लेवें। ऊपरसे हाथी दांतकी भस्मको अलग निकाल लेवें और तलेमें बैठे हुए सोरेको निकालकर पीस लेवें। (आ० नि० मा०)

वक्तव्य —हाथी दांतकी भस्मको पृथक् रखकर प्रदर (सोम) और अस्थिस्रावमें काम लेवें। वह पूयमेहमें लाभकारी है तथा लोमनाशनमें भी अपूर्व काम करती है। (राधाकृष्ण वैद्य)

मात्रा —२ से ४ रत्ती जलके साथ देवें।

उपयोग —यह क्षार मूत्र दाहको दूर करता है एवं उरक्षत आदिमें दाहसह ज्वरको दूर करनेमें उपयोगी है।

इस क्षारको ताजी गोभीके पत्तेके २ तोले स्वरस में मिलाकर पिलानेसे मूत्र कृच्छ्रता दूर होजाती है। उतनेसे सत्वर लाभ न हो, तो एक बैंतके ४-५ इञ्चके टुकड़ेको एक सिरेसे जला दूसरे सिरेसे सिगरेटके समान धूम्रपान कराने पर तुरन्त पेशाब आजाता है।

२. श्वेतपर्पटी

विधि:—सोरा ४० तोले, फिटकरीका चूर्ण १० तोले और नौसादर चूर्ण २॥ तोले मिला मिट्टीकी कड़ाहीमें डालकर गरम करें। द्रव होने पर गोबरपर रखे हुए केलेके पत्तेपर डाल देवें और ऊपर तुरन्त दूसरा पान रखकर लकड़ीके तख्तेसे दबा दें। शीतल होने पर पर्पटीको निकाल कूटकर कपड़छान कर लें।

मात्रा:—४ से ८ रत्ती सुबह १ बार या आवश्यकता पर किसी भी समय शीतल जल या कच्चे नारियलके जल अथवा १ रत्ती कपूरको जलमें मिला कर उसके साथ देवें।

उपयोग:—श्वेतपर्पटी मूत्रकृच्छ्रमें अति लाभदायक है। यह मूत्रल, स्वेदल, और वातानुलोमक है। यह मूत्राघात और अश्मरीमें अनुपान रूपसे व्यवहृत होती है। एवं अम्लपित्त, अपचन और अफारामें भी सरलतापूर्वक दी जाती है और मधुमेह रोगी के मूत्रमें अम्लविषकी मात्रा बढनेपर श्वेत पर्पटी का उपयोग किया जाता है।

इस पर्पटीमें सोराके साथ फिटकरी और नौसादर मिलानेसे अम्लतानाशक गुणकी वृद्धि और मूत्रल गुणकी सत्वर प्राप्ति होती है। फिटकरीके हेतुसे स्थानिक (मूत्राशय, आमाशय, और अन्त्रकी) शिथिलता दूर होती है। नौसादर तीक्ष्ण, मूत्रल, सारक, रजोनिःसारक, पाचक, व्रणविदारक और उदरवातहर है। सोरा मूत्रल, तीक्ष्ण, पित्त निःसारक, क्षारनाशक और अग्नि प्रदीपक है। आर्त्तव और मूत्रको भले प्रकार साफ लाता है।

३. तारकेश्वर रस

विधि:—शुद्ध पारद, शुद्धगन्धक, लोह भस्म, वंग भस्म, अभ्रक भस्म, यवक्षार, गोखरू, हरड़, बहेड़ा, जवासा, ये ६ औषधियाँ १-१ तोला लेवें। पहले पारद गन्धककी कज्जलीकर शेष औषधियोंका कपड़छन चूर्ण मिला मर्दनकर एक जीव करें। फिर पेठेका रस, तृणपञ्चमूल (कुश, काश, शर, दर्भ और ईख) का क्वाथ और छोटे गोखरूके क्वाथमें क्रम पूर्वक ३-३ रोज मर्दन करके २-२ रत्तीकी गोलियां बना लेवें (भै० र०)

मात्रा:—१-१ गोली प्रातःकाल शहद, उसीरासव अथवा पके हुये गूलरके फलोंका चूर्ण और शहदके साथ।

उपयोग:—इस तारकेश्वर रसका उपयोग आचार्योंने सब प्रकारके मूत्रकृच्छ्रों पर लिखा है। नूतन और जीर्ण दोनों अवस्थामें यह रस प्रयुक्त होता है। यदि जीर्णा-वस्थामें जिन रोगियोंका वृक्क अश्मरी आदि हेतुसे योग्य कार्य नहीं करता, उन रोगियों

की पाण्डुता, निद्रानाश, मानसिक निर्बलता, हृदय विकृति, अग्निमान्द्य, चक्कर आना और मलावरोध आदि लक्षण उत्पन्न होते हैं। ऐसे बढ़े हुये रोगमें भी संयमसह योग्य अनुपानके साथ इस रसका सेवन कराया जाय, तो रोगका दमन हो जाता है।

यह रस हृदय और श्वसन संस्थानके लिये पौष्टिक है। हृदयावरोध, हृदयकी धड़कन, निस्तेजता, चलते फिरतेसे थकावटका होना एवं चक्कर आना, कोई कार्य करनेमें मन नहीं लगना इन पर यह रस हितकारक है तथा शुक्रक्षयजन्य हृदयकी निर्बलताको भी दूरकर हृदयको पुष्ट बनाता है।

सूचना (१)—यदि मद्यपान या धूम्रपानका व्यसन हो तो त्याग देना चाहिये। यकृत् निर्बल है तो घृत, तैल, शक्कर, चावल और खटाईका सेवन कम करना चाहिये। पहले सुजाक होगया हो तो पूयमेहघ्न चिकित्सा भी साथ साथ करनी चाहिये। रक्तमें मूत्रविषका संचय अधिक हो गया हो तो स्वेदलाकर विषको बाहर निकाल देना चाहिये।

(२) इसपर बकरीका दूध और ईख पथ्य हैं। यकृत् सबल है तो शक्कर भी पथ्य मानी जाती है।

४. गोक्षुरादि घृत

विधि—गोखरू, एरण्डकी जड़, कुशा, काँस, शर, दर्भ और ईख, शतावरी, कसेरू इन ९ औषधियोंका स्वरस (अभावमें क्वाथ) २–२ सेर और गोघृत १ सेर मिलाकर मन्दाग्निसे पकावें। घृतावशेष रहनेपर छान लेवें। फिर कांच या कलईदार बर्तनमें भरकर रख दें। (भै० र०)

मात्रा—१–१ तोला सुबह शाम शहद या मिश्री मिले दूधके साथ।

उपयोग—यह गोक्षुरादि घृत मूत्रकृच्छ्र व मूत्रमार्गकी रुकावटके कारणसे बार बार पेशाब आता हो तथा मूत्राघात, बहुमूत्र, मूत्रातिसार और २० प्रकारके प्रमेह, बद्धकोष्ठ और निर्बलता आदिमें अच्छा लाभदायक है। गोक्षुरादि घृत मूत्रसंस्थानको सबल बनाता है। मूत्रमार्गमें रहे हुए प्रतिबन्धको दूर करता है। यदि पित्तोत्पत्तिकी रचना दूषित होनेसे अश्मरी कणोंका निर्माण होता हो, तो उस पर भी लाभ पहुचाता है। इस घृतका उपयोग विशेषतः वातज, पित्तज, वातपित्तज और अश्मरीजन्य मूत्रकृच्छ्रपर होता है। नूतन रोगमें इस घृतका सेवन सहायक औषधि रूपसे भोजनके साथ और जीर्ण रोगोंमें मुख्य औषधि रूपसे कराया जाता है। आवश्यकता अनुसार तारकेश्वररस, वल्याणलोह या अन्य औषधिका साथ साथ सेवन करानेपर शीघ्र लाभ मिलता है।

५. शतावरी घृत (मूत्रकृच्छ्र)

विधि—शतावरी, काश, कुश, गोखरू, विदारीकन्द, ईखके मूल, आंवला, इन ७ औषधियोंको सममाग मिला जलके साथ पीसकर कल्क करें। फिर कल्क ४ सेर, सेर और जल ८० सेर (या शतावरी आदि औषधियोंका क्वाथ) मिलाकर

मन्दाग्नि द्वारा घृत सिद्ध करें। फिर तुरन्त कड़ाहीको उतारकर घृतको छान लेवें और काँच या कलईदार वर्तनमें भरलेवें। (भै० र०)

मात्राः—१–१ तोला सुबह शाम शहद और मिश्रीके साथ देवें।

उपयोगः—यह शतावरी घृत दारुण मूत्रकृच्छ्र, मूत्राघात, अश्मरी, प्रमेह, स्त्रियोंके गर्भाशयविकार, पुरुषोंके धातु सम्बन्धी विकार, रक्तपित्त, रक्तस्राव और सोमरोग को दूर करता है और शरीरको पुष्ट बनाता है।

मूत्राशय अथवा मूत्रप्रसेक नलिकामें विकृति होने या मूत्रमार्गमें अश्मरी आदि प्रतिबन्ध होनेपर मूत्रकृच्छ्रकी उत्पत्ति होती है। इस रोगमें मूत्रोत्पत्ति नियमित होती रहती है। किन्तु मूत्राघातमें नहीं होती। यह दोनों विकारोंमें भेद है इस विकारमें मूत्र कष्टसे उतरता रहता है और रोगीको बार बार पेसाब करने जाना पड़ता है इस मूत्रकृच्छ्र रोगमें वातज, पित्तज, कफज आदि प्रकार हैं। इनमें पित्तज प्रकोप होनेपर शीतलवीर्य उपचार किया जाता है। यह घृत शीत वीर्य है; अत पैत्तिक मूत्रकृच्छ्र पर अधिक लाभ पहुँचाता है। बहुधा आमाशयके पित्तकी उग्रताका दमन होने और मूत्राशयपर शामक असर पहुँचानेपर मूत्रकृच्छ्र शमन होता है। अतःइस घृतके साथ मूत्रदाहान्तक चूर्ण मिला दिया जाय, तो लाभ सत्वर होता है।

मूत्रकृच्छ्र रोगमें घृतकी अपेक्षा क्वाथ प्रयोग अधिक होता है क्वाथसे शीघ्र लाभ पहुँचता है। फिर भी अति निर्बल और शुष्क देहवाले अनेक उपद्रवयुक्त जीर्ण रोगियों और वयोवृद्धोंको क्वाथकी अपेक्षा घृत अधिक अनुकूल रहता है। ऐसा कतिपय रोगियोंमें अनुभव हुआ है। अनेक रोगियोंको घृतका सेवन भोजनके साथ करानेपर मूत्रकृच्छ्रका कष्ट कम होता है।

वृद्धावस्था आनेपर कितनेक मनुष्योंकी पौरुषग्रन्थि (Prostate Gland) बढ़ जाती है। उनको मूत्रत्याग बारबार होता रहता है। वृद्धावस्थाके हेतुसे अस्त्र चिकित्सा भी नहीं करा सकते। उनको इस घृतका सेवन करानेपर शनैः शनैः लाभ पहुँचता है।

इस घृतमें शतावरी, गोखरु और विदारीकन्द इन शुक्रवर्द्धक औषधियोंका संमिश्रण होनेसे यह शुक्रमेहपर भी लाभदायक है। वीर्यके उष्णता और पतलापनपर तथा वीर्य स्वप्नदोषद्वारा बारबार निकलता हो, ऐसे शुक्रमेह और उससे उत्पन्न विकारोंमें इस घृतसे अच्छा लाभ होता देखा गया है।

सूचनाः—(१) मूत्रकृच्छ्र रोगकी उत्पत्ति अति मद्यपान अति धूम्रपान, घृतजन्य अपचन होनेपर दिनोंतक अधिक सेवन करना, तीक्ष्णवीर्य औषधिका सेवन और अश्मरी कण आदिकी उत्पत्ति हेतु हैं। मूल कारणको शराब, तमाखू या अधिक घृत सेवन आदि हों तो उसे आग्रहपूर्वक छोड़ देना चाहिये। अन्यथा अति हितावह औषधि भी कार्य नहीं कर सकेगी।

चाती है। आपरेशन करानेकी इच्छावाले अनेक रोगी इस वटीके सेवनसे रोगमुक्त होनेके उदाहरण मिले हैं।

सूचना —तमाखूके व्यसनीको चाहिये कि तमाखू छोड़ दें या हो सके उतना कम करदेवें।

४ एलादिचूर्ण (अश्मरी)

विधि —छोटी इलायचीके दाने, पाषाणभेद, शुद्ध शिलाजीत और पाषाण, चारोंको समभाग मिलाकर चूर्ण करें। (च० द०)

मात्रा —१॥–१॥ माशा, १–१ रत्ती केशर मिलाकर चावलोंके धोवन या कुलथीके यूषके साथ देवें। तीव्र दर्द होनेपर गुड़के जलके साथ २–२ घण्टेपर देते रहें।

उपयोग —यह एलादि चूर्ण वृक्कस्थान और मूत्राशयमें रही हुई अश्मरीका भेदनकर निकाल देता है। अश्मरीसे उत्पन्न मूत्रकृच्छ्रमें यह दिया जाता है।

सूचना —रोगीको पीनेके लिये कुसुमके बीज ५ तोले और शक्कर १० तोले को २ सेर शीतल जलमें मिला लेवें। फिर उसमेंसे थोड़ा थोड़ा जल आवश्यकता पर पिलाते रहें।

५. बृहद् वरुणादि क्वाथ

विधि —वरनाकी छाल, सोंठ, गोखरू, मूसली और कुलथी १-१ तोला तथा कुशादिपञ्चतृण मूल ५ तोलेको मिला जौकूट चूर्ण करें। (भै० र०)

मात्रा —इस चूर्णमेंसे ६ तोलेको ६६ तोले जलमें उबालकर चतुर्थांश क्वाथ करें। फिर ३ हिस्सा करके श्वेतपर्पटी या जवाखार मिलाकर १-२ या ३ बार २-२ घण्टे पर पिलावें।

उपयोग —इस क्वाथके सेवनसे वृक्क स्थानका भयंकर शूल और उस हेतुसे उत्पन्न वमन आदि उपद्रव, मूत्र कृच्छ्र, लिंगशूल, बस्तिशूल आदि सब दूर हो जाते हैं।

६. अश्मरीहर कषाय

विधि —पाषाणभेद, सागौनके फल, पपीते (एरण्डककड़ी) के मूल, शतावर, गोखरू, वरनाकी छाल, कुशके मूल, कासके मूल, चावल-धानके मूल, पुनर्नवा, गिलोय, चिचड़ेके मूल और खीरा ककड़ीके बीज, इन १३ औषधियोंको १-१ तोला तथा जटामांसी और खुरासानी अजवायनके बीज (या पान) २ २ तोले लेवें। सबको मिला जौकूट चूर्ण करलें। (श्री० पं० यादवजी त्रिकमजी आचार्य)

मात्रा —१ तोले चूर्णको १६ तोले जलमें मिला चतुर्थांश क्वाथ कर, छान कर उसमें ५ रत्ती शिलाजीत या १० रत्ती क्षार पर्पटी या जवाखार मिलाकर पिला देवें। आवश्यकता पर २-२ घण्टे पर दो या तीन बार देवें। इस क्वाथके साथ हज़रूलयहूदकी भस्म मूलीके स्वरसकी हुई देनेसे विशेष लाभ होता है।

उपयोगः—यह कषाय अश्मरी, शर्करा, कंकड़ी, सिकता (रेती) तथा उससे होनेवाले वृक्कशूल और उदरशूलमें व्यवहृत होता है।

वक्तव्य—वृक्कशूल, मूत्राशयशूल और अश्मरीके रोगीको यवमण्ड (२ तोले जौको ६४ तोले जलमें मिला चतुर्थांश जल शेष रहनेपर छाना हुआ जल), कच्चे नारियलका जल, ईखका तुरन्त निकाला हुआ रस तथा लौकी, पेठा, ककड़ी, मकोयकी पत्ती, पुनर्नवाके पान, कासनीके पान आदि मूत्रल द्रव्योंकाशाक एवं कमर तक गरम जलमें बैठना (अवगाह स्वेद) आदि हितकारक हैं।

द्विदलधान्य, मांस, कंदशाक और स्नेहपक्व अन्न (घीतैलमें पकाये हुए भोजन) अपथ्य हैं।

७. अश्मरीनाशक योग

(१) नारियलके फूल (सूखे) ३ माशेको चटनीकी तरह जलके साथ मिलाकर पीसें। फिर यह चटनी और १ माशा जवाखार या केलेके क्षारको २० तोले शीतल जलमें मिला छानकर पिला देनेसे वृक्क और बस्तिमें रहे हुए अश्मरी कण जल्दी निकलकर तीव्र वेदना और वमन आदि उपद्रवका शमन हो जाता है। यह अति सफल और निर्भय प्रयोग है। (भै० र०)

सूचनाः—नारियलके वृक्षके मस्तकमें चारों ओर लम्बी लम्बी जेल निकलती हैं। उनमें दो प्रकारके फूल लगते हैं। स्त्रीपुष्प और पुंपुष्प। स्त्री पुष्प आकारमें बड़े होते हैं। और वही फलरूप बन जाते हैं। पुंपुष्प अनेक लगते हैं। इनकी आकृति धानकी सीलके समान होती है। ये पुष्प कुछ दिनोंमें झड़ जाते हैं। ये ही इस प्रयोगमें लिये जाते हैं।

(२) पेठेका रस या लाल पक्के कद्दुका रस १-१ औंसमें नारिकेल लवण या सैंधानमक ३-३ माशे मिलाकर दिनमें २ या ३ बार देते रहनेसे अश्मरी टूट टूट कर निकल जाती है। फिर मूत्रकृच्छ्र, बूंद बूंद पेशाब टपकना और दाह आदि लक्षण दूर होजाते है। कभी कभी यह प्रयोग एकाध मास तक चालु रखना पड़ता है।

(३) केलेके खम्भेका रस या नारियलका जल ३-४ औंसमें सोरा १-१ माशा मिलाकर दिनमें २ बार देते रहनेसे अश्मरीकण निकल जाता है और पेशाब साफ आजाता है।

(४) चन्द्रप्रभावटी २-२ रत्ती तथा यवक्षार २-२ रत्ती प्रातः सायं शहदके साथ देवें। दोपहरको दो बजे और रात्रिको सोते समय नारिकेल पुष्प चूर्ण ३ माशे तथा यवक्षार ६ रत्ती मिलाकर जलके साथ देवें, तथा दोनों समय भोजनके बाद चन्दनासव १।-१। तोला, नारिकेल लवण ६-६ रत्ती और १।-१। तोला जल मिलाकर देते रहें।

(कविराज उपेन्द्रनाथ दासजी)

इस व्यवस्थाके अनुसार १५ दिन तक औषध सेवन कराने पर वृक्क स्थान और

मूत्राशयकी पथरीके कण थोड़े रोजमें निकल कर अश्मरी नष्ट हो जाती है। इस औषध प्रयोगसे पथरी गलती है, टूटती है और सरलतासे निकल जाती है। शस्त्र चिकित्साके योग्य अनेक रोगियोंको इस प्रयोग व्यवस्था द्वारा थोड़े ही दिनोंमें लाभ होगया है।

(५) २ रत्ती फलवाको मुनक्काके भीतर रख निगल जानेसे थोड़े ही समयमें वृक्कशूल शमन होजाता है।

(६) मकईके भुट्टेकी डाडी और पुरानी सुपारीको चिलममें रख कर धूम्रपान करनेसे वृक्कशूलकी तीव्रता तत्काल निवृत्त होजाती है।

८ पाषाणभेदादि घृत

विधि —पाषाणभेद, बड़े बकुल (मोलसरी) के पुष्प, अपामार्गका मूल, सिरहटा (अश्मन्तक-मराठीमें आपटा), शतावर, ब्राह्मी, अतिबला (कवी पेटारी) श्योनाक, खस, केतकीकी जटा, वृक्षादनी (बन्दाक), सागौनके फल, छोटी कटेली, रोहिष घास, गोखरू, जव, कुलथ, बेर, वरुणकी छाल और निर्मलीके फल इन २० औषधियोंको १६–१६ तोले मिलाकर ८ गुने जलमें चतुर्थांश क्वाथ करें। फिर क्वाथको छान २ सेर गौ या बकरीका घी तथा उपर (रेह मिट्टी), सैंधानमक शिलाजीत, हींग, लाल कासीस, हरी कासीस और तुत्थक (खपरिया) इन ७ वस्तुओंका ४–४ तोलेका कल्क मिलाकर घृत सिद्ध करें। (अ० हृ०)

मात्रा —६ माशेसे २ तोले तक भोजनके आरम्भमें (दो तीन ग्रासके साथ) दिनमें दो बार।

उपयोग —इस घृतके सेवनसे वातप्रकोपज अश्मरी, बस्ति स्थानमें शूल, पेशाबमें रती जाना आदि विकार १–२ माससें दूर होते हैं। रोग अति पुराना होनेपर और अश्मरी अति कठोर अथवा सुपारीसे बड़ी होनेपर औषधिका सत्वर उपयोग नहीं हो सकता।

सूचना —इस घृतके सेवन कालमें हजरूलयहूदादि चूर्ण या हजरूलयहूदकी पिष्टी, शिलाजीत और कलमीसोरा ६–६ रत्ती प्रात साय देते रहना चाहिये तथा भोजनमें द्विदल धान्य बिल्कुल नहीं देना चाहिये।

भोजनमें कुसुम, पुनर्नवा, चौलाइ, ककड़ी, मूली, इनमेंसे किसीका शाक दिया जाय तो विशेष हितकारक है। तीव्र प्रकोपमें केवल दूधपर रखना चाहिये।

---

(२७) प्रमेह

१ चन्द्रकला वटी

विधि —छोटी इलायचीके दाने, कपूर, शिलाजीत, आवला, जायफल, केशर, मोचरस, रससिन्दूर, वङ्ग भस्म और लोहभस्म, ये १० औषधिया समभाग मिला,

गिलोय स्वरस और सेमलकी छालके क्वाथसे ३-३ दिन खरलकर २-२ रत्तीकी गोलियां बना लेवें। (आ० सं०)

मात्रा:—१ से २ गोली दिनमें २ बार शहदके साथ देवें। ऊपर गोदुग्ध या त्रिफला, देवदारु, दारुहल्दी और नागरमोथा, इन ६ द्रव्योंका क्वाथ पिलावें।

उपयोगः—यह रसायन सब प्रकारके प्रमेहों पर लाभदायक है। यह विशेषतः शुक्रमेह या स्वप्नदोष पर व्यवहृत होता है।

२, प्रमेहान्तक रस

बनावट:—वंगभस्म, नागभस्म, अभ्रकभस्म, लोहभस्म, कान्त लोहभस्म, रससिन्दूर, ताम्रभस्म, तीक्ष्ण लोहभस्म, शुद्ध हिंगुल, शुद्ध गन्धक, सोहागेका फूला और जसदभस्म इन १२ औषधियोंको १-१ तोला मिलाकर हंसराजके रसमें ३ दिन खरलकर सुखावें। फिर आतशी शीशीमें भर बालुका यन्त्रमें रख ६ घण्टे अग्नि देनेसे औषध पक कर एक पिण्ड बन जायगा। उसे स्वाङ्ग शीतल होने पर निकाल कर पीस लेवें। पश्चात् कपूर, केशर, दालचीनी, नागकेशर, तेजपात, छोटी इलायचीके दाने, सफेद चन्दन, जायफल, जावित्री इन ९ औषधियोंके चूर्णको समभाग मिला मर्दन कर मिश्रण बना लेवें। फिर कंदुरीके पान (बिम्बी पत्र) के स्वरसमें ३ दिन खरल कर २-२ रत्ती की गोलियां बनाकर छायामें सुखा लेवें। (र० यो० सा०)

उपयोगः—इस रसायनकी १ से २ गोली तक शहद तथा त्रिफला, देवदारु, दारुहल्दी और नागरमोथा इन ६ औषधियों के क्वाथके साथ अथवा मक्खनमिश्रीके साथ दिनमें दो बार देनेसे सब प्रकारके पुराने प्रमेह रोग नष्ट होजाते हैं। रोगानुसार अनुपानके साथ इस रसायनका सेवन करानेसे सब रोगोंको यह दूर करता है। शरीर पुष्ट होता है। बलकी वृद्धि होती है। कान्ति दिव्य होती है और अनेक स्त्रियोंसे रमण करनेका सामर्थ्य आजाता है। इस रसको बिम्बी पत्रके रसकी भावना देनेसे मधु (शक्कर) के ह्रास करानेके गुणकी वृद्धि होती है। इस हेतुसे मधुमेह और इक्षुमेहपर भी यह सफलता पूर्वक प्रयुक्त होता है।

३. विलासिनीवल्लभ रस

विधिः—शुद्ध पारद, शुद्ध गन्धक १-१ तोला तथा धतूराके शुद्धबीज, २ तोले लें। सबको मिला खरलकर पाताल यन्त्रसे निकाले हुए धतूरेके फलोंके रस (तैल) के साथ ६ घण्टे खरलकर १-१ रत्तीकी गोलियां बनावें। (र० चं०)

वक्तव्य:—रसयोगसागर, रसचण्डांशु और भैषज्य रत्नावली ग्रन्थमें इस रसायनका नाम कामिनीमदविध्वंसनो रस रखा है। इस तरह इस रसायनको कामिनीदर्पघ्न और कामदेवरस नाम भी दिये हैं।

उपयोग —इस रसायनके सेवनसे जीर्ण प्रमेह रोग, पेशाबमें वीर्य जाना, स्वप्नदोष और शीघ्रपतन आदि दूर होते हैं। वीर्य और स्तम्भन शक्तिकी वृद्धि होती है।

सूचना —अति शुष्क देहवालोंको एवं अति मन्द अग्निवालोंको यह रसायन नहीं देना चाहिये। धतूरा आमाशय आदिके स्रावको कम कराता है, जिससे पचन क्रिया अधिक मन्द होजाती है।

४ बृहद्धरिशंकर रस

बनावट —शुद्ध पारद, शुद्ध गन्धक, लोहभस्म, सुवर्णभस्म, वङ्गभस्म और सुवर्णमाक्षिकभस्म, इन ६ ओषधियोंको समभाग मिला आवलेके स्वरसमें ७ दिन तक खरल करके २–२ रत्तीकी गोलियां बनालें। (र० सा० स०)

मात्रा —१ से २ गोली दिनमें २ समय दें। अनुपान आंवलोंका रस, गिलोयका स्वरस, त्रिफला और शहद, हल्दी और मिश्री या मिश्री और शहद अथवा रोगानुसार अन्य अनुपानके साथ दें।

उपयोग —यह रसायन कफज, पित्तज और वातज, सब प्रकारके प्रमेहोंको निःसंदेह नष्ट करता है। पाचन क्रियाको बढ़ाता है। शुक्रको गाढ़ा करता है तथा शरीरको नीरोगी और पुष्ट बनाता है।

५. प्रमेहकुञ्जरकेसरी

बनावट —सुवर्णभस्म १ तोला, जसदभस्म २ तोले, लोह भस्म ३ तोले, अभ्रकभस्म ४ तोले तथा वङ्ग भस्म, रस सिन्दूर और अमृतासत्व ५-५ तोले लें। सबको मिला सफेद मूसलीका क्वाथ, केलेके स्तम्भेका रस, सेमलकी छालका क्वाथ और गोखरूके क्वाथ, इन सबकी ३-३ भावना देकर २–२ रत्तीकी गोलियां बनालेवें।

(र० यो० सा०)

मात्रा —१ से २ गोली दिनमें दो बार शहदके साथ देवें। फिर ऊपर आंवला और गोखरूका क्वाथकर पिलावें।

उपयोग —इस रसायनके सेवनसे २ मासमें सब प्रकारके प्रमेह दूर होते हैं। रात्रिको सोनेके समय हरड़का क्वाथ शहद मिलाकर पिलाते रहना चाहिये और पथ्यका पालन करना चाहिये। अति जीर्ण प्रमेह रोगको भी यह रसायन जड़ मूलसे नष्टकर देता है। सब प्रकारके प्रमेहोंपर लाभ पहुँचता है।

अश्मरीमें इस रसायनके सेवनके साथ बिजौरेकी जड़ गरम करके शीतल किये हुए जलमें घिसकर पिलाते रहें। एवं यह रसायन मूत्रकृच्छ्र तथा गर्भिणीके शूल, विष्टम्भ, ज्वर और अतिसारमें बायबिडङ्ग और पाषाणभेदके चूर्णके साथ देवें।

सूचना—इस रसका उपरोक्त विधिसे गिलोय और लोधकी भी भावना देके

६. मेहमुद्गर रस

बनावटः—रसौंत, बिडनमक, देवदारु, बेलगिरी, गोखरू, अनारकी छाल, चिरायता, पीपलामूल, सोंठ, कालीमिर्च, पीपल, हरड़, बहेड़ा, आंवला और निसोत, ये १५ औषधियां १-१ तोला, लोहभस्म १५ तोले और शुद्ध गूगल ४ तोले लें। गूगलको छोड़ शेष काष्ठादि औषधियोंका कपड़छान चूर्ण करें। गूगलको घी मिलाकर कूटें। फिर उसमें कूट कूटकर भस्म और चूर्ण सब मिला २-२ रत्तीकी गोलियां बना लेवें। यदि आंवला और गोखरूको समभाग मिला क्वाथ कर ३ भावना देकर गोलियां बांधे तो विशेष लाभ पहुँचता है। (र० चं०)

मात्राः—१ से ४ गोली दिनमें दो बार बकरीके दूधसे या त्रिफला, दारुहल्दी, देवदारु और नागरमोथाके क्वाथसे देवें।

उपयोगः—यह रसायन २० प्रकारके प्रमेह, हलीमक, अश्मरी, कामला, पाण्डु, मूत्राघात, अरुचि, अर्श, व्रण, कुष्ठ, वातरक्त और भगंदर आदि रोगोंको दूर करता है। प्रमेह रोग वालेको पाण्डु और अर्श विकार हो, तब यह रसायन अच्छा लाभ पहुँचाता है।

७. मधुमेहहर योग

विधिः—शुद्ध अफीम १॥ तोले तथा धतूरेके शुद्ध बीज और मकरध्वज ६-६ माशे लें। तीनोंको मिलाकर खरल करें। इसमेंसे आध आध रत्ती दिनमें दो बार गोदुग्ध या गुड़मारके अर्कके साथ सेवन कराते रहनेसे मधुमेह दूर होजाता है। यदि इसकी गोलियां बनाना हो तो धतूराके रसमें ३ दिन खरल करके आध आध रत्तीकी गोलियां बना लेनेसे विशेष लाभ पहुँचता है।

८. मधुमेहदर्पहारी

विधि—अफीम और शुद्ध शिलाजीतको समभाग मिला, अदरखके रसकी २१ भावना देकर, आध आध रत्तीकी गोलियां बनावें। (औ० गु० ध० शा०)

मात्राः—१-१ गोली दिनमें २ बार गुड़मार अर्क, धारोष्ण गोदुग्ध या जलके साथ देवें।

गुडमार अर्कः—गुड़मार ६० तोले, जटामांसी १० तोले और नागरमोथा १० तोले मिला ८ सेर जलमें रात्रिको भिगो दें। फिर दूसरे दिन अर्क खींच लेवे।

उपयोगः—यह औषध मधुमेहपर तत्काल लाभ पहुँचाता है। अफीम और शिलाजीतके संयोगसे इक्षुमेहमें उत्तम लाभ पहुँचता है। अफीम कड़वा रस प्रधान और वात शामक ओषधि है, तथा वह स्तम्भक, प्रारम्भमें उत्तेजक, फिर अवसादक या ग्लानि उत्पादक, वेदनाशामक, मदोत्पादक, निद्राप्रद, वाजीकरण, स्वेदोत्पादक, शोथघ्न और श्लेष्मनाशक है। अफीमके रासायनिक पृथक्करण करने पर उसमेंसे मॉर्फिन (Morphine)

कोडिन (Codeine) अपोमार्फिन और नार्कोटिन (Norcotine) आदि विविध प्रभाव द्रव्य मिलते हैं, किन्तु अफीमको जैसीकी वैसीही उपयोगमें लेनी, इस दृष्टिसे आयुर्वेदीय कल्प सुविधाजनक है। विशेष विचार करनेपर अफीम विचित्र गुण समूहयुक्त औषधि है।

इस औषधमें शिलाजीत है, वह दोषघ्न, रसायन, धातु परिपोषण क्रमको व्यवस्थित करती है। एवं अदरखकी भावना देनेसे पाचकाग्नि और धातुओंसे सम्बन्ध वाली अग्निको बढ़ानेका कार्य सम्यक् प्रकारसे होता है। जिससे स्वेद अधिक आता है।

मधुमेहदर्पहारीका कार्य इक्षुमेह और मधुमेह, इन दोनोंमें मूत्रके साथ जाने वाली शक्करको कम करनेका है। यह कार्य अफीम और शिलाजीतके संयोगसे उत्तम प्रकारसे होता है। मधुमेहमें मधु नियमन डाक्टरी मतानुसार इन्सुलिन (Insulin) नामक द्रव्यसे होता है, किन्तु इसकी अपेक्षा भी मधु नियमन अत्यधिक परिमाणमें इस रस द्वारा होता है। अधिक बार और अधिक मात्रामें पेशाब होनेपर ही इस औषधका उत्तम उपयोग होता है। मधुमेह रोग दीर्घकालका होजाने पर उसी हेतुसे प्रमेहपिटिका उत्पन्न होने पर यह औषध अधिक मात्रामें प्रयोजित करनी चाहिये। अशक्ति, बार बार पेशाब होना, पसाब अधिक उतरना, शारीरिक और मानसिक उत्साहका क्षय, अंगोंमें कुछ वेदना बनी रहना, जलपानकी इच्छा अधिक रहना आदि लक्षण होनेपर मधुमेहदर्पहारीका अवश्य प्रयोग करना चाहिये। इससे मन प्रसन्न रहता है और उत्साह बढ़ने लगता है, परन्तु इस बातको लक्ष्यमें रखना चाहिये, कि इसमें अफीम होनेसे पहले उत्तेजना बढ़ती है। फिर कुछ समयके पश्चात् अवसादकता आने लगती है। उस समय शरीर निर्बल बन जाता है। अतः कम मात्रामें ही इसका प्रयोग करना चाहिये। दूसरी बात यह है कि, इसका व्यसन हो जानेकी भीति है।

अधिक मात्राकी आवश्यकता हो, तो रसतन्त्रसारमें लिखी हुई मधुमेहनाशक जातिफलादि वटी या महावातराज रस लेना चाहिये। अथवा मधुमेहदर्पहारीके साथ पूर्णचन्द्रोदयका भी सेवन करते रहना चाहिये।

मधुमेहदर्पहारी देनेपर थोड़े ही दिनोंमें तृषाका ह्रास होता है। जिससे मूत्रका परिमाण कम होजाता है और मूत्रत्यागकी संख्याका ह्रास होजाता है। इनके अतिरिक्त मूत्रमेंसे मधु (शक्कर) की मात्रा भी न्यून होजाती है।

मूत्रातिसार, बहुमूत्र आदि लक्षण होने पर यह मधुमेहदर्पहारी उत्तम कार्य करता है। मधुमेहदर्पहारी देनेका प्रारम्भ होनेपर कुछ कुछ प्रस्वेद आने लगता है। जिससे मूत्रद्वारा निकलने वाले विषका कुछ अंश प्रस्वेद द्वारा निकल जाता है। इस हेतुसे भी मूत्रमें मधुका परिमाण कम भासता है।

सहस्रार (मगज) और वातवाहिनियाँ, इनपर इस औषधका कार्य एक विशिष्ट प्रकारका होता है अर्थात् पहले किञ्चित उत्तेजना आती है, फिर एक प्रकारकी प्रसन्नता शान्तिका अनुभव आता है। यह शान्ति अफीमरहित औषधसे नहीं मिलती।

इस हेतुसे मधुमेह या इतर प्रमेहमें सहसा भीति लगना, छातीमें आघात पहुँचनेके सदृश भासना, हाथ-पैर गल जाना, हाथ पैरोंमें कम्प होना, कुछ विचार करनेका प्रसंग आने पर मानसिक व्याकुलता होना, स्वस्थ निद्रा न मिलना, बीच-बीचमें कितनीक बार मानसिक धक्का लगकर जाग जाना आदि लक्षण होनेपर अफीमप्रधान औषध अति हितावह माना जाता है।

मधुमेह जीर्ण होजानेसे या वृद्धावस्थामें मधुमेह उत्पन्न होजानेसे बेचैनी, धैर्यनाश और चिन्ता आदि लक्षण होनेपर मधुमेहदर्पहारीसे उत्तम लाभ पहुँचता है।

क्वचित् किसी विलक्षण आघातके हेतुसे मधुमेह होजाता है। जैसे सट्टा या व्यापारमें हानि अथवा चोरी, डाका, अग्निप्रकोप आदिसे धन नाश होजाने, कर्ज होजाने अथवा मानहानि या कीर्त्तिनाश होनेकी आपत्ति आनेपर मधुमेह होजाता है। ऐसे मधुमेहपर यह औषध अच्छा लाभ पहुँचाता है।

अफीमके गुण दोषः—अफीमसे अन्तःस्राव कम होता है; किन्तु प्रस्वेद अधिक मात्रामें आने लगता है; तथा स्तन्य (दूध) की मात्रा भी कम नहीं होती। श्लैष्मलत्वचा शुष्क होजाती है। आमाशयका रसस्राव कम होजानेसे अन्त्रका स्राव भी कम होजाता है। क्षुधा कम होजाती है। पचनविकृति होती हैं। हृदयकी क्रिया सुधरती है। धमनियोंमें रक्तवहन उत्तम प्रकारसे होता है। आरम्भमें आध पोन घण्टाके लिये नाड़ीका दबाव (Tension) बढता है। जिससे नाड़ी सबल भासती है। फिर क्षीण होजाती है। मगजमें तरी आती है। मन शान्त बनता है। अधिक मात्रा सेवन करनेपर नशा आ जाता है। निद्रा स्वस्थ आती है; किन्तु इससे अच्छा लगेगा, ऐसा नहीं होता। कण्ठ सुन्न होजाता है। दर्द होने लगता है। थकावट आजाती है। मानसिक बेचैनी-सी भासती है। पचन शक्तिका ह्रास होजाता है. तथा मलावरोध होजाता है। अफीमके ये सब गुणधर्म इस स्थानपर विस्तारसे लिखनेका कारण यह है कि, इसमें रहे हुए दोषोंको लक्ष्यमें रखकर औषधयोजना करनी चाहिये।

सूचनाः—जिन रोगियोंको कब्ज अधिक रहता हो, उनको यह औषध नहीं देनी चाहिये। एवं इस औषधकी ज्यादा मात्रा भी नहीं देनी चाहिये।

(औ० गु० ध० शा० के आधारसे)

जिसके रुधिरमें शक्कर अधिक बढ गई हो, मूत्रकी मात्रा पहलेसे ही न्यून हो, उस रोगीको यह औषधि न दी जाय, तो अच्छा। (संशोधक)

६. शिलाजत्वादि वटी

प्रथम विधिः—शुद्ध शिलाजीत ४ तोले, अभ्रक भस्म, लोह भस्म, सुवर्णमाक्षिक भस्म, वङ्गभस्म १-१ तोला तथा अम्बर ३ माशे लें। सबको मिला त्रिजातके क्वाथमें ३ दिन खरल कर २-२ रत्तीकी गोलियां बनावें।

मात्राः—१-१ गोली रात्रिको कपूर २ रत्ती और खुरासानी अजवायन ४ रत्तीके साथ दें। ऊपर दूध पिलावें।

उपयोग —यह वटी शुक्रस्राव और स्वप्न दोषको दूर करती है। पेशाबमें धातु जाती हो, तो उसे रोक देती है। हृदयको सबल बनाती है। स्मरणशक्ति बढ़ाती है। पाण्डु, कफवृद्धि, स्वप्नदोष, हृदय निर्बलता, रक्त न्यूनता आदिमें लाभ पहुँचाती है।

दूसरी विधि —शुद्ध शिलाजीत, अभ्रक भस्म, स्वर्ण भस्म, लोह भस्म, शुद्ध गूगल और सोहागेका फूला, इन सबको समभाग मिलाकर काले भांगरेके रसमें ३ दिन खरलकर १-१ रत्तीकी गोलियाँ बना लेवें। (भै० र०)

मात्रा—१-१ गोली दिनमें दो बार मेंगालके जलके साथ।

उपयोग —यह वटी शुक्रस्राव और स्वप्नदोषके लिये अति हितकारक है। पित्त प्रधान प्रकृतिवाले तथा अति स्त्रीसमागम और शराब आदिके सेवनसे जिनके शरीरमें अधिक उष्णता रहती हो, मस्तिष्क निर्बल होगया हो, स्त्रीका दर्शन होते ही शुक्रपात हो, जाता हो, शारीरिक कृशता अग्निमान्द्य उदरमें भारीपन, जीर्ण वातप्रकोप, निद्रा कम आना मस्तिष्कमें उष्णता आदि लक्षण प्रतीत होते हों, उनके लिये यह वटी हितावह है। इस वटीके सेवनसे पेशाबमें धातु जाना, वीर्यका पतलापन, स्वप्नदोष, स्मरणशक्तिकी कमी और हृदयकी निर्बलता आदि दूर होकर बल, वीर्य और उत्साहकी वृद्धि होती है। जीर्ण रोगमें कम मात्रामें शान्तिपूर्वक २-४ मास तक सेवन करना चाहिये।

तीसरी विधि —शुद्ध शिलाजीत २० तोले, निम्बपत्रादि सत्व २० तोले, त्रिवङ्ग भस्म २॥ तोले और अभ्रक भस्म १। तोले लें। शिलाजीत और भस्मको पहले मिलावें। फिर नीम और गुड़मारके पानका कपड़छान चूर्ण मिला थोड़े जलसे खरल कर २-२ रत्तीकी गोलियाँ बना लेवें।

निम्बपत्रादिसत्व—नीमके कोमल पान और बेलके पानोंको समान वजनमें लें। फिर धोकर चटनीकी तरह पीसें। पश्चात् कपड़े पर मसल कर छान लें। जो सत्व नीचे निकल आवे, उसे छाया में सुखा लें। कितनेक चिकित्सकोंने इसकी २-२ रत्ती की गोलिया बनायी हैं, और 'इक्षुमेहारि' संज्ञा दी है।

मात्रा —२ से ३ गोली, दिनमें ३ बार गुड़मारके अर्कसे अथवा सुबह-रात्रिको गोदुग्धसे और दोपहरको जलसे।

उपयोग —यह वटी मधुमेह, इक्षुमेह और बहुमूत्रमें लाभदायक है। इस वटीके सेवनसे मूत्रधारण शक्ति बढ़ जाती है। रक्तमें शर्करोत्पत्ति कम होती है। फिर निर्बलता, श्यामता और उदासीनता शनैः शनैः दूर होकर मुखमण्डल तेजस्वी और प्रसन्न बन जाता है।

वृद्धावस्थामें पौरुष ग्रन्थि (Prostate Gland) प्रायः बढ़जाती है। अधिक बढ़ने पर मूत्रत्यागमें प्रतिबन्ध करती है। ऐसी स्थितिमें शिलाजत्वादि वटी देते रहनेसे मूत्रावरोध दूर होता है।

मधुमेहके रोगियोंको चोट लग जाने या अन्य हेतुसे व्रण होनेपर जल्दी नहीं

भरता। अनेकोंके व्रण खूब फैल जाते हैं। फिर मांस सड़ता है; पूय निकलता रहता है और भयंकर दुर्गन्ध आती रहती है। ऐसे व्रणोंको भरने और मूलहेतु रूप मधुमेहको दूर करनेके लिये यह शिलाजत्वादि वटी अति हितकारक है। व्रणवालोंको अनुपान रूपसे निम्बपत्रादि सत्व १-१ माशा और गोदुग्ध देना चाहिये।

मधुमेहमें विष अति बढ़जाने पर प्रमेहपिटिका (अदीठ Carbuncle) उत्पन्न हो जाता है। वह अति घातक है। उसमेंसे मांस सड़ा हुआ निकालकर बाह्य उपचार करना चाहिये, तथा इस शिलाजत्वादि वटीका सेवन निम्बपत्रादि सत्व और लोध्रासवके साथ करना चाहिये। इस तरह १-२ मास तक सेवन करानेपर शक्कर दूर होती है और अदीठमें भी लाभ हो जाता है।

१०. प्रमेहान्तक चूर्ण

प्रथम विधिः—तालमखाना ५ तोले, गिलोयसत्व और जायफल २॥-२॥ तोले तथा मिश्री १० तोले लें। तालमखाना और जायफलको कूटकर, कपड़छान चूर्ण करें। मिश्रीका पृथक् चूर्ण करें। फिर सबको मिला खरलमें मर्दनकर अच्छे डाटवाली शीशी में भर लेवें।

मात्राः—३ माशेसे १ तोला, २-२ रत्ती प्रवाल पिष्टी मिलाकर दिनमें १ वा २ बार गोदुग्धके साथ देवें।

उपयोगः—यह चूर्ण सब प्रकारके प्रमेह, विशेषतः कफज और पित्तज प्रमेहमें लाभदायक है। यह चूर्ण वृक्कोंको शक्ति देता है; रक्तमें रहे हुए विषको रूपान्तरित करता है और मूत्रकी वृद्धि कराकर शेष रहे दोषको जल्दी निकाल देता है। परिणाममें वृक्क, मूत्राशय और मूत्रनलिका आदि अवयवोंकी श्लैष्मिककलाका प्रदाह दूर होकर मूत्रमें वीर्य, श्लेष्म, पित्त और क्षार जाना बन्द हो जाता है। यह चूर्ण वीर्य को शीतल और गाढ़ा बनाता है तथा मूत्राशयकी उष्णताको शान्त करता है। जिससे स्वप्नदोष भी रुक जाता है।

इस चूर्ण को मुँह में डालकर ऊपर दूध पीनेसे चूर्ण तालुमें चिपक जाता है। एवं दूधमें डालनेसे दूध चिपचिपा और गाढा होजाता है। इस हेतुसे कितनेक मनुष्य इसे नहीं ले सकते। इस चूर्ण और प्रवाल पिष्टी को मिला ५ तोले दूधमें डाल थोड़ा चला कर तुरन्त पी लेवें। फिर शेष दूध धीरे धीरे पीवें। इस तरह चूर्णका सेवन करते रहनेसे निश्चित लाभ होजाता है।

पाचन क्रिया अच्छी हो, तो मात्रा १ तोला ले सकते हैं। वरना ६ माशे या ३ माशे पचन क्रियाके अनुरूप लेते रहें। शक्तिसे अधिक मात्रा लेनेपर या दूध पाचन शक्तिसे अधिक लेनेपर योग्य लाभ नहीं मिलता।

सूचनाः—मेदा, शक्कर, और गुड़ वाले पदार्थ कम खाना चाहिये। रात्रि को भोजन हल्का और थोड़ा करना चाहिये। तेज खटाई, अधिक मिर्च, गरम चाय,

प्यार एक तोला घी या ४ तोले मलाई अथवा २० तोले गोदुग्ध के साथ सेवन करते रहने से १ मास में कफ प्रधान प्रमेह दूर हो जाते हैं। एवं वातप्रकोपज विकार पर भी यह ओषध अति हितकारक है। उदरवात सन्धिवात, वातवहिनियोंकी निर्बलता आदि पर भी अच्छा असर पहुँचाता है। इनके अतिरिक्त शीघ्र पतन और स्वप्नदोषको दूरकर वीर्य को सबल बनाता है, और देहको पुष्ट बनाता है। इस रसायनकी मात्रा २ से ४ गोली तक धीरे धीरे बढ़ावें। १५ दिन सेवन करके एक सप्ताह के लिये बन्द कर दें। फिर सेवन करना प्रारम्भ करें। यदि उष्णता अधिक प्रतीत हो तो घी और दूधका सेवन बढ़ावें, और मात्रा कुछ कम करें। इस रसायनका प्रयोग पित्त प्रधान प्रकृति वालोंको हितकर नहीं है। फिर भी सेवन कराना हो, तो प्रवाल पिष्टी और अमृतासत्व के साथ सेवन कराना चाहिये।

१४. प्रमेहमिहिर तैल

विधि —सोया, देवदारू, नागरमोथा, हल्दी, दारूहल्दी, मूर्वा, कूठ असगन्ध, सफेदचन्दन, लालचन्दन, रेणुका, कुटकी, मुलहठी, रास्ना, दालचीनी, छोटी इलायची के दाने, भारंगी, चव्य, धनिया, इन्द्रजौ, पूतिकरंजके बीज, अगर, तेजपात, हरड़, बहेड़ा, आंवला, नाड़ीशाक, नेत्रवाला, खरैंटी, कचौ, मजीठ, धूपसरल, कमल, लोध्र, सौंफ, वच, कालाजीरा, खस, जायफल, वासा और तगर, इन ४१ औषधियोंको १-१ तोला लेकर कल्क करें। फिर कल्क, तिल तैल १२८ तोले, शतावरका रस १२८ तोले, लाखका रस ५१२ तोले, दहीका जल ५१२ तोले और दूध १२८ तोले मिलाकर मंदाग्नि पर तैल सिद्ध करें। (भै० र०)

लाक्षारस —लाखको ४ गुने जलमें मिलाकर गरम करें। जल गरम होने पर दसवा हिस्सा लोध, दसवां हिस्सा सज्जीखार और थोड़े बेरके पत्ते डालनेसे लाखका रस हो जाता है। अथवा सोहागा मिलानेपर भी रस हो जाता है। फिर इस रसको कपड़ेसे छानकर तेलमें मिलाना चाहिये।

उपयोग —इस प्रमेहमिहिर तैलकी मालिशसे वातज समस्त व्याधियाँ नष्ट होती हैं। इस तरह मेदोगत, मज्जागत, जीर्ण वातज, पित्तज, कफज और त्रिदोषज, सब प्रकारके जीर्ण विषम ज्वर निवृत्त होते हैं। यह तैल वीर्येन्द्रिय व्यक्तियोंके लिये और ध्वजभङ्ग (नपुंसकता) में विशेष लाभदायक है। एवं दाह, पित्तप्रकोप, प्यास, छर्दि, मुखशोष २० प्रकारके प्रमेह आदि रोग, इसके मर्दनसे निःसन्देह नष्ट हो जाते हैं।

१५. श्लेष्मादिवटी

विधि —त्रिफला ८ तोले, शुद्ध गंधक ४ तोले, हल्दी, गुड़मार, कपूर, वंग भस्म, निम्बत्वक, गूगल और आंवला, ये ७ औषधियां २-२ तोले लेवें। इन सबको कपड़छान चूर्णकर गुड़मार पान और गूलरकी छालके क्वाथकी ७-७ भावना देवें। (राजवैद्य पं० रामचन्द्रजी)

मात्राः—४ से ८ रत्ती दिनमें दो बार गुड़मारके क्वाथके साथ ।

उपयोगः—पित्तज और कफज प्रमेह, मधुमेह और तज्जन्य प्रमेहपिटिका आदि उपद्रवोंपर रामवाण है । इसका उपयोग अनेक वर्षों से हम कर रहे हैं ।

१६. अभयादि कषाय

विधिः—हरड़, आंवला, देवदारु, धनिया, सोंठ, कालीमुनक्का, सारिवा, बेलपत्र, कड़वी नाई और पोदीनाके पान, ये १० औषधियाँ समभाग मिलाकर जौकुट चूर्ण करें ।

मात्राः—१-१ तोलेका क्वाथकर दिनमें ३ बार देते रहें ।

उपयोगः—यह क्वाथ मूल भैषज्यरत्नावलीका है । इसमें आवश्यकता अनुसार ३ औषधि बढाली है । यह अग्न्याशय (Pancreas) की निर्बलता और विकृतिको दूर करता है तथा मधुमेह और इक्षुमेहमें मूत्रमें जानेवाली शक्करको थोड़े ही दिनोंमें कम कराता है । शारीरिक निर्बलता बढ़ जाने और ४–७%शक्कर हो जानेपर यह क्वाथ वसन्तकुसुमाकर, नाग भस्म, प्रमेहगजकेसरी या अन्य औषधिके साथ अनुपान रूपसे व्यवहृत किया जाता है ।

---

(२८) बहुमूत्र

१. बृहत्सोमनाथ रस

विधिः—हिंगुलोत्थ पारदको पारिभद्रके रसमें ७ दिन मर्दन करें । गन्धकको मूषाकानीके रसमें ७ बार शुद्ध करें । फिर दोनोंको ४–४ तोले मिलाकर कज्जली करें । उसमें ८ तोले लोहभस्म मिलाकर १ दिन घीकुंवारके रसमें खरल करें । फिर अभ्रक भस्म, वङ्ग भस्म, रजत भस्म, शुद्ध खर्पर (जसद भस्म), सुवर्णमाक्षिक भस्म और सुवर्ण भस्म ये ६ औषधियां २-२ तोले मिलाकर १ दिन घीकुंवारके रसमें तथा १ दिन मण्डूकपर्णी (हरद्वारकी ब्राह्मी) के रसमें खरलकर १-१ रत्तीकी गोलियां बना लेवें ।

(र० सा० सं०)

मात्राः—१ से २ गोली शहद, पका केला, आंवलोंका रस और शहद अथवा बृहद् धात्री घृतके साथ दिनमें २ या ३ बार दें ।

उपयोगः—बृहत् सोमनाथ रस वातज, पित्तज और कफज, सब प्रकारके सोमरोग (पृथक्कज मूत्राशय प्रदाह), बहुमूत्र (बारबार थोड़ा थोड़ा पेशाब होना), मूत्रातिसार (Polyuria), मूत्रकृच्छ्र, दारुण मूत्राघात, मधुमेह, हस्तिमेह, (मूत्रसंग्रह होना फिर त्याग होजाना Enuresis), इक्षुमेह (Glycosuria) और लालामेह आदि सब प्रमेहोंको दूर करता है । इस रसका विधान मूलग्रन्थकारने मूत्रसंस्थानके

रोगोंपर किया है। सोमरोगकी उत्पत्ति मूत्राशयप्रदाह (Cystitis) होनेपर होती है। मूत्राशय प्रदाहमें प्रारम्भमें प्राय आशुकारी अवस्था होती है। उस समय कष्टप्रद तीव्र सोमरोग, मूत्रकृच्छ्र, बस्ति स्थानमें मद मद वेदना आदि लक्षण उपस्थित होते हैं। फिर जीर्णावस्थामें मूत्रनिग्रहका अभाव, मुखतालुमें शोष और अति दुर्बलता आदि लक्षण उपस्थित होते हैं। इस रोगकी दोनों अवस्थामें यह रस प्रयुक्त होता है। आशुकारी अवस्थामें मूत्राशयशोधनार्थ सारिवा फाण्ट या प्रदाह शमनार्थ शामक अनुपान देना चाहिये। चिरकारी अवस्थामें सारिवासव और शिलाजतु इस रसके साथ मिला देना, विशेष लाभदायक है।

मूत्राशयप्रदाहसे मूत्र धारण शक्ति नष्ट हो जानेसे अनिच्छापूर्वक सतत बूँद बूँद मूत्रस्राव होता रहता हो, साथमें मूत्रदाह, पीलापन और दुर्गन्ध भी हो तो बृहत् सोमनाथ रस गोखरू और शीतलमिर्चके क्वाथमें (शहद मिलाकर) दिया जाता है। ऐसे रोगियोंको भोजनमें घृत-तेल आदि पदार्थ कम खाने चाहिये। पूयमेहज तीव्र व्यथा हो तो कुछ दिन केवल दूधपर ही रखना चाहिये। एवं स्थानिक उपचार भी करना चाहिये।

यह रस यकृत् और अग्न्याशयके लिये शक्तिवर्द्धक होनेसे इसका उपयोग मधुमेह और इक्षुमेहमें शकर कम कराने, रक्त आदि धातुगत लीनविषको जलाने और शक्ति संरक्षणार्थ उत्तम होता है। अधिक तृषा लगती हो, उसे यह रस कम करा देता है और मस्तिष्कको भी शान्त बनाता है। मधुमेहके रोगीको पथ्यका आग्रहपूर्वक पालन करना चाहिये। अनुपान चविकासव।

मधुमेहके अतिरिक्त वातज, पित्तज और कफज, सब प्रकारके प्रमेहोंपर यह रस उपकारक है। प्रमेह रोगोंमें पथ्यका पालन हो तो ही लाभ पहुँचता है। वातज मेहमें अश्वगंधारिष्ट या दशमूलारिष्ट और शेष मेहोंपर लोध्रासव अनुपानरूपसे देना चाहिये। पचनक्रिया मंद होनेपर चविकासव दें।

२. सोमनाथ रस

विधि —लोहभस्म २ तोले, शुद्धपारद, शुद्ध गन्धक, छोटी इलायचीके दाने, तेजपात, हल्दी, दारुहल्दी, जामुनकी छाल, खस, छोटे गोखरू, वायविडङ्ग, जीरा, पाठा, आंवला, अनारदाना, सोहागेका फूला, सफेद चन्दनका बुरादा, शुद्ध गूगल, लोध, शालका बुरादा, अर्जुनकी छाल और रसौंत, ये २१ औषधियां १–१ तोला लेवें। पारद-गन्धककी कज्जली करके मिलावें। गूगलको बकरीका दूध मिला मिलाकर अच्छी तरह कूटें। शेष औषधियोंका कपड़छान चूर्ण करें। फिर कज्जलीके साथ लोह भस्म और चूर्ण मिलाकर एक जीव करें। पश्चात् गूगलको बकरीके दूधमें घोल, मिलाकर १२ घण्टे खरलकर २–२ रत्तीकी गोलियां बना लेवें। (र० सा० सं०)

मात्राः—१ से २ गोली दिनमें २ बार सुबह रात्रिको पक्के केले और शहद मिले आंवलोंके रस या लोध्रासवके साथ देवें।

उपयोगः—सोमनाथरस सोमरोग, दारुण प्रदररोग, त्रिदोषज योनिशूल, मेढ़्-शूल और बहुमूत्र आदि जननसंस्थान और मूत्रसंस्थानके रोगोंको दूर करता है।

सोमरोग मूत्रसंस्थानका और प्रदर प्रजनन संस्थानका रोग है। सोमका मूल मूत्राशयमें और प्रदरका मूल गर्भाशय, बीजाशय अथवा भगप्रणालिकामें होता है। सोम-रोगके प्रारम्भमें बहुधा मूत्राशय प्रदाह होता है। उस समय मूत्राशयमें दाह, मूत्रमार्गमें वेदना और कष्टसह मूत्रत्याग, ये लक्षण होते हैं। फिर रोग जीर्ण होनेपर जलसदृश स्राव होता रहता है, वेदना प्रायः नही होती, मूत्रधारण शक्तिका ह्रास होजाता है और रुग्णा शनैः शनैः निर्बल और दीन हो जाती है। इस चिरकारी अवस्थामें इस रसका प्रयोग होता है।

श्वेतप्रदररोग जीर्ण बननेपर अधिक गाढा, सफेद चिपचिपा जल गिरता रहता है फिर रोग दृढ बननेपर रुग्णा अधिक निर्बल बनजाती है। उस अवस्थामें भी सोमनाथ रस दार्वाद्य क्वाथके साथ देते रहनेसे एकाध मासमें लाभ होजाता है।

हस्तिमेहकी संप्राप्ति मूत्राशयकी वातनाडियों परसे अधिकार दूर होनेपर होता है। इस रोगमें मूत्राशयमें मूत्रसंग्रह होता है। फिर जाग्रत या स्वप्नमें स्वयमेव असाव-धानीसे ही निकल जाता है। मूत्रमें कुछ लसीका (Albumin) भी जाती है। इस रोगपर सोमनाथ रसका सेवन एक दो मास तक करानेपर लाभ पहुँच जाता है।

३. वैक्रांत वसन्तकुसुमाकर

विधिः—वैक्रान्त १ तोला, सुवर्णभस्म, अभ्रकभस्म, मुक्तापिष्टी और प्रवाल-पिष्टी २–२ तोले, वंगभस्म ३ तोले और रससिन्दूर ४ तोले लेवें। सबको मिला नीबूके रस, गोदुग्ध, खसके क्वाथ, वासामूलके क्वाथ और ईखके रसकी क्रमशः ७–७ भावना देकर १–१ रत्तीकी गोलियां बना लेवें। (आ० सं०)

मात्राः—१ से २ गोली शहद या रोगानुसार अनुपानके साथ देवें।

उपयोगः—यह वसंतकुसुमाकर सोमरोग, मूत्रातिसार, प्रमेह, मूत्राघात, अश्मरी, तृषा, दाह, तालुशोष, अजीर्ण, ज्वर, श्वास, क्षयरोग, कृशता आदि सबको दूर करता है। एवं बृंहण, बल्य, वृष्य और रसायन गुणकी प्राप्ति कराता है। ग्रन्थकार गुणवर्णनके अन्तमें लिखते हैं कि "नातः परतरं किञ्चिद्रसायन मिहेष्यते।" अर्थात् इस रससे श्रेष्ठ अन्य कोई भी रसायन नहीं है।

यह रस उत्तम कीटाणुनाशक, बल्य और मस्तिष्कपोषक है। आचार्योंने इस रसका निर्माण हाडपिञ्जरवत् बनी हुई रुग्णाओंके अति जीर्ण सोमरोगके लिये किया है। जब रोग अत्यधिक बढ जाता है, तब उठने बैठनेकी शक्ति भी मारी जाती है। रुग्णा अति पराधीन हो जाती है। मूत्राशयप्रदाह अत्यधिक हो जानेसे मूत्रमार्गसे सतत रसस्राव

होता रहता है। घण्टे घण्टे पर कपड़ा बदलना पड़ता है। रुग्णाओंको यदि पूयमेह न हुआ हो, वृक्ककार्य यथोचित हो रहा हो, तो यह रस थोड़े ही दिनोंमें रक्त, अन्त्र और बस्तिगत सेन्द्रियविष, कीटाणु और कृमियोंका नाशकर मूत्राशयप्रदाहको दूर करता है। फिर तृषा, शोष आदि सर्व लक्षण दूर होते हैं और रुग्णा थोड़े ही समयमें स्वस्थ और सबल बन जाती है।

जिस उदकमेह (बहुमूत्र) पीड़ित रोगीको अफीमका सेवन नहीं करा सकते। उसे बहुमूत्रान्तक रस या हेमनाथ रस नहीं दे सकते। उसे वृक्कक्रिया नियमित होनेपर यह वसंतकुसुमाकर दिया जाता है। यह रस सेन्द्रिय विषको नष्टकर रोगको दूरकर देता है।

४. बहुमूत्रान्तक रस

विधि —रससिन्दूर, लोहभस्म, वङ्गभस्म, अफीमसार, गूलरके बीज, बेल-छाल और पीली चमेलीके फूल इन ७ औषधियोंको समभाग मिला, गूलरके फलोंके रसमें ३ दिन खरलकरके आध आध रत्तीकी गोलिया बना लेवे। (र० च०)

वक्तव्य — (१) अफीमको जलमें घोल, छान, फिर जलको उबाल लेनेपर शुद्ध बन जाती है। इस प्रकारसे शुद्ध करनेमें वजनमें आधा रह जाती है। छाननेके समय कपड़ेपर बहुत कचरा रह जाता है।

(२) मूलग्रन्थमें "व गाहिफेनसारकौ" शब्द है, उसमें 'सारकका अर्थ किन्हींने लोहभस्म और किसी ग्रन्थकारने जमालगोटा किया है। इसी तरह "सुरप्रिया" का अर्थ तुलसी और शीतलमिर्च किया है। हमें जो उचित प्रतीत हुआ उस तरह हम रस तैयार कराते हैं

मात्रा — १ से २ गोली दिनमें २ बार गूलरके फलोंके रस, नारियलके जल या रोगानुसार अनुपानके साथ देवें।

सारिवादि फाण्ट —तृषा अधिक लगती हो, तो उसे कम करानेके लिये सारिवा, मुलहठी, मुश्का दर्भ, चीड़का बुरादा, रक्तचन्दन, हरड़ और महुएके फूल, इन ८ औषधियोंको समभाग मिलाकर चूर्ण करें। इसमेंसे रोज रात्रिको १० तोले चूर्णको उबलते हुए १२८० तोलेमें डाल देवें। सुबह छानकर थोड़ा थोड़ा पीते रहें।

मूल ग्रन्थकारने शक्ति संरक्षणको लक्ष्यमें रखकर मांसप्रधान भोजन और गेहूँके आटेकी रोटी खानेका विधान किया है। यदि मांस देना हो, तो केवल सोरवा देवें। हमारे अनुभव अनुसार जौ+चनेकी रोटी विशेष लाभदायक सिद्ध हुई है। तले हुए पदार्थ, तैल, तेज खटाई, गुड़, शक्कर, अम्ल विपाकी होनेसे चावल और पचनेमें भारी होनेसे मांस हानि पहुँचाते हैं।

उपयोग —बहुमूत्रान्तक रस बहुमूत्र (उदकमेह Diabetes Insipidus) और उससे उत्पन्न तृषाधिक्य आदि सब उपद्रवोंको भी दूर करता है।

यह रस अहिफेन प्रधान है। अहिफेन वातकेन्द्र और वातवाहिनियोंकी उग्रताका दमन करता है। तृषाका ह्रास कराता है और यकृत्पर भी अंकुश लाता है। इस हेतुसे यह रस मधु उत्पादन कार्य और बढी हुई तृषाका ह्रास कराता है।

मधुमेह और उदकमेह आदि जिन विकारोंमें तृषा वृद्धि होती है और तालुशोष होता है। उन सब विकारोंमें मूत्र परिमाण बढ जाता है। उन सब विकारोंका दमन तृषाको मर्यादित बनानेपर ही होता है। अतः उन सबपर यह रस व्यवहृत होता है।

बहुमूत्रका २ अर्थ होता है। बहुत समय थोड़ा थोड़ा मूत्रत्याग होना और बहुपरिमाणमें मूत्रस्राव होना। यह रस इन दोनों प्रकारोंके बहुमूत्रोंपर लाभ पहुँचाता है।

मूलग्रन्थकारकी औषध योजना दृष्टिसे विचार किया जाय, तो इस रसकी योजना उदकमेहपर उत्तम होती है। उदकमेहमें मूत्र स्वच्छ, अति परिमाणमें, वर्णहीन, जलसदृश और शक्कररहित होता है। २४ घण्टेमें ६-७ बार मूत्रत्याग करना पड़ता है। इस रोगमें तृषा अधिक लगती है। यह तृषा अफीम, गूलर रस और सरिवा आदि द्रव्यों-के योगसे कम हो जाती है। बहुमूत्रान्तक रसमें प्रदाहहर गुण होनेसे यह मूत्राशयप्रदाहज सोम (बहुमूत्र) रोगमें भी लाभ पहुँचा देता है। किन्तु इस प्रकारका रोग पूयमेहज हो या पूयवृक्कज हो, तो इस रसकी अपेक्षा बृहत्सोमनाथ रसका उपयोग विशेष फलदायी होता है।

वक्तव्यः—रोगीको मलावरोध न हो, इस बातको सम्हालते हुये औषधिकी मात्रा देनी चाहिये। अन्यथा व्याकुलता बढ जाती है। यदि कब्ज हो जाय, तो सनाय पत्ती और छोटी हरड़का चूर्ण या क्वाथ पिलाकर उदरशुद्धि करा लेनी चाहिये या कम अफीमवाले हेमनाथ रसका सेवन कराना चाहिये।

इस बहुमूत्रान्तक रसमें रससिन्दूर रसायन, कीटाणुनाशक और विषहर है। लोहभस्म रसायन, रक्तवर्द्धक, पित्तकफघ्न और मूत्रसंस्थानको सबल बनाने वाली है। वङ्गभस्म शुक्राशयकी पोषक, कफघ्न और मूत्रसंस्थानके दोषनाशक है।

गूलर फल, शीतल, ग्राही, सेन्द्रिय विषघ्न, तृषाशामक, रक्त प्रसादक, मधुमेह-नाशक, प्रमेहघ्न और रक्तप्रदर शामक है।

गूलरमें अनेक दिव्य गुण रहे हैं। रक्तस्रावको बन्द करता है। मधुमेहमें मधुकी उत्पत्तिका दमन करता है। सुजाकपर गूलरके रस ४—४ तोलेमें जीरा और मिश्री मिला कर पिलाया जाता है। गूलरके पत्तोंके रसमें भी सुजाक नाशक गुण हैं।

महामहोपाध्याय कविराज गणनाथसेनने गूलरके पत्तोंके रसका घन (Extract) बनाकर उपयोग किया है। उसका नाम "उदुम्बर पत्रसार" दिया है। इससे जो लाभ मिला, वह अपने व्याख्यानमें कलकत्ताकी आयुर्वेदिक सभाके समक्ष पढ़कर सुनाया था। मांसके भीतर दर्द, अवयव मुड़ जाना, मूढमार, व्रणक्षत, रक्तवाहिनी कटकर रक्तस्राव

होना, क्षयज ग्रन्थियां, श्लीपद, दुष्ट व्रण, न भरने वाले व्रण, नेत्ररोग, नाड़ीव्रण, विद्रधि, भगन्दर, कण्ठमें व्रण, सुजाक, जिह्वाका मांसक्षय, कर्णपाक, नासिका व्रण, अग्निदग्ध व्रण और शीत आदिसे हाथ पैर फट जाना आदि व्याधियोंमें बाह्योपचार रूपसे प्रयुक्त किया है। जीर्ण आमातिसार, पेचिश और अजीर्णमें खिलानेके लिये उपयोगमें लिया है, सब पर अच्छा लाभ मिला है। इनके अतिरिक्त सुजाक, मधुमेह, पित्तप्रकोप और जीर्ण ज्वर आदि पर भी उदुम्बर पत्रसार खिलाकर परीक्षा की गई है।

बेलकी जड़ रसायन, बुद्धिवर्धक सेन्द्रिय विपघ्न और प्रदाहशामक है। सुश्रुताचार्यने मेधायुष्कामीय अध्यायमें कल्परूपसे बिल्वमूलके क्वाथका सेवन सुवर्ण भस्मके साथ एक वर्ष तक करानेका विधान किया है।

चमेलीके फूल कफपित्तजित, व्रणरोपक, कीटाणुनाशक, विषहर और रक्तशोधक है।

५ बहुमूत्रघ्न रस

विधि —बीजबन्द, तालमखाना, मुलहठीका सत्व, वंशलोचन, शुद्ध विरोजा, सालममिश्री, शुक्ति भस्म, प्रवाल भस्म, बहेड़ेकी गिरी, हरड़की गिरी, शुद्ध शिलाजीत, छोटी इलायचीके दाने और वङ्गभस्म, इन १३ औषधियोंको समभाग लेवें। काष्ठादि औषधियोंका कपड़छान चूर्ण करें। फिर सबको मिला शहदके साथ ३ घण्टे खरलकर २–२ रत्तीकी गोलियां बना लेवें। (सि० भे० म०)

मात्रा —४–४ गोली दिनमें ३ बार जलके साथ देवें।

उपयोग —यह रस बहुमूत्रको दूर करता है। सुजाक या अन्य हेतुसे मूत्रप्रसेक नलिका में प्रदाह हो जानेपर मूत्र बूंद बूंद टपकता रहता है। उसे दूर करनेके लिये यह रसायन उपयोगी है। जीर्ण रोगमें कुछ दिनोंतक शान्तिपूर्वक सेवन करना चाहिये। मधुमेह या और रोगों में बहुत ज्यादा मूत्र उतरता है, उसपर इस रसायनसे अधिक लाभ नहीं पहुँचता। उसके लिये तो यकृत् पर कार्यकारी, तृषाशामक गुणयुक्त तथा धातु स्वस्थानके क्षोभको शामक औषधि देनी चाहिये। इसके लिये बहुमूत्रान्तक रसकी योजना हितावह है।

सूचना —अधिक स्नेह, भारी भोजन, चावल, खटाई, ठण्डाई, मट्ठा, अधिक मिर्च, कब्ज करने वाले पदार्थ आदिका सेवन नहीं करना चाहिये। अधिक घृतसे (घृतका पचन न होनेपर) भी बूंद बूंद पेशाब आनेसे कष्ट बढ़ जाता है।

६ मूत्रदाहान्तक चूर्ण

विधि —प्रवाल पिष्टी २० तोले, अमृतासार ४० तोले, संगे यहूद पिष्टी ४० तोले और सोनागेरू ८० तोले मिला चन्दनादि अर्क (चंदन, गुलाब, केवड़ा और कमल पुष्पके अर्क) में ७ दिन तक मर्दन करें।

सूचना:—सोनागेरूके समान शीतलचीनी भी मिलाई जाय तो विशेष लाभप्रद है। (संशोधक)

मात्राः—२ से ४ रत्ती, दिनमें ३ बार चन्दनादि अर्कके साथ दें।

उपयोगः—यह चूर्ण पेशाबकी जलन और बूंद बूंद टपकनेको सत्वर दूर करता है। मूत्रकृच्छ्र उग्र औषध आदिका सेवन, यकृत्, मूत्राशय और मूत्रनलिकामें दाह होनेपर भी अधिक घी और अन्य अपथ्य पदार्थोंका सेवन, इन कारणोंसे तथा पूयमेह आदि रोगोंमें पेशाब बूंद बूंद निकलता है और दाह भी होता है। वह इस औषधके सेवनसे दूर होता है।

ग्रीष्म ऋतुमें सूर्यके तापमें अधिक भ्रमण करने और मिर्च आदिका अधिक सेवन होनेपर पेशाबमें जलन होने लगती है। उसके लिये यह औषधि अमृतके समान उपकार करती है।

वृक्क और उपवृक्कमें शोथ आजानेसे मूत्रविष देहमेंसे चाहिये उतना न निकलता हो, फिर मुख, पैर, वृषण और समस्त शरीरपर शोथ आ जाना, अग्नि अति मन्द हो जाना, हृदयगति शिथिल होना, पेशाब थोड़ा और लाल या पीला होना आदि लक्षण उपस्थित होते हैं। उसपर यह मूत्रदाहान्तक चूर्ण १ रत्ती, रसायन हरीतकी और बकुल बीज २-२ रत्ती मिलाकर आंवलोंके मुरब्बाके साथ दिनमें ४ बार देते रहने से थोड़े ही दिनोंमें वृक्क आदि अवयव सबल बन जाते हैं और शोथ निवृत्त हो जाता है। रोगीको केवल दूधपर रखना चाहिये।

हृदयकी विकृति होनेपर सर्वाङ्ग शोथ उपस्थित होता है. इस शोथका आरम्भ पैर और हाथपर होता है। फिर सर्वाङ्गमें फैल जाता है। साथमें घबराहट, श्वास, कास, हृदयकी धड़कन आदि होते हैं। इस विकारमें मूत्रशुद्धि योग्य न होनेपर शोथ सत्वर बढ़जाता है। इस रोगपर मूत्रदाहान्तक चूर्ण २-२ रत्ती और हृद्य चूर्ण (डिजिटलिसके पान) ½ रत्ती मिलाकर पुनर्नवादि क्वाथके साथ दिनमें ४ बार देते रहना चाहिये। यदि मलावरोध हो, तो रसायन हरीतकी भी मिला देनी चाहिये।

पूयमेहकी तीव्रावस्थामें प्रमेहान्तक वटी (नं० १) या अन्य औषध देकर प्रकोपकी तीव्र अवस्थाको शान्त करना चाहिये। फिर चिरकारी अवस्थामें जब मंद मंद पीड़ा होती है, तब इस चूर्णका प्रयोग गोक्षुरादि गूगलके साथ करानेसे लीन विष नष्ट हो जाता है और स्वास्थ्यकी प्राप्ति हो जाती है।

पूयमेहकी जीर्णावस्थामें पेशाबमें पूय न हो, किन्तु पेशाबमें जलन, घबराहट और मूत्र परिमाण कम होगया हो, तो मूत्रदाहान्तक चूर्ण २ रत्ती, सुवर्णमाक्षिक भस्म और चन्द्रकला रस आध आध रत्ती तथा खुरासानी अजवायन २ रत्ती मिलाकर दिया जाता है।

फिरंगके विषजनित वातरक्त उपस्थित होनेपर हाथ और विशेषतः पैरोंके अंगुष्ठों पर शोथ आता है। शोथस्थान लाल-काला भासता है, अंगुलीसे दबानेपर वेदना होती है, उसमें जलन भी होती रहती है। शोथस्थानपर और सारे पैरोंपर प्रस्वेद आता रहता है। फिर शोथ बढ़ता जाता है। शारीरिक उष्मा १०१° डिग्री होजाती है। विषसंचय

अधिक होनेपर ज्वर १०३° डिग्री तक पहुँच जाता है। उस रोगपर मूत्रदाहान्तक चूर्ण और शिलाजीतको काली मारिवा, मजीठ, गिलोय और आवलेके काढ़ेके साथ दिनमें दो बार देने तथा रात्रिको उदरशुद्धिके लिये कुमार्यासव देनेसे विकार थोड़ेही दिनोंमें शमन हो जाता है।

शीतला होनेपर, रक्तमें विषोत्पत्ति होती है, क्वचित् यह विष शीतला शमन होने पर भी शेष रहजाता है। फिर सर्वांगमें कण्डू, सर्वांग शोथ, पेशावमें लसीका (Albumen) जाना, पेशाब लाल होजाना और वमन आदि लक्षण उपस्थित होते हैं। उसपर मूत्रदाहान्तक चूर्ण गोरोचन मिश्रण और सुवर्णमाक्षिक भस्म मिलाकर शहदके साथ थोड़ी थोड़ी मात्रामें दिनमें ४ या अधिक बार देते रहनेपर विष और विषज सर्व उपद्रव थोड़े ही दिनोंमें दूर हो जाते हैं। साथमें वमन अधिक हो, तबतक नीबूके छिलकेकी राख ४–४ रत्ती तथा पेशाब द्वारा जल और विषको बाहर निकालनेके लिये श्वेतपर्पटी १–१ माशा थोड़े जलके साथ देते रहना चाहिये। एवं रोगीको केवल दूधपर रखना चाहिये।

विसूचिका रोगकी तीव्रावस्थामें पेशाब विशेषतः नहीं होता। किन्तु रोगबल कम हो जानेपर पेशाबकी उत्पत्ति होने लगती है। कभी वृक्कपर विषका असर अधिक पहुँच जानेपर मूत्राघात (वृक्क-सन्यास) हो जाता है। फिर रक्तमें मूत्रविषवृद्धि होनेपर जब वह मस्तिष्कमें पहुँच जाता है, तब काटना, मारना, थूक मारना, कपड़े फाड़ना आदि उन्माद जैसे लक्षण उत्पन्न होते हैं। ऐसी अवस्थामें सूतशेखर देनेके अतिरिक्त मूत्रदाहान्तक चूर्ण और गोक्षुरादि गुगल दिनमें ३ बार देनेसे वृक्क विकार दूर होकर मूत्रोत्पत्ति होने लगती है। आवश्यकता हो, तो नारायण तैलको निवायाकर हाथ पैरपर मर्दन करके सेक करें।

अफारा, मलावरोध आदि कारणोंसे कितनेक रोगियोंके वृक्क भी योग्य कार्य नहीं कर सकते। फिर मूत्रविष रक्तमें बढ़ जाता है। छातीमें दाह, असम्बद्ध प्रलाप, शुष्क पैत्तिक कास और निद्रानाश आदि लक्षण उपस्थित होते हैं। इन रोगोंपर मूत्रदाहान्तक चूर्ण, मुक्तापिष्टी और सितोपलादि चूर्ण मिलाकर दिनमें ३ बार अनार शर्बतके साथ देते रहनेसे प्रकृति स्वस्थ होजाती है।

(२९) प्रमेहपिड़िका

१. शारिवादि लोह

विधिः—काली अनन्तमूल, नील, रास्ना, गिलोय, छोटी इलायचीके दाने, चित्रकमूल, मानकन्द, सूरण, शंखिनी (चोरपुष्पी), निसोत, शुद्ध भिलावा और हरड़ इन १२ औषधियोंको समभाग लेकर कपड़छान चूर्ण करें। फिर सबके समान लोह भस्म मिलाकर बोतलमें भर लेवें। (भै० र०)

मात्राः—२ से ४ रत्ती दिनमें २ बार सारिवासव या भृंगराजासवके साथ देवें।

उपयोगः—शारिवादि लोह सब प्रकारके प्रमेहपिड़िका, वातरक्त, अर्श रोग और त्वचा रोगोंको दूर करता है। इसका सेवन पथ्य पालनसह १–२ मासतक करना चाहिये।

२. प्रमेहपिटिकाहर योग

विधिः—सिरचाकंदका चूर्ण ४ से ६ रत्तीको गुड़में मिला गोलियां बनाकर रोगीको निगलवाकर शीतल जल पिला देनेसे आध घण्टेमें दस्त और वमन होने लगता है। किसी किसी को ५-७ दस्त और वमन होते हैं। इस तरह दोनों ओर संशोधन होते हैं, तथा रक्तमें रहा हुआ विष निकल जाता है। इसी कन्दको जलमें घिस कर प्रमेहपिटिका (अदीठ आदि सब प्रकारके प्रमेहजनित फोड़ों) पर लेप करते रहनेसे मात्र ३ दिनके भीतर सराविका, कच्छपिका विद्रधि आदि भयंकर बड़े हुए फोड़े सब गल जाते हैं।

इनके अतिरिक्त इस कन्दके लेपसे श्लीपद, गलगण्ड, कण्ठमाल और रसौली आदि भी ३ दिनमें दूर होजाते हैं। मेदोवृद्धिको यह कन्द नष्ट करता है। अण्डकोष-वृद्धिको यह दूर तो कर देता है; किन्तु एक सप्ताहके पश्चात् पुनःजल या मेद भर जाता है। इस हेतुसे अण्डकोषवृद्धि इसके लगानेसे दूर होनेपर टिंचर आयोडिनका इन्जेक्सन करालें, तो लाभ हो सकता है। (आ० नि० मा०)

वक्तव्यः—इस कन्दके सेवन करनेपर बेसन, शक्कर, गुड़, तेल, मिर्च, खटाई और हींगका त्यागकर देना चाहिये। यदि मिर्च, हींग आदिका छौंक देनेपर उसकी वास रोगीको आजायगी तो भी कण्ठरोध हो जाता है। फिर बोलनेमें असमर्थ हो जाता है।

सूचनाः—यदि रोगी दस्त और वमन लगनेसे घबरा जाय या निर्बलता आजाय, तो २ तोले घीको निवाया कर इलायचीके दाने १० नगको पीस मिलाकर पिला देवें। जिससे दस्त और वमन तुरन्त बन्द हो जावेंगे, तथा कण्ठ भी खुल जायगा।

३ दिन या जितने दिन तक इस कन्दका उपयोग करें, उतने ही दिन तक प्रयोग बन्द करनेके पश्चात् भी तैल आदि पदार्थोंका सेवन नहीं करना चाहिये। आग्रह पूर्वक पथ्य पालन करना चाहिये।

(३०) मेदोरोग

१. त्रिमूर्तिरस

विधि — शुद्धपारद, शुद्धगन्धक और लोह भस्म, तीनों समभाग मिलाकर निर्गुण्डीके पत्तोंके रस और सफेद मुसलीके क्वाथके साथ ११ दिन मर्दन करके २-२ रत्तीकी गोलियां बना लेवें। (यो० र०)

मात्रा —१ से २ गोली ३ माशे लोध और ६ माशे शहदके साथ देवें। फिर ऊपर षडुषण (पीपल, पीपलामूल चव्य, चित्रक, सोंठ और कालीमिर्च), त्रिफला (हरड़, बहेड़ा, आंवला) पांचों नमक (सेंधानमक, साम्भरनमक, समुद्रनमक, काचनमक कालानमक) और बावचीके बीज, इन सबको मिला, कूट कपड़छान चूर्णकर ६६ माशे थोड़े जलके साथ देते रहें।

उपयोग —इस रसायनका उपयोग मेद, शोथ, अग्निमान्द्य और आमवातको दूर करनेके लिये होता है। यह रसायन पचनेन्द्रियसे सम्बन्धवाली वातवाहिनियां और पचन क्रिया करने वाले अवयव, सबको सबल बनाता है। इस रसायनके साथ षडुषणादि चूर्णका संयोग होनेसे आमाशय रसकी उत्पत्ति सत्वर बढ जाती है। आम और मेद जलने लगता है। रक्तके भीतर और त्वचासे सम्बन्ध वाले मेदाणु गलने लगते हैं। आमाशय और अन्त्रमें उत्पन्न सेन्द्रिय विष या कीटाणु नष्ट होने लगते हैं। मलशुद्धि नियमित होने लगती है तथा वातवाहिनियाँ सबल बनकर पचनेन्द्रिय संस्थानको सबल बना देती है। फिर पचन क्रिया बलवान होनेपर मेद, मेद जनित शोथ (स्फीति) और आमवात सहज दूर हो जाते है।

मेदोवृद्धिमें जो मेद है, वह देहको मोटा तो बना देता है, किन्तु देहका पोषण नही करता, विपरीत देहके बलका शोषण करता है। कारण, इस रोगकी उत्पत्ति रक्तवाहिनियोंकी दीवारकी कठोरता और रक्तकी निर्बलताके हेतुसे अथवा बालग्रैवेयक ग्रन्थि (Thymus Gland) के विकारसे होती है। यह मेद दूषित होता है। मेदो-रोग अधिक बढने पर थोड़े परिश्रमसे श्वास भर जाता है, क्षुधा, तृषाका वेग सहन नहीं होता, शारीरिक परिश्रम करनेसे मन घबराता है, शरीर भार रूप भासता है उदर मोटा हो जाता है, मेद जलनेसे देहपर चिकना प्रस्वेद आता है। प्रस्वेदमें दुर्गन्ध भी अधिक होती है, निद्रा अधिक सताती है, वायुका मार्ग मेदसे रुक जानेके कारण उदरमें वायुका विचरण सम्यक् नहीं होता अनेक बार उदरमें वायु भरा है, ऐसा भासता है और मनमें व्याकुलता बनी रहती है। ऐसी स्थितिमें इस रसायनका सेवन अति हितावह है। ३–४ मास तक पथ्यपालन पूर्वक औषध सेवन किया जाय, तो रक्त सबल बननेपर लाभ हो जाता है।

इस प्रयोगमें कज्जली रसायन, जन्तुघ्न और कोष्ठस्थ दोषनाशक है। लोह भस्म, रक्ताणुवर्धक, रक्तप्रसादक, बल्य, रसायन और दीपन-पाचन है। निगुण्डी वातपर होने से वातवाहिनियोंको सबल बनाती है। षडुषण दीपन, पाचन, मेदोहर और यकृत्-बलवर्द्धक है। त्रिफला पाचक, उदरशोधक और रसायन; पञ्चलवण-पाचक, मेदोहर और आमवातनाशक। बावची कीटाणुनाशक, मेदोहर और कफशोधक, लोह अन्त्रशक्ति-वर्द्धक और विषहर; शहद मेदोहर और रसायन है।

सूचनाः—घी, शक्कर, चावल और देरसे पचने वाले स्निग्धद्रव्योंका सेवन कम करें। हो सके उतना शारीरिक श्रम लेवें। प्रकृतिविरोधी आहार विहारका त्याग करें।

२. मेदोहर गुग्गुलु

विधिः—सोंठ, कालीमिर्च, पीपल, चित्रकमूल, नागरमोथा, हरड़, बहेड़ा, आंवला और वायविडङ्ग, ये ९ औषधियां १-१ भाग लेवें। सबके समान शुद्ध गुग्गुलु लें। गूगलको थोड़ा थोड़ा एरण्ड तैल मिला मिलाकर कूटें। लगभग गूगलसे चौथाई तैल लगजायगा।

अच्छी तरह मुलायम होनेपर शेष नव औषधियोंका कपड़छान चूर्ण थोड़ा थोड़ा मिलाकर कूटें। सब चूर्ण एक जीव हो जानेपर २-२ रत्तीकी गोलियां बना लें। इस औषधिको योगरत्नाकर आदि कितनेक ग्रन्थकारों ने नवक गुग्गुलु संज्ञा दी है।

मात्राः—२ से ४ गोली दिनमें २ बार गोमूत्र या निवाये जलसे लेवें।

उपयोगः—मेदोहर गूगल मेदोरोग, कफप्रकोपज व्याधियां और आमवातको दूर करता है। यह गूगल मेदको जलाता है, पचन क्रिया बढ़ाता है और नयी मेदोत्पत्ति को रोकता है। मेद विकृतिको दूर करनेके लिये यह निर्भय और उत्तम औषधि है। इसका सेवन ४–६ मास तक करना चाहिये। श्लीपदमें भी हितावह है।

सूचनाः—अधिक घी, अधिक शक्कर, अधिक चावल और प्रकृतिके प्रतिकूल आहारका त्याग कराना चाहिये और होसके उतना शारीरिक परिश्रम कराना चाहिये।

---

(३१) उदर रोग

१. यकृत्प्लीहारिलोह

विधिः—शुद्ध पारद, शुद्ध गन्धक, लोहभस्म, अभ्रक भस्म, मैनसिल, हल्दी, शुद्ध जमालगोटा, सोहागाका फूला और शिलाजीत, ये ९ औषधियां १-१ तोला तथा ताम्र भस्म २ तोले लें। पहले कज्जली कर, फिर भस्में और मैनसिल मिलावें। पश्चात् शेष औषधियां मिलाकर मर्दन करें। तत्पश्चात् दन्तीमूल, निसोत, चित्रकमूल, निगुण्डी, त्रिकटु, अदरख और भांगराके रस या क्वाथकी १–१ भावना देकर १-१ रत्ती-की गोलियां बना लेवें। (भै० र०)

मात्रा —१–१ गोली रोगोचित अनुपानके साथ देवें ।

उपयोग —इस लोहके उपयोगमें जीर्ण, एक दोषज, द्विदोषज और त्रिदोषज प्लीहा और यकृतकी वृद्धि, आठों प्रकारके उदररोग, ज्वर, पाण्डु, कामला, शोथ, हलीमक, अग्निमान्द्य और अरुचि आदि व्याधियां नष्ट हो जाती हैं ।

यह रसायन यकृत् और प्लीहापर मुख्य लाभ पहुँचाता है । इस हेतुसे इसका नाम यकृत्प्लीहारि लोह रक्खा है । ताम्र लोह और पारदका प्रभाव यकृत् और प्लीहापर विशेष पड़ता है । एवं जमालगोटा, दन्तीमूल और निसोत भी यकृद् विरेचक हैं । मैनसिल कीटाणुनाशक, दोषघ्न, लेखन, रक्तविकार हर और मारक हैं । सोहागा कीटाणुनाशक, दुर्गन्धहर और पाचक है । अभ्रक भस्म, मांस और वात वाहिनियोंके लिये पौष्टिक होनेसे यकृत्प्लीहाको बलवान बनाती है । शिलाजीत रसायन दोषनाशक और योगवाही है । भांगरासे जमालगोटा और ताम्रकी उष्णता और दोषका दमन होता है । चित्रकमूल, त्रिकटु, निर्गुण्डी और अदरख पाचक, अग्निप्रदीपक और यकृत्प्लीहाके दोषके नाशक हैं ।

पारद, मन शिल, जमालगोटा, ताम्रभस्म आदिके संयोगसे आमाशय और अन्त्रमें रहे हुए आमविष और कीटाणु देहसे बाहर निकल जाते हैं, तथा शेष जल जाते हैं । इस तरह आमाशय और अन्त्रकी शुद्धि हो जानेसे ज्वरका निग्रह होता है । उदररोग और शोथका नाश होजाता है, तथा अग्नि प्रज्वलित होती है । फिर भोजनमें रुचि उत्पन्न हो जाती है ।

लोह और ताम्रके योगसे यकृत्का कार्य नियमित होकर कामलाकी निवृत्ति हो जाती है । एवं लोह, पारद आदिसे रक्त संशोधन होजाने और रक्तकी वृद्धि हो जानेसे पाण्डु और हलीमककी भी निवृत्ति हो जाती है ।

विविध प्रकारके विषमज्वर आदि कारणोंसे यकृद्विकार और प्लीहावृद्धि होजाती है । फिर पाण्डुता, मन्द जीर्ण ज्वर, अग्निमान्द्य, क्षीणता, मूत्रमें पीलापन, नाड़ीकी गति मन्द होना और मलावरोध आदि लक्षण उपस्थित होते हैं । उस रोगपर यह यकृत्प्लीहारि लोह अच्छा लाभ पहुँचाता है । उदर शोधन करके ज्वरको जल्दी निवृत्त कराता है तथा रक्त प्रसादन कर प्लीहा वृद्धिका सत्वर ह्रास कराता है । यह औषधि त्रिकटु और शहद, रोहितारिष्ट या जलके साथ दी जाती है ।

प्लीहोदर होनेपर भगवान् धन्वन्तरि कथित "मन्दज्वराग्निः कफपित्तलिङ्गैरुपद्रुतः क्षीणबलोऽतिपाण्डुः" अर्थात् मन्दज्वर, अग्निमान्द्य, कफप्रकोप, पित्तविकार, बलका ह्रास और अति पाण्डुता आदि लक्षण उपस्थित होते हैं । प्लीहाकी अति वृद्धि हो जानेपर वह उदरगुहा और उरोगुहाके अनेक अवयवोंको स्थान भ्रष्ट करदेता है । वमन होना, मलमूत्रमें रक्त निकलना और रोग बढ़ने पर यकृत्की वृद्धि हो जाना आदि लक्षण प्रकाशित होते हैं । इन लक्षणयुक्त प्लीहोदरपर यह यकृत्प्लीहारि लोह अति

लाभदायक है। शान्तिपूर्वक औषध कुछ समय तक पथ्यसह सेवन करना चाहिये। भोजनमें दीपन औषधि मिला हुआ यूस देना चाहिये।

वक्तव्यः—गुड़ या शक्कर नहीं देना चाहिये। अनेक रोगियोंको गुड़ शक्करके सेवनसे ज्वर बढ़ जाता है।

प्लीहोदर और प्लीहावृद्धि पर पिप्पल्यादि लोह (चि० त० प्रदीप द्वितीय खण्ड) भी हितावह है। किन्तु आमाशय और अन्त्रदूषित हो तथा बद्धकोष्ठ बना रहता हो, तब पिप्पल्यादिलोहसे सम्यक् लाभ नहीं मिल सकता। ऐसी अवस्थामें यह यकृत्प्लीहारि लोह ही लाभदायक माना जाता है।

विवर्धनयुक्त यकृद्दाल्युदर होनेपर अतिशय यकृदवृद्धि, कभी कभी यकृत् नाभि तक चला जाना, कामला, कण्डू, ज्वर, प्लीहावृद्धि, मंद नाड़ी, ज्वर बना रहना, नाक, मुँह, मसूढे और गुदासे रक्तस्राव आदि लक्षण उपस्थित होते हैं। यदि यह रोग प्रथमावस्थामें है, तो यकृत्प्लीहारिलोहके सेवनसे निवृत्त होजाता है। भोजनमें शक्कररहित दूध केवल दिया जाय, तो लाभ सत्वर होता है। यदि रक्तस्राव अत्यधिक होने लगगया हो और अति क्षीणता आगई हो, तो फिर इस औषधिसे लाभ होनेकी आशा कम रहती है।

सूचनाः—इस यकृद्दाल्युदर रोगमें प्रबल उत्तेजक औषधि बहुधा नहीं दी जाती। इस बातको लक्ष्यमें रखकर यकृत्प्लीहारि लोह देनी चाहिये। यह औषधि भी कुछ अंशमें उत्तेजक है। अतः मात्रा अधिक न दें।

त्रिफला कषाय अनुपान रूपसे देवें। आमाशय, अन्त्र आदिका शोधन होजाने पर यकृत्प्लीहारिलोहको बन्दकर चिकित्सातत्वप्रदीप द्वितीय खण्डमें लिखी हुई यकृदरिलोहका सेवन शान्तिपूर्वक कराते रहना चाहिये।

यदि उपदंशजनित यकृद्दाल्युदर है; तो उसपर इस लोहकी अपेक्षा सोमल-प्रधान औषधि विशेष गुणदायक मानी जाती है।

विशीर्णतायुक्त यकृद्दाल्युदरके प्रारम्भमें यकृत् दृढ़ और कठिन होता है। रोग सबल बननेपर यकृदवृद्धि, कामला, कृशता, ज्वर, अति प्रस्वेद, मूर्च्छा, भ्रम, अतिसार, प्रलाप, उदरपर नसें नीली लाल भासना आदि लक्षण प्रतीत होते हैं। इस रोगमें विरेचन द्वारा रक्तदबाव जल्दी कम कराना चाहिये। इस रोगमें हृदयकी भी विकृति हो जाती है। यदि हृदयको अधिक हानि न पहुँची हो तो यकृत्प्लीहारि लोह त्रिफला क्वाथके साथ देनेसे लाभ हो जाता है। रक्तदबाव कम हो जानेपर यकृदरि लोहके साथ प्रवाल-पञ्चामृत जैसी पित्तशामक औषधि देनी चाहिये।

कभी कभी शराबियोंको यकृद्दाल्युदर होजाता है, तब यकृत्में भारीपना, प्रातःकाल खट्टी वमन होना, अफारा, क्षुधानाश, कोष्ठबद्धता, मुखमण्डलपर अति निस्तेजता, हृदयमें विकृति और क्षीणता आदि लक्षण प्रकाशित होते हैं। ऐसे रोगियोंको यकृत्प्लीहारिलोह त्रिफला कषायके साथ देनेसे यकृत्का भारीपन दूर होता है, उदरकी शुद्धि होती

है और रोगका बढ़ना रुक जाता है। उदरशुद्धि, यकृत्‌का हल्कापन और रक्त दबावका ह्रास होनेपर यकृद्‌रिलोहका सेवन कम मात्रामें दीर्घकाल तक कराना चाहिये।

२. नाराच रस

विधि —शुद्ध पारद, सोहागेका फूला, कालीमिर्च, तीनों १-१ तोला शुद्ध गन्धक, पीपल, सोंठ तीनों २-२ तोले और शुद्ध जमालगोटा ६ तोले लें। सबको मिला ६ घण्टे जलके (दंतीमूल के क्वाथ) साथ खरल करके १-१ रत्तीकी गोलियाँ बनावें। (र० यो० सा०)

मात्रा —१-१ गोली प्रात कालको मिश्री मिलाये जलसे देवें।

उपयोग —नाराच रस गुल्म, प्लीहोदर, मलावरोध और नव ज्वरको दूर करता है। अफारा, उदावर्त, बद्धकोष्ठ, बद्धकोष्ठसे उत्पन्न श्वित्र आदि कुष्ठ, रक्तविकार और त्वचारोग भी इसके सेवनसे दूर हो जाते हैं।

३. उदरारिरस

विधि —शुद्ध पारद, शुक्ति भस्म विशुद्ध नीलेथोथेकी भस्म, जमालगोटेके शुद्ध बीज, पीपल और अमलतासकी फलीका गूदा इन ६ औषधियोंको सम-भाग मिलाकर थूहरके दूधमें ६ घण्टे खरल करके २-२ रत्तीकी गोलियां बनावें। (र० च०)

मात्रा—१ से २ गोली तक प्रात काल इमलीके फलोंके रसके साथ।

पथ्य —विरेचन लग जानेपर दही भात। नमक बिल्कुल न देवें।

उपयोग —यह रस तीव्र विरेचन करा जलोदरको दूर करता है। स्त्रियोंके जलोदर (बीजकोषके जलोदर) को भी निवृत्त करता है, ऐसा मूल ग्रन्थकारका लेख है।

इस रसका विशेष उपयोग यकृद्‌वृद्धि और प्लीहावृद्धिसे उत्पन्न तथा कफ प्रधान जलोदरपर होता है। कफज जलोदरके साथ उदरशूल और मलावरोध होनेपर यह रस तुरन्त लाभ पहुँचा सकता है। इस रसके प्रयोगसे तीव्र विरेचन होता है। जिससे अन्त्र या मल मार्गका प्रतिबंध दूर होजाता है। एवं दस्तमें जल विशेषरूपसे निकल जाता है। इस हेतुसे उदर्य्याकला या बीजकोष अथवा जिस जिस स्थानपर जल संगृहीत हो वहासे जल रक्तमें आकर्षित हो जाता है।

यकृत्‌विकृतिसे उत्पन्न जलोदर या सर्वाङ्ग शोफमें यदि हृदय और वृक्क स्थानकी क्रियामें विशेष विकृति न हुई हो, मूत्रोत्पत्ति करनेमें वृक्क समर्थ हों, फिर भी सारे शरीरमें निस्तेजता, पाण्डुता मुँह और हाथपर कुछ स्फीति, मूत्रमें पीलापन, जिह्वापर मैल की तह आजाना, क्षुधानाश नाड़ीकी मंदता आदि लक्षण उपस्थित हों और कोष्ठबद्धता अत्यधिक हो, तो इस रसायनको प्रयुक्त करना चाहिए।

स्त्रियोंके बीजकोषमें जल भरके जलोदर (Ovarian dropsy) बन जाता है। इसका विचार डाक्टरी मतानुसार चि० त० प्र० द्वितीय खण्डमें किया है। इस विकारमें एक कोषमय व्याधि हो, तो इस विरेचनसे लाभ पहुँच सकता है।

४. रोहितक लोह

विधिः—रोहितक (रोहड़े) की अन्तर छाल, सौंठ, कालीमिर्च, पीपल, हरड़, बहेड़ा, आंवला, बायविडंग, नागरमोथा और चित्रकमूल, इन दस औषधियोंका कपड़छान चूर्ण १-१ तोला तथा लोह भस्म १० तोले मिला रोहितक आदि औषधियोंके क्वाथकी ३ भावना देकर २-२ रत्तीकी गोलियां बना लेवें। (र० सा० सं०)

मात्राः—१ से २ गोली दिनमें दो बार शरफोंकाके मूलके क्वाथ, दूध मट्ठे या रोगानुसार अनुपानके साथ देवें।

उपयोगः—यह लोह प्लीहावृद्धि, अग्रमांस (बढ़ा हुआ मांस) और यकृद्वृद्धि शोथ और जीर्णज्वरको दूर करता है। इस प्रयोगमे मुख्य औषधि रोहितक है। रोहितक प्लीहावृद्धि, यकृद्वृद्धिको नाश करनेमें अत्युत्तम औषधि है। रोहितकमें कृमिघ्न, व्रणनाशक, नेत्ररोगहर, विषशामक और रक्त प्रसादन गुण भी रहा है। कुष्ठरोगमें भी इसका क्वाथ-स्नान, पान और लेप आदि कार्योंमें व्यवहृत होता है।

लोह भस्ममें बढ़ी हुई प्लीहाका ह्रास, यकृत्के बलकी वृद्धि करना और रक्ताणुओंकी वृद्धिका गुण है। उसके साथ रोहितकका संयोग होनेसे प्लीहा वृद्धिके शमनका कार्य बहुत जल्दी होता है। त्रिकटु, त्रिफला और त्रिमदका प्रभाव आमाशय, यकृत् और अन्त्रपर विशेष पड़ता है। ये सब विकारकी निवृत्ति करके पाचन क्रियाको सुधारते हैं। एवं यकृत्प्लीहा आदिके ह्रास करानेमें सहायक होते हैं।

५. पाशुपत रस

विधिः—शुद्ध पारद १ तोला, शुद्ध गन्धक २ तोले, लोहभस्म ३ तोले तथा शुद्धबच्छनाग ६ तोले लें। पारद गन्धककी कजली करें। फिर लोह और बच्छनाग क्रमशः मिलाकर चित्रकमूलके क्वाथके साथ १ दिन खरल करें। पश्चात् धतूरेके बीजकी कालीराख ३२ भाग, सौंठ, कालीमिर्च, पीपल, लौंग और छोटी इलायचीके दाने ३-३ तोले, जायफल, जावित्री, सैंधानमक, सांभरनमक, समुद्रनमक, कालानमक, बिड़नमक, थूहरका क्षार, अर्कक्षार, एरण्डक्षार, इमलीका क्षार, अपामार्ग क्षार और पीपलवृक्षकी छालका क्षार ये १३ औषधियां ६-६ माशे; हरड़, जवाखार, सज्जीखार, भूनी हींग, जीरा, सोहागेका फूला, ये ६ औषधियाँ १-१ तोला मिला कपड़छान चूर्ण करें। फिर पारद मिश्रणके साथ चूर्ण मिला नीबूके रसमें १२ घण्टे खरल कर १-१ रत्तीकी गोलियां बनालें। (र० सा० सं०)

मात्राः—१-१ गोली भोजन कर लेनेपर दिनमें दो बार दें।

अनुपानः—उदर रोगमें मुसलीका रस। अतिसारमें मोचरस। ग्रहणी में सैंधानमक मिला हुआ मट्ठा। शूलमें काला नमक, पीपल और सोंठका चूर्ण। अर्शमें मट्ठा। राजयक्ष्मामें ६४ प्रहरी पीपल। वातजनित रोगमें सोंठ और संचरनोन, पित्तज रोगमें धनिया मिश्री तथा कफज रोगमें शहद पीपल।

उपयोग —पाशुपत रस उदर रोग (वातोदर और कफोदर) में तुरन्त प्रभाव दर्शाता है। यह अग्निप्रदीपक, आमपाचक और हृद्य है। विसूचिकाको तत्काल निवृत्त कर देता है। उदर रोग, अतिसार, ग्रहणी, शूल, अर्श, राजयक्ष्मामें अग्निमान्द्यतथा वातज, पित्तज और श्लेष्मज विकारोंको तुरन्त ही नष्ट कर देता है।

यह रसायन आमाशय रसकी वृद्धि तथा यकृत्पित्तका स्राव अधिक करता है। एवं कीटाणुओंका नाश करता है। क्षार दीपन पाचन क्रिया बढ़ाता है तथा धतूरेके बीज की राख कीटाणुओंका नाश और अन्त्रके संशोधनका उत्तम कार्य करती है। इस हेतुसे इस रसायनके सेवनसे पचन क्रिया प्रबल बन जाती है। फिर अग्निमान्द्य, अपचन तथा अपचनसे उत्पन्न अतिसार, विसूचिका, शूल, उदरमें भारीपन और उदरवात आदि शमन होजाते हैं। वात और कफजनित विकारोंमें इसका उपयोग हितकारक है। पित्त प्रकोपज विकारों में इसका उपयोग नहीं करना चाहिये। पित्तशमनार्थ प्रवाल पञ्चामृत, वराटिका भस्म शंखभस्म आदिका प्रयोग किया जाय, तो यह विशेष लाभदायक माना जायगा।

वातज और कफज अपचनकी निवृत्त करने के लिये पाशुपत रस अति प्रभावशाली औषध है। हमने इसका अनेक बार उपयोग करके लाभ उठाया है।

६ प्लीहार्णव रस

विधि —नीबूके रससे शोधित हिंगुल, शुद्ध गन्धक, सोहागका फूला, अभ्रक भस्म और शुद्ध वत्सनाग, ये सब ४ ४ तोले, पीपल और कालीमिर्च २-२ तोले लें। इन सबको मिला काली निर्गुण्डी के पानके स्वरसमें ७ दिन खरल करके १-१ रत्ती की गोलिया बाधलें। (र० च०)

मात्रा —१-१ गोली दिनमें दो बार निर्गुण्डी के पानके रस एवं १ तोले शरपुंखा के मूलका क्वाथ और शहद के साथ।

उपयोग —यह रसायन ६ प्रकारकी प्लीहावृद्धिको ज्वर, अग्निमांद्य, कास, श्वास, वान्ति, चक्कर आना आदि लक्षणोंसह शान्त करता है। जब प्लीहा बहुत बढ़ जाती है, तब ज्वर बना रहता है, अग्नि मन्द होजाती है, कफवृद्धि होकर श्वास-कास उपस्थित होते हैं, मुखमण्डल निस्तेज और शुष्क भासता है, मलावरोध बना रहता है, भोजन करनेपर उदरमें भारीपन आ जाता है, किसी भी कार्यके लिये मनमें उत्साह नहीं आता, शीत कालमें शीत अधिक लगता है आदि लक्षण प्रतीत होते हैं। उसपर इस वटीका सेवन शान्तिपूर्वक पथ्यपालन सह एक दो मास तक करानेपर पुनः स्वास्थ्य की प्राप्ति होजाती है।।

सूचना —शीतल वायु, शीतल जल, गुड़, शक्कर वाले पदार्थ और देरसे पचने वाले पदार्थोंको छोड़ देना चाहिये। ज्वरावस्थामें स्नान नहीं करना चाहिये। एवं मलावरोध रहे तो कुमार्यासव या अन्य सारक औषधि लेकर उदरशुद्धि करते रहना चाहिये।

७. यकृच्छूलविनाशिनी वटी

विधिः—नौसादर १ तोला, सैंधानमक २ तोले, तालमखाना, रोहितककी छाल, अजवायन और चित्रकमूलकी छाल, ये चारों १०-१० तोले लें। सबको मिला, कूट, कपड़छान चूर्णकर दुर्गन्धवाले करञ्जके पानोंके स्वरसमें २ दिन खरलकर २-२ रत्तीकी गोलियां बनालें। (भै० र०)

मात्राः—१ से २ गोली दिनमें २ बार २ तोले करेलेके रसके साथ।

उपयोगः—यह वटी यकृत्में होने वाले शूल, यकृद्वृद्धि, गुल्म और प्लीहोदर-को नष्ट करती है। करेलेके रसमें देनेसे प्रायः वान्ति होकर विष निकल जाता है और पित्ताशयमें अश्मरीकण हो, तो वह आगे सरक जाता है। फिर वेदना निवृत होजाती है, किन्तु अति निर्बल शरीर हो तो करेलेका रस कम देवें या निवाये जलके साथ दें।

८. यकृद्विकारहारि वटी

विधिः—कुटकी २० तोले, नौसादर १० तोले, काला नमक और सैंधानमक ४-४ तोले और भुनीहींग २ तोले लें। सबको मिला गोमूत्र, चित्रकमूलका क्वाथ और घीकुंवारका रस, तीनोंकी ३-३ भावना देकर १-१ रत्तीकी गोलियां बना लेवें।

(श्री० वैद्य गोपालजी कुंवरजी ठक्कुर)

मात्राः—२-२ गोली दिनमें २ या ३ बार निवाये जल या कुमार्यासवके साथ।

उपयोगः—यह वटी यकृत् और प्लीहावृद्धि तथा गुल्म आदिको दूर करती है। यकृतकी वृद्धि होनेपर जब पचन क्रिया योग्य काम नहीं करती, यकृत्पर दबानेसे दर्द होता है, तथा कब्ज रहती है, तब इस वटीका सेवन कराया जाता है।

९. प्लीहारि वटिका

विधिः—एलवा, अभ्रक भस्म, शुद्धकासीस और छिल्टेव बीचके अंकुररहित लहशुन, इन चारोंको ८-८ तोले मिला द्रोणपुष्पीके रसमें १२ घण्टे खरलकर २-२ रत्तीकी गोलियां बनावें। (भै० र०)

हम इस वटिकामें क्विनाइन सल्फास ४ तोले मिला लेते हैं। क्विनाइन मिलानेसे यह वटी अत्यधिक गुणकारी होती है।

मात्राः—१ से २ गोली दिनमें २वार जलके साथ देवें।

उपयोगः—इस वटीके सेवनसे प्लीहावृद्धि, यकृद्वृद्धि, मंद मंद ज्वर, गुल्म, अग्निमान्द्य, शोथ, कास, श्वास, तृषा, कम्प, दाह, शीत लगना, वान्ति, चक्कर आना आदि विकार दूर होते हैं।

ज्वरके पश्चात् प्लीहावृद्धि होने पर इस वटीका सेवन अति हितकारक है। इस वटीके उपयोगसे प्लीहावृद्धि, अग्निमान्द्य, उदरपीड़ा, बार बार ज्वर बढ़ जाना आदि विकार शीघ्र दूर होते हैं।

१०. कासीसाद्य वटी (उदर)

विधि —शुद्ध कासीस १ तोला, भुनी हींग २ तोले और रेवतचीनी ४ तोले मिला लहशुनके रसमें ६ घण्टे खरलकर २-२ रत्तीकी गोलियां बना लेवें। (मै० र०)

मात्रा —२ से ४ गोली दिनमें दो बार शराब, द्राक्षासव, रोहितकारिष्ट या लहशुनके रसके साथ सेवन करावे।

उपयोग —इस वटीके उपयोगसे यकृत्प्लीहावृद्धि, आमप्रकोप, छोटे उदरकृमि, मलावरोध, अग्निमान्द्य, मद ज्वर आदि दूर होते हैं। यकृत् सबल बनकर अपना कार्य नियमित करने लगता है। यह यकृत् और प्लीहाके विकारोंके लिये महौषध है।

११. अग्निप्रभा वटी

विधि.—सैंधानमक, नौसादर, यवक्षार, बिड़नमक और रससिंदूरको सम-भाग मिलाकर पटोलमूलके क्वाथके साथ १ दिन खरल करके २-२ रत्तीकी गोलियां बना लेवे। (मै० र०)

मात्रा —२ से ४ गोली प्रातःकाल तालमखानेके जलके साथ देवें। यकृत् या पित्ताशयके शूल पर अनुपान करेलेके एक पानका रस देना चाहिये।

उपयोग —इस वटीके सेवनसे यकृत् और प्लीहाके महा घोर रोग दूर होते हैं। जिन रोगियोंको ज्वर और अधिक मलावरोध न रहते हों, उनके लिये यह हितावह है। तालमखानेका जल अनुपान रूपसे देनेसे क्षार द्वारा अन्त्रकी श्लैष्मिक कलाको हानि नहीं पहुँचती। एवं अन्त्र शुद्धिमें सहायता मिल जाती है। यकृत् वृद्धि, प्लीहा-वृद्धि, यकृच्छूल आदि रोगोंको दूर करनेमें यह वटी अति उपकारक है।

१२ प्लीहोदरारि चूर्ण

विधि —इन्द्रायणा के फल ८ तोले, कड़वी जीरी (काली जीरी), आमा-हल्दी और सैंधानमक २०-२० तोले लें। सबको मिलाकर कपड़छान चूर्ण करें।

मात्रा—२ से ४ रत्ती सुबह जलके साथ देवें या छोटी मात्रामें दो या तीन बार देवें।

उपयोग —यह चूर्ण प्लीहावृद्धि, यकृद्वृद्धि, कोष्ठबद्धता, आमसंग्रह, उदर रोग, शोथ, कफप्रकोप और उदरकृमिको दूर करता है। मात्रा अधिक होनेपर उदरमें दर्द सह पतले जल जैसे दस्त लगते हैं।

बालकोंको डब्बा रोगमें यह चूर्ण गोरोचनके साथ मिलाकर दिया जाता है। इसके सेवनसे आध्मान, कफकी घर घर, बद्धकोष्ठ, घबराहट और ज्वर दूर होते हैं। केवल उदरशोधनार्थ देना हो, तो रात्रिको सोनेके समय माताके दूधके साथ आधरत्ती दिया जाता है।

१३ सामुद्राद्य चूर्ण (उदररोग)

विधि—समुद्रनमक, कालानमक, सैंधानमक, जवाखार, अजमोद, छोटी

पीपल, चित्रकमूल, सोंठ, भूनी हींग और कांचलवण, इन १० औषधियोंको समभाग मिलाकर कपड़छान चूर्ण करें।

मात्रा:—३ से ४ माशे दिनमें २ बार घीके साथ मिलाकर भोजनके पहले ग्रासमें लेवें।

उपयोगः—यह सामुद्राद्य चूर्ण वातोदर, गुल्म, अजीर्ण, वातप्रकोप, ग्रहणी-विकार, सब प्रकारके दुष्ट अर्श, मलावरोध, पाण्डु और भगंदर आदिको दूर करता है।

१४. वडवानल क्षार

विधिः—हींग, सोंठ, कालीमिर्च, पीपल, हरड़, बहेड़ा, आंवला, देवदारु, हलदी, दारुहल्दी, भिलावा, सुहिजनेके बीज, कुटकी, चव्य, बच और सोंठ, इन १६ औषधियोंको समभाग मिला कूटकर जौकुट चूर्ण करें। फिर पञ्चलवण (पांचों मिलाकर) चूर्णके समान मिला एक हांडीमें भरें। पश्चात् शराब संपुटकर संधिलेप करें। इसे चूल्हेपर चढाकर ३ घण्टेतक अग्नि देवें। स्वांग शीतल होनेपर क्षार निकालकर पीस लेवें।

मात्राः—१॥ से ३ माशे शराब, कांजी या निवाये जलके साथ दिनमें दो बार देवें।

उपयोगः—वडवानल क्षार उदररोग, गुल्म और उदरशूलका नाश करता है। इसका सेवन विशेष करके भोजनके आध घण्टे पहले कराया जाता है। यदि अपचन हो, तो किसी भी समय यह क्षार दिया जाता है।

१५. हपुषाद्य चूर्ण

विधिः—हाउबेर, सत्यानाशीकी जड़, हरड़, वहेड़ा, आंवला, कुटकी, नीलिनी (कालादाना), त्रायमाण, सातला (सेहुंड), निसोत, कालीमिर्च, बच, सैंधानमक और पीपल, इन १४ औषधियोंको समभाग मिला कूटकर कपड़छान चूर्ण करें।

मात्राः—२ से ४ माशे तक प्रातःकालको अनारदानेके रस, त्रिफलाके फाण्ट, मांस रस, गोमूत्र या निवाये जलके साथ देते रहें।

उपयोगः—हपुषाद्य चूर्ण विरेचन, दीपन, पाचन, आमविषघ्न, कीटाणुनाशक, कृमिघ्न, रक्तशोधक और कफघ्न है। सब प्रकारके उदररोग, श्वित्र, कुष्ठ, अजीर्ण, देहकी शिथिलता, विषमाग्नि, शोथ, अर्श, पाण्डु, कामला और हलीमक आदि रोगोंको दूर करता है।

जिन रोगोंकी उत्पत्ति उदरस्थ मल, आम, पूय, विष, कीटाणु या कृमिसे होती है, उन सब रोगोंपर यह हपुषाद्य चूर्ण निर्भयरूपसे प्रयुक्त होता है। जिन रोगियोंको अतिसार या पेचिश होगये हो या जिनके अन्त्रमें प्रदाह हो, उनको यह चूर्ण देना हो तो बहुत कम मात्रामें सम्हालपूर्वक देना चाहिये।

आमाशयकी पचनक्रिया सदोष हो तो अनुपान अनारदानेका रस, अन्त्रशिथिल हो, तो त्रिफलाका हिम या फाण्ट, पचन संस्थानमें क्षत हो और शारीरिक निर्बलता अधिक हो तो मांसरस, कृमि या कीटाणुप्रकोपज विकृति हो तो गोमूत्रकी योजना करनी

चाहिये। सर्व सामान्यरूपसे अनुपान निवाया जल है। सहायक अनुपानकी योजना होनेपर औषधि सत्वर लाभ दर्शाती है।

उदररोग और पचन संस्थानकी अन्य विकृतिवाले रोगीको लघुपथ्य देना चाहिये। देरसे पचन होने वाला भोजन, अपथ्य भोजन और अधिक भोजनका त्याग करना चाहिये। शक्कर-गुड़ आदि मधुर पदार्थ कम देवें या न देवें। खूब गरम गरम चाय, सिगरेट, शराब आदिका व्यसन हो तो छुड़ा देना चाहिये।

१६. प्लीहान्तक अर्क

विलायती कसीस	(Ferri Sulph)	४	औंस
गंधकाम्लविमर्दित	(Acid Sulph dil)	१०	औंस
क्विनाइन	(Quinine Sulph.)	४	औंस
मेग, सल्फ	(Mag Sulph)	२०	औंस
स्पिरिट क्लोरोफार्म	(Spt. Chloroform.)	२०	औंस
पिपरमेंट तेल	(Oil Mentha pip.)	४	ड्राम
मेग कार्ब	(Mag Carb)	४	ड्राम
बाष्प जल	(Distilled water)	१००	औंस

विधि —पहले क्विनाइनको थोड़े बाष्प जलमें मिलाकर रबड़ी जैसा बना लेवे। फिर उसके ऊपर गंधकाम्ल डालकर अच्छी तरह मिला लेवे। पश्चात् कसीस-को मिला लेवे। मेग सल्फको अलग बाष्प जलमें मिला लेवे। पीपरमेंटके तेलको मेग कार्बके साथ मिलाकर फिर उसमें बाष्प जल मिला लेवे। पश्चात् क्विनाइन मिश्रण, मेगसल्फका जल, पीपरमेंटका तेल, तीनोंको मिला लेवे। तत्पश्चात् स्पिरिट क्लोरोफार्म मिलावे। फिर कम हो उतना बाष्प जल मिलाकर १४० औंस पूरा करें। लाल रंग लानेके लिये रास्बरी कलर मिला लेवे। उसे २ २ औंसकी शीशियोंमें भरें और १२-१२ खुराककी चिट प्रति शीशीपर चिपका देवे।

मात्रा —१-१ खुराक १-१ औंस जलके साथ दिनमें ३ बार देवे।

उपयोग —प्लीहान्तक अर्क जीर्ण ज्वर, मन्द ज्वर, प्लीहावृद्धि, यकृद्वृद्धि, अग्निमांद्य, ज्वरजन्य पाण्डुता, स्त्रियोंके मासिकधर्मकी न्यूनता, मलावरोध, बारबार उलट उलट कर ज्वर आजाना, उदरकृमि और उदरवात आदि रोगोंको दूर करता है। प्लीहावृद्धिके लिये यह उत्तम प्रयोग है। सैकड़ों रोगियों पर इसका प्रयोग किया गया है। अत्यन्तियात लाभप्रद पाया गया है।

(३२) शोथरोग

१, शोथारि लोह

विधिः—लोह भस्म, सोंठ, कालीमिर्च, पीपल और यवक्षार, इन ५ औष-धियोंको समभाग मिलाकर खरल कर लेवें। (भै० र०)

मात्राः—४–४ रत्ती दिनमें २ बार त्रिफलाके हिम या फाण्टके साथ सेवन करावें।

उपयोगः—यह शोथारि लोह वातज, पित्तज, और कफज आदि सब प्रकारके शोथ रोगको दूर करता है। यह लोह नये और पुराने बढे हुए शोथरोगमें भी निर्भय-रूपसे प्रयुक्त होता है। लक्षणानुरोधसे दूसरी औषधि भी मिला सकते हैं।

वातज शोथको दिवाबली कहा है, अतः यह हृदयविकृतिजन्य माना जाता है। और कफज शोथको रात्रिबली कहा है, अतः यह वृक्क विकारज माना गया है। पित्तज-शोथ यकृद्विकारज होता है। हृदयविकृतिसे सर्वांग शोथ हो, उसकी अपेक्षा यकृद् या वृक्कविकारसे होनेवाला शोथ अधिक दुःखदायी और अमंगलकारक होता है। वृक्क विका-रजशोथ मुखपरसे नीचेकी ओर फैलता है। फिर अति बढ़नेपर उदर्य्याकलामें रक्त रस-का संग्रह कराता है। किसी रोगीके फुफ्फुसावरणको भी दूषित करता है। फुफ्फुसा-वरणमें रससंग्रह होनेपर रोग असाध्य या कष्ट साध्य बन जाता है। पूयमय चिरकारी वृक्कप्रदाह (Chronic suppurative nephritis) जीर्ण होनेपर सारे शरीरपर सूजन फैल जाती है। वह दिनमें भी कम नहीं होती। आंखें गडढेमें घुस जाती हैं। उदर, हाथ, पैर आदिपर भी बहुत शोथ आ जाता है। रोगी दिन प्रतिदिन अशक्त होता जाता है। इस रोगमें विशेषतः मूत्रह्रास और मलावरोध रहता है। जिससे मूत्रविष रक्तमें संग्रहीत होता है और मलमेंसे भी विष रक्तमें आकर्षित होता रहता है। इस हेतुसे शिरःशूल, अरुचि, वान्ति, क्षुधानाश आदि लक्षण भी प्रतीत होते हैं।

मूत्रपरीक्षा करनेपर पूयकीटाणु, लसीका (एल्ब्युमिन) और रक्त भी मिलता है। मूत्रोत्पत्ति बहुत कम होती है और निर्बलता आनेपर स्वेद भी बहुत कम होता है। इस हेतुसे उत्तरोत्तर कष्ट बढता जाता है। ऐसे रोगमें पूय कीटाणु दूर करके फिर कम मात्रामें १–२ मासतक शोथारि लोहका सेवन कराया जाय, तो रोगी का जीवन बच जाता है।

यदि रोगीको कब्ज न हो, अफीम सहन हो सके और रोगी केवल दूधपर रह सके, तो शोथारि लोहके साथ दुग्ध वटीका सेवन कराया जाता है।

कफ प्रकोप हो तो शोथारि लोहके साथ शृंग भस्म और बहुत कम मात्रामें वङ्ग भस्म (पूय कीटाणुओंके लीन विषको नष्ट करने के लिये) भी मिला देना चाहिये।

वक्तव्य —(१) इस रोगमें आवश्यकता अनुसार स्वेद द्वारा विष बाहर निकलवाते रहें और पुनर्नवाका सेवन कराते रहे तो लाभ जल्दी पहुँचनेकी सम्भावना है।

(२) यदि रोगीको शराब या तमाखूका व्यसन हो तो छुड़ा देना चाहिये।

(३) मूत्र विरेचन या तीव्र मूत्रल औषधि नहीं देनी चाहिये।

(४) रोगीको दूध मधुर या मधुराम्ल फलोंके रस, शाकाहार या दूध भातपर रखना चाहिये। नमकका पूर्ण रूपसे त्याग करा देना चाहिये। पोषक द्रव्य (प्रथिन-प्रोटीन) हो सके उतना कम करा देना चाहिये।

(५) मलावरोध हो तो गोमूत्रकी बस्ति या ग्लिसरीन की पिचकारी देकर उदर शुद्धि कराते रहना चाहिये या त्रिफलाकी मात्रा बढानी चाहिये। गोमूत्रका उदर सेवन भी हितावह है।

(६) यदि वृक्कपर शोथ हो तो अलसीका पुल्टिस बाधते रहना चाहिये।

२. पुनर्नवाष्टक कषाय

विधि —पुनर्नवाकी जड़, नीमकी अन्तर छाल, पटोलपत्र, सोंठ, कुटकी, गिलोय, दारुहल्दी और हरड़, इन ८ औषधियोंको समभाग मिलाकर जौ कूट चूर्ण करें। (व० से०)

मात्रा —४ से ८ तोलेका क्वाथकर दो हिस्से करें। प्रात कालको एक हिस्सा पी लेवें। दूसरा हिस्सा शीशीमें रहने दें। उसका सेवन सायकालको करें।

उपयोग —इस क्वाथके सेवनसे सर्वाङ्ग शोथ, और उदर रोगका निवारण होता है, तथा लक्षण रूप या उपद्रव रूपसे उत्पन्न कास, शूल, श्वास और पाण्डु भी नष्ट हो जाते हैं। विशेषत यह क्वाथ मण्डूर भस्मके साथ अनुपान रूपसे दिया जाता है। दरस्तोयमें जल सग्रह कम करानेके लिये भी यह कषाय व्यवहृत होता है।

यह क्वाथ शोथ रोगकी उत्तम और निर्भय औषधि है। यह मूत्रको साफ लाता है, एव कोष्ट बद्धताको भी दूर करता है। ज्वरयुक्त शोथ और ज्वररहित शोथ, मूत्र रोग और लक्षण रूप शोथ, सब पर व्यवहृत होता है। निर्बल व्यक्तिको मात्रा कम देनी चाहिये।

३. मूत्रल कषाय

विधि —पुनर्नवामूल, इखका मूल, कुशाका मूल, कासका मूल, छोटे गोखरू, सौंफ, धनिया, सागौनके फल, मकोय, कासनीके बीज, ककड़ी (खीरा) का मग़ज़, गिलोय, पाषाणभेद, काकनुज और कमलके फूल, इन १५ औषधियोंको १ १ तोला मिलाकर जौकूट कर लेवें। (श्री प० यादवजी त्रिकमजी आचार्य)

मात्रा —२ २ तोले चूर्णको १६ तोले जलमें मिला चतुर्थांश क्वाथ करके छान लें। फिर शिलाजीत या श्वेतपर्पटी ४ रत्तीसे १ माशा तक मिलाकर पिला दें। इस तरह दिनमें २ या ३ बार देवें।

उपयोगः—इस क्वाथका उपयोग वृक्कविकार जनित शोथपर होता है। इस विकारमें मूत्रमें एलब्यूमिन जाना, मुखपर प्रथम शोथ आना, शोथ जीर्ण होनेपर रक्तवाहिनियां विकृत होना और हृदय निर्बल होना, पेशाब बहुत कम उतरना, रोगी निस्तेज और स्थूल हो जाना तथा विशेषतः मुख मण्डल, कटि देश, वृषण और मूत्रेन्द्रिय पर सत्वर और विलक्षण शोथ आना, ये लक्षण प्रकाशित होते हैं। इन पर यह क्वाथ विशेष लाभ पहुँचाता है।

कभी कभी मूत्रग्रन्थिका बाह्यअंश (Renal cortex) शीर्ण होनेपर हृदय और रक्तवाहिनियोंमें भी विकृति आ जाती है। फिर शोथ उत्पन्न होता है। यह शोथ दोनों पैरोंसे आरम्भ होता है। प्रारम्भमें मुखमण्डल आक्रान्त नहीं होता। इस प्रकारमें भी मूल विकार वृक्कसे उत्पन्न हुआ है। इस विकारपर भी यह कषाय लाभ पहुँचाता है। इस प्रकारमें पुनर्नवा मण्डूरके साथ यह क्वाथ देना, विशेष हितावह माना जायगा।

कमर और पेटमें अश्मरीजनित शूल चलता हो, तो इस क्वाथके साथ जटामांसी २ भाग (१५ तोलेमें २ तोले) और खुरासानी अजवायनके बीज या पान १ भाग मिलाकर उपयोग करना चाहिये। साथमें हजरूल यहूद भस्म ४ से ८ रत्ती देवें, तो सत्वर लाभ होता है।

४. पुनर्नवादि कल्प

विधिः—पुनर्नवाके मूल, कुटकी, दारुहल्दी, सारिवा (सुगन्धवाली) और मजीठ इन ५ औषधियोंको १-१ सेर मिला कूटकर मोटा मोटा चूर्ण करें। फिर रात्रिको ४० सेर जलमें भिगो देवें। सुबह मंदाग्निपर क्वाथ करें। चतुर्थांश जल शेष रहनेपर मसलकर छान लेवें। इस छने हुए क्वाथको (पुनः २० सेर जल मिलाकर उबालें। १० सेर रहनेपर नीचे उतार मसलकर छान लेवें। इन दोनों क्वाथ जलोंको मिला) कड़ाहीमें डालकर उबालें। सम्हाल पूर्वक चलाकर घन बनावें। शर्बत जैसा गाढा बननेपर उसमें ३० तोले शक्कर मिलाकर अवलेह बना लेवें। (श्री गुरु शास्त्री)

मात्राः—३-३ माशे १-१ औंस जल मिलाकर दिनमें ३-४ बार देवें।

उपयोगः—पुनर्नवादि कल्प मूत्रल, यकृत्प्लीहावृद्धिहर और शोथहर है। यकृत् प्लीहावृद्धिसह सर्वाङ्ग सोफमें यह हितावह है।

५. शोथहर योग

विधिः—कच्ची फिटकरी ८ तोले और मधुमण्डूर भस्म १ तोला मिलाकर खरल कर लेवें। इसमेंसे बालकको १ रत्ती और बड़े मनुष्यको ४ से १२ रत्तीतक दिनमें २ बार २१ बार छाने हुए गोमूत्रके साथ देते रहनेसे थोड़े ही दिनोंमें पाण्डु, हाथ, पैर, उदर और मुखमण्डलपर शोथ, अपचन, मलावरोध और अरुचि आदि सब विकार दूर होजाते हैं। यकृत् प्लीहा बढ गये हों और मंद मंद ज्वर रहता हो, वे भी निवृत्त होजाते हैं।

सूचनाः—रोगीको दूध या (ज्वर न हो तो) दूध भातपर रखना चाहिये।

(३३) श्लीपद

१ श्लीपदारि लोह

विधि —हरड, बहेड़ा, आवला, मुण्डलोहभस्म, कान्तलोहभस्म और शुद्ध शिलाजीत, इन सबको समभाग मिला त्रिफलाके क्वाथमें ७ दिनतक मर्दन कर २-२ रत्तीकी गोलिया बना लेवें। (भै० र०)

मात्रा —१ से ४ गोली दिनमें २ बार त्रिफलाके फाण्टके साथ।

उपयोग —इस लोहका शान्तिपूर्वक ४–६ मास तक पथ्य पालन सह उपयोग करने पर बढा हुआ पुराना श्लीपद और नया श्लीपद रोग नष्ट हो जाता है।

२. सिद्धगन्धक

विधि —आवलासार गन्धक १ सेर और पातालयन्त्रसे निकला हुआ भल्लातक तैल १० तोले मिलाकर लोहेकी कड़ाहीमें डालकर मन्दाग्नि देकर रस करें। रस होनेपर ४ सेर दूधमें डाल देवें। १५-२० मिनट बाद दूधको अलगकर गन्धकको निकाल लें। पुन १० तोले भल्लातक तैल [illegible] रस करें और दूधमें डाल देवें। इस तरह ३ बार शुद्धि करें। फिर गायके दूध, चातुर्जात, गिलोय, हरड, बहेड़ा, आवला, भागरा और अदरख इन, औषधियोंके रस या क्वाथकी ८-८ भावना (सब मिलाकर ६४ भावना) देकर फिर गन्धक बना लेवें। (श्री गुणे शास्त्री)

सूचना—भल्लातक तैलका धुआँ मुख अथवा शरीरके किसी भागको न लगे, यह सम्हालना चाहिये। अन्यथा उस स्थानपर सूजन आ जायगी।

मात्रा—२ से ४ रत्ती दिनमें १ बार सुबह तुलसीके रस और शहदके साथ लेवें। आवश्यकता अनुसार ताल भस्म, लोह भस्म और अभ्रक भस्म चौथाई चौथाई रत्ती मिला लेवें।

उपयोग—यह रसायन कफप्रधान प्रकृतिवालोंके लिये उत्तम कृमिघ्न और रक्तप्रसादन है। श्लीपद, जीर्ण श्युची, महाकुष्ठ, वातरक्त, जीर्ण फिरग और जीर्ण सुजाक आदि रोगोंपर प्रयुक्त होता है।

श्लीपदरोगके कृमि (Fileria) अति दुःखदायी होते हैं। ये जल्दी नहीं मरते। रोग जीर्ण होनेपर पीड़ित स्थान अति स्थूल हो जाता है। उसके नीचे रस सम्रहीत होता है और रक्तवाहिनिया मोटी बन जाती हैं। कितनेक रोगियोंको बार बार ज्वर आ जाता है। इस रोगपर पथ्यपालनसह ४-८ मासतक केवल इस रसायनका सेवन कराया जाता है। अथवा नित्यानन्द रसके साथ देनेसे लाभ होजाता है। आवश्यकता अनुसार स्थानिक उपचाररूपमें गर्जन तैलकी मालिस करते रहना चाहिये।

श्लीपदके अतिरिक्त कुष्ठ आदि रोगोंके कीटाणु भी इस रसायनके सेवनसे नष्ट हो जाते हैं। इस हेतुसे कुष्ठ रोगकी औषधिके साथ इसे मिला दिया जाता है।

सूचनाः—प्रथम खण्डमें दिये हुए गन्धक रसायनके उपयोगके अन्तमें दी हुई सूचनाएँ देख लेवें।

श्लीपदमें अजवायनके बीज या पान १ भाग मिलाकर उपयोग करना चाहिये। साथमें हजरूलयहूदकी भस्म (या पिष्टी) ४-८ रत्ती देवें, तो लाभ सत्वर होता है।

३. श्लीपदगजकेसरी

विधिः—सोंठ, कालीमिर्च, पीपल, शुद्ध बच्छनाग, अजवायन, शुद्ध पारद, चित्रकमूल, शुद्ध गन्धक, शुद्ध मैनसिल, सोहागेका फूला और शुद्ध जमालगोटा, इन ११ औषधियोंको समभाग लेवें। पहले पारद गन्धककी कज्जली करें। फिर मैनसिल, बच्छनाग, जमालगोटा और सोहागा क्रमशः मिलावें। पश्चात् शेष औषधियोंका कपड़छान चूर्ण मिलाकर भांगरा, गोखरू, नीबू और अदरखके रसकी १—१ भावना देकर १—१ रत्तीकी गोलियां बना लेवें। (र० यो० सा०)

मात्राः—१ से ३ रत्ती दिनमें २ बार निवाये जलसे देवें।

उपयोगः—श्लीपदगजकेसरी सब प्रकारके श्लीपद और प्लीहावृद्धिको दूर करता है। श्लीपद और प्लीहावृद्धिके साथ उत्पन्न ज्वर और अन्य रोग भी इसके सेवनसे नष्ट हो जाते हैं।

---

(३४) वृद्धिरोग

१. वृद्धिनाशन रस

विधिः—शुद्ध पारद और शुद्ध गन्धक २-२ तोले तथा सुवर्णमाक्षिक भस्म १० तोले लें। पहले पारद गन्धककी कज्जली करके माक्षिक मिलावें। फिर हरड़के क्वाथसे ३ दिन और एरण्ड तैलसे १ दिन खरलकर २—२ रत्तीकी गोलियां बनावें।

(र० यो० सा०)

वक्तव्यः—हरड़की भावना पहले देनेकी अपेक्षा एरण्ड तैलकी भावना पहले देनेसे एरण्ड तैलका शोषण हो जाता है और गोलियां अच्छी बन सकती हैं।

मात्राः—१ से २ गोली दिनमें दो बार देवें।

अनुपानः—कर्णस्फोटा (कनफुटी—कानफोड़ी) का रस, बलातैल, चनेका क्वाथ, यवक्षार या एरण्ड तैल मिला हुआ हरड़का क्वाथ।

कर्णस्फोटाको मराठीमें कनफुटी, कपालफोड़ी। गुजरातीमें करोलियो। काठियावाड़-में कागडोलियो। बंगालमें लताफटकी, नयाफटकी। तामिलमें कोटावन, मुड्कोट्टन।

तेलगुमें ज्योतिष्मति। तिगे और लेटिनमें कार्डियोस्पर्मम हेलिकेबम (Cardiospermum Halicabum) कहते हैं। यह वर्षायु और बहुवर्षायु वनस्पति है। शाखाएं पतली और कोमल होती हैं। पान त्रिकोणाकार शिखर भागमें अति तीक्ष्ण और आधार स्थानमें सकड़े होते हैं। फूल सफेद ३ से ४ मिलीमीटर (लगभग 1/8 इंच) लम्बे और थोड़े फूलोंके छत्राकार तुर्रे आते हैं। बीज चिकने ५ से ६ मिली० व्यासके, गोलाकार, काले, सूक्ष्म, सफेद, हृदयाकार और उपकवच वाले होते हैं।

उपयोग —यह रसायन वृषणवृद्धि और अन्त्रवृद्धिका नाश करता है। शांतिपूर्वक दीर्घकाल तक सेवन करना चाहिये। कोष्ठबद्धता हो, तो हरड़का क्वाथ या एरण्ड तेलका अनुपान रूपसे उपयोग करना चाहिये। मूत्रशुद्धि न होती हो, तो यवक्षार मिश्रित हरड़का क्वाथ लेना चाहिये और समयमें कान फोड़ीका क्वाथ विशेष हितावह है।

२ वृद्धिहरि वटिका

विधि —कुन्दुर गोंद, कांटे वाले करंजके सेके हुए फलोंका मग्ज और काला नमक ४-४ तोले, इन्द्रजौ, वायविडंग, छिलका और अंकुर निकाला हुआ लहसुन, इन्द्रायनकी जड़, अजमोद और रूमी मस्तगी, ये ६ औषधियां २-२ तोले, भूनी हींग और ढाका माली (नाडी हिंगु) १-१ तोला लें। सबके कपड़छान चूर्णको घीकुवारके रसमें १ दिन मर्दन करके २-२ रत्तीकी गोलियां बनालेवें।

(प० यादवजी, त्रिकमजी आचार्य)

मात्रा —२ से ४ गोली दिनमें ३ बार जलके साथ।

उपयोग —यह वटिका वातज और कफज वृद्धि रोग, कृमिविकार और उदर-पीड़ाको निवृत्त करती है।

३. वृद्धिहर लेप

(१) एरण्ड के बीजकी गिरी, रास्ना, एलुआ, गूगल, कुन्दरु, कालीमिर्च और पुनर्नवा, इन ७ औषधियोंको समभाग मिला जलके साथ पीस कर पतला कल्क तैयार करें। इसे थोड़ा गरम कर लेवें, फिर वृषण परसे बालोंको दूरकर लेप लगा देवें। इस तरह दिनमें दो समय लेप करनेसे नया वृषणशोथ ३-४ दिनमें ही दूर हो जाता है।

सूचना —गरम जलमें कपड़ा भिगो, सम्हालकर पहलेके लेपको धो, फिर स्वच्छ कपड़ेसे पोंछकर नया लेप लगाना चाहिये।

(२) धिलारसको तमाखूके ताजे पानपर लगाकर गरम करें। फिर अण्डकोष परसे बालोंको निकालकर पानको बांध देवें। उपरसे लंगोट लगा लेवें। इस तरह १ सप्ताह तक दिनमें दो बार करते रहनेसे वृषणावरणमें भरा हुआ जल सूख जाता है, वृषणशोथ निवृत्त हो जाता है और वेदना शान्त हो जाती है।

सूचनाः—तमाखूके व्यसनीको तमाखूके पानका उपयोग करना चाहिये। औरोंको उबाक आकर वमन हो जाती है। वमन होने पर लाभ जल्दी होता है; परन्तु कितनेक रोगी घबरा जाते हैं। अतः निर्बल मन वालेको नागरबेलके पानपर शिलारस लगाकर बांधना चाहिये।

(३) खानेकी तमाखू ५ तोले और मुलतानी मिट्टी ५ तोलेको सुबह भिगो, शामको मल छान कर पकालें। रात्रिको लेप करें। किन्तु पानी न पिलावें (प्यास अधिक होती है) दूध किंवा घी बारम्बार पिलानेसे वृषणवृद्धि दूर होती है।

(पं० राधाकृष्णजी द्विवेदी)

(४) फुलसन (विदियासन) के बीजोंको रात्रिमें शराबमें भिगो कर प्रातः पीस, पकाकर उपरोक्त विधिसे लेप करें। यह सत्वर लाभकारी है।

(पं० राधाकृष्णजी द्विवेदी)

(५) मनः शिल, जायफल और जावित्रीको गोदुग्धमें पीसकर लेप करें और ऊपर एरण्ड पत्र रख कर लंगोट बांधनेसे १ सप्ताहमें नया वृषणवृद्धि रोग शमन हो जाता है।

(६) दशांगलेप २ तोले और उदुम्बर सार ६ माशे मिला निर्गुण्डीके रसमें पीसकर वृषण पर लेप करनेसे शोथ और वेदना दोनों शमन हो जाते हैं।

(पं० यादवजी त्रिकमजी आचार्य)

वक्तव्यः—वृद्धिरोगमें मल मूत्र साफ लाने वाले तथा वायुको अनुलोम करने-वाले आहार और औषधका उपयोग करना चाहिये।

श्लीपद और वृद्धि रोग दोनोंकी उत्पत्ति फाइलेरिया नामक कीटाणुसे होनेसे डाक्टरीमें वृद्धि रोगका अन्तर्भाव श्लीपद (Elephantiasis) में किया है। उपचार और पथ्यापथ्य दोनोंके लिये अनेक अंशमें समान माना गया है।

---

(३५) गण्डमाला, गलगण्ड

१. गण्डमालाहर योग

(१) शिरीष बीजकी गिरीका चूर्ण २० तोले, कचनार छालका चूर्ण १० तोले और शहद ६० तोले लेवें। तीनोंको मिला १५ दिनतक रहने देवें। फिर निकाल रोज प्रातः सायं १-१ तोला सेवन करें। (कविराज पं० हरदयालजी वैद्यवाचस्पति)

सूचनाः—प्रातः और सायंको कुछ भी खाने या पीनेके पहले औषध सेवन करें और ऊपर गण्डमालाहर अर्क पीते रहें।

(२) काञ्चनार गूगल २ माशे, प्रवाल पञ्चामृत ४ रत्ती और सुवर्णभस्म ½ रत्ती मिला, २ हिस्सा कर सुबह शाम देवें। अनुपान रूपसे कचनार छाल, वरनेकी छाल, गोरखमुण्डी और खैरकी छाल या लकड़ीका बुरादा समभाग लेकर २ ॥ तोलेका क्वाथ करके पिलाते रहें तथा गूगल, गन्धक और रसौत तीनोंको जलमें पीसकर लेप करते रहनेसे नया गण्डमाला रोग १-१॥ मासमें दूर होजाता है।

(प० यादवजी त्रिकमजी आचार्य)

(३) वातरोगमें लिखे हुए पञ्चामृत लोहगुग्गुलुका सेवन, अमृतप्राशावलेहके साथ प्रात साय कराते रहनेसे नये गण्डमाला और गलगण्ड रोगमें अच्छा उपयोग होता है।

(४) रसकपूर १ तोला, भिलावा, अजवायन और गुड़ २-२ तोले मिला कूट कर १-१ रत्तीकी गोली बना कर मट्ठेके साथ १-१ गोली निगलवाते रहनेसे गण्ड-माला रोग दूर होजाता है।

(५) एक १०-१२ वर्षके बच्चेको ३-४ गाठें थी मद ज्वर बना रहता था और शारीरिक वजन क्रमशः घटता जाता था। डाक्टरोंने गलेका T. B (क्षय) कह दिया था। उसे प्रात साय २-२ माशे सुदर्शन चूर्ण और १-१ तोले बछड़ेका गोमूत्र ६ मासतक देनेसे सब गाठें गल गई और ज्वर शमन होकर रोगी सबल और पुष्ट हो गया। (राजवैद्य प० रामचन्द्रजी)

(६) छोटे बालकको गण्डमाला होनेपर अपामार्गके मूलके छोटे छोटे टुकड़ोंकी माला बनाकर गलेमें पहना देनेसे भी गिल्टिया २-३ मासमें दूर हो जाती हैं।

(कविराज प० हरदयालजी विद्यावाचस्पति)

२. गण्डमालाहर अर्क

विधि —पुनर्नवामूल २ सेर, मुण्डी और वरनाकी छाल १-१ सेर और जल २० सेर लेवें। तीनों औषधियोंको जौ कूटकर जलमें भिगो देवें। २४ घण्टेके पश्चात् नलिका यन्त्र द्वारा ४ से ७ सेर तक अर्क निकाल लेवें। यदि कचनारकी छाल भी १ सेर मिला दी जाय तो अच्छा। (कविराज प० हरदयालजी वैद्यवाचस्पति)

उपयोग —गण्डमालाहर योगके सेवनके साथ यह अर्क रोज ४-४ तोले दिनमें दोबार पिलाते रहनेसे ४०-४५ दिनमें गण्डमाला और अपची निश्चय ही दूर होजाती है।

सूचना —रोग अति जीर्ण हो जाने पर फिर लाभ होनेकी आशा कम रहती है। दही, मट्ठा, दूध, उड़दकी खटाई, पक्का भोजन और अन्य कफकारक पदार्थोंका त्याग कर देना चाहिये।

यदि रोगीको ज्वर भी आता हो तो सुदर्शन चूर्ण ऽ२ सेर, सारिवा ऽ१ सेर, गिलोय ऽ॥ सेर, सबको जौकुट चूर्ण करके ।ऽ४ सेर जलमें भिगो ऽ४ सेर अर्क खेंच लेवें।

मात्राः—५-५ तोले समान भाग गण्डमालाहर अर्क मिला कर प्रातः सायं पिलाते रहनेसे ज्वर सहित गण्डमाला नष्ट हो जाती है।

३. गण्डमालान्तक लेप

विधिः—एक कलीवाले साफ तुषरहित ५ तोले लहशुनको खरलमें पीस, ५ तोले वैसलीन मिला ३ घण्टे खरल कर मिश्रण बना लेवें।

(कविराज पं० हरदयालजी वैद्यवाचस्पति)

उपयोगः—गण्डमालाकी गिल्टीके आकारकी कपड़ेकी गोल चुकत्ती काट लेप लगाकर ग्रन्थिपर चिपका देवें। फिर ऊपर कपड़ेकी पट्टी बांध देवें। इस चुकत्ती और पट्टीको दिनमें दो बार बदल देवें। यदि और समयमें औषधिसह पट्टी स्थानसे हट जाय, तो उसे निकाल उसी समय नयी औषधिवाली पट्टी लगा देवें।

यह औषध गण्डमालाकी प्रारम्भावस्थामें अति हितकारक है। १५-२० दिन तक रोज पट्टी बांधते रहनेसे लाभ होने लगता है। प्रारम्भमें ग्रन्थिमें मृदुता आती है, फिर ग्रन्थिमें संगृहीत दूषित रस पतला होकर रक्तमें लीन होने लगता है। पश्चात् २-३ मासमें ग्रन्थियां नष्ट हो जाती हैं।

सूचनाः—इस औषधके उपयोग कालमें ऊपर लिखा हुआ गण्डमालाहर योग अथवा गण्डमालाकण्डन रस (रसतन्त्रसार प्रथम खण्ड) का सेवन कराते रहना चाहिये।

४. गलगण्डहर लेप

(१) सफेदचन्दन, रक्तचन्दन और आंवलेको चंदनके समान जलमें घिसें। फिर थोड़ा गीलेअरमानी मिलाकर लेप करें। यह लेप दिनमें ३-४ बार करते रहनेसे नया गलगण्ड (Goitre) रोग थोड़ेही दिनों में दूर हो जाते हैं।

(२) मिरच्याकन्दके रसमें सोनागेरू मिलाकर लेप करनेसे गलगण्ड और गण्डमालकी गांठ बिखर जाती है।

(३) एरण्डमूल और पलाशमूलको चावलोंके धोवनमें घिसकर लेप करते रहनेसे गलगण्ड मिटजाता है।

(४) रक्तचंदन, लोद, पीलू और दारुहल्दीको जलमें घिसकर बार बार लेप करते रहनेसे नया गलगण्ड बैठ जाता है।

(५) हरतालको गोमूत्रमें घिसकर लेप करनेसे गलगण्ड दूर होजाता है।

५. अपचीहर मलहम

विधिः—राल, गन्धाबिरोजा और गूगल १-१ सेर, मोम ४० तोले और तिल तैल ३॥ सेर लें। पहले १०-१५ सेर जल रहे, उतनी बड़ी कलई लगी हुई पीतलकी कड़ाहीमें तैलको गरम करें। फिर उसमें राल डालकर चलावें। १-२ मिनट बाद गन्धाबिरोजा, गूगल और मोम क्रमशः डाले। सब मिल जानेपर तुरन्त कड़ाहीको नीचे

मात्रा —१-१ गोली दिनमें २ बार शहद, गूगल अथवा जलके साथ ।

उपयोग —यह व्रणरोपण रस समस्त व्रण, सद्योजात व्रण, मकड़ीके विष-जनित व्रण, भगंदर, गांठ और गण्डमाल आदिको नष्ट करता है ।

पथ्य —सफेद चावल, मूंग, गेहूँ और घी देवें । नमक न देवें इस रसायनमें अफीम आती है, अतः मात्रा अधिक न देवें ।

४. व्रणान्तक रस ।

विधि —सफेद सोमल १ भाग, सिंगरफ २ भाग, सफेद कत्था ३ भाग लें । सबको मिला अदरखके रसमें ३ दिन खरल करके, सरसोंके समान गोलियां बना लेवें ।

(र० यो० सा०)

मात्रा —१ से २ गोली घीके साथ दिनमें २ बार ।

उपयोग —इस व्रणान्तक रसके सेवनसे व्रण जल्दी सूख जाते हैं और भर जाते हैं । उपदंश, रक्तविकार और अन्य कितनेक रोगोंमें व्रण हो जाने पर सत्वर नहीं भरता तथा नाड़ी व्रण होने पर वर्षों तक दुःख पहुँचाता है, उन सब पर इस रसायनका सेवन करानेसे सत्वर लाभ हो जाता है ।

सूचना —भोजनमें घी अधिक लें । ६ मास तक मूंग, करेला, कुष्माण्ड, गुड़ और केला नहीं खाना चाहिये ।

उपदंशजन्य व्रण विशेष पर विशेष गुणकारी है ।

५. विडङ्गारिष्ट

विधि —वायविडङ्ग, पीपलामूल, रास्ना, कूड़ेकी छाल, इन्द्रजौ, पाठा, एलवालुक (अभावमें कूठ या नेत्रवाला) और आवला, इन ८ औषधियोंका जौकूट चूर्ण ६४-६४ तोलेको ८१९२ तोले जलमें मिला कर क्वाथ करें । चतुर्थांश (२०४८ तोले) जल शेष रहने पर पात्रको उतार कर छान लें । क्वाथ शीतल होने पर शहद १२०० तोले, धायके फूल ८० तोले, त्रिजात (दालचीनी, तेजपात और छोटी इलायचीके दाने) ८ तोले, प्रियङ्गु, कचनारकी छाल और लोध ४-४ तोले तथा त्रिकटु (सोंठ, कालीमिर्च और पीपल) ३२ तोलेका चूर्ण मिला मुखमुद्रा कर १ मास रहने देवें । आसव परिपक्व होने पर छान कर बोतलों में भर लेवें । (शा० स०)

वक्तव्य —मूलग्रन्थमें वायविडङ्ग आदि औषधियां २०-२० तोले लिखी हैं । अब क्वाथका जल १०२४ तोले शेष रखने का लिखा है । परन्तु यह भूल परम्परा नकल करने वालोंकी हुई होगी ऐसा मानकर हमने सुधार किया है । १०२४ तोले जलमें १२०० तोले शहद मिलानेसे अरिष्ट बलवान नहीं बन सकेगा । २०-२० तोले औषध लेनेसे जल २१ गुना हो जाता है । यह भी मर्यादाविरुद्ध होता है ।

मात्रा —१॥ से २॥ तोले दिनमें २ बार जल मिलाकर देवें ।

उपयोगः—यह अरिष्ट दीपन, पाचन, ग्राही, कीटाणुनाशक, और अन्त्रसंशोधक है। मूलग्रन्थकारने नये उत्पन्न होने वाले अन्तर्विद्रधि आदि विकारोंके प्रतिबन्धके लिये इस अरिष्टका निर्माण किया है। यह अरिष्ट आमाशय और अन्त्रमें स्थित सेन्द्रियविषका रूपान्तर करा देता है। कीटाणुओंको नष्ट करता है; तथा पचन-क्रियाको बढ़ा देता है। इस हेतुसे रस और रक्तकी शुद्धि हो जाती है। परिणाममें विद्रधिकी उत्पत्तिमें रुकावट आजाती है; एवं भगन्दर, गण्डमालाका बल भी घट जाता है। पचन क्रिया बढ़ जानेके हेतुसे दूषित आम, मेद नहीं बनता और वातप्रकोप नहीं होता। जिससे कीटाणुजन्य उरुस्तंभ, प्रमेह, हनुस्तंभ और अत्यष्ठीला रोग दूर हो जाते हैं।

उदरकृमि पर भी यह विडङ्गारिष्ट लाभदायक है। यह अरिष्ट छोटे कृमियोंको नष्ट कर देता है। एवं बड़े कृमियोंकी उत्पत्तिको रोकनेमें हितावह है। बड़े कृमियोंको कृमिनाशक औषध और विरेचन द्वारा निकाल, फिर इस विडङ्गारिष्टका सेवन कराया जाय, तो अन्त्र और रक्तमें रहे हुए कृमिजन्य विष और अण्डे नष्ट हो जाते हैं। अन्त्र निर्दोष होकर सत्वर सबल बन जाती है। फिर कृमि रोगकी अथवा कृमि जन्य पाण्डु, उदरशूल, अतिसार, वमन, हृदरोग, शिर दर्द आदि की पुनः उत्पत्ति नहीं हो सकती।

६. हरड़ पाक

विधिः—हरड़, सनाय, छोटी हरड़, मिश्री, मजीठ और घी प्रत्येक १०-१० तोले तथा कालीमुनक्का २० तोले लेवें। मुनक्काको धोकर बीज निकाल देवें। शेष औषधियोंको कूटकर कपड़ छान चूर्ण करें। मुनक्काको पीसकर कल्क करें। फिर शेष चूर्ण और घी मिलाकर मर्दन करें। एक जीव होने पर अमृतबानमें भर लेवें। (आ० नि० मा०)

मात्राः—२-२ माशे दिनमें दो बार सेवन करें।

उपयोगः—इस पाकके सेवनसे व्रण-विद्रधिका विष, विस्फोटककी उष्णता, उस हेतुसे उत्पन्न शिरःशूल और त्वचापरकी पिडिकाएं आदि दूर होते हैं। रक्तका प्रसादन होता है; उदरशुद्धि होती है, तथा मस्तिष्क शान्त बनता है।

७. अन्तर्विद्रधिहर योग

(१) पथ्या गुग्गुलु ४-४ रत्ती एरण्ड मूलके २-२ तोले क्वाथके साथ दिनमें ३ बार देते रहनेसे अन्तर्विद्रधि २-३ दिनमें ही ऊपर आजाती है।

वक्तव्यः—(१) भोजनमें हींग, चना, शक्कर और रोगीके स्वभावसे प्रतिकूल वस्तु बन्दकर देना चाहिये।

(अ) ऊपर चमड़ीमें खिंचाव हो, ऐसा कोई लेप न लगावें।

(आ) जलौका लगाकर दूषित रक्त निकालनेका प्रयत्न न करें॥

(इ) गूलर या सिरसके पानोंका कल्क गरम किया हुआ बार बार बांधते रहें।

(६) विद्रधिमें असह्य वेदना होनेपर कालीद्राक्ष (बीज रहित) को पीस हल्दी या कुकु भुरभुराकर पट्टी लगानेपर सरलतासे फूटकर पूय बाहर निकलने लगता है। फिर इसी लेपसे घाव शुद्ध होकर रोपण होने लगता है। यदि घाव शुद्ध होजाने पर भी न भरता हो तो मलहम का प्रयोग न करें।

(७) सुहिंजनेकी छालके क्वाथकी ७ भावना दी हुई कज्जली २-२ रत्ती दिनमें २ बार प्रातः सायं शहदके साथ देकर फिर सुहिंजनेकी छालका स्वरस २-२ तोले पिलाते रहनेसे देहके भीतर किसी भी स्थानमें उत्पन्न विद्रधि यदि आमावस्थामें है, तो उसका निवारण हो जाता है। इस तरह उपान्त्रप्रदाह, यकृत्प्रदाह, प्लीहाप्रदाह, अन्त्रप्रदाह, फुफ्फुसप्रदाह आदि अन्त्रविकारों पर भी यह प्रयोग हितावह सिद्ध हुआ है।

ताजी छाल न मिलनेपर सुहिंजनेकी सूखी छालका कषाय बनाकर उपयोग में लिया जाता है। सुहिंजनेकी छालके क्वाथमें गहूंके आटेकी पुल्टिस बनाकर विद्रधि स्थान पर बांधते रहनेसे बाहरसे भी विषका शोषण होने लगता है। हो सके, तो सुहिंजने की छाल मिलाकर उबाला हुआ जल पीनेको देना चाहिये। एवं रोगीको केवल दूधपर रखना चाहिये। दूधको भी सुहिंजने की छालका चूर्ण और ४ गुना जल मिला क्षीरपाक विधिसे पका (दुग्धावशेष क्वाथ कर) कर पिलाते रहना विशेष हितावह है। आवश्यकतापर अधिक ज्वर और घबराहट रहनेपर ब्राह्मीवटी या कस्तूरीभैरव रस भी देते रहना चाहिये।

सुहिंजनेके समान वरनाके क्वाथकी ७ भावना देकर कज्जलीका उपयोग करने से भी अन्तर्विद्रधिका प्रशमन हो जाता है।

८. दशांग उपनाह (पुल्टिस)

विधि —दशांग लेपका चूर्ण १ तोला, घी १ तोला, शहद १ तोला, सूखा चूना बुझाया हुआ १ तोला, कूटी हुई अलसी ४ तोले लें। पहले दशांगलेप, घी और शहद मिला लें। फिर अलसी मिला जल डाल कर रबड़ी जैसा पतला बनाकर मंदाग्निपर पकावें। उसे पकनेके समय चिम्मचसे चलाते रहे। फिर एक तस्तेपर साफ कपड़ा बिछा, उसपर चिम्मचसे फैला दें। सहन होसके उतना गरम रहनेपर व्रणशोथपर घी वाला हाथ लगाकर बांधदेवें।

उपयोग —यह पुल्टिस पकने वाले फोड़ेको जल्दी पकाकर फोड़ देता है। यदि शोथमें पाकका आरम्भ न हुआ हो, तो उसे बैठा देता है। जिस व्रणशोथमें सुई चुभानेके समान पीड़ा होती रहती है, वह पक जाता है। ऐसे पकनेवाले फोड़ेपर पुल्टिस २-२ घंटेपर बदलनी चाहिये। जिसमें दर्द न हो उसपर ३-३ घन्टे पर पुल्टिस बदले तो चल सकेगा।

व्रण फूट जानेपर भी जब तक पूय निकलता रहे, तबतक (२-३ दिन) इस पुल्टिसको बांधनेसे व्रण जल्दी शुद्ध हो जाता है।

९. क्षारादि उपनाह

विधिः—सांभरनमक ३ माशे, लोटिया सज्जी ३ माशे, हल्दी १ माशा, घी ६ माशे और कूटी हुई अलसी या बाजरीका आटा २ तोला लें। सबको मिला जलमें पतला करें। फिर मंदाग्निपर पका कपड़ेपर फैलाकर पुल्टिस बना लेवें। फिर सहन हो उतना गरम बांध देनेसे पके फोड़े आध या एक घण्टेमें फूट जाते हैं।

सूचनाः—इस पुल्टिसका उपयोग कच्चे फोड़ेपर न करें।

१०. आगन्तुक क्षतान्तक लेप

विधिः—एरण्ड तैलके नीचेकी गाद, गुड़, नमक, हल्दी और शिरके बाल, सबको मिला लोहेकी कुड़छीमें डालकर गरम करें। फिर कपड़ेपर डाल सहन हो उतना गरम चिपका देवें। इस तरह दिनमें एक या दो बार लेप लगाते रहनेसे ३–४ दिनमें चोट वाले भागमें जिस स्थानपर शोथ आया है, उस स्थानके भीतर रुक्ष आजाती है और बाहरकी त्वचा सफेद मृत होजाती है। फिर शनैः शनैः वह त्वचा निकल जाती है; और विकार बिल्कुल दूर हो जाता है। (आ० नि० मा०)

सूचनाः—मृत त्वचा जब तक स्वयमेव दूर न हो तबतक काटकर न निकालें। अन्यथा भीतरकी कोमल लाल त्वचा पक जावेगी। यदि अन्तस्त्वचामें पूयोत्पत्ति हुई हो, या जल भर गया हो, तो कैंचीसे थोड़ा कतर या छिद्रकर पूय या जलको निकाल दें। त्वचाको न निकाल दें।

११. निर्गुण्डी तैल

बनावटः—सम्हालूकी जड़ (शाखा) और पत्तोंको कूट यन्त्र विधानसे निकाला हुआ स्वरस २ सेर और तिल तैल २ सेर मिला यथा विधि तैल सिद्ध करें।

(च० सं०)

वक्तव्यः—मूल ग्रन्थमें 'समंतैलम' वचन होनेसे टीकाकार चक्रपाणिने समान स्वरस लेनेका विधान किया है, किन्तु और आचार्योंने निर्गुण्डी स्वरस ४ गुना लेनेको लिखा है।

उपयोगः—इस तैलके बाह्य और आभ्यन्तर प्रयोगसे नाड़ी-व्रणका शोधन होता है। कुष्ठ, पामा, अपची, विविध प्रकारके स्फोट और सब प्रकारके व्रण दूर होते हैं, तथा वातविकारका भी निवारण हो जाता है। इस तैलका उपयोग पान, मर्दन, वर्ति, बस्ति और नस्य आदि विविध रूपसे होता है। यह तैल गण्डमाला, कानका नासूर, कफ-प्रकोपज व्याधियों और विविध वात रोगोंपर अच्छा लाभ पहुंचाता है।

कानमें पूय होने पर जल्दी योग्य सम्भाल न ली जाय तो रोग दृढ़ हो जाता है। फिर वर्षोंतक नहीं जाता। ऐसे पुराने कर्ण रोगपर इस तैलका प्रयोग करनेसे १-२ मासमें नाड़ीव्रण दूर हो जाता है।

वातरोग पर इसकी मालिश करायी जाती है। कम्प वात, सांधोंकी पीड़ा, पतन शूल आदिमें इस तैलको निवाया कर मालिश करने तथा १-१ माशा दिनमें २ बार पिलाते रहनेसे थोड़े ही दिनोंमें वातविकार दूर हो जाता है।

फुफ्फुसशोथ, फुफ्फुसावरणशोथ, उदर्याकलाका शोथ, तीव्र आमवातमें सन्धिशोथ, सुजाकजनित वृषणशोथ, इन सब स्थानोंके शोथमें निर्गुण्डीके क्वाथका पान और इस तैलको निवाया कर बाह्य उपयोगमें लेते रहनेसे सब प्रकारके शोथ दूर होते हैं।

अनुभव —यह तैल वातके अनेक रोगोंको दूर करता है। वंध्या स्त्रीको गर्भ धारण कराता है, तथा वातप्रकोपके कारण जिन इन्द्रियोंकी शक्ति नष्ट हुई हो उनका व्यापार पुनः सञ्चालन कराता है। यह वैद्यके दक्षिण हाथमें रहने योग्य सफल योग है। जिस तरह डाक्टरोंमें टिंचर आयोडिनसे विविध कार्य सम्पादन होते हैं। उस तरह इस तैलका उपयोग अति व्यापक रूपसे अनेक रोगों पर होता है। यह तैल स्थावर-जंगम विष, कीट विष (जो विशेष उग्र न हो), दूषी विष, कौटिल्य विष और बहुत विषोंका शमन कर मनुष्यमें नवजीवनका सञ्चार करता है। यह सहस्रानुभूत सिद्ध और दिव्य प्रयोग है। (श्री प० राधाकृष्णजी द्विवेदी)।

१२. व्रणशोधन तैल

विधि —कड़वे निम्बके पान साफ किये हुए १२८ तोले, हल्दी और निसोत की छाल ६४-६४ तोले ले। फिर ७२ सेर जलमें मिलाकर चतुर्थांश क्वाथ करें। उसे छान कर पुनः चूल्हे पर चढ़ावें, उसमें तिलका कल्क ६४ तोले और तिल तैल ३४॥ सेर मिला कर मन्दाग्निसे तैल सिद्ध करें।

उपयोग —इस तैलके उपयोगसे व्रणोंका जल्दी शोधन होता है। सामान्य व्रण, सड़े हुए दुष्ट व्रण, नाड़ीव्रण, भयंकर दर्द, शोथ और ज्वर सह व्रण प्रकोप, इन सबमें शोधन कर पूयको बाहर खींच लेनेके लिये इस तैलका फोहा रखा जाता है। पहले नीमके पान और त्रिफलाके उबाले हुए जलसे व्रणको धो दें। फिर इस तैलका फोहा रख, शहदकी पट्टी रख कर व्रण पर पट्टी बांधे। इस तरह पट्टी बांधते रहनेसे अति गहरे व्रण भी थोड़े ही दिनोंमें शुद्ध होकर भर जाते हैं।

नाड़ी व्रणमें इस बाह्य उपचारके साथ वंग भस्म और अभ्रभस्म मिलाकर पुनर्नवादि क्वाथ या मंजिष्ठादि क्वाथके साथ देते रहनेसे विषनिवृत्ति, रक्तप्रसादन, शोधन और रोपण कार्य त्वरित होते हैं।

नूतन दुष्ट व्रण अधिक गहरा हो गया हो, व्रणके हेतुसे ज्वर भी रहता है। ज्वर १००° डिग्रीसे कम न होता हो, ऐसी अवस्थामें यह तैल १-२ माशे रात्रिके आधे घण्टे पहले पिलाते रहने और महायोगराज गूगल १-१ रत्ती तथा चिरायता, चन्दन, सोंठ, अमृता सत्व, आंवला और नागरमोथा, सबका कपड़छान चूर्ण ६-६ रत्ती मिलाकर शहदके साथ दिनमें २ समय देते रहनेसे थोड़े ही दिनोंमें व्याधि नष्ट हो जाती है।

छोटे बालकोंकी माताके स्तन कभी कभी पक जाते हैं। फिर उसमेंसे पूयस्राव होता रहता है। तीव्रशूल चलता है; कान पर शोथ आजाता है और कुछ दिन व्यतीत होने पर गहरा घाव हो जाता है उस पर इस शोधन तैलका फोहा बार बार लगाते रहने तथा कुटकी, मंजीठ, सारिवा, नागरमोथा, पाठा और पटोलपत्रका चूर्ण २-२ माशे दिनमें ३ बार देते रहनेसे स्तनोंका व्रण थोड़े ही दिनोंमें भरजाता है।

मधुमेहके विषसे उत्पन्न प्रमेहपीटिका, अलजी और प्रमेह विरहित अलजी होने पर भयंकर वेदना और जलन होती है। इसका वर्ण काला-लाल होता है और इसके चारों ओर छोटी छोटी फुन्सियां होजाती हैं। इसका पाक होने पर ज्वर तीव्र रूपमें रहने लगता है। इसके फूट जाने पर गहरा घाव हो जाता है। उसमें इस शोधन तैलका पिचु रखने और दिनमें दो बार स्वच्छ करते रहनेसे घाव थोड़े ही दिनोंमें भर जाता है। इस बाह्य उपचारके साथ उदरसेवनार्थ औषध भी देते रहनेसे विशेष लाभ पहुंचता है। सुवर्णमाक्षिक भस्म, प्रवाल पिष्टी और गिलोयसत्वको शहदके साथ दिनमें दो बार देवें। सुबहको काली सारिवा और परवलके पान १-१ माशेका क्वाथ करके माक्षिक मिश्रणके साथ देते रहनेसे विष शमन होकर जल्दी लाभ पहुंचता है।

एक वयोवृद्ध मधुमेहीको कमरके ४ थे मणके पास व्रण हुआ था वह ४ इन्च लम्बा और ४ इञ्च गहरा था। पेशाबमें ५ से ७ प्रति सहस्र शर्करा जाती थी। पहले डाक्टरी उपचार करने पर अच्छा न हुआ। तब उसका आयुर्वैदिक उपचार श्री पं० गुणेशास्त्रीसे कराया गया, उसे शर्करा कम करनेके लिये उदरसेवनार्थ औषध देनेके साथ इस व्रणशोधन तैलसे व्रणचिकित्सा प्रारम्भ की। परिणाममें ४८ दिनमें व्रण भर गया और पेशाबमें शक्कर जाना भी शमन हो गया।

एक युवक रोगीको मूत्रेन्द्रियके अग्रभागमें निरुद्ध प्रकाश (Phimosis) रोग हुआ था। उस रोगमें शिश्नमणिके ऊपरकी त्वचा तंग होजाती है, जिससे पेशाब करनेमें रुकावट होती है। उसकी शस्त्र चिकित्सा कराकर डाक्टरी औषधिसे व्रण धावन शोधन २४ दिन करने पर भी लाभ नहीं हुआ, तब आयुर्वेदीय पद्धतिसे चिकित्सा प्रारम्भ की। जिस पर इस व्रणशोधन तैलकी पट्टी लगाई जाती थी। उससे १३ दिनके भीतर घाव पूर्ण भर गया था।

एक युवा मनुष्यको पत्थरकी खानमें सुरंगसे उड़े हुए पत्थरके लगनेसे दाहिने पैर पर गहरी चोट लगी थी। उसे २० मील दूरसे औषधालयमें लाये थे। इस व्रण-शोधन तैलकी पट्टीसे ११ दिनमें लाभ हो गया था।

एक अंधी वयोवृद्धा स्त्रीके पैर परसे चूनेकी गाड़ी चली जानेसे बांये पैरका चूरा होगया था। उस पैरको घुटनेके पाससे डाक्टरोंने काट दिया था। इस शस्त्र चिकित्साके तीसरे दिन पट्टी खोलने पर घाव पुष्ट होजानेका प्रतीत हुआ। जिससे टांके नहीं लग सकते थे। [illegible] और कृश होनेसे और अधिक पैर काटना अशक्य था।

इस हेतुसे उसका उपचार आयुर्वेदीय पद्धतिसे इस शोधन तैलद्वारा प्रारम्भ किया और घाव अति सड़ा हुआ होनेपर भी इसी तैलसे २॥ मासमें भर गया।

१३. अरिमेदादि तैल

विधि—अरिमेद (दुर्गन्धवाले खेर) की छाल ४०० तोलेको २०४८ तोले जलमें मिलाकर चतुर्थांश क्वाथ करें। फिर छानकर उसमें तिल तैल १२८ तोले तथा अरिमेदकी छाल, लौंग, गेरू, काला अगर, पद्माख, मजीठ, लोध, मुलहठी, लाख, वड़की जटा, नागरमोथा, दालचीनी, जायफल, कपूर, शीतलमिर्च, कत्था, पतंग, धायके फूल, छोटी इलायचीके दाने, नागकेशर, कायफल, इन २१ औषधियोंके १-१ तोलेका कल्क मिलाकर मन्दाग्निपर तैल सिद्ध करें। (शा० सं०)

हम कपूर पहले नहीं मिलाते। तैल छानने पर दो तोले मिलाते हैं।

उपयोग—यह तैल मूल ग्रन्थकारने मुख रोगपर लिखा है। मुख रोगपर जैसा यह लाभदायक है, वैसा या उससे भी अधिक व्रणोंके रोपणार्थ उपयोगी है।

व्रण शुद्ध होने पर चाहे जितना गहरा हो, इस तैलकी पट्टीसे शीघ्र भर जाता है। निर्बल रक्तवाले, वृद्ध मनुष्योंके व्रण, जो जल्दी नहीं भरते, वे भी इसके प्रयोगसे सत्वर भर जाते हैं।

कितनेक रोगियोंको उदर, जंघा आदि प्रदेशमें गहरे विद्रधि हो जाते हैं। जिसकी शस्त्र चिकित्सा क्लोरोफार्म सुंघाकर की जाती है। ऐसे घावोंपर पहले कुछ दिनों तक व्रणशोधन तैलका और फिर इस अरिमेदादि तैलका उपयोग अनेक बार श्री० वैद्यराज गुणेशास्त्रीने किया है और अनुभवमें पूर्ण सफलता मिली है।

एक १६ वर्षका नवयुवक साइकलसे गिरकर बेहोश होगया था। उसे मोटरवालोंने आयुर्वेदीय रुग्णालयमें पहुचाया। उसके जखम पर टांके उसकी अर्ध बेहोशावस्थामें लगा लिये। उसके मुख और हाथ पर बुरी तरहसे चोट आयी थी। मुखमण्डल पर ७-८ टांके लगाये थे। उसके लिये प्रारम्भसे ही इस रोपण तैलका उपयोग किया था। २५ दिनमें रोगीके सब घाव अच्छे हो गये।

इस तरह यह अरिमेदादि तैल व्रणोंका रोपण करनेमें उत्तम कार्य करता है। इसी हेतुसे अहमदनगरके आयुर्वेद महाविद्यालयमें इसे "रोपण तैल' संज्ञा दी है।

१४ लाल मलहम

विधि—गन्धाविरोजा ४० तोले और हिंगुल १ तोला लें। पहले गन्धाविरोजा-को कड़ाहीमें डाल मन्दाग्नि देकर पिघलावें। बीच बीचमें १-२ बूंद चाकूसे निकाल जल पर डालें। फिर अंगुलियोंसे दबा कर देखें, कि मलहमका पाक हो गया है या नहीं? पाक हो जानेपर कड़ाहीको उतारकर तुरन्त कपड़ेमें छानलें। उसमें हिंगुल थोड़ा थोड़ा करके डाल दें। और मलहम शीतल न हों, तब तक चलाते रहें। यदि चलाया नहीं जायगा, तो हिंगुल भारी होनेसे तलेमें बैठजायगा। (श्री प० यादवजी त्रिकमजी आचार्य,)

उपयोगः—यह मलहम शोधन (व्रणोंको शुद्ध करने वाला), रोपण (व्रणोंको भरने वाला), वेदनाहर और प्लीहा वृद्धिको दूर करने वाला है। पार्श्वशूल (उरस्तोय-प्लुरिस) या अन्य स्थानोंकी वेदनापर इसके लेपसे लाभ हो जाता है।

सूचनाः—इस मलहमको जिस स्थानपर लगाना हो उस स्थानके बराबर मोटे कपड़ेकी पट्टी काटें। फिर एक छुरीको गरमकर, उससे मलहम निकालकर पट्टी पर फैलावें। उस पट्टीको आवश्यक स्थानपर लगावें; किन्तु लगानेके पहले उस स्थानके बालोंको उस्तरेसे निकाल डालें। अन्यथा पट्टी निकालनेके समय बाल खिचेंगे। यदि कुछ बाल रह गये हों और खिचते हों, तो तार्पिन तेलके कुछ बूंद डालकर पट्टीको खोल लेवें। पट्टी बांधनेपर उसपर कागज चिपका देवें। जिससे गन्धाबिरोजा पट्टीमें से बाहर न निकले।

१५, हरा मलहम

विधिः—गन्धा बिरोजा ४० तोले, जंगाल, साबुन और पत्थरके कोयले २—२ तोले, पापड़खार ३ तोले लें। पहले गन्धाबिरोजाको मंदाग्निपर गरम करें। मलहम के योग्य बननेपर कपड़ेसे छानकर शेष द्रव्योंका कपड़छान चूर्ण मिलालें। मलहम शीतल होनेतक हिलाते रहें। (श्री पं० यादवजी त्रिकमजी आचार्य)

उपयोगः—यह मलहम व्रणोंका शोधन करनेवाला, भरनेवाला तथा फोड़ोंको पकाकर फोड़ने वाला (विदारण) है। यदि व्रणशोथ पक जानेपर भी न फूटता हो, तो इसकी पट्टी लगानेसे जल्दी फूट जाता है। इसके अतिरिक्त ओरियंटल सोर, जिसको अकबरी फोड़ा भी कहते हैं और १ वर्षकी अवधिके बिना नहीं मिटता, उसपर ३ महीने तक इस मलहमकी पट्टी बांधनेसे अवश्य आराम होता देखा गया है।

१६, काला मलहम

बनावटः—तिल तैल १ सेरको एक कड़ाहीमें डालकर चूल्हेपर चढावें। तैल गरम होने पर आध सेर सिन्दूर डाल लोहेकी कलछीसे चलाते रहें। छींटे न उड़े यह सम्हालें। ऐसेही उफाण आकर तेल चूल्हेमें न गिर जाय यह भी देखते रहें। इस हेतुसे कड़ाही ४-६ गुनी बड़ी रखनी चाहिये और पंखा भी तैयार रखना चाहिये। सिंदूरका पाक मंदाग्नि पर करें। सिंदूरका रंग काला होनेपर कड़ाहीको नीचे उतार मलहमके २-४ बूंद जलमें डालकर देखें, कि गोली होती है या नहीं? यदि मलहम फैल जाता है तो मलहम कच्चा माना जावेगा। और मलहम जल में डूब जाता है तो मलहम कड़क माना जावेगा। कड़क पाक हो जाने पर मलहम लाभदायक नहीं रहता। योग्य पाक होने पर ही मलहम लाभ पहुंचाता है। इस मलहमको पुनः मंदाग्निपर चढ़ा, प्रवाही कर उसमें सूखा गंधाबिरोजा ४ सेर थोड़ा थोड़ा करके डालें, अच्छी तरह चलाते रहें। सब बेरजा अच्छी तरह मिल जानेपर कड़ाहीको नीचे उतार, उष्णता कुछ कम होनेपर १० तोले कपूर मिला लेवें।

(आ० नि० मा०)

उपयोग —इस मलहमकी पट्टी लगानेसे सब प्रकारके व्रण विद्रधि दूर हो जाते हैं। यह मलहम उत्तम व्रणशोधन और व्रण-रोपण है। पुराने और नये सब प्रकारके व्रणोंपर लाभदायक है।

स्त्रियोंके स्तन पकने हों, तो उस पर इस मलहमकी पट्टी लगानेसे पूय निकल जायगा और घाव भर जावेगा। यदि स्तनमें दूध बार बार आता रहता हो, तो रबरके दुग्धकर्षक यन्त्र (Chest pump) द्वारा दूधको निकालते रहना चाहिये। व्रण और नाडीव्रणके मुखपर शोथ हो उस समय किसी भी प्रकारका मलहम नहीं लगाना चाहिये। धतूराके पानोंका कल्क बांध कर पट्टी बांधें। इससे दो तीन रोजमें शोथ दूर हो जायगा। फिर नीम तैलकी पिचकारी लगाकर ऊपर इस मलहमकी पट्टी बांधें। कदाचित् नाडीव्रणमें ऊपर विकार रह जाता है और बीचमेंसे घाव भरने लगता है। ऐसे समयपर हिंगुलको जलमें पीसकर दर्द हो वहांसे नाडीव्रणके मुख तक लेप करते रहें और फिर उस हिंगुलपर इस मलहमकी पट्टी लगाते रहें, तो नाडीव्रण भर जाता है। नाडीव्रणके रोगीको त्रिफला गूगल खानेके लिये भी देते रहना चाहिये।

१७. श्वेत मलहम

विधि —कपूर, सफेद राल, मुर्दासंग, मोम १-१ तोला और घी ५ तोले लें। घीको गरम करें। उसमें मोम डाल दें। फिर कपूर आदि चूर्ण डालकर लकडीसे मिला दें और तुरन्त थालीमें डाल दें। फिर १०० बार जलसे धो लेवें। (र० सा०)

उपयोग —यह मलहम अति सड़े हुए घावोंका शोधन करके रोपण कर देता है। जहरबाद जैसे विस्तृत फोड़े इस मलहमसे अच्छे हो गये हैं।

यदि घाव हड्डी तक पहुंच गया हो, तो उस हड्डीके ऊपर मनुष्यकी जली हुई हड्डीका कपड़छान चूर्ण भुरभुरा कर, फिर मलहमकी पट्टी लगा देनेसे घाव भर जाता है। यह मलहम मनुष्योंके अतिरिक्त गौ, घोड़ा, ऊंट आदि पशुओंके भयंकर बड़े हुए घावोंको भी भर देता है। जिस पशुके घावपर मलहम लगाना हो, उसके लिये उसी जातिके पशुकी जली हुई हड्डीका चूर्ण भुरभुराना चाहिये।

१८. जन्तुघ्न मलहम

विधि —सत्यानाशी पञ्चाङ्गका स्वरस ४ सेर, निम्बपत्रका रस ४ सेर, जल मिला हुआ, शमीपत्र क्वाथ ४ सेर तीनोंका कल्क २० तोले और करञ्जका तैल ४ सेर मिलाकर मन्दाग्नि पर तैल सिद्ध करें। फिर मोम २० तोले मिलाकर छान लेवें। पश्चात् ५ तोले कपूर मिला लेवें।

उपयोग —इस मलहमका उपयोग जहरी फोड़े और जन्तुओंके प्रकोपसे अधिक फैलने वाले फोड़े, जिनका विष जहां जहां लगे वहां वहां फोड़े हो जाते हैं ऐसे फोड़े तथा नाडीव्रण पर विशेष होता है। यह कीटाणुओंका नाश करता है तथा व्रणको शुद्ध कर जल्दी भर देता है। यह मलहम अति निर्भय और उत्तम है।

१९. चतारि मलहम

विधिः—सफेद कत्था २ तोले, कपूर १ तोला और सिंदूर ६ माशे लेवें। तीनोंको पीसकर धोये हुए घी अथवा वेसलीन ५ तोलेमें मिलाकर मलहम बना लेवें।

उपयोगः—यह मलहम सब प्रकारके फूटे हुए फोड़े, अग्निसे जले हुए घाव, खुजलीके पीले फोड़े और उपदंशके घाव आदिको मिटाता है। जिनमेंसे रुधिर और पूयस्राव होता रहता हो, ऐसे व्रणोंका जल्दी शोधन कर भर देता है। जिन फालोंमें जलन होती है, वह जलन इस मलहमके लगाने पर तत्काल शमन हो जाती है। यदि अर्शके मस्सोंमें वेदना होरही हो, तो इस मलहमके लगानेसे तुरन्त शान्ति आजाती है। यह मलहम सामान्य द्रव्योंसे बना है, तथापि बहुत लाभदायक सिद्ध हुआ है।

२०. निम्बादि मलहम

प्रथम विधिः—नीमकी निबौलीके १ सेर तैलको लोहेकी कड़ाहीमें डालकर गरम करें। गरम होनेपर २० तोले राल और ५ तोले गन्धाबिरोजा डालें। मिल जाने पर कड़ाहीको उतार, तत्काल जलकी भरी हुई बाल्टीमें डाल देवें। कड़ाहीमें लगा रहे उसे भी खुरच कर उसी जलमें डालदें। २-५ मिनट बाद जल पर तैरती हुई मलहमको निकाल मजबूत कपड़ेमें रख कर दबावें। जिससे सारभाग बाहर निकल आवेगा और किट्ट कपड़ेमें रह जायगा। इस मलहमको १-१ सेर जल डालकर ५०-१०० बार धोवें। फिर मिट्टीके पात्रमें भर देवें। यह मलहम सफेद, चिकना और शीतल होता है। (र० सा०)

उपयोगः—अग्निसे जले हुए भागपर चाहे जितनी जलन होती हो, चर्म चाहे जितना अधिक जलगया हो, मलहम लगाते ही वेदना शमन होजाती है, और थोड़ेही दिनोंमें रोगी स्वस्थ होजाता है। यह मलहम घावोंपर भी लगानेमें उपयोगी है। किसी स्थानपर दाह होता हो, तो यह मलहम लगानेके साथ तत्काल शान्ति होजाती है।

द्वितीयविधिः—नीम, भांगरा, बबूल, और मेंहदी, इन सबकी ताजी पत्तियोंका स्वरस ३०-३० तोले लें। त्रिफला १५ तोलेको १६ गुने जलमें उबालकर अष्टमांश क्वाथ करें। फिर स्वरस और क्वाथके साथ सरसोंका तैल १ सेर और जल २ सेर मिला कर मंदाग्नि पर पकावें। तैल सिद्ध होने पर कड़ाहीको उतारकर तुरन्त छान लेवें और उसमें देशी मोम १५ तोले मिला लेवें। यह मलहम लगभग ७० तोले तैयार होता है।

(राजवैद्य अमरदत्तजी मिश्र)

उपयोगः—पहले व्रणको नीमके उबाले हुए जलसे धोकर साफ कर लें। फिर रुई या साफ कपड़ेसे पोंछ कर अच्छी तरह शुष्क करें। पश्चात् स्वच्छ श्वेत कपड़ेकी चकत्ती पर मलहम लगाकर व्रण पर चिपका दे और ऊपर थोड़ी रुई रख कर पट्टी बांध दें। सामान्यतः दिनमें दो समय पट्टी बांधे। पूयस्राव अधिक होता हो, तो ३-४ या ५ बार चकती और पट्टी बदल देवें। घावको बार बार धोनेकी आवश्यकता नहीं है। दिनमें एक या दो बार धोवें।

व्रण कैसा भी सड़ा हुआ हो, इस मलहमसे साफ होकर भर जाता है। इस मलहममें विशेषता यह है, कि शोधन और रोपण, दोनों क्रिया सम्यक् प्रकारसे सत्वर करदेता है।

२१ सुदर्शन मलहम

विधि —सिंदूर, सेलखड़ी, राल, तीनों १ १ तोला, सफेद कत्था और रसकपूर २ २ तोले और घी २८ तोले लेवें। सिंदूरादि ५ औषधियोंको खरल कर घी मिला लेवें। फिर उसमें जल मिला मिला कर २१ बार धो लेवें। फिर सब जल निकाल, काँच या चीनी मिट्टीके बर्तनमें भर लेवें। (वैद्य अनन्तनारायण टिकेकर)

उपयोग —सुदर्शन मलहम सब प्रकारके विद्रधियोंको शुद्ध करके भर देता है। डाक्टरोंने असाध्य कह कर छोड़ दिये हुये अति सड़े गले घाववाले रोगियोंको भी इस मलहमके लगाते रहनेसे लाभ हो गया है। विद्युत्, घृत, तैल, तेजाब या चासनीके गिरनेसे शरीर जल जाना, पशुओंके दांत, नख, सींगसे हुये गहरे घाव, यन्त्र, दूषित शस्त्र लगनेसे हुये गहरे घाव और सम्हाल न होनेसे घाव दूषित हो जाना आदि सब प्रकारके पूयप्रधान विद्रधि और बिना पूयवाले घावों पर यह मलहम आश्चर्यकारक लाभ पहुंचाता है।

२२ पूतिहर मलहम

विधि —कपूर १ तोला, पानमें खानेके लिये भिगोया हुआ साफ चूना ३ माशे और ताजा मक्खन २॥ तोले लें। तीनोंको मिलाकर एक जीव करें।

उपयोग —पूतिहर मलहम दुर्गन्धमय, सड़े हुये और कीड़ोंसे भरे हुए व्रण विद्रधिपर लगाया जाता है। इस मलहमके प्रभावसे ५–१० मिनटमें ही कीड़े बाहर निकलने और मरने लग जाते हैं। ४–६ दिनतक लगाते रहनेपर गहरे क्षतोंका भी शोधन हो जाता है। मनुष्योंके समान पशुओंके क्षतोंपर भी यह प्रयुक्त होता है।

२३ अग्निदग्धहर मलहम

विधि:—राल २॥ तोले, कच्ची घाणीका अलसीका तेल अथवा तिल्लीका तेल १० तोले, नीलाथोथा ४ रत्ती, सिंदूर ६ माशे लें। सबको कड़ाहीमें डालकर अग्नि पर पिघलावें। पिघल जाने पर कासीकी थालीमें चूनेका पानी भर कर तत्काल एक कपड़ेके ऊपर डाल देवें। गरम गरम यथा सम्भव शीघ्रातिशीघ्र ही कपड़ेसे उस थालीमें डालें। फिर हथेलीसे उसे मथन करके उस पानीको निकाल देवें। और दूसरा चूनेका पानी फिर डालें। इस भांति १०८ बार बारम्बार चूनेका पानी डालता जाय और धोता जाय। अन्तमें ४० बूंद यूकेलिप्टस ऑइल मलहममें मिला, खूब मथन कर, शीशीमें भर लें।

उपयोग —अग्निदग्धपर तत्काल ही लेप कर दिया जाय, तो हिमके समान शीतल और शान्तियुक्त कर देता है। यदि फफोले हो गये हों, तो उबाली हुई कैंचीसे

त्वचाको काट, पानी निकाल कर इस मलहमका लेप करें। इसका प्रयोग अग्निदग्धकी सब अवस्थामें किया जा सकता है और सामान्यतया विसर्प, दाहयुक्त व्रणशोथ और अचूकी (एक्जिमा) पर भी इसका उपयोग विशेष हितकारी देखा गया है।

(राजवैद्य रामचन्द्रजी वैद्य)

२४ उदुम्बरपत्रसार

विधिः—ताजी अच्छी पुष्ट साफ की हुई गूलरकी पत्ती १० सेर लेवें। उसे जलसे धोकर ऊखलमूसलसे कूट, १ मन जलमें मिला कलईदार बरतनमें डालकर मंदाग्नि पर पकावें। चतुर्थांश जल शेष रहने पर उसे छान लेवें। फिर ५ तोले सोहागेका फूला मिलाकर मंदाग्नि पर पकावें। और गूलरके डण्डेसे चलाते रहें। जब डण्डेपर रस चिपकने लगे, तब कड़ाहीको उतार सारको कलईदार थालमें डाल दें। ऊपर मलमलका टुकड़ा बांधकर धूपमें सुखालें। लेह जैसा होनेपर अमृत बानमें भर लें।

(स्व० महा० पं० गणनाथ सेन सरस्वती)

उपयोगः—यह सार उत्तम शोथविम्लापन (कच्चे व्रण शोथको बैठानेवाला) व्रणशोधन, व्रणरोपण और रक्तस्रावरोधक है। व्रणशोथकी प्रारम्भावस्थामें इस सारको चौगुने जलमें मिला, उसमें कपड़ा भिगोकर बांधने और थोड़े-थोड़े समयपर उस जलको डालकर पट्टीको तर रखनेसे वेदना दूर हो जाती है और शोथ शमन हो जाता है। दुष्ट क्षत और न भरने वाले व्रणपर भी यह लाभ पहुँचाता है। पूयवाले व्रणोंको धोनेके लिये उबलते हुए जलमें सार मिलाकर उपयोग किया जाता है। स्त्रियोंके स्तन पर शोथ आ जाय, तो इसकी पट्टी बांधनेसे शोथ फैल जाता है। इस तरह श्लीपद और वृषणवृद्धि पर भी इसका लेप किया जाता है। मूढमार, अवयव मुड़ जाने और रक्तवाहिनी कटकर रक्तस्राव होने पर इसके प्रयोगसे सत्वर लाभ हो जाता है।

मुखपाकमें कुल्ले करानेके लिये तथा सुजाक, स्त्रियोंके योनिमार्गके क्षत और प्रदरमें उत्तर बस्ति देनेके लिये यह सार उपयोगी है। ६४ गुने जलमें मिलाकर व्यवहृत होता है। इस तरह नेत्राभिष्यन्दमें इस प्रवाहीमेंसे बूंद नेत्रमें डालने और गाढ़े द्रवका नेत्रके चारों ओर लेप करनेसे सत्वर लाभ पहुँचता है। इस तरह यह नाडीव्रण, अग्निदग्ध व्रण, विद्रधि, भगन्दर, शीत आदिसे हाथ पैर फटना आदि रोगों पर बाह्योपचार रूपसे प्रयुक्त होता है।

रक्तार्श, रक्तप्रदर, सुजाक, मधुमेह, मांसशोष (Atrophy मांसक्षय), जीर्ण आमातिसार, प्रवाहिका और जीर्ण ज्वर आदिमें इसका उदरसेवन भी कराया जाता है। ३ से ६ माशे सारको ३—४ तोले जलमें मिलाकर दिनमें ३ बार पिलाया जाता है। जीर्ण सुजाकमें इसके जलमें जीरा मिश्री मिला देनेपर विशेष लाभ होता है।

२५. मधुच्छिष्टाद्य घृत

विधिः—मोम, मुलहठी, लोध, राल, मजीठ, सफेदचन्दन और मूर्वा ४-४ तोले और गोघृत ६४ तोले लेवें। पहले मुलहठी, लोध, मजीठ, चंदन और मूर्वाका

कल्क करें। फिर कलईदार पीतलकी कढ़ाहीमें कल्क, घृत और २५६ तोले जल मिलाकर मन्दाग्निपर घृत पाक करें। पश्चात् कढ़ाहीको नीचे उतार छान, राल और मोम मिला पुन पिघलाकर छान लेवें। (व० मे०)

उपयोग —यह अग्निदग्ध व्रणोंपर लगानेमें अत्युपयोगी योग है। इसके लगाते रहनेसे थोड़े ही दिनोंमें व्रण भर जाता है और ऊपरकी त्वचा पहलेके जैसी ही आ जाती है।

सूचना —जले हुये भागोंको शीतल जल नहीं लगाना चाहिये। धोनेके लिये गरम जलका उपयोग करें। यदि रोगी विशेष जल गया हो, तो भोजन बन्दकर देना चाहिये। दूध, मोसम्बीका रस, अनारका रस और अन्य फल आदिपर रखना चाहिये।

यदि किसी स्थान विशेषमें अग्नि, विद्युत् या अन्य कारणसे जल जानेके पश्चात् व्रण न भरता हो तो इस घृतके लेपसे असाध्य व्रण भी भर जाता है।

२६. तुगाक्षीर्यादि लेप

विधि —वंशलोचन, प्लक्ष (पाखर) की छाल, रक्तचन्दन, गेरु और गिलोय-को समभाग मिला कूटकर कपड़छान चूर्ण करें। फिर दूधमें मिला कल्क कर थोड़ा घी मिला लेवें। (शा० स०)

उपयोग —इस लेपके प्रयोगसे अग्निसे जले हुए तथा तेल घृतसे जले हुए व्रण सत्वर शुद्ध होकर भर जाते हैं। विद्युत् और तेजाबसे जले हुए पर भी यह लेप हितकारक है।

उबलता हुआ तेल या घी हाथ पैरपर लग जानेपर उस भागमें भयकर जलन होती है। उसपर शीतोष्ण उपचार करनेको शास्त्रमें लिखा है अर्थात् घी तेल लगाकर अग्निसे सेकें। किन्तु जलन अत्यधिक होनेपर तत्काल शमन करनेके लिये, घी-कुवारका रस लगावें या आलूको चटनीकी तरह पीसकर लगावें अथवा कालीसारिव और कमलके फूलोंके चूर्णका उबाले हुए जलमें कल्क बनाकर पतला लेप करें। सूखनेपर उसे हटा कर फिर दूसरी, तीसरी बार लेप करें। दाह शमन होकर छाले हो जाते हैं। उन छालोंको सुई लगा फोड़कर जल निकाल डालें। उनपर यह तुगाक्षीर्यादि लेप लगावें। किसी स्थानपर क्लेदस्राव होता हो, वहाँपर शुष्क चूर्ण ही लगाते रहें।

ज्वर भी हो तो बाह्य प्रयोगके साथ महाज्वरांकुश, प्रवालपिष्टी और अमृतासत्व-का सेवन कराते रहनेसे ज्वर सह व्रणमें सत्वर लाभ हो जाता है। अधिक जले हुए रोगीको हो सके तबतक केवल दूधपर रखना चाहिये। इस मलहमसे त्वचा जो नयी आती है, यह सवर्ण ही आती है।

सूचना —अग्निदग्धव्रणको शीतल जल नहीं लगाना चाहिये। गरम जलमें फोहा भिगोकर धोवें। यह चूर्ण थोड़े घीमें मिलाकर पित्त प्रधान व्रणोंपर लगाया जाता है। इससे भी व्रण शोधन और व्रणरोपण, दोनों कार्य होते हैं।

२७. व्रणकुठार मिश्रण

प्रथमविधि:—बाष्पोदक (उड़ा हुआ पानी) ६० तोलेमें ६ रत्ती उत्तम कपूर डाल मज़बूत डाट लगाकर लकड़ीके तख्तेपर एक सप्ताह तक खुले स्थानमें रख दें। ताकि दिनमें कड़ी धूप और रात्रिमें चंद्रमाके प्रकाशमें पड़ा रहे । कपूर गल जाता है यदि कुछ कण रह जाय तो कोई हानि नहीं। बादमें पिसी हुई फिटकरी १२॥ तोले और २॥ तोले उत्तम नीलाथोथा, जो सफेद न हुआ हो, वह उपरोक्त कपूरोदकमें डालकर २४ घण्टे पड़ा रखें, और अच्छे शुद्ध वस्त्रसे छानकर दूसरी बोतलमें भर लें ।

उपयोग:—जो व्रण ऊपरसे सफेद हों, लेखन क्रियाकी आवश्यकता हो, दुर्गन्धयुक्त पूयस्राव होता हो, उनकी नीमके पत्ते अथवा गूलरकी छालके सुखोष्ण क्वाथके जलसे धोकर फोहा भर कर चुपड़ दें। इसके द्वारा जन्तुघ्न क्रिया एवं लेखन क्रिया जैसी हाइड्रोजन परऑक्साइडसे होती है, उससे भी उग्र होती है। थोड़े समयमें ही व्रणकी सफेदी मिटकर लाल अंकुरान्वित हो जाता है। फिर इस क्रियाकी आवश्यकता नहीं। इसके बाद अन्य व्रणरोपण मलहम लगा सकते हैं। यदि किसी मलहमसे व्रण भरता न दीखे तो व्रण कुठार द्वितीय विधिका प्रयोग करें ।

द्वितीय विधि:—११ छटांक बाष्प जल (अभावमें कूपोदक को अच्छी तरह उबाल कर अर्थात् १ सेरका ऽ॥।=) छटांक रहे उतना उबालें) में १ छटांक प्रथम विधि वाला व्रणकुठार मिला, हिलाकर बोतल भर लें। इसमेंसे फोहा भरकर व्रणपर लगाकर प्रातः सायं पट्टी बाँध दें। इससे जन्तुघ्न क्रियाके साथ व्रणरोपण भी होता है। उपदंशजन्य व्रण एवं प्लेग आदिकी ग्रन्थि पक कर फूट जानेके बाद, बने रहने वाले विपाक्त व्रण आदि अनेक व्रणोंका यह नाश करता है।

आँखोंके पलकके दाने (Trachoma) व्रणकुठार प्रथम विधिका छोटासा फोहा भरकर पलकको उलटकर दोनोंके ऊपर हलके हाथसे लगानेसे दो तीन बारमें ही दाने मिट जाते हैं।

नेत्राभिष्यंद (आंखदुखना) के लिये व्रण कुठार द्वितीयविधिमें समान भाग ही उत्तम गुलाबका अर्क मिलानेसे नेत्रबिन्दु बनजाता है। गरम पानी २० तोलेमें ४ रत्ती टंकण चार अथवा बोरिक एसिड डाल उस गरम गरम जलमें विशुद्ध रुईको भिगो आंखो पर सेक करें और आंखके पलकको उलट कर भीतर स्थित दूषित पूय (रस्सी) को सुखोष्ण जल (इसी बोरिक लोशन) से धोवे और रुईके फोहेसे पोंछ लें। इस प्रकार साफ किये हुए नेत्रोंमें ४–४ बूंद इस नेत्र बिन्दुकी प्रातः सायं डालनेसे आंख दुखना मिट जाता है। इसी भांति कान बहना एवं नासूर आदि पुराने व्रणोंको मिटानेके लिये आवश्यकतानुसार नं० १ अथवा नं० २ व्रणकुठारकी २–४ बूंदें भीतर प्रवेश करावें। रोगानुसार एक सप्ताह या चार सप्ताह तक प्रयोग करनेसे पुराने व्रण, नासूर, भगंदर, सुजाक आदिमें चमत्कारी गुण दिखाता है। यह हमारा बहुत वर्षोंका अनुभूत है।

सामान्य खर्चकी दवा विधिपूर्वक बनाकर उपयोगमें लानेसे ज्यादा कीमती दवाका कार्य करती है। (श्री राजवैद्य प० रामचन्द्रजी)

२८ व्रणकुठार तैल

विधि —ताजी स्वर्णचीरीके पचांगको विशुद्ध जलसे धो, कूट, निचोड़कर रस निकाल लें। उस स्वरसमें चतुर्थांश सरसोंका उत्तम तैल मिलाकर, मन्दाग्निसे पकावें। तैल मात्र शेष रहनेपर छान, नितारकर बोतलमें भर लेवें।

उपयोग —इस तैलके प्रयोगसे साधारणसे साधारण एवं गंभीरसे गंभीर व्रण, नाड़ी व्रण (नासूर), क्षयजन्य और अस्थिपर्यन्त व्रण नाश होते हैं। यह हमारा शतशोऽनुभूत है। व्रणका बहुत छोटा छिद्र हो और तैल नहीं जा सकता हो तो गरम जल से उबाली हुई (स्टरलाइज की हुई) इञ्जेक्शनकी सुई और पिचकारी द्वारा व्रणकी अन्तिम परिधि तक तैल पहुँचानेकी कोशिश करनी चाहिये। क्षयजन्य व्रण, जो अस्थि पर्यन्त पहुँच जाता है और हड्डीको झिल्ली एवं हड्डीके ऊपरका भाग गल जाता है। फिर उसके टुकड़े टुकड़े बाहर निकल जाते हैं। उसपर इस तैलका प्रयोग करनेसे चिरस्थायी लाभ होजाता है। (श्री राजवैद्य प० रामचन्द्रजी)

२९. आगन्तुकक्षतहर योग

(१) अपामार्गके पत्तोंका स्वरस निकाल, उसमें क्षत स्थानको डुबानेसे अथवा उस स्वरसमें रुई या कपड़ेको भिगोकर क्षत स्थानपर रख देनेसे रक्तस्राव बन्द हो जाता है।

(२) रक्त बन्द हो जाने पर क्षतमें मुलहठीका कपड़छान चूर्ण भर देवें। फिर कपूरको गोघृतमें मिलाकर क्षतके चारों ओर लगा देवें। ऊपर नागरवेलका पान, कागज या कपड़ा बांध देनेसे घाव सत्वर भर जाता है।

(३) पर्णबीज (तुख्मे हैयात, हेमसागर, कनाड़ीमें कागुसूले, मराठीमें घावमारी, Kalanchoe Pinnata) के पत्तोंका स्वरस क्षत स्थानपर निचोड़ देवें। फिर पत्तोंका कल्क कर बांध देवें तो घाव बिना पके अच्छा हो जाता है।

(४) बबूलके निर्धूम अर्ध जले हुए कोयलेको पीस तिल तैलमें मिला देवें। फिर उस तैलमें रुई डुबो, क्षत स्थान पर रखकर पट्टी बांध देनेसे घाव भर जाता है। पक नहीं सकता। छुरी, चाकू आदि शस्त्रोंके घावके लिये यह सरल और निर्भय प्रयोग है।

(५) अरणीके पानको पीस घीमें भूनकर बांध देनेसे क्षत भर जाता है।

(६) रामशर (अपूर्वदण्ड-गुजराती पानबाजरियु), जो जलाशय में १-१॥ फीट जलमें होता है। इसकी ऊंचाई लगभग ५–६ फीट होती है। पान बाजरीके पानके समान होते हैं। एवं ऊपर डोडी भी बाजरीके समान ही होती है। इन डोडियोंको जला

राखकर तैलमें मिलाकर लगा देनेसे घाव भर जाता है। इन डोडियोंके भीतर जो रुई है; वह निकाल घावमें भरकर पट्टी बांध देनेसे भी घाव जल्दी भर जाता है। यह रामशर घावके लिये उत्तम औषध है।

(७) पूर्वलिखित निंगुंडी तैल आगन्तुक क्षतकी प्रत्येक दशामें अप्रतिम लाभ करता है। (पं० राधाकृष्णजी द्विवेदी)

(८) कभी वर्षा-ऋतुमें छोटे ग्राम वालोंको सड़े हुए कांटे लग जाते हैं, जो निकालने पर टूट जाता है। पूरा नहीं निकल सकता। उसके लिये अपामार्गके ३ पान को ३ माशे गुड़ मिलाकर ३ दिन तक सुबह खा लेनेपर सड़ा हुआ कांटा गल जाता है और पीड़ा दूर हो जाती है।

(९) कांटा मांसमें घुस जाता है। फिर कुछ अंश टूटकर भीतर रह जाता है, उसके लिये घावके मुख पर आकका दूध लगानेसे दूसरे दिन कांटा सरलतासे निकल आता है।

(१०) एक प्रकारका दुष्ट व्रण देखनेमें आता है। वह प्रथम एक फुन्सीके रूपमें उत्पन्न होता है; परन्तु धीरे धीरे गोल घावका रूप धारण कर लेता है। जिसपर एक प्रकारका सफेद चिकना और अत्यन्त दुर्गन्धयुक्त पदार्थ जम जाता है। इसमेंसे हर समय एक प्रकारका दुर्गन्ध युक्त स्राव निकलता रहता है। अनेक उपचार करने पर भी उसका शोधन नहीं होता है। उसके लिये निम्न प्रयोग अति उत्तम सिद्ध हुआ है:—

शोधनः—शलाकापर रुई लगा, उसे कारबोलिक एसिड (Carbolic Acid) में भिगोकर घावपर लगावें। इससे घावके ऊपर जमा सफेद दुष्ट पदार्थ ऊपर आ जायगा उसको सम्हाल पूर्वक रुईसे पोंछ ले। एक बार लगनेसे ही जो रोगी दूसरोंके सहारे आया था, भगता हुआ चला जायगा। इस प्रकार यह तीन चार दिन तक ही (उस समय तक ही लगावें जब तक कि घाव लाल न हो जाय) लगावें। घाव की सफेदी हटकर लाल हो जाना, उसके पूर्णतया शोधन हो जानेका लक्षण है।

रोपणः—इसके बाद रोपण तैल, निंगुंडी तैल या अन्य रोपण उपचार करनेसे घाव शीघ्र अच्छा हो जाता है।

(११) शिरीष (सिरस) वृक्षके मूलमें १ गज गहरा खड्डा खोदनेपर मूल परसे रुई जैसी मृदु छाल निकलती है। उसे निकाल सुखा कपड़छान चूर्ण करके बोतलमें भर दें। तलवार, छुरी आदिके घाव लगनेपर रुधिरस्राव हो रहा हो, तब इस चूर्णको दबा देनेसे तत्काल रक्तस्राव बन्द होजाता है। फिर पट्टी बांध देनेपर एक ही पट्टीमें घाव भर जाता है।

देहके किसी भी भागमें शस्त्र, लकड़ी, कांच या कांटा आदि लगनेके पश्चात यदि वहां वेदना होकर पाक होने लगे, तो वहांसे चमड़ीको नहीं काट देना चाहिये।

अन्यथा और चमड़ी विकृत होने लगती है। पुनः पुनः कतरते रहनेपर रोग अधिक बढ़ होता जाता है। व्रण भीतरसे पकता जाता है और वेदना भी बढ़ती जाती है। अतः पाकके आरम्भमें ही गुड़, नमक, हल्दी, शिरके बाल (या उनकी राख) और देशी एरण्ड तैलको मिला लोहेकी कुड़छीमें डाल अग्निपर पकावें। फिर कपड़ेपर डाल पोटली कर पीड़ित स्थानपर थोमे देवें। जब सहन हो उतना गरम रहे, तब वह बाँध देवें। यह पट्टी रोज दो बार नयी बाँधते रहनेसे शोथ उतर जायगा और भीतरमें रोपण क्रिया हो जायगी। फिर ऊपरकी त्वचा मृत होकर सफेद हो जायगी। किन्तु उसे प्रमाद वश काट न डालें (अन्यथा भीतरकी कोमल त्वचा फिर पकने लगेगी) वह स्वयमेव दूर हो जायगी।

यदि पीड़ित स्थानके भीतर पूय या जल संगृहीत होगया हो तो विशुद्ध सलाका, सुई या कैंचीसे थोड़ा छिद्रकर देवें। किन्तु त्वचाको निकाल न डाले। फिर गुड़, नमक, हल्दी और एरण्डतैलको पकाकर, पट्टी बाँध देवे। इस पट्टीसे हजारों रोगियोंको लाभ पहुँच चुका है।

३०. चोटहर योग

(१) प्याज और थोड़ी हल्दीको पत्थरपर पीसकर पोटली बाँधें। फिर एक कटोरीमें थोड़ा सरसोंका तैल गरम करें। उसमें पोटली डुबो सहन होसके उतनी गरम रहनेपर सेक करें। शीतल होनेपर बारबार तैलमें डुबोते रहें और सेक करते रहें। इस तरह आध घण्टे तक सेक कर फिर प्याजके कल्कको बाँध देनेसे चोटजनित पीड़ा दूर होती है।

(२) हल्दी और नमकको सत्यानाशीके रसमें मिला, गरमकर सूजनपर लगादेनेसे सूजन और वेदना, दोनों दूर होते हैं।

३१. हरीतक्यादि कषाय

विधि —हरड़, वच, सोंठ, निसोतकी छाल, सनायपत्ती, छोटी इलायची, बड़ी इलायची और लौंग, इन ८ औषधियोंको समभाग मिलाकर जौकुट चूर्ण करें।

उपयोग —१॥-२॥ तोलेका क्वाथकर दिनमें दो समय पिलाते रहनेसे कास और ज्वरसहित व्रध्न (बदगाठ) रोग शमन होजाता है। कषाय पिलानेके साथ आवश्यकतापर गाठपर बाह्योपचार भी करना चाहिये। इसलिये पहले गाठ परसे बालोंको निकाल, फिर बड़के दूधका लेप करते रहें। जिससे गाठ जल्दी बैठ जाती है। यदि गाठ पकने लगती हो, गाठमें शूलके समान वेदना होती हो, तो गेहूँके आटेकी जल या दूधमें पुल्टिस करके बाँधते रहें। पुल्टिसको २-२ घण्टेपर बदलते रहनेसे गाठ जल्दी पक कर फूट जाती है।

३२. दन्तीमूलादि लेप

विधिः—दंतीमूल, चित्रकमूलकी छाल, सेहुण्डका दूध, आकका दूध, गुड़, भिलावेकी मज्जा (गोडंवी), कासीस और सैंधानमक, इन ८ औषधियोंको समभाग लें। शुष्क औषधियोंके कपड़छान चूर्णके साथ आक और सेहुण्डका दूध (थोड़ा जल) मिला कल्क करें। फिर गुड़ मिलाकर गरम करें। (यो० र०)

उपयोगः—इस लेपके लगानेसे १-२ लेपसे ही (४-६ घण्टेमें) पकी विद्रधि फूट जाती है। किसी भी प्रकारका कष्ट नहीं होता और सत्वर कार्य हो जाता है। देहके किसी भी स्थानके पक्व विद्रधिपर इस प्रयोगको उपयोगमें ला सकते हैं। बालक और डरपोक, निर्बल स्त्रियोंके लिये भी यह लेप निर्भय और सिद्ध अनुभूत योग है।

(श्री पं० राधाकृष्ण जी द्विवेदी)

सूचनाः—यह लेप नेत्रोंके न लगे इतना अवश्य सम्हालें।

३३. सवर्णकर योग

(१) कपूरकचरी १ माशा, हल्दी २ माशे, हरी मेंहदी १० तोले और तिल २ तोले मिला पीस कर लेप करें। उसका व्रणस्थान या गांठ दूर होने पर रहे हुए चिह्न पर लेप करके पट्टी बांधते रहनेसे एक सप्ताहमें त्वचा स्वाभाविक बन जाती है। इस लेपसे कुष्ठके दाग (संध्म) भी दूर होते हैं, ऐसा अनुभव में आया है।

(२) सफेद चन्दन, प्रियंगु, आमकी गुठलीकी गिरी, नागकेशर, मजीठ और रसौंतको नीरोगी गौके गोबरके रसमें घिसकर लेप करनेसे त्वचा स्वाभाविक बन जाती है। (च० सं०)

३४. अर्क आयोडिन (टिञ्चर आयोडिन)

प्रथम विधिः—आयोडिन १० औंस, पोटास आयोडाइड (Pot. Iodide) ६ औंस, जल १० औंस, मद्यार्क (आल्कोहोल ९०%) लगभग ७२ औंस लेवें। पहले आयोडिन और पोटास आयोडाइडको जलमें मिलावें। फिर उसमें मद्यार्क मिला कर १०० औंस बना लेवें।

इस औषधिका नाम पहले टिञ्चर आयोडी फोर्टिज (Tinct Iodi fortis) था, उसे बदलकर १९३२ ई० में लाइ कर आयोडी फोर्टिज (Liq. Iodi fortis) रखा है। इसे लिनिमेण्ट आयोडाइड भी करते हैं। बाहर लगानेके लिये इस अर्कमें आल्कोहोल के स्थान पर मेथिलैटेड स्पिरिट मिला लिया जाता है।

द्वितीय विधिः—आयोडिन और पोटास आयोडाइड २॥-२॥ औंस को २॥ औंस जलमें मिलावें। फिर आल्कोहोल इतना मिलावें, कि सब मिलकर परिमाण १०० औंस हो जाय। इस औषधिका नाम पहले टिञ्चर आयोडी मिटिस (Tinct Iodi Mitis) था, उसे बदल कर १९३२ ई० में लाइकर आयोडी मिटिस रख दिया है।

प्रथम विधि में आयोडिन १०% और दूसरी विधिमें २॥% है। पहली विशेष तेज है, दूसरी निर्बल है।

उपयोग —यह औषधि वेदनाहर और उत्तम कीटाणुनाशक है। घाव लगनेपर तेज अर्कका उपयोग करनेसे उसके पकनेकी भीति दूर हो जाती है। विविध प्रकारकी गाठ, ततैया आदि छोटे छोटे जन्तुओंके विष, मधिशोथ, तुरन्तके उत्पन्न फोड़े और अनेक चर्म रोगोंपर लगानेके लिये इसका व्यवहार होता है।

दूसरी विधि वाला निर्बल अर्क सामान्य त्वक्प्रदाहक (Rubefacient) कार्य करता है। पहली विधि वाला अर्क लगाने पर वहा पर फफोला हो जाता है। दूसरी विधि वाला अर्क लगाने पर तत्काल शोषित होकर भीतर संयोजक तन्तुओंमें प्रवेशकर शोषक नाड़ियों (Absorbent vesseles) को उत्तेजित करता है। इसी हेतुसे प्रदाहयुक्त ग्रन्थिसमूह (Glandular Swellings) पर लगानेसे यह शोषित हो जाता है। फुफ्फुसावरणमें जो रस संगृहीत (Pleuritic effusion) होता है, उसे भी यह औषधि इस नियमानुसार दूर कर देती है।

सामान्यतः प्रथमविधि और दूसरी विधि, इन दोनोंको समभाग मिलाकर व्यवहारमें लाना, यह विशेष हितकर माना जायगा। किन्तु चिरकारी बड़ी गांठों (Chronic Glandular enlargements), वक्षस्थानकी वातवाहिनियाँ और मांसपेशियोंमें तीव्र वेदना और स्थानिक प्रदाहपर द्वितीय विधि वाले अर्कका ही प्रयोग कराना चाहिये। अधिक समय होजानेपर भी उसमें पूय नहीं हो सकेगा और गाठको बढ़ने भी नहीं देगा।

प्रदाह या अन्य हेतुसे उत्पन्न अर्बुद आदि तथा प्लीहा, यकृत्, गर्भाशय, वृषणशोथ, उदर्याकलाकी ग्रन्थियां आदि बढ़ने एवं अस्थि आदिपर शोथ आनेपर इस अर्कका बाह्य उपयोग होता है, एवं आयोडिनका आभ्यन्तरिक प्रयोग भी किया जाता है।

गलौघ रोग (क्रुप croup) में द्वितीय विधिके अर्कका स्थानिक प्रयोग करनेसे विलक्षण लाभ पहुँचनेके उदाहरण मिले हैं।

दांतोंकी अम्लता दूर करने और मसूढ़ोंकी शिथिलता सह दंतविद्रधिका आरम्भ होनेपर द्वितीय विधिवाले अर्कको लगाते रहनेसे लाभ हो जाता है।

नखक्षत (Onychia) होनेपर प्रथम विधिवाले अर्कका व्यवहार करनेपर अवश्य रोग दमन होता है। घातक घाव लगनेसे उत्पन्न कोथ युक्तक्षत (Hospital gangrene) पर भी इस अर्कसे उपकार होता है। इस तरह अन्य जीर्ण क्षतमें भी इसका स्थानिक प्रयोग करनेसे शोषक और उत्तेजक असर पहुँचकर उपकार होता है।

गर्भाशय मुखमें रक्ताधिक्य या क्षत हो जानेपर तेज अर्कका स्थानिक प्रयोग करने में रोगनिवृत्ति होजाती है। एवं गर्भाशयमेंसे जीर्ण रक्तस्राव और रजोधिक्य विकार होने पर द्वितीय विधि वाले अर्कमें समान जल मिलाकर उसकी पिचकारी दी जाती है।

रसार्बुदः—रसपूरित फाले (cyst) के भीतर दूषितपदार्थोंके संशोधनार्थ द्वितीय विधिवाले अर्कको ५० गुने जलमें मिलाकर धोया जाता है। वृषणवृद्धिमेंसे जलको निकाल देनेके पश्चात् मंद अर्कमें २ गुना जल मिलाकर पिचकारी लगानेसे प्रदाह होकर रसमय ग्रन्थियां जुड़ जाती हैं। फिर जलका संग्रह नहीं होता। इस अर्कका प्रयोग वृषणवृद्धिमें अन्य उपायोंकी अपेक्षा अधिक हितकारक है। इस तरह भगंदर और नाड़ी-व्रणमें भी इस अर्ककी पिचकारी लगाई जाती है।

जीर्ण पूयमय श्वासनलिकाप्रदाह (कास रोग) में द्वितीय विधिवाले अर्ककी १५ बूंदका इन्जेक्शन बढ़ी हुई ग्रैवेय ग्रन्थि गलगण्ड (Goitre or Solid Bronchocele) और बढ़ी हुई लसीका ग्रन्थिमें करनेसे वह शोषित होकर अच्छा लाभ दर्शाता है। साथ साथ आयोडिनकी बाष्प देनेसे सत्वर लाभ पहुँचता है।

विसर्प रोगमें आयोडिनका उग्र अर्क लगानेसे कास्टिककी अपेक्षा अधिक उपकार होता है। इस तरह विचर्चिका (Psoriasis), सिध्म (Pityriasis), विस्फोटक (Impetigo), शुष्ककण्डू (Prurigo), और शुष्कदद्रु (Favus Honeycomb ringworm) आदिमें स्थानिक प्रयोगद्वारा बहुत लाभ पहुँचता है।

सूचनाः—टिंचर आयोडिनका आभ्यन्तरिक प्रयोग (उदर सेवन) अथवा इन्जेक्शन करना हो वहां यह सामान्य मेथिलेटेड स्पिट द्वारा बना हुआ कदापि उपयोगमें नहीं लेना चाहिये। क्योंकि मेथिलेटेड स्प्रिट विषाक्त है। इसके लिये रेक्टिफाइड स्पिरिट द्वारा बना हुआ टिंचर आयोडिन लें।

सगर्भा को छर्दि होनेपर प्रातःकाल भूखे पेट ही एक एक बिन्दु टिंचर आयोडिन १ छटांक शीतल जलके साथ देनेसे एक सप्ताहमें वमन बन्द होजाती है। इसी भांति प्लेगके दिनोंमें १ से २ बूंदतक प्रातःकाल १ सप्ताहमें २ दिन अथवा अधिकसे अधिक प्रतिदिन एक बिन्दु देनेसे प्लेगके कीटाणुओंका आक्रमण करनेका भय नहीं रहता। प्रसूति-जन्य विष या आभ्यन्तरिक किसी भी प्रकारका विष एवं पूय जन्य रोग आयोडिनका इन्जेक्शन करनेसे एक दम बढ़ने से रुक जाता है और शनैःशनै नष्ट हो जाता है।

३५. पारद लेप

(मर्क्युरियल प्लास्टर Mercurial Plaster)

विधिः— पारद ३ औंस, जेतून का तैल (Olive oil) ५६ ग्रेन, ऊर्ध्व-पातित गंधक (Subliment Sulphur) ८ ग्रेन और शीशेका लेप (Lead Plaster) ६ औंस लेवें। पहले तैलको गरम कर गंधक मिला लेवें. दोनोंका संमिश्रण न हो, तबतक मर्दन करें फिर पारद मिलावें। जबतक पारदके अणु अदृश्य न हो जायं, तबतक खरल करें। फिर शीशेका लेप डालकर अच्छी तरह मिश्रण बना लेवें।

उपयोगः—इस लेपका उपयोग जीर्ण अर्बुद, संधिरोग और उपदंश जनित अर्बुद आदिके शोषणके लिए किया जाता है।

३६. नागशर्करा धावन

लाइकर प्लम्बी सबएसिटेट - (Liq. Plumbi Subacetate) ४ ड्राम
एसिड एसीटिक डिल० (Acid Acetic dil.) २ ड्राम
स्पिरिट वाइनम रेक्टीफाइड (Spt. Vinum Rectified) १॥ औंस
गुलाब जल (Rose water) १२ औंस

सबको मिलाकर धावन (Lotion) बना लेवें। फिर इसमें कपड़ा डुबो कर आघात ग्रस्त स्थानपर बांध देवें और उसे लोशनकी बूंदें डाल डालकर गीला रखें।

३७. शोथहर गुटिका

विधि —छोटी हरड़ और आंवलेका कपड़छान चूर्ण १-१ सेर, सोरा २० तोले और नीलाथोथा १० तोले लें। हरड़, आंवले और सोरेको मिला नीलेथोथेका जल मिलाकर गोला बनावें। उसे ५ दिन रहने देवे फिर कूटकर शिरराकार गोलियां बना लेवे। (आ० नि० मा०)

सूचना —नीलेथोथे में उतना जल मिलावे, जिससे गोलियां कठोर और वजनदार बन सके। भूलसे ज्यादा जल मिला दिया जायगा, तो गोलियां नरम और हलके वजनकी बनेंगी। फिर ये पूरा लाभ नहीं पहुँचा सकेंगी। कठोर गोला देरसे घिसती है किन्तु अच्छा कार्य देती है।

उपयोग —यह शोथहर गुटिका सब प्रकारके आगन्तुक शोथ-चोट लगने, मुड़ने, टूटने, जन्तुओंके दंश और अभाव आदिसे उत्पन्न शोथ, रससंग्रहज शोथ और वातप्रकोपज शोथको दूर करनेमें अच्छा लाभ पहुँचाती है। आवश्यकता अनुसार जलमें घिसकर दिनमें ३-४ बार लेप लगाया जाता है।

इसके अतिरिक्त सन्धिशोथ, सन्धिपीड़ा, कर्णशोथ, कर्णांश जनित वेदना, मसूड़े पर सूजन, कंठ या गालपर सूजन अथवा शरीरके किसी भी भागपर सूजन आनेपर यह लेप लगाया जाता है। करार्शकी पीड़ामें बाहर लेप लगाया जाता है। और उसे फिर भी लेप किया जाता है जिससे अर्श फटकर पीड़ाका निवारण होजाता है।

+चूनेका जल बनानेकी विधि —चूनेके साथ तीसरा हिस्सा जल मिलानेसे अति गरम होजाता है। फिर सफेद बन जाता है। इस अवस्था में इसे आर्द्र चूर्ण (Slaked Lime) कहते हैं। इस गीले चूने २ औंसको बार बार जल मिलाकर धोवे। जब क्षारीय अंश (Chloride) नष्ट होजाय, तब उसे १ गैलन जलमें मिला हिला कर १२ घण्टे रहने देवे। फिर ऊपरसे नितरे हुये जलको ले लेवे। उसे सॉल्युशन आव लाइम कहते हैं।

३८. कृष्ण धावन

(लोशियो हाइड्रार्जिरी निग्रो-ब्लेक मर्क्युरियल लोशन)

विधिः—केलोमल ७ भाग, ग्लिसरिन २० भाग और शेष चूने का प्रवाही (Solution of lime) मिलाकर १००० भाग पूर्ण करें। पहले केलोमलको ग्लिसरीनके साथ मिलावें। फिर चूनेका जल थोड़ा थोड़ा मिलाकर लोशन तैयार करें। इस द्रवको डाक्टरीमें ब्लेक वॉश (Black wash) भी कहते हैं।

उपयोगः—इस द्रवमें कपड़ा भिगोकर उपदंशज क्षत और फूटे हुए दूषित व्रण पर रखा जाता है। फिरंग रोगमें केवल इस धावनकी पट्टीसे ही आराम होजाता है। यह धावन सामान्य उपदंशज घावमें उत्तेजक और शोधक क्रिया करता है। सामान्य उपदंश (Soft Chancre) को इस धावनसे धो, ऊपर आयडोफार्म लगाकर कपड़ा बांध दिया जाता है। उपदंश और फिरंग दोनों पर इसका प्रयोग होता है। इनके अतिरिक्त बाहरके घावको भी यह सुखा देता है।

३९. पीतधावन

(लोशियो हाइड्रार्जिरी फ्लेवा—येलो मर्क्युरियल लोशन)

विधिः—मर्क्युरिक क्लोराइड (Mercuric Chloride) २० ग्रेन (०-४६ ग्राम) और चूनेका जल (Solution of lime) १० औंस (१०० क्युबिक सेण्टीमीटर) लें। दोनोंको मिलाकर धावन बना लेवें। इस विलयनकी डाक्टरी में येलो वाश (Yellow wash) भी कहते हैं।

सूचनाः—पारदकी सब कृतियोंमें मर्क्युरिक क्लोराइड (कोरोसिव सब्लिमेट Corrosive Sublimate)अधिक विषाक्त है। यह सबल कीटाणुनाशक और तीव्र विष है। अतः इसका लोशन बनानेमें भी अधिक मात्रामें न गिरजाय, यह सम्हालना चाहिये।

उपयोगः—यह धावन घाव धोनेमें अति उपयोगी है। बाह्य त्वचा आदिके समान इसका व्यवहार नेत्रोंके लिये भी होता है।

सामान्य और पूययुक्त चक्षुप्रदाहमें नेत्रोंको धोनेके लिये क्लोराइड १ ग्रेन, नौसादर ६ ग्रेन और निवाया जल ८ औंस मिलाकर धावन तैयार किया जाता है। इसमेंसे दिनमें ३-४ बार प्रयोग करनेसे विलक्षण लाभ पहुँचता है। (क्रौफ्लेविन विशेष हितावह है।)

पीनस (दुर्गन्धमय प्रतिश्याय Ozaena) रोगमें १.१००० धावनसे नाकको धोकर बोरिक एसिडका चूर्ण नस्य रूपसे चढा लेनेसे विशेष उपकार होता है।

इस धावनको १-१०००० (अर्थात् २० औंसमें १ ग्रेन बलवाला बनाया जाय, तो माइक्रोकोकाई और बेसिली (Micrococci and Bacilli) नामक कीटाणुओं को नष्ट कर देता है। सामान्यतः घाव धोनेके लिये १.९००० से १.२०००

के घृतको विशुद्ध करने के लिये भी उपयोगी है। १,८०० धावन प्रति सम्हालपूर्वक त्वचाके वर्ण परिवर्तन (Chloasma) और धब्बे (Freckles) को दूर करनेके लिये व्यवहृत होता है। इसमें फोहा भिगोकर कीटाणुओंसे सरक्षणार्थ घाव पर बाधा जाता है।

इनके अतिरिक्त विकारके अनुरूप विविध त्वचारोग दद्रु आदि में धावन सबल निर्बल तैयार किया जाता है। अति सामान्य बलवाले धावनके लिये १ १००००० अर्थात् १ ग्रेन औषध और २०० औंस जल का उपयोग होता है। गर्भाशय आदि भागको धोनेके लिये बस्ति रूपसे इसका व्यवहार करनेसे हजारों रुग्णाओंके जीवनका उद्धार हुआ है

वर्तमानमें इस धावनकी अपेक्षा एक्रीफ्लेविन (Acriflavine) का उपयोग अत्यधिक परिमाणमें हो रहा है। वह निर्भय और प्रबल पूतिहर है।

४०. कार्बोलिक धावन

विधि —शुद्ध कार्बोलिक १ औंस (वजन किये हुए) को १६ औंस जलमें मिला लेनेसे कार्बोलिक लोशन बन जाता है।

उपयोग —यह धावन घाव धोनेके लिये हितावह है। सौम्य लोशन बनाना हो, तो ३६ औंस जल मिला लेना चाहिये। इस धावनके उपयोगसे व्रण आदि कीटाणु नष्ट होते हैं।

४१ अर्क लोहबान।

विधि —लोहबान ५ तोले, रसौंत ॥ तोले और मैथिलेटेड स्पिरिट १० तोले मिला बोतलमें भर कर रख देवें। दिनमें २-३ बार बोतलको हिलाते रहें ८ वें दिन कपड़ेसे छान कर बोतलमें भरलेवें।

उपयोग —किसी स्थानमें चक्कू आदि से लगजाने पर तुरन्त अर्क लोहबानकी पट्टी लगा लेनेसे रक्तस्राव बन्द होजाता है। वेदना शमन हो जाती है। घाव नहीं पकता और थोड़े ही समय में अच्छी तरह घाव मिलजाता है।

४२. अर्क रेवतचीनी

विधि —रेवतचीनी (Rheumemodi) या अर्चा (Rheum webbianum) १० तोले के जौकुट चूर्णको ६० तोले मैथिलेटेड स्पिरिटमें डाल देवें। रोज २-३ बार शीशीको हिलाते रहें। ८ दिन कपड़ेसे छान ५ तोले शिलाजीत मिला, अच्छी तरह चला पुन: कपड़े से छान बोतलमें भर लेवें।

(श्री पं० यादवजी त्रिकमजी आचार्य)

उपयोग —किसीभी स्थानमें चोट लगजाना, चक्कू आदि का घाव लगजाना, घात-कारज शोथ, नये तुरन्त उत्पन्न हुए फोड़े फुन्सी, इन सब पर यह अर्क लगानेसे तुरन्त लाभ हो जाता है।

सूचना —(१) घावों मिट्टी आदि घुस गये हों तो उसे पहले मेथिलेटेड

स्पिरिट, शराब, कार्बोलिक धावन या गरम किये जलसे धोकर साफकर लेना चाहिये। अन्यथा घाव पक जाता है।

(२) दूषित शस्त्रका घाव लग गया हो तो कृष्ण धावन से धोलेना चाहिये।

---

(३७) भगंदर

१. भगंदरहर रस

विधिः—शुद्धपारद २ तोले और शुद्ध गन्धक ४ तोले मिलाकर कज्जली करें। फिर ३ दिन घी कुंवार के रसमें मर्दन कर ताम्रभस्म और लोह भस्म ६-६ तोले मिलाकर घी कुंवार के रसमें घोटकर पेड़ा बना अरण्डके पत्तें लपेट दें। उसे हांडी में राखके भीतर दबाकर ६ घण्टे स्वेदन करें। पश्चात् निकाल ७ दिन तक नीबूके रसमें खरल कर १-१ रत्ती की गोलियां बनावें।

मात्राः—१-१ गोली दिनमें २ बार पुनर्नवारिष्ट अथवा आंवलेके रस या मुरब्बाके साथ देवें।

उपयोगः—इस रसायनका सेवन शान्ति पूर्वक ४–६ मासतक करने पर भगन्दर और सब प्रकारके नाड़ी व्रण नष्ट होते हैं।

यह औषधि कफ प्रकृति वाले रोगी, जिनकी पचन क्रिया सदोष हो, तथा मूत्रोत्पत्ति योग्य न हो उसके लिये हितावह है। इसके सेवनसे पचन क्रिया सुधरती है। रसमेंसे रक्त बनानेका कार्य सम्यक प्रकारसे होने लगता है। रक्तका प्रसादन होता है, तथा मूत्र शुद्धि होती है। फिर पूयोत्पत्ति बन्द होकर भगंदर नष्ट होता है। इसके अतिरिक्त शरीरके किसी भी स्थानके नाड़ीव्रण, विद्रधि, कफ प्रधान गौण कुष्ट आदि रोगों पर भी यह लाभ पहुँचाती है।

२. नारायण रस

विधिः—शुद्ध हिंगुल, फिटकरीका फूला, रसौंत, शुद्ध मनः शिल, शुद्ध गूगल, शुद्ध पारद, ताम्रभस्म, शुद्ध गन्धक, लोहभस्म, सैंधानमक, अतीस, चव्य, शरफोंकाकी जड़, बायविडंग, अजवायन, गजपीपल, कालीमिर्च, अर्कमूलत्वक, वरनेकी छाल, राल और हरड़ इन २१ द्रव्योंको समभागलें। पहले पारद गन्धककी कज्जली कर हिंगुल, मनः शिल, ताम्र और लोह मिलावें। राल और गूगलको सरसों (करंजे) के तैल में कूट कर मुलायम मक्खनसदृश बना लेवें। शेष औषधियोंका कपड़ छान चूर्ण करें। पश्चात् राल-गूगल मिश्रणके साथ पहले भस्म और फिर शेष चूर्ण मिलावें। उसे सरसों (करंज) का तैल मिलाकर लोहेके खरलमें कूटकर एक जीव बना १–१ रत्तीकी गोलियां बना लेवें। इस रसायनको कितनेक ग्रन्थकारोंने व्रणगजांकुश और दरदादी संज्ञा भी दी है। (र० चं०)

मात्रा —१ से ४ गोली दिनमें २ बार मंजिष्ठादि क्वाथ या अन्य रोगानुसार अनुपानके साथ देवें।

उपयोग —इस रसायनके सेवनसे नाड़ीव्रण, भयंकर पूयस्राव युक्त व्रण, गण्डमाला, विचर्चिका, जीर्ण दुष्टव्रण, फिरंगज उपद्रव, दाद, कानसे पूय आना, शिरोरोग श्लीपद हाथपैरका फटना और दुःसाध्य भगंदर आदि रोग नष्ट होते हैं।

३. भगंदरनाशक योग

(१) चोपचीनी, मिश्री और गोघृत ३२-३२ तोले तथा लोहभस्म और मनःशिल ४-४ माशे लें। सबको मिलाकर ३-३ तोलेके लड्डू बना लेवें। इसमेंसे १-१ लड्डू प्रातःकाल और रात्रिको गोदुग्धके साथ सेवन करानेसे भगंदर, जीर्ण उपदंशज उपद्रव रूप नाड़ी व्रण, रक्त विकार और कुष्ठ आदि १ मासमें दूर होते हैं।

(२) बालहरीतकी योग —नीलाथोथाका फूला १ तोला और छोटी हरड़का चूर्ण १६ तोले मिला नीबूके रसमें ७ दिन मर्दनकर १-१ रत्तीकी गोलियां बनावें। इनमें से १-१ गोली सुबह शीतल जल (या नीबू मिले जल) के साथ २१ दिन तक सेवन करने पर उपदंश रोग, उपदंशके विकार रूप नाड़ी व्रण, भगंदर दुष्टव्रण आदि रोग निवृत्त होते हैं। बाहर धोनेके लिये धावन (Lotion), चूर्ण और मलहम रूपसे (कज्जली मिलाकर) भी लगानेके लिये इस वटीका उपयोग लाभदायक है।

(यो० र०)

इस वटीका उपयोग हमने अनेक बार कपड़ रोग पर किया है और उससे परिणाम सन्तोषप्रद आया है।

(३) अनियला (कथी) के पानोंको पीस, थोड़ा गुड़ मिला पुल्टिस बनाकर बांधते रहनेसे कुछ दिनोंमें भगंदर दूर हो जाता है।

(४) भांगको पीस पुल्टिस करके बांधते रहनेपर थोड़े ही दिनों में भगंदर शुद्ध होकर भर जाता है।

(५) ऊटकी हड्डीको जलमें घिसकर लेप करते रहनेपर भी भगंदर भर जाता है।

---

(३८) फिरंग

१. उपदंशकुठार वटी।

प्रथम विधि —मुर्दासंग और कूठ १-१ तोला तथा नीलाथोथा ६ माशे मिला ६ घण्टे अदरखके रसमें खरलकर १-१ रत्तीकी गोलियां बनालेवें। (वृ० नि० र०)

मात्रा —१ से २ गोली प्रातः सायं अदरखके रसके साथ देवें।

उपयोग —इस वटीका सेवन करानेसे एक सप्ताहके भीतर उपदंश रोग दूर

हो जाता है। उपदंशके लिये यह सरल निर्भय और उत्तम उपाय है। यह वटी नये और पुराने रोगमें भी व्यवहृत होती है।

सूचनाः—मीठे और खट्टे पदार्थ, मांस, दूध और कुष्माण्डका त्याग कराना चाहिये। (कितनेक चिकित्सक आमका अचार अवश्य देते हैं उससे नीलेथोथेकी वान्ति करानेकी शक्ति शमन हो जाती है।)

द्वितीय विधिः—रसकपूर १ तोला और मुलतानी मिट्टी ४ तोले मिला जल के साथ खरल कर आध आध रत्तीकी गोलियां बना लेवें। (आ० नि० सा०)

मात्राः—२-२ गोली प्रति दिन प्रातःकाल एक बार निगलवा देवें। फिर ऊपर २ तोले इमलीको ४० तोले जलमें मसल तुरन्त निकाल बिना छाने पिला देवें। इस तरह प्यास लगनेपर इमलीका जल १ दिनमें ३-४ सेर तक पिलाते रहें।

इमलीका जल पीनेमें रोगीको बेचैनी नहीं होती। दंतहर्ष नहीं होता एवं साँधाओंमें या हड्डियोंमें भी बाधा नहीं पहुँचती।

उपयोगः—इस रसायनके प्रयोगसे उपदंश रोग जिसमें घाव फैलगया हो नासूर होगये हों, रोगने तीव्र रूप धारण करलिया हो, वह दूर होजाता है। अधिक से अधिक २१ दिन तक गोलियां देनी पड़ती हैं। २१ दिनके सेवनसे उपदंश रोग, उपदंशजनित रक्तविकार, नाड़ीव्रण आदि दूर होकर शरीर स्वस्थ, सबल और तेजस्वी बन जाता है।

सूचनाः—(१) औषध बन्द होने पर २१ दिन तक प्रतिदिन नीमके २१ पत्ते को जलके साथ पीस छान कर पिलाते रहना चाहिये।

(२) औषध सेवन कालमें और नीम सेवन कालमें अर्थात् ४२ दिन तक दूध, मीठे पदार्थ और घी बिल्कुल नहीं खाना चाहिये। दूध पीनेसे कम्पवात और गुड़, शक्कर खाने से स्वरभंग हो जाता है।

(३) कदाच रोगीको उपदंशके हेतुसे विस्फोटक भी हो गया हो, तो औषध सेवनके साथ चिरौंजीको जलमें पीस कर शरीर पर मर्दन करावें. अथवा पलासके पत्ते की डण्डियोंको जला राख कर तांबेके बर्त्तनमें डाल दही मिला, ताम्बेके लोटेसे घोटें फिर शरीर पर मालिश करावें। सूख जाने पर स्नान करानेसे विस्फोटक दूर हो जाते हैं।

२. नीलकण्ठ रस

प्रथम विधिः—शुद्ध पारद, शुद्ध गन्धक, नीलेथोथेका फूला, फिटकरी का फूला, छोटी हरड़, आंवला, बड़ी हरड़ और मुर्दासंग, ये सब समभाग लेवें। पहले पारद गन्धककी कज्जली करें। फिर शेष औषधियोंका कपड़ छान चूर्ण मिला नीबूके आधसेर रसके साथ खरल करें। रस थोड़ा थोड़ा मिलाते जायँ। फिर २-२ रत्तीकी गोलियां बना लेवें।

मात्रा —१ से २ गोली दिनमें दो बार भोजन कर लेने पर तुरन्त घीमें लपेट कर निगला देवें।

उपयोग.—इस वटीके सेवनसे १४ दिनके भीतर उपदश रोग दूर होजाता है। हींग, बेसन और लालमिर्च न खायें। तैल अधिक सेवन करनेसे उबाक नहीं आती और बेचैनी भी नहीं रहती। भोजन करके जल बहुत ज्यादा न पीवें। कमसे कम पीवें। आध या एक घण्टे बाद आवश्यक जल पीने से उबाक या बेचैनी नहीं होती। औषध सरलतासे पचन होकर जल्दी लाभ पहुँचाता है।

द्वितीय विधि—नीलेथोथेका फूला १ तोला लेकर एक सेर नीबूके रसके साथ पचन करावें। थोड़ा थोड़ा रस मिला कर मर्दन करते रहें। सब रस शोषण होजाने पर आध आध रत्तीकी गोलियां बना लेवें। (आ० मि०)

मात्रा —१ से १० गोली। पहले दिन सुबह एक गोली निगल लेवें। दूसरे दिन दो। तीसरे दिन तीन। इस तरह उबाक और बेचैनी न हो तबतक बढ़ावें। वमन होजाने के पश्चात् दूसरे दिनसे एक गोली कम करावें।

उपयोग—इस रसायनके सेवनसे १४ दिनके भीतर उपदंश रोगकी निवृत्ति हो जाती है। भोजनमें गेहूँकी रोटी, घी और मिश्री देवें। वमन होनेपर वमनको रोकनेके लिये भुने चने छिलके रहित खिलावें।

३. मल्लादि पुष्प

विधि —सफेद सोमल, सिंगरफ, रसकपूर, और दालचिकना, चारों १-१ तोले मिला खरलमें खरलकर टिकिया बना छोटी हाँडीमें भर डमरुयन्त्र बना ६ घण्टे मंद मंद अग्नि देकर पुष्प उड़ा लेवें। ऊपरकी हाँडी पर गीला वस्त्र बार बार बदलते रहें। फिर यन्त्र स्वांग शीतल होने पर पुष्पको निकाल लेवें। यदि पुष्प कम उड़े हों तो फिरसे उड़ा लेवें।

मात्रा —१ से २ चावल मुनक्कामें रख कर निगलवा देवें। पुष्प दांतोंको लगने पर दांत गिरजाते हैं। अतः पुष्पको निगलना चाहिये।

उपयोग —यह रसायन उपदंश रोग दूर करनेके लिये उत्तम है। नये और पुराने विकारमें भी लाभ पहुँचाता है। इसके सेवनसे उपदंश रोग तथा उसके उपद्रव रूप संधिवात, नाड़ीव्रण, विद्रधि, पक्षाघात गुल्शाक, रक्तविकार, तालुव्रण, अस्थिगतव्रण, वात नाड़ियोंकी विकृति, कफप्रकोप, नेत्रप्रदाह और मस्तिष्क विकार आदि समस्त रोग थोड़े ही दिनोंमें दूर हो जाते हैं तथा देह नीरोगी और पुष्ट हो जाती है।

४. भैरव रस

विधि —शुद्ध पारद १०० रत्ती और मिश्री ३०० रत्ती मिलाकर नीमके डण्डेसे लोहेकी खरलमें एक प्रहर तक घोटें। फिर १०० रत्ती सफेद कत्था मिला कज्जली कर, थोड़ा जल मिलाकर २० गोली बना लेवें। (र० सा० स०)

मात्राः—३ दिन तक दिनमें ३ बार १-१ गोली गेहूँके आटेके दुरवेमें रख कर निगलवादेवें। फिर चौथे दिनसे रोज सुबह १–१ गोली ११ दिन तक देते रहें। अनुपानरूपसे मंजिष्ठादि अर्क ५–५ तोले देवें।

उपयोगः—यह रसायन फिरंग रोगका नाश करनेमें अत्युत्तम है। फिरंग रोग पुराना होनेपर विविध उपद्रव उत्पन्न होते हैं। एवं कच्चे रसायन आदिके सेवनसे देह मृत्यु मुखमें जानेके लिये तैयार होजाती है। किसी किसीके सारे शरीरकी त्वचा शुष्क होकर मुरझा जाती है। शरीरमेंसे भयङ्कर दुर्गन्ध आती है। दाह होता रहता है। मक्खियां भिन भिनाती हैं; निद्रा नहीं आती। थूंक चिपचिपा, पीले रंगका और पूयके समान बन जाता है। जिह्वा लाल लाल भासती है; शौच शुद्धि नहीं होती और देह निस्तेज होजाती है। इस अवस्थामें न्यूसल्वरसन (नं० ६०६) के इंजेक्शन भी नहीं दे सकते। यदि रोगी नियम पालनकर लेवें, तो मात्र यही औषधि जीवन बचा सकती है।

वक्तव्यः—इस रसायनके सेवन कालमें जलपान और जलस्पर्श बिल्कुल बन्द है। तृषा लगने पर ईखका रस या मीठे अनारका रस पीवें। शौच जाने पर गरम जलसे शुद्धि करें फिर तुरन्त कपड़ेसे पोंछ लेवें। १४ दिन तक कमरेमेंसे बाहर न निकले। तेजवायु, अग्नि सेवन और सूर्यके तापका त्याग करें।

इस औषध सेवनका प्रारम्भ विशेषतः शीत काल या वर्षा ऋतुमें करना चाहिये। अति आवश्यकता पर अन्य ऋतुमें भी कर सकते हैं)।

भोजन-दूध या दूधभात अथवा जङ्गलके पशुओंके मांसका रस। लवण और अम्ल पदार्थका निषेध। इस तरह दिनमें निद्रा, रात्रिमें जागरण, व्यायाम और स्त्री समागमका भी त्याग करें। भोजन कर लेने पर ताम्बूल कपूर मिला हुआ लेवें। इस औषध सेवनसे मुँह आजाता है। उसके लिये पञ्चवल्कलके क्वाथसे बारबार कुल्ले करते रहें। पान खांय। खदिरादि वटी मुँहमें रखें या चमेली (जातीपत्री) के पान चबावें। १४ दिन पूरा होने पर गरम जलसे स्नान करावें।

इस तरह पथ्य पालन करते रहनेसे शरीर स्वस्थ होजाता है। मंजिष्ठादि अर्कके हेतुसे दिनमें २–३ दस्त होते रहते हैं। एक सप्ताह बाद दाह शमन, निद्राकी उत्पत्ति (किन्तु मुखपाककी वृद्धि) आदि लक्षण प्रतीत होते हैं। दो सप्ताह पूरे होने पर क्षुधा प्रदीप्त होजाती है। फिर आवश्यकता रहे तो, आरोग्यवर्द्धनी सुबह शाम मंजिष्ठादि अर्कके साथ देते रहनेसे थोड़े ही समयमें मुखमण्डल तेजस्वी बन जाता है।

५. सबीरमल्ल पुष्प

विधिः—रसकपूर और सोमल १–१ तोले, कपूर २ तोले लेवें। सबको मिला डमरू यन्त्रमें भर, अच्छी तरह संधि लेपकर, सुखाकर चूल्हेपर चढा ४ घण्टे मंद और मध्यम अग्नि देकर पुष्प उड़ालेवें। फिर स्वांगशीतल होनेपर यन्त्र खोल, ऊपरकी हांडीमें लगे हुए पुष्पको निकाल बोतलमें भरलेवें।

मात्रा — ½ से ¾ रत्तीतक मुनक्का या कैपसूलमें रखकर निगल लेवें। ७ दिन तक दिनमें १ बार सुबह।

उपयोग —यह सबीरमल्ल पुष्प फिरंग रोगको दूर करनेमें उत्तम औषधि है। नया और पुराना रोग सबको यह नष्ट करता है।

सूचना —इस पुष्पके सेवन कालमें दूध, दही और उनमें बने हुए पदार्थ, खटाई और नमक नहीं खाना चाहिये। रोगी शक्कर मिले हुए दलिये या हलवापर रहजाय तो सत्वर लाभ हो जाता है।

६. सबीर वटी (केशरादि वटी)

विधि —शुद्ध सबीर (रसकपूर), केशर, लौंग, श्वेतचन्दन, प्रत्येक ४-४ तोले और कस्तूरी ६ माशे लें। पहले रसकपूरको खरल करें। फिर केशर-कस्तूरी मिला-कर नागरबेलके पानके रसमें खरल करें। पश्चात् लौंग और चन्दनका चूर्ण मिला नागरबेलके पानके रसमें १ दिन मर्दन कर १-१ रत्तीकी गोलियां बनालेवें।

(श्री प० यादवजी त्रिकमजी आचार्य)

मात्रा —१ से २ गोली प्रात साय निगल कर ऊपरसे गरम करके शीतल किया हुआ, मिश्री मिला गोदुग्ध पिलावें।

उपयोग—यह वटी फिरंग और उसके विषसे उत्पन्न विविध विकार, मांसगत व्रण, नेत्ररोग, अर्बुद भगदर, ग्रन्थि, जड़ता, तन्द्रा, सन्धिवात और वातनाड़ियोंकी विकृति होकर पक्षवध या कलायखञ्जके समान लक्षण उत्पन्न होना आदि विकारोंपर अच्छा लाभ पहुँचाती है। निर्बल हृदय और अति नाजुक प्रकृति वालोंको रसकपूरके अन्य योग देनेकी अपेक्षा यह वटी विशेष हितावह है।

पथ्य —इस रसायनके सेवन समयमें खटाई, मिर्च, हींग, राई आदि गरम मसाले तथा बैंगन, सरसों, मूली और खरबूज, खर्बूजाका शाक नहीं खाना चाहिये।

७ उपदंशदावानल

विधि —हिंगुल, हरताल, सोमल, मैनसिल, रसकपूर, दालचिकना और नीलाथोथा ये ७ औषधियां ८-८ तोले लेकर आंडी अथवा जलानेपर जल जाय ऐसी तेज शराबमें १२ घण्टे खरल कर एक टिकिया बनावें। फिर मिट्टीकी छोटी छोटी दो हांडी समान मुखवाली लें। उनके मुँहको पत्थर पर जलडाल घिसकर चिकना बनालें। फिर एक हांडी पर दृढ़ कपड़मिट्टी करें। उस कपड़मिट्टीकी हुई हांडीमें रसायनकी टिकिया रख, ऊपर दूसरी हांडी औंधी रख दोनोंके मुखोंको मिलाकर मुखमुद्रा करें। सूखने पर उमरु यन्त्रको चूल्हेपर चढ़ाकर नीचे बेरकी लकड़ीकी आंच चावल सिजोनेके समान ४ प्रहर तक देवें। बार बार ऊपर गीला कपड़ा बदलते रहे। स्वाङ्ग शीतल होने पर ऊपरकी हांडीमें लगा हुआ पुष्प निकाल, पुनः नीचे रही हुई औषधिमें मिलाकर

शराबके साथ खरल करके पुष्पको उडावें। इस तरह ७ बार करें। अन्तिम समय उड़े हुए पुष्पों और नीचेकी औषधिको अलग अलग शीशीमें भरलेवें। हाँडीमे नीचे रही हुई औषधिको पुनर्नवाके रसमे ३ दिन खरलकर १—१ रत्तीकी गोलियां बना लेवें।

(र० यो० सा०)

मात्राः—पुष्प १ से २ चावल तक केपसुल, घी, मक्खन या हलवेमें रखकर रोज प्रातःकाल निगल जायँ। इसतरह ७, १४ या २१ दिन तक लेवें। गोलियोंका सेवन कराना हो, तो १—१ गोली पुनर्नवाके १ तोले कल्क या स्वरसके साथ २१ दिनतक देवें।

सूचनाः—पुष्प निगल जाय। दांतोंको लग जानेपर दांत गिरजाते हैं।

उपयोगः—यह रसायन असाध्यसे असाध्य उपदंश रोगको भी दूर कर देता है। भोजनमें केवल गेहूं+चनेकी रोटी, घी शक्करके साथ दें और कुछ भी न देवें। कदाच कब्ज रहे, तो निम्न विरेचन क्वाथ देवें।

विरेचनक्वाथ—गुलाबके फूल, काली मुनक्का और सनाय, तीनों २—२ तोले मिला कूट ४० तोले जलमें औटाकर १० तोले शेष रहने पर रात्रि को सोते समय पिला देवें। इससे सुबह तक २-३ दस्त आजायेंगे। आवश्यकता पर इस क्वाथ का व्यवहार करें।

उपदंश रोगके उपद्रव नाड़ी व्रण, गुदशूक, वद आदि चाहे जितने बढ़ गये हों, रक्त चाहे जितना दूषित होगया हो, सब विकारों सह उपदंशका निवारण होकर पुरुषत्वकी प्राप्ति होजाती है।

अर्शके मस्सेको नष्ट करनेके लिये शीशेकी सलाईको मक्खनसे चिकनी कर इस पुष्प पर फिरावें। जितनी औषधि लगजाय, उतनीको मस्से पर दिनमें एक समय लगावें। ४-५ दिन तक लगानेसे मस्से फूल जाते हैं। फिर खट्टी छाछमें गेहूँके दलियेको पका पुल्टिस बनाकर बांधनेसे सब मस्से मुर्दार होजायेंगे। पश्चात् उसे कैंचीसे काट दें अथवा वे स्वयमेव कुछ दिनमें निर्जीव होकर गिर जायेंगे।

ऊपर कही हुई औषधिकी गोलियोंका प्रयोग कण्ठमालके रोगी पर करनेसे २१ दिन में रोग निवृत्त होजाता है। एवं ये गोलियां नपुंसकता पर देनेसे पुरुषत्वकी प्राप्ति हो जाती है।

८. उपदंशवनकुठार

विधिः—जमालगोटा और एरण्डबीजकी गिरी ७-७ नग, टोपी उतारे हुए ताजे भिलावे ५ नग, पुराना गुड़ १॥ तोला, काले तिल १ तोला और दालचिकना १ माशा लेवें। पहले भिलावे और तिलोंको मिलाकर भिलावेका अंश मालूम न हो, तब तक कूटें। एरंडबीज और जमालगोटाको मिलाकर कूटें। दालचिकनेको १ प्रहर तक खरल में मर्दन करें। फिर सब को मिलावें। अच्छी तरह मिल जाने पर गुड़ डालकर कूटें।

(र० यो० सा०)

११. विमर्दित नील धावन

विधि —नीलाथोथा १ तोला, फिटकरी २ तोले और कपूर २ तोला ले। इन सबको पृथक् पृथक् पीसकर बोतलमें भरकर जल बना लेवें। फिर उस अर्कमें २०० तोले बाष्पजल मिला लेनेपर विमर्दित नील धावन तैयार होता है। (आ० नि० मा०)

उपयोग —उपदंशजनित लिङ्गशोथ होनेपर इस नील धावनकी २-४ बूंद डाले अथवा फोहा रखें और सुपारी पर सूजन न हो तो पिचकारी लगावें। इस औषधमें दाह होता है। यह सहन न हो सके तो और जल मिला लेना चाहिये। यह धावन सड़े हुये घावोंको धोनेके लिये भी उपयोगी है। मंद प्रवाही बनाकर नेत्रमें भी इसकी बूंदें डाली जाती हैं।

१२ उपदंशहर धूम्र

प्रथमविधि —हिंगुल ६ माशे, सोहागा, अकलकरा और मोम १०-१० माशे लेवें। पहले मोम गलाकर शेष औषधियोंका कपड़छन चूर्ण डालकर बेरकी गुठलीके समान गोलियां बना लेवें। (र० यो० सा०)

उपयोग —प्रातःकाल चिलममें बबूल (नीम) के कोयलेकी अग्नि पर एक गोली रखकर धूम्रपान करनेसे उपदंशरोग नष्ट हो जाता है। भोजनमें जौकी रोटी और घी। नमक नहीं खाना चाहिये। रात्रिको नागरबेलका पान देवें। इस तरह १४ दिन पथ्य पालन करनेपर फिरङ्ग रोगका निवारण होजाता है।

सूचना —धूम्रपान करनेके पश्चात् १० सेर शीतलजल लेकर रोगीको धीरे धीरे कुल्ले करनेको कहे। कुल्ले कर लेनेसे बहुत विष निकल जाता है और दांतोंको भी बाधा नहीं पहुँचती।

द्वितीयविधि —हिंगुल आधा तोला और अकलकरा २ तोलेको मिलाकर चूर्ण बना लेवें। फिर इसकी १४ मात्रा बना लेवें।

उपयोग —प्रातः सायं दिनमें दो बार कपड़ा ओढ़ाकर १-१ पुड़ीका धुँआ लेनेसे ३ से ७ दिनके भीतर उपदंशरोग नष्ट होजाता है। ७ दिन तक भोजनमें मात्र गेहूँकी रोटी और घी देवें। फिर ७ दिन तक गेहूँकी रोटी, शक्कर और घी देवें। बादमें इच्छानुसार भोजन करें। कितनेक चिकित्सक तमाखू भी दो तोले इस धूममें मिला लेते हैं। तमाखूके व्यसनीके लिये तमाखू मिला लेना हितकर है।

वक्तव्य —मुख, नाक, नेत्र और कानको न ढकें।

१३ उपदंशहर वटिका

विधि —सत्यानाशीके मूलकी छाल, छोटी इलायचीके दाने, सफेद कत्था, तीनोंको सममाग मिला सत्यानाशीके रसमें ६ घण्टे खरलकर १-१ रत्तीकी गोलियां बाँधके चूर्णमें डालते जायं।

मात्राः—२-२ रत्ती दिनमें ३ बार जलके साथ देवें।

उपयोगः—यह उपदंशहर वटी नये उपदंश रोग पर अच्छा काम देती है। थोड़ेही दिनमें रोग दूर हो जाता है। रोगीको भोजनमें मात्र दूध भात देना चाहिये।

१४. रक्तशोधक अर्क

प्रथम विधिः—चोबचीनी, चिरायता, गोरखमुण्डी, सारिवा, उशबा, उन्नाब, मजीठ, गिलोय, नीमकी अन्तरछाल और पित्तपापड़ा इन १० औषधियोंको १०-१० तोले लेकर जौकूट चूर्ण करें। फिर १० सेर जलमें शामको भिगो देवें। दूसरे दिन ५ सेर अर्क खेंच लेवें। उसमें ५ तोले पोटाश आयोडाइड मिला लेवें।

(वैद्य अर्जुनसिंहजी)

मात्राः—आध आध औंस समान जल मिलाकर दिनमें ३ बार देवें।

उपयोगः—यह अर्क मूत्रल, कीटाणुनाशक, विषघ्न और उत्तम रक्तशोधक है। जीर्ण फिरंग रोग, सुजाक या अन्य हेतुसे होनेवाले रक्तविकार, त्वचापर लालकाले धब्बे, संधिवात, फोड़े, फुन्सी, कुष्ठ, वातरक्त, गलगण्ड (Goitre), शीतपित्त आदि रोग थोड़े ही दिनोंमें दूर हो जाते हैं।

धमनियोंकी दीवार कठोर (Arterio Sclerosis) होनेसे रक्तदबाववृद्धि होती हो, तो उसे यह अर्क कम कराता है।

सूचनाः—रोगीको चाहिये कि नमकका त्याग करें। यदि रोगी गेहूँ-चनेकी रोटी, घी, दूध और शक्करपर रह जाय, तो जल्दी लाभ पहुँचता है।

द्वितीय विधिः—चोपचीनी, उशबा, काली अनन्तमूल, सनाय, सौंफ, हरड़का छिलका, गोरखमुंडी, बीजनिकाले हुए उन्नाब, गुलाबके फूल, इन्द्रायनकीजड़, छोटेबेरकी जड़की छाल, मजीठ, रक्तचंदन और असगन्ध, इन १४ औषधियोंको १-१ तोला और लौंग, दालचीनी, छोटी इलायचीकेदाने और केशरको ३-३ माशे लेवें। सबको कूट लेवें। फिर ८ गुने जलमें मिलाकर अर्क निकाल लेवें। अथवा चतुर्थांश क्वाथ कर क्वाथसे चौथा हिस्सा शहद मिलाकर बोतलमें भर लेवें।

वक्तव्य—अर्क निकालनेके समय केशरको कपड़ेमें बांध अर्क निकलनेकी नली के पास बांध देवें। जिससे अर्कमें केशरके गुण, गन्ध, रंग और स्वाद आजाय।

मात्राः—१-१ औंस दिनमें दो बार पिलाते रहें।

उपयोगः—इस अर्कके सेवनसे सब प्रकारके रक्तविकार दूर होते हैं। उपदंश, सुजाक, कुष्ठ, दूषित पारद सेवन, मकड़ी आदि जन्तुओंसे उत्पन्न रक्तदोष, अपथ्य-जनित विकार, जीर्ण त्वचारोग, पुराने सड़े हुए घाव, जीर्ण कोष्ठबद्धता और अग्निमांद्य आदि दूर होकर शरीर स्वस्थ और तेजस्वी बनता है।

(३६) पूयमेह

१. कन्दर्प रस

बनावट —शुद्धपारद, शुद्ध गन्धक, प्रवाल भस्म, सुवर्ण भस्म, सोनागेरु, वैकान्तभस्म, रौप्य भस्म, शंख भस्म और मोती भस्म इन ६ औषधियोंको समभाग लेवें। पहले पारद गन्धककी कज्जली करें। फिर शेष भस्म आदि मिलाकर बड़के अङ्कुरों के क्वाथकी ७ भावना देकर २-२ रत्तीकी गोलिया बना लेवें। (मै० र०)

मात्रा —१-१ गोली त्रिफला क्वाथ, तुलसीका स्वरस, अर्जुन छालके क्वाथ, बबूलके पत्तोंके स्वरस या शीतलमिर्चके क्वाथके साथ दिनमें ३ बार देवें। इनमें से किसी एक अनुकूल अनुपानके साथ सेवन करावें।

उपयोग —इस कन्दर्प रसके सेवनसे औपसर्गिक मेह (सुजाक) जनित विष और कीटाणु नष्ट होकर शरीर स्वस्थ हो जाता है।

२. औपसर्गिक मेहहर मिश्रण

बनावट —रौप्यभस्म १ तोला, प्रवालपिष्टी ४ तोले और अमृता सत्व ४ तोले मिला लेवें।

मात्रा —४ से ८ रत्ती तक दिनमें २ ३ बार मलाईके साथ।

उपयोग —इस मिश्रणके सेवनसे पूयमेहजनित जीर्ण विकार दूर होते हैं। सुजाकके हेतुसे उत्पन्न मूत्रप्रसेक नलिकामें प्रदाह, पेशाब करनेके समय जलन होना, बूंद बूंद मूत्र टपकना, कुछ कुछ पूय आना, सांधों सांधोंमें दर्द होना, नेत्रदृष्टि निर्बल होजाना, स्वप्नदोष, शुक्रकी उष्णता शुक्रका पतलापन और मद मद ज्वर बना रहता आदि विकार थोड़े ही दिनोंमें दूर होजाते हैं।

३. औपसर्गिक मेहहर योग

(१) गीला बिरोजा २० तोलेको एक कपड़ेकी पोटलीमें बांधें। फिर एक बड़ी हांडीमें ४ सेर गोमूत्र भर उसमें दोला यन्त्र विधिसे बिराजाको पकावें। चतुर्थांश गोमूत्र रहनेपर हांडीको उतार बिरोजाको निकाल लेवें। पश्चात् एक परातमें डाल २१ बार शीतल जल मिला मिला कर धोवें। बादमें छोटी इलायचीके दाने और मिश्री ५-५ तोले मिला लेवें।

उपयोग —३ से ६ माशे प्रात काल कच्चे दूधके साथ सेवन करानेसे थोड़े-ही दिनोंमें नया सुजाक रोग दूर हो जाता है। रोग प्रबल होने पर औषधि सध्याको भी दूसरी बार देना चाहिये।

सूचना —इस औषधके सेवन कालमें खटाई, गुड़, तेल, लाल मिर्च और मैथुनका त्याग कर देना चाहिये, ब्रह्मचर्यका आग्रहपूर्वक पालन कराना चाहिये।

तथा रसतन्त्रसारमें कहे हुए मूत्रशोधक क्वाथकी पिचकारीसे मूत्र नलिकाको दिनमें २-३ बार धोते रहना चाहिये।

(२) पलाश मूलका अर्क और गिलोयका स्वरस १-१ तोला, शहद ६ माशे और मिश्री ३ माशे मिलाकर सुबह और इसी तरह शामको भी लेवें। १५-२० दिन लेने पर जो नया सुजाक विशेष नहीं फैला है, वह दूर हो जाता है। एवं यह जीर्ण सुजाकके लीन विषको भी जलाकर नष्ट कर देता है।

(३) लाल मिर्चके बीज को कूटकर कपड़ छान चूर्ण करलें। इसमेंसे दिनमें २-३ बार ४ से ६ माशे चूर्ण जलके साथ पीस ठण्डाईकी तरह छान कर पिलाते रहनेसे एक सप्ताहमें नया सुजाक शमन हो जाता है। यह निर्भय, सरल और उत्तम उपाय है।

(४) देशी लाल मोटी सूखी मिर्च ५ तोले तथा हरी दूब और खस १-१ तोला लेवें। मिर्चके डंठलको तोड़ दें और भीतरसे बीज निकाल दें। फिर मिर्चको १ सेर जलमें मिला मिट्टी या कांचके बर्त्तनमें रात्रिको भिगो देवें। सुबह मिर्चोंको मसल कर खूब धोवें। जबतक जल साफ न निकले, तब तक धोते रहना चाहिये। फिर तीनों औषधियोंको मिला सिलपर लोढ़ीसे चटनीकी भांति पीसें। पश्चात् ताजे आध सेर दहीमें मिलाकर रोगीको पिला देवें।

प्रातः काल पुनः मिर्चको जलमें भिगो दें। फिर सायंकालको उपरोक्त विधि से घोल तैयार कर पिला देवें। इस तरह दोनों समय देते रहनेसे थोड़े ही दिनोंमें भयंकर बढा हुआ सुजाक रोग निवृत्त हो जाता है।

यह औषध अत्यन्त साधारण ज्ञात होती है और इसकी मात्रा अत्यधिक प्रतीत होती है। परन्तु यह हमारा हजारों बारका परीक्षित प्रयोग है।

(श्री० डा० रामजीवनजी त्रिपाठी)

डाक्टर साहब इस औषधके सेवनके साथ तीसरे तीसरे दिन पर सोल्युशन ट्राइपा फ्लेविन (Solution Trypa Flavin) १० सी०सी० का इन्जेक्शन शिराओं (Intra-venous) में करते रहते हैं। इस इन्जेक्शनसे मलमूत्र शुद्ध होने पर पुनः सूची वेध करते हैं। यदि यह सूची वेध क्रिया न की , तो रोग -शमनमें कुछ दिन अधिक लगते हैं।

इसरोगमें मूत्रप्रसेक नलिका पूयपूर्ण बनी रहती है। इस हेतु से दिनमें २-३ बार उसे धोते रहना चाहिये। अन्यथा भीतर शोथ और घाव बढ़ जायेंगे। फिर दोनों ओरकी वंक्षणीय ग्रन्थियों (Inguinal glands) का प्रदाह (Gonorrheal Bubo), गुद द्वारमें वेदना, पौरुष ग्रन्थिका प्रदाह (Prostatitis) और मूत्र-कृच्छ्रता आदि विविध उपद्रव (Cumplications) उपस्थित हो जायेंगे। अतः कांच की पिचकारी (Urethral) से निम्न कषाय द्वारा धोते रहना चाहिये।

मूत्रशोधक कषाय —हरड़, बहेड़ा, आंवला, फिटकरीका फूला, सोहागेका फूला और रसौंत, ये ६ औषधियाँ २-२ तोले, नीलाथोथा और कपूर १ १ तोला, अफीम ६ माशे तथा जल ८ सेर लेवें। पहले त्रिफलाको कूट जलमें उबालें। जल उबलने पर फिटकरी और सोहागेको मिलावें। फिर अच्छी तरह उबल जाने पर बरतनको उतार लेवें। रसौंतको थोड़े अलग जल में मिलावें, उसमें नीलाथोथा और कपूरको पीसकर मिला देवें। पश्चात् सबको छान मिलाकर बड़ी बोतलमें भर लेवें।

इस कषायमेंसे थोड़ा थोड़ा निकाल २-२ पिचकारी दिनमें ३ समय मूत्रनलिकामें लगाते रहनेसे मूत्रनलिकामें सगृहीत पूय दूर हो जाता है। प्रदाह शमन होता है, घाव भर जाता है और कीटाणु नष्ट हो जाते हैं। केवल तीन रोजमें ही यह औषध अपना चमत्कार दर्शा देती है और थोड़े ही दिनोंमें सुजाक रोगको दूर कर देती है।

(श्री डा० रामजीवनजी त्रिपाठी)

इस धोनेकी क्रियाके साथ डाक्टर साहब डाक्टरी यन्त्रद्वारा सेककी क्रिया भी करते रहते हैं। सामान्य रीतिसे एक बर्तनमें निवाया जल भर कर उसमें मूत्रेन्द्रियको प्रातः सायं १०-१० मिनिट डुबो रखनेसे भी अच्छा लाभ पहुँच जाता है।

४. पूयमेहहर गुटिका

प्रथमविधि —१ तोले हिंगुल तथा सूखा गन्धाबिरोजा, कुन्दरू, रूमीमस्तगी और मैंसागूगल १०-१० तोले लें। सबको मिलाकर कूटें। फिर किंचित् जल मिलाकर १-१ रत्तीकी गोलिया बना, सेलखड़ीके चूर्णमें डालते जायं। जिससे एक दूसरीको लगकर न मिल सके।

उपयोग —२ से ४ गोली जलके साथ दिनमें ३ बार देते रहनेसे ४-७ दिनमें सुजाक दूर होजाता है। जीर्ण रोगमें प्रातः सायं २-२ गोली एक मास तक सेवन करानी चाहिये।

द्वितीयविधि —गन्धाबिरोजा, लोहबान, रूमी मस्तगी और मैंसागूगल, इन सबको सम भाग मिला, थोड़ी बूंद जल डाल खरलकर १-१ रत्तीकी गोलियां बनावें और उसे सेलखड़ीके चूर्णमें डालते जाय। (आ० नि० मा०)

मात्रा —२-२ गोली दिनमें ३ बार जलके साथ।

उपयोग —यह गुटिका नये और पुराने पूयमेहको दूर करती है। मूत्रदाह और मूत्रमें पूय आना दोनों उपद्रव २-३ दिनमें ही शमन होजाते हैं।

इस औषधके सेवनसे नूतन रोगमें थोड़े ही दिनोंमें लाभ होजाता है, परन्तु जीर्ण रोगों पर कभी कभी ४-६ मास तक सेवन कराया जाता है।

५. वंग योग

विधि —शुद्ध वंग और शुद्ध पारद २-२ तोले, इनको मिट्टीके पात्रमें डालकर

अग्नि पर गला लें। जब द्रव होजाय तब २ तोले शुद्ध हिंगुलोत्थ पारद तत्काल ही खरलमें डालकर ४ प्रहर तक सतत घोटें। जब भली प्रकार मिश्रण होजाय, तब टानिक एसिड (माजूका सत्व) ८ तोले मिलाकर पुनः ४ प्रहर तक घोटें। एक जिगर होजाय तब शीशीमें भरलें।

मात्राः—२-२ रत्ती प्रातः सायं मक्खनके साथ दें।

पथ्यः—गाय अथवा बकरीका दूध, जो की धानीका दलिया या मात्र चावल देवें। एक सप्ताहसे २ सप्ताह पर्यन्त इसका सेवन करें। फिर इसको बंद कर २ सप्ताह तक निम्नलिखित चंदनादि तेल योग २०-२० बूंद प्रातः सायं जलके साथ देवें।

चन्दनादि तेल योगः—असली चन्दनका तेल १ तोला, तेल बालसम कोपैबा (Balsam Copaiba) १ तोला, क्युबेब आइल १ तोला, इन तीनोंको चीनीके खरलमें डालकर फिर लाइकर पोटास थोड़ा थोड़ा डालते जाँय और घोटते जांय घुटते घुटते सफेद रंगका इमलसन बन जाय तब पोटास डालना बंद करें। तत्पश्चात् शीशीमें भर कर रखें।

उपयोगः—ये उपरोक्त दोनों प्रयोग अजमेरके यशस्वी चिकित्सक स्वामी गणे-शानन्दजीके अनुभूत हैं। इनके द्वारा पुराने सुजाकके कुर्रे से उत्पन्न मूत्राघात और मूत्र-कृच्छ्र बिना कैथीटरके लाभ होते देखा गया है।

---

(४०) कुष्ठ

१ कुष्ठहर रस

विधिः—शुद्ध पारद २ तोले, हरताल पुष्प, छोटी पीपल और धतूरेके शुद्ध बीज ३-३ तोले, शुद्ध बच्छनाग १॥ तोला और कालीमिर्च ४ तोले लें। पहले पारद हरताल मिलाकर एक जीव करें। फिर विष मिलावें। तत्पश्चात् शेष औषधियोंका कपड़छान चूर्ण मिलाकर निम्बमद (नीमकी अन्तरछाल), धतूराके पान और अदरखके रसके साथ १२-१२ घण्टे खरलकर १-१ रत्तीकी गोलियां बनावें। (र० यो० सा०)

मात्राः—१ से २ गोली दिनमें २ बार मंजिष्ठादि अर्क, खदिरारिष्ट या रोगानु-सार अनुपानके साथ देवें।

उपयोगः—कुष्ठकुठार कीटाणुनाशक, रक्तप्रसादन, ज्वरघ्न, दीपन, पाचन, वातशामक और कफघ्न है। यह वात कफ प्रधान सब कुष्ठोंको दूर करता है।

गलतकुष्ठ बढ़ने पर हाथ पैरकी अंगुलियोंके पर्व और कान नाक आदि अवयव गलने लगते हैं। उनमेंसे रस टपकता रहता है। मांस आदि धातुओंकी अपक्रान्ति

हुई दुर्गंध निकलती रहती है। ऐसी अवस्थामें कीटाणुओंका नाशकर बढ़ती हुई अवस्थाको तुरन्त रोक देने और उपस्थित विकारको जला देनेकी आवश्यकता है। ये दोनों कार्य कुष्ठहर रस सफलता पूर्वक कर देता है। एवं पथ्यपालनसह सेवन करने पर एक दो मासमें देहको स्वस्थ और हरतालसदृश तेजस्वी बना देता है।

यदि इस अपक्रान्तिकालमें ज्वर भी आ जाता हो, तो उसे भी यह दूरकर देता है। मलावरोध रहता हो तो अनुपान लघु मजिष्ठादि क्वाथ या अन्य उदरशोधक देना चाहिये। इसमें प्रधान औषधि हरताल पुष्प है। उसके साथ विषका रासायनिक सम्मिश्रण होता है। जिससे यह कुष्ठ कीटाणुओंके अतिरिक्त पूयोत्पादक कीटाणुओंका नाश करके पूयको सुखा देता है और नयी उत्पत्तिको बन्द कराता है। इस हेतुसे पूय-प्रधान रोग-नाड़ी व्रण, भगंदर, विद्रधि, फूटा हुआ अर्बुद, अपची, राजयक्ष्मामें पूयप्रधान कफस्राव और सुजाक आदि रोगोंपर यह सफलतापूर्वक व्यवहृत होता है।

सुजाक रोगकी उत्पत्ति एक ओर उभरे हुए गोल और दूसरी ओर समान गोनोकोकस कीटाणुओं (Neisseria Gonorrhoeae) के संक्रमणसे होती है। इस रोगमें मूत्रप्रसेकनलिकाका प्रदाह होकर क्षत हो जाता है। मूत्रत्यागमें भयंकर जलन होती है। इस आशुकारी अवस्थामें ही यह रस शहद या शक्करके साथ दिनमें २ बार प्रयुक्त करने पर पूयप्रदाह, क्षत और जलन आदिको नष्ट करके ३ ४ दिनमें ही रोगको दूर कर देता है। रोगारम्भ हुए १५ दिन हो जानेसे कीटाणु विष रक्तादि धातुओंमें प्रविष्ट होगया हो तो गन्धक रसायन ४ ६ रत्ती इस रसके साथ मिला देनेपर रक्तप्रसादन क्रिया साथ साथ होती है। यदि सुजाक रोग जीर्ण होगया हो तो कुष्ठकुठार और गन्धक रसायन मिश्रण चौथाई मात्रामें १–२ मास तक देते रहनेपर धातुओंमें लीन विषको जलाकर देहको नीरोगी बना देता है। नाड़ीव्रण, भगंदर आदि विकार फिरंगके उपद्रवरूप हों या स्वतन्त्र उत्पन्न हुये हों तो दोनों प्रकारोंपर यह रस चमत्कारिक लाभ पहुँचाता है। अन्तरविद्रधि, व्रण अथवा अर्बुद होनेपर अथवा वृक्क स्थानमें क्षत होनेपर उसमेंसे पूय रक्तमें शोषित होता है। ऐसी अवस्थामें कितनेक रोगियोंको पूय-ज्वर (Pyaemia) आ जाता है। उसमें दिनमें १-२ बार मलेरियाके समान शीत लगना और फिर स्वेद आकर उत्ताप कम होजाना आदि लक्षण उपस्थित होते हैं। उस अवस्थामें मुख्य रोगकी औषधिके साथ कुष्ठकुठारकी योजना करनेसे ज्वरघ्न, पूयहर गुण दर्शाकर लाभ पहुँचाता है।

२ स्वर्णक्षीरी रस

विधि —सत्यानाशीको जड़ २० तोलेको दोला यन्त्रसे ३२० तोले मट्ठेमें उबाले। फिर धोकर ३२० तोले दूधमें दोला यन्त्र विधिसे पाचन करें। मट्ठा और दूध हाँडीमें थोड़े थोड़े परिमाणमें डाले। जैसे जैसे जलते जाय, वैसे वैसे डालते रहें।

कूटकर कपड़छान चूर्ण करें। पश्चात् यह चूर्ण २० तोले, कालीमिर्च ८ तोले और रससिन्दूर ४ तोले मिलाकर मर्दन कर लेवें। (शा० सं०)

मात्राः—२ से ४ माशे तक मंजिष्ठादि क्वाथ या जलके साथ प्रातःकाल देवें और सहन हो सके तो रात्रिको भी देवें।

उपयोगः—यह रसायन रक्तशोधक और कीटाणुनाशक है। इस रसका २ मास तक सेवन करनेपर सुप्त कुष्ठ (सुन बहरी) नष्ट हो जाता है।

३. गलत् कुष्ठारि रस

विधिः—सोमल, रसकपूर, सिंगरफ और दालचिकना १–१ तोला और जमालगोटा (ऊपरसे छिलके और भीतरसे जिवी निकाले हुए) ४ तोले लेवें। सबको खरलमें मिला कर दो अण्डों की जरदी डालकर मर्दन करें। बादमें एनेमल (लोहेके सफेदी लगे हुए) के बर्तनमें डाल निर्धूम उपलोंकी मन्द अग्निपर चढ़ा कर लकड़ीसे चलाते रहें। जरदी पक कर तैल छूटने लगे, तब पात्रको उतार लें। शीतल होनेपर औषधिको खुले मुँहकी मजबूत डाट वाली शीशी में भर लेवें।

(स्वा० जगदानन्दगिरिजी)

मात्राः—१-१ रत्ती प्रातः काल १० सालके पुराने गुड़के साथ अथवा २-४ मुनक्कामें रखकर निगलवा देवें। दांतको नहीं लगनी चाहिये।

सूचनाः—इस औषधिके सेवनसे पहले रोगीको निम्न विरेचन (मुंजिस) देना चाहिये।

मुंजिसः—गुलाबके फूल और कूटी सौंफ १०–१० तोले मिलाकर ५ सेर जलके साथ उबालें। चतुर्थांश जलशेष रहने पर उतार मसल कर छान लेवें। इस जलमें से आधे जलको रहने दें और आधे जलमें २ छटांक चांवल डाल पका कर पतले चांवल बना लेवें। इसमें मुनक्का, कालीमिर्च, शक्कर और घी मिला कर खा लेवें। शामको शेष जलमें उपरोक्त विधिसे चावल बनाकर सेवन करें। ४-६ रोजमें उदर नरम हो जाने पर सुबह उपरोक्त औषधि लेवें। शामको नमकीन खिचड़ी बिना घी मिलाये खायँ। उसदिन भोजन एक ही समय दिया जायगा। पुनः दो दिन तक उपरोक्त विधिसे मुंजिसके क्वाथमें बनाये हुए मीठे चावल खायँ। चौथे रोज औषधि लेवें। इसतरह ५–७ समय औषधि लेनेसे सब प्रकारके गलत् कुष्ठ और विद्रधि दूर होते हैं।

उपयोगः—विशेषकर यह रसायन उपदंशज गलत् कुष्ठ, उपदंशजनित रक्तविकार, न सूखने वाले पूयमय विद्रधि आदिको २१ दिनके भीतर सुखा कर दूर करते हैं। यह गलत् कुष्ठके घावको बहुत जल्दी सुखाता है।

कान, नाक, अंगुलियां आदि गल गये हों, देह बिल्कुल सड़गया हो, स्थान स्थानसे रस चूता रहता हो, मक्खियां भिन भिना रही हों, देहमेंसे मुर्देके समान दुर्गन्ध

निकलनेके हेतुसे दूसरे व्यक्ति पास नहीं आसकते, रोगी भयकर कष्ट भोग रहा हो, ऐसी परिस्थिति वाले अनेक रोगियोंको इस रसायनने जीवन दान दिया है। यह स्व० स्वामी जगदानन्दजीका परीक्षित है।

सूचना — अनेक रोगी ४ रत्ती तक मात्रा सहन कर जाते हैं। ऐसा प्रयोग-दाताका कथन है। अधिक मात्रामें किसीको हानि न पहुँच जाय, इस विचारसे हमने मात्रा कम लिखी है।

औषध सेवन कालमें पहले घी नहीं देना चाहिये। मुञ्जिसके दिनोंमें तो देना ही पड़ता है किन्तु अनेक रोगियोंको जब दाह बहुत बढ़ जाता है, तब घी कुछ अंशमें देना ही पड़ता है। जब तक दाह अधिक न बढ़े, तब तक घी न देवें। मुञ्जिसके दिनोंमें ५-१०-१५-२० और ३० तोलेतक घी खिलाना पड़ता है। क्योंकि जुलाबसे पूर्व कोष्ठको स्निग्ध करनेके लिये स्नेहपानकी आवश्यकता होती है। अतः चावल मूँगकी खिचड़ी और घृत पाचन शक्तिके अनुसार देते रहना चाहिये। परन्तु जुलाबके दिन घृत देना वर्ज्य है। कुष्ठकुठार रसका एक पाठ रसतन्त्रसार प्रथमखण्डमें दिया है। वह भी गलत कुष्ठके ऊपर हितकारक है। उसकी अपेक्षा यह अति तीव्र है। अतः इसका प्रयोग अति सम्हालपूर्वक करना चाहिये।

४. वीरचण्डेश्वर रस

विधि — शुद्ध पारद, शुद्ध गन्धक, शुद्ध बच्छनाग लोह भस्म, बावची, हरड़, बहेड़ा, आवला नीमकी अन्तर छाल, चित्रकमूल, और गिलोय, इन ११ औषधियोंको समभाग लें। पहले पारद गन्धककी कज्जली करें। फिर लोह भस्म, बच्छनाग और शेष औषधियोंका कपड़छान चूर्ण क्रमशः मिला भांगरेके स्वरस और बावचीके क्वाथमें ३-३ दिन मर्दन कर २-२ रत्तीकी गोलियां बना लेवें। (र० रा० सु०)

मात्रा — १ गोली या अधिक, रोगी और रोगके बलानुसार जलके साथ दें।

उपयोग — यह वीरचण्डेश्वर रस ऋष्यजिह्वक और इतर सब कुष्ठोंका नाश करता है। एक मासमें ऋष्यजिह्व और ६ मासमें समस्त कुष्ठोंको नाश करता है।

ऋष्यजिह्वककी गणना सात महाकुष्ठोंमें की है। यह कुष्ठ वातपित्त प्रधान होता है। यह कठिन, किनारों पर लाल, मध्यमें काले रंगका, वेदनायुक्त और गायकी जिह्वाके समान खुरदरा होता है। इस कुष्ठ पर इस वीरचण्डेश्वरका निर्माण किया है।

ऋष्यजिह्वक (Lupusery thematosus) प्रायः बड़ी आयुमें होता है। प्रारम्भमें लाल या नीलाभ रक्त क्षत किञ्चित् उन्नत और किनारेयुक्त होता है। यह प्रायः नाक, गाल, कान और कण्ठपर होता है। यह कीलके सदृश मोटे शिरवाले, छोटे छोटे ??? सदृश कठोर छिल्केसे आच्छादित रहता है यह कभी व्रणोत्पत्ति और पाक नहीं करता। नीचे और नीचे गति करता है और बीचमें आच्छादनको शुष्क बनाता जाता है। यह अति दीर्घकाल स्थायी रोग है। इस रोगपर वीरचण्डेश्वर रसका सेवन करनेपर

लाभ पहुँचता है, नमकके त्याग और पथ्यपालन सह प्रयोग होनेपर बहुत जल्दी लाभ होजाता है।

वीर चण्डेश्वर-बावचीके चूर्णके साथ श्वेतकुष्टपर भी दिया जाता है।

सूचनाः—(१) मलावरोध रहता हो तो उसे दूर करनेके लिये उचित जुलाब देना चाहिये या आरोग्यवर्द्धिनी नं० २ का सेवन कराना चाहिये।

(२) आरोग्यवर्द्धिनी और वीरचण्डेश्वर दोनों कुष्ठोंपर हितकारक हैं। आरोग्यवर्द्धिनी में ताम्र और कुटकी हैं। अनेकोंसे ताम्र और कुटकी सहन नहीं होती। उनके लिये लोह और बच्छनागप्रधान यह वीर चण्डेश्वर हितावह है। इसमें बच्छनाग होनेसे कम मात्रामें अधिक कालतक देना चाहिये। अधिक मात्रा देनेसे बच्छनागके हानिकर लक्षण उपस्थित होते हैं।

५. अहिविध रस

विधिः—शुद्ध गंधक ६४ तोले, रस या वनौषधिसे मारित ताम्र भस्म और नाग भस्म ३२-३२ तोले को मिलाकर खरल करें। फिर उसमें १२ तोले कज्जली मिला बड़े पक्के घड़ेमें डाल ढक्कन लगा संधि स्थानपर गुड़+चूनेकी पट्टीसे अच्छी तरह बन्द करें। फिर चूल्हेपर चढ़ा ३६ घन्टे तक मन्द, मध्यम और तीव्र अग्नि दें। स्वांग शीतल होनेपर भस्मको निकाल लेवें। (मूलग्रंथकारने ताम्र और शीशेका पतरा लेनेको लिखा है किन्तु ताम्र और नागके अपक्व रह जानेका भय रहता है और भस्मसे अधिक गुण मिलेगा, ऐसा मान कर हमने भस्म मिलाई है।)

फिर बलवान अति पुष्ट युवा काले नागको क्लोरोफार्म सुंघाकर उसके उदर (मुँह) में ३२ तोले ताल चूर्ण भरें। ऊपर ४ तोले बच्छनागका चूर्ण भरें। पश्चात् पुनः ३२ तोले हरताल भर कर मुँहको बन्द करें। उसे १। मन जल रह सके वैसे बड़े घड़ेके भीतर गुड़+चूनाका लेप करें। ४ तोले बच्छनाग चूर्ण तथा बावची, मिलावां और इन्द्रजौका चूर्ण ६४-६४ तोले बिछावे। फिर सांपको चक्री सदृश बनाकर रखें। ऊपरसे आक और थूहरकी छोटी प्रशाखायें और घीकुंवारका गूदा ६४-६४ तोले डाल ढक्कन लगा गुड़+चूनेसे अच्छी तरह मुख बन्द करें। पश्चात् चूल्हेपर चढ़ा १ प्रहरतक चावल पकाने सदृश मन्दाग्नि दें। फिर १० प्रहर तक तेज अग्नि और अन्तमें १ प्रहर तक मन्दाग्नि देवें।

स्वांगशीतल होनेपर लोहेकी कड़ाहीमें १६२ तोले घी के साथ उक्त सर्प भस्म को डाल चूल्हेपर चढ़ाकर तेज अग्नि देवें। अच्छी तरह घृतादिका पाक होनेपर फिटकरी का फूला और सोहागे का फूला ८-८ तोले मिला उसमेंसे थोड़ा थोड़ा चूर्ण ३-४ बार डाल कुड़छीसे चलाते रहें। फिर कड़ाही के भीतर अग्नि लग कर सब घी जल जायगा।

स्वांग शीतल होनेपर ताम्र भस्म मिश्रण मिलानेसे अहिविध रस सिद्ध होता है।

(र० यो० सा०)

मात्रा—आध से २ रत्ती ७ दिनतक कालीमिर्चके चूर्ण और घृतके साथ दिनमें १ या २ बार दें। मात्रा क्रमशः २ रत्ती तक बढ़ावें।

सूचना—(१) भोजनमें नमक रहित जौका दलिया (घी शक्कर मिला सकते हैं) लेवें। नमक बिना न चल सके तो थोड़ा सैंधानमक लेवें।

(२) पूरा लाभ न हुआ हो, तो १५ दिन बाद पुनः दूसरी बार सेवन करें।

उपयोग—यह अग्निविध रस असाध्य गलत् कुष्ठ और तीनों दोषोंसे उत्पन्न, सारे शरीरमें व्याप्त प्रबल कुष्ठ को भी दूर करता है। इसके अतिरिक्त राजयक्ष्मा को भी यह नष्ट करता है। स्व० वैद्यराज हरि प्रपन्नजीने अनेक रोगियोंको यह रस देकर जीवनदान दिया था। वे औषध देनेके पहले संशोधन क्रिया द्वारा शरीरकी शुद्ध करा लेते थे।

६ तालकेश्वर रस

प्रथमविधि—हरताल शुद्ध, ताम्र भस्म, शुद्धमैनसिल, शुद्ध पारद, भिलावेके तैलसे शुद्ध किया हुआ गन्धक, सुवर्ण भस्म, लोहभस्म, शुद्ध वच्छनाग, ये ८ औषधियां १-१ तोला और अभ्रक भस्म ८ तोले लें। पहले पारद गन्धककी कज्जली करें। फिर हरताल, मैनसिल, वच्छनाग और भस्म क्रमशः मिला, ३ दिन नींबूके रसमें खरल करके गोला बनावें। इसे सुखा, शराव संपुटकर २॥ सेर गोवरीमें फूंक देवें। स्वांग शीतल होनेपर निकाल पीसकर बोतलोंमें भरलेवें। (र० यो० सा०)

मात्रा—१ से २ रत्ती दिनमें २ बार रोगहर अनुपानके साथ।

उपयोग—इस तालकेश्वर रसका सेवन पथ्य पालन सह ६ मास सेवन करने पर सब प्रकारके कुष्ठ नष्ट होजाते हैं। इनके अतिरिक्त ग्रहणी, कामला, पाण्डु, क्षय, कास, गुल्म और शूलरोग भी दूर होजाते हैं।

पथ्य—मूंग, मट्ठा, थोड़ा घी, भात और चौलाई आदिके शाक आदि। चना, गेहूँ, जौ आदि भी अनेक विकारोंमें पथ्य माने जाते हैं।

जिन कुष्ठ रोगियोंको ज्वर, कफवृद्धि, मेदोवृद्धि, वातप्रकोप, पाण्डु और प्रमेह आदि विकार हों या पहले फिरंग रोग होगया हो अथवा शारीरिक वजन घटता जाता हो, उन रोगियोंके लिये यह रसायन अच्छा लाभ पहुँचाता है।

मण्डल कुष्ठ (Lupus Vulgaris) रोग बाल्यावस्था या युवावस्थामें होजाता है। यह क्षय कीटाणुजन्य रोग है। इस रोगमें मण्डल (मृदुगांठे) बनते हैं। इन मण्डलों पर सलाका चुभोनेपर गढ्ढे होते हैं। मण्डल रक्तामपीत होते हैं। मण्डल लगभग गोल होते हैं। ये मण्डल व्रणोंमें रूपान्तरित होते हैं या इनका शोथ होता है। प्रारम्भावस्थामें ज्वर आता है। फिर श्लैष्मिक कला द्वारा तीव्रगतिसे देहको दूषित करता है। यह रोग हथेली, पैरोंके तल और गुह्य भागपर बहुधा नहीं होता। हाथ पैरोंमें कृत्रिम रक्तीपदकी प्राप्ति कराता है। यह तालकेश्वर रस आवला और बावचीके क्वाथके साथ इस रोगपर व्यवहृत होता है।

काकण (गलत् कुष्ठ-Leprosy) रोगके प्रारम्भमें संस्थान और रसादि धातुओंमें विकृति होती है। फिर ज्वर शीत—कम्प सह आता है। किसीको लाल ददौरे (उदुम्बर कुष्ठ) और किसीको रसमय फुन्सियां होती हैं। पश्चात् शून्य धब्बे मयकापाल कुष्ठ (Anesthetic Leprosy) त्वचाक्षय और केशहीनता अथवा मृदु या कठोर ग्रन्थियां होकर शोषित होती हैं अथवा व्रणोंमें रूपान्तरित होती हैं (कापालकुष्ठ), फिर मुखमण्डल स्फीत और विकराल बनता है। अनेकोंके देहमेंसे अति स्वदेस्राव होता रहता है। ऐसी विविध अवस्थाएं व्यतीत होनेपर पर्व आदि गलने लगते हैं। इस रोगकी अन्तिमावस्थामें भी तालकेश्वर रस यदि पञ्चकर्म करा लिया जाय और पथ्यका आग्रह पूर्वक पालन कराया जाय तो लाभ पहुँचा सकता है।

द्वितीयविधिः—शुद्ध हरताल, सुवर्णमाक्षिक भस्म, शुद्ध मैनशिल, शुद्ध पारा और सोहागेका फूला ४-४ तोले, शुद्ध गन्धक ८ तोले तथा ताम्रभस्म ८ तोले लें। पारद गन्धककी कज्जली कर, हरतालका कपड़ छान चूर्ण मिला कर मर्दन करें। फिर शेष औषधियाँ मिला नीमके पत्तोंके स्वरसकी भावना दें। गोला बना, सूर्यके ताप में सुखा, सराव सम्पुट कर, गजपुटके भीतर गड्ढा खोद उसमें सम्पुट रखकर मिट्टीसे अच्छी प्रकार दबा, ऊपर ९ सेर गोबरीकी अग्नि देवें। स्वाङ्गशीतल होनेपर निकाल, पुनः उसी तरह भावना देकर, गजपुटके नीचे गड्ढे (भूधरयन्त्र) में रख अग्नि देवें। इस तरह ६ पुट देवें। पश्चात् १६ तोले लोह भस्म (सोमल और हरतालमारित) तथा सब औषधियोंके वजनका २० वाँ हिस्सा शुद्ध वच्छनाग मिला नीमके पत्तोंके स्वरसमें ३ दिन खरलकर १-१ रत्तीकी गोलियाँ बना लेवें। (वै० सा० सं०)

मात्राः—१ से २ गोली भैंसके घीके साथ देवें अथवा बावचीका चूर्ण १ तोला, घृत १ तोला तथा शहद २ तोले मिलाकर, उसके साथ देवें।

उपयोगः—इस रसायनके सेवनसे सब प्रकारके कुष्ठ दूर होते हैं। यह रसायन शून्य कुष्ठ और गलत्कुष्ठमें भी अपना प्रभाव सत्वर दर्शाता है।

७. बाकुच्यादि चूर्ण

विधिः—बड़ी बावची और त्रिफला (हरड़, बहेड़ा, आँवला तीनों मिलाकर) ४०-४० तोले, वायविडङ्गके तण्डुल (गिरी) ८ तोले, शुद्ध शिलाजीत १४ तोले, शुद्ध पके भिलावें १०० नग, पुष्करमूल ४ तोले, लोह भस्म १२ तोले, फिटकरीका फूला २ तोले तथा तेजपात, नागरमोथा, पीपल, मुलहठी, चित्रकमूल, पीपलामूल, नागकेसर, बड़की छाल, कालीमिर्च और केशर, ये १० औषधियाँ १-१ तोला लें। सबको कूट कपड़ छान चूर्ण करें। फिर सबके समान मिश्री मिला लेवें (मिश्री सेवन कालमें मिलानेमें सुविधा अधिक रहती है। इसलिये हम पहले मिश्री नहीं मिलाते।)

(ग० नि०)

मात्रा —मिश्री सहित ६ माशेसे १ तोला तक जलके साथ देवें। भोजनमें आँवले मिश्रित मूंगका यूष, नमक रहित दें तो बहुत जल्दी लाभ पहुँचता है।

उपयोग —यह चूर्ण समस्त कुष्ठके नाशके लिये कहा है। इसके सेवनसे सब प्रकारके कुष्ट, ४ प्रकारके बद्ध गुद अर्श, श्वेतश्वित्र, आठ प्रकारके उदररोग, क्षय, मूत्रकृच्छ्र, पाण्डुरोग, कण्ठ विकार, सब प्रकारके प्रमेह, उन्माद, ज्वर, नेत्ररोग, नासारोग, पांच प्रकारके गुल्म, ७० प्रकारके वातरोग, पित्तप्रकोपसे उत्पन्न ४० रोग और २० प्रकारके कफरोग आदि दुष्ट व्याधियोंका विनाश होता है। मनुष्य तेजस्वी और गौर वर्णका हो जाता है। १०० वर्ष तक जीवित रहता है। कठिन रोगोंमें इनका सेवन ३ से ६ मास तक करनेसे रोग का निवारण हो जाता है, तथा युवतिके मदको हरनेमें सबल और हृष्टपुष्ट बन जाता है। इस चूर्ण का सेवन धैर्य और श्रद्धासह करनेसे सफेद कुष्ठके दाग (ल्युकोडर्मा) नये और पुराने, तथा समस्त शरीरमें दृढ बने हुए विकार नष्ट हो जाते हैं। यू० पी० के एक नगर निवासी महात्मा जीने इस प्रयोगसे अच्छी ख्याति प्राप्त की है। ६ माशेसे १ तोला मात्रा अधिक भासती है। परन्तु सहन हो सके, तो कम नहीं करना चाहिये।

सूचना —कुष्ठोंकी उत्पत्ति विशेषतः कृमिप्रकोपसे होती है। यदि कोष्टशूल, शीर्षशूल, ज्वर और तृषा लक्षण हो और रात्रिको कष्ट अधिक होता हो, तो कृमिविकार मानकर इस औषधके सेवन कालमें विडङ्गारिष्ट और खदिरारिष्ट, दोनोंको मिला, दिनमें दो बार भोजन करनेपर तुरन्त देते रहना चाहिये।

८. श्वित्रारि योग

(१) बड़ी बावचीका चूर्ण १ सेरको असन वृक्ष और खैरकी छालके क्वाथकी ७ भावना देकर सुखा लेवें। फिर हरड़, चित्रकमूलकी छाल, शहद और घी, ये चारों १-१ सेर तथा लोह भस्म ८ तोले मिलाकर चाटण बना लेवें। (भा० भै० र०)

मात्रा —१ से २ तोले दिनमें एक या दोबार देवें।

उपयोग —यह योग जीर्ण और दृढ श्वित्र कुष्ठके लिये उत्तम है। मदाग्नि और कोष्ठबद्धतायुक्त कुष्ठ रोगीके लिये लाभदायक है। इसके सेवनसे कोष्ठाग्नि प्रदीप्त होती है। आम, कृमि और कीटाणु नष्ट होते हैं। अन्त्र निर्दोष बनती है तथा रक्त प्रसादन होकर श्वित्र रोग दूर हो जाता है।

(२) शुद्ध गन्धक, हरड़, बहेड़ा, आँवला, भांगरा, भिलावा और नीमकी निम्बोलीकी गिरी इन सबको कूट कपड़छान चूर्णकर भांगरेके रसमें ३ दिन खरल कर सुखा, चूर्ण बना लेवें या १-१ रत्तीकी गोलियां बना लेवें। (भा० भै० र०)

मात्रा —२ से ३ रत्ती रात्रिको अथवा दिनमें २ बार घी शक्करके साथ।

उपयोग —यह सफेद कोढ़ (Leukoderma) को सत्वर दूर करता है। वात और कफ प्रधान प्रकृति वाले जिनका यकृत् निर्बल होनेसे योग्य पित्तस्राव न

होता हो, मलावरोध, उदरकृमि, अग्निमान्द्य, अर्श आदि लक्षण भी रहते हों, उनके लिये यह हितकारक है।

वक्तव्यः—इस योगके सेवनकालमें जमीकंद, दूध, बैंगन, मछली, मांस, और खट्टे शाकोंका त्याग करना चाहिये।

९. श्वित्रारि रस

विधिः—कासीस, शुद्ध पारद और शुद्धगन्धक, तीनोंको ५-५ तोले मिला कज्जली कर तुलसीके स्वरसमें ३ दिन खरल करके पेड़ा बनावें। फिर छायामें सुखा नीचे ऊपर चांगेरी (अम्लोनिया) का कल्क रख दृढ सराव संपुट करें। फिर ५ सेर गोबरीकी अग्नि देवें। (र० र० स०)

मात्राः—१ रत्तीसे प्रारम्भ करके ४ रत्ती तक बढावें।

अनुपानः—शहद और घी, दही और घी, मक्खन, आंवलोंका रस, अदरख-का रस, तिन्दुक फल या केला।

उपयोगः—यह रसायन श्वित्ररोग (Leukoderma) के लिये अति लाभ-दायक है। आमकी अधिकता और कफकी प्रधानतावाले रोगियोंके लिये यह उपयोगी है। इस रसायनके साथ निम्बपत्र, हल्दी, पीपल और बावचीका चूर्ण बनाकर २-३ माशे दोपहरको भोजनकर लेनेपर तुरन्त लेते रहना, तथा ऊपर दूध पीना विशेष लाभदायक है। बाहर लगानेके लिये महातिक्त घृतमें बावचीका चूर्ण मिलाकर उपयोगमें लेना चाहिये।

वक्तव्यः—औषध प्रारम्भ करनेके पहले वमन, विरेचन आदि शोधनसे शुद्ध कर लेनेपर योग्य लाभ सत्वर मिलता है।

१०. भल्लातक अवलेह

प्रथमविधिः—ताजे मोटे वृन्तरहित, साबूत १ सेर भिलावेको २० सेर जलमें डालकर मंदाग्निसे पकावें। चतुर्थांश जल रहनेपर जलको फेंकदें। फिर भिलावोंको २४ सेर दूधमें डालकर पकावें। चतुर्थांश दूध शेष रहनेपर दूधको अलगकर भिलावेको निकाल लें। उसे २० तोले गोघृतमें मंदाग्निपर भूनें। फिर शिलापर मक्खनके सदृश बारीक पीसें। उसमें वंगभस्म, रससिंदूर, सुवर्णभस्म, तीनों ७॥-७॥ माशे मिलावें। दालचीनी, वंशलोचन, मेंहदीके फूल और २१ बार गोमूत्रमें बुझाया हुआ मैनसिल १।-१। तोला, रतनजोत, लौंग, केशर, सौंफ, दालचीनी, जावित्री, २॥-२॥ तोले, सफेद चंदनका चूर्ण ५ तोले, कस्तूरी ७॥ माशे, छोटी इलायचीके दाने, भोजपत्र, तेजपात, सौंठ, पीपल, काकड़ासिंगी, मेंढासिंगी, छोटी हरड़, बड़ी हरड़, आवला, कालाजीरा, सफेद जीरा, कालीजीरी, कालीमिर्च, धनिया और तिल, ये १६ औषधियां १।-१। तोले लें। इन सबका कपड़छान चूर्णकर मिलावें। फिर गरमकर झाग निकाल साफ किया हुआ

-शहद २ सेर मिला अमृतबानमें भर ७ दिन तक धान्यराशिमें दबा देवे। पश्चात् निकाल -कर उपयोगमें लेवे। (र० यो० सा०)

वक्तव्य —जो दूध निकाल दिया है, उसका खोवा बना घीमें भून शक्कर मिलाकर पाक बना लेनेपर कुष्ठ, वातरक्त, अर्श, वातरोग और श्वास आदि व्याधियों पर लाभ पहुँचाता है। इस पाकमें उग्रता रह जानेसे मात्राकी वृद्धि होनेपर कण्डू उत्पन्न होती है। यह तलका सेवन और मर्दन करानेपर शमन हो जाती है।

मात्रा —६-६ माशे प्रातःकालको देवे।

उपयोग —यह पाक (अवलेह) वातरक्त, गलत्कुष्ठ (जिसमें हड्डी पैर, और हाथोंके नख गल गये हों तथा दाह और पिडिकाओंसे युक्त हो), पामा स्फोट, विचर्चिका, किटिभ (Dry Eczema) कण्डू, प्रचण्ड दाहयुक्त कुष्ठ शुक्र और रजो दोष, -भयंकर वात रोग, नेत्ररोग, मस्तिष्कविकार, श्वास और कास आदिको नष्ट करता है।

यह अवलेह रसयोगसागरकारका परीक्षित उत्तम योग है। वातरक्त, कुष्ठ, पक्षवध और अर्श आदि रोगपर अति लाभदायक है। वात और कफप्रधान प्रकृतिवालोंको दिया जाता है। इसका सेवन शीतकालमें करानेसे उष्णता नहीं दर्शाता।

अपथ्य —सूर्यके ताप और अग्निका सेवन, धूम्रपान, अति गरम चाय, गरम दूध, गरम गरम भोजन, गरम जलसे स्नान, अधिक मिर्च, अधिक खटाई और अधिक नमक।

द्वितीयविधि —नीमकी अन्तर छाल, सफेद सारिवा, अतीस, कुटकी त्रायमाण, हरड़, बहेड़ा, आवला, नागरमोथा, पित्तपापड़ा, बावची, धमासा वच, खैरसार, रक्त चन्दन, पाठा सोंठ, कचूर, भारंगी, वासा, चिरायता, कूड़ेकी छाल, कालीसारिवा, इन्द्रायणकी जड़, मूर्वा, वायविडङ्ग अतीस, चित्रकमूल हस्तिकर्ण, (पलाशकी छाल) गिलोय, बकायनकी छाल, कड़वे परवल, हल्दी, दारुहल्दी, पीपल अमलतासका गूदा, सतौनेकी छाल, शिरीसकी छाल, जिन्बी रहित लालचिरमी, मजीठ कलिहारी रास्ना, -करञ्जकी छाल सफेद साठीकी जड़, शुद्ध जमालगोटा विजयसार, भांगरा, पियावांसा, इन ४८ औषधियोंको ८-८ तोले लेकर जौकुट चूर्ण करे। फिर २०४८ तोले जलमें मिलाकर क्वाथ करें। अष्टमांश जल (२५६ तोले) शेष रहनेपर उतारकर कपड़से छानलें। पश्चात् १००० भिलावेंको २०४८ तोले जलमें मिलाकर उबालें चौथा हिस्सा (५१२ तोले) जल शेष रहनेपर उतार कर छान लें। भिलावेका क्वाथ करनेके -समय बाष्प न लगे, यह सम्हालना चाहिये। इन दोनों क्वाथोंको मिलाकर चूल्हेपर चढ़ावें। आधा जल शेष रहनेपर ४०० तोले गुड़ डालकर पाक करें। इस पाकमें १००० भिलावेकी गिरी (गोदवी) पीसकर मिलादें तथा सोंठ, कालीमिर्च, पीपल, हरड़, बहेड़ा, आवला, नागरमोथा, वायविडङ्ग, चित्रकमूल, सेंधानमक, सफेद चन्दन, कूठ, अजवायन, दालचीनी, तेजपात, नागकेसर और छोटी इलायची, इन १७ औषधियोंका कपड़छान चूर्ण ४-४ तोले मिलाकर अवलेह बना लेवे। (यो० र०)

सूचनाः—भिलावोंका क्वाथ करते समय बाष्प नहीं लगनी चाहिये। और गरम-गरमको हाथसे मसलना नहीं चाहिये। ठंडा होनेपर मसलें। यदि गरमको मसलना हो तो पहले हाथोंको खोपरेके तैलसे चुपड़ लेवें। अगर गरम गरमको हाथ को बिना नारियल तेलके लगाये मसला जायगा अथवा क्वाथ करते समय धुआँ लग जायगा, तो विस्फोटक हो जायगा।

मात्राः—६ माशेसे १ तोला तक दिनमें दो बार देवें। फिर ऊपर गिलोयका क्वाथ या दूध पिलायें। भोजनमें नमकीन, खट्टे और चरपरे पदार्थोंका सेवन नहीं कराना चाहिये।

उपयोगः—इस अवलेहके सेवनसे श्वित्र और औदुम्बर कुष्ठ, दाह, ऋष्यजिह्व कुष्ठ, काकणकुष्ठ, पुण्डरीक कुष्ठ, चर्मकुष्ठ, विस्फोटक, रक्तमण्डल, कण्डु, कापालिक कुष्ठ, पामा, विपादिका, वातरक्त, ६ प्रकारके अर्श, पाण्डु रोग, वर्णविकार, कृमि, रक्तपित्त, उदावर्त्त, कास, श्वास, भगन्दर, पलित (बाल सफेद होजाना) और दुस्तर आमवात आदि सब नष्ट हो जाते हैं।

यह अवलेह कुष्ठ आदि रोगके नाशार्थ अति हितावह है। यदि रोगीको इस अवलेहके सेवनके साथ रसकपूर और नीलाथोथा चौथाई चौथाई रत्ती मुनक्कामें डालकर निगलवा देवें तो अधिक गुण करता है।

११. महातिक्तक घृत

विधिः—सतौनाकी छाल, अतीस, अमलतासका गूदा, कुटकी, पाठा, नागरमोथा, खस, हरड़, बहेड़ा, आंवला, कड़वे परवलके पत्ते, नीमकी अन्तरछाल, पित्तपापड़ा, धमासा, रक्तचन्दन, पीपल, पद्माख, हलदी, दारुहलदी, बच, इन्द्रायणकी जड़, शतावरी, काली सारिवा, इन्द्रजौ, अडूसाकी जड़की छाल, धमासा, मूर्वामूल, गिलोय, चिरायता, मुहलठी और त्रायमाणा, ये ३१ औषधियाँ १-१ तोला लेकर कल्क करें। फिर कल्क और कल्कसे ४ गुना घी। घृतसे दूना आंवलोंका रस या क्वाथ, तथा घीसे ७ गुना जल लें। सबको मिला मंदाग्निपर घृत सिद्ध करें। (च० सं०)

मात्राः—आधसे १ तोला तक दिनमें दो बार दें।

उपयोगः—इस महातिक्तक घृतका सेवन करनेसे रक्त और पित्तप्रधान कुष्ठ, रक्तार्श, विसर्प, अम्लपित्त, वातरक्त, पाण्डु रोग, विस्फोटक, पामा, उन्माद, कामला, ज्वर, कण्डु, हृद्रोग, गुल्म, पिड़िकायें, रक्तप्रदर, गण्डमाला आदि रोग तथा सैंकड़ों प्रयोगोंके सेवनसे भी न जीते जाने वाली घोर व्याधियां, सब नष्ट होजाती हैं।

वक्तव्यः—पहले कुष्ठ और वातरक्तके रोगीको संशोधनों द्वारा दोषमुक्त करावें, एवं शिराव्यध आदि द्वारा दूषित स्थानमेंसे रक्त निकालें, फिर आभ्यन्तर संशमन चिकित्सा प्रारंभ करनेपर प्रकृति और समयानुरूप इस महातिक्तक घृतका सेवन कराया जाय,

श्री पं० यादवजी त्रिकमजी आचार्य लिखते हैं कि, जो रोगी इस घृतका सेवन न कर सके, उसे कल्कके द्रव्योंका क्वाथ करके पिलावें। अथवा निम्नानुसार, महातिक्तासव तैयार करके सेवन करावें।

उस कल्क द्रव्योंके समान (३१ तोले) खैरकी लकड़ीका बुरादा मिला, जौ कुटकर चौगुने जलमें पकावें। चौथाई जल शेष रहनेपर कपड़ेसे छान क्वाथमें खांडी-चीनी तथा ३२-३२ वा हिस्सा अनन्तमूल और धायके फूलका चूर्ण मिला अमृतवान या सागौनके पीपेमें भरकर १ मास रख दें। १ मासके पश्चात् आसव पक जानेपर छान लेवें। इसकी मात्रा ८ तोले है। समान जल मिलाकर दिनमें दो बार सेवन करावें।

श्वित्र कुष्ठमें इस घृतके साथ बावचीका चूर्ण मिलाकर मालिश करते रहनेसे बाहरसे भी लाभ पहुँचता है।

१२ महाखदिरादि घृत

विधि —काले खैरकी अन्तर छाल या लकड़ीका बुरादा २००० तोले, शीशमकी अन्तर छाल या बुरादा ८०० तोले, असन (विजयसार) की छाल ४०० तोले तथा करजकी छाल, नीमकी अन्तर छाल, बैंत पित्तपापड़ा, कूड़ेकी छाल, वासामूलकी छाल, वायविडङ्ग, हल्दी, दारुहल्दी, अमलतासका गूदा, गिलोय, हरड़, बहेड़ा आंवला, निसोत, सतौनेकी छाल, ये १६ औषधियां २००-२०० तोले लें। इन सबको जौकुट चूर्ण कर २० द्रोण (२०४८० तोले) जलमें मिलाकर पाक करें। जब आठवां भाग (२॥ द्रोण-२५६० तोले) जल शेषरहे, तब उतार कर छान लें। फिर आंवलोंका रस और गोघृत ५१२-५१२ तोले मिलाकर मन्दाग्निसे पाक करें। इस घृतमें पाक समय महातिक्तक घृतमें कही हुई औषधियाँ प्रत्येक ४-४ तोलेका कल्क मिलावें। पाक होनेपर कड़ाहीको उतार तुरन्त घी निकाल लेवें। (च० स०)

मात्रा —आधसे १ तोला तक दिनमें दोबार दें।

उपयोग —इस घृतके पान और मर्दन करनेसे सब प्रकारके कुष्ट नष्ट होजाते हैं।

१३ गलितकुष्टहर योग

बड़ी चंपा (इसको कहीं कनेर और कहीं कहीं गुलचीनी भी कहते हैं यह समान पत्ते वाली किन्तु कई प्रकारके सफेद, पीले, लाल, गुलाबी, नीबूआ रंगके फूल वाली होती है) की छाल १ तोला ताजा लेकर ११ या १२ कालीमिर्च मिला खूब बारीक ठंडाइकी तरह सिलपर पीस ८-१० तोले जलमें घोल छानकर प्रातः पिलावें। इसके सेवनसे किञ्चित् हल्लास (मचलाहट) प्रतीत होता है पुन वमन विरेचन होते हैं। वेग कम होनेपर गेहूँ+चनेकी रोटी या हरीरा अथवा कोमल प्रकृतिके रोगीको मूंगकी दाल और पुराने चावलकी खिचड़ी दें। घी अधिकसे अधिक मिलावें। इसी प्रकार सायकाल को भोजन करें। इसके अतिरिक्त सर्व पदार्थ वर्जित हैं। औषधि एक ही समय प्रात देना उचित है। इस औषधिके सेवनसे क्षुधा अति प्रदीप्त

होती है तथा पाचन क्रिया भी बहुत बढ़ जाती है। घृत १२ तोलेसे ४० तोले तक दैनिक पच जाता है। घृतकी बाहुल्यतासे औषधिका तेज बढ़ता है। एवं इसीसे शरीर शुद्ध होकर कान्तिवान तेजस्वी बन जाता है।

वक्तव्यः—शरीरके उर्ध्व भागमें यदि दोषोंका प्राबल्य है, तो इसकी छाल (जड़की ओरसे ऊपरकी ओरको छील कर उतारे) के सेवनसे विशेषतया वमन होती है। ऐसा करनेपर विशेषतः वमन होकर विकार निकलता रहता है। यदि शरीर-के अधोभागमें दोषोंका प्राबल्य है, तो ऊपरकी ओरसे जड़की ओर छालको काट कर ग्रहण करें, जिससे विरेचन अधिक होते हैं। यदि सर्वांगमें दोष प्राबल्य हो, तो ऊर्ध्व और अधो, दोनों प्रकारसे ग्रहण किये हुएका सेवन करें, इससे वमन विरेचन, दोनों होते हैं।

पञ्चाङ्गसे तैल सिद्धकर व्रणोंपर लगानेसे शीघ्र लाभ होता है। इससे बनाई हुई रोप्यभस्म अत्यंत गुणकारी होती है। यह शतशोऽनुभूत प्रयोग है।

(श्री पं० राधाकृष्णजी द्विवेदी)

१४. मदयन्त्यादि चूर्ण

विधिः—छायामें सुखाए हुए मेंहदीके बीज या पानका कपड़छान चूर्ण १० तोले और भाँगरेके रसमें शुद्ध किया गन्धक ५ तोले मिला ३ घण्टे खरल करें।

(श्री पं० यादवजी त्रिकमजी आचार्य)

मात्राः—१ से २ माशे दिनमें २–३ बार जल या सारिवादि हिम के साथ देवें।

उपयोगः—यह चूर्ण कण्डू (खुजली), पामा (Scabies), कच्छु (Dhobie Itch), और फोड़े फुन्सी आदि रोगोंको दूर करता है।

१५. सारिवादि हिम

विधिः—अनन्तमूल, उशबा, चोपचीनी, मजीठ, गिलोय, धमासा, रक्तचंदन, गुल बनफशा, खस, गोरखमुण्डी, शाहतरा, कमलके फूल, गुलाबके फूल, और मांसाहुली, ये १४ औषधियाँ समभाग मिलाकर चूर्ण करें। (श्री पं० यादवजी त्रिकमजी आचार्य)

मात्राः—१ तोले चूर्णको रात्रिको ६ तोले गरम जलमें चीनी मिट्टी या कांचके बरतनमें भिगोदें। सुबह मसल छानकर पिलादें। फिर उसीमें ६ तोले गरम जल डाल कर रखदें। शामको मसल छानकर पिलावें।

उपयोगः—यह हिम सर्व प्रकारके रक्तविकार, कण्डू, पामा, हाथ पैरोंका दाह, अम्लपित्त, जीर्ण ज्वर तथा पित्त और रक्त दुष्टि अधीन सब रोगोंमें लाभदायक है।

१६. तुवरक तैल योग

विधिः—तुवरक तैल (Oil Hydnocarpus) को अतिमंद अग्नि देकर

उसमें रहे हुए जलको जला डालें। फिर कपड़ेसे छान ३ गुने तैलके तुरादे या छालके क्वाथमें मिला पका कर तैल सिद्ध करें। फिर तैलको बोतलमें भर १५ दिन तक कण्डोंके चूर्ण में रख दे। आवश्यकता पर प्रयोग में लेवें (श्री पं० यादवजी त्रिकमजी आचार्य)

मात्रा —प्रात साय, दिनमें दो बार ५ बूंदसे २०० बूंद (१ तोला) तक। पहले ५ बूंदसे प्रारम्भ करें। प्रति चौथे दिन ५ बूंद बढ़ावें। इस तरह सहन हो उतनी मात्रा बढ़ावें। मात्रा अधिक होनेपर चक्कर आता है ,जी मिचलाने लगता है और वमन होती है, ऐसा हो, तो तैलकी मात्रा घटावें।

अनुपान —गौका ताजा मक्खन या दूधकी मलाई।

उपयोग —यह तैल कीटाणुनाशक, वेदनाहर, रक्तशोधक और व्रणरोपण है। सब प्रकारके महाकुष्ठोंपर व्यवहृत होता है। एवं यह वातरक्त, क्षय, कण्ठमाला, जीर्ण सन्धिवात, अस्थिव्रण, नाड़ीव्रण, जीर्ण फुफ्फुसशोथ आदिपर लाभदायक है। उदर सेवनके अतिरिक्त स्नान करनेके पश्चात् इसका अभ्यंग भी कराया जाता है। इस तरह ६ मास या कुछ अधिक समय तक पथ्यपालन सह प्रयोग करनेसे रोगी स्वस्थ होजाता है। इस तैलमें कपड़ा भिगोकर व्रणपर बांधनेसे व्रण शीघ्र भरता है। पामा, दद्रु आदिपर भी यह तैल लगाया जाता है।

पथ्य —रोगी प्रात साय केवल दूध लें। दोपहरको मोसम्बी, मीठे नीबू, मीठा अनार, सेव, केला, मीठा अंगूर आदि मीठे फल लें। दूध और फलोंके बीच ३ घण्टेका या अधिक अन्तर रक्खें। इस तरह पथ्य पालन हो सके, तो लाभ सत्वर मिलता है। कदाच यह पथ्य पालन न हो सके, तो पुराने चावलका भात तथा जौ या गेहूँकी रोटी थोड़ा घी लगाई हुई दूधके साथ लेवें। अम्ल, लवण और कटुरस वाले (चरपरे) पदार्थ निषिद्ध हैं। यह तैल पीताभ या पिङ्गल पीताभ (Brownish yellow) अथवा कुछ पाण्डुवर्णका होता है। शीतल मर्यादामें नहीं पिघलता। गरम मर्यादामें सरलतासे पिघल जाता है। इसका उपयोग आन्तर-बाह्य दोनों रीतिसे होता है। त्वचापर मालिश करनेपर उस स्थानका रक्ताभिसरण और वातनाड़ियोंमें उत्तेजना आती है। डाक्टरी में कुष्ट रोगके लिये यह उत्तम औषधि मानी गई है। यदि इसका प्रयोग अत्यधिक मात्रामें किया जायगा, तो रक्तकण विनाश, वृक्कोंमें उग्रता, मूत्रमें रक्तरञ्जककी उपस्थिति (Haemoglobinuria), क्षुधानाश ह्रास और वान्ति आदि उपस्थित होते हैं। इनके अतिरिक्त शिरदर्द, व्याकुलता, ज्वर, निद्रानाश, उदरपीड़ा और दाह आदि भी न्यूनाधिक अंशमें उत्पन्न होते हैं। अत इसका प्रयोग सम्हालपूर्वक करना चाहिये।

वर्तमानमें इस तैलका प्रयोग मांसपेशियमें अन्त क्षेपण रूपसे होता है। विशेषत यह प्रयोग मर्यादक्षवण रूपसे और अम्ल रूप (Ethyl esters of Hydnocarpic and chaulmoogric acids)से होता है। क्योंकि ये औषधियां कम

१७. बाकूची योग

विधि:—बावचीके बीजोंका प्रयोग श्वित्र (गौण कुष्ट) पर होता है । पहले दिन ५ दानेसे प्रारम्भ कर प्रतिदिन १–१ दाना बढ़ाकर २१ पर्यन्त बढ़ावें। फिर १–१ दाना घटावें। इस तरह १ मासमें एक आवृत्ति पूरी होती है। आवश्यकता अनुसार रोग शमन होने तक इस तरह अनेक आवृत्ति करें (या २१ दाने होनेपर उतनी ही मात्रामें रोज सुबह शीतल जलसे निगलते रहें) साथ साथ केवल बावची तैल अथवा बावची और तुबरकका तैल श्वित्रपर लगाते रहें। (श्री पं० यादवजी त्रिकमजी आचार्य)

तुबरक तैल २ भाग, बावचीका तैल और चंदनका तैल १–१ भाग मिला कर लगानेपर कण्डू, पामा और विचर्चिकामें भी लाभ होता है।

पथ्यापथ्य:—रोगीको अम्ल, लवण और कटु रस (चरपरे पदार्थ) का त्याग करना चाहिये। चावल, जौ या गेहूँकी रोटी, बिना खटाई, नमक, और गरम मसाले डाले मूंगके यूष और मीठे फलपर रहकर औषध प्रयोग करें।

१८. पथ्याभल्लातक मोदक

विधिः—वजनी लम्बी काबुली हरड़की छाल, तुषरहित काले तिल, पुराना गुड़ और भिलावां, इन सबको समभाग मिला खरल बत्तेमें कूटकर १॥–१॥ माशेके मोदक बना लेवें। (अ० ह०)

वक्तव्यः—भिलावेका तैल हाथको न लग जाय, इसलिये हाथ पर नारियल-का तैल लगाकर कूटें।

मात्राः—१–१ मोदक भोजनके बीचमें थोड़ा घी मिलाकर दिनमें दो बार दें।

उपयोगः—यह मोदक तीक्ष्ण, उष्णवीर्य, दीपन, पाचन, स्वेदल, सारक, यकृदुत्तेजक, वातवाहिनियोंको उत्तेजक, रक्ताभिसरणवर्द्धक और रसायन है। कुष्ठ, व्रण, विद्रधि, गण्डमाला, अर्श, मलावरोध, आध्मान, उदरकृमि, उदरशूल, आमवृद्धि, अप-चन, वातरोग, गृध्रसी, नया पक्षवध, अर्दित, आमवात, कफप्रकोप, मेदवृद्धि, ग्रहणी, प्लीहावृद्धि, यकृद्वृद्धि, श्वासरोग और हृदयकी शिथिलता आदि विकारोंको दूर करता है।

सब प्रकारके कुष्ठरोगोंकी उत्पत्ति विशेषतः मलावरोध और फिर उदरकृमिकी वृद्धि होनेपर होती है। पहले विष अन्त्रमेंसे रक्तमें प्रवेश करता है। फिर त्वचा और अन्य धातुओंमें पहुँचकर कुष्ठकी उत्पत्ति करता है। कुष्ठ रोगमें वातप्रधान, पित्तप्रधान, कफप्रधान आदि भेद होते हैं। इनमेंसे वातप्रधान, कफप्रधान या द्वन्द्वज कुष्ठ हो, दोनों वृक्क अपना कार्य अच्छी तरह करते हों, मज्जाधातुमें विशेष विकृति न हुई हो, तो इस मोदकका सेवन पथ्यपालनसह २–४ मास तक करानेपर व्याधि शमन होजाती है। यदि रोग पित्तप्रधान हो, यकृत् पित्तका स्राव अत्यधिक होता हो, उसपर इस मोदकका सेवन नहीं कराना चाहिये।

यह मोदक पुराने त्वचारोगों (उपकुष्ठ) पर अति लाभदायक सिद्ध हुआ है।

दाद रोग पुराना होनेपर उसके कीटाणु गहराईमें प्रवेशकर जाते हैं। फिर अधिकाधिक फैलते जाते हैं। त्वचा बिल्कुल शुष्क हो जाती है। खुजानेपर त्वचाके अणु निकलते रहते हैं। ऐसी अवस्थामें केवल बाह्योपचार करने मात्रसे कार्य सिद्धि नहीं होती। बाह्योपचारसे कीटाणु मूर्च्छित होजाय या उपरिस्तर पर रहे हुए नष्ट हो जाय, तो भी अन्दर वाले जीवित रह जाते हैं। जो थोड़े ही दिनोंमें फिर विषको ऊपर तक पहुँचा देते हैं। अतः उस अवस्थामें बाह्योपचारके साथ इस पथ्यादिभल्लातक मोदकका सेवन करानेपर सच्चा लाभ होजाता है। बाहर लेपार्थ कपिला, वायविडंग, और बावची १-१ तोले और मनःशिल ३ माशेको मट्ठेके साथ मिलाकर लगाते रहें।

दद्रु के समान अन्य व्युची आदि जीर्ण कुष्ठ रोगोंमें भी उदर सेवनार्थ औषधि देनी चाहिये। केवल बाह्य तीव्र कुष्ठघ्न लेपका ही प्रयोग किया जाय, तो लाभ न होते हुए रोग विशेष दृढ़ होजाता है। यदि बाह्योपचारके साथ इस मोदकका सेवन कराया जाय, तो लाभ सत्वर पहुँचता है एवं दद्रु, व्युची, कण्डू आदि रोग दूर होनेपर भी जब तक त्वचा मुलायम, सुन्दर कान्ति युक्त न हो जाय, तब तक चर्मरोगनाशक तेल या अन्य तैलकी मालिश रोज करते रहना चाहिये।

शास्त्र मतानुसार कुष्ठरोगमें गुड़ और तिल अपथ्य माने जाते हैं। कारण गुड़ उदरकृमिको परिपुष्ट बनाता है, और तिलसे अभिष्यन्द वृद्धि होकर मार्गावरोध होकर रस-रक्तकी दुष्टी होती है। एवं भिलावा त्वचाके छिद्रों द्वारा बाहर निकलनेके समय विनिमय क्रिया वृद्धि करा अधिक प्रस्वेद लाता है। फिर त्वचाको शुष्क बनाता है। जिससे शुष्क त्वचा वालोंको भिलावा नहीं दिया जाता। तथापि भिलावेका संयोग तिल के साथ होनेसे त्वचामें शुष्कता नहीं आती। गुड़के संयोगसे भिलावेकी दाहक शक्तिका दमन होता है, स्रोतावरोध दूर होता है, उदरके कृमियोंमें भिलावेका तेल सरलतापूर्वक पहुँचकर उनको नष्ट कर सकता है, इस तरह हरडका संयोग होनेसे रसरक्तादिधातुओंके भीतर दीपन पाचन क्रिया सरलतासे होती है, आमके पचनमें सुविधा मिल जाती है। इस तरह कुष्ठविष और कुष्ठ कीटाणुओंको दूर करनेमें इन चारों द्रव्योंका संयोग अति गुणवर्द्धक होता है।

इस मोदकमें प्रधान औषध भिलावा होनेसे इसकी विशेष क्रिया आमाशय, यकृत और गुदनलिका पर होती है। यकृतमें रक्ताभिसरणकी वृद्धि हो जानेसे गुदवलियोंमें रक्तका दबाव कम होजाता है, जिससे गुदासे फूली हुई शिराएँ (अर्शके मस्से) शीघ्र चिम होजाती हैं। एवं इस औषधिमें दीपन, आमपाचन और सारक गुण होनेसे मलावरोध दूर होता है। परिणामस्वरूप अर्श रोग निर्मूल हो जाता है। वातज अर्शके लिये यह योग विशेष हितावह माना जाता है।

गुदापर बाहरसे शीतल वायुका आघात लग जानेपर अनेक बार अकस्मात् अर्दितरोगकी उत्पत्ति हो जाती है। फिर मुंह टेढ़ा हो जाता है। वातवाहिनियां खिच

जाती हैं। नेत्रकी पुतली स्थान भ्रष्ट हो जानेसे दृष्टि टेढ़ी हो जाती है। कितनेकोंका मुख ठीक नहीं खुल सकता। नाककी घ्राण शक्ति तथा जिह्वाके एक ओरके स्वाद में विलक्षणता आजाती है, मांसपेशियां आक्रान्त हो जाती हैं। कभी कण्ठमें भी आघात पहुँच जाता है। शिरदर्द, स्मरणशक्तिका लोप, मानसिक विकृति, चक्कर आना आदि लक्षण भी प्रतीत होते हैं। यदि इस विकारमें मस्तिष्कस्थ केन्द्र स्थानकी विकृति न हुई हो, केवल वातवाहिनियां प्रभावित हुई हों और नूतनावस्थामें ही योग्य उपचार हो, तो लाभ होजाता है। यदि रोग अति प्रबल वेगयुक्त न हो, तो इस मोदकका सेवन छोटी मात्रामें दिन में ४ बार कराने, तथा निवाये माषादि तैलका मर्दन और सेक करानेसे थोड़े ही दिनोंमें मांसपेशियोंका गतिभ्रंश दूर होकर व्याधि नष्ट होजाती है। इस विकार वालेको शराब आदि उत्तेजक आहार नहीं देना चाहिये। तथा शीतसे भलीभांति संरक्षण करना चाहिये। इस मोदकके साथ नवजीवन रस या मल्लसिंदूर (नं० २) का सेवन कराना विशेष हितकारक है।

आमवातका रोग नया हो, ज्वर मर्यादित हो, वेदना विशेष न हो, मूत्रमें अधिक लाली न हो, रोगी युवा और सबल हो, तो इस मोदकका सेवन कुछ समय तक करानेसे आमवात शमन हो जाता है और लीन विष भी नष्ट हो जाता है। इस विकारका विष रहजानेसे शक्कर गुड़ खाने या शीत लगनेपर आजीवन बार बार त्रास पहुँचता रहता है। अतः शान्तिपूर्वक पथ्य पालन सह कुछ काल तक इसका सेवन करानेसे भावी भय दूर हो जाता है।

सूचना:—मांसाहारियोंसे भिलावा बहुधा सहन नहीं होता। अतः उनको सम्हालपूर्वक देवें।

पेशाब लाल हो जाय और परिमाण अति कम हो जाय, तो इस मोदकको ४ दिन बन्द करदें। नारियलका जल पिलावें। फिर कम मात्रामें प्रारम्भ करें।

१९. श्वेत करवीराद्य तैल

विधि:—सफेद कनेरके जड़की छाल और बच्छनाग १६-१६ तोले मिला गौमूत्रमें पीस कर कल्क करें। फिर कल्क, १२८ तोले सरसोंका तैल और गौमूत्र ५१२ तोले मिला मंदाग्नि पर पाक करें। पाक होनेपर कड़ाहीको नीचे उतार तुरन्त तैल निकाल लें।

उपयोग:—इस तैलका मर्दन करनेसे चर्मदल, सिध्म, पामा, विस्फोट (Pemphigus), कृमि और किटिभ कुष्ठ (Dry Eczema) का नाश होता है।

२०. बृहन्मरिच्यादि तैल

विधि:—कालीमिर्च, निसोत, दन्तीमूल, आकका दूध, गोबरका रस, देवदारु, हल्दी, दारुहल्दी, जटामांसी, कूठ, रक्त चंदन, इन्द्रायणकी जड़, कनेरकी छाल, हरताल, मैनसिल, चित्रकमूल, कलिहारी, वच, बायबिडंग, पंवाडके बीज, सिरसकी छाल, कूड़े

की छाल, नीमकी अन्तर छाल, सतौनेकी छाल, थूहरका दूध, गिलोय, अमलतासकी छाल, करञ्जकी छाल, नागरमोथा, खैरकी छाल, पीपल, वच और मालकांगनी, ये ३२ औषधियाँ ४-४ तोले और वच्छनाग ७ तोले ले। सबको गौमूत्रमें पीसकर कल्क करें फिर कल्क ५१२ तोले, सरसोंका तैल और जल २०४८-२०४८ तोले मिलाकर मदाग्निसे तेल सिद्ध करें। (यो० र०)

उपयोग —इस तैलको कुष्ठके व्रण, पामा, विचर्चिका, दाद, कण्डु, विस्फोटक, वलीपलित, छाया, नीली (Blue Naevus) और व्यङ्ग आदि व्याधियोंपर लगाने और मर्दन करानेसे नष्ट हो जाती हैं, तथा सुकुमारताकी प्राप्ति हो जाती है। जिस कन्याको इस तैलका नस्य कराया जाता है, वह अत्यन्त वृद्धा हो जानेपर भी उसके स्तन शिथिल नहीं होते। यदि बैल, घोड़ा और हाथी वातरोगसे पीड़ित होजायँ, तो मर्दन करानेसे नीरोग हो जाते हैं।

२१. महासिन्दूराद्य तैल

विधि —सिन्दूर, रक्तचन्दन, जटामासी, वायविडंग, हल्दी, दारुहल्दी, प्रियङ्गु, पद्माख, कूठ, मजीठ, खैरकी छाल, वच, चमेली, आककी जड़, निसोत, नीमकी अन्तर छाल, बड़े करञ्जके फल, वच्छनाग, कृष्णवेत्रक (काले बेंतकी जड़), लोध, पुवाड़के बीज, इन २१ औषधियोंको ५-५ तोले मिला जलसे पीसकर कल्क करें। फिर कल्क, कल्कसे चार गुना सरसोंका तैल और तैलसे चार गुना जल मिलाकर मदाग्नि पर पाक करें। (च० द०)

उपयोग —इस तैलकी मालिशसे रक्त और पित्त प्रकोपसे उत्पन्न समस्त कुष्ठ, पामा, विचर्चिका, (Weeping Eczema), कण्डु, विसर्प आदि व्याधियां नष्ट हो जाती हैं।

२२. चर्मदलारि तैल

बनावट —सीसमकी लकड़ी, जो भीतरसे काली हो उसका बुरादा ३ सेर नारियल कपाल (खोपरेके ऊपरका छिलका), बावचीके बीज, भिलावा, ये तीनों १-१ सेर, चित्रकमूलकी छाल, नौसादर, चोक (सत्यानाशीकी जड़), ये तीनों ४०-४० तोले, तथा गन्धक और मेनसिल २०-२० तोले लेवें। इस सब औषधियोंको कूट जोकूट चूर्ण कर पाताल यन्त्र विधिसे तैल निकाल लेवें। इसतरह निकाला हुआ १ सेर तैल लेवें फिर सखिया, नीलाथोथा, टालचिकना ये दोनों ५-५ तोलेको पीस कर १० तोले तैलमें मिलाकर मर्दन करें। पश्चात् शेष ७० तोले तैलमें मिला लेवें।

(कविराज प० रुस्त्यालजी वैद्य वाचस्पति)

उपयोग —इस तैलका प्रयोग करनेके समय बोतलको हिला लेवें। फिर थोड़ा निकाल निकाल कर पीड़ित स्थान पर मर्दन करें। इस तरह दिनमें ५-७ समय मर्दन

करते रहनेसे भयङ्कर चर्मदलका भी विनाश हो जाता है। चर्मदल (Erythema Nodosum) के लिये यह दिव्य औषध है।

सूचना:—चर्मदल और मोटा होजानेसे उस स्थानके रोमकूप बहुधा कार्य करनेमें असमर्थ होजाते हैं। ऐसी अवस्थामें औषधिका बाह्य प्रयोग विशेष लाभ नहीं पहुँचा सकता। अतः पहले ८-१० दिन तक ईसबगोलकी पुल्टिस बांधकर स्थानको मृदु बना लेवें। फिर इस तैलका प्रयोग करनेपर औषधि भीतर प्रवेश कर प्रस्वेदको बाहर निकालकर रोगको दूर कर सकती है।

२३. दद्रुहर लेप

बनावटः—छना गीला बिरोजा १० तोले, दण्डागन्धक ५ तोले, चौकिया सोहागा १। तोला और राल १। तोला लें। पहले बिरोजा और गन्धकको मिला कड़ाहीमें डाल रस करें। लोहेकी सलाईसे चलाते रहें। दोनों मिल जानेपर सोहागा और रालका चूर्ण डाल कर तुरन्त कड़ाहीको नीचे उतार पत्थरकी शिलापर डाल देवें और औषधि गरम रहते रहते वर्तियां बना लेवें। कारण औषधि शीतल हो जानेपर कड़ी होजाती है।

उपयोगः—इस वर्त्तिको पत्थरपर जलके साथ घिसकर दिनमें दो तीन बार लेप करते रहनेसे २-३ दिनमें दाद मिट जाता है।

२४. गुलाबी मलहम

विधिः—पुष्पांजन (सफेदा-जिंक आक्साइड), सिन्दूर, कपूर और चन्दनका तैल १-१ तोला,, रसकपूर ६ माशे और धोया हुआ घी या वैसलिन १० तोले लेवें। सबको मिला कर मलहम बना लेवें। (श्री पं० यादवजी त्रिकमजी आचार्य)

उपयोगः—यह मलहम खाज, पामा, अग्निदग्ध स्थान और अर्शके मस्सेपर लगानेसे वेदना और दाद रोगकी निवृत्ति होती है।

२५. करञ्जतैलादि मलहम

विधिः—करंजका तैल, मोम और शहद १०-१० तोले, कालीमिर्च और कालीजीरीका चूर्ण ५-५ तोले, नीलेथोथेका फूला २॥ तोले और कपूर १। तोला लेवें। पहले तैल और मोम मिलाकर गरम करें। फिर कड़ाहीको उतार उष्णता कम होनेपर औषधियोंका कपड़छान चूर्ण मिलावें। पश्चात् शहद मिलाकर डिब्बोंमें भरलेवें।

उपयोगः—इस मलहमकी पट्टी लगानेसे सूखा और द्रव्ययुक्त व्युची (Weeping Eczema), दाद तथा खुजली आदि विकार नष्ट होजाते हैं।

२६, पारदादि चूर्ण (कुष्ठ)

विधिः—पारद १ तोला, गन्धक २ तोले, मुर्दासङ्ग १ तोला, कपूर १ तोला, कालीमिर्च २ तोले, नीलेथोथेका फूला ६ माशे और सेलखड़ीका चूर्ण १० तोले लेवें। पहले कज्जली बना फिर मुर्दासंग, कालीमिर्च और नीलाथोथा मिलावें। पश्चात् कपूरके

उपयोग —इस चूर्णमेंसे ६ माशे चूर्णको २ तोला सरसोंके तैलके साथ मिला, ताम्बे या पीतलके भगोनेमें खरल करें। फिर सारे शरीरपर मर्दन करें। एक घण्टे पश्चात् निवाये जलसे स्नान करें। इस तरह ३ दिन तक करनेमें खुजली दूर होती है। खुजलीके पीले फाले (पामा) पर लगानेके लिये चूर्णको मक्खनमें मिला लेना चाहिये। इसी चूर्णके प्रयोगसे ३ दिनमें ही कण्डू और पामा दूर होजाती है।

इनके अतिरिक्त जो फोड़े फूट गये हों, उनपर सूखा चूर्ण दबा देनेसे फोड़े भर जाते हैं। कर्णस्रावमें १-१ रत्ती चूर्ण फूंक देनेसे पूयस्राव जल्दी बन्द हो जाता है।

२७. पामाहर मलहम

विधि —रुई निकाले हुए कपासके फलोंको जला, राखकर कपड़ेसे छान लेवें। यह भस्म १० तोले, कपूर और नीलाथोथा ३ ३ माशे, धतूराके पान २॥ तोले, तिल तैल १० तोले और मोम ६ माशे लेवें। पहले तैलमें धतूराके पत्तोंको भूनकर तैलको छान लेवें। फिर चूल्हेपर चढ़ा मोम मिलावें। पश्चात् उतार कुछ शीतल होने पर कपूर और नीलाथोथा मिलावें, फिर कपासके फलोंकी राख मिलाकर मलहम बना लेवें।

उपयोग —यह मलहम कुछ जलन करता है, किन्तु इसके लेपसे सब प्रकारके पामा, कच्छू और असाध्य खुजली एक सप्ताहमें दूर हो जाती है। एव खुजली आदिको भी सत्वर दूर करता है। सूखी खुजली और शीतपित्तमें इस मलहमको गरम कर ४ गुना तिलका तैल मिलाकर मालिश करानेमें लाभ हो जाता है।

२८. विपादिकाहर मलहम

प्रथम विधि —जीवन्ती (डोडी शाक) के मूल, मजीठ, दारुहल्दी और कपीला १६ १६ तोले तथा नीलाथोथा ४ तोले मिला, जलमें पीसकर कल्क, करें। फिर कल्क, गोघृत १२८ तोले, तिलतैल १२८ तोले, गोदुग्ध २५६ तोले और जल १०२४ तोले मिलाकर मन्दाग्निपर पाक करें, फिर स्नेहको कपड़ेसे छान, पुन थोड़ा गरमकर राल और मोम ३२-३२ तोले मिला लेवें। (च० स०)

उपयोग —इस मलहमको लगाते रहनेसे विपादिका (हाथ पैरकी त्वचा फटना) चर्मकुष्ठ (Hypertrophy of the skin), एककुष्ठ (Ichthyosis), किटिभ और अलसक आदि कुष्ठ नष्ट होते हैं।

विपादिका रोग चाहे जितना पुराना हो, त्वचा टूटकर रक्त आता हो, चाहे पूयोत्पत्ति हो जानेसे कण्डु, वेदना स्पर्शासहत्व और शोथ आदि लक्षण हों, इन सब लक्षणोंसह रोगको दूर कर देता है। अधिक शोथ और शूल होनेपर गेहूँके आटेकी पुल्टिस बाधकर (पुल्टिसमें ४-४ रत्ती खुरासानी अजवायन चूर्ण मिलाकर) शोथ-शूलको कम कराना चाहिये। फिर इस मलहमका उपयोग करनेपर सत्वर लाभ पहुँचता है। जीर्ण रोग होनेपर साथ साथ आरोग्यवर्धनी त्रिफलाके फाण्टके साथ रोज सुबह कराते रहनेसे विशेष लाभ पहुँचता है।

वक्तव्यः—स्थानिक रक्त-विकृति अधिक हो, तो जलौका द्वारा रक्त खिंचवाकर दोषको निकाल देना चाहिये।

इस मलहमको १०० बार जलसे धोकर अग्निदग्धव्रण, कण्डू, पामा और अर्शके मस्सेपर लगाया जाता है। अग्निदग्धव्रणपर लगानेसे वेदना शमन होती है। और घाव सत्वर भर जाता है।

द्वितीय विधिः—लेनोलीन (ऊनका तैल) १ औंस, एसिड बोरिक (टंकणाम्ल) ३० ग्रेन, एसिड सेलिसिलिक १५ ग्रेन लें। तीनोंको मिला बाष्पपर गरम करके मिला लेवें। फिर उसमें जसमिन (मालती) तैल १५ बूंद मिला लेवें।

उपयोगः—रात्रिको अच्छी तरह पैरोंको धो, साफ पोंछकर यह मलहम लगा लेवें। सुबह साबुन और निवाये जलसे धो देवें। इस तरह करनेपर वर्षोंसे फटे हुए पैर भी ४-६ दिनमें दरारहित और मुलायम बन जाते हैं।

२९. विडङ्ग तण्डुल रसायन

विधिः—बायविडङ्गको १० मिनट जलमें भिगो, निकालकर छायामें सुखा देवें। फिर ऊखलमें कूटकर छिल्टोंको अलग करें। सार भाग तण्डुलोंको कूटकर चूर्ण करें और मुलहठी अच्छी हो उसको ऊपर-ऊपरसे छील, कूटकर चूर्ण करें। दोनों चूर्णोंको सम-भाग मिला खरलकर बोतलमें भर लें। (सु० सं०)

मात्राः—६ माशेसे १ तोला तक रोज सुबह शहदके साथ लेवें।

अनुपानः—रक्तविकार और रक्त, पित्तप्रधान अर्शपीड़ितोंको शीतल जल; वातज अर्शप्रकोप होनेपर मधु मिला हुआ भिलावेका क्वाथ; कृमिप्रकोपज पित्तविकारमें मधुयुक्त द्राक्षा क्वाथ, कृमिप्रकोपज वातविकारमें मधुमिश्रित आमलकी रस; वातरक्त-प्रकोपमें गुडूची क्वाथ। फिर प्रकृति और रोगलक्षण अनुसार अनुपानमें थोड़ा अन्तर कर लें।

भोजनः—औषधि पचन हो जानेपर आंवला मिश्रित मुद्ग यूष, अच्छी तरह गोघृत मिला हुआ लवणरहित दिनमें १ या २ बार।

उपयोगः—यह रसायन अति प्रबल रक्तविकार, अर्श, कुष्ठ, वातरक्त, फिरंग उपद्रव, सुजाकके उपद्रव, कृमि विकार और रक्तपित्त आदिको दूर करता है। ग्रहण-धारण शक्तिकी वृद्धि होती है और आयु बढ़ती है। जो रोगी दृढ़ मनोबल वाला है धूम्रपानादि व्यसनसे मुक्त है, लवणको छोड़ सकता है, उनके लिये यह हितकर है।

३०. माणिभद्र योग

विधिः—बायविडंगकी गिरी, आंवले और हरड़, तीनों ४-४ तोले, निसोतकी छाल १२ तोले और गुड़ पुराना २४ तोले मिलाकर २-३ माशेके मोदक बना (अ० हृ०)

मात्रा —१ से ३ मोदक जलके साथ सेवन करें।

उपयोग —यह योग उदरशोधनार्थ अति हितकारक है। कुष्ठ, श्वित्र, श्वास, कास, उदररोग, अर्श, प्रमेह, प्लीहावृद्धि, ग्रन्थि, उदरशूल, कृमि और गुल्मादि रोगकी उत्पत्ति और वृद्धि, अन्त्रमें मल, आम और कीटाणुओंके संग्रहसे होती है। अतः मलसंग्रहजनित कुष्ठ आदि रोगोंमें इस योगका सेवन अति लाभदायक है।

चक्रदत्त, वंगसेन, भैषज्य रत्नावली और गदनिग्रह आदि ग्रन्थकारोंने इस योगको अर्श प्रकरणमें लिखा है एवं क्षय, भयंकर जलोदर आदिपर भी गुणकारक दर्शाया है। कुष्ठ आदि रोगोंमें जिनको मलावरोध रहता हो, उनके लिए आवश्यकता पर इसका उपयोग किया जाता है। कुष्ठ और जलोदरमें अति कोष्ठबद्धता होनेपर ४ मोदक या अधिक देनेमें भी हानि होनेका भय नहीं है। अत मात्रा मर्यादित देनी चाहिये। यदि रोगियोंका लवण छुड़ा दिया जाय या भोजनमें किंचित् सेंधानमकसे चला लिया जाय, तो लाभ जल्दी होनेकी आशा है।

३१. कण्डूनाशक योग

विधि —दग्धगंधक, दालचीनी और कालानमक, तीनों १-१ तोला मिलावें। फिर उसे १०० तोले सरसोंके तेलमें घोटें। उस तैलसे रोगीको सूर्यके तापमें बैठाकर सारे शरीरपर मालिश करें। २-३ घण्टे तक या सहन हो सके तबतक धूपमें बैठावें। जिससे प्रस्वेद आकर विष बाहर निकल जाता है, फिर आध घण्टेतक छायामें विश्रान्ति लेवें। पश्चात् आवलोंका चूर्ण रगड़कर निवाये जलसे स्नान करावें। इस प्रयोगसे एक या दो दिनमें खुजली चली जाती है।

सूचना —कुछ दिनोंतक नमक मिर्च कम कर देवें। इस योगका आरम्भ होनेपर ३ दिनतक तो भोजन हल्का करें, नमक-मिर्च बिल्कुल न लेवें या केवल दूधपर रहें।

३२. कण्डूनाशक तैल

प्रथम विधि —पारद और द्विगुण गंधक मिलाकर की हुई कज्जली २० तोले, नीलेथोथेका फूला १ तोला, कालीमिर्चका कल्क ४० तोले, सरसोंका तेल २ सेर और धतूरेके पत्तोंका रस ८ सेर लेवें। सबको मिला मन्दाग्निपर तैलपाक करें। धतूरेका रस जल जानेपर ऊपर ऊपरसे तैलको निकाल लें। फिर खरल या किसी दूसरे पात्रमें किट्टका मर्दन करें। पश्चात् थोड़ा थोड़ा तैल मिला सबको एक रस बनाकर बोतलोंमें भर देवें।

उपयोग —इस तैलका उपयोग करनेके समय बोतलको चलाकर थोड़ा तैल कटोरीमें निकाल लें। उसमेंसे मालिस करनेसे एक सप्ताहमें असाध्य गजचर्म, कण्डु, ... कुष्ठ रोग, सन्धिवात आदि नष्ट हो जाते हैं और ... [illegible]

सूचनाः—रोगीको तैल लगानेके पश्चात् निवात स्थानमें बैठाकर स्वेद देवें। त्रिफला, वायविडंग और अजवायन डालकर उबाले हुए जलकी बाष्प देवें। प्रस्वेद आ जानेके आधे घंटे बाद साबुन लगा निवाये जलसे स्नान करावें।

द्वितीय विधिः—पारद और द्विगुणगंधक मिलाकर की हुई कज्जली ३ तोले, कालीमिर्च, कपूर और मुर्दासंग एक-एक तोला तथा कपीला ६ तोले मिलाकर मर्दन करें। फिर २० तोले सरसोंके तेलमें मिला लें।

उपयोगः—इस तैलकी सारे शरीरपर मालिस करावें। एक घंटे बाद त्रिफला, वायविडंग और अजवायन डालकर उबाले हुए जलसे साबुन लगाकर स्नान करावें। इस तरह ३-४ दिन करनेसे खुजली बिल्कुल चली जाती है और रात्रिको शांतिसे निद्रा आ जाती है। अधिक कोष्ठबद्धता होनेपर विरेचन देकर उदरशुद्धि भी करानी चाहिए।

तृतीय विधिः—सत्यानाशीके मूल १ सेरको कूट, जलके साथ पीसकर कल्क बनावें। फिर कल्क, सत्यानाशीका रस ४ सेर और १ सेर तिल तैल मिला मंदाग्निसे पकावें। तैल मात्र शेष रहनेपर उतारकर तुरन्त छान लेवें।

उपयोगः—इस तैलकी मालिस करानेसे खुजली दूर हो जाती है।

३३. दद्रुहर अर्क

स्पिरिट मेथीलेटेड	Spt. Methylated	१६ औंस
सेलिसिलिक एसिड	Salicylic Acid	२ औंस
नीबूका तैल	Oleum Limonis	२ औंस
रासबरी लाल रंग	Raspberry Red Colour	४ ड्राम

पहिले स्पिरिटमें एसिड मिलावें फिर तैल और रंग क्रमशः मिलाकर अच्छी तरह चला लेवें।

उपयोगः—दद्रुहर अर्कका उपयोग १५ वर्षसे हो रहा है। दादको दूर करनेमें विशेष उपयोगी है। लगानेपर मामूली जलन होती है। एवं एकाध मिनटमें ही यह सूख जाता है। जिससे कपड़े भी खराब नहीं होते।

३४ गन्धकका मलहम

(Ung Sulphuris)

विधिः—गन्धकपुष्प (Sulphur sublimatum) १ भागको ६ भाग वेसलीनमें मिलाकर मलहम बना लेवें।

उपयोगः—यह मलहम कीटाणुनाशक है। पामा और कण्डूप्रधान चर्मरोगों पर यह लगाया जाता है या मर्दन किया जाता है। व्युचीमें भी कण्डू अधिक होनेपर

पारद सेवनजनित रक्तविकार होनेपर गन्धक रसायन या शुद्ध गन्धकका उदर सेवन कराया जाता है तथा इस मलहमकी मालिश करायी जाती है।

३५ टार मलहम

(Ung Picis Liq.)

विधि —टार (Tar) ७० भाग, वेसलीन ५ भाग और मक्खियोंके छत्तेका मोम २५ भाग लेवें। वेसलीन और मोमको गरम करें। फिर टारर मिलाकर मलहम बना लेवें।

उपयोग —यह मलहम उत्तम उत्तेजक, शोधक और कीटाणुनाशक है। इसका कीटाणुनाशक गुण क्रियोसोट और फेनोलकी अपेक्षा उत्तम प्रकारका है। विचर्चिका, एककुष्ठ अर्थात् मत्स्यसदृश कठोर त्वचा बनजाना (Ichthyosis) अलसक-उग्रकण्डू और पिटिकामय त्वचारोग (Lichen planus) और जीर्ण व्युची रोग (Dry Eczema) पर व्यवहृत होता है।

वक्तव्य —इस मलहमके प्रयोगसे कभी कभी स्वेदावरोध होकर छोटी छोटी फुन्सियां (Tar itch) हो जाती है। किसीको अति उग्रता प्रतीत होती है। इस लिये थोड़े हिस्सेमें विकृति होनेपर इसका प्रयोग होता है। एव स्वेद आने पर मलहमकी पट्टी निकाल डाले। फिर स्थानको पोंछकर कीटाणुनाशक द्रवसे धो डालें। पश्चात् थोड़ा समय ठहरकर पुन मलहम लगा लेवें।

३६. पीत मलहम

(अनगवेन्टम हाइड्राजिरी ऑक्साइड फ्लेवा)

पीत पारद भस्म (येलो मर्क्युरिक ऑक्साइड) १० ग्रेन और मृदु पीला मोम (Soft paraffin yellow) ४० ग्रेन ले। इन दोनोंको मिलाकर मलहम बना लेवें।

उपयोग — यह मलहम पुराना व्युची, दाद, उपदंशज क्षत और इतर त्वचाके रोगोंपर लाभ पहुँचाता है।

यदि यह मलहम कीटाणु रहित किये हुए (स्टेरिलाइज) वेसलीनके साथ मिलाकर तैयार किया जाय, तो नेत्रमें शुक्ला मंडल संधि (Corneosclera) के क्षत और श्लेष्मिक कलाप्रदाह (Conjunctivitis) आदि पर भी प्रयुक्त होता है।

अथवा येलो मर्क्युरिक ऑक्साइड १ भाग, ऊनकी चर्बी (Lanolin) १० भाग और सोफ्ट पेरेफिन ६ भाग मिलाकर मलहम बनाकर नेत्रमें काजलकी तरह अंजन किया जाता है।

३७ द्रदुगजकेसरी

क्राइसरोबिन Chrysarobin ३ औंस

गन्धक ऊर्ध्वपतित	Sublim. Sulphur	२ औंस
वेसलीन	Vaseline	१६ औंस

वेसलीनको कुछ करम कर सब औषधियोंको अच्छी तरह मिलाकर मलहम बना लेवें। दाद पर ३-४ दिन लगानेपर निर्मूल हो जाता है। इस मलहमसे कपड़े पर लाल दाग होते हैं। वे नीबूका सत्व (Citric Acid) से या चूनेके जलसे धोनेसे निकल जाते हैं।

३८. क्रिटिभहर मलहम

रेजोर्सिनोल	Resorcinol	२० ग्रेन
जिंक ऑक्साइड	Zinc Oxide	२० ग्रेन
लाइकर कार्बोनिस डेटरजेन्स	Liq. Carbonis Detergens	१ ड्राम
अंगवेण्टम पाइसिस लिक्विड	Ung. Picis Liquide	२ ड्राम
विशुद्ध वराह वसा	Lard ad	२ औंस तक

इन सबको मिलाकर मलहम बना लेवें। इसके प्रयोगसे व्युची (ड्राई एक्जिमा) आदि विविध चर्मरोगोंका निवारण होता है।

३९. उद्वर्त्तन

विधिः—हल्दी, चिरौंजी, पोस्तके दाने, चक्रमर्द (पंवाड़) के बीज, गुलाबके फूल, सोनागेरू (गीले अरमानी), करंजकी गुद्दी, लाल चंदन, चमेलीकी पत्ती २-२ तोले, खस १ तोला तथा पीली सरसों १० तोला, इन सबको कूट कर चूर्ण करें।

वक्तव्यः—करंज दो प्रकारके होते हैं। एकका फल गोल तथा दूसरेका चिपटा होता है। गोल फलवाले करंजकी गुल्म होती है और फलीपर तथा सर्वाङ्गमें कांटे होते हैं। चिपटे बीजवालेका वृक्ष ४०-६० फीट ऊंचा होता है। उसे हिन्दीमें डिठोहरी और बंगलामें डहरकरंज कहते हैं। इस प्रयोगमें डिठोहरीके फलोंकी गिरी लेना चाहिये।

उक्त चूर्णमेंसे आवश्यकतानुसार लेकर गायके दूधके साथ शिलपर चटनी सदृश पीसें। फिर थोड़ासा दूध पुनः मिलाकर पकावें। पकते पकते जब उद्वर्त्तन योग्य होजावे तब किञ्चित् गर्म रहते ही शरीरके उपद्रुत भागपर मलकर छुड़ादें। व्याधिकी उग्रावस्थामें और अधिक जीर्णावस्थामें गोदुग्धके स्थानपर गोमूत्रका प्रयोग करना विशेष हितावह माना जायगा।

उपयोगः—यह उद्वर्त्तन चर्म रोगोंकी एक चमत्कारिक दवा है। इसके लेपसे किसी भी प्रकारका दाह या जलन नहीं होती। एवं इससे सूखी व तर, दोनों प्रकारकी खुजलियाँ, त्वचाकी खुश्की, फटन व चुनचुनाहट सत्वर आराम होजाते हैं। इससे शीत पित्तके फफोलोंपर भी लाभ होता है (शीतपित्तके रोगीको एक एक छटांक चिरौंजी भी खिलाते रहना चाहिये) इनके अतिरिक्त त्वचाके भीतर रहने वाले तथा लसीकासे

क्षुद्र कुष्ठोंमेंसे जिनमें देहके विविध अंगोंपर श्वेत दाग, रक्त दाग या श्याम दाग उपस्थित होते हैं। या व्युची, पामा, दादके समान विकृति होती है, इन सबका अन्त र्भाव डाक्टरीमें चर्म रोगोंके भीतर किया है। ये रोग बहुधा सस्पर्शज हैं। इन रोगोंकी सम्प्राप्ति डाक्टरी मत अनुसार विविध कीटाणुओंके सक्रमणसे होती है। रेल, मोटर आदिके प्रवासमें बैठनेके स्थानपर रहे हुए कीटाणुओं द्वारा, दूसरोंके दूषित वस्त्रोंके स्पर्शसे तथा होटल आदिमें बिना साफ किये हुए पात्रोंमें भोजन या पेय पदार्थका सेवन करनेपर होती है। यदि चर्म रोग भोजन आदि पदार्थोंमें मिले हुए कीटाणुओंसे प्राप्त हुआ हो, या बाहरसे प्रवेशित कीटाणु अन्तस्त्वचाके निम्नस्तरमें प्रवेशित हो गये हों, या रोग जीर्ण हो गया हो और दृढ मलावरोध भी रहता हो, तो इस उद्वर्तन प्रयोगके साथ साथ आरोग्यवर्धनी या मजिष्ठादि तालसिंदूर आदि कीटाणुनाशक औषधिका भी उदरसेवन करना चाहिये।

अधिक अग्निसेवन, अति गरम गरम जलसे बार बार स्नान करना, सूर्यके तापमें अधिक दिनों तक भ्रमण करना, घृत तैल आदि स्निग्ध पदार्थोंका सेवन न होना, दीर्घकाल तक ज्वर पीड़ित रहना, एवं मिर्च आदि दाहक पदार्थोंका अति सेवन होने या विविध कीटाणुओंका आक्रमण होनेपर पित्तप्रकोप होना आदि कारणोंसे त्वचा शुष्क हो जाती है। उसपर इस उद्वर्तनको दुग्धके साथ मिलाकर लेप और मर्दन करनेसे सत्वर लाभ पहुँचता है। त्वचा मुलायम और स्निग्ध बनती है एवं त्वचागत रक्ताभिसरण प्रबल होकर त्वचा तेजस्वी भी बन जाती है। शुष्क त्वचापर प्रयोग करनेपर सुगन्धित तेल भी थोड़ा मिलाना हो, तो वह भी सहायक होता है।

(श्री० वैद्य माधवप्रसादजी पाण्डेय वैद्य-भूषण)

---

(४१) शीतपित्त

१. शीतपित्तभञ्जन रस

विधि —शुद्ध पारद शुद्ध गन्धक, कासीसभस्म, ताम्रभस्म, ये चारों औषधियां २–२ तोले लें। पहले कज्जली करें। फिर भस्में मिलावें। पश्चात् भांगरा और सरफोंका-के रस या क्वाथके साथ ७ ७ दिन खरलकर गोला बनाकर सूर्यके तापमें सुखावे। तत्पश्चात् सराव सम्पुट कर दृढ़ कपड मिट्टी करें। फिर सम्पुटको सुखा कुक्कुटपुट देवे। स्वाङ्गशीतल होने पर भांगरा और सरफोंकाके रसमें १–१ दिन मर्दन कर पुन अग्नि देवे। इस तरह ३ कुक्कुटपुट देवे। (र० यो० सा०)

मात्रा —२–२ रत्ती ६–६ माशे गुड़के साथ दिनमें दो बार देवे।

उपयोग —शीतपित्तभञ्जन रस शीतपित्त आदि रोगोंको बहुत जल्दी दूर कर

सूचनाः—शीतपित्त आदि रोगियोंको चाहिये, कि शीतल जलसे स्नान, शीतल वायुका सेवन, जागरण, गुरु अन्न, कब्ज करने वाले पदार्थ, अम्ल रस, और विदाही भोजन से आग्रहपूर्वक बचते रहें।

कतिपय रोगियोंको दूध पीनेपर शीतपित्त निकल आता है। उनको दूधका त्यागकर देना चाहिये।

२. आर्द्रक खण्ड

विधिः—अदरख ६४ तोले, गोघृत ३२ तोले, गोदुग्ध २५६ तोले, शक्कर १२८ तोले, पीपल, पीपलामूल, कालीमिर्च, सोंठ, चित्रकमूलकी छाल, बायविडङ्ग, नागरमोथा, नागकेशर, दालचीनी, छोटी इलायचीके दाने, तेजपात और शठी (मेदा कचूर) प्रत्येक ४-४ तोले लेवें। पहले अदरखके कल्क को घीमें भूनें। उसे दूधका खोवा करके मिलावें। फिर शक्करकी चाशनी कर उसमें खोवा और शेष ओषधियोंका कपड़छन चूर्ण मिलाकर पाक बनालेवें। (भै० र०)

मात्राः—६-६ माशे दिनमें १ या २ बार।

उपयोगः—यह खण्ड शीतपित्त, उदर्द, कोठ, उत्कोठ, राजयक्ष्मा, रक्तपित्त, कास, श्वास, अरुचि, वातगुल्म, उदावर्त, शोथ, कण्डु, कृमि आदि रोगोंको नष्ट करता है, अग्निको प्रदीप्त करता है, बल वीर्यकी वृद्धि करता है तथा शरीरको पुष्ट बनाता है। यह खण्ड कफ प्रधान और मेद प्रधान प्रकृति वालोंके लिये अति हितकारक है। यह आमको जल्दी जला डालता है। आम प्रधान जीर्ण ग्रहणी रोगी और अग्निमांद्य वाले रोगीको शीत कालमें सेवन करने पर पचन क्रियाको बहुत बढ़ा देता है।

३. बृहद् हरिद्रा खण्ड

विधिः—हल्दीका चूर्ण, निसोतकी छालका चूर्ण, हरड़का चूर्ण १६-१६ तोले, मिश्री २ सेर तथा दारुहल्दी, नागरमोथा, अजवायन, अजमोद, चित्रकमूलकी छाल, कुटकी, जीरा, पीपल, सोंठ, दालचीनी, तेजपात, छोटी इलायचीके दाने, बायविडङ्ग, गिलोय, वासाके मूलकी छाल, कूठ, हरड़, बहेड़ा, आंवला, चव्य, धनिया, लोह भस्म और ताम्र भस्म, ये २३ ओषधियां ६-६ माशे लेवें। मिश्रीकी चाशनी करके शेष ओषधियोंका कपड़छान चूर्ण मिला कर घी चुपड़े हुए थालमें जमा देवें। (भै० र०)

मात्राः—३ से ६ माशे दिनमें दो बार निवाये जलके साथ।

उपयोगः—यह हरिद्रा खण्ड शीतपित्त, उदर्द, कोठ, कण्डु, पामा, विचर्चिका, जीर्ण ज्वर, कृमि, पाण्डु और शोथ आदि रोगोंका नाश करता है।

यह पाक उत्तम रक्तप्रसादक औषध है। यदि शीतपित्तके रोगमें इस खण्डका सेवन करने पर भी मलावरोध रहे, तो साथमें पंचसकार या मंजिष्ठादि चूर्णका सेवन भी कराना चाहिये। कितनेक रोगियोंको पतले दस्त लगते हों या उष्णता रहती हो, तो यह खण्ड सहन नहीं होता, उनको निम्न हरिद्रा खण्ड देना चाहिये।

४ हरिद्रा खण्ड

विधि —हल्दी ३२ तोले, घी २४ तोले, दूध ५१२ तोले, शक्कर २००तोले तथा सोंठ कालीमिर्च, पीपल, तेजपात, छोटी इलायची, दालचीनी, बायविडङ्ग, निसोत, हरड़, बहेड़ा, आंवला, नागकेशर, नागरमोथा और लोहभस्म ४-४ तोले ले । पहले चूर्णको दूधमें मिलाकर खोवा बनावे । फिर उसे घीमें भूनें । पश्चात् शक्करकी चाशनी करे । उसमें खोवा तथा शेष ओषधियोंका कपड़छान चूर्ण मिलाकर पाक बना लेवे ।

मात्रा —६-६ माशे दिनमें दो बार दे ।

उपयोग —इस खण्डके सेवनसे शीतपित्त, कण्डु, विस्फोटक, दद्रु दूर हो जाते है। शीतपित्त, उदर्द और कोठ रोग केवल १ सप्ताहमें नष्ट होते हैं और देह सुवर्ण समान तेजस्वी बनती है। यह शीतपित्त और कण्डु रोगकी उत्तम ओषधि है।

---

[४२] अम्लपित्त

१ सिता मण्डूर

विधि —तपा तपाकर २१ बार गोमूत्रमें बुझाया हुआ मण्डूर २० तोले, शक्कर १। सेर घी २ सेर और गोदुग्ध ४ सेर लेवे । मण्डूरको घी और दूधमें मिला चूल्हेपर चढ़ाकर मदाग्निपर पकावे । रबड़ीके समान होनेपर शक्कर मिलाकर पाक करें। निराया रहनेपर सोंठ, कालीमिर्च, पीपल मुलहठी, छोटी इलायचीके दाने, धमासा, वायविडङ्गकी गिरी, हरड, बहेड़ा, आंवला, कूठ और लौंग, इन १२ औषधियोंका कपड़छान चूर्ण २-४ तोले मिलावें । शीतल होनेपर शहद ३२ तोले मिलाकर अमृतबानमें भर लेवे । (भै० र०)

मात्रा —२ माशेसे प्रारम्भ करके ६ माशेतक बढ़ावे । दिनमें २ बार भोजनके प्रारम्भमें लेवे और ऊपर शीतल किया हुआ गोदुग्ध पीवे ।

उपयोग —यह सितामण्डूर अम्लपित्तनाशक उत्तम औषधि मानी गई है। असाध्य अम्लपित्त, आमाशयमें शूल (Gastralgia) खट्टी और उष्ण वमन, आनाह, मूर्च्छा, प्रमेह, रक्तविकार, वातविकार और पित्तप्रकोपको यह नष्ट करता है। यदि रोगी भोजन, शराब, धूम्रपान और सूर्यके तापका सेवन आदि अपथ्य आहार-विहारका त्याग करके इसका सेवन करें और दुग्धाहार करें तो बहुत जल्दी लाभ पहुँचता है।

आमाशयदाह, आमाशयकी दीवारमें क्षत, पित्ताश्मरी चिरकारी पित्ताशय-प्रदाह, जीर्ण उपान्त्रप्रदाह आदि कारणोंसे आमाशयिक रसमें अम्लताकी वृद्धि (Hyperchlorhydria) हो जाती है, उसे अम्लपित्त कहते हैं। प्रत

कारणोंमेंसे पित्ताश्मरी और जीर्ण उपान्त्रप्रदाहपर यह मण्डूर कार्य नहीं कर सकता। शेष कारण होनेपर सितामण्डूर उपकारक है। सितामण्डूरके सेवनसे आमाशयप्रदाह और चिरकारी पित्ताशयप्रदाह शमन हो जाते हैं और आमाशय क्षत भर जाता है। फिर अम्लपित्तके लक्षण और उपद्रव-उबाक, वमन, उदरशूल, आनाह, रक्तविकार, पित्तप्रकोप, वातप्रकोप और मूर्च्छा आदि नष्ट हो जाते हैं।

यदि पित्ताश्मरी और जीर्ण उपान्त्रप्रदाह (Appendicitis) के मुख्य उपचारके साथ सितामण्डूरका सेवन कराया जाय तो अम्लपित्त रोग मूल कारणसह नष्ट हो जाता है।

२. सुधानिधि रस

विधिः—शुद्ध पारद, शुद्ध गन्धक, अभ्रक भस्म, बड़ी इलायची, पीपलामूल और नागकेशर, इन ६ औषधियोंको समभाग लेवें। पहले कज्जली करके भस्म मिलावें, फिर काष्ठादि औषधियोंका चूर्ण मिला जीरेके क्वाथके साथ १ दिन खरल करें। पश्चात् १ हांडीमें भर दृढ कपड़मिट्टीकर चूल्हेपर चढ़ा मंद-मंद तुषाग्नि ६ घण्टे तक देवें। स्वांग शीतल होनेपर निकालकर बोतलमें भर लेवें। (र० यो० सा०)

मात्राः—२-२ रत्ती दिनमें ३ बार प्रातःकाल तथा दोपहर और रात्रिको भोजनके पहले शक्कर और शहदके साथ देवें।

उपयोगः—सुधानिधि रस आमाशय पित्तकी उग्रताका दमन करता है। जिससे इसका सेवन करनेपर अम्लपित्त शमन होता है। नये रोगमें यह उपयोगी होता है।

३. पित्तान्तक रस

विधिः—जायफल, जावित्री, जटामांसी, कूठ, तालीसपत्र, सुवर्णमाक्षिक भस्म, लोहभस्म और अभ्रकभस्म, ये औषधियां १-१ तोला और रौप्यभस्म (वनस्पति मारित) ८ तोले लेवें। सबको मिला जल (आंवलोंके रस) में ३ दिन खरलकर १-१ रत्तीकी गोलियां बना लेवें।

वक्तव्यः—सुवर्णमाक्षिकके स्थानमें सुवर्णकी योजना करनेपर वह अधिक कार्यकारी बनता है। उसे आचार्योंने 'महापित्तान्तक" संज्ञा दी है।

मात्राः—१ से २ गोली दिनमें २ बार आंवलोंके शर्बत, पेठाका शर्बत या मिश्री मिले गिलोयके स्वरसके साथ देवें।

उपयोगः—पित्तान्तकरस सर्व पित्तरोगनाशक है। यह कोष्ठाश्रित पित्तप्रकोप (आमाशय आदि पचनसंस्थानका पित्त विकृत होना), शाखाश्रित (रक्त आदि धातु और त्वचा धातुगत पित्तकी विकृति होना), पैत्तिकशूल, अम्लपित्त, पाण्डुरोग, हलीमक, ..., चक्कर आना और वमन विकारको तत्काल नाश कर देता है।

यह रसायन शामक और आमाशयके पित्तोत्पत्तिपर कार्यकारी है। आमाशय रस (Gastric ju ce) में लावणाम्लकी उत्पत्ति अधिक होती हो, उसे यह कम कराता है। जिससे पित्तके हेतुसे उत्पन्न होनेवाले शूल, पाण्डु, वमन और भ्रम आदिका शमन हो जाता है।

वक्तव्य —तमाखू, गरम गरम चाय, अति मिर्च, अति नमक और शराबका व्यसन हो तो छोड़ देना चाहिये। भोजनके २० मिनट पहले नीबूका रस शक्कर और जल मिलाकर पी लेनेसे पित्तोत्पत्तिके ह्रास होनेमें सहायता मिल जाती है।

४ पानीयभक्त वटी

विधि —सोंठ, कालीमिर्च, पीपल, हरड़, बहेड़ा, आंवला, नागरमोथा, निसोत, चित्रकमूल और पीपल, ये ६ औषधियां ४–४, तोले शुद्ध पारद और शुद्ध गन्धक २–२ तोले, लोहभस्म, अभ्रकभस्म और वायविडङ्ग, ८–८ तोले लें। पहले कज्जली कर भस्म मिलावें। फिर काष्ठौषधियोंका कपड़छान चूर्ण मिला, त्रिफलाके क्वाथमें १ दिन खरल करके १–१ रत्तीकी गोलियां बनावें। (र० यो० सा०)

मात्रा —२–४ रत्ती दिनमें २ बार मट्ठा, जल या रोगशामक अनुपानसे देवें।

उपयोग —पानीयभक्त वटी अम्लपित्त, उदरशूल, पार्श्वशूल, कुक्षिशूल, बस्तिशूल, श्वास, कास, कुष्ठ और ग्रहणी विकार आदिको नष्ट करती है।

यह वटी विशेषतः जीर्ण अम्लपित्तरोग, जिसमें अन्त्रके भीतर क्षत हो जानेसे उदरशूल, गुदामें पीड़ा और जलन आदि उपद्रव उत्पन्न हुए हों, उसपर विशेष कार्य करता है। आमाशयमें क्षत होनेपर शूल चलता हो अथवा प्रकृति भेदसे आमाशय पित्तकी उत्पत्ति अत्यधिक हो, तो कम करानेके उद्देश्यसे भोजनके २० मिनट पहले मट्ठेके साथ ऊर्ध्व अम्लपित्तमें भी देना पड़ता है। (हो सके तबतक ऊर्ध्व अम्लपित्तके रोगीको तक्र नहीं देना चाहिये। नारियलका जल विशेष अनुकूल रहता है)

अम्लपित्त रोगमें उपद्रव रूपसे उत्पन्न श्वास, कास और कुष्ठ (श्वित्र) भी पानीयभक्त वटी और अविपत्तिकर चूर्णके सेवनसे दूर हो जाते हैं। दाह अधिक हो तो कामदुधा साथमें मिला देना चाहिये।

५ वृहन्नारिकेल खण्ड

विधि —सिलापर बारीक पीसा हुआ या कद्दूकसपर किसा हुआ नारियल ६४ तोले और छिल्के और बीजोंसे रहित पेठेकी गिरीके टुकड़े १२८ तोले लेवे। सबको १६ तोले गोघृतमें भूने। पश्चात् २५६ तोले गोदुग्ध और १२८ तोले बूरा मिला, चूल्हेपर चढा मन्द मन्द अग्निसे पकावे। फिर शीतल होनेपर छोटी इलायचीके दाने, धनिया, आवले, पित्तपापड़ा, नागरमोथा, खस, नेत्रवाला, सफेद चन्दन, दाख, सिंघाड़े, कसेरु, दालचीनी, तेजपात और भीमसेनी कपूर, इन १४ औषधियोंका चूर्ण २-२ तोले मिलाकर अवलेह बना लेवे।

मात्राः—१ से २ तोले प्रातःकाल और सायंकाल नियमित सेवन करते रहें।

उपयोगः—बृहन्नारिकेल खण्ड अम्लपित्त, मंद ज्वर, पित्तप्रकोप, रक्तपित्त, अरुचि, वातरक्त, तृषा, दाह, पाण्डुरोग, कामला, क्षय और परिणाम शूल आदिको नष्ट करता है। धातुओंको पुष्ट करता है; कामोत्तेजना करता है, शान्त निद्रा लाता है तथा बलकी वृद्धि कराता है।

सूर्यके तापमें दिनोंतक फिरना, ज्वर आदि रोग, शराब या अत्यधिक तीक्ष्ण पदार्थोंका सेवन आदि कारणोंसे आमाशयस्थ पित्त उग्र बन जाता है। फिर किसीको मंद ज्वर रहता है, किसीको अरुचि, तृषा, दाह, पाण्डु आदि लक्षण उपस्थित होते हैं। उन नूतन मंद रोगोंमें इस खण्डका सेवन करानेपर लाभ हो जाता है।

६. बृहत् पिप्पलीखण्ड

विधिः—छोटी पीपलका चूर्ण १६ तोले, गोघृत ३२ तोले, मिश्री ६४ तोले, शतावरीका रस ३२ तोले, आंवलोंका स्वरस ६४ तोले और गोदुग्ध १२८ तोले लें। पीपलको दूधमें मिला कर उबालें। अच्छी तरह चलाते रहें और खोवा बनावें। फिर उसमें घी मिलाकर भूनें। शतावरी और आंवलेके रसको मिलाकर उबालें। स्वरस कम होनेपर शक्कर मिलाकर अवलेहके सदृश चाशनी करें। कुछ शीतल होनेपर खोवा मिलालें। फिर छोटी इलायचीके दाने, दालचीनी, तेजपात, हरड़, कालाजीरा, धनियां, नागरमोथा, वंशलोचन और आंवले, इन ९ औषधियोंका कपड़छान चूर्ण १-१ तोला और जीरा, मीठाकूठ, सोंठ, नागकेशर, जायफल और कालीमिर्चका चूर्ण ६-६ माशे मिलावें। शीतल होनेपर शहद ८ तोले मिला देवें।

मात्राः—१ से २ तोले दिनमें २ बार सुबह और रात्रिको देवें।

उपयोगः—बृहत् पिप्पली खण्ड अम्लपित्त, उबाक, अरुचि, वमन, श्वास, कास, क्षय आदि रोगोंको दूर करता है। आमाशयस्थ पित्त विकृति और वातप्रकोपको दूरकर अग्नि प्रदीप्त कराता है और हृदयको बल देता है।

पुराने अम्लपित्तमें रोग बलकी वृद्धिको रोकने और शक्ति देनेके लिये इस पाकका सेवन कराया जाता है। आमाशयमें क्षत हो, उसे मिटाता है तथा वात-नाड़ियोंको बल देता है।

७. अम्लपित्तान्तक चूर्ण

प्रथमविधिः—अरणीकी कालीराख और कालीमिर्च ५-५ तोले और देशी शक्कर १० तोलेको मिला लेवें। (वैद्यनिधि अर्जुनसिंहजी वर्मा)

मात्राः—२ से ४ माशे दिनमें २ बार जलसे देवें।

उपयोगः—यह प्रयोग अम्लपित्तके लिये अति उपकारक है। जीर्ण रोगमें भी लाभ पहुँचाता है। प्रयोग देने वालोंने सैकड़ों रोगियोंपर अनुभव किया है।

द्वितीय विधि —काला अनन्तमूल, आँवले, छोटी इलायचीके दाने, खस, सफेद चन्दन, मुलहठी, कमलके फूल, धनिया, पीपल, प्रियंगु, जटामांसी और नागरमोथा, इन १२ ओषधियोंको सम भाग मिलावें। फिर सबके समान मिश्री लेवें।

मात्रा —३ से ६ माशे दिनमें दो बार जलके साथ।

उपयोग —यह चूर्ण अम्लपित्त, दाह, खट्टी डकार आना, गुरुपाक, वान्ति आदि पर हितकारक है।

तृतीयविधि —गोरखइमलीके गर्भ (बीज रहित) का चूर्ण १० तोले, जीरा २॥ तोले और मिश्री १२॥ तोले लेवें।

मात्रा —३-३ माशे दिनमें दो बार सुबह शाम जलके साथ देवें।

उपयोग —यह चूर्ण अम्लपित्त, भोजनकर लेनेपर थोड़े समयमें वान्ति हो जाना, कण्ठमें दाह, छातीमें जलन, शिरमें दर्द, सगर्भाकी वमन, घबराहट, प्रदर, रक्तातिसार और पेचिश आदिको दूर करती है।

चतुर्थ विधि —लोश ८ तोले और नौसादर १ तोला लेकर चूर्ण कर लेवें।

मात्रा —४ से ६ रत्ती दिनमें २ बार जलमें मिलाकर पिलावें।

उपयोग —इस चूर्णके सेवनसे आमाशयके पित्तका रूपान्तर होता है। अम्लपित्त, छातीमें जलन, खट्टी डकार और अपचन आदि दूर होते हैं। नये विकारमें यह चूर्ण हितकारक है। इसका उपयोग अधिक दिनों तक नहीं करना चाहिये।

---

(४३) विसर्प

विसर्प रोगीको घृत और तैल खानेको न देवें। एवं घृत-तैलका मर्दन या लेप भी न करें। तैल या वेसलीन वाले मलहमका भी उपयोग नहीं करना चाहिये। अन्यथा वह अधिक फैलता है।

रक्तचंदन, पीपलकी छाल, गेरू, गीले अरमानी, चौलाईका रस, गुलाबजल, दशांग लेप आदिका उपयोग हितावह है।

रक्त और उदरशोधनार्थ मंजिष्ठादि अर्क, गन्धक रसायन आदि औषधियोंका उपयोग करना चाहिये।

१. कासीसादि वटी (विसर्प)

विधि —कासीस भस्म, चित्रकमूल, पाठा, गिलोय, रक्तचंदन, रसौंत, धतूराके शुद्ध बीज और नागरमोथा, इन ८ औषधियोंको समभाग मिला विष्णुक्रान्ता (अपराजिता) के स्वरसमें ३ दिन मर्दन कर १-१ रत्तीकी गोलियां बनावें। (भै० र०)

मात्रा —१ से २ गोली दिनमें २ बार आमलके रस और शहदके साथ।

उपयोगः—इस वटीके उपयोगसे दुःसाध्य विसर्प और उसके ज्वर, दाह आदि लक्षण सब नष्ट हो जाते हैं।

२. मुक्ता मिश्रण

योगः—मुक्तापिष्टी और रससिंदूर १-१ रत्ती, प्रवाल पिष्टी २ रत्ती और गिलोय सत्व ४ रत्ती सबको मिलाकर २ पुड़ी बनावें। सुबह शाम शहदके साथ सेवन करें और ऊपर निम्नलिखित पटोलादि क्वाथ पिलावें, तो ज्वर, दाह और वेदनासह विसर्प रोग निवृत्त हो जाता है।

कभी-कभी व्रण-विद्रधिमें कीटाणुओंका प्रवेश होकर विसर्पकी संप्राप्ति होती है। उसमें शोथ, ज्वर, शिरदर्द, बद्धकोष्ठ और वेदना आदि लक्षण होते हैं। ऐसे विकार-वाले विसर्पमें पहले जलौका लगाकर रक्तमोक्षण कराना चाहिये। फिर इस मुक्तामिश्र-णका प्रयोग करनेपर लाभ हो जाता है।

३. पटोलादि क्वाथ

विधिः—परवलके पत्ते, गिलोय, चिरायता, अडूसाके पत्ते, नीमकी अन्तर छाल, पित्तपापड़ा, खैरकी छाल और नागरमोथा, इन ८ औषधियोंको समभाग मिला कर जौ कूट चूर्ण करें। (भै० र०)

मात्राः—२-२ तोले चूर्णको १६ गुने जलमें मिला चतुर्थांश क्वाथ कर दिनमें दो बार पिलाते रहें।

उपयोगः—इस क्वाथके सेवनसे विसर्प और विस्फोटक ज्वरसहित निवृत्त हो जाते हैं। यदि रोगीको कब्ज भी हो तो क्वाथमें कुटकी और त्रायमाणा मिला देनेसे सत्वर लाभ पहुँचता है।

४. विसर्पहर तैल

प्रथम विधिः—हिन्दी और मराठीमें पांगरा। संस्कृतमें पारिभद्र, बहुपुष्प। गुजरातीमें पांडेरवो। बंगालीमें पलिता मंदार। तैलंगीमें वारिजम्, वारिदमु और लेटिनमें एरिथ्रिना इण्डिका (Erythrina indica) कहते हैं। यह पादपसंज्ञाका वृक्ष वरुणासे मिलता जुलता होता है। इसकी उपजातिकी कल्पना पुष्पोंके रंगसे होती है। वसन्त ऋतुमें जब पूरा पतझड़ होकर वृक्ष लकड़ी मात्र रह जाता है। फिर फूल आते हैं। ये फूल श्वेत, लाल, पीले होनेसे तीन प्रकारके होते हैं। श्वेत फूलवाला विशेष गुणवान है। उसे आन्ध्रभाषामें तिल्लवारिजम् कहते हैं। इसका यथालब्ध पंचांग लेकर कल्क करें। (किंवा पत्ते, छाल और मूल ही पर्याप्त हैं) फिर चौगुने नारियलके तेलमें यथाविधि सिद्ध कर कल्कको भी तेलमें ही रगड़ दें।

उपयोगः—इस तैलको विसर्पपर लगानेसे चमत्कारी लाभ होता है। चाहे सैकड़ों प्रयोगोंसे सफलता न मिली हो, ऐसे अत्यन्त बढ़े हुए विसर्पपर भी यह तैल

आश्चर्यान्वित लाभ कर देता है। छोटे बच्चे, जिनका एक अङ्ग वा सर्वाङ्ग सड़ जाता है। उसे प्रायः छिया, परछावा, पल्लेकी बीमारी या छूतकी बीमारी कहती हैं। उसमें स्पर्शजन्य व्रण हो जाते हैं। उसपर यह प्रयोग जादू सा प्रभाव दिखाता है। यह अनेक वर्षोंका अनुभव सिद्ध योग है।

अत्यन्त दाह और उष्णतापूर्ण विसर्प अथवा किसी भी प्रकारके पित्तरक्त प्रकोपपर इस पागाराकी छालका रस १-२ तोला गोदुग्धमें मिला मिश्रीके साथ (या छालका चूर्ण घी शक्करके साथ) देनेसे ३-४ मात्रामें ही अपरिमित लाभ दर्शाता है।

(श्री पण्डित राधाकृष्णजी द्विवेदी)

द्वितीय विधि—नीमकी निम्बौलीका तेल २-२ बूंद केपसुलमें डालकर निगलवा देनेसे तथा उसी तेलको विसर्पपर लगानेसे तत्काल लाभ हो जाता है।

---

(४४) मसूरिका

१. वसन्तसुन्दर रस

विधि—सुवर्णमाक्षिक भस्म, रौप्यभस्म, अभ्रकभस्म, गोरोचन और सौंठ, इन ५ औषधियोंको समभाग मिला ३ दिन सिरसके क्वाथकी भावना देकर आध-आध रत्तीकी गोलियां बना लेवें। (र० यो० सा०)

मात्रा—१-१ गोली दिनमें २ या ३ बार दूधके साथ देवें।

उपयोग—इस रसके सेवनसे सब प्रकारके उपद्रवों सह मसूरिका रोग नष्ट हो जाता है। शीतला पीड़ित रोगियोंके लिये वसन्तसुन्दर अति हितावह औषध है। जिस तरह शीतल वायुसे पीड़ित वृक्ष वसन्तऋतुका आगमन होनेपर प्रफुल्लित हो जाता है, उसी तरह वसन्तसुन्दरका प्रयोग होनेपर मसूरिकासे पीड़ित रोगी नवजीवनको प्राप्त कर लेता है।

सूचना—दिनमें निद्रा, सुरापान, तैल और मछलीका आग्रहपूर्वक त्याग करना चाहिये। नमक, मिर्च, खटाई आदि भी हानिकर हैं। नमक खानेपर अधिक कण्डू उत्पन्न होती है। फिर खुजानेसे फाले फूट जाते हैं और वहांपर दाग रह जाता है। अतः नमकका त्याग करा देना चाहिये। ज्वर अधिक हो और मसूरिकामें विविध उपद्रव उत्पन्न हुए हों, तो रोगीको केवल दूधपर रखना विशेष हितकारक माना जाता है।

२. शीतलाशामक वटी

विधि—ब्राह्मी, कालीमिर्च, हंसराज, तुलसीके पान २-२ तोले और गोरोचन ३ माशे लेवें। सबको मिला तुलसीके रसमें १२ घंटे खरलकर आध-आध रत्तीकी

मात्राः—१ से २ गोली ४-४ घंटेपर दिनमें ३ बार तुलसीके रसके साथ।

उपयोगः—इस वटीका सेवन करानेसे शीतला और रोमान्तिकाके दाने जल्दी बाहर निकल आते हैं।

३. गोरोचन मिश्रण

विधिः—गोरोचन १ तोला, प्रवालपिष्टी, शृङ्गभस्म और अमृतासत्व २-२ तोले तथा सोनागेरू ३ माशे लें। सबको मिलाकर घोट लेवें।

मात्राः—१ से ३ रत्ती दिनमें ३ बार शहद या तुलसीके रसके साथ।

उपयोगः—यह मिश्रण मसूरिका आदि रोगोंके विषको नष्ट करनेमें अद्वितीय है और बिगड़े हुए मसूरिका आदिके रोगी भी इसके सेवनसे बच गये हैं।

४. मसूरिकान्तक रस

विधिः—षड्गुण बलिजारित रससिंदूर ५ तोले, कलौंजी ५ तोले और बड़े पक्के रुद्राक्ष १० तोले लें, सबको मिला करेलेके फलोंके रसकी १ भावना, ब्राह्मी (यथार्थमें मंडूकपर्णी) के स्वरस या क्वाथकी २ भावना और शिरसके स्वरसकी एक भावना देकर एक-एक रत्तीकी गोलियां बना लेवें।

मात्राः—आधसे एक रत्ती बालकको और २ से ३ रत्ती युवाको दिनमें ४-६ बार गंगाजलमें घिसकर पिलावें।

उपयोगः—यह मसूरिकान्तक रस सब प्रकारके अति बढ़े हुए मसूरिकाको भी दूर करता है। यदि शीतलाके आरम्भसे ही इसका सेवन कराया जाय, तो विष शमन होकर रोग सत्वर निवृत हो जाता है, यह रसायन अनेक वर्षोंका परीक्षित है।

(श्री पं० राधाकृष्णजी द्विवेदी)

५. इन्दुकला वटी

विधिः—शुद्ध शिलाजीत, लोहभस्म और सुवर्ण भस्म तीनोंको समभाग मिला बनतुलसीके रसमें ३ दिन खरलकर आध-आध रत्तीकी गोलियां बनाकर छायमें सुखा लेवें। (भै० र०)

मात्राः—१ से २ गोली दिनमें २ बार उदर साफ हो तो द्राक्षादि क्वाथ और मलावरोध हो तो निम्बादि क्वाथसे देवें।

उपयोगः—इन्दुकला वटी मसूरिका, विस्फोटक, लोहित ज्वर और सब प्रकारके व्रणोंको दूर करता है।

नव्य चिकित्सकोंके अन्वेषणसे विदित हुआ है कि मसूरिका कीटाणुजन्य रोग है। कीटाणुविष बढ़नेपर ज्वरवृद्धि होती है। फिर मांस आदि धातुओंको हानि पहुँचने लगती है। मांसका कोथ होने लगता है। इस तरह विष लीन होनेपर शीतला रोग गम्भीर रूप धारण कर लेता है। शारीरिक उत्ताप १०२° से १०४° तक रहना,

तेजनाड़ी, तृषावृद्धि, वार-बार प्रलाप और बलह्रास आदि लक्षण उपस्थित होते हैं। इस अवस्थामें जीवनकी रक्षाका महत्व कार्य इन्दुकला वटी कर देती है।

शिलाजीत श्रमक्लान्तिनाशक, प्रदाहहर और अन्तरोत्पन्न पीड़िकाका नाशक है। लोह रक्तप्रसादन, सेन्द्रिय विषहर और बल्य है। सुवर्ण मस्तिष्कशोधन, कीटाणुनाशक और हृद्य है। वनतुलसी ज्वरघ्न, मूत्रजनन और वातशमन गुण दर्शाती है।

सूचना—जल गरम करके शीतल किया हुआ पिलावें। देह पोषणार्थ आवश्यकता हो उतने थोड़े परिमाणमें दूध देते रहें।

६. मसूरिकान्तक वटिका

(१) रुद्राक्ष, नागार्जुनी (छोटी दूधेली), करेला, हुलहुल, हल्दी, निम्बकी, निम्बोलीकी गिरि, बेलवृक्षके काटे, इन ७ द्रव्योंका मसूरिकाकी चिकित्सामें सैंकड़ों बार प्रयोग करके सफलता प्राप्त की है। इनमेंसे किसी ३ द्रव्योंको अष्टमांश कालीमिर्चके साथ जलमें पीस कर २-२ रत्तीकी गोलियाँ बना लेवें।

मात्रा—१ १ गोली जल या मूल द्रव्योंके स्वरससे दिनमें ३ बार सेवन करावें।

उपयोग—यह वटी मसूरिकामें शीघ्र लाभ दर्शाती है। एवं ऋतुदोषसे जब मसूरिका फैलता है या मसूरिका जनपदव्यापी भयंकर रूप धारण कर लेता है, या कुटुम्ब या घरमें किसीको शीतला निकला हो, उस समय घरके सब छोटे, बड़े बालकोंके रक्षणार्थ एक सप्ताह तक पथ्य पूर्वक सेवन कराया जाय, तो इसका प्रभाव ६ मास तक रहता है अर्थात् रक्तमें रोगनिरोधक शक्ति उत्पन्न हो जानेसे उतने समय तक शीतला निकलनेका भय नहीं रहता। पुनः सेवन कराया जाय, तो सेवन करने वाले मसूरिकाके आक्रमणसे बच जाता है। कदाच संसर्ग दोषसे रोग आजाय तो भी विशेष कष्ट नहीं होता। सरलतासे विष शमन हो कर रोग निवृत हो जाता है।

चिकित्सा कालमें ऋतु, आयु, प्रकृति, रोगबल आदिके अनुरूप अनुपान, पथ्य और जलपान आदिकी व्यवस्था करनी चाहिये। यथा—उष्णकालमें शीतल जल, शीत कालमें गरम करके शीतल किया हुआ जल और शरद् ऋतुमें ताजा कूपोदक, गेहूँ, चना, गुड़, मिश्री, तिल-गुड़, तिल-खाण्डकी गजक आदि पथ्य देवें। धूपन प्रयोग, नेत्ररक्षा प्रयोग और विशेष अवस्थामें तन्त्र प्रयोग भी किये जाते हैं। एक लक्ष से अधिक रोगियोंकी चिकित्सा करके अनुभव प्राप्त किया है। (श्री० प० राधाकृष्णजी द्विवेदी)

(२) बहेड़ाकी मज्जा और निम्बोलीकी मज्जा १-१ तोला तथा हल्दी २ तोले मिला हुलहुल, छोटी दूधेली (नागार्जुनी) और ब्राह्मीके स्वरसकी १-१ भावना देकर २-२ रत्तीकी गोलियां बना लेवें। (शीतकालमें ६ माशे रससिंदूरमें यह योग ८ तोले मिलाया जाय तो अधिक और सत्वर लाभ करता है)। इन गोलियोंमेंसे १-१ गोली ३-३ घंटे पर दिनमें २-३ बार देते रहनेसे मसूरिका रोग उपद्रव सह नष्ट होजाता है।

(श्री० पं०राधाकृष्ण जी द्विवेदी)

द्विवेदीजीने इस रोगका विशेष अनुभव प्राप्त किया है आपकी इच्छा है, कि इस रोग पर स्वतंत्र पुस्तक लिखकर जनताकी सेवामें समर्पित की जाय।

७. एलाद्यरिष्ट

विधिः—छोटी इलायचीके दाने २०० तोले, वासाके मूलकी छाल ८० तोले, मजीठ, इंद्रजौ, दन्तीमूल, गिलोय, हल्दी, दारूहल्दी, रास्ना, खस, मुलहठी, सिरस, खैरकी छाल (या लकड़ीका बुरादा), अर्जुन छाल, चिरायता, नीमकी अन्तर छाल, चित्रकमूलकी छाल, कूठ और सौंफ, ये १६ ओषधियां ४०–४० तोले लें। सबको मिलाकर जौकूट करें। फिर २०५ सेर जलमें मिलाकर अष्टमांश क्वाथ करें। जब २५।।। सेर जल शेष रहे, तब उतार कर छान लें।

वक्तव्यः—छोटी इलायचीके छिलके विषनाशक और रक्तशोधक हैं अतः छिलकोंको फैंकना नहीं चाहिए किन्तु अवश्य मिला लेना चाहिए। इनसे इसमें गुण-वृद्धि होती है। हम छोटी इलायचीको चौगुने जलमें मिलाकर अर्धावशेष क्वाथ करते हैं। शेष ओषधियोंको अलग १५२ सेर जलमें उबालकर २१ सेर शेष रखते हैं। फिर दोनों जलको मिला लेते हैं।

फिर धायके फूल ६४ तोले, शहद १२०० तोले, दालचीनी, तेजपात, नागकेशर, छोटी इलायची, सौंठ, कालीमिर्च, पीपल, सफेद चन्दन, रक्त चन्दन, जटामांसी, मुरामांसी (तगर), नागरमोथा, छरीला, सफेद सारिवा. कृष्ण सारिवा, इन १५ ओषधियोंके ४–४ तोलेका चूर्ण उक्त क्वाथमें मिला पात्रमें भर मुखमुद्रा कर एक मासतक रहने देवें। परिपक्व होनेपर छानकर बोतलोंमें भर लेवें। (भै० र०)

मात्राः—१। से २॥ तोले, दिनमें दो बार समान जल मिलाकर देवें।

उपयोगः—इसके सेवनसे विसर्प, मसूरिका, रोमान्तिका, शीतपित्त, विस्फोटक (फोड़े), विषम ज्वर, नाड़ी व्रण, दुष्ट व्रण, दारुण कास, दारुण श्वास, भगंदर, उपदंश और प्रमेहपिड़िका रोग नष्ट होते हैं।

यह अरिष्ट शीतवीर्य, मूत्रल, दीपन-पाचन, विषघ्न और बल्य है। इसके सेवनसे मूत्रोत्पत्ति कुछ अधिक होती है; तथा रक्तमें संगृहीत विष पेशाब द्वारा बाहर निकल जाता है। एवं यह यकृत्पित्त स्रावकी वृद्धि करा अन्त्रमें रहे हुए आमविष और कीटाणुओंको नष्ट करता है।

विसर्प, मसूरिका, रोमान्तिका, शीतपित्त, प्रमेहपिड़िका आदि अनेक व्याधियोंकी उत्पत्ति रक्तमें कीटाणु या विष वृद्धि होनेपर होती है। एवं इन रोगोंकी वृद्धि भी विषप्रकोपसे ही होती है। यह अरिष्ट इन रोगोंकी उत्पत्ति और वृद्धि कराने वाले मूल विषको ही बाहर निकाल देता है। और नयी उत्पत्तिको रोक देता है। जिससे ये रोग नष्ट हो जाते हैं।

एलादयरिष्टके सेवनसे ज्वरजनित दाह और धातुशोषसे उत्पन्न दाह शमन होता है। मसूरिका रोगमें नेत्रका संरक्षण होता है, घबराहट दूर होकर मानसिक प्रसन्नता बनी रहती है। मसूरिकाकी सर्व अवस्थाओंमें बालक और बड़ोंके लिये यह हितावह है। मुख्य औषधिके साथ यह अनुपान रूपसे दिया जाता है। उपदंश और सुजाक जिनको होते हैं, उनमेंसे कितनेक व्यक्तियोंके रक्तमें लीन विष कुछ अंशमें रह जाता है। फिर उस विषके हेतुसे उनकी सन्तानोंकी देहमें भी कुछ कुछ उपद्रव होते रहते हैं। ऐसे उपदंश, सुजाक पीड़ित माता-पिताकी सन्तानोंको और अति निर्बल बच्चोंको शीतला होनेपर विशेष सम्हाल न रक्खा जाय, तो रोग भयंकर रूप धारण कर लेता है। अतः उन रोगियोंको शीतला (रोमान्तिका या विसर्प आदि) रोग प्रारम्भ होते ही इसका सेवन कराया जाय, तो रोग सरलतासे निवृत्त होजाता है।

८ द्राक्षादि क्वाथ

विधि —मुनक्का, गम्भारी, पिण्डखजूर, पटोलपत्र, निम्बपत्र, वासापत्र, खील, आंवला और धमासा, ये ९ औषधियां समभाग मिलाकर जौकूट करें।

मात्रा —४ तोलेका क्वाथकर ३ विभाग करें। सुबह, दोपहर और रात्रिको ४-४ माशे मिश्री मिलाकर पिलावें।

उपयोग —यह क्वाथ शीतला रोगको दूर करता है। जब तृषाधिक्य, दाह, स्वेदाधिक्य और व्याकुलता अधिक हो, तब यह व्यवहृत होता है।

९. निम्बादि क्वाथ

विधि —नीमकी अन्तरछाल, पित्तपापड़ा, पाठा, परवलके पान, कुटकी, अडूसा, धमासा, आंवला, खस, सफेद चन्दन और रक्तचन्दन इन ११ औषधियोंको मिलाकर जौकूट चूर्ण करें।

मात्रा —२ तोलेका क्वाथकर ३ विभाग बना दिनमें ३ बार ४-४ माशे शक्कर मिलाकर पिलावें।

उपयोग —निम्बादि क्वाथ मसूरिकामें अधिक उपयोगी है। ज्वराधिक्य, दाह, तृषा, व्याकुलता, शिरदर्द, मलावरोध, मूत्रमें अधिक पीलापन और जलन आदि लक्षण सह पित्तज मसूरिकाको दूर करता है।

१०. कार्बोलिक मलहम

एसिड कार्बोलिक	Acid Carbolic	२ ड्राम
नीलगिरि तेल	Oil Eucalyptus	४ ड्राम
टिंचर ओपियाई	Tinct Opii	१ औंस
तिल तैल	Sweet Oil	७ औंस
सफेद वेसलीन	White Vaselin	१ औंस

पहले तिल तैल और वेसलीनको गरम करें। फिर गुनगुना रहनेपर नीलगिरी तैल, अफीमका अर्क और एसिड क्रमशः मिलावें। अच्छी तरह चलाकर एकजीव करें।

उपयोगः—यह मलहम शीतलाके दाने पूरे भर जानेके बाद कण्डु होनेपर व्यवहृत होता है। कपड़े या मुलायम कूंची (Swab) द्वारा सुबह-शाम सारे शरीरपर लगाते रहनेसे शीतलाकी तीव्र पीड़ाका दमन होता है और खाज नहीं आती। इस मलहमके लगानेसे अबोध बच्चे द्वारा शीतलाके दाने फोड़ देनेका भय कम होजाता है।

---

(४५) क्षुद्र रोग

१. क्षुद्ररोगहरयोग

(१) दारुणकः—सर्पकी कैंचुलीको ६४ गुने तिल तैलमें मिलाकर गरम करनेपर मिल जाती है। इस तैलकी शिरपर मालिश करते रहनेसे थोड़ेही दिनोंमें कण्डु, फुन्सी, कृमिप्रकोपसे बालगिरना आदि विकार दूर होते हैं। बालोंको रोज रीठेके जलसे धोते रहना चाहिये।

(२) दारुणकः—भैंसके सिंगोंको जलाकर राख करें। धुआँ निकल जाने पर बरतन ढक देनेसे काली राख होती है। उस राखको ४ गुने तैलमें मिलाकर शिरपर लगा देनेसे सब कृमि मरकर दारुणक रोग दूर होजाता है।

(३) दारुणकः—कनेरकी छाल, कांटेदार करंजके मूल (या छाल), निम्बपत्र और चमेलीके पान, सब १०–१० तोले, चित्रकमूल ५ तोले और तिल तैल २ सेर लेवें। सब वस्तुओंको मिला जलके साथ चटनीकी तरह पीस लेवें। फिर तैल, चटनी और ८ सेर जल मिलाकर मंदाग्निपर पाक करें। जल जलजानेपर कड़ाहीको नीचे उतार कर तुरन्त तैलको निकाल लेवें। इस तैलका मर्दन कराते रहने से दारुणक नष्ट होजाता है।

(४) दारुणकः—आमकी गुठलीकी गिरी और छोटी हरड़ दोनोंको समभाग ले दूधमें घिसकर शिरपर लगाते रहनेसे दारुणक रोग दूर होजाता है। यह रोग नव्य चिकित्सकोंने कीटाणुजन्य माना है। इस रोगमें शिरमें छोटी छोटी फुन्सियां होती हैं। खुजली चलती रहती है। बाल शुष्क निस्तेज बनजाते हैं। और कुछ कुछ वेदना भी होती है। दिनमें २–३ बार लेप करते रहने और शिरको नियमित धोते रहनेसे थोड़ेही दिनों में कीटाणु नष्ट होकर रोग निवृत्त होजाता है।

(५) कुनख (चिप्प):—सोहागेको जलमें घिसकर लेप करते रहनेसे थोड़ेही दिनोंमें नख विकृति दूर होकर नख स्वाभाविक बन जाता है।

(६) मुखपिड़का:—सेमलके कांटेको दूधमें चटनीकी तरह पीसकर दिनमें ३–४ बार लेप करते रहनेसे पिड़का दूर होजाती है।

उपयोग —थोड़ा-सा चूर्ण कपड़ेमें बांध दांतोंके बीचमें दबा लेनेसे कृमि नष्ट होकर दाढ़ और दांतोंका शूल उसी समय शमन हो जाता है।

तीसरी विधि—रस ज्योतिका दूध १० तोला और सफेद कत्था २० तोले मिला, तस्तरीमें फैलाकर छाया में सुखावें। फिर पीस चूर्ण कर बोतलमें भर लेवें।

उपयोग —इस मञ्जन का नित्यप्रति उपयोग करते रहने पर हिलते हुए दांत दृढ़ होते हैं और वेदना शमन हो जाती है।

५. दन्तशूलान्तक बिन्दु

प्रथमविधि —कपूर, पीपरमेण्टका फूल और क्लोरल हाईड्रेट (Chloral Hydrate), तीनों १-१ औंस तथा कार्बोलिक एसिड ३० बूंद लें। सबको मिला लेनेसे जलके सदृश प्रवाही हो जायगा। इसमेंसे फुरेरी भिगोकर दाढ़ या दांतके पास रखने से तत्काल वेदना शान्त हो जाती है।

द्वितीय विधि —कपूर, २॥ तोलेको रेक्टीफाइड स्पिरिट १० तोलेमें डालें। गल जाने पर १ औंस टिंचर सिनामोम (दालचीनीका अर्क) मिला लेवें। इसमेंसे फुरेरी डुबो कर पीड़ित डाढ़ या दांतके पास दबा देनेसे लालास्राव होकर त्वरित पीड़ाका निवारण हो जाता है।

६. खदिरादि तैल

विधि—खैरकी छाल और बकुलकी छाल २००-२०० तोलेको जौ कूट कर २०४८ तोले जलमें मिलाकर चतुर्थांश क्वाथ करें। फिर खैरकी छाल, लौंग, सोनागेरू, अगर, पद्माख, मजीठ, लोध, मुलहठी, लाख, बड़की छाल, नागरमोथा, दालचीनी, जायफल, शीतलमिर्च, अकरकरा, पतंग, धायके फूल, छोटी इलायचीके दाने, नाग केशर, और कायफलकी छाल, इन २० द्रव्योंको १-१ तोला लेकर कल्क करें। पश्चात् कल्क, क्वाथ और १२८ तोले तिल तैलको मिला कलईदार बर्तनमें डाल मंदाग्नि पर पाक करें और खैरके डंडेसे चलाते रहें। तैल सिद्ध होने पर कपूर १ तोला मिला कपड़ेसे छान कर बोतल में भरें। (श्री प० यादवजी त्रिकमजी आचार्य)

उपयोग —इस तैलके प्रयोगसे मुखपाक, मसूढ़ोंका पाक और उनमेंसे पूय निकलना, दांतोंका सड़ना, दांतोंमें छिद्र होना, दांतोंमें कृमि होना, दांत ढीले मृत प्राय हो जाना, मुँहसे दुर्गन्ध निकलना तथा जिह्वा, तालू और ओष्ठके रोग सब नष्ट होते हैं। पायरियामें इस तैलके कुल्ले धारण करने पर लाभ होता है।

७. बकुलाद्य तैल (पायोरिया प्रहार)

विधि —मौलसिरीके फल, लोधपठानी, हाडजोड़ (संस्कृत में अस्थिसंधान, वज्रवल्ली। तेलगूमें नल्लेड़ा। मराठी में कांडवेल और लेटिनमें विटिस कोड्रंगुलेरिस (Vitisquadrangularis) कहते हैं। किन्तु यह दुग्ध रहित, धारधारीवाली ४-५

इंच पर गांठवाली और पत्रवाली होती है), पीयांबांसा, अमलतासकी छाल, बबूलकी छाल, शाल वृत्तकी छाल और दुर्गन्ध खैर (तै० मुरकी तुस्मा), १०-१० तोले; विजयसारका बुरादा २० तोले तथा तिल तैल (या सरसों का तैल), ऽ२ सेर लेवें। पहली २ ओषधियोंका कल्क करें। शेष ओषधियोंका यथा विधि कषाय करें। फिर सबको मिलाकर तैल सिद्ध करें। (श्री० पं० राधाकृष्णजी द्विवेदी)

उपयोगः—इस तैलको फुरेरीसे रात्रिके समय लगावें। बढ़े हुए दोषोंमें इस तैल ५ तोलेको गरम करके शीतल किये हुए उत्तम सरसोंके तैल २५ तोलेमें मिला कर प्रातः काल गंडूष करनेसे अनेक दंत रोगों (दंतपूय-पायोरिया, कराल रोग, दंतपुप्पुट) को नाश करता है। दंतपूय (पायोरिया) रोग बढ़नेपर ऐलोपेथी वालोंने असाध्य माना है, उसे नष्ट करनेमें यह अद्वितीय योग है। २० वर्षोंका अनुभूत है। पायोरियाकी चिकित्सामें पथ्यपेय होना चाहिये तथा भोजनोत्तर भृंगराजासव पिलाना चाहिये। इस रोगमें मंजन, दन्त वर्षण और दतौन नहीं करना चाहिये।

८. सौभाग्य प्रवाही

विधिः—फिटकरीका फूला और मुलहठी १।-१। तोला, सोहागेका फूला २॥ तोले और मिश्री २० तोले लेवें। मिश्रीका शर्बत बना शीतल होनेपर तीनों ओषधियों-का कपड़छान चूर्ण मिला लेवें। (श्री० वैद्य रविकान्तजी)

वक्तव्यः—सोहागेके फूलाके स्थान पर एसिड बोरिक और मिश्रीके बदले ग्लिसरीन लेने पर योग विशेष लाभदायक बनता है।

उपयोगः—इस प्रवाहीमें फुरेरी डुबोकर मुँह और कंठमें फिरानेसे मुखक्षत, फाला, गल ग्रन्थिविकार, उपजिह्वा (कौए) की शिथिलता, जिह्वा फट जाना आदि दूर होते हैं।

९. मुखपाकहर योग

(१) सफेद कत्था ५ तोले, छोटी इलायची छिल्टे सहित और शीतलचीनी २॥-२॥ तोले, कपूर ६ माशे तथा सेलखड़ी १० तोले लेवें। सबको मिला कूट कर कपड़छान चूर्ण करें। यह चूर्ण दाह युक्त जिह्वाके क्षत, मुखपाक आदिको दूर करता है। इस चूर्णमेंसे चुटकी चुटकीभर दिनमें ८-१० या अधिक बार मुँहमें डालें। मुँहमें थूंक इकट्ठा होने पर बाहर निकाल डालें। इस तरह प्रयोग करने पर मुखपाक जल्दी निवृत्त हो जाता है।

वक्तव्यः—यदि मुखपाक चिरकालका हो और आमाशय विकृति जन्य हो, तो स्वादिष्टविरेचन, मंजिष्ठादि चूर्ण, गुलकंद या इतर मृदु विरेचनसे उदरशुद्धि करते रहना चाहिये। एवं साथ साथ कामदूधा, प्रवालपिष्टी, शतपत्र्यादि चूर्ण या सारिवादि हिम जैसी सौम्य और आमाशयिक रसकी तीव्रताको शान्त करनेवाली औषधि

(४७) कर्णरोग

१ कर्णरोगहर रस

बनावट —अभ्रक भस्म, लोह भस्म, शुद्ध गंधक, ताम्र भस्म और बकरेके मूत्रमें २१ दिनतक खरल किया हुआ पारद, इन पांच औषधियोंको समभाग लें। पहले पारद गंधककी कज्जली करें। फिर भस्म मिला त्रिफलाके क्वाथ और अदरखके स्वरसमें ३-३ दिन खरलकर १-१ रत्तीकी गोलियां बना लेवे। (र० यो० सा०)

मात्रा —१ से २ गोली अदरख या तुलसीके रसके साथ दिनमें दो बार।

उपयोग —इस रसायनके सेवनसे सब प्रकारके कर्णरोगकी निवृत्ति होती है। कानमें गुञ्ज होना, कर्णशूल, कर्णपाक और बधिरता आदि रोगोंपर यह रस लाभदायक है।

सूचना —दही, खटाई, गुड़, शक्कर, पक्वा भोजन, शीतल वायुका सेवन, शीतल जलसे स्नान, जोरसे बोलना और स्त्री समागम आदि अपथ्य आहार-विहारका त्याग करना चाहिए।

२ निशा तैल

विधि —सरसोंका तैल १ सेर, धतूरेके पानोंका स्वरस ४ सेर, हल्दी ८ तोले और गंधक ८ तोले लें। हल्दी और गंधकको पीसकर धतूरेके साथ कल्क करें। फिर सबको मिला मन्दाग्निपर यथाविधि तैल सिद्ध करें। (भै० र०)

उपयोग —इस तैलकी २-४ बूंद कानमें डालते रहनेसे १०-१२ दिनमें कानका नाड़ीव्रण दूर हो जाता है।

सूचना —शीतल जलसे स्नान करना, शक्कर-गुड़ अधिक खाना, कानको शीतल वायु लगाना, ये सब हानिकारक हैं।

तैल डालनेसे पहले रुईकी फुरेरीसे पोंछ लेना चाहिए। बाहर पीप लगा हो, तो उसे त्रिफला क्वाथके गरम जल या कार्बोलिक लोशनमें कपड़ा भिगोकर पोंछ लेना चाहिए। बार बार कानको धोना नहीं चाहिए।

३ कुम्भी तैल

विधि —जलकुम्भी (सं० आकाशमूलि)। बं० टाकापाना। ले० पिस्टिया स्ट्रेटियोटम् (Pistia Stratiotes) जो जलपर फैलनेवाली स्कंधरहित वनस्पति है। इसके पान १ से ४ इञ्चतक लम्बे और विविध चौड़ाईवाले होते हैं। मूल सादा सफेद तन्तुओंवाला होता है। कलिका (Spathe) लगभग आध इञ्च लम्बी और सफेद होती है। इसका कल्क १६ तोले, तिल तैल ६४ तोले और जलकुम्भीका स्वरस २५६ तोले मिला मन्दाग्नि देकर तैल सिद्ध करें। फिर कपड़ेसे छानकर बोतलमें भर लेवें।

उपयोगः—इस तैलको डालनेसे कानका दर्द, पीप आना, नाड़ीव्रण, सब दूर होते हैं। तैल डालनेके पहले कानको साफ कर लेना चाहिए।

४. कर्णपाक हर योग

(१) लोहेकी एक कुड़छीको अग्निमें तपाकर लाल करें। फिर उसमें १-२ माशे भैंसा गूगल डालें और तुरन्त चिलमको ऊपर ढक दें। चिलमके ऊपरके हिस्सेको कानमें लगा दें। जिससे सब धुआं कानमें चला जाय। इस रीतिसे प्रातः सायं दिनमें दो बार एक सप्ताह तक प्रयोग करनेसे कर्णपाक और वेदना शमन हो जाते हैं। ३-३ वर्षके पुराने रोगियोंको भी इस सरल प्रयोगसे लाभ हो जानेके उदाहरण मिले हैं।

(२) कटेलीके बीजको लोहेकी लालकी हुई कुड़छीमें डाल, उसपर चिलम रख कानके भीतर धुँआ देनेसे कानमें कीड़े हो गए हों, तो वे तुरन्त बाहर निकल जाते हैं। फिर वेदना शमन हो जाती है और कानमेंसे पूय निकलता हो, तो वह भी सरलतासे दूर हो जाता है।

(३) शुद्ध तार्पिनके तैलकी ४-४ बूंद प्रातः सायं कानमें डालते रहनेसे पूय-स्राव बन्द हो जाता है। कानके नाड़ीव्रणके पुराने रोगियोंको भी इस प्रयोगसे लाभ होता है।

(४) निर्गुण्डीके पानीका कल्क १० तोले, तिल तैल ४० तोले और निर्गुण्डीका स्वरस (या क्वाथ) २ सेर मिला मंदाग्निपर तैल सिद्ध करें। इस तैलके प्रयोगसे असाध्य कर्णपाक भी दूर होता है। कानमेंसे भयंकर दुर्गन्धयुक्त पीला पूय दिन रात निकलता रहता हो, जो सैकड़ों औषधोपचारसे अच्छा न हुआ हो, वह इस तैलके प्रयोगसे अच्छे हो गये हैं। (कविराज उपेन्द्रनाथजी)

सूचना:—कानको धोनेके लिए भीतर जल नहीं डालना चाहिए। त्रिफलाके क्वाथ या कार्बोलिक लोशनमें कपड़ा या रूई भिगोकर बाहर जहां-जहां पूय लगा हो, वहां-वहां पोंछ देना चाहिए। कानके भीतर धोनेकी आवश्यकता नहीं है।

(५) जंगली सूरण (जिमीकंद) की डण्डीका रस पुटपाक विधिसे निकालकर कानमें डालनेसे बहुत पुराने कर्णस्रावका भी निवारण होता है।

(६) मनुष्यकी हड्डीको ४ गुने तिल तैलमें उबाल लें। तैल अच्छी तरह पक जानेपर छान लेवें। इस तैलमेंसे २-२ बूंद रात्रिको कानमें डालनेसे पूयस्राव दूर हो जाता है।

(७) नर-कपालास्थिकी भली भांति मुलायम भस्म कर निर्गुण्डी तैलके साथ मिला कर्णपाकमें व्यवहार करनेपर अप्रतिम लाभकारी पाया है। इसका प्रयोग नाड़ी व्रण आदिमें भी होता है, जो यथा स्थान वर्णित है। (पं० राधाकृष्णजी द्विवेदी)

(८) लोहेके तवेको तपा लालकर उसपर मोम १ माशा, गूगल २ रत्ती और कपूर १ रत्तीको मिला गोली करके रखें। फिर तुरन्त ऊपर चिलमसे ढक्कर ऊपर कान लगा दें। जिससे धुआ कानमें चला जाय। इस प्रयोगसे कर्णशूल तुरन्त शमन हो जाता है।

५ कर्णबिन्दु

विधि—समुद्रफेन १ तोला आयडोफार्म ४ रत्ती, बोरिक एसिड ६ माशा और अफीम १॥ माशा मिलाकर चीनीके खरलमें १ प्रहर तक घोटें। फिर १० तोले बाष्पोदक अथवा औटाया हुआ जल थोड़ा थोड़ा डालते जायँ और घोटते जायँ। दो प्रहर तक घुटाई करनेपर २० तोले ग्लिसरीन और १ ड्राम कार्बोलिक एसिड डालकर एक प्रहरतक पुन घोटें। फिर कपड़ेसे छानकर शीशीमें भर लें। यदि कान बहता हो, तो हाइड्रोजन पर ओक्साइड कानमें डालनेसे झाग उठकर पूय बाहर निकल जायगा। ऐसे एक समयमें दो बार करें। बादमें कानको नीचेकी ओर कर पानी बाहर निकाल कपड़ेसे पोंछ उपरोक्त कर्णबिन्दुकी १०-१० बूंद प्रात. साय डालनेसे कर्णशूल तत्काल मिटता है। इसके अतिरिक्त पुरानेसे पुराना दुर्गंधयुक्त कर्णस्राव, व्रण, कृमि, कण्डु आदि प्रायः कानके समस्त रोग शीघ्र मिटते हैं। शतशो ऽनुभूत है। यदि इसकी दुर्गन्धि असह्य हो तो उत्तम असली गुलाबका इत्र १० बूंद मिला दें। (श्री वैद्यराज रामचन्द्रजी)

सूचना—हाइड्रोजन परऑक्साइड कानमें डालनेके बाद मिनट बाद कानको झुकाकर जल बाहर निकाल देना चाहिये। यदि उसमेंसे एकाध बूंद पूय मिली हुई मस्तिष्कमें चली जायगी, तो मस्तिष्कमें प्रदाह उत्पन्न करती है।

छोटे बालक और सुकुमारोंके लिये फुरेरीको हाइड्रोजन परऑक्साइडमें भिगोकर कानमें डाल पीपवाले भागको पोंछलेना चाहिये।

६ अहिफेन बिन्दु

विधि—अफीमका अर्क (Tinct. Opii) और ग्लिसरीन समभाग मिलालें। इसमेंसे २-४ बूंद कानमें डालनेसे कर्णशूल शमन हो जाता है।

७ सूचीबिन्दु

विधिः—सूची बूटीका अर्क (Tinct Belladonna) १ भाग और ग्लिसरीन ४ भाग मिला लेवें। इसमेंसे २-४ बूंद दिनमें दो बार कानमें डालनेसे कर्णशूल दूर होता है।

(४८) नासारोग

१. प्रतिश्यायहर वटिका

विधिः—कालीमिर्च, लौंग, बहेड़ेका छिलका, शीरखिस्त देशी और तुलसीपत्र, इन ५ औषधियोंको १६-१६ तोले लें। शीरखिस्तको छोड़ शेष वस्तुओंको कूट कपड़ छान चूर्ण करें। फिर शीरखिस्तको मिला लेवें। पश्चात् बबूलकी ताज़ी छाल १ सेरको ४ गुने जलमें क्वाथ कर चतुर्थांश रहने पर उतारकर छान लेवें। इस क्वाथमेंसे थोड़ा थोड़ा जल मिलाकर १२ घण्टे खरल कर २-२ रत्तीकी गोलियां बना लेवें।

(श्री राजवैद्य रामचन्द्रजी)

मात्राः—२ से ४ गोली, निवाये दूधसे दिनमें दो बार देवें।

उपयोगः—यह वटी नये जुकाम और मंद ज्वरके लिये रामबाण है। कब्ज हो, तो उसे भी दूर करती है। बिलकुल निर्भय, उत्तम और सस्ती औषधि है। हम अनेक वर्षोंसे इसका उपयोग कर रहे हैं।

२. प्रतिश्यायनाशक अवलेह

विधिः—उस्तखद्दुस ५ तोले, गावजवाँ, हुबुलास, धनियां, तीनों १०-१० तोले, तुख्म काहु २० तोले, खसखसके डोडे और खुरासानी अजवायन ३०-३० तोले, खसखस ४० तोले तथा मिश्री २० तोले लें। पहले मिश्रीके अतिरिक्त सब औषधियोंको कूट ४ सेर जलमें मिलाकर अर्धावशेष क्वाथ करें। फिर नीचे उतार मलकर छानलें। उसे चूल्हे पर चढ़ा मिश्री मिलाकर चाशनी तैयार करें। पश्चात् गुलाबके फूल, धनिया, सत मुलहठी, कतीरा गोंद, बबूलका गोंद, पीपल और कालीमिर्च, ये ७ औषधियां ५-५ तोले मिलाकर अवलेह बना लेवें। (हकीम उत्तमचन्दजी)

मात्राः—६-६ माशे अर्क गावजवाँ या जलके साथ दिनमें दो बार सेवन कराने से जुकाम और नजला दूर हो जाते हैं। १० वर्षके पुराने नजले भी इस औषधिके सेवनसे दूर हो गये हैं।

३. शिवा गुटिका

विधिः—उत्तम एलुआ १४ माशे, सकमूनिया १४ माशे, इन्द्रायणके फलका गूदा १८ माशे, अफ्तीमून, (छोटी अमरवेल) २। माशे, गोंद कतीरा २। माशे, कौडिया लोबान २। माशे, कालीमिर्च ८ माशे, केशर बढ़िया १ माशा, बीजाबोल २ माशे, उसका गोंद २ माशे, तथा सूखा पोदीना ८ माशे लें। पहले खरलमें केशर डाल कर सौंफके अर्क या कषायसे घोटें। फिर एलुआ और सकमूनियाको मिलावें। पश्चात् शेष सब औषधियोंका कपड़ छान चूर्ण डाल १ प्रहर रगड़ कर बेरके परिमाण गोली बनालें यह गोली १ माशा जैसी बनानेसे ४ रत्तीकी ही रहती है। (श्री० पं० राधाकृष्णजी द्विवेदी)

उपयोग —यह दुष्ट प्रतिश्यायके लिये सिद्ध योग है। प्रतिश्यायकी प्रत्येक दशामें सौंफके अर्क, फाट या कषायमें देवें और शोथमें गोमूत्र अथवा पुनर्नवादि क्वाथसे देनेसे शोथ का एकाग और सर्वांग दोष शान्त होता है।

४. नासाकृमिहर नस्य

प्रथम विधि —पुलवा, कड़वी तमाखू, वायविडंग, देवदालीके फल और शुद्ध हींग, सब एक एक तोला लेवें। सबका कपड़छान चूर्ण कर जंगली तमाखूके स्वरसकी १० भावना दें। पश्चात् सुखाकर कपड़छान चूर्ण करलें।

(श्री० प० महेन्द्रनाथजी शास्त्री वैद्यवाचस्पति)

उपयोग —इस चूर्णका नस्य देनेसे नाकमेंसे कीड़े गिरने लगते हैं। एक दो दिनमें सब कृमि निकल जाते हैं। फिर नाकमेंसे दुर्गन्ध आना भी बंद होजाता है।

द्वितीय विधि —कपूरको समभाग तार्पिन तैलमें मिला लेनेसे थोड़े समयमें द्रव बन जायगा। उसमेंसे ४-५ बूंद प्रात साय नाकमें डालते रहनेसे २-३ दिनमें ही पीनस, पूतिनस्य, कृमिज शिरोरोग आदि दूर होजाते हैं। (श्रीमहात्मा उदयलालजी)

जिनका मुँह, नाक और सिर फूला हुआ था। नाकमेंसे दुर्गन्धयुक्त रक्त पूययुक्त स्राव होता था और पौन पौन इञ्चके लम्बे कृमि सैंकड़ोंकी संख्यामें गिरते थे, ऐसे कई रोगी इस योगसे स्वस्थ हो गये हैं।

तीसरी विधि —हिंगोट (इंगुदी) के फलके बारीक चूर्णका नस्य करानेसे सफेद या लालकीड़े, जो मस्तिष्कमें उत्पन्न हुए होंगे, वे सब गिर जाते हैं।

५. शिखरी तैल

विधि —रसोईघरका धुआं, पीपल, देवदारु, दारुहल्दी, जवाखार, करंजकी छाल, सैंधानमक और अपामार्गके बीज ये द्रव्य २-२ तोले लेकर कल्क करें। फिर कल्क, ६४ तोले तैल और २५६ तोले जल मिला कर तैल सिद्ध करें। (वृ० मा०)

उपयोग —इस तैलको फुरेरीसे नाकके भीतर उत्पन्न मस्से पर लगानेसे कुछ दिनोंमें मस्से जल जाते हैं।

६. नासार्शनाशक लेप

विधि —नौसादर और सज्जीखार (सोडा कार्बोनेट) दोनों ४-४ तोले, नीलाथोथा १ तोला और शहद २६ तोले मिला खरलकर मिश्रण बना लेवें।

उपयोग:—रूईकी बत्ती मिश्रणमें भिगोकर नाकके भीतर रोज दिनमें रखें। उग्रता अधिक पहुँचनेपर धोया घी लगावे। फिर उग्रता शमन होनेपर लेप चालू करें। इस तरह लेप करते रहनेसे कुछ दिनोंमें अर्श नष्ट हो जायगा।

७. नासारोगहर योग

बन्द हो जानेपर अति घबराहट होती है। उसे दूर कर श्वसन क्रिया चालू करानेके लिये कायफलका चूर्ण आधी रत्ती जितना सूंघाया जाता है। इससे १०-२० छींक आकर नाकमें प्रवेशित वस्तु निकल जाती है या कफ निकलकर मार्ग मुक्त हो जाता है।

आधा शीशीपर भी यह चूर्ण सूंघाया जाता है। इस चूर्णको ज्यादा नहीं सूंघाना चाहिये। अन्यथा अधिक छींक आकर नाकमेंसे रक्तस्राव होने लगता है। भूल हो तो घृत या तैल सूंघा देना चाहिये।

---

(४६) नेत्ररोग

१. सप्तामृत लोह

विधिः—मुलहठी, हरड़, बहेड़ा, आँवला और लोहभस्म, इन पांचों औषधियों को समभाग मिलाकर खरलकर लें। (च० द०)

मात्राः—१-१ माशे औषधिको १-१ माशे घी और २-२ माशे शहदके साथ मिलाकर दिनमें २ बार सेवन करें। ऊपर गौ दुग्ध पीवें।

उपयोगः—यह सप्तामृत लोह उत्तम रसायन है। इसके सेवनमें किसी भी प्रकारकी हानिका भय नहीं है। पथ्य पालन सह प्रयोग करने पर वमन, तिमिर, शूल, अम्ल पित्त, ज्वर, ग्लानि, आनाह, मूत्राघात और शोथ आदि विकार दूर होते हैं। और नेत्रकी ज्योति बढती है। नेत्रोंकी निर्बलता दूर करनेके लिये यह सरल और उत्तम औषधि है।

यह योग सौम्य और श्रेष्ठ है। वात–पित्त और कफ, तीनों प्रकृति वालोंके लिये हितावह है। कम मात्रामें पथ्य पालन सह इसका सेवन १ वर्ष तक किया जाय, तो रस, रक्त आदि सब धातुओंको सबल बनाकर देहको तेजस्वी बना देता है। यह शनैः शनैः पचन क्रियाको सुधारता है। मस्तिष्क, नेत्र, कान, नाक, कण्ठ आदि इन्द्रियोंको बलप्रदान करता है और आयुको बढाता है। यह योग रसायन होनेसे समस्त देहके लिये हितकारक है; तथापि इसका उपयोग नेत्र-ज्योति बढानेके लिये अधिक होता है।

जिनके नेत्रोंमें दाह होता हो, खाज आती हो, दृष्टि मंद हो गई हो, लाली रहती हो या रतौंधी हो अथवा मोतिया बिंदका आरम्भ हो रहा हो, उन सबके लिये यह सप्तामृत लोह अति हितावह है। यह किसी रोगीको चाहे लाभ न पहुँचा सके, किन्तु किसीको हानि कभी नहीं पहुँचाता।

रोगीको चाहिये, कि रोगानुसार पथ्यका पालन करें और आवश्यक बाह्य उपचार भी करता रहे। तमाखू आदि का व्यसन हो, तो छोड़ देवें और अधिक कब्ज न रहने देवें।

सूचना —मोतिया बिंद के रोगीको चाहिये, कि धूपमें अधिक न जाय, तेज बत्तीके प्रकाशमें न रहे। नेत्रको तीव्र प्रकाश लगता रहेगा, तो रोग दूर नहीं सकेगा।

इस योगका उपयोग रसायन रूपसे भी होता है। रसायन विधिसे लेना हो तो हरड़, बहेड़ा, आंवला और मुलहठी, चारों १॥-१॥ माशा और लोह भस्म २ रत्ती देवें। फिर ६ माशे घी और १ तोला शहद मिलाकर सुबहको लेते रहें। कुछ समय लेनेपर मलावरोध, अग्निमांद्य, रक्तविकृति, श्वास, कास, आमप्रकोप, कफ वृद्धि, उदरकृमि, वात विकार और शारीरिक निर्बलता आदि दूर होते हैं और शनैः शनैः देह सबल, पुष्ट और तेजस्वी होती है।

इस रसायनको रसेन्द्रसार संग्रह कारने "तिमिर हर लोह" संज्ञा दी है और गुण वर्णनमें लिखते हैं कि "लोह तिमिरकं हन्ति सुधांशुस्तिमिरं यथा" अर्थात् यह लोहा तिमिर रोगको उस प्रकार दूर करता है, जैसे चन्द्र अन्धकारको।

२ कुकूणकनाशक बिन्दु

विधि —रसकपूर और सैंधानमक १-१ माशा, कपूर ४ रत्ती और नीला-थोथा २ रत्ती लें। सबको साथ एक शीशीमें भरें। फिर गुलाबजल २० तोले मिलाकर १ दिन रहने देवें। दूसरे दिन फिल्टर पेपरसे छान लेवें।

उपयोग —इसमेंसे १-२ बूंद प्रातः सायं डालते रहनेसे २-४ दिनमें ही कुकूणक (रोहे) दूर होते हैं। इस औषधमें एक मिनटतक कुछ जलन होती है। जलनसे भय न मानें तो अच्छा लाभ होता है।

३. पोथकीहर अञ्जन

प्रथम विधि —मरद कलोंकी गिरी निकाल, उसका तैल निकालें (तैल निकालनेकी विधि रसतन्त्रसार व सिद्धप्रयोगसंग्रह प्रथम खण्डमें लिखी है) उस निथरे हुए साफ तैलमेंसे १ सेर लेकर मन्दाग्निपर उबालें। उबलनेपर नीलाथोथा ५ तोलेका बारीक चूर्ण डालकर आध घण्टे तक मन्दाग्नि देते रहें। फिर कड़ाही नीचे उतार शीतल होनेपर तैल छान लेवें।

उपयोग —इस तैलके अञ्जनमें चिरकारी जीर्ण रोहे दूर होते हैं। पलकके नीचेके दाने, शिरदर्द, सफेदी, और नेत्रसे जल गिरते रहना आदि लक्षण शमन होते हैं। यह अति सौम्य औषधि है। किसीको भी हानि नहीं पहुँचाती।

द्वितीय विधि —समुद्रफेनको सुरमाके सदृश पीस शहदमें मिला लें। फिर प्रातः सायं अञ्जन करते रहनेसे बालकों और बड़े मनुष्योंके रोहे दूर हो जाते हैं।

तृतीय विधि —(रोहोंपर रगड़ना) फिटकरीकी भस्म ⊕, चाकसुके शुद्ध

⊕ फिटकरी भस्म विधि —फिटकरीके चूर्णको गोमूत्रमें मिला रबड़ी जैसा बना लोहेकी कड़ाही या तवेपर डालकर चूल्हेपर चढ़ावें। अग्नि तीव्र दें और कुड़छीसे चलाते रहें। जब घी उड़ जाय और फिर काली भस्म बन जाय, तब उतार लेवें।

बीज +, जसदकी भस्म, अफीम, लोध, छोटी इलायचीके बीज, इन ६ औषधियोंको १-१ तोला और गोघृत ६ तोले लेवें। सबको ताम्रकी कड़ाहीमें नीमके डण्डेसे खूब घोटकर अंजन तैयार कर लेवें। (श्री पं० जाहरसिंहजी आयुर्वेदाचार्य)

उपयोगः—इसका अंजन करनेसे रोहें, नेत्रकी लाली और अश्रुस्राव दूर होते हैं। विशेषतः इसका अंजन रात्रिको सोनेके समय किया जाता है।

वक्तव्यः—गुजरात काठियावाड़में चाकसूके मग्ज़में थोड़ा सैंधानमक मिलाकर रात्रिको आँखोंमें आध-आध रत्ती डालकर पट्टी बांध देते हैं। ५-७ मिनट जलन होती है। किन्तु यह निर्दोष और उत्तम प्रयोग है। गुजरातका यह घरेलू प्रयोग है। बच्चोंके लिये भी यह प्रयुक्त होता है।

सूचनाः—प्रातःकाल नेत्रोंको कीटाणुनाशक धावन, बोरिक धावन या त्रिफला फाण्ट या रसकपूरके धावन (१ रत्ती रसकपूर और ५० तोले जल मिले हुए) से धो देना चाहिये।

४. काला नेत्राञ्जन

प्रथम विधिः—काला सुरमा २० तोलेका कपड़छान चूर्ण, बहेड़ेकी गिरी २ तोले, वराटिका भस्म, मौक्तिक पिष्टी और मनःशिल १-१ तोला लें। सबको मिलाकर खरल कर लें। फिर नीलाथोथा १ तोला लेकर ४० तोले जलमें मिला लेवें। इस जलको थोड़ा-थोड़ा मिलाकर खरल करें। फिर २॥ सेर गुलाबजल मिलाकर खरल करें। गुलाबजलमें २ तोले कपूर मिला लेवें। गुलाबजल समाप्त होने और नेत्रांजन सूखनेपर बोतलमें भर लेवें। (आ० नि० मा०)

उपयोगः—इस नेत्रांजनके अंजनसे नेत्रके फूले, मांसवृद्धि, कुकूणक, तिमिर और नेत्रव्रण आदि रोग दूर हो जाते हैं। यदि सलाईको बबूलादिस्वरसमें डुबो, फिर इस अंजनको लगाकर नेत्रमें डाला जाय, तो लाभ अधिक होता है। यह अनेक वर्षोंका परीचित उत्तम प्रयोग है।

बबूलादिस्वरसका पाठ रसतन्त्रसार व सिद्धप्रयोगसंग्रह प्रथम खण्डमें दिया है।

५. काजल

प्रथम विधिः—एरण्डतैलकी बत्ती जलाकर वायु मिल सके उस तरह उसपर तवा रखकर ४ तोले काजल इकट्ठा करें। फिर नीलेथोथेका फूला और फिटकरीका फूला ६-६ माशे लें। वच और आंवला १-१ तोलेको जलाकर कोयले करें। पश्चात्

+ चाकसू शोधन विधिः—चाकसूके बीजोंको नीमके रसमें एक प्रहर तक दौलायन्त्रमें उबालकर शुद्ध करें। फिर ऊपरसे छिल्टेको दूर कर भीतरसे मिंगी निकाल लेवें। अथवा मट्ठेमें १२ घण्टे भिगो, मिंगी निकालकर उपयोगमें लेवें।

सबको मिला उसमें ४ तोले गोघृत मिलाकर १ दिनतक मर्दन करें। दूसरे दिन खरलमें १० तोले जल मिलाकर मर्दन करें। जल मैला होनेपर निकाल डाले और पुन नया डाले। इस तरह जब तक मैला जल निकले, तबतक निकालते रहें। साफ जल निकलनेपर १ तोला कपूर मिला खूब मर्दन कर खुले मुँहकी शीशीमें भर ले।

(आ० नि० मा०)

उपयोग —इस काजलके अंजनसे नेत्रज्योति बढ़ जाती है। सौभाग्यवती स्त्रिया और बालकोंके चक्षुमें नित्यप्रति डालनेके लिये यह उपयोगी है। इसके अंजनसे नेत्रमेंसे मैल दूर हो जाता है, गर्मी नहीं बढती और शीतलता बनी रहती है तथा नेत्र निर्मल और तेजस्वी रहते हैं। यद्यपि इस काजलमें नीलाथोथा आदि दाहक पदार्थ मिलाये हैं तथापि जलसे धोनेसे वे सब निकल जाते हैं। केवल उनका प्राभाविक गुण रह जाता है।

द्वितीयविधि —फिटकरीका फूला ४ तोले और छोटी इलायची छिलके सह ८ तोले लें। दोनोको मिला कूट कपड़छान चूर्ण कर १६ तोले गोघृत मिलावें। फिर हाथसे बनाये हुए स्वदेशी मोटे कागजपर घृत मिश्रित चूर्ण लगावें, और नलीके समान गोल लपेट लेवें। जितने कागज हो, सबको पृथक् पृथक् लपेट देवें, फिर १-१ कागजको चिमटेसे पकड़कर एक सिरेस जलावें। उसमेंसे जो घी टपके, उसे ताम्बेकी कटोरीमें इकट्ठा करते जाय। राख भी इसम गिरती रहेगी। इस तरह सब कागजोंको जलादें। फिर राख मिश्रित घीको खरलमें डाल ८ घटे तक घोटें। यदि घी अधिक जल जानेसे काजल शुष्क होगया हो, तो थोड़ा गोघृत और मिला लेवें। अच्छी तरह मिश्रण हो जानेपर डिब्बीमें भरलेवें।

(आ० नि० मा०)

वक्तव्य —इस कागजके स्थानपर ४ तोले रुई मिला पीतल या लोहेकी चालनीमें रखकर जलाते हैं। जिससे कुछ घी नीचे टपक जाता है। और उपर काली राख हो जाती है। इन दोनोंको मिलाकर काजल बना लेते हैं।

उपयोग —इस काजलमेंसे थोड़ासा अंगुली पर लगा कुकूणक पर और पूयस्राव होने वाले नेत्रोंमें प्रति दिन एक या दो बार अंजन करते रहनेसे थोड़े ही दिनोंमें नेत्र निर्मल बन जाते हैं। नेत्रपाक पर यह काजल अत्यन्त हितावह सिद्ध हुआ है।

६. श्वेत नेत्राञ्जन

विधि —जसद पुष्प (जिंक आक्साइड) ५ तोले, मिश्री और बोरिक एसिड १०-१० तोले तथा कपूर १ तोला लेवें। सबको मिलाकर अच्छी तरह खरल कर लें।

उपयोग —यह नेत्राञ्जन अभिष्यन्द (आंख आना) नेत्रकी लाली, रतौंधी, जल गिरना, मांसवृद्धि आदि पैर उपयोगी है। सुबह और रात्रिको अथवा केवल रात्रिको सोनेके समय डालते रहनेसे नेत्र रोग दूर होकर दृष्टि स्वच्छ हो जाती है।

७. नागाद्यञ्जन

विधिः—शुद्ध शीशा ३० भाग, शुद्ध गन्धक ५ भाग, शुद्ध ताम्र और शुद्ध हरताल २–२ भाग, शुद्ध वङ्ग १ भाग तथा सुरमा काला ३ भाग लें। इन सबको मिला अन्धमूषामें बन्द कर १२ घन्टे तक तीव्राग्नि देकर पकावें। फिर स्वांग शीतल होनेपर औषधको निकाल कर खरल करलें। (अ० ह०)

उपयोगः—यह अंजन तिमिर रोगपर लाभदायक है। श्री० वाग्भटाचार्य लिखते हैं कि "तिमिरान्त करं लोके द्वितीय इव भास्कर" अर्थात् तिमिर रूप अन्धकार को नष्ट करनेमें यह अंजन सूर्यके समान है इस अंजनसे नेत्र विकार कटकर या दोष पतला होकर निकल जाता है और नेत्र निर्दोष बनते हैं।

८. नागार्जुनवर्ति

विधिः—हरड़, बहेड़ा, आंवला, सोंठ. कालीमिर्च, पीपल, सैंधानमक, मुलहठी, नीलाथोथाका फूला, रसौंत, प्रपौण्डरीक (कमल गट्टाकी गिरी), वाय-विडंग, लोध और ताम्रभस्म, इन १४ ओषधियोंको समभाग मिला तगरके फाण्टमें खरल कर वर्तियां बना लेवें। यह प्रयोग २००० वर्ष पहले नागार्जुनने पटना शहरमें लिखवाया था। (र० का०)

उपयोगः—यह वर्ति तिमिररोग और जालोंको दूर करती है। स्त्री दुग्धमें घिसकर लगानेसे नया नेत्रपाक (आंखोंका दुखना) अवश्य नष्ट हो जाता है। पलास (टेसू) के फूलोंके स्वरसमें घिसकर अंजन करनेसे पिल्लरोग (नेत्र गीले गीले रहना), फूला और लालीका निवारण होता है। लोधके क्वाथमें अंजन करनेसे जल्दी उत्पन्न होने-वाला नया तिमिर रोग निवृत्त होता है। नेत्रको बन्दकर अंजनको बकरेके मूत्रमें घिसकर नेत्रमें भर देवें और शान्तिसे नेत्र खोलें तो नेत्र स्वच्छ होकर तिमिर रोग दूर होजाता है।

९. अधिमन्थहर योग

(१) कड़वी जीरी ६ मासेसे १ तोलेको कूट समान गुड़ मिलाकर खिला देवें। ऊपर जल पिला देवें। थोड़े ही समयमें मस्तिष्कमें प्रस्वेद आजाता है। फिर नेत्रोंका दबाव, नेत्रशूल और मस्तिष्क शूल शमन होजाते हैं।

(२) पीपल वृक्षपर होनेवाले बांदेको जलके साथ पीस पुल्टिस बनाकर बांध देनेसे शिरःशूल और अधिमन्थ (आंखोंमें शूल चलना) दूर होजाते हैं।

(३) निर्गुण्डीके पानोंको जलमें उबाल, पीसकर शिरपर बांधदेनेसे अधिमन्थ और शिरदर्द निवृत्त होते हैं।

(४) षड्बिन्दुतैल, नारायणतैल या केशर मिला हुआ गोघृत सूंघानेसे नेत्रपीड़ा शान्त होजाती है।

१०. कन्डहर अञ्जन

विधि —शुद्ध एरण्डतैल १ सेरको पीतलकी कड़ाहीमें उबालें। उफान आने पर नीलेथोथेका चूर्ण ४ तोले डालें। फिर १८–२० मिनट उबालकर उतार लेवें और बोतलमें भरलेवें। (आ० नि० मा०)

उपयोग —इस तैलका प्रात, सायं अंजन करते रहनेसे कण्डू दूर होती । यह तैल नेत्र ज्योतिवर्द्धक, अभिष्यन्दहर और नेत्रकृमिनाशक है। इस तैलसे नेत्र शीतल और तेजस्वी बनते हैं। बरौनीके गिरे हुए बाल फिर नये आजाते हैं।

११. नेत्ररक्षक बिन्दु

प्रथमविधि —बाष्पजल (या वर्षाका जल) ४ सेर, फिटकरी, जसदका फूला (जिंक आक्साइड), बोरिक एसिड, तीनों १॥–१॥ तोले और मेलखड़ी १ तोला लेवें। सबको मिलाकर अमृतबानमें भरें। २० दिनतक रोज काचकी सलाकासे २–३ बार चला देवें। फिर फिल्टर पेपरसे छानकर शुद्ध गन्धक १॥ माशा मिलाकर एक सप्ताह सूर्यके तापमें रखें। फिर ४ औंस गुलाब जल मिलाकर छान लेवें।

(वैद्य जेठाराम निर्भयराम भयियार)

उपयोग —यह नेत्रबिन्दु नेत्रके समग्र रोगोंपर लाभदायक है। दिनमें २ बार नेत्रमें बूंदे डालते रहनेसे अभिष्यन्द (आंख आना), नेत्रकी लाली, कण्डू, दाह, अश्रुस्राव, प्रकाशकी असहनशीलता और कुकूणक आदि रोग दूर होते हैं।

द्वितीय विधि —१ बोतल गुलाबजल या बाष्पजलमें १॥ माशा कपूर डाल डाट लगाकर १ सप्ताहतक सूर्यके तापमें रख देवें। फिर उसमें ६ माशे कच्ची लाल फिटकरी तथा १॥ माशे नीलाथोथा मिलाकर फिल्टर पेपरसे छान लेवें।

(श्री० राजवैद्य पं० रामचन्द्रजी शर्मा)

उपयोग —इस बिन्दुको दिनमें २ बार नेत्रमें डालते रहनेसे नेत्राभिष्यन्द, कुकूणक, मांसवृद्धि नेत्रव्रत, कण्डू, नेत्रस्राव, शुक्र (फूला) आदि रोग दूर होते हैं।

सूचना —(१) मांसवृद्धिको दूर करने और दूषित घावका शोधन करनेके लिये नीलाथोथा ३ माशे मिलाना चाहिये।

(२) यदि शुक्लमण्डलपर व्रत हो तो नेत्रबिन्दु डालनेके २–४ मिनटबाद गुलाबजल या त्रिफलाके फाण्टसे नेत्रको धो लेना चाहिये। अन्यथा नीलाथोथाके संयोगसे शुक्लमण्डलकी तेजी कम होती है और फिटकरीके हेतुसे अधिक शुष्कता आती है।

१२. नेत्राभिष्यन्द हरण योग

(१) अमरूदकी ताजी पत्ती २॥ और २ रत्ती फिटकरी मिला पीसकर पुल्टिस बना लेवे। फिर स्वच्छ पतले कपड़ेकी पट्टीके भीतर दो स्थानों पर रख कर दोनों नेत्रों पर बांध देवें। पट्टी बहुत दबाकर न बांधे, साथ ही अधिक-ढीली भी न रक्खें।

रात्रिको बांध उसे सुबह निकाल देवें। सुबह बांधें तो दोपहरको निकाल डालें। ३-४ बार पट्टी बांधनेसे नेत्रकी भयंकर लाली भी दूर हो जाती है।

(श्री० पं० विश्वनाथजी द्विवेदी आयुर्वेद शास्त्राचार्य)

सूचनाः—सूचना इस औषधकी पट्टीके उपयोगके साथ यदि नेत्रोंमें रसतन्त्रसार प्रथम खण्डोक्त रसांजनादि लेप डालते रहें, तो प्रदाह बहुत जल्दी शमन हो जाता है।

(२) नमक, सरसोंका तेल और कांजीको मिला कांसीके बरतनमें नीमके डण्डेसे मर्दन करें। मिल जाने पर बकरीका दूध मिलावें और निर्धूम गोबरीकी अग्नि पर तपावें। निवाया रहने पर नेत्रों पर लेप करनेसे अभिष्यन्द, अधिमन्थ, नेत्रशूल, नेत्रस्राव, शोथ आदि विकार दूर होते हैं।

(३) १ माशा फिटकरीको २ तोले जलमें मिलावें। फिर रुईके दो फोहे बनाकर उसमें भिगोवें। ५-१० मिनट बाद फोहेको दो हथेलियोंके बीच दबाकर जल निचोड़ देवें। फिर पूरीके समान घीमें तलकर नेत्र पर बांध देनेसे नेत्रकी लाली, दाह, शूल और वेदना दूर हो जाती हैं।

(४) २० तोले लाल फिटकरीको एक मिट्टीकी खेलड़ीमें डालकर अग्निपर द्रव करें। पश्चात् उस द्रवके बीचमें ३ माशा अफीमका चूर्ण डाल भस्म बन जाय और फिटकरीका फूला होजाय तब तक अग्नि पर रखें। बादमें उतार, बारीक पीस चूर्ण कर लेवें। इसमेंसे थोड़ा थोड़ा गुलाब जलके साथ आंखोंमें अंजन करनेसे नेत्रोंकी लाली, शूल और वेदना आदि सत्वर दूर हो जाते हैं।

(वैद्यराज श्री रामचन्द्रजी)

१३. धान्यकावलेह

विधिः—धनियाका मगज़ २४ तोले, चांदीके वर्क १ तोला, छोटी इलायची के दाने २ तोले और गुलकंद ४० तोले लें।

धनियेको मूसलसे कूट कर ऊपरके छिल्के निकाल देवें। भीतरका मग्ज़ लें। उस मग्ज़ और छोटी इलायचीके दानेको कूटकर कपड़छान चूर्ण करें। फिर उसमें चांदीके वर्क मिलाकर खरल करें। पश्चात् गुलकंद मिला अच्छी तरह मसलकर अमृतबानमें भर लेवें।

मात्राः—२ से ३ तोले रात्रिको सोनेके आध घण्टे पहले खिलावें।

उपयोगः—यह अवलेह नेत्र रोगोंके लिये अति हितकार है। जिनके नेत्रमें लाली बनी रहती हो, या बार बार नेत्र आ जाते हों, जल गिरता रहता हो या कुकूणक हो गये हों, उनको यह अवलेह दिया जाता है। इसके सेवन से उष्णता शमन होती है, नेत्र ज्योति सबल बनती है तथा मस्तिष्क शान्त होता है।

१४. हब्बे अयारिज

विधिः—अयारिज़ फैंकरा (मस्तिष्क रोगके भीतर पाठ देखें) और निसोत

की छाल ३॥-३॥ तोले, काला दाना, शुद्ध गारीकून (अर्थात् हल्का गारीकून देखकर तारकी चलनीके ऊपर हल्के हाथसे घिसें इसमेंसे जो तन्तु ऊपर रहे हों वे न लेवें नीचे आटा गिर जाता है वह लेवें) सौंफ रूमी, १॥ १॥ तोले और इन्द्रायणके फलका गूदा १ तोला लेवें। सबको मिला जलमें खरल कर १-१ रत्तीकी गोलियाँ बना लेवें।

(श्री० वैद्यराज पं० रामचन्द्रजी शर्मा)

मात्रा —२ से ६ माशे रात्रिमें सोते समय १ बार गोलियोंको शहदमें लपेटकर सौंफके अर्कके साथ निगल लेवें। गोली अनेक हो जाती हैं। १० या २०-२० करके निगलनी चाहिये फिर जैसी सुविधा हो ले सकते हैं।

उपयोग —यह प्रयोग साम नेत्र विकार और ऊर्ध्वजत्रुगत शिरोरोगोंमें अति उपयोगी है। पित्त प्रकोप और मलावरोधको भी दूर करता है। नेत्रशूल (अधिमन्थ) में बहुधा व्याधि साम होती है। उस समय इसे देनेसे उदरशुद्धि हो जाती है, तथा स्वेद लाकर और अन्य प्रकारसे मस्तिष्क और नेत्रमेंसे द्रव पदार्थका दबाव कम करा देता है। अधिमन्थ चाहे आशुकारी हो या चिरकारी नेत्रान्तर दबावको कम करानेके लिये यह विशेष लाभदायक सिद्ध हुआ है। हम इन गोलियोंके पश्चात् दूसरे दिनसे ६-६ माशे कलौंजी १-१ तोला गुड़में मिलाकर दिनमें दो बार देते हैं, जिससे अनेकोंका अधिमन्थज दबाव कम हो गया है और नेत्र बच गये हैं।

सूचना —यदि उदरमें मल और रक्तदबाववृद्धि दूर न हुई हो, तो ४ ८ दिन तक या जबतक शमन न हो तबतक रोग या रोगीके बलानुसार इन गोलियोंका सेवन कराना चाहिये तथा भोजन हल्का (लालमिर्च, अधिक लवण मिठाई, राई, सिरका आदि तीक्ष्ण पदार्थोंसे रहित) सत्वर पचन हो ऐसा देते रहना चाहिये।

यदि वृक्कविकारसे नेत्रान्तरदबाव वृद्धि हुई हो, तो त्वचा शरीरमेंसे स्वेद अधिक निकल जाय, ऐसा प्रबन्ध भी कराना चाहिये।

१५ पोथकीहर लेप

विधि —रसौंत, लोध पठानी और अमलतासकी फलीका गूदा २० २० तोले और अफीम ५ तोले ले। पहले रसौंत, लोध और अमलतासको जल मिलाकर खूब घोटें। फिर अफीम मिलाकर घोट लेवें। एक जीव हो जानेपर कांसीके बर्तनमें भरकर एक रात्रि रहने देवें। प्रातःकाल निकालकर खुले मुँहकी बोतल या चीनी मिट्टीकी बोतलमें भर लेवें। (श्री पं० आदरसिंहजी आयुर्वेदाचार्य)

उपयोग —जो रोहे बड़े हो गये हों अनेक औषधोपचारसे न गये हों, उनके लिये यह औषधि हितकारक है। पहले पलकको उलटकर स्पकपूरके धावनसे धो दें। फिर कलमीसोरेकी नोकसे दानोंको फोड़ दें और बोरिक धावनसे धोकर साफ कर देवें। पश्चात् पलकोंके ऊपर उपरोक्त लेपको निवाया कर लगा देवें। दो चार दिनतक लेप करते रहनेसे रोहेके विषका ध्वंस हो जाता है। फिर आवश्यकता अनुसार पोथकीहर अञ्जन कुछ दिनों या महीनोंतक लगाते रहना चाहिये।

(५०) शिरोरोग

१. शिरोरोगहर रस

विधिः—शुद्धपारद, शुद्ध गंधक, अभ्रक भस्म, लोह भस्म, चारों १-१ तोला, सुवर्ण भस्म और दालचिकना २-२ माशे लें। सबको मिला कज्जलीकर भांगरेके रसमें ३ दिन खरल करके आध-आध रत्तीकी गोलियां बनाकर सूर्यके तेज तापमें सुखा लेवें। (भै० र०)

उपयोगः—१ गोली प्रातःकाल निगलकर ऊपर जलेबी, पेड़ा या मलाई-मिश्री खिलावें। अथवा मिश्री मिला दूध पिलावें। पुनः एक दिन छोड़कर १ गोली देवें। इस तरह ३-४ या अधिक गोलियां देनेसे सब प्रकारके भयंकर शिरःशूल नष्ट हो जाते हैं। जब शिरःशूल न हो, तब इस रसायनका सेवन करनेपर पुनः शूलोत्पत्ति नहीं होती।

२. शिरःशूलाद्रिवज्र रस

विधिः—शुद्ध पारद, शुद्ध गंधक, लोहभस्म और निसोत ४-४ तोले, शुद्ध गूगल १६ तोले, मिलित त्रिफला चूर्ण ८ तोले, कूठ, मुलहठी, पीपल, सोंठ, गोखरू, वायविडंग ये ६ औषधियां १-१ तोला तथा दशमूल मिले हुए १० तोले लें। पहले पारद गंधककी कज्जली करें। फिर भस्म मिलावें। गूगलको घीमें कूटकर तथा काष्ठादि औषधियोंका कपड़छान चूर्ण करके मिलावें। पश्चात् दशमूलके क्वाथके साथ ३ दिन खरलकर २-२ रत्तीकी गोलियां बनावें। (भै० र०)

वक्तव्यः—श्री पं० यादवजी त्रिकमजी आचार्यके मतानुसार इस रसायनको भांगरेके रसकी ३ भावना भी दी जाय, तो गुण अधिक करता है।

मात्राः—१ से २ गोली दिनमें दो या तीन बार बकरीके दूध, गौके दूध, शहद या पथ्यादि क्वाथके साथ देवें।

उपयोगः—यह शिरःशूलाद्रिवज्र रस वातिक, पैत्तिक, श्लैष्मिक और त्रिदोषज शिरदर्दको तत्काल इस तरह नष्ट करता है जिस तरह वज्र छोड़नेपर असुरोंका नाश होता है। एक दोषज, द्विदोषज, और त्रिदोषज, सब प्रकारके शिरःशूलको शमन करता है।

तीव्र शिरःशूलपर आध रत्ती गांजाको गुड़ या मुनक्कामें रख निगल जानेसे वेदना शमन हो जाती है। फिर इस रसका प्रयोग करनेसे मूल हेतुको नष्ट कर देता है। जिससे पुनः शिरःशूल नहीं उठता। तीव्र शूलपर शिरःशूलाद्रिवज्र रस शृङ्गभस्म और गोदन्ती भस्मके साथ मिलाकर देना विशेष हितकारक है। कब्ज, यदि हो तो पथ्यादि क्वाथका सेवन भी कराना चाहिए। मस्तिष्कमें शुष्कता हो और बार बार शूल चलता हो, तो केशर और मिश्रीको गायके घीमें मिलाकर नस्य भी कराना चाहिए। दोनों नासापुटोंमें ४-४ बूँद घी डालना चाहिए।

३. मिहिरोदय रस

विधि —लोहभस्म, अभ्रक भस्म, सुवर्ण भस्म, प्रवाल भस्म, और राजावर्त भस्म, ये ५ औषधियां १-१ तोला तथा रससिंदूर २ तोले लें। सबको मिला एरंडमूल और जटामासीके क्वाथसे ३-३ दिन खरलकर १-१ रत्तीकी गोलियां बनावें (श्रा० मि०)

मात्रा —१-१ गोली दिनमें दो या तीन बार पथ्यादि क्वाथ या हरड़का क्वाथ या रोगानुसार अनुपानके साथ देनेसे शिर शूलका निवारण हो जाता है।

विविध अनुपान–सूर्यके तापजन्य शिरदर्द—गुलाब और केवड़ाका शर्बत।

अधिक मानसिक श्रमसे उत्पन्न—च्यवनप्राशावलेह या धमासाका क्वाथ।

अपस्मार, हिस्टीरिया कम्पजनित—कस्तूरी और शहद या जटामासीका अर्क।

मस्तिष्कमें कृमिजन्य—तृणकांत मणि (कहरवा) पिष्टी।

गर्भाशयविकारजनित— शर्बत बनफसा।

मस्तिष्कमें रक्तवृद्धिजनित—(विरेचन)

जीर्ण अपचन जनित—शहद पीपल।

नये अपचनसे उत्पन्न—सोंठ और लवण मिश्रित हरड़का क्वाथ।

सूर्यावर्त्त और अर्धावभेदक–मक्खन मिश्री, पेड़ा या जलेबी आदि।

तीव्रदर्द पर–आधरत्ती गाजा और १ माशा गुड़ या मिश्री।

उपदंशज शिरदर्द–गन्धक रसायन या चोपचिन्यादि चूर्ण।

शुक्रक्षय या रजोनाशज–वंगभस्म और शतावर्यादि चूर्ण।

वातजन्य मृदुवेदना–दशमूलारिष्ट।

ज्वरसह शिरदर्द–रक्तचंदन धनिया, मोथा, गिलोय और सोंठका क्वाथ।

उपयोग —यह रसायन अर्धावभेदक, अनन्तवात, सूर्यावर्त्त, एक दोषज, द्विदोषज और त्रिदोषज साध्य और असाध्य सब प्रकारके शिरोरोगोंको निःसंदेह दूर करता है, वातकेन्द्र और वातवाहिनियाँ आदि वात मस्थान, पित्त विकार, रक्ताधिक्य, रक्तकी न्यूनता, कफप्रकोप आदि विविध विकारसे उत्पन्न शूल रोग और उपद्रव या लक्षण रूपसे उत्पन्न शिरदर्दको निवृत्त करनेमें यह उपकारक है।

शिरदर्दमें तीव्र और मंद, ऐसे दो विभाग हैं। अनेक बार यह केवल मानसिक परिश्रम या क्रोध आदि जन्य मानसिक आघातके हेतुसे उपस्थित होजाता है। इनके अतिरिक्त रक्तमें सेन्द्रिय विषवृद्धि या शुद्ध रक्तमें दूषित रक्त मिल जाना, रुधिरकी न्यूनता, वातरक्त, मधुमेह, विषमज्वर, उपदंश, सूर्यके ताप आदिका सेवन, तमाखू, शराब, सीसा आदिके विषका रक्तमें प्रवेश, मृगी, हिस्टीरिया, कम्प आदि वातविकार, नेत्र, कर्ण, नासिका, दंत आदिकी पीड़ासे प्रतिफलित पीड़ा, अजीर्णजनित, गर्भाशय आदि जननेन्द्रियकी वेदनाजनित तथा मस्तिष्कमें विद्रधि, व्रण, प्रदाह, आदि स्थानिक विकार इत्यादि अनेक हेतुजनित शिरदर्द होजाता है।

अर्धावभेदक (Migraine) होने पर आधे भागमें स्पन्दनशील वेदना, अपचन, कोष्ठबद्धता और विषप्रकोपमें भाररूप मृदु भावसे वेदना, वातवहानाड़ियोंकी शक्ति का क्षय (Neurasthenia) होने पर दबाव या बांधकर निचोड़नेके सदृश पीड़ा, मस्तिष्कमें मलोत्पत्ति या रक्तकी न्यूनता होनेपर जलनेके समान दर्द; हिस्टीरिया, मृगी और वातनाड़ियोंके विविधविकार (Neurosis) में शूल चुभोनेके सदृश वेदना होती है।

स्त्रियोंके बीजाशय विकारजनित वेदना बहुधा सन्मुख कपालमें मंद मंद होती है।

मस्तिष्कमें वेदना होने पर कभी हाथ पैर आदि शीतल और मस्तिष्क उष्ण होता है, क्वचित् इससे विपरीत होता है। किसी रोगीकी नाड़ी तेज, किसीकी मंद, सामान्यतः क्षुधानाश होना, किन्तु क्वचित् क्षुधावृद्धि और भोजनकर लेनेपर शिरदर्द शमन हो जाना, कभी मूत्रके परिमाणकी वृद्धि, कभी ह्रास, ऐसे विविध लक्षण होते हैं। यदि कर्ण, नासिका, नेत्र, दाँत आदिकी तीव्र पीड़ासे शिरदर्द होता है, तो मूल कारणको दूर किये बिना सच्ची शान्ति नहीं मिलती।

कान, नाक या नेत्रमेंसे कभी पूयका प्रवेश मस्तिष्कमें होता है, तब भयंकर शिरः शूल होता है। वह पीड़ा सतत बनी रहती है। रोगीको निद्रा भी नहीं आसकती। ऐसे समयपर कर्णपाक हो तो कानके चारों ओर या पीछे जहां पीड़ा हो वहां पर गरम जलसे २–३ दिन अहोरात्र सेक करना पड़ता है। इस तरह नाकके विकारसे शिरदर्द उत्पन्न हुआ हो, तो दोनों नासारन्ध्रोंमें निवाया षड्बिन्दु तैल ६–६ घण्टेपर २–३ बार डालना चाहिये और कपाल पर शिरः शूलान्तक बामकी मालिश करानी चाहिये। इस प्रकार बाह्य उपचारके साथ शिरोरोगहर रस या इस रसका सेवन चन्दनादि कषायके साथ करानेसे सत्वर लाभ पहुँचता है।

यदि मूल हेतु नेत्रस्थ पूय हो, तो नेत्रोंको त्रिफला जलसे धोकर, रक्त नेत्राञ्जन और बबूलादि स्वरसका अंजन करना चाहिये और साथ साथ इस रसका सेवन करानेसे मस्तिष्कगत विष निवृत होता है और मस्तिष्कका संरक्षण होता है। एवं दांत या डाढके शूलसे मस्तिष्क पीड़ा होती हो, तो दंतदोषहर मंजन उपचारके साथ मिहिरोदय रसका सेवन करानेसे मस्तिष्कगत विषविकार और मस्तिष्ककी निर्बलता सरलतासे दूर होती है।

ऊर्ध्वजत्रुगत अवयव या इन्द्रियोंके तीव्र विकारके अतिरिक्त कारणोंसे शीत लगना, सेन्द्रिय विषप्रकोप, अपचन, सूर्यका ताप, मस्तिष्कका अधिक श्रम, जागरण या हिस्टीरिया जनित शिरदर्द हो, तो इस रसका उपयोग अधिक होता है। वातप्रकोपज विकारमें शामक असर पहुँचा, तीव्रताको दबा और वेग को कम करा कर शिरदर्दको शमन कर देना, यह गुण इस औषधिमें है। यह रसायन वातकेन्द्र और वातनाड़ियोंकी शिथिलता, रक्तकी न्यूनता, मस्तिष्ककी उष्णता, सेन्द्रिय विष प्रकोप आदि को दूर करता है। इसी हेतुसे अर्धावभेदक, अनन्तवात, सूर्यावर्त, शंखवात आदि

प्रकोपज शिरो वेदनामें इसके सेवन में लाभ होता है। इस रसके सेवनके साथ केशर और मिश्रीको ४ = बूंद निवाये गोदुग्धमें मिलाकर नस्य देनेसे सत्वर लाभ पहुँचता है।

प्रमेहजन्य शिरदर्द हो, तो सफेद चदन, रक्त चन्दन, खस, मुनक्का, गिलोय, मुलहठी और आवलोंका क्वाथ अनुपान रूपमें देना चाहिये। विविध प्रमेहोंमें विशेषतः रक्तमें विष संगृहीत होता है और मस्तिष्कस्थ केन्द्र दूषित होता है, तथा प्रजनेन्द्रिय सस्थानके कार्यमें विकृति होती है। इन सब स्थानोपर यह लाभ पहुँचा कर तथा रक्त प्रसादन करके शिरदर्दको नष्ट कर देता है।

मस्तिष्कमें मलसंग्रह या मूत्रविषजन्य विकृति और मस्तिष्ककी निर्बलता पर चन्दनादि क्वाथ अनुपान रूपमें देनेसे भी लाभ सत्वर होता है।

इस रसायनमें मिली हुई लोह भस्म रक्त और रक्ताभिसरण सस्थान पर लाभ पहुँचाती है और पित्त-कफज प्रकोपका निवारण करती है। अभ्रक भस्म वात सस्थान विकृति और मस्तिष्कमें शिथिलता पर अधिक प्रभावशाली है। अपस्मार, उन्माद, मानसिक निर्बलता आदिसे उत्पन्न विकारको दूर करती है। सुवर्ण भस्म सेन्द्रिय विष या इतर विष आदिसे रक्त दूषित होने पर रक्तप्रसादन कर और मस्तिष्क पर शामक असर पहुँचाकर वेदनाका निवारण कराती है। प्रवाल और राजावर्त उष्णताको शान्त करती है, विषको दूर करती है, और मस्तिष्ककी शक्तिको बढ़ाती है। रससिंदूर रसायन, कीटाणुनाशक, पचक और उत्तेजक है। एरण्डमूल और जटामासी वेदना शामक है।

वक्तव्य—एक प्रकारका सूर्यावर्त्त मलेरियाके रोगाणुओंसे उत्पन्न होता है और यह भी सूर्य चढ़नेपर बढ़ता है और उतरने पर घटता है। इसको स्थानीय ज्वर समझना चाहिये। इसमें घृत युक्त मिष्टान्न पदार्थ जलेबी आदि खिलाकर चिकित्सा नहीं करनी चाहिये। क्योंकि इससे रोग बढ़ जाता है। अतः ऐसे रोगीको २ रत्ती क्वीनाइन रात्रिको सोने समय और २ रत्ती प्रातःकाल सूर्योदयसे पहले देवें। इसी भांति रोगारम्भसे २ घंटे पूर्व देवें। इस प्रकार ३ मात्रा लेनेपर शिरदर्द एक दिनमें ही रुक जाता है। कदाचित् एक दिनमें न रुके, तो इसी भांति दूसरे दिन देनेसे निश्चय यह रोग नष्ट हो जाता है। यदि उदरशुद्ध नहीं होगा तो दवाका असर भी पूर्णतया न होगा। अतः कोष्ठशुद्धिके लिये त्रिफला चूर्ण अथवा स्वादिष्ट विरेचन चूर्णकी १–२ मात्रा ले लेनी चाहिये। (श्री० वैद्यराज रामचन्द्रजी)

४. अर्कपत्र योग

विधि—आकके एक नये निकले हुए अङ्कुरको ६ माशे गुड़के भीतर रखकर गोली बना लेवें। फिर सूर्योदयके २ घण्टे पहले रोगीको निगलवा देनेसे (न निगल सके तो चबा देनेसे) सूर्यावर्त (सूर्योदय होने पर आरम्भ होनेवाला शिरदर्द) एकही दिनमें दूर हो जाता है। यदि शिरदर्द कुछ शेष रह गया हो, तो दूसरे दिन फिर एक

गोली खिला देवें। आवश्यकता पर तीसरे दिन भी दे सकते हैं। इसी भांति नव कोंपल न मिले तो एक बिन्दु या दो बिन्दु अर्क दुग्धकी इसी भाँति गुड़के साथ दे दें।

सूचनाः—गुड़को कम ज्यादा कर सकते हैं। गुड़ अच्छी तरह लपट सके उतना होना चाहिये।

सूर्योदय होने पर दूध-जलेबी, बादामका हलुआ या इतर मिठाई खिलावें।

५. सिद्धामृत रस

विधिः—फिटकरीका फूला ३ भाग और सोनागेरू एक भाग मिलाकर खरल कर लेवें। (र० यो० सा०)

मात्राः—१-१ माशा प्रातःकाल गरम कर ठंडे किए हुए गोदुग्धके साथ देवें।

उपयोगः—इस औषधके सेवनसे शिरोभ्रम (चक्कर आना), शिरोरोग, अम्लपित्त और पित्तप्रकोपज समस्त विकार नष्ट होजाते हैं।

सूचनाः—इस रसके सेवनकालमें पित्तवर्धक पदार्थ, खटाई, लालमिर्च, तेल, शराब, धूम्रपान आदि का त्याग कर देना चाहिए। अग्नि और सूर्यके तापका सेवन भी नहीं करना चाहिये।

६. पथ्यादि क्वाथ

विधिः—हरड़, बहेड़ा, आंवला, हल्दी, गिलोय, चिरायता और नीमकी अन्तर छाल इन ७ द्रव्योंको समभाग मिलाकर जौ कूट चूर्ण करें। (यो० र०)

मात्राः—दो दो तोलेका क्वाथकर ६-६ माशे गुड़ मिलाकर दिनमें २ या ३ बार दें।

उपयोगः—यह क्वाथ विविध प्रकारके आम और मलावरोधसह शिरशूल, भ्रू, शंख, कर्ण और नेत्रगत शूल और अर्धावभेदकको तत्काल दूर करता है।

यह क्वाथ दीपन, पाचन, शूलहर और ज्वरघ्न है। यह क्वाथ अकेला या रौप्यभस्म अथवा गोदंती भस्म और विविध रसोंके साथ अनुपान रूपसे व्यवहृत होता है। सामान्य रूपसे गोदंती भस्म १ माशा और १ माशा मिश्रीके साथ तीव्र विकारमें दिया जाता है।

यह पथ्यादि क्वाथ जयपुर स्टेट और बीकानेर स्टेटमें विषमज्वर और जीर्ण ज्वरपर विशेष प्रयुक्त होता है। पित्त प्रकृति वालोंको तथा सगर्भा स्त्रियोंको अनेक बार क्विनाइन आदि तीव्र औषधियों का सेवन नहीं कराया जाता, उनको सौम्य औषधि दीजाती हैं। एवं क्विनाइन देनेसे जिनको ज्वर विशेष प्रकुपित हुआ हो, नाकसे रक्तस्राव, मूत्रावरोध और बधिरता आदि उपद्रव उपस्थित हुए हों, उनको यह पथ्यादि क्वाथ आशीर्वादके समान उपकारक होता है। इसके सेवनसे ३-४ दिनमें ही उपद्रवोंसह ज्वर निवृत्त हो जाता है। इसका उपयोग सफलतापूर्वक सैकड़ों रोगियों पर किया गया है।

इसके अतिरिक्त अर्धावभेदक, सूर्यावर्त आदि शिरो रोगोंपर भी यह अच्छा लाभ पहुँचाता है।

७. चन्दनादि कषाय

विधि —श्वेत चदन, रक्त चदन, मूर्वा, काली निसोथ, सफेद निसोथ, हल्दी, दारुहल्दी, लाख, वंशलोचन, सोनागेरू, जीवंती, शतावर, अमगंध, बच, पीपल, काकोली, जीवक और ऋषभक इन १८ ओषधियोंको समभाग मिलाकर जौकुट चूर्ण करें।

मात्रा —२-२ तोलेका क्वाथ कर पिलावे ।

उपयोग —इस कषायका उपयोग अकेला और अनुपान रूपसे विविध प्रकार के शिरदर्द पर होता है। जब कफ, आम, विष या पूयका प्रवेश मस्तिष्कमें होता है, तब इस कषायका उपयोग विशेष हितावह है।

८. वह्निभास्कर रस

विधि —सुवर्णभस्म, अभ्रक भस्म, वैक्रान्त भस्म और रजत भस्म, ये चारों ६-६ माशे, लोह भस्म, शुद्ध पारद, शुद्ध गन्धक और सुवर्णमाक्षिक भस्म २-२ तोले ले । पारद गन्धककी कज्जली कर फिर भस्म मिला, लाल चित्रक और ब्राह्मी (जल नीम) के क्वाथकी ७ ७ भावना देकर एक एक रत्तीकी गोलिया बनालेवे। (र० यो० सा०)

मात्रा — १ से २ गोली दिनमें दो बार देवे ।

उपयोग —इस रसका सेवन शीर्षाम्बु रोगकी प्रथमावस्थामें लाभ पहुँचा देता है। यह रस शीर्षाम्बु रोगके समान मस्तिष्क और मस्तिष्क आवरणके अन्य रोगोंको भी अग्नि घासको जलावे, उस तरह नष्ट कर देता है।

सूचना —यदि इस रस के २१ दिनके सेवनसे मस्तिष्कावरणमेंसे सञ्चित रस का शोषण न होने लगे तो शस्त्रचिकित्साद्वारा जलको निकाल लेना चाहिये ।

कभी कभी शीतल वायु, प्रखर ताप या कीटाणु विष आदिसे मस्तिष्कगत वातनाड़ीकेन्द्रमें विकृति हो जाती है या वातनाड़ीप्रदाह हो जाता है। फिर रोगीको धनुर्वात या पक्षाघातकी प्राथमिक असर सदृश चिन्ह (Signs) प्रतीत होते हैं और कम्प होने लगता है। उस अवस्थामें इस रसका सेवन करानेपर प्रदाह दूर होकर सर्व उपद्रव शमन हो जाते हे। यदि उक्त लक्षणोंके साथ ज्वर १०१° से अधिक हो तो लक्ष्मीनारायण रसका प्रयोग करना चाहिये । फिर ज्वर निवृत्त होनेपर वातप्रकोप हो तो यह रस देना चाहिये ।

९. शिरःशूल हर तैल

विधि —कपूर, नीलगिरीतैल, नीबूका तैल, लवण्डरका तेल और सन्तरेका तैल १ १ औंस और सरसोंका तैल मूर्च्छित किया हुआ १० औंस ले। पहले सरसोंके तैल को अलग रक्खे । शेष तैलोंमें कपूर मिला देवे । कपूर मिल जानेपर सरसोंका तैल डालकर बोतलको अच्छी तरह चला लेवे ।

सरसोंके तैलकी मूर्च्छन विधि रसतंत्रसार प्रथम खड में तैल प्रकरणके आरम्भमें देखे ।

उपयोगः—शिरःशूल और नेत्रशूल चलने पर रोगीके नाकमें दो दो बूंद डाल दें और श्वास जोरसे लेनेको कहें। तैल डालनेके लिये तकियापर मस्तकको झुका दें। जिससे तैल मस्तिष्कमें सरलतासे पहुँच जाय। दर्द अधिक हो, तो प्रातःसायं दिनमें दो बार तैल डालें। १०-१५ दिन तक तैल डालनेसे वर्षोंका शूल निवृत्त हो जाता है।

किसीको मस्तिष्कमें कृमि पड़ जाते हैं। फिर भयङ्कर दर्द होता है। नासिकासे रक्त गिरता रहता है। ऐसा हो, तो तृणकान्तमणि पिष्टी (कहेरबापिष्टी) भी ४-४ रत्ती दिनमें ३ बार जलके साथ देते रहना चाहिये। जिससे नासिकासे सब कीड़े निकल कर ३-४ दिनमें ही मस्तिष्क हलका बन जाता है।

१०. मस्तिष्क बलवर्द्धक चूर्ण

विधिः—शुद्ध कौंच ४० तोले ※, शुद्ध सफेद गुन्जा १० तोले, † वंशलोचन, बिहदाने, रूमी मस्तगी और गिलोय सत्व ५-५ तोले, सफेद मूसली, शतावर, तालमखाना, बड़े गोखरू, बादामकी गिरी छिल्टे रहित और पिस्ता भी छिल्टे रहित २॥-२॥ तोले, पीपल, पीपलामूल, छोटी इलायचीके दाने, दालचीनी, जायफल और जावित्री १-१ तोला, अभ्रक भस्म, सुवर्णमाक्षिक भस्म, प्रवालपिष्टी, त्रिवङ्ग भस्म और केशर ६-६ माशे लेवें। काष्ठौषधियोंको कूटकर कपड़छान चूर्ण करें। केशरको अलग पीस लेवें। फिर चूर्ण, केशर और भस्म मिलाकर खरल कर लेवें।

मात्राः—२ से ३ माशेतक समान घी-शक्कर मिलाकर खा लेवें। ऊपर दूध पीवें। दिनमें २ बार सुबह रात्रिको।

उपयोगः—यह चूर्ण मगजकी शक्तिको बढ़ा देता है। मानसिक अधिक परिश्रम, विद्याध्ययन अथवा निर्बलतासे मस्तिष्कमें दर्द रहता हो, तो उसे दूर करता है। स्मरणशक्ति बढ़ाता है। शरीरको पुष्ट करता है और स्फूर्ति लाता है। विद्यार्थियों और मस्तिष्कके श्रम लेनेवालोंके लिये अति हितावह है।

११. हरीतक्यादि चाटण

विधिः—बड़ी हरड़, छोटी हरड़, बीज निकाली हुई काली मुनक्का, सनाय, मजीठ, मिश्री, घी और शहद, इन ८ औषधियोंको समभाग लें। पहले मुनक्काको पीस, मिश्री और शहद मिला लेवें। फिर शेष औषधियोंके कपड़छान चूर्णको घीके साथ मिला मुनक्काके कल्कके साथ खरल कर लेवें।

※ कौंचके बीजोंको ४ गुने जल और ४ गुने दूधमें उबालें। दूध रबड़ी जैसा हो जानेपर कौंचको निकाल लेवें। फिर छिल्टे निकाल धोकर सुखा देवें। दूधका खोवा बना लेनेपर वह भी बलवर्द्धक रूपसे उपयोगमें आता है।

† चिरमीको २ घण्टेतक दोलायन्त्रसे दूधमें उबाल लेवें। फिर धो, ऊपरसे छिल्टे और भीतरसे जिब्बी निकालकर सुखा देवें।

मात्रा:—२ से ४ माशेतक प्रात रात्रिको लेते रहें।

उपयोग —यह चाटण मस्तिष्कशूल, मस्तिष्कमें भारीपन, मस्तिष्कमें उष्णता, गर्मीके हेतुसे होनेवाली फुन्सियां और फोड़े, विस्फोटक, मलावरोध आदिमें हितावह है। शिरदर्दमें कब्जको दूर करने और मस्तिष्कको शान्त बनानेके लिये यह चाटण निर्भय रूपसे छोटे बड़े, सबको दिया जाता है।

१२ शिरोर्त्तिहर नस्य

(१) सोंठ, कालीमिर्च, पीपल ६-६ माशे, बच्छनाग ३ माशे और पीपलकी छालकी राख १॥ तोले लें। सबको मिलाकर अच्छी तरह खरल करके मिला लेवें। इसमेंसे एक एक रत्ती चूर्ण दोनों नासापुटों द्वारा सुंघानेसे शिरदर्द (कपालमें वेदना होना), तुरन्त बन्द हो जाता है। (र० च०)

यदि पित्ताधिक्य शिरःशूल हो तो उपरोक्त नस्यमेंसे बच्छनागके स्थानपर गुल बनफशा, छिल्केसह छोटी इलायची और कपूर मिला देवें। (संशोधक)

(२) जमालगोटा जिब्बी और छिलके रहित २० तोले और कपूर ४० तोले मिलाकर खरल करें। फिर बोतलमें भर बालुका पाताल यन्त्रसे तेल निकाल लेवें। इस तेलको अच्छे डाटवाली शीशीमें भर लेवें। बालुका पाताल यन्त्रकी विधि रसतन्त्रसार व सिद्धप्रयोगसंग्रह प्रथम खण्डके परिभाषा प्रकरणमें लिखी है। इस शीशीके डाटको हटाकर सुंघानेपर शिरदर्द तत्काल दूर हो जाता है।

(३) छोटी पीपल और सैंधानमकको समभाग मिला आकके दूधके साथ ३ दिनतक खरल कर सूखा चूर्ण बना लेवे। इसमेंसे ¼ या ½ रत्ती दोनों नासाछिद्रोंसे सुंघनेसे ५-१० छींकें आकर और कफ निकल कर शिरदर्द शमन हो जाता है।

सूचना —बहुत छींके आनेसे वेदना हो जाय तो घृत सुंघावे।

१३ शिरोरोगहर योग

(१) जमालगोटाके बीजको पत्थरपर जलके साथ घिस, फिर सलाईसे कपाल पर भ्रू भागके ऊपर दर्दवाले स्थानपर एक सीधी पंक्ति रूपसे लगावे। ५-७ मिनटमें शिरदर्द शमन होनेपर उसे पोंछकर घीकी अंगुली लगा लें।

(२) कालीमिर्चको खूब बारीक पीस गुड़ मिला मटरके सदृश गोलियां बना कर २ से ४ गोली दिनमें ३ बार निवाये जलके साथ देनेसे शिरदर्द, कण्ठशोष, मुँहका बेस्वादुपन, हाथ पैरोंकी नसें खिंचना, अपचन, उदरवात, उदरशूल, मस्तिष्कका भारीपन और प्रतिश्याय आदि दूर होते हैं।

१४ अर्धावभेदकहर योग

विधि —उस्तखद्दूस ६ माशे, धनिया ३ माशे, कालीमिर्च २ रत्ती, प्रवाल २ रत्ती, गिलोय सत्व २ रत्ती और अभ्रक भस्म १ रत्ती, इन सबको मिलाकर

प्रातः, मध्याह्न और सायंकालको दिनमें ३ बार देनेसे एक ही दिनमें आधा शीशी दूर हो जाती है।

१५. अर्धावभेदकहर नस्य

(१) बंदाल (देवदाली) के फलके भीतरकी जाली १ माशेको १ तोला जलमें रात्रिको भिगोवें। प्रातःकाल मसलकर छान लेवें। इस जलमेंसे ५-७ बूंद शिरदर्द हो उस ओरके नासापुटमें डालें। बूंद डालनेके लिये रोगीको लेटा देवें। शिरको नीचा और नासिकाको ऊंचा रखें। जिससे सरलतापूर्वक मस्तिष्ककी ओर जल जा सके।

इसके सूंघानेसे मस्तिष्क और नासिकामें भारीपन मालूम पड़ता है; किन्तु थोड़ी ही देरमें नाकसे जलका बहना प्रारम्भ हो जाता है। धीरे-धीरे बहुत-सा तरल कफ निकल जाता है। परिणाममें आधा शीशी दूर हो जाती है।

सूचनाः—यदि अधिक जल या तेज जलका नस्य दिया जायगा। तो जल स्राव अधिक होगा और नासिकाकी श्लैष्मिक कलामें प्रदाह हो जायगा। ऐसा हो तो गोघृतका नस्य कराना चाहिये।

क्वचित् किसीको रक्तस्राव होने लगता है और चक्कर आने लगते हैं ऐसा होनेपर गोघृतका नस्य देकर रोगीको लेटा देना चाहिये। फिर आध घण्टे बाद गरम करके ठण्डा किया हुआ मिश्री मिला दूध पिलाना चाहिये।

(२) नाकछिकनीका चूर्ण या कायफलका चूर्ण आध रत्ती सूंघानेसे छींके आकर दोष बाहर निकल जाता है और आधा शीशी मिट जाती है।

(३) भिगोये चूने और नौसादरको मसलकर सूंघानेसे आधा शीशी शमन हो जाती है।

(४) जिस ओरसे शिर दुखता हो, उसके दूसरी ओरके नाकमें अगस्त्यके पानोंका रस थोड़े बूंद डाले। पीड़ा अधिक होगी, दूसरे दिन दर्द कम होगा। तीसरे दिन दर्द सदाके लिये दूर हो जायगा।

(५) मस्तिष्कमें पूय और कृमि होनेपर शिरदर्द अथवा आधाशीशीकी पीड़ा हो रही हो, तो सरसोंका तैल ७ भाग और १ भाग तार्पिन तैल मिला ४-६ बूंद नाकमें ड्रोपरसे डालकर मुँहको नीचा कर देनेपर नाकमेंसे कृमि गिरने लगते हैं। पूय और रक्त भी आता है। सब निकल जानेपर शिरदर्द, कपालपर शोथ, श्वासोच्छ्वासमें दुर्गन्ध और ज्वर आदि लक्षण दूर हो जाते हैं।

सूचनाः—रोगीको तृणकान्तमणि पिष्टी या कैशोर गुग्गुलुका १—२ मासतक सेवन कराना चाहिये।

(६) रीठाके छिलटेको रात्रिमें जलमें भिगो देवें। फिर प्रातःकाल मसल छानकर ऊपर कही हुई विधिसे जलकी ५-७ बूंद नासिकामें डालनेसे दर्दका सत्वर

निवारण हो जाता है। इस औषधिसे कफ आकर्षित होकर बाहर निकल जाता है। प्रथम योगके समान इस योगमें भी सावधानीकी आवश्यकता है। अन्यथा श्लैष्मिक कलापर प्रदाह हो जाता है।

(७) श्वासकुठार रस और प्रवालपिष्टी सममाग मिलाकर दिनमें २ ३ बार नस्य करानेसे सूर्यावर्त और अर्धावभेदक दूर होवे हैं।

१६. अयारिज़ फैंकरा

विधि —जटामासी, दालचीनी, अगर, हब्बे बलसा तज़, रूमी मस्तगी, नेत्रबाला, केशर और एलुवा, इन ६ औषधियोंको सममाग मिलाकर कपड़छान चूर्ण करें।

(करावादीन मुकाई)

मात्रा —१॥ से ३ मासे दिनमें २ बार जलके साथ या रात्रिको ३ मासे देवे।

उपयोग —यह चूर्ण मस्तिष्कगत (ऊर्ध्व जत्रुगत सामदोष) विकारको शमन या अधोगत करनेमें अच्छा उपयोगी है। विशेषकर मस्तिष्कमें कफ या द्रववृद्धि हो, तो उसे पिघला कर बाहर निकालता है और लीन द्रवको जला डालता है। मस्तिष्क पीड़ा, अर्धावभेदक, अर्धांगवात, अर्दित, वायटे आना, जिह्वाका लड़खड़ाना आदिपर लाभदायक है।

इसका उपयोग स्वतन्त्र रूपसे अथवा विशेषकर हब्बे अयारिज़ या अन्य शिरोरोगों और उन्माद आदि रोगोंकी औषधियोंके मिश्रणोंमें आता है। जो सामरोगोंका शमन भी करता है।

१७. विश्वविलास तेल

विधि —काले तिलका तेल ७ सेर तथा नख, खस, छरीला, सफेद चन्दन, तगर, अगर और जटामासी, ये ७ औषधिया ४-४ तोले लेवे। पहले तेलको खूब गरम करें। झाग रहित होनेपर उतार कर २-२॥ तोले सामरनमक डाल देवे, शीतल होनेपर गाद नीचे जम जायगी और ऊपरका तेल स्वच्छ जल सदृश पतला हो जायगा। उसे नितारकर अमृतवान या टीनके बर्तनमें भरकर उपरोक्त वस्तुओंका जौकुट चूर्ण डाले। पश्चात् मुखमुद्रा करके ७ रोजतक धूपमें रखें। रोज ३ ४ बार अमृतवानको हिला लेवे। यदि सुगन्ध और रंग मिलाना हो, तो आठवें दिन तेलको निकाल कर छान लें। बादमें हरा रंग (Oil Colour Green) १ तोला तथा विशेष सुगन्धके लिये जैसमिन (Jasmine) ½ औंस मिलाकर बोतलोंमें भर लेवे।

उपयोग —यह तेल मस्तिष्कपर मर्दन करनेके लिये अति हितकारक है। इस तेलमें चिपचिपापन या गाढ़ापन न रहनेसे त्वचाके छिद्र और बालोंमें जल्दी प्रवेश कर जाता है। यह विद्यार्थी वर्ग और मस्तिष्कसे श्रम लेनेवालोंके लिये अति हितावह है। यह मस्तिष्ककी उष्णताको शान्त कर मगजको सबल और मनको प्रसन्न बनाता है।

कितनीक स्त्रियोंके बाल उष्णताके हेतुसे गिरते रहते हैं और अधिक नहीं बढते एवं मुख निस्तेज रहता है। ऐसी अनेक स्त्रियोंको इस तेलके उपयोगसे लाभ हो गया है। इसका उपयोग नित्य करते रहनेसे मगज सबल रहता है, असमयपर बाल सफेद नहीं होते तथा मुखमंडल तेजस्वी रहता है। इस तरह सारे शरीरपर मालिश करनेसे त्वचा मुलायम और तेजस्वी बनती है। इस तेलका अनेक वर्षोंसे इस औषधालयमें प्रयोग किया जाता है।

१८. अकसीर दिमाग

विधिः—उत्तम नवीन बादामका तेल एवं चमेलीका तेल, गुलाब तेल, खोपरेका तेल, काहू और कद्दूका तेल, सब समान भागलें। इसमेंसे २० तोले तेल और रुह खस २० बूंद, रुह केवड़ा ५ बूंद, रुह गुलाब १० बूंद, संदल का तेल, ५ बूंद, इन सबका सम्मिश्रण कर हरे रंग की शीशी में भर, लकड़ीके तख्ते पर सूर्यकी धूप और चंद्रमाकी चांदनीमें ४ रोज तक रखने से तैयार हो जायगा।

(राजवैद्य रामचन्द्रजी शर्मा)

उपयोगः—इसको शिरमें लगानेसे मस्तिष्ककी क्षीणतासे एवं गर्मीसे होनेवाला शिरदर्द, दाह, आंखोंके सामने अंधेरी या चक्कर आना, नेत्रका दाह, जूं, लीकका जमना और बालोंका झड़ना आदि रोग मिटते हैं। यह अत्यन्त मनोहर सुगन्धित भी है। इसके निरन्तर सेवनसे असमय पर बाल पकना और बाल झड़ना आदि भी रुक जाता है।

वक्तव्यः—मस्तिष्ककी क्षीणतासे होनेवाला शिरदर्द मस्तिष्क पोषक बादाम एवं मगज आदिके द्वारा बने हुए बृंहण योग ही लाभकारी हैं। पथ्यादि क्वाथ नहीं। बद्धकोष्ठसे होने वाले शिरदर्दमें कोष्ट शुद्धिकर प्रयोग विरेचन आदिसे ही लाभ होता है। नेत्रक्षीणतासे होनेवाला शिरदर्द, नेत्रपोषक योग एवं चश्मा आदिके लगानेसे ही लाभ होता है। स्त्रियोंके मासिकधर्मकी खराबीसे होनेवाले शिरदर्दमें रजो विकार मिटाना बांछनीय है। ज्वरादि रोग विशेषके कारण होनेवाले शिरदर्द उपद्रव रूपमें होते हुए भी मूल रोगका हेतु होता है। अतः मूलव्याधिकी चिकित्सा भी साथ साथ अनिवार्य होती है।

(५१) स्त्री रोग

१. हीरक रसायन

विधि—हीरा भस्म १ माशा, पन्ना भस्म २ माशे, माणिक्य भस्म ३ माशे, पुखराज भस्म ४ माशे, नीलम भस्म २ माशे, वैडूर्य भस्म ६ माशे, गोमेदमणि (अकीक) ७ माशे, चन्द्रकान्त (स्फटिक) मणि भस्म ८ माशे, प्रवाल भस्म ९ माशे, वैक्रान्त भस्म, स्वर्णमाक्षिक भस्म और रौप्यमाक्षिक भस्म ४॥-४॥ माशे और सममाग पारद गंधककी कज्जली १७५॥ माशे (१४ तोले ७॥ माशे) लेवें। सबको यथाविधि मिला खरल कर एक जीव करें। फिर बकरीका दूध, बांझ ककोड़ेका कन्द, लाल और पीली गोरखमुण्डी, हंसराज और नीलोफर, इन सबके द्रवोंमें १-१ दिन खरल कर ४ गोला बना, सुखा कर ४ पात्रों में सराव संपुट करें। फिर इसे कुक्कुटपुट देवें। गंधकका अंश शेष रहा हो, तो घी कुवारके रसमें खरल कर गोला बना कर फिरसे कुक्कुटपुट देवें। स्वांग शीतल होने पर निकाल पीस कर बोतल में रख देवें।

(र० यो० सा०)

मात्रा.—१-१ रत्ती दिन में १ या २ बार रोगानुरूप अनुपान के साथ दें।

उपयोग—यह हीरक रसायन सगर्भा, प्रसूता, वन्ध्या, योनिरोग, रक्त गुल्म और प्रदरपीड़ित स्त्रियोंके लिये अत्यन्त हितकारक है। राजयक्ष्मा को भी दूर करता है। यदि स्त्री समागमके १ घण्टे पहले इसका सेवन किया जाय तो अति स्तंभन होता है।

२. लक्ष्मणा लोह

विधि—लक्ष्मणा पचांग ४०० तोले अशोक छाल, कुशकी जड़, महुएका गर्भ (मग्ज), मुलहठी, सरैंटीकी जड़, पाठा और बेलगिरी, ये ७ औषधियां ४-४ तोले तथा लोह भस्म सबके समान लें। पहले लक्ष्मणा को जौकुट कर ८ गुने जलमें मिलाकर चतुर्थांश क्वाथ करें। फिर मसल छान पुनः चूल्हेपर चढ़ाकर घन बनावें। काष्ठादि औषधियोंको कूट कर कपड़छान चूर्ण करें। पश्चात् घन, चूर्ण और सबके समान लोह भस्म मिला मर्दन कर २-२ रत्तीकी गोलियां बना लेवें। (भै० र०)

मात्रा—१ से २ गोली जल, अशोकारिष्ट या रोगानुसार अनुपानके साथ दिनमें दो बार देवे।

उपयोग—यह लोह स्त्रियोंके गर्भाशयकी विकृतिको नष्ट करता है। गर्भाशयप्रदाह, मासिकधर्म समयपर न आना, मासिकधर्म आनेके समय कष्ट होना, मासिकधर्म बहुत कम आना, मासिकधर्ममें रक्त नीला, काला, पीला या दुर्गन्धयुक्त होना, गर्भाशयमें शूल चलना, गर्भाशयमें भारीपन बना रहना आदि विकार दूर होकर गर्भाशय शुद्ध बन जाता है तथा गर्भाशय विकारसे उत्पन्न पाण्डुता, दृष्टिमांद्य, शिरदर्द, कटि-

पीड़ा आदि भी निवृत्त होकर शरीर सबल और सुन्दर बन जाता है। यह योग संतानोत्पत्तिकारक भी माना गया है।

३. शोणितार्गल रस

विधिः—लोह भस्म, अभ्रक भस्म, जसद भस्म, रसौंत, फिटकरीका फूला, प्रत्येक १–१ तोला, रससिन्दूर, रक्तचंदन, सोनागेरू और पीपलकी लाख २–२ तोले लें। रसौंतके अतिरिक्त सब औषधियोंको खरलमें मिला रसौंतके जलके साथ खरल कर २–२ रत्तीकी गोलियां बना लेवें। (श्री० वैद्य गोपालजी कुँवरजी ठक्कुर)

मात्राः—१ से २ गोली उशीरासव या जलके साथ दिनमें दो बार।

उपयोगः—यह रसायन रक्तार्श, रक्तप्रदर, रक्तातिसार आदि विकारोंमें रक्तस्रावको बन्द करने और शक्तिका संरक्षण करनेके लिए उपयोगी है। इस रसायनके सेवन से रक्तवाहिनियां, अन्त्र और गर्भाशय आदि स्थानोंकी उष्णता शमन होकर रक्तस्राव बन्द होता है। इस हेतुसे इसके प्रयोगमें दूषित रक्त रुककर भविष्यमें हानि पहुँचनेकी भीति नहीं रहती। यह निर्भय औषधि है।

अति रजस्राव होने पर शोणितार्गल बबूलकी कच्ची फलीके चूर्ण और मिश्रीके साथ दिनमें ३ बार देवें और ऊपर लोध्रासव पिलानेसे सत्वर लाभ पहुँच जाता है।

४. सौभाग्यादि गुटिका

विधिः—सोहागेका फूला, भूनी हींग और कसीस १–१ तोला, अजवायन २ तोले, कालीमिर्च ३ तोले और एलुवा ५ तोले लेवें। सबको मिला घी कुँवारके रसमें ६ घंटे खरल कर १–१ रत्तीकी गोलियां बनावें। (हकीम उत्तमचन्दजी)

मात्राः—१ से ४ गोली, निवाये जल या अर्क सौंफ अथवा रोगानुसार अनुपानके साथ देवें।

उपयोगः—मासिकधर्ममें कष्ट होना, मासिकधर्म कम आना, मासिकधर्म समय पर न होना, मासिकधर्मकी विकृतिसे शिरदर्द, नेत्रकी निर्बलता, और कमरमें पीड़ा रहना आदि विकार होनेपर दो दो गोली निवाये जलके साथ रात्रिको सेवन करते रहनेसे १–२ मासमें मासिकधर्मकी शुद्धि होजाती है।

अपचन रहता हो तो १–१ गोली भोजन कर लेने पर देनेसे पचनक्रिया सुधर जाती है मलावरोधज उदरशूलमें दोसे चार गोली अर्क सौंफके साथ देनेसे दस्तकी शुद्धि होती है, और उदरशूलका निवारण होता है। इसके अतिरिक्त गुल्म, आध्मानको भी नाश करती है। परन्तु इसके सेवनसे दस्त अधिक होजाय, तो मात्रा कम करदें अथवा कुछ दिनोंके लिए बन्द कर देनी चाहिए।

५. रजोदोषहरी वटी

विधिः—मुश्क तरामसी, रेवन्दचीनी, तगर, तुख्म हरमल, सातर, सौंफ,

अनीसून, तुरुम कर्फस, अजरार, (नरसलमुल), सोया और चासकी जड़ ये ११ द्रव्य १०-१० तोले और उलटकम्बलके मूल ४० तोले मिला, जौ कूटकर चौगुने जलमें पकावें। चौथाई जल शेष रहने पर कपड़े से छानकर मदाग्नि पर पकावें । कुड़छीको लगने लगे तब नीचे उतार कर धूपमें सुखावें। गोली बनने योग्य हो जावे तब उसमें कूठका चूर्ण २ तोले, जावशीर २ तोले और जुन्दबेदस्तर १ तोला मिला २-२ रत्तीकी गोलियां बना लेवें । (श्री० प० यादवजी त्रिकमजी आचार्य)

मात्रा —४-४ गोली प्रात सायं जलसे देवें। रजोदर्शनके समयमें निम्न क्वाथसे देवें —

क्वाथ —अजरार, मुरक्कतरामशी, अनीसून, अयइल, ककड़ीका मगज, गोखरू और हंसराज, सब ६-६ माशे लें, २० तोले जलमें पका ५ तोले शेष रहने पर कपड़े से छान १ तोला गुड़ मिलाकर पिलावें ।

उपयोग —यह वटी स्त्रियोंके मासिकधर्मकी विकृति, रजस्राव योग्य न होना, उस समय भयकर शूल चलना, रक्त थोड़ा काला पीला झागवाला गिरना और इस विकारके हेतुसे नेत्रकी निर्बलता, मस्तिष्कमें वेदना, शारीरिक अशक्ति, आलस्य, मानसिक अस्वास्थ्य आदिको दूर करती है।

सूचना —इसमें खुरासानी अजवायन १ मात्रामें १ से २ रत्ती तक क्वाथ या चूर्ण के रूपमें देनेसे वेदना शामक गुण विशेष बढ़ आता है। (संशोधक)

६ बोलादि वटी

विधि —बीजाबोल (मुरमकी) १० तोले, सोहागेका फूला, विलायती कासीस और एलुवा ५-५ तोले और भुनी हींग २॥ तोले लें । सबको मिला जटामासीके फाटमें १२ घण्टे खरलकर २-२ रत्तीकी गोलिया बना लेवें ।

(श्री० प० यादवजी त्रिकमजी आचार्य)

मात्रा —२-२ गोली सुबह और रात्रिको भोजनके आध घण्टे बाद जलसे ।

उपयोग —यह वटी स्त्रियोंके मासिकधर्मकी विकृतिको दूर करती है। अनेक बालक होने या अन्य कारणसे गर्भाशय शिथिल हो जानेपर मासिकधर्ममें थोड़ा और काला रक्त गिरता है। मासिकधर्म शुद्ध नहीं होता, कमरमें वेदना होती है। नेत्रोंमें निर्बलता आजाती है। उसके लिए यह वटी अति हितकर है । १-२ मास सेवन करने पर रजोदर्शन नियमित बन जाता है।

७ कुमारिका वटी

विधि —एलुवा, शुद्ध कासीस, अफीम, बगमरम और शीतलमिर्च, इन ५ औषधियोंको सममाग मिला घीकुवारके रसमें ६ घण्टे खरल कर १-१ रत्तीकी गोलिया बनावें ।

(मै० र०)

मात्राः—१-१ गोली प्रातः और सायं अथवा केवल रात्रिको एक वार जलके साथ देवें। तीव्र शूलके समय २-२ घण्टे पर दो या तीन बार ४ रत्ती कपूरके साथ या शराबके साथ देवें।

उपयोगः—यह वटी विविध प्रकारके योनिरोग, बाधक वेदना, गर्भाशय भ्रंश-जनित शूल, मक्कल शूल और मासिकधर्मके समय शूल तथा प्रदर आदि रोगोंको दूर करती है और मासिकधर्मको साफ लाती है।

बाधक वेदना होनेपर कटि व्यथा, नाभिके पासमें और नीचे भारीपन, मासिक-धर्म अनियमित समयपर आना, शूल चलना, नेत्र, हाथ और पैरोंके तलोंमें दाह, शिरदर्द और बेचैनी आदि लक्षण उपस्थित होते हैं। ये सब इस वटी के सेवनसे शान्त होजाते हैं।

गर्भाशयमें किसी भी प्रकारका शूल चलता हो, शूल ठहर ठहर कर चलता हो, वेदनाके हेतुसे निद्रा न आती हो, उस पर यह वटी दी जाती है। इस वटीमें अफीम आती है अतः मात्रा अधिक नहीं देनी चाहिये .तथापि पीड़ाशमनार्थ पूर्ण मात्रा देनेमें भी आपत्ति नहीं मानी जाती। यदि विशेष कब्ज हो और सुविधा हो, तो एरण्ड तेलकी बस्ति देकर मलाशयको साफ करलेना चाहिये। गर्भावस्थामें यह औषधि नहीं दी जाती, तथापि गर्भावस्थाके अन्तमें प्रसवावस्था उपस्थित होने पर किसी आघातके हेतुसे गर्भसंरक्षक जलका स्राव होगया हो और गर्भाशयका मुख विकसित न हुआ हो, तो संतानका मुख गर्भाशयके अविकसित मुखको लग जाता है। जिससे गर्भाशयका सबल संकोच होता है और तीव्र वेदना उपस्थित होती है। यदि उसका निवारण तत्काल न किया जाय, तो संतानकी मृत्यु होती है और माताका जीवन भी दुखदायक बन जाता है। ऐसी विषमावस्थामें यह औषधि शराबके साथ देने पर अमृतके समान उपकार करती है। आवश्यकतापर गर्भिणीको उष्ण जलके टबमें भी बैठाया जाता है।

प्रसवके पश्चात् मक्कलशूल (After pains) उत्पन्न होता है। उस पर यह वटी ४ रत्ती कपूर मिलाकर देनेसे तत्काल लाभ होजाता है। कभी प्रसवास्थामें गर्भाशय के भीतर प्रदाह हो जानेके हेतुसे वातप्रकोप होकर उन्मादके लक्षण उपस्थित होते हैं। निद्रा भी नहीं आती। ऐसे प्रसंगपर इस वटीका सेवन करानेसे वेदना शमन होती है और शांत निद्रा आ जाती है।

इस वटीमें अफीम और एलुवाका मिश्रण होनेसे अफीमकी मलावरोध करने-वाली शक्तिका ह्रास होता है; वेदना शामक होनेमें अच्छी सहायता मिल जाती है। कासीस आमका शोषण करती है और गर्भाशयको सबल बनाती है। वंगभस्म मूत्र संस्थान और प्रजनन यंत्रके सब अवयवोंको लाभ पहुँचाती है तथा रक्तको विशुद्ध बनाती है। शीतलमिर्च उत्तेजक, पाचक और वातहर है। गर्भाशयकी श्लैष्मिक कलामेंसे अधिक स्राव कराता है; कीटाणुओंको नष्ट करता है; तथा वृक्क स्थानके कार्यको उत्तेजित करता है। सुजाकजनित विकृति हो, तो उसे भी दूर करता है और मूत्रमें होने वाली जलन को शांत कर पेशाबको साफ लाता है।

८. अश्वगन्धादि योग

विधि —असगंध और विधारेका चूर्ण ८-८ तोले, बड़ी इलायचीका चूर्ण और कुक्कुटाण्डत्वक भस्म दो दो तोले, वंग भस्म एक तोला और मिश्री आठ तोले ले सबको मिलाकर खरल कर लेवें। (श्री० पं० यादवजी त्रिकमजी आचार्य)

मात्रा —२ से ४ माशे प्रातः साय गो दुग्धके साथ।

उपयोग —यह चूर्ण नये और पुराने श्वेतप्रदरको दूर करता है। जीर्ण रोगमें ४-६ मास तक शांतिपूर्वक इसका सेवन कराना चाहिये।

९. मायाफलादि चूर्ण

विधि —माजूफल ५ तोले, अश्वगन्धा २॥ तोले, आवलेकी मज्जाका चूर्ण २॥ तोले, फिटकरीका फूला १। तोले, कुक्कुटाण्डत्वक भस्म १। तोले, इन सबकी बराबर मिश्री अथवा शक्कर मिलाकर बोतलमें भर लेवें।

मात्रा —२-३ माशे दुग्ध अथवा शीतल जलके साथ दें।

उपयोग —इसके सेवनसे श्वेतप्रदर, योनिभ्रंश और गर्भाशयकी निर्बलता मिटती है।

१० पत्रांगासव

विधि —पतंगकी लकड़ीका बुरादा, खैरसार, अडूसेका मूल, सेमलके फूल, खरेंटी मूल, भिलावा, अनन्तमूल सफेद, अनन्तमूल काला, जपाकुसुम (गुड़हर) की कलिया, आमकी गुठलीकी गिरी, दारुहल्दी, चिरायता, पोस्तके डोडे, जीरा, अगर, रसौत, बेलगिरी, नागरा, दालचीनी, केशर और लौंग, ये २१ औषधियाँ ४-४ तोले मिलाकर जौकुट चूर्ण करें। यह सब चूर्ण, मुनक्का १ सेर और धायके फूल ६४ तोलेको २०४८ तोले जलमें मिलावें। उसमें शक्कर ४०० तोले और शहद २०० तोले डालें। एक मास तक बन्द रखें। आसव परिपक्व होनेपर छानलें। (भै० र०)

मात्रा —२॥-२॥ तोले समान जलके साथ दिनमें दो बार।

उपयोग —यह आसव वेदनायुक्त, उग्र श्वेत और रक्तप्रदरका नाश करता है एवं प्रदरके साथ उपद्रव रूपसे उत्पन्न ज्वर, पाण्डु, शोथ, अग्निमान्द्य और अरुचिको भी दूर करता है।

प्रदरमें पतला और उष्ण स्राव अधिक होता हो, गर्भाशय शिथिल हो गया हो, फूला हुआ सा प्रतीत होता हो, शूल भी चलता हो, उसके लिये यह आसव हितकारक है। इस आसवके साथ चन्द्रकला रसका सेवन करानेसे सत्वर लाभ होता है।

११ असृग्दरहर योग

(१) लजवन्ती पञ्चाङ्गका कपड़छान चूर्ण १-१ माशा दिनमें ३ बार शीतल जल या गोमूत्रके साथ देनेसे रक्त प्रवाह एक ही दिनमें बन्द हो जाता है। अति भयंकर

बढ़ा हुआ और असाध्य रोग भी दूर हो जाता है । मासिकधर्ममें अत्यधिक रजस्राव होना और रक्तप्रदर, दोनोंपर यह औषध लाभ पहुँचाता है । रक्तप्रवाह बन्द हो जाने-पर दूसरे दिन आधी मात्रा दो बार देवें ।

सूचनाः—(अ) मात्रा अधिक होनेपर वमन हो जाती है । अतः मात्रा कम ही देवें । भोजन पौष्टिक और शीतल गुण युक्त देवें ।

(आ) आवश्यकता हो, तो आगे लिखी हुई शिखर्यादि वर्तिका भी प्रयोग करें ।

(२) लगभग ६ माशेसे १ तोला तक करौंदेके मूलको घिसकर दूधके साथ पिलानेसे भयंकर रक्तप्रदर तथा मासिकधर्ममें अति रक्तस्राव होना, दोनों दूर हो जाते हैं । विशेषतः २–३ दिनमें ही लाभ हो जाता है । कदाच कसर रह जाय, ३ दिन औषध बन्द रखकर फिर ३ दिन देनेसे पूर्ण आराम हो जाता है ।

(३) संगमर्मरको कूट कपड़छान चूर्ण कर उसमें १६ वां हिस्सा सोनागेरू मिलाकर ३ घण्टे खरल करें । इसमेंसे आधसे १ माशा घी शक्करके साथ दिनमें ३ बार देनेसे रक्तप्रदर शमन हो जाता है । यदि संगमर्मर अर्थात् मकराणेके पत्थरकी भस्म बनालें अर्थात् चूना बना लें । फिर आधी मात्रासे ही गुण पूरा करता है ।

१२. आर्तवप्रद योग

(१) बीजाबोल और एलुवा, दोनों समभाग मिला जलमें पीस बेरके समान गोली या वर्त्ति बनाकर योनिमें धारण करनेसे मासिकधर्म आने लगता है । आवश्यकता पर दूसरे दिन पुनः वर्त्ति धारण करें ।

(२) रीठेकी गिरीके चूर्णको समभाग गुड़में मिला जामुन जैसी वर्त्ति बनाकर धारण करनेसे मासिकधर्म आने लगता है । पहले पीले–लाल जल गिरता है । फिर रजः स्राव होता है ।

(३) कपासके मूल, अमलतासकी फलीका छिलटा, काले तिल, गोखरू, इन्द्रायणका मूल, सौंफका मूल, बांसका मूल, गाजरके बीज, मूलीके बीज, ककड़ीका मग्ज़ और निगुंण्डी, इन ११ औषधियोंको समभाग मिलाकर जौकूट चूर्ण करें ।

मात्राः—२ से ४ तोले चूर्णका अष्टावशेष क्वाथ करें । फिर छान २ तोले गुड़ मिलाकर पिला देवें । यह क्वाथ रोज सुबह १ बार देवें ।

उपयोगः—यह क्वाथ बन्द मासिकधर्मको खोल देता है । जब युवावस्थामें गर्भाशयके भीतर चर्बी बढ़नेसे या अन्य प्रतिबन्ध आजानेपर मासिकधर्म रुक जाता है, तब विविध प्रकारके उपद्रव उपस्थित होते हैं । मस्तिष्कमें भारीपन, नेत्रमें निर्बलता, शिरदर्द, नासिकासे रक्तस्राव, कमरमें वेदना, शरीर फूल जाना और निर्बल हो जाना, किसीको उदरशूल होना, पैरोंपर शोथ और गर्भाशयपर दबानेसे वेदना होना, क्षुधानाश आदि प्रतीत होते हैं । उसपर यह क्वाथ ५–७ दिन देनेसे मासिकधर्म फिरसे आने लग जाता है, यह प्रयोग २० से ४० वर्षके भीतरकी बलवान स्त्रियोंके लिये है ।

सूचना —यदि देहमें रक्तकी कमी होनेसे मासिकधर्म बन्द हो गया हो, तो उन स्त्रियोंको यह क्वाथ नहीं देना चाहिये। एवं सगर्भाको भी यह क्वाथ न देवे।

(४) छोटी कटेलीके बीजोंका चूर्ण ६ माशे दिनमें १ बार सुबह निवाये जलसे देनेसे ३ दिनमें मासिकधर्म खुलकर साफ आ जाता है।

(८) २-२ तोले तिलका क्वाथकर दिनमें २ बार पिलाने तथा सोंठ और भारङ्ग मूलका चूर्ण ६-६ माशे थोड़े गुड़ और घीके साथ देते रहनेसे ३-४ दिनमें मासिक धर्म आने लगता है।

१३ गर्भधारक योग

विधि —रससिंदूर, जायफल, जावित्री, लौंग, कपूर, केशर और रुद्रवन्ती, सबको समभाग मिला शतावरके क्वाथमें ३ दिन खरलकर १-१ रत्तीकी गोलियां बना लेवें।

उपयोग —मासिकधर्म आनेके पश्चात् चौथे दिनसे दिनमें २ बार ३ दिन तक १-१ गोली खाकर ऊपर दूध पीवें। इस तरह तीन ऋतु पर्यन्त करनेसे गर्भ धारण हो जाता है। यदि इसमें जीयापोता जिसका नाम पुत्रजीवक अथवा पुत्रदा भी है, वह भी मिलाया जाय तो विशेष गुणकारी है।

१४. प्रदरान्तक योग

(१) एरण्डकी लकड़ीको जलाकर काली राख करें। फिर उसके समान आंवलोंका चूर्ण मिलाकर अच्छी तरह खरल कर लेवें। इस चूर्णमेंसे ६-६ माशा चूर्ण शीतल जलके साथ प्रात साय देते रहनेसे रक्तप्रदर और श्वेतप्रदर, दोनों दूर होते हैं।

(२) दूध, बचका चूर्ण ४ से ६ रत्तीतक दिनमें ३ बार देवें। प्रात साय दूधसे और दोपहरको जलके साथ देवें। इस तरह ३-४ दिन प्रयोग करनेसे नया रक्तप्रदर शमन हो जाता है।

(३) सोनागेरूको आंवलेके रसमें भिगो कर छायामें सुखावें। इस तरह २१ भावना देवें। फिर ३ से ६ रत्ती दिनमें २ बार दूधके साथ देनेसे रक्तप्रदर रक्तस्राव और पाण्डुता दूर होते हैं।

(४) सोनागेरू १ तोला और फिटकरीका फूला ४ तोले मिलाकर खरल कर लें। उसमेंसे ६ ६ रत्ती शक्करके साथ देकर ऊपर बकरीका दूध पिलानेसे रक्तस्राव और रक्तप्रदर सत्वर शमन हो जाते हैं।

(५) कतीला गोंद (पीताम) और सेलखड़ी १-१ माशा, सोनागेरू २ रत्ती और मिश्री सबके समान मिलाकर भोजनके पहले दिनमें २ बार थोड़े जलसे सेवन करते रहनेसे अति रज स्राव, रक्तप्रदर, श्वेतप्रदर, गर्भाशयप्रदाह गर्भाशयमें वेदना आदि विकार थोड़े ही दिनोंमें दूर होते हैं।

(६) छोटी दूधेली और मिश्री १—१ माशेका मिश्रण प्रातः सायं गोदुग्धके साथ देते रहनेसे १ सप्ताहमें रक्तप्रदर दूर होता है। एवं नियमित होनेवाले अत्यधिक रजःस्रावका भी शमन हो जाता है।

(७) पलाशपुष्प और दर्भमूलको समभाग मिलाकर बारीक चूर्ण करें। रोज सुबह ६-६ माशे जलके साथ देते रहनेसे १४ दिनमें पित्तप्रकोपज प्रदर (पतला और उष्ण रसस्राव) और रक्तप्रदर दूर होते हैं।

(८) गोघृतमें मिलावेके तेलके ४ बूंद मिलाकर खिला देनेसे रक्तस्राव और रक्तप्रदर दूर होते हैं। ३ से ७ दिनतक देवें।

(९) गूलरके मूलको जलमें घिस, शक्कर मिलाकर पिलाने और १-१ रत्ती त्रिवङ्ग भस्मका सेवन करानेसे दाहसह प्रदर और प्रमेह दूर हो जाते हैं।

१५. अशोकादि कषाय

विधिः—अशोककी छाल १० तोले, आमकी छाल, जामुनकी छाल और बेर (झड़बेर) की छाल ५-५ तोले लेकर जौकूट चूर्ण करें।

मात्राः—२-२ तोलेका क्वाथकर १-१ तोला गोघृत और ६-६ माशे मिश्री मिलाकर भोजनके तीन घण्टे बाद तीसरे पहरको पिलावें, या सुबह-शाम दो बार देवें।

उपयोगः—इस कषायके सेवनसे नया और पुराना रक्तप्रदर शमन हो जाता है। गर्भाशयकी श्लैष्मिक कलाका प्रदाह, रक्तवाहिनी फटना, गर्भाशयकी दुष्टि, इन सबपर यह हितावह है।

१६. योनिसंकोचन योग

(१) कूठ, धायके फूल, बड़ी हरड़, फिटकरी, माजूफल, लोध, भांग और अनारकी छाल, इन ८ औषधियोंको १-१ तोला मिला चूर्णकर ४० तोले शराबमें डालकर ७ दिन रहने दें। दिनमें २-२ बार बोतलको चला लें। फिर छानकर उपयोगमें लें। इस अर्कमें फुरेरी डुबोकर योनिके भीतर चारों ओर लेप कर देनेसे शिथिल योनि दृढ़ हो जाती है।

(२) माजूफल २ तोले, कपूर और फिटकरी ३-३ माशे मिलाकर कपड़छान चूर्ण करें। फिर पतले कपड़ेकी छोटी छोटी पोटली बनाकर योनिमें चढ़ावें। पोटलीका एक डोरा लम्बा बांधें; जिससे इच्छा होनेपर पोटलीको निकाल सकें। इस प्रकार पोटली रखनेसे योनि तंग हो जाती है। कमल नीचे गिर जाता हो और नया रोग हो, तो वह भी अपने स्थानपर स्थिर हो जाता है।

(३) भांगकी पोटली ३ घंटेतक योनिमें रखनेपर अनेक बार प्रसूता हुई नारीकी योनि भी कन्याके समान हो जाती है।

(४) माजुफल, मांई, फिटकरी और राल, चारोंको समभाग मिला पोटली कर धारण करनेसे योनि संकुचित हो जाती है। (हकीम उत्तमचंदजी)

१७ योनिकण्डूहर योग

(१) फिटकरी कच्ची ६ माशेको १ सेर जलमें मिलाकर दिनमें ३ समय धोनेसे खुजली दूर हो जाती है।

(२) तेज शराबका फोहा कण्डू स्थानपर रख देनेसे कीटाणु नष्ट होकर तीव्र कण्डू निवृत हो जाती है।

(३) कपूर, अफीम, मुर्दासंग चन्दनका तैल और सोहागेका फूला, पाचों १-१ माशा, नीलगिरी तैल ४ माशे और वेसलीन या धोया घृत २॥ तोला लेकर मलहम बना लेवें। इस मलहमका लेप करनेसे कण्डू शमन हो जाती है।

(४) त्रिफलाघन सत्व या उदुम्बरघन सत्वको जलमें मिलाकर योनिको धोनेसे कण्डू व उससे उत्पन्न पिड़िकायें नष्ट हो जाती हैं।

१८ सूतिकावल्लभ रस

विधि।—शुद्ध पारद, शुद्ध गन्धक, सुवर्णमाक्षिक भस्म, अभ्रक भस्म, कपूर, सुवर्णभस्म, शुद्ध हरताल, रौप्य भस्म, अफीम, जावित्री और जायफल, ये ११ औषधिया सममाग लें। पहले पारद गन्धककी कज्जली कर फिर शेष द्रव्य मिलावें। पश्चात् नागरमोथा, खरैंटी और सेमलकी छालके क्वाथमें क्रमशः २-२ दिन खरल करके आध आध रत्तीकी गोलिया बनावें। (भै० र०)

मात्रा —१-१ गोली दिनमें ३-४ बार जल, बकरीके दूध, मट्ठे या रोगानुसार अनुपानके साथ देवें।

उपयोग —यह रसायन सूतिकाकी भयकर ग्रहणी, घोर अतिसार, प्रवाहिका, दुर्बलता, अग्निमान्द्य आदिको नष्ट करता है, तथा तुरन्त पुष्टि, कान्ति, मेधा, और धृतिको उत्पन्न करता है।

प्रसवके कुछ दिनों बाद अपथ्य सेवन होनेपर अतिसार या ग्रहणी रोग हो जाता है। फिर तुरन्त न सम्हालनेसे रोग उग्र रूप धारण कर लेता है। प्रति दिन २५-४० बार मरोड़ा आकर दस्त लग जाते है। उदरमें ऐंठन होती रहती है, दस्त होनेपर अति निर्बलना आ जाती हैं। बार बार चक्कर आना, कर्णगुंज, हृदयमें धड़कन वृद्धि, अरुचि, अति अग्निमान्द्य, खाया हुआ कुछ भी न पचना, आम और रक्तमिश्रित दस्त होना, प्यास अधिक लगना, ज्वर बना रहना आदि लक्षण उपस्थित होते हैं। ऐसे समयपर यह सूतिकावल्लभ अमृतके समान कार्य करता है।

इस औषधिमें अफीम आती है अत अधिक मात्रा नहीं देनी चाहिये। अफीम का असर स्तन्य द्वारा शिशुपर भी होता है। यदि शिशुको भी प्रवाहिका या अतिसार हो, तो वह भी नष्ट हो जाता है। यदि बालकको अफीमका अधिक असर पहुँचनेसे अधिक कब्ज रहता हो, तो प्रसूताका स्तन पान छुड़ा देना चाहिये। या औषधकी मात्रा कम देनी चाहिये।

सूचनाः—जब तक अफीम रहित औषधिसे लाभ हो, तब तक इसका उपयोग नहीं करना चाहिये। प्रवाहिकाने उग्र रूप धारण कर लिया हो, तो ही इसे प्रयुक्त करें।

१९. केशरादि वटी (सूतिका)

विधिः—केशर, कालीमिर्च, चित्रकमूल, जायफल, जावित्री, शुद्ध हिंगुल, शुद्ध बच्छनाग और अभ्रक भस्म, ये ८ औषधियां १–१ तोला और एरण्ड तैलसे शुद्ध किया हुआ कुचिला ४ तोले लेवें। सबको यथाविधि मिला नागरबेल (बंगला) पानके स्वरसमें १२ घण्टे खरलकर १–१ रत्तीकी गोलियां बना लेवें।

मात्राः—१–१ गोली दिनमें २ से ३ बार अदरखके रस और शहदके साथ।

उपयोगः—यह गुटिका सूतिका ज्वर, कफकास, हृदयकी शिथिलता, वात-प्रकोपज उपद्रव, इन सबको दूर करती है।

इस गुटिकामें उत्तेजक, स्वेदल, ज्वरघ्न, आमपाचन, कीटाणुनाशक, कफघ्न और वातहर गुण अवस्थित हैं। यह गुटिका प्रसूताके वातप्रकोपज ज्वर और कफप्रकोप सह सन्निपातपर चमत्कारी लाभ पहुँचाती है। जिस तरह आनन्दभैरव रसका उपयोग सामान्य बोधवाले चिकित्सक विविध स्थानोंपर करते रहते हैं, उसी तरह यह रस सूतिका ज्वरकी विविध अवस्थाओंमें निर्भयता पूर्वक प्रयुक्त हो सकता है।

प्रसवावस्थामें योग्य सम्हाल न रहनेपर योनि मार्गसे कीटाणुओंका प्रवेश हो जाता है। इन कीटाणुओंमेंसे कितनीक जातिके कीटाणुओंके विषका संचय होनेपर वातनाड़ियोंकी विकृति होती है। फिर त्रिदोषज ज्वर उपस्थित होता है। वातप्रकोपके लक्षण, व्याकुलता, हाथ–पैर टूटना, कभी दांत भिंचना, प्रलाप आदि प्रकाशित होते हैं। किसी किसीको कफ बढ़ जाता है। शीत लगना, अरुचि, मलावरोध, किसी किसीको अपचन-जनित पतले दस्त होना, शिरदर्द बना रहना और उदरशूल आदि लक्षण उपस्थित होते हैं। इस विकारपर यह वटी लाभदायक है। यदि गर्भाशयमें दुर्गन्धयुक्त स्राव होता रहता हो, तो बस्तिद्वारा गर्भाशयको शुद्ध कर लेना चाहिये। गर्भाशयकी शुद्धि होनेपर सत्वर गुण दर्शाती है। यदि अफारा, अपचन, पतले दस्त, हृदयकी क्षीणता और धनुर्वात आदि वातप्रकोप हों, तो वे सब दूर हो जाते हैं।

२०. स्तन्यशोषक लेप

विधिः—कालीजीरीका चूर्ण १ तोले, एलुवा और डिकामाली, दोनों ६–६ माशे लें। सबको मिला जलमें पीसकर लेपकर देनेपर स्तनमें दूध भर जानेसे जो वेदना होती है वह दूर होजाती है। यह प्रयोग विशेषतः जिनका बालक गुजर गया हो, उनके लिये उपयोगी है। क्वचित् जीवित बालककी माताके लिये भी स्तनमें विकार हो जानेपर लेप लगाया जाता है।

सूचना—(१) लेप लगानेपर रोग हो, तब तक उस स्तनका दूध बालकको नहीं पिलाना चाहिये। भारीपना आजानेपर ब्रेस्ट पम्पसे खींच लेना चाहिये।

(२) ४–८ रत्ती कपूर सुबह शाम खिलानेपर दूधकी उत्पत्ति जल्दी कम होजाती है।

२१. महारस शार्दूल

विधि—अभ्रक भस्म, ताम्र भस्म, स्वर्णभस्म, शुद्ध गन्धक, शुद्ध पारद, शुद्ध मैनशिल, सोहागेका फूला, जवाखार, हरड़, बहेड़ा और आवला, ये ११ औषधियां ४–४ तोले, शुद्ध बच्छनाग ३ माशे, दालचीनी, छोटी इलायचीके दाने, तेजपात, जावित्री, लौंग, जटामासी, तालीसपत्र, सुवर्णमाक्षिक भस्म और रसौंत ये ६ औषधियां २–२ तोले लेवें। पारद गन्धककी कज्जली करें। फिर भस्म और बच्छनाग मिलावें। अच्छी तरह मिल जानेपर शेष औषधियोंका कपड़छान चूर्ण मिलाकर एक जीव करें। पश्चात् गीमा (ग्रीष्मसुन्दर Mollugo Oppositifolia) +और नागरबेलके पानोंके रसकी ७–७ भावना देवें। फिर थोड़ा द्रव शेष रहनेपर सफेदमिर्चका कपड़छान चूर्ण ४ तोले मिला नागरबेलके पानके रसके साथ खरलकर २–२ रत्तीकी गोलियां बना लेवें।

(र० सा० सं०)

वक्तव्य—कितनेक ग्रन्थकार ग्रीष्मसुन्दरके स्थानपर हरमलकी भावना देते हैं। हरमल सूतिका रोग नाशक है, किन्तु वमन, दाह और अतिसार न हो, और मलावरोध हो, तब वह हितकर होती है। वमन, अतिसारपर गीमा शाकके रसकी भावना ही हितावह मानी जाती है।

मात्रा—१ से २ गोली दिनमें २ बार। प्रसूताको जीर्ण ज्वरमें अनुपान बकरीका दूध और सगर्भाको द्राक्षारस दिया जाता है। अथवा खसको खस, रक्तचन्दन, नागरमोथा, गिलोय, धनिया और सौंठके क्वाथके साथ देते रहें।

उपयोग—महारसशार्दूल सूतिकारोगके लिये उत्तम औषधि है। सूतिकाके ज्वर, दाह, वमन, चक्कर आना, अतिसार, अग्निमान्द्य, अरुचि, आदिका नाश करता है। इसके अतिरिक्त गर्भिणीके ज्वर, वमन आदिपर निर्भयरूपमें व्यवहृत होता है।

सूतिकारोगमें जब वमन और अतिसार सह जीर्णज्वर हो और पित्तप्रधान प्रकृति हो, तब सूतिकारिरस या सूतिकाभरण नहीं दे सकते। सूतशेखर या महारसशा

+ बंगालमें सर्वत्र यह जलाशयके किनारपर होता है। यह विशेषत जमीन पर फैलता है। पान आयसे १ इञ्च लम्बा, फूल सफेद। फली ½ से ⅓ इन्च लम्बी, ३ खण्डवाली। इसकी दूसरी जातिको हिंद और पजाबमें गंदी बूटी और सौराष्ट्र में ओखराड कहते हैं।

यह ग्राही, उदरदोषहर, विषघ्न और गर्भाशयदोष निवारक है प्रसूताको गीमा का रस १ से २ तोला देनेपर रुका हुआ स्राव सरलतासे बाहर निकल जाता है।

घूंल दिया जाता है। इन दोनोंमें भी पचनक्रिया अति मन्द हो, ज्वर मन्द मन्द रहता हो और वात कफप्रकोप हो, तब इस रसायनका उपयोग करना ही पड़ता है। सूतशेखर अधिक ज्वर और वातपित्त प्रकोपवालेको दिया जाता है

सूतिकाज्वरके आरम्भमें विपरीत चिकित्सा होने अथवा अपथ्यका सेवन करनेपर रोग जीर्ण होकर विपरीत रूप धारणकर मन्द मन्द ज्वर बना रहना या रात्रिको १०१° तक हो जाना, हाथ पैरोंकी नसें खिंचना, अग्निमांद्य, अपचन, दाह, वमन, अतिसार, मुखपाक, शिरदर्द, मूत्रमें पीलापन, नाखूनोंमें गड्ढे हो जाना, आलस्य बना रहना, अंगमें भारीपन और शारीरिक कृशता आदि लक्षण उपस्थित होते हैं। ऐसी अवस्थामें इस रसका सेवन कराने और पथ्य भोजन देनेपर थोड़े ही दिनोंमें रोग निवृत्त होकर शरीर सबल और तेजस्वी बन जाता है।

२२. सूतिकारोगान्तक क्वाथ

विधिः—रास्ना, देवदारु, इन्द्रायण, दारुहल्दी, अतीस, पीपलामूल, चित्रकमूल, भारंगमूल, हल्दी, कुटकी, पुष्करमूल, निगुंडी, खोरासानी अजवायन, कुष्ठ, सोया, गोखरू, इरड, ब्राह्मी, वासापत्र, पियावांसा, गिलोय, नागरमोथा, धमासा, अरणी, पुनर्नवा, पाठा, खरैंटीके बीज, रेणुक बीज, विधारा, गोरखमुण्डी, निशोथ, सोंठ, अरणीमूल, फिटकरीका फूला, सारिवा, शतावर, चिरायता, पीपल, खस, त्रायमाण, छोटीकटेली, बड़ीकटेली, अमलतासकी फलीका गूदा, वायविडङ्ग, निम्बछाल, पटोलपत्र, इन्द्रजौ, लहसुन, गूगल और प्रसारणी, इन ५० औषधियोंको सम भाग मिलाकर जौकूट चूर्ण करें। (आ० नि० मा०)

मात्राः—२ से ४ तोलेका १६ गुने जलमें क्वाथ कर, दो विभाग कर प्रातः सायं ६–६ मासे शहद मिलाकर पिलाते रहें।

वक्तव्यः—गुजरातमें ६।–६। तोलेकी ४ पुड़ी बनाते हैं। फिर १ पुड़ीको ६० तोले जलमें उबाल, १० तोले जल शेष रहनेपर छान, शहद मिलाकर पिलाते हैं। पुनः रात्रिको उसीमें जल मिला उबाल, छान, शहद मिलाकर पिलावें यह पुड़ी ७ बार उबालें (३॥ दिन तक) और पिलाते रहें। फिर उस फोकके साथही दूसरी पुड़ी मिलावें और १ सेर जल डालकर उबालें। १० तोला शेष रहने पर छान शहद मिलाकर पिलावें। इस तरह ७ टक (३॥ दिन) पिलावें। पश्चात् उसी फोकके साथ तीसरी और फिर चौथी पुड़ी मिलावें। क्वाथका जल तीसरी पुड़ी मिलाने पर १०० तोले और चौथी पुड़ी मिलानेपर १२० तोले लेनेका रिवाज है। १४-दिनमें ४ पुड़ी देते हैं। शास्त्रोक्त मर्यादा अनुसार या वृद्ध परंपराके नियम अनुसार जिस तरह सुविधा हो उस तरह क्वाथकर सेवन करावें।

उपयोगः—यह सूतिकारोगान्तक क्वाथ प्रसूताके ज्वर, वातप्रकोप, घबराहट वमन, अतिसार, शोथ, कटिवेदना आदि सबको दूर करता है। बालकको जन्मके पश्चात्

किसी प्रकारके उपद्रव उत्पन्न हुये हों वे इस क्वाथके सेवनसे निर्मूल हो जाते हैं। इसका प्रचार गुजरातमें अत्यधिक है।

यदि कुमार वटीके साथ इस क्वाथको अनुपान रूपसे दिया जाय तो लाभ जल्दी होता है।

२३. सूतिकाज्वरहर कषाय

विधि —हरड़, बहेड़ा, आवला, गिलोय, मुलहठी और वच ये ६ औषधियां ६-६ माशे और पस्तेके डोंड १ माशा लेवें। सबको मिला जोकूटकर १६ गुने जलमें मिलाकर चतुर्थांश क्वाथ करें। फिर २ हिस्साकर सुबह और रात्रिको पिलावें। पिलानेके समय गुड़ और हल्दी २-२ माशे और कली चूना १ माशा मिलावें।

(श्री वैद्यराज कांतिलालजी)

उपयोग —इस कषायका उपयोग १ सप्ताह करनेपर यह सूतिका विषको जला देता है, रक्तका प्रसादन करता है, आमका पचन करता है, कफको बाहर निकालता है और वातप्रकोपका शमन करता है। जिससे ज्वर, कास और सिरदर्द दूर होते हैं। इनके अतिरिक्त अरुचि, अपचन, हाथ पैरोंमें झनझनाहट, नाड़ियोंका खिचाव और पाण्डुता आदि लक्षण भी निवृत्त हो जाते हैं।

२४ शुष्कगर्भपातन योग

विधि —जासकी गांठ ८ तोलेको १ सेर जलके साथ मिलाकर चतुर्थांश क्वाथ करें। फिर छान १ माशा कच्ची फिटकरी और २ तोले गुड़ मिलाकर पिलाते रहें।

(श्री वैद्यराज कांतिलालजी)

उपयोग —शुष्क गर्भपातन योग छोड़ गिरानेके लिये बिल्कुल निर्भय उपाय है। वात, पित्त और कफ सब प्रकारकी प्रकृतिवाली स्त्रियोंको यह अनुकूल आता है। किसीको हानि नहीं पहुँचाता। लगभग १० दिनतक यह पिलाया जाता है। छोड़ गिर जानेपर इसे बन्द कर देवें।

यह प्रयोग अनेक वर्षोंसे काठियावाड़में घरेलू उपचार रूपसे प्रसिद्ध है। इससे पूर्णरूपसे सफलता मिलती है। वहांपर स्त्रियां भोजनमें गेहूँके आटेको तेलमें भून गुड़की चासनी मिला हलुवा बनाकर भी खिलाती हैं और गर्भाशयपर थोड़ा सेक भी करती हैं। जिससे गर्भाशयमें किसी प्रकारका विकार शेष नहीं रहता और गर्भाशय आकुंचित भी हो जाता है।

वक्तव्य —छोड़ गिर जानेपर सोया और सोंठ १-१ तोलेका रोज सुबह क्वाथ कर २ तोले गुड़ मिलाकर पिलाते रहें। जिससे गर्भाशयके भीतर जो विष लीन रूपसे रहा हो, वह जल जाता है, गर्भाशय शुद्ध और सबल बन जाता है।

२५. अबलासंजीवन अर्क

विधि —अशोकछाल, कालीसारिवा, मजीठ और दारुहल्दी, इन चारोंको

१-१ सेर लेकर जौकूट चूर्ण करें फिर ८ गुने जलमें भिगोकर अर्क खिंच लेवें।

मात्राः—१ से २ औंस दिनमें २–३ बार पिलावें।

उपयोगः—यह अर्क स्त्रियोंके विविध रोगोंपर व्यवहृत होता है। अति रजःस्राव, रक्तप्रदर, प्रसवके पश्चात् गर्भाशयकी शिथिलता, गर्भाशय दाह-शोथ, गर्भाशय विकारसे चक्कर आना, घबराहट, हाथपैरोंमें दाह, कमरमें वेदना और निर्बलताको दूर करता है।

रक्तप्रदरमें बीजाशयकी विकृति होनेपर रक्त थोड़ा-थोड़ा बार बार गिरता है, कष्टका भी अनुभव होता है, साथमें घबराहट भी होती है। किसी किसीको नेत्रमें निर्बलता आ जाती है। उसपर चन्द्रप्रभावटीके साथ यह अर्क देनेसे रोग निवृत्त हो जाता है।

सूजाक होनेपर कभी कभी मूत्रनलिकामें शोथ गर्भाशय और बीजाशय तक फैल जाता है। फिर पेशाबमें जलन, श्वेतप्रदर और सांधों न्धांधोंमें वेदना आदि लक्षण उपस्थित होते हैं। उसपर भी यह अर्क लाभ पहुँचाता है। साथमें मूत्रदाहान्तक चूर्ण देते रहना चाहिये।

२६, श्रीपर्णी तैल

विधिः—गंभारी छालका कल्क २० तोले, गंभारी छाल ८० तोलेको १२८० तोले जलमें उबालकर किया हुआ चतुर्थांश क्वाथ और तिलतैल ८० तोले मिलाकर मंदाग्निपर पाचन करें। इस तरह इस तैलको गंभारी कल्क और क्वाथमें ३ बार पचन करें। तीसरी बार तैल छाननेके पहले १। तोला मोम मिला देवें। (भै० र०)

उपयोगः—इस तैलमें पट्टी भिगोकर स्तनपर रखें। ऊपर नागरवेलका पान बांधे। इस तरह रोज रात्रिको तैल लगाते रहनेसे पतित और शिथिल स्तन कुछ दिनोंमें दृढ़ हो जाते हैं।

२७, शिखर्यादि वर्ति

विधिः—अपामार्ग मूलका चूर्ण, गेहूँका आटा, कत्था और अफीम, ये ४ औषधियां ३-३ माशे मिला जलके साथ मसलकर ४-४ रत्तीकी वर्ति बना लेवें। (भै० र०)

उपयोगः—इस वर्तिको घृतसे स्निग्ध कर योनिमें चढ़ानेसे गर्भाशयमेंसे होने वाले अत्यन्त रक्तस्रावका तत्काल रोध हो जाता है।

मासिकधर्मका रक्त दिनोंतक चलता रहने या अत्यन्त रक्तस्राव होनेपर स्त्री अति शक्तिहीन हो जाती है। ऐसे ही प्रसव होनेके पश्चात् रक्तस्राव बन्द न होता हो, तो प्रसूताका जीवन भयमें आ जाता है। ऐसे प्रसङ्गोंपर शुद्ध रक्तका स्राव हो रहा हो, तो रोकनेके लिये इस वर्तिका उपयोग किया जाता है। एवं उदर सेवनार्थ चन्द्रकला रस, तृणकान्तमणि पिष्टी, कामदूधा रस या अन्य औषधि दी जाती है।

२८, गर्भपोषक योग

(१) गर्भ धारण होनेपर बार बार गर्भस्राव या गर्भपात होता हो, वैसी गर्भिणीके गर्भको पोषण देनेके लिये निम्नानुसार योगोंका दुग्धावशेष क्वाथ करके पिलाते

रहना चाहिये अथवा चूर्णको समान शक्करके साथ मिलाकर दूधके साथ देते रहना चाहिये।

प्रथम मासमें रक्तस्राव होता हो तो मुलहठी, सागके बीज, क्षीरकाकोली और देवदारूका क्वाथ या चूर्ण देवें।

द्वितीय मासमें रक्तस्राव होता हो तो काले तिल, मजीठ, अश्मन्तक (सिरहिटे) की छाल और शतावरका क्वाथ दें।

तृतीय मासमें वान्दा, क्षीरकाकोली, नीलोत्पल और काली सारिवाका क्षीराव-शेष क्वाथ पिलाते रहें। या गिलोय, शतावर, प्रियंगु और काली सारिवाका क्वाथ देवें।

चतुर्थ मासमें धमासा, सारिवा, रास्ना, कमलकी नाल और मुलहठीका क्वाथ देते रहें।

पंचम मासमें बड़ी और छोटी कटेली, गंभारीकी छाल, क्षीर वृक्षों (बड़, गूलर, पीपल, पाखर और पलाश पीपल) की छाल या जटा और दालचीनीका क्वाथ देते रहें।

षष्ठ मासमें पृष्ठपर्णी, खरेंटी, सुहिजनेके बीज, गोखरू और मुलहठीका क्वाथ देते रहें।

सप्तम मासमें सिंघाड़े, कमलकेशर, मुनक्का, कसेरू, मुलहठी और मिश्रीका क्वाथ करके पिलाते रहें।

अष्टम मासमें रक्तस्राव होता हो तो कैथ, बेलफल, बड़ी कटेली, पटोलपत्र, ईख और छोटी कटेलीका दुग्धावशेष क्वाथ करके पिलाते रहें।

नवम मासमें रक्तस्राव होने लगे तो मुलहठी, धमासा, क्षीरकाकोली और सारिवाका दुग्धावशेष क्वाथ पिलाते रहें।

दशम मासमें रक्तस्राव होने लगे तो सोंठको दूध जलमें उबाल शीतल करके पिलाते रहें। इस तरह सोंठ, मुलहठी और देवदारूका दुग्धावशेष क्वाथ पिलाते रहनेसे सगर्भाके वेदनाका शमन होता है और गर्भ बलवान बनता है।

कुश, काश, एरण्डमूल और गोखरूका दुग्धावशेष क्वाथ पिलाते रहनेसे भी वेदना दूर होती है।

(७) वायु द्वारा गर्भ शुष्क हो जानेपर मुलहठी, गंभारी, सोंठ, शतावर और असगन्धका चूर्ण समान शक्करके साथ मिलाकर दूधके साथ देते रहनेसे गर्भकी वृद्धि होने लगती है।

२६ गर्भाशयशोधन योग

(१) लघु पञ्चमूल,(छोटी और बड़ी कटेली, शालपर्णी, पृष्ठपर्णी और गोखरू पचांग) का क्वाथ कर काजी मिलाकर पिलावें। घी न मिलावें। क्वाथ पर्व

मात्रामें देवें। जिससे गर्भाशयमें रहा हुआ शेष विकार निकल जाता है और वेदना निवृत्त हो जाती है।

३०. गर्भिणीरोगहर योग

(१) गर्भाशयमें शूल चलनेपर दर्भमूल, कासमूल, एरण्डमूल और गोखरूको २-२ तोले मिला ६४ तोले जल और ६४ तोले दूध मिलाकर दुग्धावशेष क्वाथ करें। फिर ४ विभागकर शक्कर मिलाकर १-१ घण्टेके अन्तरसे पिलानेसे शूल शमन हो जाता है।

(२) छोटे गोखरू, मुलहठी और मुनक्काको दूधमें पीस शक्कर मिला कर पिला देनेसे गर्भाशयशूल निवृत्त हो जाता है।

(३) मूत्रावरोध या मूत्र परिमाणमें कम और दुर्गन्धमय बन जानेपर दर्भ, कुश, कास, ईख और शर, इन सबके मूल (पञ्चतृणमूल) को मिला ४ तोलेका दुग्धावशेष क्वाथ कर पिलानेसे मूत्रावरोध, मूत्र गदला होना, मूत्रमें दुर्गन्ध आना, मूत्रमें रक्त जाना, मूत्रमें लसीका (Albumin) जाना आदि विकार दूर होते हैं। यह उत्तम बस्तिशोधक योग है।

(४) गर्भाशयमें वातप्रकोप हो, तो बेलगिरी, अरणीमल और सोंठका क्वाथ करके पिलाना चाहिये।

(५) अतिसार या प्रवाहिका होनेपर आमकी गुठली, जामुनकी गुठली और धानका लावा मिला, उबाल, छानकर दिनमें ३-४ बार थोड़ा-थोड़ा पिलानेसे लाभ हो जाता है।

(६) वमन होती हो तो धनिया, नागरमोथा और शक्कर २-२ तोले और सोंठ ६ माशे मिला १। सेर जलमें उबालें। ३-४ उफान आ जानेपर उतार कर छान लेवें। उसमेंसे थोड़ा-थोड़ा जल पिलाते रहनेसे सगर्भाकी वान्ति दूर हो जाती है।

३१. अर्गट मिश्रण

(गर्भाशयसंकोचार्थ)

क्विनाईन सल्फ Quinine Sulph.	२॥ ग्रेन
एसिड सल्फ-डिल. Acid Sulph. dil.	२० बूंद
टिंक्चर डिजिटेलिस Tirct. Digitalis	५ बूंद
एक्सट्रेक्ट अर्गट लिक्विड Ext. Ergot liq.	३० बूंद
एक्वा सिनामोम Aqua Cinnamom ad.	१ औंस

इन सबको मिला लेवें। यह एक समयकी औषधि है। इस तरह दिनमें ३ बार औषधि पिलाते रहनेसे बाह्य अग्निके सेवनकी आवश्यकता नहीं रहती। इस

औषध सेवनसे गर्भाशयका सकोच हो जाता है, और सूतिका आदि रोगकी उत्पत्ति भी नहीं होती। प्रसव होनेपर कुछ दिनोंतक इसका सेवन कराया जाता है।

३१. गर्भाशय-शोथघ्न योग

(गर्भाशय मुख-प्रदाह पर)

एक्सट्रैक्ट बेलेडोना Ext Belladonna १ औंस
इक्थियोल Ichthyol १ औंस
ग्लिसरीन Glycerin १ औंस

इन तीनोंको समभाग मिला, फिर उसमें फोहा भिगो, जननेन्द्रियमें प्रवेश करा ४-८ घण्टे तक रखा रहनेसे बहुत जलस्राव होकर गर्भाशय मुखका दाह शोथ शमन हो जाता है।

---

(५२) बालरोग

१ मुक्तादि वटी

विधि —मोतीपिष्टी ७ तोले, सुवर्णके वर्क, चांदीके वर्क, कमलकेशर, गुलाब-केशर (पुष्पोंके भीतरका जीरा), कहरवा, जहरमोहरा खताई, संगेयशब और गोरो-चन, ये ८ औषधिया १–१ तोला, नागकेशर २ तोले, केशर ६ माशे, कपूर ३ माशे और गोदन्ती भस्म १२॥ तोले लेवें। वर्कके अतिरिक्त औषधियोंके चूर्णको मिला फिर १-१ वर्क मिलाकर मर्दन करें। पश्चात् गुलाबजलमें ८ दिन खरल करके १–१ रत्तीकी गोलिया बना लेवें। (श्री प० यादवजी त्रिकमजी आचार्य)

मात्रा —१ से ४ गोली, माता या गौके दूधमें दिनमें दो बार।

उपयोग —यह वटी बालकोंके बालशोषको दूर करती है। जीर्ण ज्वर, बालकों का कृश होजाना, पाण्डुरोग, अपचन, अफारा, वान्ति वा दस्त होकर दूध निकल जाना, खासी, स्फूर्तिका अभाव, मुखपाक, पेशाब गाढ़ा होना आदि विकार इस वटीके सेवनसे दूर होकर बालक नीरोगी और सबल होजाता है।

वक्तव्य —इस वटीके साथ अरविंदासव देते रहनेसे लाभ जल्दी पहुँचता है। यदि शुद्र शखभस्म भी मिलायी जाय, तो विशेष गुण होता है। (संशोधक)

२. मालती चूर्ण

बनावट —असली खर्पर या केलेमेना प्रेप्रेटा अथवा जसद भस्म १ सेर लेकर हाडीमें डाल १ सेर नींबूके रसमें मिलाकर मदाग्निपर उबालें। रस जल जानेपर हाडीको उतार लेवें। शीतल हो जानेपर धोलेवें। यह शुद्ध खर्पर १ सेर, बड़ी हरड़ १ सेर और छिलके सहित छोटी इलायची आधा सेर मिला कूट कपड़छान चूर्ण कर बोतलमें भर लेवें। (आ० नि० मा०)

मात्राः—१ से ३ रत्ती तक दिनमें दो बार।

उपयोगः—यह चूर्ण बालकोंके बालशोष, जीर्ण अतिसार, जीर्णज्वर, वमन, मुखपाक, गुदापाक, अस्थिमार्दव, निर्बलता, अग्निमान्द्य आदि रोग तथा प्रसूताके जीर्ण ज्वरको दूर करता है तथा रस धातु और रसायनियोंको पुष्ट बनाता है। इसी हेतुसे शेष रक्त आदि धातुएं भी सबल बन जाती हैं।

इस चूर्णके उपयोगसे बालशोष रोग थोड़े ही दिनोंमें दूर हो जाता है। यदि बालकको पतले दस्त लगते हों, तो पहले सप्ताहमें चावल धोवनके साथ, दूसरे सप्ताहमें मट्ठेके नितरे हुए जलके साथ और तीसरे सप्ताहमें शहदके साथ सेवन कराना चाहिये। ३ सप्ताहके पश्चात् भी जब तक रोग निवृत्ति न हो जाय, तब तक शहद, माताके दूध या जलके साथ देते रहें।

यदि बाल शोषके साथ ज्वर रहता हो, तो इस चूर्णको शहद या जलके साथ १ मास तक देते रहनेसे बालक रोगमुक्त होकर पुष्ट बन जाता है। अस्थिमार्दव रोगमें मालती चूर्णको प्रवाल पिष्टी और मण्डूर भस्म मिलाकर सेवन करनेसे सत्वर रोग निवृत्त हो जाता है।

जो स्त्री प्रसव कालमें जीर्ण ज्वरसे कृश हो गई हो, उसे दिनमें दो बार मालती चूर्ण ३ से ६ रत्ती तथा गोदन्ती भस्म ३ से ६ रत्ती मिलाकर देते रहनेसे वह भी पुष्ट बन जाती है।

३. बाल वटी

विधिः—जीरा, छायामें सुखाया हुआ पोदीना, हरड़, बायविडङ्ग, लौंग, अतीस, सौंफ, जायफल, भांग, रूमीमस्तंगी, कछुएकी पीठकी भस्म, कोयल (गोकर्णी) के बीज, जहरमोहरा पिष्टी और केशर, ये १४ औषधियाँ समभाग ले कपड़छान चूर्ण कर घीकुंवारके रसमें १२ घण्टे खरल करके १-१ रत्तीकी गोलियां बनावें।

(श्री पं० यादवजी त्रिकमजी आचार्य)

मात्राः—१ से २ गोली प्रातः सायं दूध मिलाकर पिलावें।

उपयोगः—इस गोलीका सेवन करानेसे बालकोंको दूधका पचन अच्छी तरह होता है, शान्त निद्रा आती है; रक्त आदि धातु बलवान बनती है और बालकका स्वास्थ्य बना रहता है। जुकाम, अतिसार, वान्ति, कास आदिका प्रकोप हुआ हो, तो दूर हो जाता है।

४. सुधाषट्क योग

विधिः—प्रवाल भस्म १ तोला, शुक्ति भस्म २ तोले, शंख भस्म ३ तोले, वराटिका भस्म ४ तोले, कछुएकी पीठकी भस्म ५ तोले और गोदन्ती भस्म ६ तोले मिला नींबूके रसमें ३ दिन खरलकर लेवें। (श्री पं० यादवजी त्रिकमजी आचार्य)

मात्रा —१ से ४ रत्ती दूधके साथ दिनमें ३ बार।

उपयोग —यह सुधाकल्प अस्थिमार्दव और बालशोष (सूखा) पर अच्छा लाभ पहुँचाता है। सगर्भावस्थामें माता निर्बल होनेपर या बाल्यावस्थामें माता रुग्ण होजाने या अन्य किसी कारणसे बालकका योग्य पोषण नहीं होता। माताकी अस्थियाँ निर्बल होनेपर दुग्ध (स्तन्य) में अस्थिपोषक सत्व कम होता है। इस हेतुसे बालकको अस्थिमार्दव (Rickets) रोग हो जाता है। इस रोगमें विशेषतः पैरकी हड्डी मुड़ जाती है। छाती और हाथ आदिकी हड्डियाँ भी अति कमजोर हो जाती हैं। नितम्बपर सिकुड़न पड़ जाती है। किसी किसी बच्चेको ज्वर भी रहता है बार बार थोड़ा थोड़ा दस्त होता रहता है या कब्ज रहती है। इस रोगमें हड्डियोंमें सुधा (चूना) का परिमाण कम हो जाता है। इस हेतुसे इस सुधाकल्पका सेवन करानेपर हड्डी सबल बन जाती है, ज्वर शमन हो जाता है। पचन क्रिया सुधर जाती है और शरीर बलवान और नीरोगी बन जाता है।

५. बालशोषहर वटी

प्रथम विधि —कस्तूरी १ माशा, केशर २ माशे, साठी चावल १ तोला और गधीका दूध ५ तोले ले। सबको मिलाकर खरल करें। लगभग ३ दिन खरल करनेसे दूधका शोषण हो जायगा। (दूध २॥–२॥ तोले २ बार डालना अच्छा माना जायगा) फिर ½–½ रत्तीकी गोलियाँ बना लेवें। (श्री० प० रामगोपालजी रावत)

मात्रा —१–१ गोली दिनमें २ बार दूध या शहदके साथ देवें। गधीके दूधका प्रबन्ध हो तो गधीके दूधके साथ देना अधिक हितावह है।

उपयोग —यह बालशोषहर वटी बालशोष (Marasmus) को दूर करती है। इस वटीका उपयोग उत्तर प्रदेशमें सफलतापूर्वक कई वर्षोंसे होता आरहा है। अस्थिविकृति हो तो प्रवालपिष्टी और वंशलोचन मिला लेना विशेष लाभदायक है। उदर बहुत बढ़ गया हो तो अभ्रक भस्म ₁⁄₁₆ रत्ती मिलानेपर लाभ जल्दी होता है।

द्वितीय विधि —प्रवाल पिष्टी और लघुवसन्त (प्रथम विधि) को समभाग मिला गूलरके दूधमें १२ घण्टे खरलकर आध आध रत्तीकी गोलियाँ बना लें।

उपयोग —यह गुटिका बालकोंके लिये महौषध है। १–१ गोली दिनमें ३ बार जल या दूधके साथ देनेसे बालशोष, अस्थिमार्दव, जीर्ण ज्वर, कास अतिसार आदि रोग दूर होते हैं। यह बड़े मनुष्योंकी निर्बलताको दूर करनेमें भी हितावह है। बड़े मनुष्यको ४–८ रत्तीकी मात्रा दिनमें दो बार देनी चाहिये।

६. हिंगुलादि गुटिका (डब्बा)

विधि —शुद्ध सिंगरफ, जायफल, जावित्री, गोरोचन, ये चारों १–१ तोला और शुद्ध जमालगोटा ४ तोले मिलाकर नींबूके रसमें ३ दिन खरलकर चौथाई रत्तीकी गोलियाँ बना लेवें। (सि० ने० म०)

मात्राः—१ गोली जलके साथ। आवश्यकतापर ३ घण्टेपर पुनः १ गोली।

उपयोगः—यह गुटिका एक या दो दस्त लाकर बालकोंके डब्बा रोगको दूर करती है। एवं शोथ और जलोदर हो गया हो, तो उनको भी शमन कर देती है।

सूचनाः—यदि डब्बेकी बिमारीमें पहले ही पतले दस्त हो रहे हों अथवा कब्ज न हो, तो इस औषधका प्रयोग न करें।

७. बालयकृदारि लोह

विधिः—अभ्रक भस्म, लोह भस्म पारद भस्म, (रससिंदूर), जम्भीरी नींबूके बीज, अतीस, सरफोंकाकी जड़, रक्तचन्दन और पाषाणभेद, इन ८ औषधियोंको समभाग मिला गिलोयके स्वरसके साथ १ दिन खरलकर २-२ चावल जितने वजनकी गोलियां बना लेवें। (र० यो० सा०)

मात्राः—१ से २ गोली, रोगानुसार अनुपानके साथ दिनमें २ बार।

उपयोगः—यह रसायन बालकोंकी घोर यकृद्वृद्धि, ज्वर, प्लीहावृद्धि, शोथ, विबंध, पाण्डुरोग, कास, मुखरोग और उदर रोगोंको ऐसे नष्ट करता है जैसे सूर्य अन्धकारको।

८. अम्बुशोषण चूर्ण (शीर्षाम्बु)

विधिः—रससिंदूर, यवक्षार, रेवतचीनी, छोटी इलायचीके दाने, भारंगी, तेजपात, दालचीनी, छोटी इलायचीके दाने, हरड़, और इन्द्रायणका मूल, इन सबको समभाग मिलाकर खरलकर लेवें। (भै० र०)

इस रसायनके साथ अभ्रक भस्म और ताम्रभस्म मिला देनेपर गुण सत्वर दर्शाता है। (संशोधक)

मात्राः—१ से २ रत्ती दूधके साथ दिनमें १ या २ बार।

उपयोगः—यह रसायन मस्तिष्कमें संगृहीत जलके शोषणार्थ प्रयुक्त होता है। कुछ दिनों तक शान्तिपूर्वक सेवन करानेपर रोग निवृत्त हो जाता है।

अधिक कब्ज रहती हो और इस चूर्णके सेवन करानेपर भी उदरशुद्धि न होती हो, तो पीतमूल्यादि कषायका सेवन कराते रहना चाहिये।

९. पीतमूल्यादि कषाय

विधिः—रेवन्दचीनी, शठी, काली निसोत, सफेद निसोत, आंवला, हरड़, काली अनन्तमूल, धनिया, मुलहठी, कुटकी, नागरमोथा, हल्दी, दारुहल्दी, तेजपात, दालचीनी और छोटी इलायचीके दाने, इन १६ औषधियोंको मिलाकर जौकूट चूर्ण करें। (भै० र०)

मात्राः—३-३ माशे चूर्णका काथकर, आध रत्ती यवक्षार मिलाकर दिनमें १ या २ बार पिलावें।

उपयोग —यह कषाय मस्तिष्कमें जलकी वृद्धिको कम कराता है। कितनेक बालकोंको दांत आनेके समय या उदरमें कृमि होनेपर या वायुप्रकोपसे मस्तिष्कमें जल भरने लगता है। तब मस्तिष्कका बड़ा दीखना, जिह्वा मलसे आवृत्त रहना, अति निद्रा आना, शरीर दुर्बल हो जाना, मल अति गाढ़ा हो जाना, श्वासमें दुर्गन्ध आना, फिर शिरमें वेदना, मल-मूत्रमें कालापन त्वचामें रूक्षता और कालापन, निस्तेज मुखमण्डल, निद्रामें दाँतोंका चबाना, लालनेत्र, ओष्ठपर खुजली चलना, नासिकामें आक्षेप होना, नेत्रकी पुतली विषम भासना आदि लक्षण उपस्थित होते हैं। इस रोगपर मलमूत्रका विरेचन करानेवाली और रक्तप्रसादक ओषधि दी जाती है। ये गुण इस कषायमें होनेसे इसका सेवन करानेपर रक्तमेंसे जल बहुत बाहर निकल जाता है तथा कीटाणु नष्ट हो जाते हैं। फिर मस्तिष्क या देहके अन्य भागमें, जहां जल संगृहीत हो वहांसे रक्तके भीतर आकर्षित हो जानेसे शीर्षाम्बु रोग शमन हो जाता है। इस रोगमें ओषधि दिनों तक देते रहना चाहिये। बालकको गरम वस्त्रसे लपेटकर रखना चाहिये। बालक माताके दूधपर हो, तो माताको भी पथ्य पालन करना चाहिये।

सुबह यह कषाय और शामको अग्नुशोषण चूर्णका सेवन कराते रहना विशेष लाभदायक है।

१०. वचाहरिद्रादि कषाय

विधि —वच, नागरमोथा, देवदारु, सोंठ, अतीस, हल्दी, दारुहल्दी, मुलहठी, पृश्नपर्णी, इन्द्रजौ, इन १० ओषधियोंको समभाग मिलाकर जौकूट चूर्ण करें।

मात्रा —३-३ माशेका क्वाथ बालकके लिये। माताके लिये २-२ तोलेका क्वाथ, दिनमें ३ बार।

उपयोग —वचाहरिद्रादि कषाय दीपन पाचन, वातहर, कफघ्न और ग्राही है। बालकोंके अतिसारमें प्रयुक्त होता है। कफवृद्धि अथवा जुकाम हो, तो वे भी दूर हो जाते हैं। शिशुकी माताको देनेपर दूषित स्तन्य (दूध) की शुद्धि होती है।

११ बालरक्षक शर्बत

विधि —शुद्ध डिकामाली (नाड़ी हिंगु) १० तोले*, वायविडंग १० तोले, नागरमोथा, इन्द्रजौ, सोया और छोटी इलायचीके दाने १।-१। तोला लेवें। सबको मिला २॥ सेर जलमें उबालकर चतुर्थांश क्वाथ करें। फिर छान १। सेर शक्कर

*नाड़ी हिंगु शोधन—डिकामालीको चार गुने जलमें मिलावें अच्छी तरह मिल जानेपर ऊपर तैरनेवाले पान और डण्ठलोंके टुकड़ोंको फेंक दें और जलको छान लेवें। फिर इस जलमें रुईकी बत्ती या कपड़ेकी पट्टी लगाकर दूसरे पात्रमें टपका लेवें। तलस्थ मिट्टीको फेंक देवें। इस जलको मंदाग्निपर या सूर्यके तापमें गाढ़ा होनेपर डिकामाली शुद्ध हो जाती है।

और २ रत्ती केशर मिलाकर शर्बत बना लेवें। तैयार होनेपर तुरन्त छान, शीतल होने पर बोतलमें भर लेवें।

मात्राः—६० बूंद (चायका एक चिमच) दिनमें २ बार देवें।

उपयोगः—बालरक्षक शर्बत बच्चोंके स्वास्थ्यकी रक्षा करनेवाला स्वादिष्ट, सुगन्धित, सौम्य और निर्भय पेय है। यह शर्बत दीपन-पाचन, रुचिकर, सारक, कृमिघ्न और बल्य है। मलावरोध, अतिसार, मिट्टी खानेकी आदत, उदर बड़ा हो जाना, अपचन, आंतोंमें वायु भरा रहना, अफारा, जुकाम, दूध फेंकना, गोलकृमि (Round Worm), उदरपीड़ा, कृमिके हेतुसे नाक, गुदा और मूत्रेन्द्रियपर कण्डु आती हो, शारीरिक कृशता और निस्तेजता आदि विकारोंको दूर करता है। बालकको प्रसन्न रखता है और बल बढ़ाता है। दाँत आनेके समय होनेवाली पीड़ा ज्वर, हरे पीले दस्त लगना और बेचैनी आदि भी इस शर्बतके सेवनसे दूर हो जाती है। यह शर्बत विलायती बालामृत (हाइपोफोस्फेट आव लाइमके शर्बत) की अपेक्षा विशेष हितावह है।

यदि माता अति कृश होनेसे या सगर्भावस्थामें माता बिमार रहनेसे शिशु निर्बल रहता है। बालककी हड्डियां कमजोर हों, तो सुधाषट्क, प्रवालपिष्टी आधसे १ रत्ती शर्बतके साथ देते रहना चाहिये। बच्चा बालशोषसे पीड़ित रहता हो, तो उसपर भी सुधाषट्कके साथ यह शर्बत प्रयुक्त होता है।

१२. कुक्कुरकासहर मिश्रण

विधिः—प्रवालपिष्टी और शृंगभस्म १०-१० तोले, गोदन्ती भस्म, वंशलोचन और गिलोयसत्व ५-५ तोले, छोटी इलायचीके दाने २॥ तोले लेवें। पहले वंशलोचन और छोटी इलायचीके दानेको अच्छी तरह खरलकर एक जीव कर लें। फिर शेष औषधियां मिलाकर खरल कर लें।

मात्राः—१ से २ रत्ती दिनमें ३ या ४ बार बनफशाके शर्बत या शहदके साथ देवें।

उपयोगः—कुक्कुरकासहर मिश्रणका उपयोग काली खांसीपर होता है। यह स्वरयन्त्र और श्वासप्रणालिकाकी उग्रताका दमन करा कासको दूर कर देता है।

काली खांसीके आरम्भमें यदि बालघोरकासघ्न चूर्ण दे दिया तो लाभ पहुँच जाता है; किन्तु अति प्रभावशील रोगी को अधिक उग्रता उपस्थित हो जानेके पश्चात् बालघोरकासघ्न चूर्ण या हरतालगोदंती भस्म जब सहन नहीं हो सकती, तब यह मिश्रण देनेसे २-३ दिनके भीतर ही अपना शामक गुण दर्शा देता है और १०-१५ दिनमें रोगको बिल्कुल दूर कर देता है।

१३. रस पीपरी

बनावटः—शुद्ध पारद, शुद्ध गन्धक, सोंठ, कालीमिर्च, छोटी पीपल, अतीस,

काकड़ासिंगी, नागरमोथा, मोचरस, जायफल, जावित्री, सोहागेका फूला और बड़ी पीपल, ये १३ औषधिया सम भाग लेवें। पहले पारद गन्धककी कज्जली करें। फिर शेष औषधियोंका कपड़छान चूर्ण तथा ३ माशे कस्तूरी मिलाकर अदरखके रसके साथ ६ घण्टे खरलकर मूंगके समान गोलिया बना लेवें।

(आरोग्यप्रकाश)

वक्तव्य —मूलग्रन्थमें जलके साथ खरल करनेका लिखा है, हमने अदरखके रसके साथ खरल कराया है, जो सत्वर लाभप्रद प्रतीत हुआ है।

मात्रा —१ १ गोली दिनमें २ बार स्तन्य, शहद या जलके साथ।

उपयोग —यह वटी बालकोंके ज्वर, प्रतिश्याय, कफकास, श्वास, छर्दि, अतिसार, हरे पीले दस्त वातप्रकोप, हिक्का तथा ज्वरके पीछेकी निर्बलता आदि रोगोंको दूर करती है, क्षुधा बढ़ाती है, मनको प्रफुल्लित करती है और स्फुर्ति लाती है। इस वटीका उपयोग निर्बल बच्चोंके लिये शक्तिवर्द्धक रूपसे भी शीतकालमें होता है। यदि माताकी निर्बलता या अन्य हेतुसे अस्थिदौर्बल्य हो तो प्रवालपिष्टी आध-आध रत्ती साथमें देते रहना चाहिये।

१४ बाल रस

विधि —शुद्ध पारद ८ तोले, शुद्ध गन्धक ८ तोले और सुवर्णमाक्षिक भस्म ४ तोले लें। पहले कज्जली बनावें। फिर माक्षिक मिला लोह खरलमें काले भांगरे, सफेद भांगरे, निगुंण्डीके पान, मकोय, ग्रीष्म सुन्दर (गीमाशाक), हुलहुल, पुनर्नवा, जलबूकपर्णी (हरद्वारकी ब्राह्मी) और सफेद कोयल, इन ६ औषधियोंके स्वरस या क्वाथकी १-१ भावना देवें। फिर कालीमिर्चका चूर्ण २ तोले मिलाकर १ प्रहर पत्थरके खरलमें घोंटें और ½ रत्तीकी गोलिया बना लेवें।

(र० सा० सं०)

मात्रा —१ से २ गोली दिनमें २ बार माताका दूध या जलसे।

उपयोग —यह बाल रस बालकोंके बढ़े हुए त्रिदोषज ज्वर, कास, जुकाम, श्वास, मलावरोध, अनिद्रा, रक्तपित्त, उदरकृमि और उदरपीड़ाको दूर करता है और बलको बढ़ाता है। जीर्णज्वरमें भी यह रस दिया जाता है। कालीमिर्चके संयोगके हेतुसे योग आशुफलप्रद बना है। माता पिताके फिरंगज विकृति विकारको भी यह दूर करता है।

१५. बालरक्षक बिन्दु

विधि —केशर, जायफल, जावित्री, छोटी इलायचीके दाने, लौंग, पीपल, खस, काकड़ासिंगी, नागरमोथा, सोया, वच और वायविडंग, ये १२ औषधिया १ १ तोला, कस्तूरी ३ माशे और रेक्टीफाइड स्पिरिट (६०%) ४० तोले लेवें। काष्ठादि औषधियोंको कूटकर जौकुट चूर्ण करें। फिर चूर्ण, केशर और कस्तूरीको स्पिरिटकी बोतलमें डालकर १ सप्ताह रख देवें। रोज दिनमें १-२ बार बोतलको ...

८ वें दिन फिल्टर पेपरसे छान लेवें और स्पिरिट कम हुआ हो उतना और मिलाकर ४० तोले पूरा कर लेवें।

मात्राः—२ से ५ बूंद स्तन्य, गोदुग्ध या जलके साथ दिनमें ३ बार।

उपयोगः—यह बिन्दु बालकोंके लिये अमृतरूप उपकारक है। बच्चोंके जुकाम, हरे पीले दस्त, दूध फैंकना, वान्ति, वाताक्षेप, उदरशूल, पार्श्वशूल, कास, श्वास आदिको सत्वर दूर करता है।

१६. ज्वरान्तक चूर्ण

विधिः—कड़वी नाईके मूल १० तोले और कालीमिर्च २॥ तोलेको मिला कूट कर कपड़छान चूर्ण करें।

मात्राः—१ से २ रत्तीतक दिनमें ३ बार देवें।

उपयोगः—यह ज्वरान्तक चूर्ण बालकोंके ज्वरके लिये अति हितावह है। मलावरोध, अपचन और कफप्रकोप हो तो उनको भी दूर करता है। पतले दस्त होते हों तो फिटकरीका फूला १ रत्ती मिला देना चाहिये। ज्वर अधिक प[illegible]में रहता हो तो गोदंती भस्म १ रत्ती मिला देनी चाहिये।

यदि बड़े मनुष्यको पित्तज्वर हो, पतले-पतले दस्त, व्याकुलता, अधिक स्वेद, शिरदर्द और उग्रता आदि लक्षण हों तो उनको भी यह ज्वरान्तक चूर्ण १॥-२ माशे और फिटकरीका फूला ३-४ रत्ती मिलाकर दिया जाता है।

१७, कासान्तक कषाय

विधिः—बनफसाके फूल, गुलाबके फूल, उन्नाब, छोटी हरड़, कालीमुनक्का, अमलतासका गूदा और मुलहठी, इन सबको समभाग मिलाकर जौकूट चूर्ण करें।

उपयोगः—६ माशे चूर्णको ४ तोले जलमें उबालकर अर्धावशेष क्वाथ करें। फिर उसमेंसे आध आध तोला कषाय दिनमें ४ बार देते रहनेसे बालकोंकी काली खांसी शमन हो जाती है। यदि इस कषायके साथ कामदूधा रस १-१ रत्ती देते रहें, तो लाभ सत्वर होता है।

१८, बालशोषहर तैल

विधिः—केंचुवा गीले २० तोलेको तिलतैल ६० तोलेमें मिलाकर अति मन्द अग्निपर उबालें। तैल पक जानेपर कढ़ाहीको उतार कर तुरन्त छान लेवें।

उपयोगः—यह तैल बालशोष (सूखारोग) पर अति लाभदायक है। प्रति दिन रात्रिको इसकी सर्वाङ्गमें मालिश करते रहने और बालशोषहर गुटिकाका सेवन कराते रहनेसे २१ दिनमें सूखारोग निःसंदेह दूर हो जाता है।

१९, महाभूतराव घृत

विधिः—तगर, मुलहठी, कांटेदार करन्जके पान, लाख, पटोल, लजालू, बच, पाढल, हींग, सरसों, बड़ीकटेली, हल्दी, दारुहल्दी, प्रियंगु, गम्भारी, बेर गोंद,

कालीमिर्च, पीपल, हरड़, बहेड़ा, आंवला, चौधारा थूहर, देवदारू, बायविडंग, जंगली-तुलसी, गिलोय, अंकोल, कड़वी तोरईका फल, सुहिंजनेकी छाल, नीमकी अन्तरछाल, नागरमोथा, इन्द्रजौ, कूठ, सिरसके बीज, अजवायन, मुलहठी, कोयल (गिरिकर्णिका), दन्तीमूल, चित्रकमूलकी छाल और बेलकी छाल, इन ४१ औषधियोंको २-२ तोले लेकर कल्क करें। फिर कल्क, ८ सेर गोघृत और मूत्राष्टक (भैंस, बकरा, भेड़, गौ, घोड़ी, गधी, ऊँटनी और हथिनीका मूत्र) १६ सेर मिलाकर मंदाग्निसे घृत सिद्ध करें। (अ० हृ०)

मात्रा —२ से ४ माशे दिनमें २ बार देवें।

उपयोग —इस घृतका सेवन करानेसे बालकोंके उन्माद, बालग्रह, अपस्मार, कुष्ठ, ज्वर आदि रोग दूर होते हैं। उदर सेवनके अतिरिक्त नस्य, अभ्यंग और अञ्जन रूपसे भी उपयोग होता है। यह घृत भीतर संगृहीत दोषको बाहर निकालता है, पचन क्रियाको सुधारता है तथा वातसस्थानको सबल बनाता है। अन्त्रविकृति और वातसस्थानकी विकृति या शिथिलतासे उत्पन्न रोगोंको नष्ट करनेमें हितकारक है। यह घृत बालक और बड़े मनुष्य सबके लिये हितावह है।

२०. कुमारकल्याण घृत

विधि —शंखाहुली, बच, ब्राह्मी, कूठ, हरड़, बहेड़ा, आंवला, मुनक्का, मिश्री, सोंठ, जीवन्ती (गुजराती डोडीशाक), जीवक, खरैंटी, कचूर, धमासा, बेलछाल, अनारकी छाल, तुलसीके पत्ते, शालपर्णी, नागरमोथा, पुष्करमूल, छोटी इलायची, पीपल, रास्ना, गोखरू, अतीस, पाठा, बायविडंग, देवदारू, चमेलीके फूल, महुएके फूल, पिण्डखजूर, मीठे बेर और वंशलोचन, ये ३४ औषधियां १-१ तोला मिलाकर कल्क करें। फिर कल्क, कल्कसे चौगुना गोघृत, घीसे ४-४ गुने गोदुग्ध और छोटी कटेरीके क्वाथको मिला मंदाग्निसे घृत सिद्ध करें। (श्री प० यादवजी त्रिकमजी आचार्य)

मात्रा —१ से ३ माशे दिनमें दो बार मिश्री मिलाकर चटावें या निवाये दूधमें मिलाकर पिलावें।

उपयोग —यह घृत १॥–२ वर्षकी आयु वाले बालकके लिये लाभदायक है। इस घृतके सेवन से दांत आनेके समयमें कष्ट नहीं पहुँचता। एवं यह बल, वर्ण, पुष्टि, रुचि, जठराग्नि, बुद्धि और आयुको बढ़ाता है। बालग्रह, कृमि आदि समस्त बाल रोगोंको दूर करता है।

वक्तव्य —यदि यकृत् निर्दोष हो, बढ़ा न हो, तो इस घृतका सेवन कराना चाहिये।

२१. श्वासान्तक योग

योग —मोरके अण्डोंके छिल्केकी भस्म २ से ४ चावल तक माताके दूध या शहद के साथ देनेसे श्वासप्रकोप और इसी रोगमें तत्काल लाभ होजाता है। आवश्य-कता पर ३ घण्टे बाद दूसरी मात्रा देवें।

२२. अतिसारहर योग

योगः—मक्कईकी डोंडियो (दाने निकाल लेनेके पश्चात्) को जलाकर कोयले करें। इसमेंसे २–४ रत्ती मट्ठेके साथ पिलानेसे दांत आनेके समयके दस्त जो हरे-पीले होते हैं, जिनमें दहीके कण जैसे कण भासते हैं, वे तुरन्त बन्द हो जाते हैं। यह ओषधि बड़े मनुष्यके पेचिश पर भी लाभ पहुँचाती है और बच्चोंकी कूकर खांसीको भी दूर करती है।

२३. धनुर्वातहर योग

सोहागेका फूला २–२ रत्ती माताके दूध या शहदके साथ १–१ घण्टे पर देते रहनेसे १–२ या ३ घण्टेके भीतर बालकके धनुर्वातका दौरा शमन होजाता है। धनुर्वातके समय हाथकी मुट्ठियां बन्द होजाती हैं, हाथ-पैर सिकुड़ते हैं, आंखोंकी पुतली ऊपर चढ जाती है, कभी दाँत भिच जाते हैं, मुँहमें झाग आजाते हैं, एवं कभी कभी मूत्रावरोध आदि लक्षण उपस्थित होते हैं। यह आक्षेप बार बार आता रहता है। यह सोहागाका फूला देनेसे बन्द होजाता है, और बालक प्रसन्न रहता है। साथ साथ आक्षेप कालमें प्याजको काट छोटे छोटे टुकड़े बारबार सूंघाते रहनेसे सत्वर लाभ पहुँचता है। सूंघानेके समय ही टुकड़ा काटना चाहिये।

कितनेक चिकित्सक सोहागेके साथ आधसे एक रत्ती बच मिला देते हैं। कफ वृद्धि होने पर बच मिला देनेसे अधिक लाभ पहुँचता है। बचसे वमन होकर सत्वर कफ निकल जाता है मूत्र-शुद्धि होती है। फिर आक्षेप दूर होकर शान्त निद्रा आजाती है। आक्षेप शमन होनेपर मूल कारणको दूर करनेके लिये लक्ष्मीनारायण रस देवें या हेतु अनुरूप चिकित्सा करते रहें।

२४. पारदादि चूर्ण (बालरोग)

(हाइड्राजिरम् कम क्रिटा-मर्क्युरी विथ चॉक-ग्रे पाउडर)

विधिः—शुद्ध पारद १ औंस और विशुद्ध खटिका (चाक Prepared Chalk) २ औंस मिलाकर खरल करें। जब तक पारद अदृश्य न हो, और चूर्ण भूरे रंगका न हो जाय, तब तक घोटना चाहिये।

मात्राः—आध से २॥ रत्ती दिनमें दो बार जलके साथ दें।

उपयोगः—शिशुओंको अतिसार और यकृद् विकार होनेपर इस चूर्णका उपयोग किया जाता है।

कामला और ज्वर रोगमें आमाशय और अन्त्रका विकार होनेपर यह चूर्ण बहुत लाभ पहुँचाता है। इन दोनों विकारोंमें विशेषतः रात्रिको किञ्चित् इपेकाक्युआना (या वच) के साथ उपयोग किया जाता है, और प्रातःकाल मृदुविरेचन दिया जाता है।

बेचैनी आदि लक्षण प्रातःकाल भोजन के पहले प्रतीत होते हैं। इस अवस्थामें ½-¼ रत्ती चूर्ण दिनमें ३ बार देनेसे रोग सत्वर दमन होजाता है।

इसके अतिरिक्त माता पितासे प्राप्त फिरंगके उपद्रव रूप विकारमें रक्तशोधनार्थ यह चूर्ण अति उपयोगी है। माता पिताको उपदंश होनेपर जन्मने वाले शिशुको उपदंश विकार होता है, उसे जन्मजात, उपदंश कहते हैं। इस विकारमें जन्मके समय कुछ भी लक्षण नहीं होते। २-३ सप्ताह होनेपर सारे शरीरपर काले होजाते हैं। पैरोंके तल, हाथ, तालु, मूत्रेन्द्रिय, नासिकाके भीतर और पीठ आदिपर पिडिकाएं उत्पन्न होती हैं। एवं गुदा के चारों ओर भी लालरंग की पिडिकाएं होजाती हैं। फिर इनमेंसे कुछ कुछ रक्त झरता रहता है। इस विकारकी चिकित्सा न होने पर गुदाके भीतर फैल जाता है। फिर गुदगूक (गुदा के बाहर पुष्प पल्लवके सदृश सफेद पतली त्वचा की वृद्धि condyloma) हो जाता है। नासिकामें पिटिकाएं हो जानेसे निःश्वास छोड़नेमें कष्ट होता है। फिर रोग वृद्धि होनेपर त्वचामें झुर्रियां पड़जाती हैं, और बालक वृद्धके समान बनजाता है इस रोगपर यह खटिका चूर्ण अमृतके समान कार्य करता है। विशेषतः इस रोगपर खटिका चूर्ण आध रत्ती सोडाबाई कार्ब आध रत्ती और दूधकी शक्कर (मिल्कसुगर) २ रत्ती मिलाकर ८ पुड़ी करें। इनमेंसे १ १ पुड़ी दिनमें २ बार देवें, तथा मालिश करनेके लिये पारद मलहमको ७ गुने वेसलिनमें मिलाकर उपयोग में लेवें।

२५. जन्म घूँटी

विधि —सोंफ, सौंफकी जड़, बायबिडङ्ग, अमलतासका गूदा, सनाय, छोटी हरड़, बड़ी हरड़, बच, अञ्जीर, अजवायन, गुलाबके फूल, पलासके बीज, मुनक्का, उन्नाबकी त्वचा, पुराना गुड़ और सोहागेका फूला, इन १६ औषधियोंको मिलाकर ३-४ माशे लेवें। इसका क्वाथ करें। किञ्चित् काला नमक मिला "। (सि० म० मा०)

वक्तव्य —अमलतासका गूदा, अञ्जीर, उन्नाब, गुड़ और मुनक्काके अतिरिक्त शेष ११ औषधियों का जौकुट चूर्ण पहलेसे तैयार रख सकते हैं। उक्त ५ औषधियों को अनुमान से आवश्यकता पर मिला लेवें।

उपयोग —यह जन्मघूटी बालरोगकी उत्तम औषधि है। इसका प्रयोग राजस्थानमें अधिक होता है। बच्चोंके ज्वर, अपचन, मलावरोध, कफप्रकोप, खांसी, जुकाम आदि सबपर यह सफलतापूर्वक प्रयुक्त होता है।

(५३) विष विकार

१. कृष्णाविषहरण

विधिः—एसिड कार्बोलिक २॥ तोले, तृण तैलं (रोसेका तैल-ऑइल जिरेनियम) १। तोला, पीपरमेण्ट का फूल ५ तोले, कपूर १० तोले और मिट्टीका सफेद तैल (कैरोसीन आइल) २० तोले लेवें। पहले पीपरमेण्टके फूल और कपूरको मिलावें। बाद एसिड कार्बोलिक मिलावें। जल हो जाने पर मिट्टीका तैल और तृणतैल मिला लेवें। (श्री० पं० कृष्णप्रसादजी त्रिवेदी B. A. आयुर्वेदाचार्य)

मात्राः—२ से ५ बूंद दिनमें ३ समय २॥-२॥ तोले जलमें मिलाकर पिलावें। अथवा रोगानुसार अनुपानके साथ देवें। मालिशके लिये दुगुना सरसोंका तैल तथा व्रण को धोने और कुल्ले करनेके लिये १६ गुना जल मिला लेवें।

उपयोगः—यह औषधि सर्प बिच्छू आदिके विविध प्रकारके विष तथा विसूचिका, प्लेग, सन्निपात आदि अनेक व्याधियोंका नाश करती है। पशुओंके व्रण और सींगमें कृमि गिर कर टूट जाना, उन पर भी यह लाभ पहुँचाती है।

अनुपान विसूचिका मेंः—आध आध घण्टे पर २-२ बूंद रोग काबूमें आवे, तब तक बताशेमें या शक्करके साथ देते रहें।

प्लेग मेंः—५-५ बूंद शक्करके साथ दिनमें ३-४ समय देवें। गिल्टी पर अर्कका फोहा बांधे, और २-२ घण्टे पर बदलते रहें।

वात प्रकोप जन्य प्रलापक सन्निपात और शीताङ्ग सन्निपात मेंः—अदरख या तुलसीका रस मिलाकर दिनमें ३-४ समय अथवा ३-३ घण्टे पर देते रहें।

श्वासावरोध मेंः—सरलतासे कफ बाहर निकालनेके लिये २—२ बूंद जलके साथ देवें।

कर्णस्राव मेंः—गरम करके ठण्डा किया हुवा १ तोला तेलमें ३ माशे यह तेल मिलाकर उसमेंसे २—२ बूंद रात्रिको कानमें डालें।

नारुपरः—अफीम और रीठेके कल्कके साथ मिलाकर लेप करें और ऊपर धतूरेका पत्ता अथवा कलिहारीका पत्ता बांधें।

अर्शके मस्सेः—तेल लगाते रहनेपर कुछ दिनोंमें मस्से मुर्झाकर झड़ जाते हैं।

विसर्प और शीतपित्त परः—दुगुने सरसोंके तेलके साथ मिलाकर लगावें।

फोड़ा फुन्सियों परः—फोहा रुईमें तरकर बांधें। तेलके प्रयोगसे त्वचा काली पड़ जाती है। वह मक्खन या घी लगानेसे ठीक हो जाती है।

शिर दर्दः—तेल की कुछ बूं'' रुमाल पर डालकर सुंघावें। और चार गुने धोये घी (या वेसलीन) में मिला मलहम बनाकर कपाल पर लगावें।

उदरशूल और परिणामशूल पर —२ से ४ बून्द २॥ तोले जलमें या सौंफके अर्कमें मिलाकर एक एक घण्टे पर पिलानेसे दर्द सत्वर शमन हो जाता है। आवश्यकता पर कुछ बूंद वेदना वाले भाग पर मल देवे।

श्वेत कुष्ठ पर —तेलको बावचीके कल्क या बावचीके तैलमें मिलाकर लेप करें।

पशुओंके व्रण —जिसमें कीड़े पड़े हों उसपर, तथा पशुओंके किसी भी चर्म रोग पर, समान नीलगिरी तैल या तार्पिन तैल मिलाकर फोहा बांध देवें।

वृश्चिक ततैया आदि जन्तुओं के विष पर —तैल लगा कर १-२ मिनट तक मले। यदि उतनेसे लाभ न हो, तो मुर्गीकी विष्टामें मिला कर लेप करे।

सर्प विष पर —सर्प काटनेपर तुरन्त दश स्थानको चीरकर दूषित रक्त निकाल दें। पश्चात् थोड़े थोड़े समयपर इस तैलका नया फोहा रखते जाय, जितने भागमें विष चढ़ गया हो, उसके ऊपर बंधन कसकर बांध दें, फिर उतने भागमें नीलगिरी तैल और अर्क मिलाकर मालिश करे। अलावा २० बूंद १० तोले निवाये गोमूत्रमें मिलाकर पिलावे। १५ मिनिट पश्चात् जितना पी सकें, उतना निवाया जल पिला देवे। जिससे तत्काल वमन होकर आमाशयमेंसे विष बाहर निकल जायगा।

दाद, व्युची, खाज आदि पर —इसे लगानेपर थोड़े ही समयमें फायदा हो जाता है। २-४ बार सरसोंके तैलमें मिलाकर लगाने पर रोग समूल नष्ट हो जाता है।

खुजली आदि त्वचारोग में —८ गुने सरसोंके तैलमें मिलाकर मालिश करें।

नासा कृमिपर —२-४ बून्द नाकमें डालनेसे समस्त कृमि गिर जायेंगे।

दांत और दाढ़के दर्दमें —दर्दके स्थान पर अर्कका फोहा रखें अथवा अर्कमें १६ गुना जल मिलाकर कुल्ले करे।

संधिस्थानोंमें पीड़ा और वातजन्य शूलमें —समान तार्पिन तैल मिलाकर मालिश करे। इस रीतिसे अन्य अनुपानोंकी योजना करे।

सूचना —(१) यह तैल पित्त प्रधान रोगी, सगर्भा स्त्री तथा बालकको नहीं देना चाहिये, या सम्हाल पूर्वक कम मात्रामें देवे।

(२) अग्निके पास इस तैलकी शीशीको न रखें। उष्ण कालमें मात्रा कम देवें।

२. सशोधक रसकर्पूर

विधि —शुद्ध पारद और पांशुपटु (रेतेका नमक-काच लवण) १०-१० तोले मिलाकर सेहुण्डके दूधमें ७ दिनतक खरल करें। फिर लोहेके २ सरावोंमें सम्पुट कर दोनों सरावोंकी सन्धिको खड़िया मिट्टीसे बन्द करें। पश्चात् एक हाण्डीमें नमक भरें और उस नमकके भीतर सम्पुट रखें। उस हाण्डीपर दूसरी बड़ी किन्तु समान मुँहवाली हाण्डीको औंधी रख दृढ़ मुद्रा करें। फिर चूल्हेपर चढ़ा १२ घण्टेतक तीव्राग्नि देनेसे

ऊपरकी हांडीके भीतर चन्द्रमा और कुन्द पुष्पके सदृश श्वेत भस्म लग जाती है। यन्त्र स्वाङ्ग शीतल होनेपर उसे सम्हालपूर्वक निकाल लें। (र० सा० सं०)

मात्राः—२ से ३ रत्ती लौंगके चूर्णके साथ मिलाकर दें। ऊपर १-२ घूंट जल पिलावें।

उपयोगः—इस रसकपूरके सेवनसे वमन खूब होती है। जिससे शरीरमें रहे हुए सर्प विष, सोमल आदि खनिज विष या सिंहकी मूंछके बाल आदि प्राणिज विष और दूषी विष नया अथवा ६-१२ मासका पुराना, सब निकल कर नष्ट हो जाता है।

सूचनाः—यह वान्ति बार-बार दो प्रहरतक होती रहती है। इसपर बार-बार शीतल जल पिलाते रहना चाहिये।

पारदका सेहुंडके दूध और नमकके साथ रासायनिक संयोग होनेसे वान्तिकारक गुणकी उत्पत्ति होती है। यदि मात्र नमक मिलाया जाय, सेहुंडका दूध न मिलाया जाय, तो विरेचन गुण दर्शाता है। पारदके साथ नमक मिलाकर तैयार किये हुए पारद उपलवण (Hydrargyri Subchloride or Calomal) का पाठ वमनादि शोधन प्रकरणमें पहले दिया गया है।

३. विषवज्रपात-रस

प्रथम विधिः—स्फटिक मणि पिष्टी (भस्म), फिटकरीका फूला, यवक्षार, लोटिया सज्जी, नौसादरके फूल, सैंधानमक, गोदंती भस्म, इन ७ औषधियोंको सम-भाग मिलाकर खरल कर लें। (र० यो०)

मात्राः—१-१ तोला शीतल जल या दहीके जलसे दें।

उपयोगः—यह विषवज्रपात विषशमनार्थ प्रयुक्त होता है। विषका सेवन पूर्ण मात्रामें हुआ हो, तो इसकी पूर्ण मात्रा ही देनी चाहिये। आवश्यकतापर १-२ घण्टे बाद पुनः देवें। विषवेगका दमन हो, उतने अंशमें मात्रा कम देनी चाहिये।

यदि दंशजन्य विषप्रकोप हुआ हो, तो दंशस्थानपर चीरा लगाकर इस रसको भर दें। एवं मनःशिल, तपकिया हरताल, कुचिला, जमालगोटा, बच और हींगको जलमें पीसकर लेप करें। इस रसके सेवनसे सर्प, बिच्छू, कुत्ते, सियार, बाघ, भेड़िया और अन्य जहरी जानवरोंके विष और अफीम, गांजा, भांग, बच्छनाग आदि औषधियोंका विष, दूषी विष, कृत्रिम विष, ये सब नष्ट हो जाते हैं।

सूचनाः—तीव्र विषप्रकोपमें इस औषधके साथ कागजी नीबूके बीजकी गिरीका चूर्ण भी निवाये जलके साथ देते रहना विशेष लाभदायक है। नीबूके बीज सर्व प्रकारके विषोंको दूर कर देता है। यदि बच्छनागका विष हो तो सोहागा विशेष लाभदायक है। सोहागा बच्छनागके विषका प्रतिहारक द्रव्य है।

द्वितीय विधिः—हल्दी, सोहागेका फूला, जावित्री, नीलेथोथेका फूला, इन ४ औषधियोंको समभाग मिला देवदालीके रसमें ३ दिन खरल करके २-२ रत्तीकी गोलियां बना लेवें। (र० र०)

मात्रा —१ से ४ गोली निवाये जल, गोमूत्र या मनुष्य मूत्रके साथ देवें। यदि २ घण्टेतक वमन न हो, तो पुन दूसरी मात्रा देवें।

उपयोग —यह रस सब प्रकारके स्थावर जंगम विषोंको दूर करता है। इसके सेवन से वमन और विरेचन होते हैं। जिससे आमाशय और अन्त्रसे विष निकल जाता है। जो विष रक्तमें शोषित हुआ हो, वह प्रस्वेद द्वारा बाहर निकल जाता है तथा कुछ अंशका रूपान्तर हो जाता है।

४. अर्कादि वटी

विधि —आककी जड़की छाल (एप्रिल और मई मासमें निकालकर छायामें सुखायी हुई), धतूरेके पान और मिश्री, तीनोंको समभाग मिला आकके पानोंके रसमें ६ घंटे खरलकर १-१ रत्तीकी गोलियां बना लेवें।

मात्रा —२ से ४ गोली दिनमें दो बार निगलवा देवें (जल १ घंटे तक न पिलावें) और २-४ तोले भूने चने खिलावें।

उपयोग —इस औषधके सेवनसे पागल कुत्ते और सियारका जहर जल जाता है और रक्त निर्विष हो जाता है। ४-६ मास तक दवा देते रहना चाहिये। यह औषधि वमन कराती है। इस हेतुसे चना खिलाया जाता है और जलका निषेध किया है। चना खा लेनेपर वान्तिकर असर कम हो जाता है।

५ जैपालाञ्जन

विधि —एक नीबूके फलके ऊपरकी छाल काट, रसमें छिलके और जिह्वी निकाली हुई जमालगोटेकी ७ गिरी भर, फिर कटी हुई छाल रख, नीबूको सूतसे बांध कर मकानमें एक ओर रहने देवें। ७ वें दिन जमालगोटेकी गिरीको निकालकर सूर्यके तापमें सुखा लेवें। फिर उनको दूसरे नीबूमें भरकर रख देवें और ७ वें दिन निकाल कर सुखा लेवें। इस तरह ७ नीबूओंमें भर कर सुखा लेवें। (भा० भै० र०)

उपयोग —इस गिरीको नीबूके रस या मनुष्यके थूकमें घिसकर नेत्रमें अंजन करनेसे सर्पदंशसे उत्पन्न मूर्च्छा दूर होती है। सापके विषसे बहुधा बेहोशी आ जाती है। फिर विष सरलतासे नहीं उतरता। यह अंजन कर देनेपर तन्द्रा, निद्रा या मूर्च्छा नहीं होती।

(५४) रसायन-वाजीकरण

१. ब्राह्म्य रसायन

विधिः—एक कलईदार भगोनेमें १ मन लगभग दूध भर, उसपर तारकी चालनी रख, उसमें आंवले १००० नग (१२॥ सेर) भर, मंद आंच देकर दूधकी बाष्पसे सिजोवें। आँवले नरम होनेपर गुठली निकाल शेष गूदाको छायामें सुखा कर चूर्ण करें। उसे १००० आंवलोंके रसकी भावना दें। फिर शालपर्णी, पुनर्नवा, जीवन्ती, नागबला (गंगेरन), ब्राह्मी (जलनीम), मण्डूकपर्णी, शतावर, शंखपुष्पी, पिप्पली, वच, बायविडंग, कौंचके बीज, गिलोय, सफेद चन्दन, अगर, मुलहठी, महुएके फूल, नीलोफर, कमल, मालती, गुलाब और चमेलीके फूल, इन सबको समभाग मिलाकर कपड़छान चूर्ण करें। पश्चात् आंवलोंके चूर्णमें शालपर्णी आदिके चूर्णका आठवां भाग मिला नागबलाके रसकी भावना देकर छायामें सुखा लें। नागबलाका रस १। मण इसी तरह भावनाएं देकर पचन करावें। फिर चूर्ण कर आंवलोंके वजनसे दूने दूने घी और शहद मिला अमृतबानमें भर मुखमुद्राकर जमीनमें गड्ढा खोदकर उसके भीतर चारों ओर राख डालकर रखें। १५ दिन बाद निकाल लें। पश्चात् सुवर्ण भस्म, रौप्यभस्म, ताम्रभस्म, प्रवाल भस्म और लोहभस्म समभाग लेकर आँवलोंके वजनसे आठवां हिस्सा (वर्तमान समयमें १२८ वाँ हिस्सा) मिला लेवें।

मात्राः—आधसे ४ तोले तक प्रातःकाल सेवन करें। पचन हो जानेपर घी, दूध और भातका भोजन करें। अन्य सब वस्तुओंका त्याग करें। प्रारम्भमें आध तोला मात्रा लें। फिर धीरे-धीरे ४ तोलेतक अग्निबलके अनुसार बढ़ावें। इसका सेवन पंच कर्मसे शुद्ध होकर मकर संक्रांतिसे होली तक कुटीमें रहकर ४० दिन तक करना चाहिये।

उपयोगः—इस ब्राह्म्य रसायनके सेवनसे समस्त रोग निवृत्त होकर दीर्घायुकी प्राप्ति होती है; देह सुदृढ़ होती है, शरीर बल, स्फूर्ति, कान्ति, वीर्य, धारण शक्ति और ओजकी अति वृद्धि होती है। देहमें किसी संयोग विरुद्ध पदार्थोंके सेवन जनित विष या अन्य क्षुद्र विषका प्रवेश होनेपर वह कुछ भी बाधा नहीं पहुँचा सकता।

शास्त्रकारोंने विविध प्रकारके रसायन प्रयोग लिखे हैं। इनमें यह उत्तम प्रकार है। यह रसायन हृदय, मस्तिष्क, फुफ्फुस, आमाशय, यकृत, प्लीहा, वृक्क आदि सब इन्द्रियों (अवयवों) को सबल बनाकर देहको सुदृढ़ बनाता है। अति स्त्री समागम और अधिक चिन्तासे जिनके वीर्य और देह निर्बल हो गये हों, उनके लिये यह अति हितावह है।

वक्तव्यः—प्राचीन आचार्योंके मतानुसार ग्रामसे बाहर खुली वायु वाले विशुद्ध स्थानमें त्रिगर्भा कुटी बनायी जाती है। अर्थात् एक कुटीके भीतर दूसरी और उसके भीतर तीसरी कुटी बनवाकर उसके भीतर रहनेका विधान किया है।

२. आमलकी रसायन

विधि —पलाश वृक्षके स्कधको जो ताजा और पुष्ट हो, कीड़े लगकर दूषित न हुआ हो, उसको १॥-२ हाथ ऊपरसे कटवा देवें फिर उसके भीतर ग्लासके समान गड्ढा करें। चारों ओर २-२ इञ्च किनारा रह जाय, उस तरह गड्ढा कर उसमें नये ताजे पुष्ट परिपक्व आंवले भरें। पश्चात् शीशीपर डाट लगानेके समान पलाशका ढक्कन बनवाकर उसे बन्द करें, उस वृक्षके चारों ओर दर्भ लपेटें, और उसपर कमलके नीचेके कीचड़का लेप १-१ इञ्च मोटा करें। फिर चारों ओर जंगली कण्डे रखकर अग्नि लगा देवें। उसे वायु न लगे, इसलिये ४-४ हाथ दूरपर कच्ची दीवार खड़ी कर लेवें। २-३ घण्टे अग्नि लगनेपर आवले अच्छी तरह सीज कर नरम हो जाते हैं। स्वांग शीतल होनेपर आवलोंके भीतरसे गुठलियां निकाल डालें और उनके समान वजनमें घी और शहद मिला मसलकर अमृतवानमें भर लेवें। (अ० हृ०)

मात्रा —४ से १० तोले तक। पच कर्मसे शुद्ध हो कुटीमें रहकर जनवरीसे मार्च तक ३० दिन तक रोज सुबह एक बार सेवन करें। पहले मात्रा ४ तोले लें। फिर शरीर बल और अग्नि बलके अनुसार मात्रा बढ़ावें।

सूचना —यह रसायन पचन हो जानेपर गरम किया हुआ गो दुग्धका सेवन करें। दूध दिनमें ३ या अधिक बार लें। जल और भोजन सब निषेध है। शीतल जलका स्पर्श तक न करें।

उपयोग —इस रसायनके सेवनसे शिथिल हुआ शरीर पुनः सुदृढ़ हो जाता है। शास्त्रकार लिखते हैं, कि ११ वें दिन बाल, दांत और नख गिर जाते हैं। (परन्तु ऐसा अनुभवमें नहीं आया कुछ निर्बलता आ जाती है) फिर थोड़े ही दिनोंमें शरीर कान्तिमान और हाथीके समान अतुल सामर्थ्यवान बन जाता है। धारणाशक्ति, बल, बुद्धि और ओजकी वृद्धि होती है और मनुष्य पूर्णायु भोगता है।

यह प्रयोग स्व० प० मदनमोहन मालवीयजी के करनेके पश्चात् विशेष प्रकाशमें आया है। यह सरल और निर्भय उपाय है।

रसायन सेवन कालमें प्यास नहीं लगती। प्राण तत्व बहुत सबल बन जाता है। ४० दिन तक कुटीमें रहें। बाहर न निकलें और भोजनका बिल्कुल त्याग करें। इतने कठोर नियमोंका पालन करनेवालोंको यह आश्चर्यप्रद लाभ पहुँचाता है।

वक्तव्य —रसायन सेवन करनेके प्रारम्भमें स्नेहन, स्वेदन आदि पञ्च कर्मों द्वारा देहको शुद्ध बना लेना चाहिये।

द्वितीय विधि —अच्छी जातिके परिपक्व आवले सुखवा, गरम उबलते हुए जलमें २-५ मिनट भिगो, गुठली निकाल, धूपमें सुखा, कूटकर कपड़छान चूर्ण करें। फिर आवलेके स्वरसके साथ २१ दिन खरल करा लोह पात्र या अमृतवानमें भर लेवें। (च० स०)

मात्राः—१ से २ माशे रोज सुबह सेवन करें।

अनुपानः—गोघृत-मधु, मधु, दूध या प्रकृति अनुरूप।

उपयोगः—यह आमलकी रसायन अति सस्ता होनेपर भी दिव्य फलदायी, शीतवीर्य, सौम्य और आयुवर्द्धक है। यह वात, पित्त, कफ सब प्रकृति वालोंको अनुकूल है।

यह रसायन रस, रक्त आदि सब धातुओंको शुद्ध और सबल बनाता है। स्मरण शक्ति, धारणाशक्ति और आयुको बढ़ाता है। यह वृद्धावस्थाकी निर्बलता दूरकर शतायु बनाता है।

यह रसायन रक्तपित्त, पित्तप्रकोप, दाह, तृषा आदि रोगोंसे पीड़ितोंके लिये अति लाभदायक है। जिनको उदरमें वायु रहती हो, प्यास बहुत कम लगती है, स्वप्न दोष होता रहता है, उनसे अधिक मात्रा सहन नहीं हो सकती। इन रोगोंमें रोगशामक दवा भी मिला देनी चाहिये।

३. कामदेव मोदक

बनावटः—कूठ, कायफल, सैंधानमक, सौंठ, कालीमिर्च, पीपल, मेथी, अजवायन, अजमोद, अडूसा, मोचरस, विदारीकंद, मुसली, जायफल, चित्रकमूल, जीरा, कालाजीरा, गजपीपल, मुनक्का, हरड़, कौंच, तालीसपत्र, दालचीनी, तेजपात, छोटी इलायचीके दाने, सांभरनमक, सैंधानमक, कालानमक, बहेड़ा, काकड़ासिंगी, केलेका कन्द, शतावर, असगंध, शठी, मुलहठी, चिरौंजी, गिलोय, जावित्री, लौंग, केशर, खस, गोखरू, सेमलका कंद, आंवला, उड़द, पुनर्नवाकी जड़, धतूरेके शुद्ध बीज, सिंघाड़ा, रूमीमस्तंगी, जटामांसी, खरैंटी, गंगेरन, कंघी, सुगन्धवाला, भारंगी, गजपीपल, तिल, शीतलमिर्च, अकरकरा, दन्तीमूल, लोहबान सत्व, बच, काहूके बीज और कमलगट्टा ये ६४ ओषधियां १-१ तोलेको कूट बारीक कपड़ छान चूर्ण करें। फिर १६ तोले भूनी भांग, ८ तोले अभ्रक भस्म, ४ तोले वङ्ग भस्म, २ तोले लोहभस्म और १ तोला रससिन्दूर तथा १६० तोले मिश्री मिलावें। पश्चात् घी ६४ तोले और शहद गोलियां बन सके, उतना मिलाकर २-२ तोलेके मोदक बनालें। (वृ० यो० त)

वक्तव्यः—हम मिश्री, घी और शहद पहले नहीं मिलाते।

मात्राः—१ से २ माशे। २ से ४ माशे मिश्री, २ माशे शहद, और ४ माशे घीके साथ सुबह रात्रिको लेवें और ऊपर दूध पीवें।

उपयोगः—इस रसायनके सेवनसे वृद्धावस्था और अन्य रोग जनित निर्बलता दूर होकर अग्नि अत्यन्त प्रदीप्त होती है। यह औषधि वीर्यकारी, महामयहरी (बड़े-बड़े रोगोंको हरने वाली), क्षुधावर्धक, तेज, कान्ति और स्थूलताको बढाने वाली तथा चिन्ता, चित्तविभ्रम आदि मानसिक विकारनाशक, मदमत्त, तरुणाकामिनियोंकी मदभंजक और मनो विनोदकारी है। इसे चिकित्सक सौगनसिंहने शत वधुओंसे भोग करने वाले महाराजा हमीरके लिये निर्माण की थी, और लोकोपकारार्थ प्रकाशित की थी।

यह रसायन शीत कालमें सेवन करने योग्य है। इसके सेवनसे निर्बलता दूर होकर देह पुष्ट होती है। इस रसायनमें भाग आती है। जिनको भाग अनुकूल रहती हो, उनके लिये यह अति हितकारक है। अग्निमांद्य, अजीर्ण, संग्रहणी, अर्श या अतिसारसे पीड़ित, जिनको बार बार जुकाम हो जाता हो, वृद्ध, वात रोगी, मलेरिया ज्वरसे निर्बल हुई देह वाले, आमवात या आमवातजनित निर्बल हृदय वाले, क्षीणशुक्रवाले तथा भागके व्यसनियोंके लिये यह रसायन हितकारक है।

इस मोदकमें तीनों दोषोंपर कार्य करनेवाले द्रव्य मिलाये हैं। इसमें पाचन संस्थानपर कार्यकारी द्रव्य अधिक मात्रामें है। निर्बलता आनेपर और वृद्धावस्थामें विशेषतः पचनक्रिया दूषित होती है, वह इस मोदकके सेवनसे सुधरती है। इसके अतिरिक्त जिस दोषके बलका ह्रास हुआ हो उसके अनुरूप द्रव्यसत्वका शोषण होता है, जिससे वह दोष सबल बन जाता है। इसी हेतुसे यह मोदक वात, पित्त कफ, तीनों प्रकृतिवालोंको अनुकूल रहता है।

सामान्यतः आयु बड़ी होनेपर अवयवोंमेंसे स्थितिस्थापक गुण घट जाता है, फिर उत्साहका ह्रास, आलस्य, देहमें भारीपन, अग्निमांद्य, स्मृतिलोप, वातवृद्धि, किसीको कपोत्पत्ति, मल-मूत्र शुद्धिमें न्यूनता आदि लक्षण उपस्थित होते हैं। अतः उस गुणको बढ़ानेके लिये रसाचार्योंने रसायन औषधियोंकी योजना की है। इस मोदकमें अभ्रक, लोह, बंग, रससिन्दूर, आवला, हरड़, शतावर, मुलहठी, गिलोय, असगंध आदि रसायन औषधियां होनेसे स्थिति स्थापक गुणकी पूर्ति होती है अर्थात् पुनः युवावस्थाकी प्राप्ति होती है।

४. मदनकान्ता गुटिका

विधि —रस सिन्दूर ४ तोले, सोनेका वर्क १ तोला, चांदी का वर्क २ तोले, शुद्ध बच्छनाग १ तोला, शुद्ध शिलाजीत कपूर और मीठाकूठ २–२ तोले, अफीम १ तोला, जायफल, लौंग, पीपल, अकरकरा, जावित्री, केशर, अगर, दालचीनी, सफेद-मूसली, कौंचके बीज और गिलोय सत्व ये ११ औषधियां १–१ तोला तथा अम्बर और कस्तूरी ६–६ माशा लें। पहले रससिंदूर, सुवर्ण, रौप्य और बच्छनाग को मिलावे फिर केशर, कस्तूरी और अम्बरको छोड़ शेष काष्ठादि औषधियोंको कूट कर मिलावे। शिलाजीतको धतूरेके रसमें मिलाकर डालें, फिर १२ घण्टे धतूरेके रसमें खरल करे। दूसरे दिन अदरखके रसमें घोटें। तीसरे दिन केशर, कस्तूरी, और अम्बर मिला पके हुये नागर वेलके पानका रस मिला ६ घण्टे खरलकर १–१ रत्ती की गोलियां बना लेवे।

(आ० नि० मा०)

मात्रा —१–१ गोली मिश्री मिले हुये दूधके साथ सेवन करें।

उपयोग —यह गुटिका रसायन, अत्यन्त बल वीर्यवर्धक, कामोत्तेजक और कान्तिप्रद है। इस वटीको रोगानुसार अनुपानके साथ सेवन करनेसे जीर्णज्वर, प्रति

श्याय, जीर्णवातरोग, धनुर्वात, खंजवात, अर्धांगवात, हिस्टीरिया, श्वास, कास, क्षय, मूर्च्छा, अग्निमांद्य, पाण्डु, बहुमूत्र, मधुमेह, और प्रमेहपिड़िका आदि दूर होते हैं। स्व० वैद्यराज धीरजराम दलपतराम (सुरत) ने इस वटीका व्यवहार लगभग २० वर्ष तक किया है। अति सफल प्रयोग है।

सूचनाः—इस औषधके सेवन कालमें लालमिर्च और खटाई नहीं खानी चाहिये, और ब्रह्मचर्यका आग्रहपूर्वक पालन करना चाहिये।

५. निर्विष्यादिवटी (हब्बे जदवार)

बनावटः—जदवार खताई (निर्विषी Delphinium denudatum), जहरमोहरा खताई और चांदीके वर्क, तीनों समभाग मिला गुलाब, केवड़े और वेदमुश्कके अर्कमें एक दिन खरलकर २-२ रत्तीकी गोलियां बना लेवें।

मात्राः—१ से २ गोली दिनमें दो बार खमीरे गावजवां, चन्दनादिअर्क या गोदुग्धके साथ देवें।

उपयोगः—यह औषधि ओजवर्द्धक है। हृदयकी धड़कन, मस्तिष्ककी उष्णता और शारीरिक निर्बलताको दूर करती है। शारीरिक निर्बलता, चक्कर आना, हृदयकी धड़कन बार बार बढ़ जाना, मुखमण्डल निस्तेज होजाना, स्फूर्तिका अभाव, अग्निमान्द्य आदि विकारोंको दूर करके शरीरको सबल बनाती है।

वृक्क और मूत्राशयकी शिथिलताके हेतुसे मूत्रशुद्धि नहीं होती और रक्तमें विष वृद्धि होती रहती है। फिर हृदयकी धडकन और मस्तिष्कमें उष्णता उत्पन्न होती है, तब यह औषधि विशेष उपकारक है।

विषमज्वर आदि रोग या अधिक स्त्री समागम अथवा अपथ्य सेवनसे जब शुक्रमें उष्णता और पतलापन आजाता है, तब शुक्रको शीतल और गाढा बनानेके लिये इस वटीका उपयोग होता है। यदि मूत्र संस्थानमें विकृति सुजाकके लीन विषसे हुई हो, तो अनुपान रूप से सारिवासव या चन्दनासव देना चाहिये।

तमाखूका धूम्रपान अत्यधिक करते रहनेसे कितनेक व्यक्तियोंको रक्तमें विषोत्पत्ति होकर वृक्ककार्यमें (मूत्रोत्पत्ति कार्यमें) प्रतिबन्ध होता है। फिर मस्तिष्कमें उष्णता, चक्कर आना, बेचैनी, अधिक प्रस्वेद आना, निद्राह्रास और हृदयमें शिथिलता आदि लक्षण उपस्थित होते हैं। उसपर यह वटी चन्दनादि अर्कके साथ सेवन करायी जाती हैं।

६. ज्ञानोदय रस

प्रथमविधिः—गांजा १६ तोले, शुद्ध गंधक ४ तोले, जायफल २ तोले, चन्द्रोदय १ तोला, कपूर और केशर ६-६ माशे लें। सबको मिला शहद (लगभग १० तोले) के साथ खरल कर २-२ रत्तीकी गोलियां बांध कर अकरकरेके चूर्णमें डालते जांय।

सूचनाः—गांजामेंसे शाखा और बीजोंको निकाल केवल पत्ते लें। फिर ४ घण्टे जलमें भिगो मलकर जलको निकाल डालें। पश्चात् बार बार नया जल मिलाकर

धोवें। जब तक हरा जल निकले, तब तक नये नये जलके साथ मलकर जलको निकालते रहें। शुद्ध होनेपर छायामें सुखा लेवें।

मात्राः—२-२ गोली दिनमें दो वार मिश्री मिले हुए दूधके साथ।

उपयोगः—यह ज्ञानोदय रस शक्तिवर्द्धक, क्षुधावर्द्धक, आनन्ददायक और शान्तिकारक है। मलेरियासे निर्बल बने हुए तथा निर्बल पचनशक्ति और निर्बल ग्रहणी वालोंको यह रसायन शक्तिवर्द्धक रूपसे दिया जाता है। गांजा पीने वालोंको अधिक हानि पहुँचने पर एवं चिन्तातुरों को निद्रा नहीं आती और चित्त भ्रमित सा रहता है, उनको इस रसायनके सेवनसे निद्रा आने लगती है और मन शान्त होता है। जीर्ण सुजाकके रोगीको निर्बलता दूर करने, मूत्र मार्गकी वेदना शमन करने और वाजीकर शक्ति देनेके लिये भी यह रसायन अति हितकारक है। स्त्रियोंका गर्भाशय शिथिल हो जानेसे मासिकधर्म शुद्धि न होती हो या गर्भ धारण न होता हो, तो गर्भाशय सबल बनानेके लिये इसका उपयोग किया जाता है।

द्वितीय विधिः—धोयी हुई भांग १६ तोले, कालीमिर्च ४ तोले, जायफल २ तोले और रससिंदूर १ तोला मिलाकर मर्दन करें। फिर मिश्री २२ तोले मिला सरल कर बोतलमें भर देवें।

मात्राः—१-१ माशा दिनमें २ या ३ वार जलके साथ।

उपयोगः—यह रसायन, दीपन, पाचन, ग्राही, मादक और वृष्य है। यह विदेशके जलवायु लगने, वर्षाऋतुमें जलविकार होने, वातविकार, कफरोग, मंद मंद ज्वर बना रहना और अपचन होकर वार वार दस्त लगना आदि को नष्ट करता है. तथा काम वृद्धि करता है। हिस्टीरिया, आमातिसार या ग्रहणी रोग वालोंको शक्ति बढ़ानेके लिये बहुत लाभदायक है। जिनका ग्रहणी (duodenum) निर्बल हो, उनको यह चूर्ण कम मात्रामें दीर्घकाल तक सेवन कराना चाहिये।

७. वङ्गादि चूर्ण

विधिः—वंगभस्म ६ माशे, हल्दीका कपड़छान चूर्ण १२ तोले, शीतलमिर्च ६ तोले, कपूर और गिलोय सत्व १-१ तोला और अफीम ३ माशे लें।

मात्राः—२ से ४ माशे रात्रिको सोनेके समय जलके साथ सेवन करें।

उपयोगः—इस चूर्णके सेवनसे वीर्यकी उष्णता और विकृति दूर होती है, स्वप्नदोषका निवारण होता है, मूत्र साफ आता है। मूत्राशयकी उष्णता शमन होती है, तथा वीर्य शुद्ध और सबल बनता है। कुछ दिनों तक सेवन करते रहनेसे स्वप्न दोष होना बन्द होजाता है।

वक्तव्यः—स्वप्न दोषके रोगीको रात्रिको हलका भोजन करना चाहिये, तथा हो यह सरहालना चाहिये। उदरमें वात संग्रह होनेपर रात्रिको स्वप्न दोष हो अतः वातवर्द्धक पदार्थका सेवन कम करना चाहिये। शामको जल्दी भोजन

करलेना और शक्ति अनुसार घूमना अधिक लाभप्रद है। पहलेका भोजन न पचा हो, तो फिर भोजन नहीं करना चाहिये।

८. चन्द्रोदय वटी

प्रथमविधिः—चन्द्रोदय और कपूर ४–४ तोले, वङ्ग भस्म, वाजीकरण लोह भस्म, लौंग, जायफल, जावित्री, केशर और अकलकरा ये ७ औषधियाँ १–१ तोला तथा सत्व कुचिला (स्ट्रिक्निया) १ माशा, कस्तूरी और अम्बर ६–६ माशे लेवें। पहले चन्द्रोदय और कपूरको मिलावें। फिर केशर, कस्तूरी और अम्बर मिलाकर नागरबेलके पानके रसमें ३ घण्टे खरल करें। फिर भस्म और कुचिलेका सत्व मिलाकर ३ घण्टे खरल करें। पश्चात् शेष औषधियोंका कपड़छान चूर्ण मिला नागरबेलके पानके रसमें ६ घण्टे मर्दन कर आध आध रत्तीकी गोलियां बनावें और सोनेकेवर्कपर डालते जाँय।

वक्तव्यः—इस वटीमें सामान्य रीतिसे चन्द्रोदय द्वितीय विधिवाला मिलाया जाता है। अमीरोंके लिये चन्द्रोदय प्रथम विधिवाला मिलाते हैं और साथमें १ तोला सुवर्ण भस्म भी मिलाते हैं। उसे चन्द्रोदय वटी (विशेष) यह संज्ञा दी है।

मात्राः—१ से २ गोली आध छटांक मलाईमें रखकर प्रातःकाल (या सायंकालको) सेवन करें। ऊपरसे दूध पीवें।

उपयोगः—यह रसायन अत्यन्त वाजीकर है। यह नपुंसकता और निर्बलताको नष्टकर थोड़े ही दिनोंमें शरीरको सुदृढ और कामदेवके समान तेजस्वी बना देता है।

सूचनाः—(१) इस औषधके सेवन कालमें लालमिर्च, तैल, गुड़, खटाई, अधिक नमक और प्रकृति विरुद्ध पदार्थोंका उपयोग निषिद्ध है। क्रोध और चिन्ताका त्याग करें, धूम्रपान और सूर्यके तापका सेवन अधिक न करें। अधिक परिश्रम भी नहीं करना चाहिये, तथा दूध, घीका उपयोग अधिक करना चाहिये।

(२) यह रसायन अत्यन्त कामोत्तेजक है अतः अधिक आवश्यकता हो तब थोड़े दिनों तक सेवन करके बन्दकर देना चाहिये।

दूसरी विधिः—द्विगुण गन्धकजारित रससिंदूर और कपूर ४–४ तोले, जायफल, समुद्रशोष, लौंग और अकरकरा १–१ तोला, केशर ६ माशे और कस्तूरी ३ माशे लें। सबको मिला ६ घण्टे नागरबेलके पानके रसमें खरल करके १–१ रत्तीकी गोलियां बना लेवें।

मात्राः—१ से २ गोली नागरबेलके पानमें दिनमें २ वार खाकर ऊपर मिश्री मिला दूध पीवें।

उपयोगः—यह रसायन पौष्टिक और कामोतेजक है। इसके सेवनसे शरीर सबल होता है। वृद्धोंको भी वाजीकरण गुण दर्शाता है। इसके अतिरिक्त मधुमेह और प्रमेह पिड़िकामें शक्ति संरक्षणार्थ इसका सेवन कराया जाता है।

६. नवजीवन रस

विधि:—रससिंदूर, अभ्रक भस्म, लोह भस्म, शुद्ध कुचिला और चित्रकमूल, ये सब २-२ तोले और त्रिकटु (सोंठ, कालीमिर्च और पीपल) ४ तोले मिला, चित्रकमूलका क्वाथ, अदरखका रस और नागरबेलके पानोंका रस, इन तीनोंके साथ क्रमशः १२-१२ घण्टे खरल करके आध आध रत्तीकी गोलियां बना लेवें। (र०यो०सा०)

मात्रा:—१ से २ गोली नागरबेलके पानमें अथवा चविकासव या गोदुग्धके साथ दिनमें दो बार।

उपयोग:—यह नवजीवन रस रोगसे क्षीण हुएको नवजीवन देने वाला है। यह दीपन, पाचन, कीटाणुनाशक, शूलहर, हृद्य, बल्य, आध्मानहर, रक्तपौष्टिक, वातनाड़ीपोषक, कामोत्तेजक और वातहर है।

विषमज्वर (मलेरिया) कुछ दिनों तक रह जानेपर देह कृश और निर्बल बन जाती है, तथा रक्तकी न्यूनता, मांसकी शिथिलता, अग्निमान्द्य, मज्जावरोध, अरुचि, उत्साहका अभाव, उदरमें वायु संगृहीत होना, मलावरोध होना, अन्नमेंसे योग्य रस-रक्त न बननेसे रोगी कृश और निस्तेज बन जाता है। उसे नवजीवन रस देनेसे आमाशय-का रसस्राव और यकृत्पित्त का स्राव, दोनों बढ़ जाते हैं, अन्नकी पुरःसरण क्रिया तेज होती है, उदर वायु दूर होती है, मलशुद्धि होने लगती है, तथा पचन क्रिया सुधर जाती है। फिर रस-रक्तादि धातु योग्य बनकर शरीर सुदृढ़ बन जाता है।

अजीर्ण रोगी तुरन्त उपचार न करावे और अपथ्य सेवन करता रहे, तो उदावर्त (आमाशयमें गेस उठना) रोगकी संप्राप्ति होती है। फिर अफारा, मलावरोध, किसीको थोड़ा थोड़ा दस्त होते रहना, उदरशूल, व्याकुलता, हृदयमें भारीपन और निर्बलता आदि लक्षण उपस्थित होते हैं। इस रोगमें भोजनके १-२ घण्टे बाद चविका-सवके साथ नवजीवन दिया जाता है। क्वचित् अनुप्रकोप या रोगबलके हेतुसे हृदयको तीव्र आघात पहुँचे तो उस समय दिवालमुश्क देकर वातप्रकोपको तुरन्त दबा देना चाहिये।

अपचन पीड़ित कितनेक रोगियोंको मंद ज्वर बना रहता है या रोज रात्रिको कुछ उत्ताप बढ़ जाता है। उदरमें भारीपन और मंद मंद वेदना होती है; शरीर निस्तेज और उत्साहहीन हो जाता है, दिनमें ३-४ बार थोड़ा थोड़ा दस्त होता है। फिर भी योग्य उदरशुद्धि नहीं होती। पेशाबमें कफ जाता है। शुक्र धातु पतली हो जाती है। द्विदलधान्य (दाल) अधिक खानेमें आवे तो आध्मान आ जाता है। घृतवाले पदार्थ अधिक खानेपर अजीर्ण बढ़ जाता है; मूत्र पीला बन जाता है और रात्रिको स्वप्नदोष हो जाता है। एवं गुड़ शक्कर वाले पदार्थ खानेसे ज्वर कुछ बढ़ जाता है। ऐसे रोगियोंको नवजीवन-रस देनेसे अपचन, मलावरोध और मंद ज्वर आदि विकार दूर होकर शरीर और तेजस्वी बन जाता है।

वात वाहिनियोंकी विकृतिमें गतिभ्रंश और ज्ञानभ्रंश, दो प्रकार होते हैं । यदि इनमें ज्ञानवाहिनियां ही नष्ट हो गई हों, तो इस रसायनका उपयोग नहीं होता । किन्तु गति तन्तु (चेष्टा वाहिनियों) के कार्य अव्यवस्थित हो जानेसे कम्प होता हो अथवा वातनाड़ियों की निर्बलतासे मांसपेशियां सूखती हों, तो इन दोनों प्रकारके वात रोगों पर यह रसायन लाभ पहुँचा देता है ।

जो बालक मूत्राशय पर योग्य काबू न होनेसे रात्रिको निद्रामें पेशाब कर देता है । उसे नवजीवन रस थोड़ी मात्रामें दूध के साथ देनेसे विकार दूर हो जाता है ।

हस्तमैथुनसे आई हुई नपुंसकता, शुक्रका पतलापन, स्वप्नदोष आदि विकारों पर यह रसायन कस्तूरी $\frac{1}{8}$ रत्ती मिले हुए नागरवेलके पानमें दिया जाता है । इसके सेवनसे शुक्राशय, मूत्राशय और मूत्रेन्द्रियकी शिथिलता दूर होती हैं ।

निर्बल मनुष्योंकी हृदय गति प्रायः मंद हो जाती है । फिर हृदय स्पंदन योग्य नहीं होता, नाड़ी मंद कम बलयुक्त, किन्तु जल्द चलने लगती है, या बीचमें टूटती है, हाथ पैरकी अंगुलियां और कानकी पाती (अर्थात् कान) शीतल रहती है, थोड़ा श्रम करने पर श्वास भर जाता है, और प्रस्वेद आ जाता है । ऐसे रोगियोंको नवजीवन रस नवजीवन प्रदान करता है ।

यदि हृदयके पर्दे की क्रिया विकृति से हृदय में निर्बलता आई हो, तो उसमें हृदय फूलता है । फिर पैरों पर शोथ आता है । दिनमें शोथ बढ़ता है और रात्रिको कम होजाता हैं । प्रात:काल निद्रामेंसे उठने पर शोथ कम भासता है । यकृत् की वृद्धि होती है । रोग जीर्ण होनेपर उदर्य्याकलामें कुछ जल संगृहीत होता है । पेशाब लाल रंगका और कम उतरता है । जिससे विष वृद्धि होकर योग्य निद्रा नहीं मिलती, अन्नका पचन सम्यक् नहीं होता । उदरमें वायु भर जाती है; मलशुद्धि नहीं होती । सोनेपर हृदयमें घबराहट होती है । रात्रि और दिन बैठे ही रहना पड़ता है । ऐसे रोगीको नवजीवन रस दिया जाता है । यदि जलशोथ या जलोदर उत्पन्न हुआ हो, तो रोगीको दूध पर रखना पड़ता है; और अनुपान रूपसे पुनर्नवादि क्वाथ या त्रिकण्टकादि क्षीर (चिकित्सा तत्वप्रदीप प्रथम खण्डमें लिखा हुआ) के साथ दिया जाता है । यदि कफकी अधिकता हो, तो कपूर आध रत्ती मिले हुए नागरवेलके पान में दिया जाता है ।

श्वास क्रिया या फुफ्फुसके वायु कोषोंमें शोथ आ जानेसे कफ वृद्धि हुई हो, श्वास क्रिया योग्य न होती हो, घबराहट होती हो, तो उसपर नवजीवन रस देनेसे थोड़े ही दिनोंमें फुफ्फुस संस्थान सबल बन जाता है ।

१०. रसेन्द्रचूड़ामणि

विधिः—शुद्धपारद १ तोला, सुवर्णभस्म २ तोले, नागभस्म शतपुटी ३ तोले, अभ्रकभस्म ४ तोले, वंगभस्म हरतालमारित ५ तोले, लोहभस्ममल्लमारित ६ तोले, रजतभस्म ७ तोले और सुवर्णमाक्षिक भस्म ८ तोले लेवें । सबको यथाविधि मि

धतूरेके पान और भांगके रसमें ३-३ दिन खरल करें। फिर पीपल, गिलोय, भारंगी, अमरबेल, खस, नागरमोथा, सफेदवच्छनाग, मुलहठी, शतावरी, कौंच और सरहटी इन ११ औषधियोंके रस या क्वाथकी क्रमशः ७-७ भावना देवें। पश्चात् सबके वजनसे आधा भाग (वर्तमानमें ८ वां भाग) अफीम मिला तुलसीके मंजरीके रसमें ६ घण्टे खरल करके आध आध रत्तीकी गोलियां बना लेवें। (र० रं० स०)

मात्राः—१ से २ गोली रात्रिको मिश्री मिले दूधके साथ। जिनको कब्ज न हो वे सुबह रात्रि, दिनमें २ बार ले सकते हैं।

उपयोगः—रसेन्द्रचूडामणि रस नपुंसकता, शुक्रकी निर्बलता, स्तम्भन शक्तिका ह्रास, वीर्यकी कमीको दूर करता है और अधिक स्त्रीवाले पुरुषके लिये उत्तम औषधि है।

रसेन्द्रचूडामणि अफीम प्रधान औषधि है। इसके अतिरिक्त वच्छनागकी ७ भावना लग जानेके हेतुसे तथा सुवर्ण, नाग, अभ्रक, बंग और लोह भस्म मिलाने और शतावरी, कौंच आदिकी भावना देनेसे अधिक कामोत्तेजक बना है। यद्यपि इस रसको धतूरे और भांगकी भावना देकर अफीमके दोषसे रक्षा करनेका प्रयत्न किया है; तथापि अफीमके दोषका उचित दमन नहीं हो सका। अतः जिनके अन्त्र निर्बल हों या जिनको मलावरोध रहता हो, उनको यह रस बहुत कम मात्रामें देना चाहिये। अफीमके व्यसनी से इस रसकी पूर्ण मात्रा या दुगुनी अथवा इससे भी अधिक मात्रा सहन हो जाती है; दूसरों से नहीं।

रसेन्द्रचूडामणि और कामिनीविद्रावण दोनों अहिफेन प्रधान प्रबल कामोत्तेजक और स्तम्भक औषधियाँ हैं। इन दोनोंमें भी रसेन्द्रचूडामणि अत्यधिक कामोत्तेजक है। इसका सेवन ग्रीष्मऋतु में न कराया जाय तो अच्छा एवं इसके सेवनकालमें ब्रह्मचर्यका पालन हो तो ही शुक्र धातु और मस्तिष्कको सच्चा लाभ मिलता है।

यह रसेन्द्रचूडामणि रस राजा, महाराजा और अमीर जिनके अधिक स्त्रियाँ हों, उनके लिये मूल ग्रन्थकार ने निर्माण किया है। यह रस वीर्यको गाढा बनाता है, शुक्राशयको बलवान बनाता है। स्तम्भन शक्तिको बहुत बढाता है और विषय सेवनमें आनंद देता है। किन्तु विषय सेवनकी लालसा भी बढ़ाता है। इस रसके सेवन करने वालोंको स्त्री सेवनका विचार बार बार आता रहता है। इस हेतुसे इस रसका सेवन आवश्यकतापर मर्यादामें ही करना चाहिये। यद्यपि सुवर्ण, नाग, बंग आदि वीर्यवर्द्धक और वीर्यपोषक औषधियां मिलानेसे हानिसे कुछ अंशमें रक्षा होती है। तथापि स्त्री-समागम अत्यधिक होनेपर शुक्रक्षय और शुक्रधातुको हानि पहुँचती है। अतः अफीम रससे होनेवाली हानिको लक्ष्यमें रखकर सेवन करना चाहिये।

अतिमैथुन, अनुचित मैथुन, शुक्रकी निर्बलता, वृद्धावस्था, दीर्घकालतक रोग आदि हुई निर्बलता आदि कारणोंसे नपुंसकता आगई हो, उसे दूर करने,

स्तम्भनशक्ति और वीर्यको बढ़ानेके लिये रसेन्द्रचूड़ामणिका सेवन ब्रह्मचर्य पालनके साथ २-३ मास तक करानेसे लाभ होजाता है। अनुपानरूपसे अश्वगंधारिष्ट हितावह होता है।

मधुमेह होनेपर मूत्रमें शक्कर जाती है। फिर इसी हेतुसे शरीर अधिक निर्बल बनता जाता है। ऐसी अवस्थामें शरीर बलकी रक्षा करने और शक्करकी उत्पत्ति कम करानेके लिए शिलाजीतके साथ इस रसका सेवन कराया जाता है।

वृद्धावस्थाकी निर्बलता आनेपर मस्तिष्क, हृदय और फुफ्फुस निर्बल बन जाते हैं। थोड़ेसे परिश्रमसे या चलनेसे श्वास भर जाता है। नाड़ियोंमें खिंचाव होता है। उनको शक्ति देनेके लिये रसेन्द्रचूड़ामणि आशीर्वादके समान कार्य करता है।

शराबका व्यसन पुराना होनेपर व्यसनी निर्बल और निस्तेज बन जाता है। शरीर श्याम होजाता है। स्मरणशक्ति नष्ट होजाती है। ऐसी अवस्थामें शराब कम करानेके साथ शक्ति देनेके लिये इस रसका सेवन कराया जाता है।

मूलग्रन्थकारने रसेन्द्रचूड़ामणिको प्रमेहघ्न माना है। जो औषधि दीपन-पाचन और कषाय रस प्रधान हो, वह नूतन रोगपर हितावह होती है। इस रसमें दीपन पाचन और ग्राही गुणवाली औषधि प्रधान रूपसे नहीं मिलायी। फिर भी यह रस सब धातुओंको सबल बनाकर परम्परागत लाभ पहुँचाता है। अतः यह जीर्ण प्रमेह रोगोंपर हितावह माना गया है। अनुपान रूपसे लोध्रासव देवें।

दीर्घकालतक वीर्यका दुरुपयोग करने या अति स्त्रीसहवासके हेतुसे शुक्रक्षय होनेपर पाण्डुता आजाती है और मुखमण्डलपर शोथ हो, ऐसा भास होता है। इसके अतिरिक्त अग्निमांद्य, दिनमें २-२ वार शौच होना, वार वार स्वेद आना और निर्बलता आदि लक्षण उपस्थित होते हैं। शरीर दिन-प्रतिदिन सूखता जाता है। ऐसी अवस्थामें रसेन्द्रचूड़ामणि-मधुमालिनी और वृद्धदारु चूर्णके साथ २-३ मासतक दिया जाता है।

११. कामचूड़ामणि रस

विधिः—मुक्ता पिष्टी, सुवर्णमाक्षिक भस्म, सुवर्ण भस्म, भीमसेनी कपूर, जावित्री, जायफल, लौंग, वंगभस्म और रजतभस्म, ये ९ औषधियाँ २-२ तोले तथा चातुर्जात (दालचीनी, तेजपात, छोटी इलायचीके दाने और असली नागकेशर) का चूर्ण ९ तोले लें। सबको मिला शतावरके रसमें ७ दिनतक खरल करके १-१ रत्तीकी गोलियां बना लेवें।

(र० यो० सा०)

मात्राः—१ से २ गोली प्रातः सायं दिन में २ बार धारोष्ण दूध या मिश्री मिले दूध या रोगानुसार अनुपानके साथ देवें।

उपयोग—कामचूड़ामणि शुक्रहीन, गतध्वज और ८० वर्षके वृद्धको भी युवाके समान बल प्रदान करता है। असाध्यसे असाध्य ध्वजभंगको भी एक सप्ताहमें लाभ पहुँचाता है। इसके अतिरिक्त प्रमेह, मूत्ररोग, अग्निमान्द्य, शोथ, रक्त दोष और स्त्रियोंके समस्त रोगोंको दूर करता है।

युवावस्थामें अति स्त्री सहवास होनेपर वृद्धावस्थामें मूत्र संस्थान शिथिल हो जाती है। वृक्क निर्बल होनेसे मूत्रोत्पत्ति योग्य नहीं होती। वस्ति निर्बल बननेसे पेशाब धारण नहीं होता। फिर बार बार पेशाब करना पड़ता है, किसी किसीको पौरुष ग्रन्थि बढ जानेके हेतुसे भी थोड़ा थोड़ा पेशाब आता रहता है। तथा वात प्रधान लक्षण प्रकाशित होते हैं। उसपर काम चूड़ामणि रस शतावर्यादि चूर्णके साथ सेवन कराया जाता है।

यह रसायन स्त्रियोंके लिये भी अति हितकारक है। जिस तरह पुरुषोंके शुक्रको शुद्ध, शीतल, सबल और गाढा बनाता है। उसी तरह स्त्रियोंके रजको भी शुद्ध और सबल बनाता है। पुरुषोंके शुक्राशय और शुक्रके समान स्त्रियोंके बीजाशय और रज पर भी लाभ पहुँचाता है।

कितनीक युवतियोंको युवावस्था आनेपर भी देह कृश होनेसे बीजाशयका योग्य विकास नहीं होता। फिर मासिकधर्म नहीं आता। उनको यदि उष्ण उत्तेजक औषध देकर मासिकधर्म प्रारम्भ कराया जाय, तो कुछ वर्षोंके पश्चात् युवावस्थामें ही वृद्ध बन जाती है। इसके विपरीत कामचूड़ामणिरस + प्रवाल पिष्टी + अमृता-सत्व। सितोपलादि चूर्णके मिश्रणका सेवन कराया जाय तो देह सबल बनती है, तथा बीजाशय, गर्भाशय, स्तन आदि अवयवोंका योग्य विकास होता है और मासिकधर्म आने लगता है।

सुजाक आदि विकार हो जानेपर व्याधि विष रक्त आदि धातुओंमें लीन रहता है जिससे रक्त अशुद्ध रहता है; वीर्य पतला और उष्ण रहता है; तथा रोगनिरोधक शक्ति निर्बल रहती है। फिर बार बार विविध प्रकारके विकार ज्वर, अग्निमान्द्य, व्रण-विद्रधि, दृष्टिमान्द्य, शोथ, बहुमूत्र आदि उपस्थित होते हैं। उनको कामचूड़ामणि अमृतासत्व, मिश्री और दूधके साथ या सारिवादि अरिष्टके साथ २-४ मासतक सेवन कराया जाय, तो रक्तप्रसादन होकर रोग शमन हो जाते हैं। एवं फिरंग और पूयमेह हो जानेके पश्चात् पुरुषोंके अण्डकोष या स्त्रियोंके बीजाशयके समीपमें रही हुई वातवाहि-नियां और केशिकाएं संकुचित होकर नपुंसकता आई हो, तो वह भी इसके सेवनसे दूर हो जाती है।

१२. रतिवल्लभ चूर्ण

विधि:—सकाकुल मिश्री ८ तोले, बहमन सफेद, बहमन लाल, पंजा सालब, मुसली, काली मूसली और गोखरू, ये ६ औषधियां ४-४ तोले, छोटी इलायची-बीज, वंशलोचन, दालचीनी और गांवजबांके फूल ये ४ औषधियां २-२ तोले लें। कूटकर कपड़छान चूर्ण करें।

मात्रा:—४ से ६ माशे तक समान मिश्री मिलाकर मिश्री मिले दूधके साथ लें।

उपयोग:—यह चूर्ण उष्ण प्रकृतिवालोंको हानिकारक है। इसके सेवनसे

कामोत्तेजना होती है तथा शीघ्रपतन, मूत्रमें वीर्य जाना, वीर्यका पतलापन आदि दोषों-को दूर कर वीर्यको गाढा और सबल बनाता है; शरीरको पुष्ट, तेजस्वी और सुदृढ तथा मनको उत्साही बनाता है।

१३. अश्वगंधादि चूर्ण

प्रथम विधि:—असगंध, विधारा, आंवला, गोखरू, गिलोय, इन ५ औष-धियोंको समभाग लेकर कूट कपड़छान चूर्णकर शतावरीके स्वरसकी भावना देकर सुखालें। फिर समानभाग मिश्री मिलाकर रखलें। (अ० हृ०)

मात्रा:—आध से १ तोला शहद और घृतमें मिलाकर चाटें। ऊपरसे गोदुग्ध पीवें।

उपयोग:—यह औषधि रसायन और वाजीकर है। एक वर्ष पर्यन्त इसका सेवन करते रहनेसे शुक्रक्षय, वीर्यदोष, प्रमेह आदि वीर्यविकार एवं तज्जन्य उपद्रव (असमयपर वृद्धा-वस्थाके लक्षण, स्मरण शक्तिका ह्रास, नेत्र ज्योतिकी निर्बलता, शिरमें चक्कर आना व दर्द होना) आदि मिटते हैं। यह प्रयोग वाग्भटोक्त है। इसको राजवैद्य प० रामचंद्रजी शर्माने अनेक बार प्रयोगमें लिया है।

१४. विदार्यादि चूर्ण

विधि:—विदारीकंद, सफेद मुसली, सालबपंजा, असगन्ध, बड़े गोखरू, अकरकरा, ये ६ औषधियाँ समभाग मिला कूटकर कपड़छान चूर्ण करें।

(पं० यादवजी त्रिकमजी आचार्य)

मात्रा:—२-२ माशे प्रातः काल और रात्रिको समान शक्कर और गरम गोदुग्धके साथ।

उपयोग:—यह चूर्ण वीर्यवर्द्धक और कामोत्तेजक है। स्तम्भनशक्तिमें भी वृद्धि होती है। वात, कफ प्रकृति और मेदवाले मनुष्योंके लिये यह हितकारक है।

१५. मुसली पाक

बनावट:—सफेद मुसलीके १ सेर चूर्णको ८ सेर दूधमें मिलाकर मन्दाग्निसे पाक करें। मावा हो जाने पर १ सेर घी मिलाकर अच्छी तरह भून लेवें। पश्चात् सोंठ, कालीमिर्च, पीपल, दालचीनी, तेजपात, नागकेशर, हाऊवेर, सौंफ, शतावर, जीरा, अजवायन, चित्रकमूल, गजपीपल, अजमोद, पीपलामूल, आंवला, कचूर, गोखरू, धनियां, असगंध, छोटी हरड़, नागरमोथा, समुद्रशोष, लौंग, जायफल, जावित्री, नागकेसर, तालमखाना, खरैंटी, कंघी, गंगेरन, कौंचके बीज, मुलहठी, मोचरस, हिं गिर कमलगट्टा (जिब्बी निकाले हुए), वंशलोचन, शीतलमिर्च, अकरकरा, नेत्रव काले सफेद चंदन, ये ४१ औषधियां ५-५ तोले लेकर कपड़छान चूर्ण करें। छि तोले हुए तिल ४० तोले, रससिंदूर २॥ तोले, अभ्रक भस्म ५ तोले, लोह बनालेवें। मिलावें। फिर १५ सेर शक्करकी चासनीकर सब द्रव्योंको मिला २-२ तोले

सूचनाः—मूल ग्रन्थमें घीमें भूननेका नहीं लिखा। बिना भूने पाक अधिक काल नहीं रह सकेगा, ऐसा मानकर हमने भूननेका पाठ बढ़ाया है।

उपयोगः—यह पाक उष्णवीर्य है। शीतकालमें सेवन करने योग्य है। १से २ मोदक रोज प्रातः काल खाकर ऊपर दूध पीते रहनेसे मंदाग्नि, गुल्म, प्रमेह, अर्श, श्वास, कास, व्रण, क्षय, कामला, पाण्डु, शुक्रक्षीणता, नेत्रकी निर्बलता, वातरोग, पित्तरोग, कफ रोग, नपुंसकता, प्रदर, शुक्रदोष, उरः क्षत, रजोदोष, मूत्रकृच्छ्र, मूत्राघात, अश्मरी, मलदोष, आनाह, कृशता, और अति बढ़ा हुआ वातरक्त आदि नष्ट हो जाते हैं। यह पाक अग्निवर्धक, कान्तिप्रद, तेजोवर्धक, कामवर्धक, और वलीपलित नाशक है। यह योग क्षीण शुक्रवाले मनुष्य और क्षीण रजवाली स्त्रियोंको देखकर अश्वनीकुमारने निर्मित किया है। शुक्रवृद्धिके लिये यह अद्वितीय योग है।

१६. रतिवल्लभ पुगपाक

बनावटः—चिकनी सुपारी ४० तोलेको सरोतेसे बारीक कतर दौला यन्त्र (उष्ण यन्त्र) में स्वच्छ जलकी बाष्प द्वारा स्वेदन करें। नरम हो जानेपर साफ धो, सुखा, कूटकर कपड़छान चूर्ण करें। इस चूर्णको ८ गुने गोदुग्धमें मिलाकर पाक करें। खोआ बन जानेपर ३२ तोले गोघृत मिलाकर खूब भूनें। फिर २॥ सेर मिश्रीकी एक तारी चाशनी बनाकर खोआ मिलावें। पश्चात् पाक होनेपर उतार लेवें; तथा छोटी इलायचीके दाने, नागेरन, खरैंटी, पीपल, जायफल, शिवलिङ्गीके बीज, जावित्री, तेजपात, तालीसपत्र, दालचीनी, सोंठ, खस, नेत्रवाला, नागरमोथा, हरड़, बहेड़ा, आंवला, वंशलोचन, शतावर, कौंचकेबीज, (छिलके रहित), मुनक्का, तालमखाना, गोखरू, छुहारा, खिरनी, धनिया, कसेरु, मुलहठी, सिंघाड़े, जीरा, बड़ी-इलायची, अजवायन, वराटिका भस्म, जटामांसी, सौंफ, मेथी, विदारीकंद, सफेद मुसली, कालीमुसली, असगंध, कचूर, नागकेसर, सफेदमिर्च, नथी चिरौंजी, सेमलके बीज, गजपीपल, कमलगट्टाकी जिव्ही निकाली हुई गिरी, सफेद चंदन, रक्त चंदन, और लौंग इन ६० औषधियोंका कपड़छान चूर्ण ४-४ तोले मिलावें। पश्चात् रससिंदूर, वङ्ग भस्म, नागभस्म, लोहभस्म और अभ्रक भस्म १-१ तोला तथा कस्तूरी और कपूर ४-४ माशे मिलाकर २-२ तोलेके लड्डू बनालेवें।

(यो० र०)

मात्राः—आधसे एक लड्डू तक अग्निबल और शरीरबलके अनुसार खाकर ऊपर मिश्री मिला हुआ दूध २० तोले पीवें।

उपयोगः—यह पाक शीतकालमें सेवनके लिये अति हितावह है। इस पाकके सेवनसे वृद्धि, कामोत्तेजना और अग्निकी दीप्ति होती है। यह पाक हृद्य और पौष्टिक है। जनुष्य भी इस पाकके सेवनसे युवाके समान बलवान, तेजस्वी और सुन्दर बन

यदि इ

खुरासानी अजवायन, काले धतूरेके शुद्ध बीज, अकलकरा

समुद्र शोष, माजूफल, खसखस और दालचीनी ४—४ तोले तथा भूनीभांग सबके वजनसे आधी मिला लेवें तो यह कामेश्वर मोदक कहलाता है।

सूचनाः—इस पाकके सेवन कालमें खटाईका बिलकुल त्याग करना चाहिये, तथा लड्डू और दध पचजाने पर भोजन करना चाहिये।

१७. अहिफेन पाक

विधिः—अकरकरा, केशर, लौंग, जायफल, भांग, शुद्ध हिंगुल, ये ६ औषधियां २-२ तोले तथा अफीम १ तोला लें। अफीमको १६ तोले दूधमें मिलाकर मावा बनालें। अन्य ओषधियोंको कूटकर कपड़छान चूर्ण करें। फिर १६ तोले मिश्रीकी चाशनी बनावें। कुछ शीतल होनेपर उसमें मावा और औषधियोंका चूर्ण मिलाकर २-२ रत्तीकी गोलियां बना लेवें। (यो० चि०)

मात्राः—१ से २ गोली रात्रिको मिश्री मिले दूधके साथ।

उपयोगः—इस ओषधिका सेवन करनेसे क्षय, कृशता आदि व्याधियां दूर होकर शरीर हृष्ट पुष्ट और बलवान बनता है। यह रसायन कामोत्तेजक है। मात्रा हो सके उतनी कम लेनी चाहिये। एवं दूध जितना पचन हो सके, उतना अधिक परिमाणमें लेना चाहिये।

१८. शक्तिवर्धक गुटिका

विधिः—शुद्ध कुचिला २ तोले, जावित्री, जायफल, लौंग और अफीम, चारों ४-४ माशे, केशर ३ माशे, सफेद मिर्च १॥ माशा, कस्तूरी १ माशा और अम्बर ४ रत्ती लेवें। सब ओषधियोंको कूट कपड़छान चूर्णकर नागरवेलके पानके रसमें ६ घण्टे खरल करके १-१ रत्तीकी गोलियां बना लेवें। (श्री० पं० गुरुशरणदासजी)

मात्राः—१-१ गोली दिनमें २ बार दूधके साथ।

उपयोगः—यह शक्तिवर्धक गुटिका उत्तम शक्तिप्रद है। निर्बल पचन शक्ति, वात पीड़ित और पतले वीर्यवालोंके लिये अति हितावह है। यह वीर्यको सबल बनाती है और कामोतेजना भी करती है।

जिस रोगीको कभी कब्ज और कभी पतले दस्त होजाते हो, उदरमें वायु भरी रहती हो, उनको इस वटीके सेवनसे आमाशय और अन्त्र बलवान बनकर रोग निवृत होजाता है। जीर्ण उदरवातमें यह वटी कम मात्रामें लम्बे समय तक देनी चाहिये।

१९. कन्दर्पसुन्दर तैल

बन वटः—श्वेत गुन्जा, खिरनीके बीजोंका मगज, जायफल और लौंग चारोंको १०-१० तोले मिला कूट कर कपरौटीकी हुई बोतलमें भरें। फिर बोतलके मुँहपर लोहेके तारकी गोली बना डाटकी तरह लगा देवें। ताकि तेल टपक सके और औषध चूर्ण न निकल सके। पश्चात् पाताल यंत्रसे तेल निकाल लेवें।

(श्री० पं० गुरुशरणदासजी)

नोटः—यदि इसमें शुद्ध भल्लातक मिलाया जाय तो और विशेष वाजीकरणकर्त्ता है।

मात्राः—१ सींक भर तेल नागरबेलके पानपर लगाकर सेवन करें। ऊपर मक्खन मिश्री खाये या गोघृत १ छटाँक निवाया करके पीवें।

उपयोगः—यह तेल अत्यन्त कामोत्तेजक और बलवर्द्धक है। २१ दिन तक ब्रह्मचर्यके पालनसह सेवन करनेपर शरीर सुदृढ़ बन जाता है।

२०. शक्तिसंजीवनलेह

बनावटः—मग्ज पिस्ता ३५ माशा, मग्ज अखरोट ३५ माशा, मग्ज बादाम ३५ माशा, हब्बुल खिजरा ३५ माशा, तोदरी लाल ३५ माशा, तोदरी पीली ३५ माशा, तोदरी सफेद ३५ माशा, सकाकुल ३५ माशा, बहमन सफेद ३५ माशा, बहमन लाल ३५ माशा, कुलींजन ३५ माशा, हब्बेकिलकिल ३५ माशा, काले तिल ३५ माशा, दालचीनी ३५ माशा, जायफल १५ माशा, (बालछड़) २३ माशा, सादकूफी (नागरमोथा) २३ माशा, लौंग २३ माशा, कबाबचीनी २३ माशा, तुख्म गाजर २३ माशा, तुख्म हलीयून असली २३ माशा, तुख्म मूली २३ माशा, तुख्म सलाम २३ माशा, तुख्म प्याज २३ माशा, तुख्म सिब्यत २३ माशा, इन्द्रयव मीठे २३ माशे, दरुनज अकरबी २३ माशा, जरनब २३ माशा, सोंठ ३५ माशा, जावित्री १४ माशा, पीपल १४ माशा, सालम ६ तोला, ताजा सफेद खोपरा ६ तोला, खसखस सफेद ६ तोला, सुरंजान २० माशा, बोजीदान २८ माशा, पोदीना २८ माशा, माहसुतर बरावी २८ माशा, केशर २८ माशा, गगलकी लकड़ी (पतली पतली टहनियां) २८ माशा, सुवर्ण वर्क ६ माशा, चाँदीके वर्क ६ माशा, अम्बर ६ माशा, कस्तूरी ६ माशा, शहद और मिश्री सब औषधियोंसे तिगुनी (दोनों मिलाकर) लेवें।

विधिः—पहले मगजात और जायफल, जावित्री आदि तेली स्निग्ध वस्तुओंको मिला पर खूब बारीक पिसवावें। केशरको अर्क गुलाब केवड़ामें घोटकर अलग रखें। कस्तूरीको साफ करके बाल वगैरह निकाल कर शुद्ध करें। काष्ठादि औषधियोंका कपड़छान चूर्ण करके खरलमें डालें। फिर कस्तूरी और अम्बरको ४ तोले मिश्रीके साथ घोटें। फिर सब दवाओंको मिलाकर शनैः शनैः ४ प्रहर घोटें। जब अच्छी तरह घुट जाय तब मगज़यात पिसा हुआ खरलमें डालकर मिलाकर दो घंटा घोटें। एक जिगर करलें। फिर शक्करकी चासनी ४ तारकी अर्थात् अवलेह जैसी करें। उसमें केशर मिलावें चाशनीमें जब पतलापन न हो, तब उतारकर ठंडी करें। तदनन्तर खरल की हुई दवाइयाँ डालें। फिर वर्क मिला, चीनीके अमृतवान या कांचके बर्तनमें भरकर ५-७ दिन तक धान्यराशिमें दबावें। फिर निकाल कर अग्निबलके अनुसार देवें।

मात्राः—६ माशे से १ तोला प्रातः सायं चाटकर यथारुचि दूध पीवें।

उपयोगः—यह अवलेह उत्तम वाजीकर और पौष्टिक है। वीर्यका अटूट भण्डार है। यह एक यूनानी योग है। हमारे परम्परागत अनुभवसे उत्तम सिद्ध हुआ है। अतः सर्व साधारणके हितार्थ पाठकोंकी सेवामें प्रस्तुत है।

(वैद्यराज पं० श्री० रामचन्द्रजी)

२१. धात्री रसायन (अनोश दारु)

विधिः—ताजे पक्के बड़े आंवले २॥ सेरको २४ घण्टे तक दूधमें भिगोवें। फिर दूसरे दिन जलमें डालकर उबालें। आंवले नरम हो और सरलतासे गुठली निकल जाय उतना पकालें। फिर गुठली निकाल लोहेके तारकी चलनीको कलईदार बर्तनपर रख उसपर आंवलोंको मसलकर छान लेवें। छने हुए गूदेमें १० तोले गोघृत मिलाकर कलईदार पीतलकी कड़ाहीमें मन्दाग्निपर पकावें और लकड़ीके खोंचेसे हिलाते रहें। आंवले पकाकर घी छोड़ने लगे तब नीचे उतार लेवें। पश्चात् ४ सेर शक्करको अर्क गुलाबमें मिला चाशनी करें। उसमें आंवलोंको मिलाकर कड़ाही को नीचे उतार लेवें। फिर छोटी इलायचीके बीज, बड़ी इलायचीके बीज, नागरमोथा, अगर, तगर, जटामांसी, सफेद चन्दन, वंशलोचन, रूमी मस्तगी, जायफल, जावित्री, केशर, तेजपात, तालीसपत्र, लौंग, गुलाबके फूल, धनियां, कालाजीरा, कपूरकाचरी, निर्विषी (जदवार-खताई), दालचीनी, आवरेशम कतरा हुआ और बिजौरेके सुखाये हुए छिलके इन २३ औषधियोंका १-१ तोले चूर्णकर मिलावें। पश्चात् चांदीके वर्क १०० (१ तोला) और सोनाके वर्क २५ (३ माशे) मिला अमृतबानमें भर लेवें ४० दिनके बाद उपयोगमें लेवें।

इसमें कस्तूरी, अम्बर, प्रवालपिष्टी और मोती पिष्टी १-१ तोला मिलानेपर यह योग विशेष गुणकारक होता है।

मात्राः—६-६ माशे सुबह भोजनके ३ घण्टे पहले निवाये गोदुग्धके साथ देवें। रात्रिको सोनेसे आध घण्टे पहले।

उपयोगः—यह योग उत्तम रसायन, वाजीकर, पौष्टिक, आमाशय, मस्तिष्क और हृदयको बलवान बनाने वाला तथा अग्निप्रदीपक है।

२२. शतावरी घृत (रसायन)

विधिः—शतावरी का रस २५६ तोले, दूध २५६ तोले, गो घृत १२८ तोले, तथा जीवक, ऋषभक, मेदा, महामेदा, काकोली, क्षीर काकोली, मुनक्का, मुलहठी, मुद्गपर्णी, माषपर्णी, विदारीकंद और रक्तचन्दन, इन १२ औषधियोंको समभाग मिलाकर किया हुआ कल्क ३२ तोले लें। सबको मिलाकर मंदाग्निपर पाक करें। (जल भी २५६ तोले मिला लेवें) घृत सिद्ध होनेपर शक्कर और शहद १६-१६ तोले मिलाकर एक जीव बना लें।

(भै० र०)

मात्राः—आध से १ तोला तक दूधके साथ।

उपयोगः—यह घृत उत्तम पौष्टिक, शीतवीर्य और वाजीकरण है। रक्तपित्त, वातरक्त और क्षीण शुक्र रोगियोंके लिये अति हितकारक है। अंगदाह, शिरोदाह, ज्वर, पित्तप्रकोप, योनिशूल, दाह, पैत्तिक मूत्रकृच्छ्र आदि रोगोंको शमनकर, बल, वीर्य, वर्ण और अग्निकी वृद्धि करता है; तथा शरीरको पुष्ट बनाता है।

शुक्राशय शिथिल हो जानेपर शुक्रका योग्य अवरोध एवं पित्तप्रकोपके हेतुसे शुक्र पतला और उष्ण रहता है; बारबार थोड़ा थोड़ा पेशाब होता रहता है; शिरमें उष्णता, सारे शरीरमें दाह, विविध अंगोंमें शूल चलता हो, पित्तप्रकोप जनित प्रदर विकार हो और मूत्रकृच्छ्र आदि लक्षण प्रतीत होते हैं उन सबको यह घृत दूर करता है और देहको सबल बनाता है।

क्षय कीटाणु जन्य मांसक्षय, प्रदाहजनित स्थानिक मांसक्षय, घातक ग्रन्थि बन कर उपवृक्ककी शिरा पर दबाव आना, उपवृक्क स्थानमें रक्तवाहिनियोंमें रक्त अत्यधिक भर जाना तथा अर्धेन्दु ग्रन्थिके प्रदाह अथवा दबाव आदि हेतुसे उपवृक्क (Suprarenal capsule) की विकृति होती है फिर वैवर्ण्य पाण्डु (Addison's disease रोगकी प्राप्ति होती है। इस रोगमें पाण्डुता, अति दुर्बलता, हृदय स्पन्दन अति निर्बल हो जाना, श्वास भर जाना, शीर्षशूल, बारबार जम्भाई आना, मुख और कण्ठ आदि पर ताम्रवर्णकी त्वचा बन जाना, नाड़ी क्षीणता, आमाशयकी उग्रतासे क्षुधावृद्धि और प्रायः वमन तथा क्वचित् अतिसार आदि लक्षण प्रतीत होते हैं। इस रोगपर मुख्य कारणको दूर करने वाली औषधिके साथ इस शतावरी घृतका आधसे एक तोले तक सेवन भोजनकें प्रारम्भमें करानेसे विशेष लाभ पहुँचता है।

क्षय कीटाणु जन्य विकार होने पर वसन्त कुसुमाकरके साथ और अन्य प्रकार होने पर तालसिंदूर और नवजीवन रसके साथ इस घृतका प्रयोग करना चाहिये। एवं उपद्रव अनुसार चिकित्सा करनी चाहिये। ग्रन्थि और प्रदाह आदि कारणको दूर करनेके लिये बाह्योपचार भी करते रहना चाहिये। किन्तु इन सब प्रकार और सब अवस्थाओंमें इस घृतका सेवन कराते ही रहना चाहिये।

वैवर्ण्य पाण्डु रोगके लिये दूध और घृत मेड़का लेकर घृत सिद्ध करें, तो विशेष अच्छा। एवं इस घृतके सेवन कालमें प्रातः काल और रात्रिको प्रवालपंचामृत १–१ रत्ती; रक्तचन्दन, पद्माख, धनिया, गिलोय, दारुहल्दीकी छाल और निम्बकी अन्तरछाल इन ६ औषधियोंको मिला जौकुट किये हुए ६–६ माशेके क्वाथके साथ देवें। अधिक जम्भाई और हृदयकी शिथिलता हो, तो १–१ रत्ती शुद्ध कुचिला या नवजीवन रस देते रहें। अतिसार हो तो साथमें सुवर्णयुक्त सर्वाङ्गसुन्दरका सेवन करावें।

वक्तव्यः—दिनमें निद्रा, धूम्रपान, भारी भोजन, मांसाहार, अण्डे तथा व्यायाम निषेध है। भोजनमें क्षार प्रधान अर्थात् नमक, सोडा आदि अधिक मात्रामें

लेवें । डाक्टरी मत अनुसार शक्कर भी हितकारक है । पुनर्नवा, चौलाई, सोवा, पालक, बथुआ, आलू आदिका शाक तथा दूध हितकारक है । मूत्रमें विकृति न हो तो मट्ठा लेवें ।

मस्तिष्कमें रहे हुए उत्ताप नियामक और उत्पादक केन्द्र उत्तेजित होनेसे शारीरिक उष्णता अधिक बनी रहती है । इस हेतुसे शारीरिक कृशता, मांसशोष, प्रस्वेद अधिक आना, प्रस्वेदमें दुर्गन्ध, ओष्ठके भीतर क्षत होना, ओष्ठ परसे त्वचाके टुकड़े निकलते रहना, शुक्रका पतलापन, गाढ निद्रा कम आना आदि लक्षण उपस्थित होते हैं । उसपर कामदूधा, गोदंती भस्म और अकीक पिष्टीके साथ इस घृतका सेवन कराना चाहिये ।

२३. मौक्तिक रसायन

विधिः—जयन्तीके रस और गन्धक योगसे बनाई हुई मुक्ता भस्म १ तोला गन्धक योगसे मारित सुवर्ण भस्म २ तोले, कान्तलोह भस्म ३ तोले, अभ्रकसत्व भस्म ४ तोले, शुद्ध गन्धक और सोहागेका फूला ४-४ तोले मिला अदरखके रसमें २० दिन खरल करें +। फिर सब चूर्णके समान शुद्ध पारद गन्धककी पर्पटी मिला बकरीके दूधमें १ दिन खरलकर २-२ रत्तीकी गोलियां बनालें । (र० यो० सा०)

मात्राः—२-२ रत्ती दिनमें १ बार सुबह शहद-पीपलके साथ लें ।

उपयोगः—यह मौक्तिक रसायक शीतवीर्य, निर्बलतानाशक और आयुवर्द्धक है । मूल ग्रन्थकारने इसका सेवन १ वर्ष पर्यन्त करनेका लिखा है । इसके सेवनसे नेत्रज्योति बढती है और सौ वर्षकी आयु भोगता है, स्मरणशक्ति, विचारशक्ति, धारणशक्ति, धैर्य, विनय आदिकी वृद्धि होती है । शास्त्रार्थमें विजय पाता है ।

यदि मौक्तिक रसायनका प्रयोग रोग प्रशमनार्थ करना हो, तो राजयक्ष्मा पीड़ितको शहद, घी, तैल या पीपल और असगन्धके चूर्णके साथ देवें । यह २० दिनमें क्षयको दूर करता है । अन्य रोगोंपर तत्तद्रोगहर अनुपानके साथ देनेसे समस्त रोग निवृत्त होते हैं ।

इसके सेवनसे वन्ध्याको पुत्रकी प्राप्ति होती है । सूतिका रोग दूर होता है । बालकोंके लिये यह रसायन अत्यन्त हितकारक, उत्तम वृष्य और आयुवर्द्धक है । स्त्रियोंके नागोदर और उपविष्टक (गर्भाशयमें गर्भ सूख जाना या चिपक जाना) को जल्दी दूर करता है । सगर्भाके सब रोगोंको दूर करके गर्भको सबल बनाता है । अनुपान वंशलोचन, मक्खन और मिश्री ।

सूचनाः—जिनको धूम्रपानका अति व्यसन बढ गया हो, उनको व्यसन छोड़ देने पर लाभ मिल सकेगा । यदि वृक्कस्थान योग्य कार्य नहीं करता या वृक्कोंमें अश्मरीकण है, तो इस रसायनसे पूरा लाभ नहीं मिल सकेगा ।

+ अदरखका स्वरस २-३ घण्टे पड़ा रहनेपर नीचे श्वेत सत्व बैठ जाता है । फिर सम्हालपूर्वक ऊपरसे पतला प्रवाही छानकर उपयोगमें लेवें ।

२४. नामर्दीनाशक तिला

विधिः—शुद्ध पारद, शुद्ध गन्धक, हरताल तपकिया, सफेद सोमल, कुचिला, वच्छनाग, सफेदकनेरकी छाल, मालकांगनी, जायफल- जावित्री, सफेद चिरमी, कौड़िया लोहबान, अकरकरा, सोंठ, दालचीनी, लौंग, बड़ी कटेलीके फल, जमालगोटा, एरण्डबीज, अजवायन, इसबन्द (हरमल), बुरादा हाथीदांत, ये २२ औषधियां ६–६ माशे, बीर बहूटी, केचुए सूखे, प्याजके बीज और मूलीके बीज १–१ तोले, शेरकी चर्बी, जंगली सूअरकी चर्बी, मुर्गीके अन्डोंकी जर्दी और चमेलीका तेल ५–५ तोले लेवें। पारद गन्धककी कज्जली कर हरताल, सोमल और वच्छनागको क्रमशः मिलावें। फिर शेष काष्ठादि औषधियोंको कूटकर चूर्ण करें। उसके साथ हाथीदांतका बुरादा, बीरबहूटी और कैचुएको खरल कर मिलावें। पश्चात् कज्जली वाला चूर्ण फिर चर्बी, तैल आदि मिला अच्छी तरह खरलकर सात कपड़ मिट्टी की हुई बड़ी बोतलमें भरें। बोतलके मुँहपर लोहेके तारकी गोली लगा देवें। जिससे औषध न गिर जाय और तैल टपककर निकल जाय। फिर पाताल यन्त्रकी विधि अनुसार मंदाग्नि देकर तैल निकाल लेवें। यदि यन्त्रमें बोतलके चार चार अंगुल ऊंचाई तक बालू भरकर ऊपर कण्डोंकी अग्नि दें, तो तिला विशेष गुणदायक बनता है। जो तैल टपके उसे चौड़े मुँहकी शीशीमें भर लेवें। इस तैलका रंग पहले लाल प्रतीत होता है। शीतल होकर जम जानेपर पीलासा हो जाता है।

उपयोगविधिः—इस तैलमेंसे एक चने जितना निकाल कर, रोज रात्रिको १५–२० मिनिट तक धीरे धीरे एक अंगुलीसे लिङ्गपर मर्दन करते रहें। सुपारी, सीवन और वृषणको तिला न लग जाय इस बातको सम्हाल लें। कदाच लग जाय तो तुरन्त कपड़े से पोंछ दूसरे गीले कपड़े से साफ कर फिर घृत या तेल लगा लेना चाहिये। मालिश कर लेनेके पश्चात् नागरबेलका पान निवाया कर सुहाता सुहाता लपेट ऊपर पतले कपड़ेकी पट्टी बांधें। फिर कच्चा डोरा लपेट लेवें। रात्रिको खुल न जाय, इस लिये डोरे अधिक लपेट देना चाहिये। दूसरे रोज सुबह पट्टी खोल देवें। दिनमें बादामका तैल या मक्खन या धोया घी लगा लेवें। पुनः रात्रिको मालिश कर पट्टी बांधें। इस तरह लेप करते रहनेसे ५–७ दिनमें छोटी छोटी फुन्सियां, फफोले या खुजली आदि उपद्रव हो जाय, तो तिला लगाना बन्द करें, तथा दिन और रात्रिको तैल लगाते रहें। २–२ दिनमें फुन्सियां दूर होनेपर पुनः तिला लगानेका प्रारम्भ करें। इस तरह २१ दिन तिला लगानेसे पूर्ण शक्ति आजाती है।

हस्तमैथुन, गुदामैथुन, पशुमैथुन या और रीतिसे मैथुन करते रहनेसे लिङ्गेन्द्रिय निर्बल, ढीली और टेढी हो जाती है। ऊपर नीली नीली शिराएं चमकती हैं। ये सभी विकार इस तिलेके प्रयोगसे दूर होते हैं। १०–२० वर्षके पुराने रोगियोंको भी इस तिलासे लाभ होगया है।

सूचनाः—इसके सेवन कालमें मन, वचन, कर्मसे ब्रह्मचर्यका पालन करें। शीतल जल अर्थात् कच्चे पानीसे बचें। यदि स्नान करना आवश्यक हो, तो इन्द्रीको बचा कर सुखोष्ण जलसे स्नान करें। सिरका, राई, काचरी, अमचूर आदिकी तीक्ष्ण खटाई एवं तीक्ष्णोष्ण मसालोंसे भी बचें। पथ्य भोजन करें।

२५. वाजीकरण गुटिका

(पिल्युला कोका कम्पोजिटा)

एक्सटे्क्ट कोका	Ext. Coca	१॥ ड्राम
,, नक्सवामिका	Ext. Nux Vom.	१ ड्राम
,, केनेबिस इण्डिका	Ext. Cannabis indica	१ ड्राम
,, डेमियाना	Ext. Damiana	४ ड्राम
कसीस (फेरी सल्फ)	Ferri Sulph.	१ ड्राम

इन सबको मिलाकर १२८ गोलियां बना लेवें। इनमेंसे प्रातः सायं १–१ तोला मिश्री मिले दूधके साथ सेवन करते रहनेसे नपुंसकता और वीर्यकी निर्बलता दूर होजाती है।

२६. महाकल्याण रस

विधिः—सुवर्णभस्म, अभ्रक भस्म, मुक्तापिष्टी और वंग भस्म १–१ तोला, चन्द्रोदय और रौप्य भस्म ६–६ माशे, शुद्ध शिलाजीत ४ तोले और शुद्ध गुग्गुलु ८ तोले लें। गूगलको घी मिलाकर कूटें। उसमें सब भस्मोंका मिश्रण मिलाकर एक जीव करें। फिर शिलाजीतको जलमें घोलकर मिलावें। पश्चात् शतावरीके क्वाथमें ३ दिन तक खरलकर १–१ रत्तीकी गोलियां बना लेवें।

मात्राः—१ से २ गोली दिनमें २ बार शतावर्यादि घृत, च्यवनप्राश अवलेह अथवा मिश्री मिले दूधके साथ।

उपयोगः—यह रस समशीतोष्ण, कामोत्तेजक, उत्तम मांसपौष्टिक, रसायन, आमनाशक, वातहर और विषहर है। प्रमेह, मदात्यय आदि रोग अथवा विषप्रकोपके हेतुसे जब मांसपेशियोंकी शक्ति नष्ट होजाती है। मस्तिष्क, हृदय और अन्य यन्त्र अपना कार्य करनेमें असमर्थ होजाते हैं तथा रस, रक्त आदि धातुओंमें विष (आमविष, रोगविष, कीटाणुविष अथवा दूषित औषधविष) लीन होजाता है, ऐसी अवस्थामें लीनविषको नष्टकर देहको सबल बनानेमें यह सफल प्रयोग है। डाक्टरी चिकित्सा कराकर हताश हुये रोगियोंको भी इस रसने जीवन दान दिया है। वृद्धावस्थामें इस रसके सेवन करनेसे बल प्राप्त होता है। इसका श्री० राजवैद्य पं० रामचन्द्रजी शर्मा ने भी विशेष अनुभव किया है।

२७. त्रैलोक्यसंमोहन रस

विधिः—घीमें भुनी हुई शुद्ध भांग १२ तोले, हिंगुल रसायन (रसतन्त्रसार प्रथम खण्ड तृतीय विधि), रससिन्दूर द्विगुण गन्धक जारित, कपूर, लौंग, अभ्रक भस्म और शंख भस्म १–१ तोला, गोखरू बड़े, दूधमें स्वेदन करके छिलके निकाले हुए कौंचके बीज, कांकड़ासिंगी २–२ तोले लें। सबको मिला भांगके क्वाथ और शतावरीके रस (या क्वाथ) के साथ ७–७ दिन तक खरलकर २–२ रत्तीकी गोलियां बना लेवें। (र० त०)

मात्राः—१ से २ गोली दिनमें १ या २ बार दूधके साथ। स्तम्भनके लिये रति समयसे १ घण्टा पहले।

उपयोगः—त्रैलोक्यसंमोहन रस रुचिकर, उत्साहवर्द्धक, कामोत्तेजक और स्तम्भक है। एवं यह दीपन, पाचन, ग्राही और कफघ्न होनेसे अर्श, श्वास, कास और क्षयमें भी हितावह है।

वीर्य पतला होगया हो और स्तम्भन शक्ति बिल्कुल नष्ट होगई हो, धड़कन, अग्निमांद्य, निस्तेज मुखमण्डल, शारीरिक कृशता और कुछ वातप्रकोपके लक्षण प्रतीत होते हैं, ऐसे रोगियोंको यह त्रैलोक्यसंमोहन रस अच्छा लाभ पहुँचा देता है। पित्त प्रधान प्रकृतिवालोंको यह नहीं देना चाहिये।

२८. गुञ्जागर्भ रस

विधिः—गोदुग्धमें दोलायन्त्रसे शुद्ध की हुई चिरमी छिल्टे और जिव्हीरहित, पिप्पली चूर्ण, रससिंदूर और रौप्य भस्म, इन सबको समभाग मिलावें। फिर सबके समान शुद्ध भांग मिला नागरवेलके पानोंके रसमें १२ घण्टे खरलकर १–१ रत्तीकी गोलियां बना लेवें।

(र० यो० सा०)

मात्राः—१–१ गोली दिनमें २ बार दूधके साथ।

उपयोगः—गुञ्जागर्भ रस वीर्यस्तम्भन, दीपन और ग्राही है। शुक्रकी निर्बलता और रुकावटकी कमी होनेपर अफीम प्रधान औषधि प्रायः दी जाती है। जिनको अफीम नहीं दे सकते, उनके लिये यह रस हितावह है। यह रस वीर्यका स्तम्भन कराता है, अग्नि प्रदीप्त कराता है और मलको बांधता है। निर्बल अन्त्रवालोंके लिये हितावह है।

२६. शक्तिवर्धक योग

विधिः—भीमसेनी कपूर, कोडिया लोहवानकी सफेद डली, अफीम और शुद्ध हिंगूल, इन सबको १०–१० तोले लेवें। खरलमें क्रमशः मिलाकर धूपमें खरल रखकर १२ घण्टे घोटे। फिर चौड़े मुँहकी शीशी या डिब्बीमें भर लेवें।

(श्री० पं० हेमराजजी)

सूचनाः—(१) औषधियाँ खरलको चिपक जाती हैं। इसलिये खूब बल लगाकर घोटें।

(२) इसकी गोलियां बनानी हों, तो पिप्पलीके चूर्णमें डालते जायं और उसमें ही रहने दें । अन्यथा गोलियां फिरसे पिघलकर परस्पर चिपक जाती हैं ।

मात्राः—मूंगके बराबर दिनमें १ या २ बार दूधके साथ ।

उपयोगः—यह औषधि उत्तम रसायन, शक्तिवर्द्धक और आनन्दप्रद है। इसके सेवनसे थोड़े ही दिनोंमें देह मूंगाके समान लाल तेजस्वी बन जाती है। वृद्धों और निर्बलोंके लिये यह योग आशीर्वादके समान है । जीर्ण अतिसार, जीर्ण प्रवाहिका, ग्रहणी आदि रोगोंमें अन्त्रकी धारण शक्तिका ह्रास हो जाता है। उनके अन्त्रको बल देता है और शारीरिक शक्ति भी बढ़ा देता है ।

वक्तव्यः—(१) जिनको कब्ज रहता हो, उनको रात्रिको न देवें । रात्रिको इसबगोलकी भूसी शक्कर मिलाकर दूधके साथ देते रहें ।

(२) मलके साथ कच्चे आम जाते हों, ऐसे रोगियोंको यह योग या अफीम प्रधान अन्य औषधि नहीं देनी चाहिये ।

३०. ज्योतिष्मती रसायन

विधिः—ज्योतिष्मती (मालकांगनी) का शुद्ध तैल, गोघृत और शुद्ध आमलासार गन्धक, तीनों समभाग मिला लेवें । फिर १ रत्तीसे प्रारम्भ करें । प्रतिदिन १ रत्ती बढ़ावें । १५ दिन बढ़ावें । फिर क्रमशः १–१ रत्ती कम करें। इस तरह १ मासतक कल्प करें । (र० र० स०)

उपयोगः—इस ज्योतिष्मती रसायनके सेवनसे मेधा (बुद्धि) की वृद्धि होती है। दृष्टि तेज होती है और यक्ष्मारोग (धातुशोष) दूर होता है । यह वात विकार वालोंको और मंद स्मरण शक्तिवालोंको विशेष लाभदायक है । उन्माद रोग, जो बार बार मंद रूपमें प्रतीत होता है, वह भी दूर हो जाता है ।

३१. मदनमञ्जरी वटी

विधिः—रससिंदूर, अभ्रक भस्म, वङ्ग भस्म, प्रवालपिष्टी, केशर, जायफल, जावित्री, लौंग, छोटी इलायचीके दाने, अकरकरा और सफेदमिर्च, ये ११ औषधियां १–१ तोला, सुवर्ण भस्म, ६ माशे, कपूर ६ माशे, कस्तूरी और अम्बर १॥–१॥ माशे लेवें । केशर, कस्तूरी, अम्बर और कपूर, इन ४ औषधियोंको छोड़कर शेष औषधियोंको मिला ३ दिन तक नागरबेलके पानके रसमें खरल करें । चौथे दिन केशर आदि मिला ३ घण्टे खरलकर १–१ रत्तीकी गोलियां बनालें ।

मात्राः—१ से २ गोली दिनमें २ बार मिश्री मिले दूधके साथ ।

उपयोगः—यह मदनमञ्जरी वटी कामोत्तेजक, वीर्यवर्द्धक और बल्य है। नवयुवकोंके लिये हितकारक है। इसके सेवनसे वीर्य की वृद्धि होकर वह गाढा और शुद्ध बनजाता है। शीतकालमें इसका सेवन करनेपर सत्वर लाभ मिलता है। इसमें अफीम न होनेसे यह बिल्कुल निर्भय औषधि है ।

३२. अमृतभल्लातक

विधिः—वृक्षसे पककर गिरे हुये जलमें डूबे वैसे अच्छे भिलावे ४ सेरको ईंटों पर घिसकर जलसे धो डालें। फिर उनको तोड़कर २-२ टुकड़ेकर, १६ सेर जलमें मिलाकर चतुर्थांश क्वाथ करें। फिर नीचे उतारकर छान लेवें (नीचे उतारने और छाननेके समय क्वाथकी वाष्प न लग जाय, यह सम्हालें। मुखमण्डल और हाथपर तैल लगाकर छानें) पश्चात् जलमें ८ सेर दूध मिलाकर उबालें और कलछेसे बराबर चलाते रहें। दूध ४ सेर मात्र शेष रहनेपर २ सेर घी मिला पकाकर गाढा खोवा बनावें। फिर २ सेर शक्करकी चाशनीमें मिला लें। सोंठ, कालीमिर्च, पीपल, हरड़, बहेड़ा, आंवला, कपूर, जटामांसी, निशोथ, वंशलोचन, खैरसार (कत्था), श्वेतचन्दन, अकरकरा, पीपल (दूसरी बार), शीतलमिर्च, लौंग, सफेद मूसली, काली मूसली, शीतलमिर्च (दूसरी बार), मोचरस, अजवायन, अजमोद, गजपीपल, विदारीकंद, जायफल, नागरमोथा, जावित्री, नन्दी वृक्षकी छाल, जीरा, समुद्रशोष, मेदा, महामेदा, मल्ल-मारित लोह भस्म, रससिन्दूर, वंगभस्म, हरताल मारित और केशर, ये ३६ औषधियाँ १-१ तोला लें। काष्ठादि औषधियोंका कपड़छान चूर्ण और रस, भस्मोंको मिलाकर पाक बना लेवें। इसे ७ दिन तक रख देनेसे अमृतके सदृश गुणवाला बन जाता है।

(र० यो० सा०)

मात्राः—१-१ तोला सुबह-रात्रिको दिनमें २ बार लेवें।

उपयोगः—इस अमृतभल्लातकके सेवन करनेसे रोगी विद्वान्, सिंहके सदृश बलवान, मजबूत इन्द्रियोंवाला और बुद्धिमान होता है। इसके सेवनसे देह सुवर्ण सदृश तेजस्वी बनता है। हिलते हुए दांत दृढ़ होते हैं। पके हुए बाल पुनः काजल और भौंरेके समान काले हो जाते हैं। त्वचा मुरझायी हो, वह सबल हो जाती है। वृद्ध मनुष्य भी तरुण सदृश बन जाता है और सौ वर्ष तक जीता है।

अमृतभल्लातक वातरोग, श्वासरोग, कुष्ट, वातरक्त, अर्श और फिरंग-पूयमेह आदि रोगोंके उपद्रवोंसे पीड़ित तथा वशांगत व्याधिवालोंको कफ और वातप्रधान रोगमें दिया जाता है। शुन्य कुष्ठ होनेपर सुई चुभोने या अग्निसे तपानेपर भी दुःखका असर नहीं होता। गलत् कुष्ट होनेपर अंगुलियोंके पर्व टूट जाते हैं फिर उनमेंसे रसस्राव होता रहता है। मुँह फूलकर विचित्र मालूम पड़ता है। रोग बढ़नेपर नाक, कान गल जाते हैं और किसी किसीकी देहमें कीड़े पड़ जाते हैं। इस रोगकी सर्वावस्थामें रोग निवारण और बल वृद्धिके लिये यह पाक दिया जाता है। पथ्यपालनसह १-२ मास तक सेवन करानेपर रोग निवृत्त हो जाता है।

कफ प्रधान श्वासरोग जीर्ण होनेपर श्वसनयन्त्र बिल्कुल शिथिल हो जाता है। श्वासप्रणालिकाएं और फुफ्फुसस्थ वायुकोषोंमें कफ भर जाता है। कुछ उत्तेजक कफघ्न औषधि लेने या धूम्रपान करनेपर कफ निकलकर छाती हलकी हो जाती है। किन्तु

मूत्रपानसे पुनः नया कफ उत्पन्न हो जाता है। फुफ्फुस दिनपर दिन अधिक निर्बल बनता जाता है। उन रोगीयोंको इस पाकका सेवन पथ्य पालनसह शीतकालमें कराने पर फुफ्फुसयन्त्र और हृदय सबल बन जाते हैं। कफोत्पत्तिका ह्रास होता है और शारीरिक बलकी वृद्धि होती है।

सूचनाः—इस रसायनके सेवन समय ग्रन्थकारने कोई पथ्यापथ्य नहीं बतलाया फिर भी सेवन करनेवालोंको चाहिये कि मिर्च और नमक हो सके उतना कम करें। तेज खटाई, राई, अति गरम गरम पदार्थ, सूर्यका ताप, अग्निका सेवन और स्त्रीसमागमका त्याग करना चाहिये। घी, तैल, तैली द्रव्य—बादाम, पिस्ता, काजू, चिरौंजी आदि हितावह हैं। दूधकी अपेक्षा दही अधिक अनुकूल रहता है।

३३. श्रीगोपाल तैल

द्रवः—शतावर पेठा और आंवलों का स्वरस ८-८ सेर लें। असगन्ध, पियाबांसा और खरैंटी, तीनोंको ६।-६। सेर लेकर ३२-३२ सेर जलमें मिलाकर पृथक्-पृथक् चतुर्थांश क्वाथ करें। बृहद् पञ्चमूल (बेल, अरलु, गम्भारी, पाढल और अरणीकी छाल), बड़ी कटेलीकी जड़, मूर्वाका मूल, केवड़ेका मूल, कांटेदार करंजकी छाल और पारिभद्र (फरहद) की छाल ये १० औषधियां ५-५ तोले को ३२ सेर जलमें मिलाकर चतुर्थांश क्वाथ करें।

कल्क—असगन्ध, चोरपुष्पी (चोरहुली), पद्माक, कटेली, खरैंटी, अगर, नागरमोथा, पूति (खराशी), शिलारस, अगर, सफेदचन्दन, लालचन्दन, हरड़, बहेड़ा, आंवला, मूर्वामूल, जीवक, ऋषभक, काकोली, क्षीरकाकोली, मेदा, महामेदा, मुद्गपर्णी, मासपर्णी, जीवन्ती, मुलहठी, सोंठ, कालीमिर्च, पीपल, पूति (खटाशी—अरबीमें जवाद कहते हैं), केशर, कस्तूरी, दालचीनी, इलायची, तेजपात, नागकेशर, अर्दाली, नखी, नागरमोथा, कमलकीनाल, नीलोत्पल, खस, जटामांसी, मुरामांसी, देवदारु, बच, अनारकीछाल, धनिया, ऋद्धि, वृद्धि, दमनक (दौना) और छोटी इलायचीके दाने, ये ५२ औषधियां २॥-२॥ तोले मिलाकर कल्क करें।

वक्तव्यः—केशर, कस्तूरीको गुलाबजलमें घोटकर अलग रखें। इनको कल्क तैल तैयार होनेपर मिलाकर अमृतबानको कुछ दिनों तक बन्द रखना चाहिये।

विधिः—उपर्युक्त ७ प्रकारके द्रव, कल्क और तिलका तैल ८ सेर को कलई लगी हुई कढ़ाहीमें मिलाकर यथाविधि मंदाग्निसे पाक करें। [illegible] कर तुरन्त तैलको छान लेवें।

उपयोगः—इस

रूपसे होता है। इसके

स्मरण शक्ति, विचारशक्ति,

वातरोग और विशेषतः

करानेवाला है। एवं यह शूल, मूत्रकृच्छ्र, अपस्मार और उन्माद आदि रोगोंको दूर करता है। इस तैलके सेवनसे जराजीर्ण वृद्ध पुरुष भी उन्मत १०० स्त्रियोंसे सहम रमण कर सकता है। जिस स्थानमें इस तैलका प्रयोग होता है, वहांपर भूत, पिशाच या राक्षसोंका प्रवेश (कीटाणुजनित रोगोंकी संप्राप्ति) नहीं हो सकेगी। इस तैलका सतत सेवन करते रहनेसे धातु क्षय नहीं होता और न स्वास्थ्यमें कोई विघ्न ही आता। इस तैलका उपयोग तिला रूपसे भी होता है। इसकी २-४ बूंदकी मालिश नियमित करनेसे नपुंसकता भी दूर हो जाती है।



रोगानुसार औषध सूची

४. अपस्मार—मृगी—Epilepsy

५. अम्लपित्त Hyperacidity.

पित्तप्रकोप—शुक्ति पिष्टी १७ और सुवर्णमाक्षिक भस्म। प्रवाल भस्म १७। पद्मा भस्म २०। कामचार मण्डूर ११८। नारिकेल लवण २७२। धात्री लोह २७३। पञ्चसार रस २८०। श्वेतपर्पटी २८५। सुधानिधि रस ३६६। पित्तान्तक रस ३६६। महातिक्तक घृत ३८१। सारिवादि हिम ३८३। वृहन्नारिकेल खण्ड ४००। रसामृत रस १००।

शूलसह अम्लपित्त—पानीयभक्त वटी ४००।

आमाशय वृद्धिज—नागभस्म १३।

ग्रहणीसह अम्लपित्त—अष्टामृत पर्पटी ११७।

वमनार्थ—वमनेश्वर रस २४।

वमन शमनार्थ—पारदादि चूर्ण २२२। वृहत् पिप्पली खण्ड ४०१।

अपचन—शंख भस्म १८। प्रवाल भस्म १७।

अधो अम्लपित्त—पानीयभक्त वटी ४००।

६. अरुचि Anorexia

पित्तज—शुक्ति पिष्टी १७। द्राक्षादि गुटिका १३२। रोचक गुटिका १३३।

अपचनजन्य—बिडलवणादि वटी १३१। जम्बीर लवण वटी १३१। दीपनपाचन चूर्ण १३३। चव्यादि चूर्ण २२०। स्वादिष्ट छुहारे १४३।

धातुक्षयज—सुवर्णवङ्ग १।

गर्भावस्थामें अरुचि—द्राक्षादि गुटिका १३२। शुक्ति पिष्टी १७। स्वादिष्ट छुहारे १४३।

७. अर्श—Hemorrhoids.

रक्तार्श—शूल शमनार्थ-रौप्य भस्म ५। भल्लातकप्रधान गन्धक रसायन। प्रवाल भस्म १७। बावली घूटी १२०। अर्शोहरभस्म १२०। अर्शोहर गुटिका १२०। शोणितार्गल रस ४४१।

पित्तार्श—प्रवाल भस्म १७।

जीर्ण रक्तार्श—लोह भस्म ६। लोहादि मोदक १२०। अर्शोहर योग १२२। योगराज रस १६७। मेहमुद्गर रस २१५। शारिवादि लोह ३११। महातिक्तक घृत ३८१। माणिभद्र योग ३११।

जीर्णशुष्कार्श—नवग्रह रस २३७। रसोन सुरा २५६। सामुद्राद्य चूर्ण (उदर) ३२०।

अर्श—शोथ—शोथहर गुटिका ३५४।

बाह्य लेप—अर्शोहर लेप १२१। सोराद्रावक १४७। वेदना होती हो तो पतारि मलहम ३४३। उपदंशदावानल रस ३६२। कृष्णा विषहरण ४६७।

मलावरोध—गुडादि मोदक २१। अर्शोहर वटी तीसरी विधि १२०। रिष्ट १२२।

मानस आघातज—बृहत् कस्तूरी भैरव रस ४७ ।

गांजाजनित—उन्माद गजांकुश २२६ । अपस्मारहर योग तीसरा २३० ।

निद्रा लानेको—चन्द्रहास अर्क २३२ । चन्द्रावलेह २३३ । रक्तदबाववृद्धि-वालोंको–सर्पगन्धाचूर्ण योग २३३ । विजया वटी २३४ । चण्डासव २३४ ।

नस्यार्थ—शंखकीटादि नस्य २३० । ब्राह्मी तैल २३१ ।

शिरोवस्ति और मालिशार्थ—ब्राह्मी तैल २३१ । श्रीगोपाल तैल ४१७ ।

१४. उरस्तोय—Pleurisy

अष्टामृत भस्म २३ । बृहच्छृंगाराभ्र १७१ । भार्ङ्यादि क्वाथ १८५ । निर्गुण्डी तैल ३३७ ।

शूलहोनेपरमालिशार्थ–वातशूलान्तक मलहम २६५ । वातान्तक बाम २६६ ।

जलसंग्रह होने पर—पुनर्नवाष्टक कषाय ३२४ ।

१५. ऊरुस्तम्भ—Paraplegia

रसोन पिण्ड २४८ । गुन्जाभद्र रस २४१ ।

१६. कर्णरोग

कर्णस्राव—वङ्ग भस्म १० । नारायण रस ३५७ । कर्णरोगहर रस ४१६ । निर्गुण्डी तैल ३३७ । कृष्ण विषहरण ४६७ । पारद चूर्ण २२२ । निशातैल ४१६ । कुम्भी तैल ४१६ । कर्णपाकहर योग ४१६ । कर्ण बिन्दु ४१८ । अहिफेन बिन्दु ४१८ । सूची बिन्दु ४१८ ।

कर्णार्श—शोथहर गुटिका ३५४ ।

१७. कामला—Jaundice

संशोधन वटी ३१ । विषमज्वरान्तक लोह ५७ । विमर्दित, सोरा-लवण द्रावक १५० । योगराज रस १६७ । धात्री लोह २७३ । मेहमुद्गर रस २६५ । कामलाहर रस १६८ ।

यकृद्वलवृद्धिके लिये—बृहत् सुवर्णमालिनी ६७ ।

पित्ताशय शूल—बृहत् सुवर्णमालिनी ६७ ।

१८. कास—Bronchitis

वातिक कास (शुष्क)—रौप्य भस्म ५ । नाग भस्म १३ । श्वासहारी १८८ । कासविजय चूर्ण १८३ । शर्वत जूफा १८४ । भार्ङ्यादि क्वाथ १८५ । अमृतार्णव रस ३४ ।

पैत्तिक कास (शुष्क)—सुवर्ण भस्म ३ । प्रवाल भस्म १७ । कास विजय-चूर्ण १८३ । शर्वत जूफा १८४ । गन्धक कज्जली योग २१२ । श्वासहारी १८८ ।

फुफ्फुसोंकी निर्बलता—अभ्रक भस्म ७ । बृहच्छृंगाराभ्र १७१ । श्वासहारी १८८ ।

शुष्क ह्रासज कास—(शुष्क) वङ्ग भस्म १० और प्रवाल पिष्टी ।

कफकास—अभ्रक भस्म ७ । मल्लचंद्र भस्म ११ । मनःशिला भस्म २० । स्वच्छन्द भैरव (ज्वर) ६९ । अतिसारसह-अग्निमुख रस १२४ । विमर्दित सोरा लवण-द्रावक १९० । नागवल्लभ रस १७२ । नाग रसायन १७५ । बृहच्छृंगाराभ्र १७१ । कफान्तक रस १८१ । पीत श्वास कुठार १८८ । सोमशृंग्यादि चूर्ण १६२ । श्वासान्तक चूर्ण १६२ । श्वास कासान्तक चूर्ण १६७ । अर्कमूलत्वगादि चूर्ण १८३ । कास-केसरी १८० । रसराज द्वितीय विधि २०२ । अर्क आयोडीन ३४१ । कफनाशक-क्वाथ १८४ । द्राक्षादि गुटिका १३२ । मंधुयष्ट्यादि गुटिका १८२ ।

कफस्रावार्थ—कफकेसरी १७८ । कफकुञ्जर १७८ । कफनाशक क्वाथ १८४ । श्वासान्तक चूर्ण १८३ । अर्कलवंगादि वटी १८२ । दुर्गन्धयुक्त कफ होनेपर-रसायन विन्दु २१५ । क्षयज कासमें बृहच्छृंगाराभ्र १७१ या हेमाभ्रसिन्दूर १९८ । संजीवनार्क १५१ । श्वासारि लवण १६६ ।

उरःक्षतज रक्त कास—प्रवाल भस्म १७ और अमृतप्राश घृत २११ । कफ-विक होनेपर हेमाभ्र सिन्दूर १९८ । वासकासव १९४ । कुर्स कहरुवा २१४ । एलादि-मन्थ २१३ । नागशर्करा २१६ ।

प्रतिश्यायज कास—अष्टामृत भस्म २३ । सुवर्ण ग्रहणीगजकेसरी १०० । कफकेतु रस १७५ । कफकुञ्जर १७८ । मरिचादि कषाय १६३ ।

वमनार्थ—वमनेश्वर रस २४ ।

विरेचनार्थ—हरीतकी वटी ३३ ।

ज्वरसह कफकास—नागवल्लभ रस १७२ । अर्क मूलत्वगादि चूर्ण १८३ । क्षयकेसरी २०२ । कफनाशक क्वाथ १८४ । श्वासारि लवण १६६ ।

निमोनियाके अन्तमें कास—बृहच्छृंगाराभ्र १७१ । नागवल्लभ रस १७२ ।

१६. कुष्ठ

पैत्तिक कुष्ठ—लोह भस्म ६ । महा तिक्तक घृत ३८१ । महाखदिरादि घृत १८२ । महा सिन्दूराद्य तैल ३८८ । माणिभद्र योग ३९१ ।

वात कफज कुष्ठ—ताल भस्म १६ । गुग्गुलु पञ्चतिक्तक घृत ३३२ । षण्मा भल्लातक मोदक २८९ । भल्लातकासव २९६ ।

वमनार्थ—वमनेश्वर रस २४ ।

विरेचनार्थ—रसमीश रस २१ । गुडादि मोदक २१ । हरीतकी वटी ३३ ।

उदरविकृतिजन्य कुष्ठ—बकुचारिष्ट ३११ । मधूकासव ३२७ । रसोन २५८ । त्रिदल रसायन ३५१ ।

विचर्चिका (Weeping Eczema)—अर्क आयोडीन ३९१। बृहन्मरिचादि तैल ३८७। महासिन्दूराद्य तैल ३८८। टार मलहम ३१४।

उदरसेवनार्थ—नारायण रस ३४७। भल्लातक अवलेह ३७१। पथ्याभल्लातक मोदक ३८५। बाकुची योग ३८९। बृहद् हरिद्राखण्ड ३१७। अमृत भल्लातक पाक ३१६ (लगानेके लिये पथ्य चूर्ण-नींबू रस या गोमूत्रके साथ)

शुष्क दद्रु (Tokelau Ringworm)—पथ्याभल्लातक मोदक ३८५। अर्क आयोडीन ३९१।

हस्तिचर्म (Hypertrophy of the skin)—श्वेत करवीराद्य तैल ३८७। बृहन्मरिचादि तैल ३८७।

एक कुष्ठ (Ichthyosis)—विपादिकाहर मलहम ३१०। टार मलहम ३१४।

श्वेत कुष्ठ (Leucoderma)—वीर चण्डेश्वर ३७४। बाकुच्यादि चूर्ण ३७७। श्वित्रारि योग ३७८। श्वित्रारि रस ३७९। कृष्णाविषहरण ४९७।

दद्रु (Ringworm)—पीतधावन ३५५। बृहन्मरिचादि तैल ३८७। दद्रुहर लेप ३८१। करञ्जतैलादि मलहम ३८६। दद्रुहर अर्क ३९३। पीत मलहम ३१४। दद्रुगज केसरी ३१४।

चर्मदल (Erythema Nodosum)—श्वेत करवीराद्य तैल ३८७। चर्मदलारि तैल ३८८।

विस्फोटक (Pemphigus)—बृहन्मरिचादि तैल ३८७। करंजतैलादि मलहम ३८६। तारकेश्वर रस २८५।

२०. कृमि—Worms

सूक्ष्मकृमि—अजीर्णान्तक वटी १२६। कृमिघ्न चूर्ण १५३। कृमिकण्टक रस १५४। मुस्तादि योग १५४। कृमिघ्न योग १५५। गन्धक कज्जली योग २१२। कारस्करादि गुटिका २४५। रसोन सुरा २५६। विडङ्गारिष्ट ३३४। भल्लातकादि क्षार १५५। नलवंध ६२।

गोलकृमि—कृमिकण्टक रस १५४।

रक्तशोधनार्थ—विडङ्ग तण्डुल रसायन ३११।

विरेचनार्थ—रुग्मीश रस २६। हरीतकी वटी ३३। माजून पम्मदी ३२। न्स्यरिष्ट १२२।

२१. गलगण्ड—गण्डमाल

गलगण्ड (Goitre)—बृहत् सुवर्ण मालिनी ६७। गलगण्डहर लेप ३११।

धातुपोषणार्थ—नागभस्म १२।

गण्डमाल (Scrofula)—गण्डमालाहर योग ३२१। गण्डमालाहर अर्क ३३०। गुग्गुलु-पञ्चतिक्तक घृत ३२२। नारायण रस ३५०। उपदंश कालानल रस ३६२। महातिक्तक घृत ३८१।

लगानेके लिये—गण्डमालान्तक लेप ३३१ । अपचीहर मलहम ३३१ । आयोडिन मलहम ३३२ । तुवरक तैल योग ३८३ ।

२२. गुल्म

वातगुल्म—विषमज्वरान्तक लोह ४७ । अग्निमुख रस १२४ । भीमवटी १२७ । पिप्पल्याद्यासव १३६ । रसोन सुरा २५६ । वचादि चूर्ण २७७ । सामुद्राद्य चूर्ण ३२० । वड़वानल क्षार ३२१ ।

पित्तगुल्म—नागभस्म १३ । शुक्ति पिष्टी १७ । शंख भस्म १८ । गुल्महर रस २७६ ।

कफगुल्म—पिप्पल्याद्यासव १३६ । नारिकेल लवण २७२ । सामुद्राद्य चूर्ण ३२० ।

त्रिदोषज गुल्म—नारिकेल लवण २७२ । अभयादि वटी २७६ । वचादि चूर्ण २७७ । दन्ती हरीतकी २७७ ।

विरेचनार्थ—नाराच रस ३१६ । अभयादिवटी २७६ । दन्ती हरीतकी २७७ ।

रक्तगुल्म—पञ्चानन रस २७७ । दन्त्यादि गुटिका २७८ ।

२३. ग्रहणी

आमग्रहणी—पीयूषवल्ली रस १०८ । ग्रहणी गजकेसरी १०२ । स्वच्छन्द भैरव ज्वर ६४ । पिप्पल्याद्यासव १३६ । मधूकासव १३७ । आर्द्रक खण्ड ३९७ । सामुद्राद्य चूर्ण ३२० ।

कोष्ठशूल—एरण्ड पाक २५१ । ग्रहणीशार्दुल ११६ ।

विरेचनार्थ—गुड़ादि मोदक २९ ।

जीर्णरोगमें उदरपीड़ा—बृहच्छतपुष्पादि चूर्ण ९६ । सुवर्ण ग्रहणीगजकेसरी १०० । ग्रहणी हर योग ११८ । अजीर्णान्तक वटी १३९ । एरण्ड पाक २५१ ।

वातप्रकोपज ग्रहणी—एरण्ड पाक २५१ । ग्रहणी शार्दुल ११६ । सामुद्राद्य चूर्ण ३२० ।

पित्तप्रकोपज ग्रहणी—शंख भस्म १८ । राजवल्लभ रस ११२ । लवङ्ग-द्रावक ११७ । सुवर्ण सर्वाङ्ग सुन्दर २०९ । ज्वरसह होनेपर सुवर्णग्रहणीगज केसरी १०० । एरण्ड पाक २५१ ।

कफजग्रहणी—स्वच्छन्द भैरव ६४ । अग्निसुत रस १२९ ।

आमवातज ग्रहणी—ग्रहणी वज्र कपाट १०७ । राजवल्लभ ११३ ।

मानस आघातज ग्रहणी—ग्रहणी वज्रकपाट १०७ । सुवर्ण ग्रहणी गज केसरी १०० ।

पुनरावर्तक ज्वर—बृहत्कस्तूरी भैरव ५० ।

सन्निपातमें कफप्रकोप—मल्लसिन्दूर १ । ताल भस्म १६ । मनःशिला-
मस्म २० । बेहोसी हो तो-पञ्चामृत भस्म २२ या मल्लपुष्प २४ । कालाग्नि भैरव ६१ ।
कफकेतु १७५ ।

सन्निपातमें वात प्रकोप—बृहत् कस्तूरी भैरव ४७ । हिंगूकर्पूर वटी ६० ।
कालाग्नि भैरव ६१ । सान्निपातिक क्वाथ ८२ । बृहद्वात चिन्तामणि २२७ । बृहद् ब्राह्मी-
वटी २४० ।

सन्निपातमें तन्द्रा—स्वच्छन्द भैरव ६५ । बृहत्कस्तूरी भैरव ४७ ।

सन्निपातमें शक्तिपात—बृहत्कस्तूरी भैरव ४७ । जवाहर मोहरा २८१ ।
याकूती २८२ । हेमाभ्र सिन्दूर १६८ ।

बेहोसी दूर करनेको—संज्ञाप्रबोध प्रधमन ८१ । मृगमदासव ८४ । पञ्चामृत
भस्म २२ ।

सन्निपातमें शीतांग—मृत संजीवनी सुरा ८३ । मृगमदासव ८४ । चतुर्भुज
रस २२७ । पञ्चामृत भस्म २२ । कालाग्नि भैरव ६१ ।

निमोनिया—मल्लसिन्दूर १ । अभ्रक भस्म ७ । मल्लशंख भस्म १६ । हिंगुकर्पूर
वटी ६० । निमोनिया प्रकाश ६३ । मृगमदासव ८४ । एण्टिफ्लोजिस्टीन १० ।
कफनाशक क्वाथ १८४ । कालाग्नि भैरव ६१ ।

प्रलापक सन्निपात—बृहत्कस्तूरी भैरव ४७ । केशरादि वटी वटी ६२ । कृष्ण-
विषहरण ४६७ ।

इन्फ्लुएन्जा—वातश्लैष्मिक ज्वरमें देखें ।

मस्तिष्कावरणप्रदाह—पारदवटी ३० । चन्द्रशेखर रस ४६ ।

ग्रन्थिज्वर (प्लेग)—ग्रन्थिज्वरहर गुटिका ७८ । मलावरोध हो तो पहले
विषतापहरण २५ । कृष्णविषहरण ४६७ । कालाग्नि भैरव ६१ ।

बिगड़ा हुआ सन्निपात—मलावरोध रहता हो तो-सुवर्ण चिन्तामणि २१ ।
पतले दस्त होते हों तो बृहत्कस्तूरी भैरव ४७ ।

जीर्ण ज्वर—तुत्थखर्पर १७ । नलबन्ध ६२ । बनफ्शादि शर्बत २१८ । शाही
चूर्ण २१८ । स्फटिका शतमल्ल भस्म १८ । मल्लपुष्प २४ । शोधनार्थ-संशोधन वटी
३१ । बृहत्कस्तूरी भैरव ४७ । विषमज्वरान्तक लोह २७ । सर्वज्वरहर लोह ६५ । गन्धक
कज्जली योग २१२ । बृहत्सुवर्णमालिनी ६७ । जीर्ण ज्वरान्तक चूर्ण २२ । अपूर्व
मालिनी वसंत ७३ । पञ्चतिक्त कषाय ८२ । मधुकादि कषाय ८४ । गजानन्द वटी ८५ ।
भीम वटी १२७ । सर्वतोभद्र रस १२८ । अग्निसूत १२६ । वज्रवटी १४१ । नाराच-
मण्डूर १६० । अभ्रकल्प १६८ । हेमाभ्रसिन्दूर १६८ । जयकेसरी रस २०२ । सुवर्ण
सर्वांग सुन्दर २०६ । गुडूच्यादि रसायन २१० । अमृतप्राश घृत २११ ।

अरुचि और मलावरोध होनेपर—द्राक्षादि चाटण १३८। पथ्यादि क्वाथ ४३३।

मालिशार्थ—प्रमेह मिहिर तैल ३०२।

२६. ज्वरातिसार

नूतन—बृहत्कस्तूरी भैरव ४७। प्राणेश्वर रस ९३।

शूल और रक्तातिसार सह—गगन सुन्दर ६३।

कृमिज—कृमिकण्टक रस १५४।

जीर्ण—प्राणेश्वर रस ६३। रत्नविजय पर्पटी ११५। अष्टामृत पर्पटी ११७।

२७. त्वचारोग

विरेचनार्थ—गुड़ादि मोदक २६।

बाहर लगानेके लिये—गन्धक द्रावक ८८।

जीर्ण विकार—सुवर्ण वङ्ग १। वङ्ग भस्म १०। शारिवादिलोह ३११।

फिरंगज—सोरा द्रावक १४७। उद्वर्तन ३६५। मल्ल पुष्प २४।

पित्त प्रकोपज—आर्द्रक खण्ड ३६७।

कृमिज कण्डू—अर्क आयोडीन ३५१। पीत धावन ३५५। गन्धकका मलहम ३६३। बृहन्मरिचादि तैल ३८७। महा सिन्दूराद्य तैल ३८८। पारदादि चूर्ण ३८६। गुलाबी मलहम ३८६। करंज तैलादि मलहम ३८६। कण्डू नाशक योग ३६२। कण्डू नाशक तैल ३६२। उद्वर्तन ३६५। गन्धकका मलहम ३६३। कृष्ण विष हरण ४६७।

उदर सेवनार्थ—मुस्तादि योग १५४। भगंदर नाशक योग (नं० २) ३५८। सदयन्त्यादि चूर्ण ३८३। शारिवादि लोह ३११। बाकुची योग ३८५। कृष्ण विष हरण ४६७। बृहद् हरिद्राखण्ड ३६७। हरिद्राखण्ड ३६८।

दद्रु—कुष्ठरोगमें देखें।

२८. तृषा रोग

बढी हुई तृषा (Polydipsia)—लाज मण्ड २२३। रसादिवटी २२४।

मधुमेहज तृषा वृद्धि—मधुमेहदर्पहारी २६५।

अनावश्यक तृषा (Dipsosis)—अमृतप्राशघृत २११।

२९. दाह

छातीमें अम्लपित्तज दाह (Pyrosis)—सोरा द्रावक १४७। रसादि वटी २२४। चन्द्रप्रभा चूर्ण २२४। सुधाकर रस २२३।

दाहक भोजनसे दाह—चन्द्रप्रभा चूर्ण २२४। खर्जूरादि चूर्ण २२४।

मद्यज दाह—सुधाकर रस २२३। कज्जली रस २२५।

वातरक्तज दाह—सुधाकर रस २२३।

विष प्रकोपज दाह—प्रवाल भस्म १७। शुक्ति पिष्ठी १७। सुधाकर रस २२३। गुडूच्यादि क्वाथ २२५।

हाथ पैरोंमें दाह—प्रवाल भस्म १७ ।

वृक्कोंमें दाह—रौप्य भस्म ५ ।

३०. नपुंसकता

शारीरिक निर्बलताजनित—सुवर्ण भस्म ३ । कुक्कुटाण्डत्वक् भस्म १६ । अमेहमिहिरतैल ३०२ । कामदेव मोदक ४७३ । मदनकान्ता गुटिका ४७४ । चन्द्रोदय-वटी ४७७ । नवजीवन रस ४७८ । रसेन्द्र चूडामणि ४७६ । विदार्यादि चूर्ण ४८५ । अग्नि वर्द्धक गुटिका ४८० । मदनमंजरीवटी ४६५ । अमृतभल्लातक पाक ४६६ । काम चूडामणि ४८१ । श्वासकासान्तक चूर्ण १६७ । शक्तिसंजीवनलेह ४८८ ।

शीघ्रपतन—प्रमेहान्तक योग ७ वीं विधि ३०० । वङ्गादिचूर्ण ४७६ । रसेन्द्र चूडामणि ४७६ । कामचूडामणि ४८१ । रतिवल्लभचूर्ण ४८४ । शतावरी-घृत ४८६ । त्रैलोक्यसंमोहन रस ४६४ । गुञ्जागर्भ रस ४६४ ।

मानसआघातज—अभ्रक भस्म ७ । बृहच्छृंगाराभ्र १७६ । चन्द्रोदयवटी ४७७ । उष्ण प्रकृतिवालोंको कामचूडामणि ४८१ । धात्री रसायन ४८६ ।

स्वप्नदोष—(Nocturnal Emissions)—वङ्गभस्म १८ । मधुमेहीको नाग भस्म १३ या त्रिवङ्ग भस्म २१ । वङ्गादि चूर्ण ४७६ । शिलाजत्वादि वटी २१७ । बृहच्छतावर्यादि चूर्ण ३०० ।

शुक्रक्षयज—बृहद् वातचिन्तामणि २६६ । कामदेव मोदक ४७३ । काम-चूडामणि ४८१ । अश्वगन्धादि चूर्ण ४८५ । चन्द्रोदय वटी ४७७ । मुसली पाक ४८५ । रतिवल्लभपूगपाक ४८६ । कन्दर्प सुन्दर तैल ४८७ । शक्तिसंजीवनलेह ४८८ । धात्री रसायन ४८६ । वाजीकरण गुटिका ४६३ । महाकल्याण रस ४६३ । त्रैलोक्यसंमोहन रस ४६४ । गुञ्जागर्भ रस ४६४ । याकूती २८२ ।

पूयमेहज—सुवर्ण वङ्ग १ । रौप्य भस्म ५ ।

प्रदरजनित—सुवर्ण वङ्ग १ । चन्द्रोदयवटी ४७७ ।

फिरंगज—रौप्य भस्म ५ । उपदंशदावानल ३६२ ।

हस्तमैथुनसे नपुंसकता—चन्द्रोदयवटी ४७७ । नवजीवन रस ४७८ । रसेन्द्र चूडामणि ४७६ । कामचूडामणि ४८१ । वाजीकरण गुटिका ४६३ ।

वाह्यप्रयोग—नामर्दिनाशक तिला ४६२ । श्रीगोपाल तैल ४६७ ।

३१. नासारोग

प्रतिश्याय—प्रतिश्यायहर वटिका ४१६ । प्रतिश्यायनाशक अवलेह ४१६ । शिवा गुटिका ४१६ ।

रक्तस्राव—प्रवाल भस्म १७ । शुक्ति पिष्टी १७ । एलादिमन्थ २१३ । चन्द्रप्रभा चूर्ण २२४ ।

३२. निद्रानाश—Insomnia

३३. निर्बलता

स्तन्यदानसे निर्बलताः—प्रवाल भस्म १७ । एलादि मन्थ २१३ ।

अधिक संतान होनेसे निर्बलता—एलादि मन्थ २१३ । मौक्तिक रसायन ४११ । काम चूडामणि ४८१ । ब्राह्मी चूर्ण २१८ ।

जीर्ण काससेः—बृहच्छृंगाराभ्र १७६ । अमृतप्राश घृत २११ । मुसलीपाक ४८५ ।

विद्याध्ययनजः—चतुर्मुख रस २२७ । मुसली पाक ४८५ । मौक्तिक रसायन ४११ । कामचूडामणि ४८१ ।

वृद्धावस्थामें निर्बलताः—रसराज रस २३५ । बृहद्वातचिन्तामणि २३७ । ब्राह्म्य रसायन ४७० । आमलकी रसायन ४७२ । रसेन्द्र चूडामणि ४७६ । मुसली पाक ४८५ । रतिवल्लभ पुगपाक ४८६ । अहिफेन पाक ४८७ ।

रक्तद्रावकका ह्रासः—रसराज रस २३५ । चन्द्रोदय वटी ४७७ । अभ्रक भस्म ७ । बृहत् सुवर्णमालिनी वसंत ६७ ।

गांजा शराबसे निर्बलताः—काम चूडामणि ४८१ । रसेन्द्र चूडामणि ४७६ । मौक्तिक रसायन ४११ । धात्री रसायन ४८६ ।

मानसिक निर्बलताः—याकूती २८२ । अभ्रक भस्म ७ । बृहत् सुवर्णमालिनी वसंत ६७ ।

मर्दनार्थः—प्रमेहमिहिर तैल ३०२ ।

चक्कर आनाः—सिद्धामृत रस ४३३ । मस्तिष्क बलवर्द्धकचूर्ण ४३५ । हरीतक्यादि चाटण ४१९ । अयारिज फैंकरा ४३८ ।

३४. नेत्ररोग

वातप्रकोपजः—रौप्य भस्म ५ । रजतादि लोह २०६ । सप्तामृत लोह ४२१ ।

पित्तप्रकोपजः—सुवर्ण भस्म ३ । सप्तामृत लोह ४२१ ।

दृष्टिमान्द्यः—रजतादि लोह २०६ । धात्री लोह २७३ । सप्तामृत लोह ४२१ । धान्यकावलेह ४२७ । मौक्तिक रसायन ४११ । ज्योतिष्मति रसायन ४६५ । धात्री रसायन २७३ ।

अञ्जनार्थः—काजल ४२३ । कण्डूहर अञ्जन ४२६ ।

नेत्रदाहः—गुडूच्यादि क्वाथ २२५ । काजल ४२३ । नेत्ररक्षक बिन्दु ४२६ । धान्यकावलेह ४२७ ।

नेत्रमें लालीः—नागशर्करा २१६ । काजल ४२३ । श्वेत नेत्राञ्जन ४२४ । नागार्जुन वर्ति ४२५ । नेत्ररक्षक बिन्दु ४२६ ।

उदर सेवनार्थः—प्रवाल भस्म १७ । धान्यकावलेह ४२७ ।

फिरंगज प्रदाहः—पारद उपलवण २५ ।

पूयमय प्रदाहः—पीत पाचन ३५५ । काजल ४२३ । नागार्जुन वर्ति ४२५ ।

नेत्रव्रणः—काला नेत्रान्जन ४२३ । नेत्ररक्षक बिन्दु द्वितीय विधि ४२६ ।

कुकूणकः—कुकूणकनाशक बिन्दु ४२२ । काला नेत्रान्जन ४२३ । नेत्ररक्षक बिन्दु ४२६ । धान्यकावलेह ४२७ ।

मांसवृद्धिः—श्वेत नेत्रान्जन ४२४ । नागार्जुन वर्ति ४२५ । नेत्ररक्षक बिन्दु द्वितीय विधि ४२६ ।

पोथकी (रोहे), अभिष्यन्द, वर्त्म, शुण्डिकाः—जसद भस्म ११ । व्रणकुठार मिश्रण ३४७ । पोथकीहर अन्जन ४२२ । पोथकीहरलेप ४२८ ।

पुष्पः (फूला)—शंख भस्म १८ । काला नेत्रान्जन ४२३ । नागार्जुन वर्ति ४२५ ।

प्रदाहमें ऊपर बांधनेके लिये:—एण्टिफ्लोजिस्टीन ६० ।

तिमिरः—नागाद्यन्जन ४२५ । नागार्जुन वर्ति ४२५ ।

अधिमन्थ (नेत्रशूल—Glaucoma)— अधिमन्थहरयोग ४२५ । हब्बे अयारिज ४२७ । पथ्यादि क्वाथ ४३३ ।

नेत्र कण्डू:—कण्डूहर अन्जन ४२६ । नेत्ररक्षक बिन्दु ४२६ ।

३५. पाण्डु—Anaemia

मानस चिन्ताजन्य—रौप्य भस्म ५ । अभ्रक भस्म ७ ।

पित्तप्रकोपज—लोह भस्म ६ । पन्ना भस्म २० । प्रवाल माक्षिक मिश्रण १५६ ।

धातु परिपोषणमें न्यूनतासे—नाग भस्म १३ । प्रवालमाक्षिक मिश्रण १५६ । लोह सिन्दूर १५६ । नारायण मण्डूर १६० । लोहासव १६५ । हेमाभ्रसिन्दूर १६८ । रजतादि लोह २०६ । धात्री लोह २७३ । यकृत्प्लीहारि लोह ३१३ । मुसली पाक ४८५ ।

रक्तस्रावज—लोह भस्म ६ ।

रसविकृतिजन्य—जसद भस्म ११ । प्रवालमाक्षिक मिश्रण १५६ । नारायण मण्डूर १६० । हरीतकी रसायन १६५ । मेहमुद्गर रस २९५ ।

अर्शज—अभ्रक भस्म ७ । लोहासव १६५ ।

कृमिप्रकोपज—लोह भस्म ६ । बृहत्कस्तूरी भैरव ४७ । कृमिकण्टक रस १५४ । मुस्तादि योग १५४ । लोहसिन्दूर १५६ । नारायण मण्डूर १६० । विशालादि चूर्ण १६४ । लोहासव १६५ । योगराज रस १६७ । वाकुच्यादि चूर्ण ३७७ ।

शुक्रक्षयज—वंग भस्म १० । लोहसिन्दूर १५९ । रसराज रस २०३ । रजतादि लोह २०६ । मुसलीपाक ४८५ । बृहत् सुवर्ण मालिनी ६७ ।

विषप्रकोपज—पन्ना भस्म २० । नारायणमण्डूर १६० ।

ज्वर जन्य—कालमेघनवायस १५७ । लोहसिन्दूर १५६ । योगराज रस १६७ अग्निमांद्यसह हो तो—लोहासव १६५ । हेमाभ्रसिन्दूर द्वितीय विधि १६८ । पञ्चामृत-मण्डूर १६१ । गोमूत्रादि क्षार १६३ ।

३६. पूयमेह–सुजाक–Gonorrhoea

३७. प्रतिश्याय–जुकाम Coryza

३८. प्रमेह

पित्तज मेह (क्षार, नील, काल, हारिद्र, मंजिष्ठ और रक्त)—लोह भस्म ६। जसद भस्म ११। त्रिवङ्ग भस्म २१। वङ्गाष्टक भस्म २२। गुडूच्यादि रसायन २१०। प्रमेहान्तक चूर्ण द्वितीयविधि २९९। श्वेष्ठादि वटी ३०२।

कफजमेह (उदक, इक्षु, सान्द्र, सुरा, पिष्ट, शुक्र, सिकता, शीत, शनैः लाला-मेह)—लोह भस्म ६। वङ्ग भस्म १०। त्रिवङ्ग भस्म २१। वंगाष्टक भस्म २२। पीयूष-वल्ली रस १०८। मधूकासव १३७। नागवल्लभ १७२। गुडूच्यादि रसायन २१०। रसोन सुरा २९६। प्रमेहान्तक चूर्ण प्रथम विधि २९९। प्रमेहान्तक योग ७ वीं विधि ३००। श्वेष्ठादिवटी ३०२। त्राकुच्यादि चूर्ण ३७७।

सर्वप्रमेह—चन्द्रकलावटी २९२। प्रमेहान्तक रस २९३। बृहद् हरिशंकर रस २९४। प्रमेहकुञ्जरकेसरी २९४। मेहमुद्गर रस २९५। प्रमेहान्तक कषाय ३००। प्रमेहहरयोग ३००। विलासिनीवल्लभ रस २९३।

शुक्रमेह (Spermatorrhoea)—वङ्ग भस्म १०। चन्द्रकला वटी २९२। प्रमेहकुञ्जर केसरी २९४। शिलाजत्वादि वटी २९७। प्रमेहान्तक चूर्ण प्रथमविधि २९९। बृहच्छतावर्यादि चूर्ण ३००।

जीर्ण रक्तमेह—बृहत्सुवर्ण मालिनी वसंत ६७।

इक्षुमेह (Glycosuria)—जसद भस्म ११। त्रिवङ्ग भस्म २१। प्रमेहान्तक रस २९३। मधुमेह दर्पहारी २९५। शिलाजत्वादि वटी तीसरी विधि २९७। श्वेष्ठादि वटी ३०२। अभयादिकषाय ३०३। बृहत् सोमनाथ रस ३०३।

मधुमेह (Diabetes mellitus)—शोथ हो तो—रौप्य भस्म ५। पित्त-प्रकोपमें यसद भस्म ११। नाग भस्म १३। शोथमें नाग भस्म १३ और शिलाजीत। मेदाधिक रोगीको नागभस्म १३। त्रिवङ्ग भस्म २१। सोरा द्रावक १४७। प्रमेहान्तक रस २९३। मधुमेह हर योग २९५। मधुमेहदर्पहारी २९५। शिलाजत्वादि ३री विधि २९७। श्वेष्ठादि वटी ३०२। अभयादि कषाय ३०३। बहुमूत्रान्तक रस ३०६। उदुम्बरपत्रसार ३४५। मदनकान्ता गुटिका ४७४।

मधुमेहमें निर्बलता और नपुंसकता—रसेन्द्र चूडामणि ४७१। लोहसिन्दूर १२९।

उदकमेह—बहुमूत्र—मूत्रातिसारमें देखें।

लालामेह—बृहत् सोमनाथ रस ३०३।

मधुमेह और संधिवात—त्रिवङ्ग भस्म २१।

स्वप्नदोष—निर्बलतामें देखें।

सोम—गुडूच्यादि रसायन २१०। विशेष प्रदरमें देखें।

मूत्रमें अम्लविषाधिक्य (Oxaluria)—सोरा द्रावक १४७। मिश्रित सोरा लवण द्रावक १५०। श्वेतपर्पटी २८५।

हस्तिमेह (Enuresis)—बृहत् सोमनाथ रस ३०२ । बृहद् हरिशंकररस २१४ । सोमनाथ रस ३०४ ।

३६. प्रमेह पिड़िका—Carbuncle.

विषघ्न मिश्रण ८७ । शिलाजत्वादि वटी ३री विधि २१७ । शारिवादि क्वाथ ३११ । प्रमेह पिटिकाहर योग ३११ । गुग्गुलुपञ्चतिक्तक घृत ३३२ । एलाद्यरिष्ट ४०७ । मदनकान्ता गुटिका ४७४ ।

मूत्रविष ह्रासार्थ—श्वेत पर्पटी २८५ ।

लगानेके लिये—व्रणशोधन तैल ३३८ ।

४०. प्रवाहिका—पेचिश—Dysentery.

नूतन—लघुशत पुष्पादि चूर्ण ६५ । प्रवाहिका हर योग ९७ । भुवनेश्वरी वटी ६६ । प्रवाहिकाहर गुटिका ६६ । संजीवन अर्क १५१ । सिंहास्यादि वटी ६६ ।

जीर्ण—लघुशत पुष्पादि चूर्ण ६५ । प्रवाहिका हर गुटिका द्वितीय विधि ६६। ग्रहणीगज केसरी १०२ ।

रक्तप्रवाहिका—बीजकनिर्यासादि चूर्ण ६८ । सिंहास्यादि वटी ६६ । नागशर्करा २१६ । संजीवन अर्क १५१ ।

४१. फिरंग-गर्मी—Syphilis.

नूतन रोग—उपदंश कुठार वटी ३५८ । नीलकण्ठ रस २५६ । सवीर मल्ल पुष्प ३६१ । उपदंशवन कुठार ३६३ । उपदंशहर कषाय ३६४ । उपदंश हर धूम्र ३६६ । उपदंशहर वटिका ३६६ ।

जीर्ण रोग—ताल भस्म १६ । मनःशिला भस्म २० । कज्जली रस २२५ । पीतमृगांक रस २४१ । नारायण रस ३२७ । मल्लादि पुष्प ३६० । भैरव रस ३६० । सवीर मल्ल पुष्प ३६१ । उपदंशदावानल रस ३६२ । रक्त शोधक अर्क ३६७ ।

व्रत—पारद उप लवण २५ । सोराद्रावक १४७ । कृष्ण धावन ३५५ । उपदंशहर चूर्ण ३६५ । विमर्दित नील धावन ३६६ ।

नासाभग्न, गुदशुक्रादि उपद्रव—पीत मृगाङ्क २४१ । नारायण रस ३२७ । भगंदर नाशक योग (नं० २) ३५८ । सवीर वटी ३६२ । कुष्ठहर रस ३७१ ।

विरेचनार्थ—पारद उपलवण २५ । पारद वटी ३० ।

४२. बहुमूत्र Polyuria

मधुमेहमें बहुमूत्र—नाग भस्म १३ । मधुमेह दर्पहारी २६५ । बहुमूत्रान्तक रस ३०६ ।

मूत्रातिसार](उदकमेह Diabetes Insipidus)—बृहत् सोमनाथ रस ३०३ । वैकान्त वसंतकुसुमाकर ३०५ । बहुमूत्रान्तक रस ३०६ । बहुमूत्रघ्न रस ३०८ ।

बूंद बूंद मूत्र टपकना—अभ्रक भस्म ७ । वङ्गाष्टक भस्म २२ । राजवल्लभ रस ११३ । बृहत् सोमनाथ रस ३०३ । मूत्रमें दाह हो तो-मत्रदाहान्तक चूर्ण ३०८ ।

पौरुष ग्रन्थिकी वृद्धि—नाग भस्म १३ । शतावरी घृत २८६ ।

सोमरोग—बृहत् सोमनाथ रस ३०३ । सोमनाथ रस ३०४ । वैक्रान्त वसंतकुसुमाकर ३०५ ।

हिस्टिरियामें बहुमूत्र (Polyuria)—सोमनाथ रस ३०४ । वैक्रान्त वसंतकुसुमाकर ३०५ । विशेष औषधि वातरोग (अपतन्त्रक) में देखें ।

४३. बालरोग

नूतन ज्वर—अमृतार्णव ३४ । आक्षेप आनेपर अमृतार्णव ३४ । भयसे हो-तो ज्वरारि अभ्र ४३ । रस पीपरी ४६१ । बालरस ४६३ । ज्वरान्तक चूर्ण ४६३। जन्मघूंटी ४६६ ।

जीर्ण ज्वर—गन्धक कज्जली योग २१२ । मालती चूर्ण ४५६ । बाल रस ४६२ । अमृतार्णव रस ३४ ।

ज्वरातिसार—रस पीपरी ४६१ । ग्रहणी शार्दुल ११६ । गन्धक कज्जली योग २१२ ।

प्रवाहिका—प्रवाहिकाहर गुटिका तृतीय विधि ९९ । ग्रहणी शार्दुल ११६ ।

अतिसार—स्वादिष्ट गंगाधर चूर्ण ९८ । राजवल्लभ रस ११३ । सोरा द्रावक १४७ । गन्धक कज्जली योग २१२ । नागशर्करा २१६ । मालती चूर्ण ४५६ । बाल वटी ४५७ । वचाहरिद्रादि कषाय ४६० । रुक्मीश रस २९ । बालरक्षक बिन्दु ४६२ । अतिसारहर योग ४६५ । पारदादि चूर्ण ४६५ ।

ग्रहणी फक्क (Intestinal infantilism)—विषमज्वरान्तक लोह ५७। मुक्तादि वटी ४५६ । बालवटी ४५७ ।

प्रतिश्याय—बाल वटी ४५७ । रस पीपरी ४६१ । बाल रस ४६३ । बाल-रक्षक बिन्दु ४६२ ।

कास—कासान्तक कषाय ४६३ । जन्म घूण्टी ४६६ ।

कालीखांसी—प्रवाल भस्म १७ । कुक्कुरकासहर मिश्रण ४६१ ।

विसूचिका (Cholera Infantum)—पारद उपलवण २५ ।

दांत आनेपर विकार—प्रवाल भस्म १७ ।

दांत आनेपर मुख-पाक (Aphthae)—मालती चूर्ण ४५६ ।

अस्थिमार्दव (Rickets)—प्रवाल भस्म १७ । एलादि मन्थ २१३ । अमृत-प्राश २११ । सुधाषटक योग ४५७ । मुक्तादि वटी ४५६ । मालती चूर्ण ४५६ । बालरक्षक शर्बत ४६० ।

गलौघ (Croup)—अष्टामृत भस्म २३ । लगानेको सौम्य अर्क आयोडीन २२१ ।

निर्बलता—ऊपर बालशोषमें लिखी ओषधियां देवें।

जलोदर—हिंगुलादि वटी ४५८।

प्लीहावृद्धिसह पाण्डु—बाल यकृदरि लोह ४५६। बृहत्सुवर्ण मालिनी वसंत ६७।

४४. भगंदर–Anal Fistula

अभ्रक भस्म ७। गुग्गुलुपञ्चतिक्त घृत ३३२। व्रणरोपण रस ३३३। व्रणापहारी रस ३३३। भगंदरहर रस ३५७। नारायण रस ३५७। भगंदर नाशक योग ३५८। एलाद्यरिष्ट ४०७। श्वासकासान्तक चूर्ण १६७।

फिरंगज भगंदर—व्रणान्तक रस ३३४। नारायण रस ३५७। श्वासकासान्तक चूर्ण १६७।

धोनेको—व्रणकुठार मिश्रण ३४७।

लगानेको—अर्क आयोडीन ३५१। निर्गुण्डी तैल ३३७। व्रणशोधन तैल ३३८। व्रणकुठार तैल ३४८।

४५. मदात्यय–Alcoholism

लोकेश्वरपोटली २०७। कज्जली रस २२५। महाकल्याण रस ४६३।

निद्रानाश—चण्डासव २३४। ब्राह्मी तैल २३१।

वातप्रकोप—बृहत् वातचिन्तामणि २२७।

४६. मलावरोध–आनाह–कब्ज–Constipation

आमविरेचनार्थ—लक्ष्मीश रस २६। सुखविरेचन वटी ३०। हरीतकी वटी ३३।

पाचन और सारक—द्राक्षादि पाचन १३३। सामुद्राद्यचूर्ण (उदर) ३२०। मलबंध ६२।

कृमिजन्य—कृमिघ्न योग १५५। कृमिकण्टक चूर्ण १५६। मलबंध ६२।

जीर्णरोगमें शारीरिक निर्बलता—बृहद् सुवर्ण मालिनी वसंत। ६७। नवजीवन रस ४७८।

अन्त्रको शक्ति देनेको—अभ्रक भस्म ७। नाग भस्म १३। कारस्करादि वटी २४५। नवजीवन रस ४७८। उदरवात रहता हो तो–माजून कुचिला २५२। मलबंध ९२।

४७. मसूरिका–रोमान्तिका

शीतला—वसंत सुंदर रस ४०४। शीतलाशामक वटी ४०४। गोरोचन मिश्रण ४०५। मसुरिकान्तक रस ४०५। इन्दुकलावटी ४०५। मसूरिकान्तक वटिका ४०६। एलाद्यरिष्ट ४०७। द्राक्षादि क्वाथ ४०८। निम्बादि क्वाथ ४०८।

जीर्ण विषशमनार्थ—मूत्रदाहान्तक चूर्ण ३०८।

लगानेको—कार्बोलिक मलहम ४०८।

४८. मुखरोग

४९. मूत्रकृच्छ्र-मूत्राघात

विसूचिकाजन्य मूत्राघात—मूत्रदाहान्तक चूर्ण ३०८ ।

५०. मूर्च्छा—Syncope

मानसिक आघातसे मूर्च्छा—संज्ञाप्रबोधप्रधमन ८१ । शुद्धि आने पर मृगमदासव ८४ । जवाहर मोहरा २८१ । या बृहत्कस्तूरी भैरव ४७ ।

मधुमेहज सन्यास (Apoplexy)–नाग भस्म १३ । कुछ होस हो तो शुद्ध जमालगोटेकी गिरीका चूर्ण शक्करमें देवें । शुद्धि आनेपर वैक्रांतवसंतकुसुमाकर ३०५ या शिलाजत्वादि वटी २९७ ।

५१. मेदोरोग Obesity

मेदशोषणार्थ - श्वासारि एला १६१ । आमवातेश्वर २६१ । त्रिमूर्ति रस ३१२ । मेदोहर गुग्गुलु ३१३ ।

विरेचनार्थ—रुक्मीश रस २६१

५२. रक्तपित्त

ऊर्ध्व रक्तपित्त (Hæmatemesis and Haemoptysis)—शत-मूल्यादि लोह १७१ । गुडूच्यादि रसायन २१० । अमृत प्राश २११ । खर्जूरासव २१४ । शतावरी घृत २७१ । वासकासव १९४ । अम्लपित्तसह–रसामृत रस १७० ।

रक्तस्राव शमनार्थ—रक्तरोधक वटी १७१ । वासकासव १९४ । नागशर्करा २१६ ।

प्राकृतिक रक्तस्राव (Haemophilia)—प्रवाल भस्म १७ । शुक्ति पिष्टी १७ । मौक्तिक रसायन ४६१ ।

अधोरक्तपित—मूत्रमार्ग से रक्तस्राव होनेपर-शतावरी घृत २७१ । मलके साथ रक्त जानेपर ग्रहणीगज केसरी १०२ या पीयूषवल्ली रस १०८ ।

त्रिदोषज रक्तपित्त—रक्तपित्तान्तक रस १६४ ।

श्लेष्म रक्तज रक्तपित्त—अर्केश्वर रस १३९ ।

५३. रक्तविकार

जीर्ण पूयमेहज—सुवर्ण वङ्ग १ । विडङ्ग तण्डुल रसायन ३६१ ।

फिरंगज—मल्लसिन्दूर १ । व्रणान्तक रस ३३४ । सारिवादि हिम ३८३ । विडङ्ग तण्डुल रसायन ३६१ ।

विरेचनार्थ–पारद उपलवण २५ । बृहन्मंजिष्ठादि चूर्ण ३० । हरीतकीवटी ३३ ।

कुष्ठ और त्वचाविकारज—मूल रोगमें देखें ।

५४. रक्तस्राव

मुख, गुदा आदि मार्गसे—नाग शर्करा २१६ । विशेष रक्त पित्तमें देखें ।

छुरी आदिसे रक्तस्राव—अर्क आयोडीन ३५१ । विशेष व्रणमें देखें ।

५५. रसायन

अभ्रक भस्म ७ । सुवर्ण भस्म ३ । अभ्रक सत्व भस्म ७ । सत्वाभ्र रसायन ६ । शुक्र संजीवन रस २०१ । याकुती २८२ । आद्रूम्य रसायन ४७० । आमलकी रसायन ४७२ । निर्विष्यादि वटी ४७१ । ज्ञानोदय रस ४७१ । चन्द्रोदय वटी ४७७ । नवजीवन रस ४७८ । कामचूडामणि ४८१ । अश्वगन्धादि चूर्ण ४८१ । मुसली पाक ४८६ । शक्ति संजीवन लेह ४८८ । धात्री रसायन ४८६ । शतावरी घृत २७१ । मौक्तिक रसायन ४९१ । महाकल्याण रस ४९३ । ज्योतिष्मति रसायन ४९५ । अमृत भल्लातक पाक ४९६ । नपुंसकता नाशक (वाजी करण) औषधियोंके लिये नपुंसकतामें तथा निर्बलता के लिये निर्बलतामें देखें ।

५६. वातरोग

कफ वृद्धिसहः—नव ग्रह रस २३७ । कुष्माण्ड अर्क २४७ । रसोन पाक २५१ । भल्लातकासव २५६ ।

पित्तवृद्धिसहः—वृहद्‌वात चिन्तामणि २३७ । हिमसागर तैल २५५ ।

शुक्रक्षयजः—वृहद् वात चिन्तामणि २३७ । रसायन औषधियां ।

कोष्ठाश्रित वातः—कारस्करादि गुटिका २४१ । कुष्माण्ड अर्क २४७ । काक तिन्दुकवटी २५० । एरण्ड पाक २५१ । माजून कुचिला २५२ । रसोन सुरा २५६ । वातगजेन्द्रसिंह २६३ । भल्लातक क्षार १२१ । भल्लातकासव २५६ ।

मस्तिष्कगतवातः—पञ्चामृत लोह गुग्गुलु २४८ । सहचरादि तैल २५४ । हिमसागर तैल २५५ ।

रक्तविकार सहः—चोपचीनी पाक २५२ ।

संधिवातः—भल्लातकादि गुटिका २४४ । रसोनादि गुग्गुलु २४४ । पञ्चामृत लोह गुग्गुलु २४८ । रसोन सुरा २५६ । चोपचीनी पाक २५२ । संधिवातहर योग २५८ ।

मालिशार्थः—तार्पिन तैल २५६ । कृष्णविषहरण ४६७ ।

पीड़ाशमनार्थः—पञ्चगुण तैल २५५ । सूचीमर्दन २५८ ।

फिरंगजवातः—सोराष्ट्राक्क १४७ । चोपचीनी पाक २५२ । मल्लप्रधान रसायन ।

पूयमेहजवातः—सुवर्ण वङ्ग १ । चोपचीनी पाक २५२ ।

खञ्जवात (कलायखञ्ज–Locomotor ataxia):—खञ्जनिकारि रस २४३ । अर्दितारि रस २४३ । त्रयोदशांग गूगल २४७ । माजून कुचिला २५२ । सहचरादि तैल २५४ ।

धनुस्तम्भ—रसराज रस २३५ । धनुर्वातहर योग २५८ ।

आक्षेप (मांसपेशियोंका खिंचाव spasm):—मल्लशंख भस्म १६ । रसराज रस २३५ । विजयावटी २३४ । खञ्जनिकारि रस २४३ । रसोन पाक २५१ । सहचरादि तैल २५४ ।

अपतन्त्रक (Hysteria):—हिंगू कर्पूरवटी ६० । भीमवटी १२७ । रसराज रस २२५ । बृहद् वातचिन्तामणि २३७ । अपतन्त्रकारि वटी २४५ । मांस्यादि क्वाथ २४७ । रसोन पाक २५१ । मदनकान्ता गुटिका ४७४ । ज्ञानोदय रस ४७५ । कफाधिक हो तो श्वासकासान्तक चूर्ण १९७ । चतुर्भुज रस २२७ ।

निद्रा लानेको—चन्द्रहास अर्क २३२ । चन्द्रावलेह २३३ । सर्पगन्धा चूर्ण योग २३३ । विजया वटी २३४ । बृहद् ब्राह्मी वटी २४० ।

गृध्रसी (Sciatica)–चतुर्भुज रस २२७ । गृध्रसीहर गुटिका २४५ । त्रयोदशाङ्ग गूगल २४७ । पञ्चामृत लोह गुग्गुलु २४८ । रसोन पिण्ड २४ । माजून कुचिला २५२ ।

बाह्य प्रयोग—एण्टिफ्लोजिस्टीन ३० । तार्पिन मर्दन २५६ । वातशूलान्तक मलहम २६५ ।

अर्दित (Facial paralysis)—रसराज रस २३५ । खञ्जनिकारि रस २४३ । अर्दितारि रस २४३ । रसोन पाक २५१ । रसोन पिण्ड २४८ । पञ्चामृत लोह गुग्गुलु २४८ । अर्दित हर योग २५८ । पथ्या भल्लातक मोदक ३८५ । रम्य तैल २५६ ।

कटिवात (Lumbago)—वातनाशक गूगल २४४ । वातान्तक बाम २६६ । तार्पिन तैल २५६ । वात शूलान्तक मलहम २६५ । कुष्माण्ड अर्क २४७ । त्रयोदशाङ्ग गुग्गुलु २४७ ।

कम्पवात (Paralysis Agitans)—सहचरादि तैल २५४ । निगुण्डी तैल ३३७ । विशेष पक्षवधमें देखें ।

अभिघातज वात—हिमसागर तैल २५५ । वात शूलान्तक योग २५७ ।

शीतसे अंग जकड़ना–सहचरादि तैल २५४ । वातशूलान्तक मलहम २६५ ।

सुप्तवात–विषतिन्दुक तैल २७१ । वात शूलान्तक मलहम २६५ । सहचरादि तैल २५४ ।

ज्वरसह नूतन वातः—वात गजेन्द्रसिंह २६३ ।

अपतानक (Tetanus)—ऊपर धनुस्तम्भमें देखें ।

शुक्रक्षयज वात प्रकोपः—बृहद् वात चिन्तामणि २३७ ।

पित्तप्रकोपसह वातः—बृहद् वातचिन्तामणि २३७ । हिमसागर तैल २५५ ।

भ्रमणशील वात (सर्वाङ्ग वात):—रसोनादि गुग्गुलु २४४ । कारस्करादि गुटिका २४५ । रसोन पिण्ड २४८ । रसोन पाक २५१ । एरण्ड पाक २५१ । रसोन सुरा २५६ ।

ऊरुस्तम्भ—ऊरु स्तम्भ रोग अलग लिखा है ।

पक्षाघात (Paralysis):—मल्लशंख भस्म १६ । कफभूयिष्ठ होने पर नागवल्लभ १७२ । चतुर्भुज २२७ । रसराज रस २३५ । नवग्रह रस २३७ । खञ्जनिकारि रस २४३ । रसोन पिण्ड २४८ ।

फिरंगज पक्षाघातः—नवग्रह रस २३७ । मल्लप्रधान अन्य प्रयोग ।

मर्दनार्थः—महामाष तैल २५२ । सहचरादि तैल २५४ । रास्न तैल २५५ ।

जीर्णवातमें शक्ति देनेके लिये:—बृहद् वात चिन्तामणि २३७। मदनकान्ता गुटिका ४०४ । अमृत मल्लातक पाक ४६६ । श्रीगोपाल तैल ४६७ ।

५७. वातरक्त-Gout

श्लेष्म प्रकोपसहः—पीत मृगाङ्क २४१ । वात रक्तान्तक रस २६८ । वङ्ग गुग्गुलु २६८ । सिंहास्यादि क्वाथ २७० । सिद्ध गन्धक ३२६ । गुग्गुलु पञ्चतिक्त घृत ३३२ । तुवरक तैल योग २८३ । मल्लातकासव २५६ ।

पित्तप्रकोपसहः—बृहद् वातरक्तान्तक लोह २६६ । गुडूच्यादि लोह २६६ । अमृतादि घृत २७० । अमृता घृत २७१ । शतावरी घृत २७१ । महातिक्तक घृत ३८१ ।

जीर्णः—गुडूच्यादि लोह २६६ । अमृतादि घृत २७१ । शारिवादि लोह ३११ । मल्लातक अवलेह २७६ । महातिक्तक घृत ३८१ । विडङ्ग तण्डुल रसायन ३६१ । शीत पित्त भञ्जन रस ३६६ । शतावरी घृत २७१ । अमृतमल्लातक पाक ४६६ ।

मालिशार्थः—महारुद्र तैल २७१ । विषतिन्दुक तैल २७१ ।

५८. विषप्रकोप

वमनार्थः—वमनेश्वर रस २४ । संशोधक रसकर्पूर ४६८ ।

उदरशोधनार्थः—सिद्ध अश्वकंचुकी ४३ । विषवज्र पात रस ४६१ ।

पारद जनित लालास्रावः—नागार्जुना २१६ ।

रक्तमें मूत्र विषवृद्धि (Uraemia):—मूत्रदाहान्तक चूर्ण ३०८ । मूत्रल कषाय ३२४ ।

पागलकुत्तेका विषः—अर्कादिवटी ४७० ।

वृश्चिक विषः—कृष्ण विषहरण ४६७ ।

सर्पविषः—कृष्ण विषहरण ४६७। विषवज्रपात रस ४६१। जैपालञ्जन ४७० ।

जन्तु दंशः—निर्गुण्डी तैल २३७ । वात शूलान्तक बाम २६५ । वातान्तक बाम २६६ । अर्क आयोडीन २५१ ।

मूषक विषः—वमनेश्वर रस २४ । सुवर्ण चिन्तामणि ३६ । गुग्गुल पञ्चतिक्त घृत ३३२ । विडङ्ग तण्डुल रसायन ३८१ ।

जीर्णावस्थाः—सुवर्ण भस्म ३ । ज्वरयुक्तपर सुवर्ण चिन्तामणि ३६ ।

५९. विसूचिका-Cholera

अपचन जन्यः—स्वच्छन्द भैरव ६५ । अग्निमुख रस १२४ । सर्वतोभद्र रस १२८ । विसूचिकान्तक रस १३६ । अजीर्णान्तक वटी १३६ । रसोन सुरा २५६ । कृष्ण विषहरण ४६७ । संजीवन अर्क १५१ ।

कीटाणु जन्य—विसूचिकान्तक रस १३६ । रसोनकर्पूर वटी १४० । रसोन सुरा २५६ । कृष्णविषहरण ४६७ । संजीवन अर्क १५१ ।

तृषाशमनार्थ :—गन्धक द्रावक ८८ ।

ऐंठनपरः—नागरादि गुटिका २४६ ।

तीव्र वेदना शमनार्थ :—ग्रहणीगज केसरी १०२ ।

शीतांगः—मृगमदासव ८४ । विसूचिकान्तक रस १३१ ।

६०. विस्फोटक—Impetigo

हरीतकी वटी ३३ । महातिक्तक घृत ३८१ । श्वेतकरवीराद्य तैल ३८७ । बृहन्मरिचादि तैल ३८७ । हरीतक्यादि चाटण ४३५ ।

६१. विसर्प—Erysipelas

महातिक्तक घृत ३८१ । कासीसादि वटी ४०२ । मुक्तामिश्रण ४०३ । पटोलादि क्वाथ ४०३ । एलाद्यरिष्ट ४०७ ।

बाह्य प्रयोगार्थः—नागशर्करा २१६ । अर्क आयोडीन ३५१ । महासिन्दूराद्य तैल ३८८ । विसर्पहर तैल ४०३ । कृष्णविषहरण ४६७ ।

६२. वृद्धि—Orchitis

वृद्धिनाशन रस ३२७ । वृद्धिहर वटिका ३२८ ।

लगानेकोः—वृद्धिहर लेप ३२८ । अर्क आयोडीन ३५१ ।

६३. व्रण—विद्रधि—अर्बुद

व्रणपाचनार्थ—एण्टिफ्लोजिस्टीन ९० । दशांग उपनाह ३३६ । क्षारादि उपनाह ३३७ । दन्तीमूलादि लेप ३२१ ।

व्रणशोधनार्थ—निगुंण्डी तैल ३३७ । व्रणशोधन तैल ३३८ । लालमलहम ३४० । हरामलहम ३४१ । कालामलहम ३४१ । श्वेत मलहम ३४२ । जन्तुघ्न मलहम ३४२ । पूतिहर मलहम ३४४ । उदुम्बरपत्रसार ३४५ । व्रणकुठार मिश्रण ३४७ । कृष्णधावन ३५५ । पीत धावन ३५५ । कार्बोलिक धावन ३५६ ।

व्रणरोपणार्थ—पञ्चगुण तैल २५५ । अरिमेदादि तैल ३४० । लालमलहम ३४० । हरा मलहम ३४१ । काला मलहम ३४१ । श्वेत मलहम ३४२ । क्षतारिमलहम ३४३ । उदुम्बरपत्रसार ३४५ । मधुच्छिष्टाद्य घृत ३४५ ।

दूषित शस्त्रसे व्रण (Hospital gangrene)—सोराद्रावक १४७ । व्रणशोधन तैल ३३८ । निगुंण्डी तैल ३३७ । सुदर्शन मलहम ३४४ ।

वर्द्धनशीलदुष्टव्रण (Progressive gangrene)—सोराद्रावक १४७ । व्रणशोधन तैल ३३८ । जन्तुघ्न मलहम ३४२ । निम्बादि मलहम ३४३ । सुदर्शन मलहम ३४४ । पूतिहर मलहम ३४४ । व्रणकुठार मिश्रण ३४७ । तुवरक तैलयोग ३८३ ।

वेदना विहीन भग्न क्षतः—सोराद्रावक १४७ ।

अभिघात—पारद उपलवण २५ । चोटहर योग ३५० । अर्क आयोडीन ३५१ । शोथहर गुटिका ३५४ । अर्क लोहबान ३५६ ।

अपक्व व्रणका विम्लापन—कृष्ण विषहरण ४६७ । अर्क आयोडीन ३५१

अकबरी फोड़ा (Oriental sore—हरामलहम ३४१ । जन्तुघ्न मलहम ३४२

आगन्तुक क्षत—आगन्तुक क्षतनाशक लेप ३३७ । व्रणशोधन तैल ३३८ । अरिमेदादि तैल ३४० । रक्तस्रावशोधनार्थ—उदुम्बरपत्रसार ३४५ । आगन्तुक क्षतहर योग ३४८ । अर्क लोहबान ३५३ । अर्क रेवतचीनी ३५३ ।

अग्निदग्धव्रण—निम्बादि मलहम ३४३ । सुदर्शन मलहम ३४४ । अग्निदग्धहरमलहम ३४४ । मधुच्छिष्टाद्य घृत ३४५ । तुगाक्षीर्यादि लेप ३४६ । गुलाबी मलहम ३८१ ।

नाड़ीव्रण—निर्गुण्डीतैल ३३७ । व्रणशोधन तैल ३३८ । व्रणकुठार तैल ३४८ । अर्क आयोडीन ३५१ ।

मुखका दुष्ट क्षत (Cancrum oris)—सोरा द्रावक १४७ । अरिमेदादि तैल ३४० । एलादारिष्ट ४०७ ।

यकृद्विद्रधि—महाणीयक्रकपाट १०७ । विडङ्गारिष्ट ३३४ ।

सब प्रकारके अन्तर्विद्रधि—विडङ्गारिष्ट ३३४ । अन्तर्विद्रधिहर योग ३४१ । भगंदरहर रस ३५७ ।

महाधमनीमें रक्तार्बुद (Aneurysm)— नागशर्करा ३१६ । अवाहर मोहरा २८१ । बृहद् ब्राह्मी वटी २४० ।

व्रणोंमें उदर सेवनार्थ—जसद भस्म ११ । वङ्ग भस्म १० । गुग्गुलुपञ्चतिक्तक घृत ३३२ । व्रणान्तक गुग्गुलु ३३२ । व्रणारहारी रस ३३३ । व्रणशोषण रस ३३३ । व्रणान्तक रस ३३४ । फिरंगज व्रणमें व्रणान्तक रस ३३४ या हरद पाक ३३५ । अस्थिव्रणमें नागभस्म १३ । नारायण रस ३५७ । भगंदरनाशक योग (नं० ३)३५८ । भगंदरहर रस ३५७ । सवीरवटी ३६२ ।

रसार्बुद (रसौली)—जसद भस्म ११ । अर्क आयोडीन ३५१ । पारदलेप ३५३ ।

फिरंगज अर्बुद—पारद लेप ३५३ । सवीरवटी ३६२ ।

नाडीव्रणमें उदरसेवन—नारायण रस ३५७ । भगंदरहर रस ३५७ । भगंदरनाशक योग नं० २ ३५८ । सवीरवटी ३६२ ।

वर्ण विकृति—सवर्णकर योग ३५१ ।

ब्रघ्न (Bubo)—हरीतक्यादि कषाय १५० ।

पशुओंके व्रण—कृष्णविषहरण ४६७ । निर्गुण्डी तैल ३३७ । सुदर्शन मलहम ३४४ ।

६४. शिरोरोग—Headache

पित्तज शीर्षशूल:—शुक्ति पिष्टी १७ । प्रवाल भस्म १७ । हब्बे अयारिज ४२७ । शिरःशूलाद्रिवज्र रस ४२१ । पथ्यादि क्वाथ ४३३ । निर्वेदन चूर्ण ५२ ।

अपचन जन्य (Toxic):—अग्निप्रदीपक गुटिका १३० । नरसारादि पुष्प १३३ । मिहिरोदय रस ४३० । पथ्यादि क्वाथ ४३३ । शिरोर्तिहरनस्य ४३६ । शिरोरोगहरयोग ४३६ । निर्वेदन चूर्ण ५२ ।

प्रतिश्यायज शिरदर्द:—कफकेतु रस १७५ । रसायन बिन्दु २१५ । अयारिज़ फैंकरा ४३८ । कृष्णा विषहरण ४६७ ।

कृमिज शिरदर्द (शंखवात):—नासाकृमिहर नस्य ४२० । शिरोरोगहर रस ४२१ । मिहिरोदय रस ४३० ।

अर्धावभेदक सूर्यावर्त (Hemicrania):—मिहिरोदय रस ४३० । अर्कपत्रयोग ४३२ । पथ्यादि क्वाथ ४३३ । शिरोर्तिहर नस्य ४३६ । शिरोरोगहर योग ४३६ । अर्धावभेदक योग ४३६ । अर्धावभेदकहरनस्य ४३७ । अयारिज़ फैंकरा ४३८ ।

फिरंगज शिरदर्द:—शिरोरोगहर रस ४२६ ।

पूयज शिरदर्द:—शिरोरोगहर रस ४२९ । मिहिरोदय रस ४३० । चंदनादि कषाय ४३४ । निर्वेदन चूर्ण ५२ ।

हिस्टीरिया जन्य:—मिहिरोदय रस ४३० ।

शिरमें भारीपन:—सिद्ध कल्प ३४ । रक्तसंग्रह (Congestive) से होने पर-पथ्यादि क्वाथ ४३३ । शिरः शूलहर तैल ४३४ । हरीतक्यादि चाटण ४३५ । कृष्णा-विषहरण ४६७ ।

चक्कर आना:—निर्बलताके साथ देखें ।

मस्तिष्कमें उष्णता:—ब्राह्मी तैल २३१ । विश्वविलास तैल ४३८ ।

उदरशोधनार्थ:—हरीतकी वटी ३३ । आमविध्वंसनी वटी ३४ । सिद्ध अश्वकंचुकी ५३ । हरीतक्यादि चाटण ४३५ ।

शीर्षाम्बु वृद्धि (Hydrocephalus):—वह्निभास्कर रस ४३४ । अम्बूशोषण चूर्ण ४५६ । पीतमुल्यादि कषाय ४५६ ।

पाण्डुजन्य (Anaemic headache):—बृहत् सुवर्ण मालिनी वसंत ६७ । अमृतप्राशघृत २११ । निर्बलता नाशक औषधियां ।

ज्वरजन्य:—निर्वेदन चूर्ण ५२ । विशेष ज्वरमें देखें ।

वातजशूल (Mirgaine):—बृहद् वातचिन्तामणि २२७ । जीर्ण हो तो बृहत् सुवर्ण मालिनी वसंत ६७ ।

६५. शीतपित्त Urticaria

सर्वतोभद्र रस १२८ । शीत पित्तभंजन रस ३१६ । आर्द्रक खण्ड ३१७ । बृहद् हरिद्रा खण्ड ३१७ । हरिद्रा खण्ड ३१८ । एलाद्यरिष्ट ४०७ ।

विरेचनार्थ:—हरीतकी वटी ३३ । माजून एहमदी ३३ ।

संधिशोथः—वातशूलान्तक योग २५७ ।

अभिघातज शोथः—वातशूलान्तक योग २५७ । शोथहर गुटिका ३५४ ।

दंशजशोथः—शोथहर गुटिका ३५४ । वातशूलान्तक मल्हम २६५ ।

६८. श्वासरोग Dyspnoea

तमक श्वास (asthma):—ज्वरसह-ज्वरारि अभ्र ४३ । मृगमदासव ८४ । पीत श्वास कुठार १८८ । तालीशसोमादि चूर्ण १९२ । रसेश्वर अर्क १९३ । श्वासरोगहर योग ४२१ ।

दौरा दूर होनेपरः—नागवल्लभरस १७२ । श्वासहारी रस १८८ । वातपित्तज होनेपर सुवर्ण भस्म ३ । कफाधिक होनेपर श्वासकासान्तक चूर्ण १९७ । पित्तप्रकोपज होनेपर लोहभस्म ६ या श्वासकासचिन्तामणि १८५ ।

कफाधिक तमक श्वासः—अमृतार्णव रस ३४ । श्वासारि लवण १९६ । गजानन्द वटी ८५ । कफकेतु रस १७५ । श्वासदमन गुटिका १९० । श्वासारि लवण १९६ । श्वासकासान्तक चूर्ण १९७ । अमृतभल्लातक पाक ४१६ । कफनाशक क्वाथ १८४ । मल्ल शंख भस्म १९ । मनःशिला भस्म २० । पञ्चामृत भस्म २२ । मल्लपुष्प २४ । स्वच्छन्द भैरव ६५ । नागवल्लभ १७२ । नाग रसायन १७५ । भल्लातकासव २५६ ।

अपचनजनित तमक श्वासः—कफकुञ्जर रस १७८ । श्वास कास चिन्तामणि १८५ । एरण्ड पाक २५१ ।

प्रतिश्यायसह श्वासः—कफकुंजर रस १७८ । नाग रसायन १७५ ।

हार्दिक श्वास (Cardiac asthma):—लोह भस्म ६ । अभ्रक भस्म ७ । श्वासकासचिन्तामणि १८५ । श्वासहारीरस १८८ । कफकुंजर रस १७८ ।

वृद्धावस्थामें श्वासः—श्वासकास चिन्तामणि १८५ । बृहत् सुवर्णमालिनी ६७ ।

कफस्रावार्थः—संजीवन अर्क १५१ । कफकेसरी १७८ । कफकुंजर १७८ । सोमशृंग्यादि चूर्ण १९२ । श्वासारि एला १९१ । श्वासान्तक चूर्ण १९२ । अर्कमूलत्वगादि चूर्ण १८३ । मरिचादि कषाय १९३ । वासकासव १९४ । पीतमृगाङ्क २४१ । श्वासकास चिन्तामणि १८५ ।

तमाखूके व्यसनीको कफस्रावार्थः—कासान्तक चूर्ण १८३ । श्वासकास चिन्तामणि १८५ । द्राक्षादि गुटिका १३२ । सोम शृंगादि चूर्ण १९२ ।

श्वासनलिका प्रसारणः—रसराज द्वितीय विधि २०३ । रसायन बिन्दु २१५ । कफस्रावी औषधियां ।

श्वासकृच्छ्रताः—चतुर्भुज रस २२७ । श्वासकास चिन्तामणि १८५ । मृगमदासव ८४ । कृष्णविषहरण ४६७ ।

वंशागत श्वासः—श्वासकासचिन्तामणि १८५ । बृहत् सुवर्णमालिनी

निर्बलता आनेपर श्वास (घबराहट):—अभ्रक भस्म ७ । श्वासकास चिन्तामणि १८९ । बृहतसुवर्णमालिनी वसंत ६७ । गलग्रन्थि वृद्धिसे हो तो जसद भस्म ११ । अमृत प्राशघृत २११ ।

वायुकोप स्फीतिः—अमृतार्णव रस ३४ । कफकुंजर १७८ ।

६९. श्लीपद Elephantiasis

श्लीपदारि लोह ३२६ । सिद्ध गन्धक ३२६ । श्लीपद गजकेसरी ३२० । नारायण रस ३२७ । गुग्गुलु पञ्चतिक्तक घृत ३३२ । मेदोहर गुग्गुलु ३१३ ।

७०. स्त्रीरोग

वातपितज प्रदरः—वङ्ग भस्म १० । कुक्कुटाण्डत्वक् भस्म १६ । त्रिवङ्ग भस्म २१ । हीरक रसायन ४४० । अश्वगन्धादि योग ४४४ । मायाफलादि चूर्ण ४४४ । पत्राङ्गासव ४४४ । प्रदरान्तक योग ४४६ । सोमनाथरस ३०४ । अबलासंजीवन अर्क ४५२ । ब्राह्मी चूर्ण २१८ ।

रक्तप्रदरः—कुक्कुटाण्डत्वक् भस्म १६ । प्रवाल भस्म १७ । वासकासव ११४ । गुडूच्यादि रसायन २१० । गन्धक कज्जली योग २१२ । उदुम्बर पञ्चसार ३४५ । महातिक्तक घृत ३८१ । शोणितार्गलरस ४४१ । पत्राङ्गासव ४४४ । असृगदरहरयोग ४४४ । अशोकादि कषाय ४४६ । अबला संजीवन अर्क ४५२ । ब्राह्मी चूर्ण २१८ ।

बाह्योपचारः—नागशर्करा २१६ ।

योनिकी शिथिलता—योनि संकोचन योग ४४७ ।

योनिकण्डूः—योनिकण्डूहर योग ४४८ ।

योनिभ्रंशः—मायाफलादि चूर्ण ४४४ ।

शुष्क गर्भः—शुष्कगर्भपातन योग ४५२ ।

पूयमेहज विषप्रकोपः—अबला संजीवन अर्क ४५२ । दाह होनेपर प्रवाल भस्म १७ ।

गर्भाशय संकोचनार्थः—केशरादि वटी ६३ । अगंट मिश्रण ४५५ । ज्ञानोदय रस ४७५ । मुसली पाक ४८५ ।

स्तनके दृढीकरणार्थः—श्रीपर्णी तैल ४५३ ।

स्तन्य शोधनार्थः—स्तन्यशोधक लेप ४४६ ।

गर्भाशय और बीजकोषकी निर्बलताः—वङ्ग भस्म १० । त्रिवङ्ग भस्म २१ । कामचूडामणि ४८१ । शतावरी घृत २७१ । गर्भाशयशोधन योग ४५४ । बृहत् सुवर्ण मालिनी वसंत ६७ । हीरकरसायन ४४० । लक्ष्मण लोह ४४० ।

मासिकधर्ममें शूलः—वङ्ग भस्म १० । विजयावटी २३४ । वातनाशक गुटिका

हिस्टीरियाः—वातरोग-अपतन्त्रकमें देखें ।

सोमरोगः—वङ्गाष्टक भस्म २२ । शतावरी घृत २८६ । बृहत् सोमनाथ रस ३०३ । सोमनाथ रस ३०४ । वैक्रान्तवसंतकुसुमाकर ३०५ ।

कष्टार्तव मासिकधर्म विकृति (Dysmenorrhoea):—सौभाग्यादि गुटिका ४४१ । बोलादिवटी ४४२ । आर्तवप्रद योग ४४५ । रजोदोषहरी वटी ४४१ ।

वंध्यापनः—वङ्गभस्म १० । त्रिवङ्ग भस्म २१ । पूयमेहज होनेपर कुमारिका वटी ४४२ । गर्भधारक योग ४४६ । मौक्तिक रसायन ४६१ ।

पाण्डुसे मासिकधर्म न आना—बृहत् सुवर्ण मालिनी वसंत ६७ ।

सगर्भा के रोगः—

१. निर्बलताः—अभ्रक भस्म ७ । बृहत् सुवर्ण मालिनी वसंत ६७ । योगराज रस १६७ । हीरक रसायन ४४० ।

२. हड्डियोंकी कमजोरीः—प्रवाल भस्म १७ । शुक्ति पिष्टी १७ । कामचूडा-मणि ४८१ । मौक्तिक रसायन ४६१ ।

३. वमनः—अमृतप्राश २१५ । पारदादि चूर्ण ४६५ । सगर्भाका छर्दिनाशक योग २२३ । अर्क आयोडीन ३५१ । गर्भिणीरोगहर योग ४५५ ।

४. अतिसारः—राजवल्लभ रस ११३ । गन्धक कज्जली योग २१२ ।

५. ज्वरः—महारसशार्दुल ४५० ।

६. गर्भपातकी भीतिः—नागशर्करा २१६ । गर्भधारक योग ४४६ ।

७. शूलः—प्रमेहकुंजरकेसरी २६४ ।

८. सामान्य विकृतिः—गर्भिणीरोगहर योग ४५४ ।

प्रसूताके रोगः—

१. सूतिका ज्वरः—रौप्यभस्म ५ । बृहत् कस्तूरी भैरव ४७ । संतापशामक मिश्रण ५२ । स्वेदल मिश्रण ८७ । विषघ्न मिश्रण ८७ । आत्वा विरेचन ८८ । रसायन बिन्दु २१५ ।

२. प्रवाहिका—प्रवाहिकाहर गुटिका तृतीय विधि ९९ । सूतिका वल्लभ रस ४४८ ।

३. अतिसारः—पीयूषवल्ली रस १०८ । राजवल्लभ रस ११३ । ग्रहणी-शार्दुल ११६ । ज्वरसह होनेपर गन्धक कज्जली योग २१२ । सूतिकावल्लभरस ४४८ । केशरादि वटी ६३ । महारस शार्दूल ४५० । सूतिका रोगान्तक क्वाथ ४५१ ।

४. पाण्डु और निर्बलताः—हेमाभ्रसिंदूर १६८ । बृहत् सुवर्णमालिनी वसंत ६७ । रस राजरस २३५ । बृहत्वात चिन्तामणि २३७ ।

५. मकल शूल (After-Pains):—कुमारिका वटी ४४२ । सूतिका रोगान्तक क्वाथ ४५१ । संजीवन अर्क १५१ ।

६. वातप्रकोपः—केशरादि वटी ६३। आक्षेपमें तार्पिन मर्दन २२१।

७. जीर्ण ज्वरः—हीरक रसायन ४४०। वृहद् सुवर्णमालिनी वसंत ६७। मालती चूर्ण ४५६।

८. वमनः—सूतिकारोगान्तक क्वाथ ४५१।

९. श्लैष्मिक सन्निपातः—केशरादि वटी ६३। वृहत्कस्तूरी भैरव रस ४७।

गर्भाशय मुखमें व्रणः—अर्क आयोडीन ३५१।

अति रजःस्रावः—शोणितार्गलरस ४४१। शिखर्यादि वर्ति ४५३।

स्तन्योत्थ ज्वर—मालती चूर्ण ४५६। स्तन्यनिकाल लेना।

७१. स्वरभेद Hoarseness

व्याख्यान आदिसे स्वरभेदः—सोरा द्रावक १४७। कुलिंजनादि गुटिका २१६। कुलिंजनावलेह २२०। चव्यादि चूर्ण २२०। गोरखवटी २२०। त्र्यम्बकाभ्र २२१।

आक्षेपज स्वरभ्रंशः—मृगनाभ्यादि चूर्ण २२०। त्र्यम्बकाभ्र २२१।

फिरंगज होनेपर (Syphilitic Laryngitis):—फिरंग रोगहरमन्न-प्रधान औषधि।

प्रसेकमय स्वरभेद (Catarrhal Laryngitis):—गोरखवटी २२०। कुलिञ्जनावलेह २२०।

क्षयरोगज (Tuberculous Laryngitis):—प्रथमावस्थामें त्र्यम्बकाभ्र १२१।

७२. हिक्का Hiccough

अपचनजन्यः—श्वासकासचिन्तामणि १८५। हिक्काहर योग १६५। हिक्काहर तन्त्र ११६। लाजमण्ड २२१।

अन्ननलिकाप्रदाहसेः—श्वासहारी १८८। रसादिवटी २२४। चतुर्मुज रस २२७।

दाहसहहिक्काः—शंख भस्म १८। वमनान्तक योग २२२।

मस्तिष्क प्रदाहसे ज्वरसह हिक्काः—सुवर्णचिन्तामणि ३४। वृहद् कस्तूरी भैरव ४७।

७३. हृदुरोग

शुक्रकी निर्बलतासे धड़कनः—चिन्तामणि रस ४१। याकूती २८२। तारकेश्वर रस २८५।

रक्तकी कमीसे धड़कन—शंकरवटी २७८। वृहत सुवर्णमालिनीवसंत ६७। धात्री रसायन ४८९।

आमवातज हृदुविकारः—शंकरवटी २७८। वृहत सुवर्णमालिनीवसंत ६७। वृहद् वातचिन्तामणि २३७

अन्य रोगोंसे धड़कनः—शंकरवटी २७८। याकूती २८२। हृद्यचूर्ण २८३ बलाद्य घृत २८०। पञ्चसार रस २८०। तारकेश्वर रस २८५। धात्री रसायन ४८६

रक्तस्रावसे हृदयकी निर्बलताः—शंकरवटी २७८। चिन्तामणि रस ४१ बृहत्सुवर्णमालिनी वसंत ६७।

अग्निमांद्यसे धड़कनः—शंकरवटी २७८। भल्लातकादि क्षार १३५।

फुफ्फुसनिर्बलतासह धड़कनः—शंकर वटी २७८। चिन्तामणि रस ४१। याकूती २८२। श्वासकासचिन्तामणि २३७।

हृदयशूलः—बलाद्य घृत २८०। जवाहर मोहरा २८१।

घबराहटः—हिंगूकर्पूरवटी ६०। पञ्चसार रस २८०। जवाहर मोहरा २८१। हृद्य चूर्ण २८३। तारकेश्वर रस २८५।

पितप्रकोपसे घबराहटः—पञ्चसार रस २८०। हृदयपौष्टिक चूर्ण २८३। भल्लातकादि क्षार १३५।

७४. क्षय-राजयक्ष्मा—Phthisis

प्रथमावस्थाः—अभ्रक भस्म ७। जसद भस्म ११। विषमज्वरहर लोह ५७। बृहत सुवर्णवसंत ६७। कफाधिक होनेपर बृहच्छृंगाराभ्र १७६। सितोपलादि, शहद-घीसह। सुवर्ण सर्वाङ्गसुंदर २०६। एलादिमन्थ २१३। अभ्रकल्प १६८। कपर्दपोटली २०६। रसराज (द्वितीय विधि) २०३। शाही चूर्ण २१८।

अरुचि—अभ्रक भस्म ७।

अतिसार—अभ्रक भस्म ७। रत्नविजयपर्पटी ११५।

ज्वर—प्रवालभस्म १७। कब्जसह होनेपर दरदसुधाभस्म २१। सुवर्ण-चिन्ता मणि ४१। अभ्रकल्प १६८। जीर्ण ज्वरान्तक चूर्ण ६२। राजयक्ष्मा करिमत्त-केसरी २०१। क्षयकेसरी २०२। कर्चूरादि गुटिका २०५। रजतादि लोह २०६। लोकेश्वरपोटली २०७। कपर्दपोटली २०६। सुवर्णसर्वाङ्गसुन्दर २०६। गुडूच्यादि रसायन २१०। सुदर्शनादि कषाय २१८। बनफशादि शर्बत २१८। (शाही चूर्ण-केसाथ २१८)।

पूर्वावस्था—हेमाभ्र सिन्दूर द्वितीय विधि १६८।

कासशमनार्थ—रसराज रस २०३। प्रवाल भस्म १७।

दाह—रौप्य भस्म ५। खर्जूरासव २१४।

शुक्रक्षयज शुष्कता—वङ्ग भस्म १०। बृहतसुवर्णमालिनी वसंत ६७। रसराज २०३। कर्चूरादि गुटिका २०५। शुक्रसंजीवन रस २०५। अमृतप्राश २११। शाही चूर्ण २१८।

मांसक्षय (Atrophy)—उदुम्बरपञ्चसार ३४५। अमृत प्राशघृत २११